21वीं शताब्दी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श

(संदर्भ : 21वीं शताब्दी के प्रारम्भिक दो दशक)

"IKKISVI SHATABDI KE HINDI KATHA SAHITAY ME VRIDH VIMARSH

(SANDARBH: 21VI SHATABDI KE PRARMBHIK DO DASHAK)"

Thesis Submitted for the Award of the Degree of

DOCTOR OF PHILOSOPHY

In

(HINDI)

By

KULDEEP KUMAR

Registration Number: 42000418

Supervised By
Dr. REETA SINGH, UID 22388
ASSOCIATE PROFESSOR, HINDI DEPARTMENT

LOVELY PROFESSIONAL UNIVERSITY,

PUNJAB

2025

घोषणा पत्र

मैं, कुलदीप कुमार, शोधार्थी, हिंदी विभाग, लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा, पंजाब घोषणा करता हूँ कि पीएचडी की उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबंध ***"21वीं शताब्दी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श (संदर्भ : 21वीं शताब्दी के प्रारंभिक दो दशक)"*** मेरा मौलिक कार्य है | मेरे द्वारा प्रस्तुत यह शोध-प्रबंध डॉ. रीता सिंह, एसोसिएट प्रोफेसर (हिंदी संकाय) स्कूल ऑफ लिबरल एंड क्रिएटिव आर्ट्स (सोशल साइंस एंड लैंग्वेज) लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा, पंजाब के निर्देशन में तैयार किया गया है | इस रूप में यह शोध-प्रबंध पूर्णतः अथवा आंशिक रूप से किसी भी विश्वविद्यालय अथवा संस्थान में किसी अन्य उपाधि के लिए प्रस्तुत नहीं किया गया है |

कुलदीप कुमार

पंजीकरण संख्या : **42000418**

हिंदी संकाय, स्कूल ऑफ लिबरल एंड क्रिएटिव आर्ट्स (सोशल साइंस एंड लैंग्वेज)

लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा, पंजाब, भारत

दिनांक : 24-09-2025

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि शोधार्थी कुलदीप कुमार, पंजीयन संख्या **42000418** ने **"21वीं शताब्दी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श (संदर्भ : 21वीं शताब्दी के प्रारंभिक दो दशक)"** विषय पर लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा, पंजाब के अंतर्गत हिंदी विषय की पीएचडी. की उपाधि हेतु शोध-प्रबंध मेरे निर्देशन में स्वयं पूर्ण किया है शोधकर्ता का अनुसंधान कार्य इनके व्यक्तिगत परिश्रम एवं अनुशीलन पर आधारित पूर्णतः मौलिक कार्य है | मेरे संज्ञान में यह शोध-प्रबंध आंशिक या पूर्ण रूप से किसी अन्य उपाधि के लिए किसी अन्य विश्वविद्यालय या संस्थान को प्रस्तुत नहीं किया गया है | मैं प्रस्तुत शोध-प्रबंध को पीएचडी. (हिंदी) की उपाधि हेतु मूल्यांकनार्थ प्रस्तुत करने की संस्तुति प्रदान करती हूँ |

डॉ. रीता सिंह

शोध-निर्देशिका

एसोसिएट प्रोफेसर

हिंदी संकाय, स्कूल ऑफ लिबरल एंड क्रिएटिव आर्ट्स (सोशल साइंस एंड लैंग्वेज)

लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा, पंजाब, भारत

दिनांक : 24-09-2025

आभार स्वीकृति

सर्वप्रथम मैं माँ सरस्वती व अपने इष्ट कुल देवता बूढ़ा बिंगल (मलटासरी) तथा देवभूमि हिमाचल के समस्त देवी देवताओं का स्मरण करता हूँ जिनकी असीम अनुकंपा से मैंने इस शोध कार्य को पूर्ण किया | मैं अपने परम पूज्य माता-पिता का ऋणी हूँ जो खुद अभावों में रहकर मेरी पढ़ाई को पूरा करते रहे | मुझ पर किए उपकार के लिए मैं पूज्य माता कांता देवी व पूजनीय पिता नरेंद्र पाल जी का हृदय से आभार प्रकट करता हूँ | उनका आभार प्रकट करने मात्र से में इस ऋण से मुक्त तो नहीं हो सकता लेकिन जीवन पर्यंत उनकी निस्वार्थ सेवा से इस ऋण को थोड़ा कम कर सकता हूँ | इसी क्रम में अपनी धर्मपत्नी भानु प्रिया ठाकुर व मेरी सबसे प्रिय मेरी बेटी काव्या ठाकुर का भी विशेष आभार जिनका सहयोग मुझे हर-पल तथा हर-कदम पर मिलता रहा | मेरी पूज्य सासु माँ बीना देवी तथा पूजनीय ससुर घनश्याम जी तथा मेरी दोनों सालियाँ सुनीति कुमारी व योगिता कुमारी के साथ समस्त रिश्तेदारों व मेरे दोस्तों का भी मैं उनके बहुमूल्य सहयोग के लिए तहे दिल से आभार प्रकट करता हूँ | मैं अपने स्वर्गीय भाई हरीश कुमार को अश्रुपूर्ण स्मरण करता हूँ, वो आज मेरे साथ नहीं है लेकिन उनका मेरे प्रति निस्वार्थ प्रेम व विश्वास मुझे हमेशा आगे बढ़ने की ओर प्रेरित करता रहा |

मैं आभार प्रकट करना चाहूँगा लवली प्रोफेशनल विश्वविद्यालय का जहाँ मुझे पीएचडी में प्रवेश ही नहीं मिला बल्कि सीखने को बहुत कुछ मिला | मेरे इस शोध कार्य में सबसे ज्यादा सहयोग व मार्गदर्शन लवली प्रोफेशनल विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग की सहायक आचार्य मेरी शोध निर्देशिका आदरणीय डॉ. रीता सिंह का रहा | उनके प्रति में आसमान की ऊंचाई और महासागर की गहराई जितनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ | इसी के साथ लवली प्रोफेशनल विश्वविद्यालय हिंदी विभाग के समस्त गुणी व अनुभवी प्राध्यापकों से यथासंभव सहयोग, मार्गदर्शन तथा सीखने को मिलता रहा, जिसके लिए मैं दिल से शुक्रगुजार हूँ | मुझे सही दिशा में मार्गदर्शन करने के लिए विशेषकर बहुत अनुभवी व ज्ञानवान आदरणीय डॉ. विनोद सर का भी आभार व्यक्त करता हूँ | इसके साथ ही हिंदी विभाग के श्रद्धास्पद प्राध्यापक आदरणीय डॉ बृजेन्द्र अग्निहोत्री व अनिल पाण्डेय जी का भी मार्गदर्शन हेतु विशेष आभार प्रकट करता हूँ | साथ ही विश्वविद्यालय के अन्य विभागों के शिक्षक वर्ग, गैर शिक्षक वर्ग से जो प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग प्राप्त हुआ, उनका भी दिल से धन्यवाद करता हूँ |

मैं हमेशा आभारी रहूँगा उन सभी लेखकों एवं ग्रंथकारों का जिनके कथा साहित्य व ग्रंथों के संदर्भ मैंने अपने शोध कार्य में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से लिए हैं | मैं आभार प्रकट करना चाहूँगा प्रसिद्ध साहित्यकार एस.आर. हरनोट, डॉ दिलीप मेहरा, डॉ सूरज सिंह नेगी जी का जिन्होंने मुझे शोध सामग्री संकलन संबंधी मदद की साथ ही आभार प्रकट करना चाहूँगा विभिन्न पत्रिकाओं के संपादकों का विशेष रूप से आधुनिक साहित्य, शिवना साहित्यिकी, अनहद लोक, आलोचना तथा शोध समालोचन पत्रिका जिन्होंने मेरे शोध पत्रों को अपनी पत्रिका में स्थान दिया | मैं उन सभी पुस्तक प्रकाशकों का भी धन्यवाद करना चाहूँगा जो मुझे समय-समय पर मेरे शोध संबंधी पुस्तकें भेजते रहें | अंत में एक बार पुन: ऊपर लिखित समस्त सहयोगकर्ताओं का आभार प्रकट करता हूँ |

कुलदीप कुमार (शोधार्थी)

भूमिका

21वीं शताब्दी में बहुतेरे विमर्शों के दौर में वृद्ध विमर्श सर्वाधिक महत्वपूर्ण है | कारण यह विमर्श जातिगत, लिंगगत, क्षेत्रगत आदि का विमर्श न होकर सम्पूर्ण मानव समाज का विमर्श है | वृद्ध-विमर्श वृद्धों की समस्त वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, मानसिक एवं अन्य समस्याओं की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करता है | वर्तमान समय में वृद्धजनों की वास्तविक स्थिति, दशा-दिशा, संघर्षों तथा उनकी समस्याओं पर सार्थक बहस व विमर्श करना आज की सर्वोपरि सामयिक आवश्यकता है | आधुनिक और भूमंडलीकरण के समाज में व्यक्ति निरंतर प्रतिस्पर्धात्मक दौर का सामना कर रहा है | उपभोक्तावाद, बाजारवाद और आजिविकवाद में युवावर्ग फंसकर रह गया है | उसके पास खुद के लिए, अपने परिवार और रिश्तों-नातों के लिए समय नहीं है | संयुक्त परिवारों का विघटन और एकल परिवारों का निर्माण बड़ी तीव्र गति से हो रहा है | युवाओं का शहरों और विदेशों में पलायन बढ़ रहा है | वृद्ध शहरी और ग्रामीण परिवेश के बीच उलझकर रह गए है | वर्तमान में वृद्धजनों को इस तरह की अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है | 21वीं सदी के हिंदी कथा-साहित्य में वृद्ध विमर्श को लेकर बहुआयामी सृजन हुआ है | प्रस्तुत शोध कार्य में 21वीं सदी के प्रारम्भिक दो दशकों के चयनित हिंदी उपन्यासों और कहानियों को केंद्र में रख कर कार्य किया गया है |

प्रस्तुत शोध का पहला अध्याय- "*वृद्ध विमर्श : सैद्धांतिक पृष्ठभूमि*" शीर्षक से है | इस प्रकरण के अंतर्गत वृद्ध के साथ विमर्श के अर्थ, परिभाषा व स्वरूप को स्पष्ट किया गया है, इसके साथ वृद्ध विमर्श के विविध आयामों की पहचान की गई है, जिसके अंतर्गत वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक पक्षों पर विचार किया गया है, साथ ही वृद्धावस्था से संबंधी विविध मुद्दों की चर्चा की गई है |

शोध का दूसरा अध्याय- "*हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श*" शीर्षक से है, जिसमें मुख्य रूप से 21वीं सदी के पूर्व और 21वीं सदी के दौरान वृद्धों पर केन्द्रित चयनित हिंदी कथा साहित्य की संक्षिप्त कथा वस्तु को प्रस्तुत किया गया है | इसके साथ वृद्ध विमर्श के अंतर्गत आने वाले विभिन्न पहलुओं को भी उजागर किया गया है | 21वीं सदी के पूर्व वृद्धों के जीवन को लेकर निम्नलिखित प्रमुख उपन्यास लिखे गए हैं - प्रेमचंद का '*निर्मला*', '*गबन*', नागार्जुन का '*नई पौध*', अज्ञेय का '*अपने-अपने अजनबी*', पंकज बिष्ट का '*उस चिड़िया का नाम*', कृष्णा सोबती का '*ऐ लड़की*' मस्तराम कपूर का '*विषय पुरुष*' रवीन्द्र वर्मा का '*निन्यानवे*', ज्ञान चतुर्वेदी का '*बारहमासी*' आदि प्रमुख है | 21 सदी में वृद्ध विमर्श पर केन्द्रित हिंदी के प्रमुख चयनित उपन्यास जिनमें ममता कालिया का '*दौड़*', कृष्णा सोबती का '*समय सरगम*', निर्मल वर्मा का '*अंतिम अरण्य*', रवीन्द्र वर्मा का '*पत्थर ऊपर पानी*', चित्रा मुद्गल का '*गिलिगडु*', 'काशीनाथ सिंह का '*रेहन पर रग्घू*', रवीन्द्र वर्मा का '*आखिरी मंजिल*', राकेश वत्स का '*फिर लौटते हुए*' 'हृदयेश का '*चार दरवेश*', ज्ञान चतुर्वेदी का '*हम न मरब*', रामधारी सिंह दिवाकर का '*दाखिल खारिज*', गोविन्द मिश्र का '*शाम की झिलमिल*', टेकचंद का '*दाई*' तथा डॉ सूरज सिंह नेगी के तीन उपन्यास '*रिश्तों की आँच*', '*वसीयत*', '*नियति चक्र*' आदि प्रमुख है | हिंदी कथा साहित्य में उपन्यास विधा के साथ कहानियों को भी शामिल किया गया है | 21वीं सदी के पूर्व वृद्धों पर केन्द्रित हिंदी की प्रमुख कहानियों का संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत किया गया | जिनमें प्रेमचंद की '*बूढ़ी काकी*', *बेटों वाली विधवा*', '*सुभागी*', उषा प्रियंवदा की

'वापसी', भीष्म साहनी की *'चीफ की दावत'*, नरेंद्र कोहली की *'शटल'*, निर्मल वर्मा की *'बीच बहस'*, ज्ञानरंजन की *'पिता'*, उदय प्रकाश की *'छप्पन तोले का करधन'*, काशीनाथ सिंह की *'अपना रास्ता लो बाबा'* इत्यादि प्रमुख कहानियाँ है | 21वीं सदी में वृद्धों पर केंद्रित हिंदी की प्रमुख व चयनित कहानियों की संक्षिप्त कथावस्तु प्रस्तुत की गई है | जिनमें एस.आर.हरनोट की *'बिल्लियाँ बतियाती है', 'बीस फुट के बापूजी', 'कागभाखा', 'लोहे का बैल',* चित्रा मुद्गल की *'गेंद',* सूर्यबाला की *'दादी और रिमोट', 'साँझवाती'*, कृष्णा अग्निहोत्री के कहानी संग्रह *'अपना-अपना अस्तित्व'* की प्रमुख कहानियाँ *'झुर्रियों की पीड़ा', 'अपना-अपना अस्तित्व', 'मैं जिंदा हूँ', 'तोर जवानी सलामत रहे', 'उसका इतिहास', यह क्या जगह है दोस्तों', बदमिजाज'*, दिलीप मेहरा की *'अग्निदाह', 'हँसा ताई', 'साजिश'*, सरोज भाटी की *'बेटा'*, रणीराम गढ़वाली की *'नहीं अम्मा'*, शरद अग्निहोत्री की *'ख़त'*, प्रदीप पंत की 'छल', भानुप्रताप कुठियाला की *'लाजवंती'*, इत्यादि चर्चित कहानियाँ शामिल है | 21वीं सदी के उपर्युक्त चयनित उपन्यासों एवं कहानियों की संक्षिप्त कथा वस्तु के संदर्भ में इस अध्याय को देखा गया है |

शोध का तीसरा अध्याय *'21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श : सामाजिक और सांस्कृतिक पक्ष'* शीर्षक से है | इस अध्याय में 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वैयक्तिक समस्याओं से पीड़ित वृद्धजनों का यथार्थ चित्रण किया गया है | वैयक्तिक समस्याओं के कारणों की भी पड़ताल की गई है | वृद्धावस्था में मनुष्य को शारीरिक पीड़ा के साथ पारिवारिक संघर्षों व परेशानियों का सामना भी करना पड़ता है | परिवार में एकल परिवार, संयुक्त परिवार, नौकरीपेशा परिवार, सम्पन्न परिवार, निम्न परिवार एवं मध्यम वर्गीय परिवार में वृद्धों की दशा व दिशा की गहराई से परख की गई है | परिवार में वृद्धों की संतान संबंधी समस्याओं तथा वृद्धों के पुनर्वास की समस्याओं को भी यथार्थता के साथ उजागर किया गया है | वृद्धों के प्रति समाज के नकारात्मक दृष्टिकोण, युवाओं के उपेक्षित व्यवहार, नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी वैचारिक मतभेद, सामंजस्य की समस्या, सामाजिक असुरक्षा एवं वैधव्यजनित समस्याओं को बड़ी सूक्ष्मता व यथार्थ के साथ प्रस्तुत किया गया है | बुढ़ापे में वृद्धों के आर्थिक पक्ष को देखें तो सबसे बड़ी समस्या आर्थिक रूप से दूसरों पर निर्भरता, स्वास्थ्य संबंधी परनिर्भरता, आर्थिक असुरक्षा, धन-संपत्ति व जमीन-जायदाद के लिए वृद्धों के साथ हिंसा आदि कथा साहित्य में इन प्रमुख समस्याओं के पहलुओं की सूक्ष्मता के साथ पहचान की गई है | आधुनिकता के साथ हमारी भारतीय संस्कृति व मूल्यों में बड़ी तीव्रता के साथ परिवर्तन हो रहा है | इस अध्याय में सांस्कृतिक परिवर्तन के कारण उसका वृद्धों के ऊपर पड़े प्रभाव को भी दिखाया गया है | सांस्कृतिक पक्ष के अंतर्गत सामाजिक व्यवस्था, आदर्शों और मूल्यों में परिवर्तन, पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति का बढ़ता प्रभाव, नई पीढ़ी का भौतिकता वादी दृष्टिकोण, बच्चों का पलायन आदि बदलाव प्रमुख है | इन सामाजिक एवं सांस्कृतिक व्यवस्था में आए बदलावों के कारण वृद्धजनों के प्रति हमारी सोच एवं नजरिया में भी बदलाव आया है |

शोध का चौथा अध्याय *'21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श : मनोवैज्ञानिक पक्ष'* शीर्षक से हैं | वृद्धावस्था में शारीरिक बदलाव व समस्याओं के साथ मनुष्य के अंदर मनोवैज्ञानिक परिवर्तन भी होते हैं | वृद्धावस्था में वृद्धों की सबसे ज्यादा मानसिक चिंताएं जिसमें उनका अकेलापन, अपनों के प्रति लगाव, स्वभाव में चिड़चिड़ापन और जिद्दी पन, जीवन में भय, मानसिक अवसाद, घटती याददाश्त, मृत्यु बोध आदि प्रमुख है | उम्र के इस पड़ाव में इन सभी स्थितियों में भावनात्मक और मानसिक सहारे

की आवश्यकता पड़ती है | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में उपर्युक्त सभी मनोवैज्ञानिक समस्याओं का गहनता के साथ विश्लेषण किया गया है |

शोध का पाँचवाँ अध्याय *‘21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श : भाषा गत एवं शैली गत विश्लेषण’* शीर्षक से हैं | इसको दो भागों में किया गया है, जिसमें सर्वप्रथम 21वीं सदी में वृद्ध विमर्श पर केन्द्रित हिंदी कथा साहित्य के भाषा गत वैशिष्ट्य की पहचान की गई है | भाषा गत विश्लेषण में मुख्यतः चित्रात्मक, व्यंग्यात्मक, काव्यात्मक, आंचलिक, ध्वन्यात्मक, के साथ अन्य विभिन्न देशी-विदेशी भाषाओं के शब्दों व मुहावरों व कहावतों के प्रयोग को मूल्यांकित किया गया है | इसके साथ दूसरे भाग में 21वीं सदी में वृद्ध विमर्श पर केन्द्रित हिंदी कथा साहित्य : शिल्प गत वैशिष्ट्य की पहचान की गई है | शिल्प गत विशेषता में प्रमुख रूप से वर्णनात्मक, फ्लैशबैक, आत्मकथात्मक, नाटकीय, विश्लेषणात्मक, डायरी, पत्रात्मक, संवाद, मनोविश्लेषणात्मक, भावनात्मक, विचारात्मक, प्रतीकात्मक, प्रश्नात्मक, बिम्बात्मक, समास एवं व्यास शैली का प्रयोग देखने को मिलता है |

शोध का छठा अध्याय *‘21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की समस्याओं के निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण’* शीर्षक से हैं | इसके अंतर्गत 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं मनोवैज्ञानिक समस्याओं के निवारण बिन्दुओं की पहचान व विश्लेषण किया गया है | वृद्धों के संघर्षों, चुनौतियों व समस्याओं को कम करने या निवारण हेतु कुछ सुझाव भी दिए गए है |

उपर्युक्त छः अध्याय के साथ-साथ शोध निष्कर्ष के रूप में उपसंहार भी लिखा गया है | इसके साथ अंत में लेखकों के साक्षात्कार और विभिन्न पत्रिकाओं और सेमिनारों में प्रकाशित शोध पत्रों की सूची प्रस्तुत की गयी है |

विषयानुक्रमणिका

शोध-सार

- प्रस्तावना
- समस्या कथन
- समस्या औचित्य
- शोध उद्देश्य
- शोध-प्रविधियाँ
- शोध परिकल्पना
- शोध ग्रंथावलोकन
- शोध अंतराल

पहला अध्याय

1. वृद्ध विमर्श : सैद्धांतिक पृष्ठभूमि

- **भूमिका**

1.1 वृद्ध : अर्थ एवं परिभाषा

1.2 विमर्श : अर्थ एवं परिभाषा

1.3 वृद्ध विमर्श : अभिप्राय एवं विविध आयाम

1.3.1 वृद्ध विमर्श : वैयक्तिक दृष्टिकोण

1.3.2 वृद्ध विमर्श : पारिवारिक दृष्टिकोण

1.3.3 वृद्ध विमर्श : सामाजिक दृष्टिकोण

1.3.4 वृद्ध विमर्श : सांस्कृतिक दृष्टिकोण

1.3.5 वृद्ध विमर्श : आर्थिक दृष्टिकोण

1.3.6 वृद्ध विमर्श: मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण

- **निष्कर्ष**

दूसरा अध्याय

2. हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श

2.1 21वीं सदी के पूर्व वृद्धों पर केंद्रित हिंदी के प्रमुख उपन्यास

2.1.1 'निर्मला' (1927) प्रेमचंद

2.1.2 'गबन' (1931) प्रेमचंद

2.1.3 'नई पौध' (1953) नागार्जुन

2.1.4 'अपने-अपने अजनबी' (1961) अज्ञेय

2.1.5 'उस चिड़िया का नाम' (1989) पंकज बिष्ट

2.1.6 'ऐ लड़की' (1991) कृष्णा सोबती

2.1.7 'विषय पुरुष' (1997) मस्तराम कपूर

2.1.8 'निन्यानवे' (1998) रवीन्द्र वर्मा

2.1.9 'बारहमासी' (1999) ज्ञान चतुर्वेदी

2.2 21वीं सदी में वृद्धों पर केंद्रित हिंदी के प्रमुख उपन्यास

2.2.1 'दौड़' (2000) ममता कालिया

2.2.2 'समय सरगम' (2000) कृष्णा सोबती

2.2.3 'अंतिम अरण्य' (2000) निर्मल वर्मा

2.2.4 'पत्थर ऊपर पानी' (2000) रवीन्द्र वर्मा

2.2.5 'गिलिगडु' (2002) चित्रा मुद्गल

2.2.6 'फिर लौटते हुए' (2003) राकेश वत्स

2.2.7 'रेहन पर रग्घू' (2008) काशीनाथ सिंह

2.2.8 'आखिरी मंजिल' (2008) रवीन्द्र वर्मा

2.2.9 'चार दरवेश' (2011) हृदयेश

2.2.10 'दाखिल ख़ारिज' (2014) रामधारी सिंह दिवाकर

2.2.11 'रिश्तों की आंच' (2016) सूरज सिंह नेगी

2.2.12 'शाम की झिलमिल' (2017) गोविन्द मिश्र

2.2.13 'दाई' (2017) टेकचंद

2.2.14 'वसीयत' (2018) सूरज सिंह नेगी

2.2.15 'नियति चक्र' (2019) सूरज सिंह नेगी

2.3 21वीं सदी के पूर्व वृद्धों पर केंद्रित हिंदी की प्रमुख कहानियाँ

2.3.1 'बूढ़ी काकी' (1921) प्रेमचंद

2.3.2 'सुभागी' (1923) प्रेमचंद

2.3.3 'बेटों वाली विधवा' (1932) प्रेमचंद

2.3.4 'विध्वंस' (1932) प्रेमचंद

2.3.5 'चीफ की दावत' (1956) भीष्म सहनी

2.3.6 'वापसी' (1960) उषा प्रियंवदा

2.3.7 'पिता' (1965) ज्ञानरंजन

2.3.8 'बीच बहस' (1973) निर्मल वर्मा

2.3.9 'शटल' (1982) नरेंद्र कोहली

2.3.10 'छप्पन तोले का करधन' (1989) उदय प्रकाश

2.3.11 'अपना रास्ता लो बाबा' (1998) काशीनाथ सिंह

2.4 21वीं सदी में वृद्धों पर केंद्रित हिंदी की प्रमुख कहानियाँ

2.4.1 'बिल्लियाँ बतियाती है' (2001) एस.आर.हरनोट

2.4.2 'बीस फुट के बापूजी' (2001) एस.आर.हरनोट

2.4.3 'कागभाखा' (2001) एस.आर.हरनोट

2.3.4 'गेंद' (2002) चित्रा मुद्गल

2.4.5 'दादी और रिमोट' (2005) सूर्यबाला

2.3.6 'साँझवती' (2015) सूर्यबाला

2.4.7 'झुर्रियों की पीड़ा' (2018) कृष्णा अग्निहोत्री

2.4.8 'अपना-अपना अस्तित्व' (2018) कृष्णा अग्निहोत्री

2.4.9 'मैं जिंदा हूँ' (2018) कृष्णा अग्निहोत्री

2.4.10 'तोर जवानी सलामत रहे' (2018) कृष्णा अग्निहोत्री

2.4.11 'उसका इतिहास' (2018) कृष्णा अग्निहोत्री

2.4.12 'यह क्या जगह है दोस्तों' (2018) कृष्णा अग्निहोत्री

2.4.13 'बदमिजाज' (2018) कृष्णा अग्निहोत्री

2.4.14 'लोहे का बैल' (2019) एस.आर.हरनोट

- **निष्कर्ष**

तीसरा अध्याय

3. 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श : सामाजिक और सांस्कृतिक पक्ष

3.1 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की वैयक्तिक समस्याएं

3.1.1 शारीरिक शिथिलता

3.1.2 थकावट

3.1.3 नींद की कमी

3.1.4 सौन्दर्य की कमी

3.1.5 देखने, सुनने की शक्ति में कमी

3.1.6 वृद्धावस्था में शरीर विभिन्न रोगों से ग्रसित

3.2 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की पारिवारिक समस्याएं

3.2.1 एकल परिवार में वृद्ध

3.2.2 संयुक्त परिवार में वृद्ध

3.2.3 नौकरीपेशा परिवार में वृद्ध

3.2.4 संपन्न परिवार में वृद्ध

3.2.5 निम्न परिवार में वृद्ध

3.2.6 मध्यम वर्गीय परिवार में वृद्ध

3.2.7 वृद्धों के पुनर्वास की समस्या

3.3 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की सामाजिक समस्याएं

3.3.1 समाज का वृद्धों के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण

3.3.2 युवा पीढ़ी का वृद्धों के प्रति उपेक्षित दृष्टिकोण

3.3.3 नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी में सामंजस्य का अभाव

3.3.4 सामाजिक असुरक्षा

3.3.5 वैधव्यजनित समस्या

3.3.6 नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी में वैचारिक मतभेद

3.4 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की आर्थिक समस्याएं

3.4.1 वृद्धावस्था में आर्थिक असुरक्षा

3.4.2 आर्थिक रूप से दूसरों पर निर्भरता

3.4.3 स्वास्थ्य संबंधी निर्भरता

3.4.4 धन-सम्पत्ति व जायदाद के लिए वृद्धों के साथ हिंसा

3.5 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की सांस्कृतिक समस्याएं

3.5.1 सामाजिक व्यवस्था, आदर्शों और मूल्यों में परिवर्तन

3.5.2 पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति का प्रभाव

3.5.3 भौतिकतावादी दृष्टिकोण

3.5.4 बच्चों का पलायन

- **निष्कर्ष**

चौथा अध्याय

4. 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श : मनोवैज्ञानिक पक्ष

4.1 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की मनोवैज्ञानिक समस्याएं

4.1.1 अकेलापन

4.1.2 लगाव

4.1.3 चिड़चिड़ापन और जिद्दी पन

4.1.4 भय

4.1.5 अवसाद

4.1.6 याददाश्त में कमी

4.1.5 मृत्यु बोध

- **निष्कर्ष**

पाँचवां अध्याय

5. 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श: भाषा गत एवं शैलीगत विश्लेषण

5.1 भाषा अर्थ, परिभाषा

5. 2 21वीं सदी में वृद्ध विमर्श पर केन्द्रित हिंदी कथा साहित्य: भाषागत वैशिष्टय

5.2.1 चित्रात्मक भाषा

5.2.2 व्यंग्यात्मक भाषा

5.2.3 काव्यात्मक भाषा

5.2.4 आंचलिक भाषा

5.2.5 पात्रानुकूल भाषा

5.2.6 ध्वन्यात्मक भाषा

5.2.7 ग्राम्य भाषा

5.2.8 अन्य भाषा के शब्दों का प्रयोग

5.2.9 मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग

5.3 शैली अर्थ, परिभाषा

5.4 21वीं सदी में वृद्ध विमर्श पर केन्द्रित हिंदी कथा साहित्य : शिल्पगत वैशिष्टय

5.4.1 वर्णनात्मक शैली

5.4.2 पूर्वदीप्ति शैली/ फ्लैशबैक शैली

5.4.3 आत्मकथात्मक शैली

5.4.4 नाटकीय शैली

5.4.5 विश्लेषणात्मक शैली

5.4.6 डायरी शैली

5.4.7 पत्रात्मक शैली

5.4.8 संवाद शैली

5.4.9 मनोविश्लेष्णात्मक शैली

5.4.10 काव्यात्मक या भावनात्मक शैली

5.4.11 विचारात्मक शैली

5.4.12 प्रतीकात्मक शैली

5.4.13 प्रश्नात्मक शैली

5.4.14 स्वप्न शैली

5.4.15 समास शैली

5.4.16 व्यास शैली

5.4.17 बिम्बात्मकता शैली

- **निष्कर्ष**

छठा अध्याय

6. 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की समस्याओं के निवारक बिन्दुओं का विश्लेषण

6.1 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों के वैयक्तिक समस्याओं हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण

6.1.1 स्वस्थ व संतुलित भोजन

6.1.2 नियमित व्यायाम करना

6.1.3 समय पर खाना-पीना व सोना

6.1.4 डॉक्टर की सलाह के बिना दवाई का सेवन न करना

6.1.5 समय पर इलाज करना

6.2 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों के पारिवारिक समस्याओं हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण

6.2.1 संयुक्त परिवार को विघटन से रोकना

6.2.2 वृद्धों को सम्मान और भावनात्मक सुरक्षा

6.2.3 वृद्धों को बोझ न मानना बल्कि मार्गदर्शक समझकर सम्मान देना

6.2.4 वृद्धों को नई पीढ़ी के जीवन में अत्यधिक दखल न देना

6.2.5 हमउम्र वृद्धों से मेलजोल बनाना

6.2.6 अकेले रह रहे वृद्धों को खुश व संतुष्ट रहना चाहिए

6.2.7 पुस्तकें पढ़ना, लिखना दिनचर्या का हिस्सा बनाना

6.2.8. वृद्धावस्था में जीवनसाथी का साथ

6.2.9 नई पीढ़ी व पुरानी पीढ़ी में समन्वय

6.3 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की सामाजिक समस्याओं हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण

6.3.1 सामाजिक मूल्यों को बचाना

6.3.2 कल्याणकारी योजनाओं व रियायतों के प्रति जागरूक

6.3.3 सामाजिक कार्यक्रमों में जाना

6.3.4 अच्छे पार्क की व्यवस्था

6.3.5 साहित्य व समाज सेवा में ध्यान देना

6.3.6 निराश्रित वृद्धों के लिए वृद्धाश्रम

6.3.7 आर्थिक संपन्नता व संतान के होते हुए भी वृद्धाश्रम में वृद्धों को भेजना सही नहीं

6.3.8 अनाथाश्रम व वृद्धाश्रम को एक करना

6.3.9 वृद्ध संगठनों से जुड़ना

6.3.10 दोस्तों से मिलने जाना

6.4 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की आर्थिक समस्याओं हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण

6.4.1 वृद्धों का निशुल्क इलाज

6.4.2 वृद्धावस्था पेंशन की राशि में इजाफा

6.4.3 वृद्धों को समय से पहले धन-संपत्ति बच्चों के नाम नहीं करनी चाहिए

6.4.4 आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर

6.4.5 क्षमता अनुसार छोटे-मोटे कार्य करना

6.3.6 युवाओं के पलायन को रोकना

6.3.7 धन से ज्यादा रिश्तों को महत्व देना

6.5 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की सांस्कृतिक समस्याओं हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण

6.5.1 अपनी सभ्यता व संस्कृति के मूल्यों को बचाना

6.5.2 युवाओं में मूल्यों व संस्कारों का विकास करवाना

6.5.3 युवाओं को जिम्मेदारी का अहसास करवाना

6.5.4 धार्मिक, सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन

6.6 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की मनोवैज्ञानिक समस्याओं हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण

6.6.1 मृत्यु के भय की बजाय जिन्दगी को ख़ुशी से जीना

6.6.2 वृद्धावस्था में भावनात्मक सुरक्षा व मनोवैज्ञानिक सहारे की आवश्यकता

6.6.3 नियमित रूप से पार्क जाना

- **निष्कर्ष**

सुझाव

उपसंहार

संदर्भ-ग्रन्थ सूची

साक्षात्कार

परिशिष्ट

शोध-सार

प्रस्तावना -

21वीं शताब्दी में भूमंडलीकरण और भौतिकवादी युग के कारण भारतीय जीवन, और समाज में काफी तेज गति से बदलाव आ रहा है | जिसमें सबसे अधिक बदलाव मानवीय रिश्तों और संबंधों पर पड़ा है | आज भारतीय परिवार और समाज में वृद्धों को उपेक्षा की दृष्टि से देखा जा रहा है | जिन माता-पिता ने अपना पूरा जीवन अपने बच्चों को पालने, पढ़ाने-लिखाने और उनकी जरूरतों को पूरा करने में लगा दिया | वृद्धावस्था में वही माता-पिता उपेक्षा और अकेलेपन की पीड़ा का शिकार होते जा रहे है | भारतीय समाज और संस्कृति में वृद्धों को पारिवारिक धरोहर के रूप में माना जाता था | वृद्धों के संस्कार, पारंपरिक मूल्य और अनुभव परिवार और समाज के मार्गदर्शन का काम करते थे | आज जहाँ वृद्धजनों की स्थिति घर की पुरानी वस्तु की तरह हो गई है जिसे घर की खूबसूरती में दाग की तरह समझा जाता है | वर्तमान में वृद्धों की समस्याएँ व्यक्तिगत और पारिवारिक न रहकर वैश्विक समस्या बन गई है | आज समूचा विश्व वृद्धों की बढ़ती समस्याओं के प्रति चिंतित है और समाधान का प्रयास कर रहा है | वृद्धों की पीड़ा, संवेदना और समस्याओं को हिंदी साहित्यकारों ने भी अपने साहित्य में चित्रित किया है | हिंदी साहित्यकार स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, किन्नर विमर्श, पर्यावरण विमर्श तथा वृद्ध विमर्श आदि विचारधाराओं को पाठकों के सामने प्रस्तुत करने का काम कर रहे है | 'वृद्ध विमर्श' परिवार, समाज और साहित्य में एक ज्वलंत मुद्दा है | यह विमर्श किसी विशेष वर्ग, जाति, धर्म, लिंग का विमर्श नहीं है बल्कि सम्पूर्ण मानव-समाज का विमर्श है | यह विमर्श सार्वदेशिक और सार्वकालिक है | वर्तमान समय में औद्योगीकरण, उपभोक्तावादी संस्कृति और नगरीकरण के कारण वृद्धावस्था में समायोजन से सम्बंधित अनेक समस्याएं परिवार में बड़ी तीव्रता से उत्पन्न हो रही हैं | आज का युवा जिस परिवेश में पल रहा है, वह वृद्धों के परिवेश से बिलकुल भिन्न है | आज की युवा पीढ़ी में पारिवारिक एकता से संबंधित नैतिक मूल्य टूटते जा रहे हैं | जिससे वृद्ध परिवार में अपनी भूमिका, स्थिति, आदर, सम्मान तथा प्रभुता को खोते जा रहे हैं | बाजारवाद के इस दौर में रिश्तों एवं मूल्यों का बाजारीकरण हो गया है | संयुक्त परिवार की अवधारणा समाप्त हो रही, जहाँ बुजुर्गों को आदर मिलता था | संयुक्त परिवार की जगह एकल परिवार ने ले ली जिसमें पति-पत्नी और बच्चे रह गए हैं | बुजुर्गों के लिए वृद्ध-आश्रम खुलने लगे हैं | संयुक्त परिवार का विघटन, एकल परिवार में अभिवृद्धि एवं नगरीकरण के बढ़ते प्रभाव ने वृद्ध-जीवन को और भी अधिक कारुणिक बना दिया है |

उपेक्षित वृद्धजनों को वाणी देने की महत्वपूर्ण भूमिका हिंदी साहित्य निभा रहा है | समाज के उपेक्षित वर्ग को अभिव्यक्त करने के लिए साहित्य की अनेक विधाएं है | लेकिन कथा साहित्य सर्वाधिक लोकप्रिय एवं प्रभावोत्पादक विधा है | कथा साहित्य समाज की समस्त समस्याओं एवं वर्तमान युग की जटिलताओं को व्यक्त करने में समर्थ है | वृद्धावस्था की दारुण-दशा का सजीव चित्रण 21वीं शताब्दी के हिंदी साहित्यकारों ने अपने कथा-साहित्य में किया हैं | वृद्ध विमर्श पर केन्द्रित 21वीं सदी के प्रसिद्ध व चयनित उपन्यास - 'ममता कालिया' का '*दौड़*', 'कृष्णा सोबती का '*समय सरगम',* 'निर्मल वर्मा' का '*अंतिम अरण्य*', 'रविन्द्र वर्मा' का '*पत्थर ऊपर पानी*', 'चित्रा मुद्गल' का '*गिलिगडु*' , 'राकेश वत्स का 'फिर लौटते हुए', 'काशीनाथ सिंह का '*रेहन पर रग्घू*', 'रवीन्द्र वर्मा'

का ‘*आखिरी मंजिल*’, ‘ह्रदयेश’ का ‘*चार दरवेश*’, ज्ञान चतुर्वेदी का ‘हम न मरब’, रामधारी सिंह दिवाकर का ‘दाखिल ख़ारिज’, गोबिंद मिश्र का ‘*शाम की झिलमिल*’ , टेकचंद का ‘दाई’, ‘डॉ. सूरज सिंह नेगी’ के ‘*वसीयत*’, ‘*रिश्तों की आंच*’ और ‘*नियति चक्र*’ इत्यादि प्रमुख रूप से है | इन उपन्यासों में वृद्धों की त्रासद- स्थिति, उनकी वेदना और एकाकी जीवन की अंतहीन क्षितिज का मार्मिक उद्घाटन हुआ है | 21वीं सदी में वृद्धों के जीवन को केंद्र में रखकर लिखी गई चर्चित व चयनित कहानियाँ – ‘बिल्लियाँ बतियाती है’, ‘बीस फुट के बापूजी’, ‘कागभाखा’ और ‘लोहे का बैल’ (एस.आर.हरनोट) ‘साँझवाती’ व ‘*दादी और रिमोट*’ (सूर्यबाला), ‘गेंद’ (चित्रा मुद्गल) ‘झुर्रियों की पीड़ा’, ‘अपना-अपना अस्तित्व’, ‘मैं जिंदा हूँ’, ‘तोर जवानी सलामत रहे’, ‘उसका इतिहास’, ‘यह क्या जगह है दोस्तों’, ‘बदमिजाज’, ‘प्रेमाश्रय’ (कृष्णा अग्निहोत्री), ‘*लाजबन्ती*’ (भानुप्रताप कुठियाला), ‘*हंसा ताई*’, ‘*अग्निदाह*’, ‘*साजिश*’ (दिलीप मेहरा), ‘नहीं अम्मा’ (रणीराम गढ़वाली), ‘ख़त’ (शरद अग्निहोत्री), ‘छल’ (प्रदीप पंत) इत्यादि प्रमुख है | प्रस्तावित शोध में 21वीं शताब्दी के प्रारम्भिक दो दशक के चयनित उपन्यासों और कहानियों का आकलन वृद्धों की समस्याओं को केंद्र में रखकर किया जाएगा | 21वीं शताब्दी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की समस्याओं और स्थितियों के सभी पक्षों को उजागर किया जाएगा | वृद्ध और युवा पीढ़ी के संबंधों में द्वंद्व और वैचारिक अंतर को हर दृष्टिकोण से समझने का प्रयास किया जाएगा |

समस्या कथन -

शोध प्रक्रिया का पहला चरण अनुसंधान के लिए उपयुक्त समस्या का चुनना है | समस्या उत्पन्न होने पर ही शोध शुरू हो जाता है | जब भी कोई समस्या की स्थिति उत्पन्न होती है और उसके निराकरण की आवश्यकता होती है तो शोध किया जाता है | प्रस्तुत शोध हेतु 21वीं शताब्दी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श को लिया गया है | वर्तमान समय में औद्योगिक करण और नगरीकरण के प्रभाव के कारण सामाजिक जीवन में परिवर्तन आए हैं | इन परिवर्तनों के कारण संयुक्त परिवारों का टूटना, एकल परिवारों का बढ़ना, वर्तमान समाज में गिरते जीवन मूल्य, संस्कारों के अभाव के कारण बूढ़े माँ बाप के सामने उत्पन्न होने वाली चुनौतियाँ, पलायन से खाली होते गाँव, बूढ़े माता-पिता की तरफ युवा पीढ़ी की गैर जिम्मेदारी तथा दो पीढ़ी के बीच का वैचारिक अंतर इत्यादि समस्याओं का अध्ययन करना |

समस्या औचित्य -

प्रत्येक कार्य किसी न किसी लक्ष्य पर आधारित होता है | साहित्यिक रचना का निर्माण करते समय भी साहित्यकार समाज की किसी न किसी समस्या को उठाकर, उसका समाधान करना चाहता है | साहित्यिक शोध के माध्यम से सामाजिक समस्याओं का विश्लेषण और समाधान करना आज के समय की आवश्यकता है | आधुनिकता के इस समाज में जहाँ संयुक्त परिवारों का विघटन, टूटते मानवीय संबंध, गिरते जीवन मूल्य, बुजुर्गों की उपेक्षा और उनका अकेलापन इत्यादि अनेक समस्याएं जन्म ले चुकी है, जिनका समाधान होना अनिवार्य है | इस शोध के माध्यम से वृद्धों के प्रति सकारात्मक बदलावों के साथ-साथ नई शोध हेतु अनेक नए रास्ते खोलने का प्रयास किया जाएगा |

शोध उद्देश्य -

शोधार्थी के शोध का उद्देश्य सर्वथा मौलिक विषय पर शोध करना है प्रस्तावित शोध के प्रमुख उद्देश्य-

1. वृद्ध विमर्श की अवधारणा और पृष्ठभूमि समझना |

2. वृद्ध विमर्श के संदर्भ में 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य का मूल्यांकन और विश्लेषण करना |

3. वृद्ध लोगों की स्थिति, समस्याओं को प्रकाश में लाना और विश्लेषण करना |

4. भूमंडलीकरण, औद्योगीकरण तथा नगरीकरण के प्रभाव से दो पीढ़ी के बीच नैतिक मूल्यों और वैचारिक अंतर को समझना |

5. वृद्ध विमर्श के संदर्भ में 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य का भाषागत और शैलीगत विश्लेषण करना |

6. 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, शारीरिक, मानसिक समस्याओं का पता लगाना एवं समाधान हेतु प्रयास करना |

शोध प्रविधियाँ -

प्रत्येक शोधकार्य की गुणवत्ता बनाए रखने एवं तत् संबंधी निष्कर्षों तक सुगमता पूर्वक पहुँचने के लिए विभिन्न शोध प्रविधियों की सहायता ली जाती है और इन्हीं कुछ शोध प्रविधियों का आधार लेकर शोध कार्य परिपूर्ण किया जाता है | प्रस्तावित शोध विषय को कार्य रूप में परिणत करने हेतु निम्नलिखित शोध प्रविधियों का प्रयोग आवश्यकतानुसार किया जाएगा |

1. मनोवैज्ञानिक प्रविधि – मनोविज्ञान मानव मन के विज्ञान से संबंध रखता है | जिसके अंतर्गत मन: स्थितियों का अध्ययन किया जाता है | मन: स्थितियों का अध्ययन व्यक्ति के व्यवहार को निर्धारित करने के प्रमुख कारक में से एक है | जब एक साहित्यकार साहित्य लिखता है, तो उस समय उसकी मन: स्थिति को जानना आवश्यक है | प्रस्तावित शोध में मनोवैज्ञानिक प्रविधि के अंतर्गत साहित्यकारों की मन: स्थिति और उनके कथा साहित्य में पात्रों की मन: स्थिति तथा वृद्धों की मन: स्थितियों को समझने के लिए मनोवैज्ञानिक पद्धति को आधार बनाया जाएगा |

2. समाजशास्त्रीय प्रविधि - समाजशास्त्र घर-परिवार और समाज से संबंधित है | व्यक्ति के व्यक्तित्व निर्माण में समाज की सबसे बड़ी भूमिका होती है | साहित्य का संबंध व्यक्ति और उससे निर्मित समाज से है | भारतीय समाज और संस्कृति में वृद्धों को अत्यंत उच्च एवं आदर्श स्थान प्राप्त है | वर्तमान में वृद्धों की उपेक्षा का मतलब उनके अनुभव, संस्कार, नैतिक मूल्यों और संस्कृति की उपेक्षा करना | अतः प्रस्तावित शोध में इक्कीसवीं शताब्दी के हिंदी कथा-साहित्य में वृद्ध जीवन को भी समाजशास्त्रीय प्रविधि के द्वारा घर-परिवार और समाज के अंतर्गत देखते हुए अध्ययन किया जाएगा |

3. ऐतिहासिक शोध प्रविधि - ऐतिहासिक शोध प्रविधि के अंतर्गत अतीत की घटनाओं, सूचनाओं का प्रयोग वर्तमान की समस्या को समझने और उसके समाधान के लिए उपयोग किया जाता है | समस्या के कारण की ऐतिहासिक जाँच समस्या को सही तरीके से समझने और उसके समाधान को खोजने में सहायक होती है | प्रस्तावित शोध कार्य में वृद्धों की समस्याओं को ठीक से समझने के लिए ऐतिहासिक शोध विधि का प्रयोग किया जाएगा | ऐतिहासिक घटनाओं और सामाजिक स्थितियों के आधार पर वर्तमान के समाज को समझा जाएगा, जो कथा साहित्य में वृद्धों की दशा व दिशा की पृष्ठभूमि तैयार करता है |

4. तुलनात्मक शोध प्रविधि - तुलनात्मक शोध प्रविधि के अंतर्गत दो अलग- अलग लेखक, समय, भाषा या परिवेश का आपस में तुलना करते हुए, उनमें समानता और भिन्नता की खोज की जाती है | प्रस्तावित शोध में भी इक्कीसवीं शताब्दी के पूर्व और 21वीं सदी के हिंदी कथा-साहित्य में वृद्धों की स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन किया जाएगा |

5. आलोचनात्मक प्रविधि - 21वीं शताब्दी के हिंदी कथा साहित्य का अध्ययन एक पाठक के रूप में न करके एक आलोचक के तौर पर किया जाएगा |

6. अन्य सहायक प्रविधियां - अनुसंधान में आवश्यकतानुसार अन्य सहायक प्रविधियों का भी प्रयोग किया जाएगा |

शोध परिकल्पना -

किसी भी शोध कार्य के परिणाम का पूर्वानुमान परिकल्पना कहलाता है | प्रस्तावित शोध कार्य से प्राप्त निष्कर्षों को लेकर निम्नलिखित परिकल्पनाएं वर्णित की गई है –

1. प्रस्तावित शोध कार्य से वृद्धों की वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं मनोवैज्ञानिक समस्याओं को समझने और उन समस्याओं के समाधान की जानकारी मिलेगी |

2. प्रस्तुत शोध कार्य से नई पीढ़ी और युवा पीढ़ी के बीच वैचारिक अंतर से परिचित होने का अवसर मिलेगा |

3. इस शोध कार्य को पढ़ कर वृद्धों के प्रति संवेदना और सम्मान की भावना जगेगी |

4. प्रस्तावित शोध कार्य से वर्तमान समय में गिरते जीवन-मूल्य और बूढ़े माता-पिता की तरफ युवा पीढ़ी की गैर जिम्मेदारी को समझने का अवसर मिलेगा |

शोध ग्रंथावलोकन -

1. हिंदी उपन्यासों में अभिव्यक्त वृद्ध (1990 से 2015 तक प्रकाशित चयनित उपन्यासों के विशेष सन्दर्भ में)- गुजरात केन्द्रीय विश्वविद्यालय के शोधार्थी रोशन कुमार झा ने डॉ० किंगसन सिंह पटेल के निर्देशन में वर्ष 2020 में उपर्युक्त विषय पर शोध कार्य पूर्ण किया | प्रस्तुत शोध कार्य में 1990 से लेकर 2015 तक वृद्ध जीवन से संबंधित चयनित उपन्यासों को ही लिया गया है |

2. वृद्धावस्था एवं वैधव्य की सामाजिक-आर्थिक समस्याएं एवं चुनौतियाँ (वाराणसी की वृद्ध विधवाओं पर आधारित एक समाजकार्य अध्ययन) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की शोध छात्रा अमिता गौड़ ने डॉ० अनुराधा बापुली के निर्देशन में वर्ष 2019 में उपर्युक्त विषय पर शोध कार्य किया | प्रस्तुत शोध कार्य में वाराणसी में रहने वाली वृद्ध विधवाओं का अध्ययन किया है |

3. हिंदी कहानियों में वृद्ध चरित्रों का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन (1980-2013)- गुजरात यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद के शोधार्थी दीपिका आर. परमार ने डॉ. धनंजय चौहाण के निर्देशन में वर्ष 2018 में उपर्युक्त विषय पर शोध कार्य पूर्ण किया | प्रस्तुत शोध कार्य में 1980 से लेकर 2013 तक की हिंदी कहानियों के वृद्ध पात्रों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन किया गया है |

4. स्वातन्त्र्योत्तर हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध पात्रों की उपस्थिति- काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की शोधार्थी रशिम गौतम ने डॉ० वंदना झा के निर्देशन में वर्ष 2018 में उपर्युक्त विषय पर शोध कार्य पूर्ण किया | प्रस्तुत शोध कार्य में स्वातन्त्र्योत्तर हिंदी कथा साहित्य को आधार बनाकर वृद्धों के सामाजिक, आर्थिक स्थिति का अध्ययन किया गया |

5. समकालीन हिंदी कहानियों में वृद्ध जीवन का यथार्थ- कोचीन यूनिवर्सिटी ऑफ़ साइंस एंड टेक्नोलॉजी के शोधार्थी ब्लेसी. वी ने डॉ. के. वंजा के निर्देशन में वर्ष 2018 में उपर्युक्त विषय पर शोध कार्य पूर्ण किया | प्रस्तुत शोध कार्य में समकालीन कहानीकारों की कहानियों में वृद्धजनों के अकेलापन, उनका आत्मसंघर्ष एवं अनाथत्व को प्रस्तुत किया है |

6. वृद्धजनों के सशक्तिकरण में स्व सहायता समूह की भूमिका का समाजकार्य अध्ययन – काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के शोध छात्र जयकांत सिंह ने डॉ० स्वप्ना मीणा के निर्देशन में वर्ष 2017 में उपर्युक्त विषय पर शोध कार्य पूर्ण किया | प्रस्तुत शोध कार्य में शोधार्थी ने मध्यप्रदेश के तीन जिले भोपाल, इन्दौर और बैतूल में वृद्धजनों के सशक्तिकरण में स्व सहायता समूह के योगदान का विश्लेषण किया गया |

7. हिंदी उपन्यासों में युवा, प्रौढ़ एवं वृद्ध मनोभावों का स्वरूप – डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद के शोधकर्ता दुर्गेश कुमार श्रीवास्तव ने डॉ. वृज मोहन श्रीवास्तव के निर्देशन में वर्ष 2009 में उपर्युक्त विषय पर शोध कार्य पूर्ण किया | प्रस्तुत शोध कार्य में युवा, प्रौढ़ और वृद्ध मनोभावों के स्वरूप का अध्ययन किया गया |

8. (नगरीय एवं ग्रामीण वृद्ध व्यक्तियों की समाजार्थिक समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन: बुंदेलखंड संभाग के झाँसी एवं हमीरपुर जनपद के विशेष संदर्भ में) बुंदेलखंड विश्वविद्यालय- झाँसी की शोध छात्रा नीलम राणा ने डॉ० स्वामी प्रसाद के निर्देशन में उपर्युक्त विषय पर वर्ष 2005 में अपना शोध कार्य पूर्ण किया | प्रस्तुत शोध ग्रन्थ में नगरीय एवं ग्रामीण वृद्ध व्यक्तियों की सामाजिक-आर्थिक समस्याओं का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है | जिसमें झाँसी और हमीरपुर क्षेत्र के वृद्धों को केन्द्रित करके लिखा गया है |

9. वृद्ध व्यक्तियों का पारिवारिक सामंजस्य एक समाजशास्त्रीय अध्ययन बुंदेलखंड संभाग के झांसी जनपद के विशेष सन्दर्भ में- बुंदेलखंड विश्वविद्यालय- झाँसी की शोधछात्रा श्रीमती विजय लक्ष्मी पाठक ने डॉ० गार्गी के निर्देशन में इस विषय पर वर्ष 1999 में

अपना शोध कार्य पूर्ण किया | प्रस्तुत शोध ग्रन्थ में वृद्धों के पारिवारिक सामंजस्य संबंधी विभिन्न बिन्दुओं की विस्तृत तथा तर्कपूर्ण विवेचना प्रस्तुत की है |

शोध अंतराल -

वृद्धों पर आधारित शोध कार्य का अवलोकन करने के उपरांत यह देखा गया कि '21वीं शताब्दी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श' (संदर्भ : 21वीं शताब्दी के प्रारम्भिक दो दशक) विषय पर कोई शोध कार्य नहीं हुआ है | इसलिए मैंने प्रस्तुत विषय का चुनाव किया |

पहला अध्याय

1. वृद्ध विमर्श : सैद्धांतिक पृष्ठभूमि

क्र.स.	विवरण	पृ.स.
1.	पहला अध्याय- वृद्ध विमर्श : सैद्धांतिक पृष्ठभूमि	24-70
•	भूमिका	
1.1	वृद्ध : अर्थ एवं परिभाषा	
1.2	विमर्श : अर्थ एवं परिभाषा	
1.3	1.3 वृद्ध विमर्श : अभिप्राय एवं विविध आयाम 1.3.1 वृद्ध विमर्श : वैयक्तिक दृष्टिकोण 1.3.2 वृद्ध विमर्श : पारिवारिक दृष्टिकोण 1.3.3 वृद्ध विमर्श : सामाजिक दृष्टिकोण 1.3.4 वृद्ध विमर्श : सांस्कृतिक दृष्टिकोण 1.3.5 वृद्ध विमर्श : आर्थिक दृष्टिकोण 1.3.6 वृद्ध विमर्श: मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण	
•	निष्कर्ष	
•	सन्दर्भ सूची	

पहला अध्याय –

वृद्ध विमर्श : सैद्धांतिक पृष्ठभूमि

प्रस्तावना

भारतीय परिवार और समाज में वृद्धों को सदैव आदर के साथ सर्वोच्च स्थान प्राप्त रहा है | वृद्ध व्यक्ति चाहे उच्च जाति का हो या निम्न जाति का, चाहे धनवान हो या निर्धन उनको हमेशा से आदर की दृष्टि से देखा गया है | वे परिवार में दया के पात्र नहीं बल्कि अधिकार संपन्न मुखिया रहे हैं | परिवार के साथ गाँव और पंचायतों के मुखिया भी साधारणतः आयु के आधार पर निर्धारित होते आये हैं | हमने उनके ज्ञान, कौशल, कार्य व्यवहार और अनुभवों से प्रेरणा लेकर उन्हें अपने जीवन में आत्मसात किया है | परिवार में बुजुर्ग हमारे लिए कभी भी समस्या नहीं रहे हैं | वर्तमान में भागम-भाग वाली अति व्यस्त जीवन शैली में परिवार का मुखिया उपेक्षित, अकेलेपन और संघर्षमय जीवन जीने को विवश है | भारतीय संस्कृति में वृद्धजनों को हमेशा से पूजनीय और आदरणीय माना गया है | उन्हें किसी भी परिस्थिति में निंदनीय और उपेक्षणीय नहीं माना गया | जीवन में वृद्धों की सेवा को ईश्वर की पूजा के समतुल्य माना गया है | जिस घर में वृद्ध रहते हैं उसे स्वर्ग और माता-पिता को साक्षात् भगवान का दर्जा दिया जाता रहा है | तैत्तिरीयोपनिषद में कहा गया है – 'मातृ देवो भव, पितृ देवो भव' | इससे स्पष्ट होता है कि भारतीय संस्कृति में माँ-बाप को देवता के समान आदर दिया जाता है अर्थात वृद्ध माता पिता देवतुल्य होते हैं | देवताओं की आराधना भी हम माता-पिता के रूप में करते हैं – 'त्वमेव माता च पिता त्वमेव'| जो व्यक्ति अपना भगवान वृद्ध माता-पिता को मानकर उनका सम्मान करता है उसे कष्ट का सामना नहीं करना पड़ता है | बुजुर्गों के आशीष वचनों में कामयाबी की शुभेच्छा होती है | माँ-बाप की सेवा करना, आज्ञा का पालन करना तथा उनके आशीर्वाद की कामना करना भारतीय परम्परा रही है | रामचरितमानस में इसका एक उदाहरण - "प्रात: काल उठि कै रघुनाथा | मातु पिता गुरु नावहिं माथा || आयसु मागि करहिं पुर काजा | देखि चरित हरषइ मन राजा |" (तुलसीदास 204) प्रातः काल उठ कर माता-पिता और गुरुजनों के चरणों को स्पर्श कर उनका आशीष लेकर अपने कार्य करना यही भारतीय परिवार एवं समाज की संस्कृति और परम्परा रही है | परिवार को भारतीय सामाजिक जीवन में आरम्भ से ही केंद्र में रखा गया है और बड़े-बुजुर्गों का उसमें श्रेष्ठ स्थान है | भारतीय परिवार, समाज और संस्कृति में बूढ़ों को वयोवृद्ध नहीं अपितु ज्ञान-वृद्ध और अनुभव-वृद्ध मानते हुए सेवा और सम्मान के योग्य समझा गया है | वृद्ध शारीरिक रूप से भले ही कमजोर हो मगर उसके पास अनुभवों का खजाना है | कहावत भी है – "वृद्ध धूप में अपने बाल सफेद नहीं करते" बल्कि उनका सफेद बाल उसके पके और प्रौढ़ अनुभवों के साक्षी हैं | पौराणिक ग्रंथ, इतिहास और साहित्य इस तथ्य के साक्षी है वृद्धों के ज्ञान, अनुभवों और परामर्शों से लाभ उठाने वाली युवा पीढ़ी नव-निर्माण और आदर्श स्थापित करती है जबकि वृद्धों के अनुभवों-परामर्शों की उपेक्षा और अवज्ञा करने वाली युवा पीढ़ी पतन की ओर बढ़ती है | इसके प्रमाण 'महाभारत' और 'रामायण' महाकाव्य में देख सकते हैं | 'रामायण' में राम ने वृद्ध पिता की आज्ञा का आदर-सम्मान करते हुए वनवास स्वीकार किया और परिवार को कलह और टूटने से बचाया | और माता कैकयी के सम्मान में भी

कभी कोई कमी नहीं आने दी | राम माता कैकेयी से कहते है – 'सुनु जननी सोई सुतु बड़भागी | जो पितु-मातु वचन अनुरागी |' (तुलसीदास 8) अर्थात वही पुत्र बड़ा भाग्यशाली है जो माता-पिता के वचनों का अनुरागी (पालन करने वाला) होता है | राम ने हमेशा अपने माता-पिता, गुरुजनों व बड़े बुजुर्गों का मान सम्मान किया है | इसलिए उन्होंने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विजय प्राप्त की क्योंकि उनके साथ उनके माता-पिता और गुरुजनों का आशीर्वाद था | दूसरी तरफ 'महाभारत' में भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, विदुर जैसे ज्ञानी, अनुभवी वृद्धों की अवज्ञा और अवहेलना करके दुर्योधन, दु:शासन और कर्ण जैसी युवा शक्ति ने परिवार को विध्वंस के मार्ग पर छोड़ दिया | परिणाम न वृद्ध बचे न युवा न परिवार | मर्यादा पुरुषोत्तम राम जी ने पिता के वचन के लिए 14 वर्ष का वनवास स्वीकार किया और वन चले गए | जबकि आज के दौर में तो बच्चे ही अपने माता-पिता को वनवास (वृद्धाश्रम) भेज रहे हैं | रामकथा का एक अन्य पात्र श्रवण कुमार जिसने अपने कंधे पर अपने बूढ़े अंधे माता-पिता को चार धाम की यात्रा करवाई | जीवन भर अपने अंधे वृद्ध माता-पिता की अनन्य सेवा करके पुत्र का आदर्श रूप स्थापित किया | एक अन्य उदाहरण जब गणेश जी को पृथ्वी की परिक्रमा करने के लिए कहा तो उन्होंने अपने माता-पिता शिव-पार्वती की परिक्रमा करके उन्हें जग के रूप में माना | भारतीय समाज और संस्कृति में ऐसे अनेक राम, श्रवण कुमार, गणेश जैसे मातृ-पितृ भक्त के उदाहरण मिल जायेंगे | वहीं इतिहास भी यही बताता है कि राजा घनानंद ने वृद्धों और गुरुओं का आदर न करके नंद वंश को पतन की ओर धकेल दिया | उसने भरी सभा में चाणक्य का अपमान किया था | दूसरी तरफ युवा चन्द्र गुप्त ने वृद्ध चाणक्य को अपना गुरु बना कर घनानंद के कुशासन का अंत कर दिया | जहाँ वृद्ध नहीं वहां वृद्धि नहीं हो सकती है | शास्त्रों में कहा गया है 'न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धा' इस उक्ति से विदित होता है कि वह सभा, सभा नहीं है जिसमें वृद्ध न हो | मनुस्मृति के द्वितीय अध्याय के 121वें श्लोक में लिखा है कि जो व्यक्ति वरिष्ठ लोगों का अभिवादन करता हैं, शील युक्त है तथा नित्य बड़े-बूढ़ों की सेवा एवं उनकी आज्ञा का पालन करता है उसकी आयु, विद्या, यश और बल में ये चार चीजें बढ़ती हैं | "अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविन: | चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशोबलम ||" (मनुस्मृति 121) भारतीय संस्कृति और शास्त्रों में वयोवृद्धों के प्रति अत्यधिक श्रद्धा और आदर का भाव रहा है | यहाँ तक मृत बुजुर्गों का श्राद्ध एवं पिंडदान करके उनके मोक्ष की कामना करना भी हमारी परम्परा रही है | महाकवि भवभूति ने वृद्धों के सम्मान में यहाँ तक कहा कि वृद्धों का चरित आलोच्य नहीं होता – 'वृद्धास्ते न विचारणीय चरिता:|' (सिंह 279) यजुर्वेद संतान को अपने माता-पिता की सेवा और उनका सम्मान करने की शिक्षा देता है – 'यदापि पोष मातरं पुत्र प्रभुदितो धायान | इतदगे अनृणो भवाम्यहतौ पितरौ मंमाधा || (सिंह 203) अर्थात जिन माता-पिता ने अपने अथक प्रयत्नों से पाल-पोसकर मुझे बड़ा किया है अब मेरे बड़े होने पर जब वे अशक्त हो गये हैं तो वे जनक-जननी किसी भी प्रकार से पीड़ित न हो इस हेतु में उसी की सेवा संस्कार से उन्हें संतुष्ट कर अपने आनृश्य (ऋण के भार) से मुक्ति प्राप्त कर रहा हूँ |

आज अधिकांश लोग अपने बूढ़े माता-पिता का तिरस्कार करते हैं | उनकी सेवा करनी तो दूर की बात बल्कि उनसे घरेलू हिंसा की जाती हैं | श्रवण कुमार के देश में वृद्ध माता-पिता जिस त्रासद स्थिति से गुजर रहे है, वह बहुत भयावह है | प्राचीन समय में वृद्धों को ज्ञान पुंज के रूप में देखते थे लेकिन वर्तमान में उन्हें उपेक्षित और अनुपयोगी मनुष्य के रूप में देखते हैं | आज हमने भौतिकता को अपनाकर नैतिकता का परित्याग कर अपने वृद्धों को अलग-थलग कर दिया है | वर्तमान समय में पैसा ही सब गुणों से ऊपर हो गया

है तथा सभी रिश्तों और प्रेम की जगह आज व्यक्ति का स्वार्थ आगे है | आज मनुष्य हर बात को उससे होने वाले लाभ-हानि के पैमाने पर परखती है | वृद्ध व्यक्ति भी इसी परख का शिकार होकर रह गया है | पहले छोटे और कच्चे घरों में भी माँ-बाप के लिए स्थान होता था लेकिन आज बड़े से बड़े घर में माँ-बाप के लिए जगह नहीं | यहाँ तक उनके द्वारा बनाए गए खुद के घर भी उनकी जगह नहीं रही | जबकि पालतू जानवरों के लिए, नौकरों के लिए, अपने बच्चों के लिए तथा मेहमानों के लिए आदि सबके लिए कमरे है, पर अपने माँ-बाप के लिए नहीं | इस सन्दर्भ में सूर्य प्रताप की ये पंक्तियाँ बड़ी सार्थक लगती है जो उन्होंने अपने शोध आलेख "*वृद्ध सम्मान – उत्थान के साधन*" में लिखी हैं- 'मौला उसको बख्शे मेरा बेटा बड़ा भुलक्कड़ है | मेरे लिए कोठी में इक कमरा बनवाना भूल गया |' (सिंह 348) आजकल के छोटे-छोटे बच्चे भी दादा-दादी, नाना-नानी से कहानी किस्से सुनने की बजाय मोबाइल में लगे रहना ज्यादा पसंद करते हैं | वर्तमान परिस्थिति, पारिवारिक संरचना एवं सामाजिक परिवेश ने वृद्धों का जीवन कठिन व असुरक्षित बना दिया है | 21वीं शताब्दी में वैश्वीकरण, भौतिक वादी युग एवं पाश्चात्यीकरण के कारण भारतीय जीवन, और समाज में काफी द्रुत गति से बदलाव आ रहा है | परिणामतः जीवन मूल्यों, मानवीय रिश्तों और संबंधों में निरंतर गिरावट आ रही हैं | भौतिक उन्नति वरदान से अधिक अभिशाप सिद्ध हो रही है | भारतीय संस्कृति के मूल आधार संयुक्त परिवार आज विघटित होते जा रहे हैं | जहाँ संयुक्त परिवार विद्यमान है वहाँ वृद्धों की स्थिति अनुकूल नहीं है | नौकरी की तलाश, अधिक से अधिक धनार्जन की चाहत और शहरी जीवन के मोह में नई पीढ़ी नगरों की ओर पलायन कर रही है | '*दौड़*' उपन्यास में इसका जीवंत उदाहरण –

> "सिन्हा साहब बताते है उनका अमित मुंबई में है, वहीं उसने किश्तों पर फ्लैट खरीद लिया है | सोनी साहब बताते है उनका बेटा एच.सी.एल. की ओर से न्यूयॉर्क चला गया है | मजीठिया का छोटा भाई कैनेडा में हार्डवेयर का कोर्स करने गया था, वहीं बस गया है | ये सब कामयाब संतानों के माँ-बाप थे | हर एक के चेहरे पर भय और आशंका के साए थे | "इतनी दूर चला गया है बेटा, पता नहीं हमारा क्रिया करम करने भी पहुँचेगा या नहीं ?" (कालिया 68-69)

आज भारतीय परिवार और समाज में वृद्धों के प्रति उदासीनता एवं उपेक्षा पूर्ण दृष्टिकोण देखा जा रहा है | जिन माता-पिता ने अपना पूर्ण जीवन अपने बच्चों को पालने, पढ़ाने-लिखाने और उनकी जरूरतों को पूरा करने में लगा दिया | वृद्धावस्था में वही माता-पिता उपेक्षा और अकेले पन की पीड़ा का शिकार होते जा रहे है | जीवन भर परिवार को संजोकर रखने वाला व्यक्ति घर के एक कोने में उपेक्षित पड़ा रहता है या अस्पताल और वृद्धाश्रम में अपनी मौत की प्रतीक्षा करता है | माँ-बाप चार बच्चों को पाल लेते है, मगर चार बच्चे मिलकर माँ-बाप को नहीं पाल सकते | इस सन्दर्भ में सूर्य प्रताप अपने शोध आलेख "*वृद्ध सम्मान – उत्थान के साधन*" में लिखते हैं- 'माँ-बाप की दवाई का खर्चा उसे मजबूरी लगता है | उसे सिगरेट का धुआं जरूरी लगता है ||' (सिंह 348) भारतीय समाज और संस्कृति में वृद्धों को पारिवारिक धरोहर के रूप में माना जाता था | वृद्धों के संस्कार, पारंपरिक मूल्य और अनुभव परिवार और समाज के मार्गदर्शन का काम करते थे | वृद्ध जन ही रीति-रिवाज, तीज-त्यौहार, संस्कार, मूल्यों, कृषि विज्ञान तथा अन्य कौशल की जानकारी अपने परिवार व समाज को देते थे | जिससे ज्ञान, कला-कौशल एवं पारंपरिक-मूल्यों का पीढ़ी दर पीढ़ी स्थानांतरण होता रहता था | आधुनिक समाज में संस्कृति और सामाजिक मूल्यों के ह्रास का यह परिणाम है कि आज वृद्धजनों की स्थिति घर की पुरानी वस्तु की तरह हो गई है | केवल भारत में ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण वैश्विक परिदृश्य में वृद्धों की दयनीय स्थिति विकट रूप ले

रही हैं | वर्तमान में वृद्धों की समस्याएँ व्यक्तिगत और पारिवारिक न रहकर वैश्विक समस्या बन गई है | विश्व में वरिष्ठ नागरिकों की यह दयनीय स्थिति चुनौती के साथ अंतर्राष्ट्रीय समस्या बन गई है | आज समूचा विश्व वृद्धों की बढ़ती समस्याओं के प्रति चिंतित है और समाधान का प्रयास कर रहा है | सर्वप्रथम वृद्धावस्था के अध्ययन का प्रारम्भ यूरोप में 19वीं सदी के उत्तरार्ध में हुआ | वर्ष 1946 में वृद्धजनों से संबंधित पत्रिका journal of gerontology प्रकाशित हुई | इस पत्रिका ने सबसे पहले 'social Adjustment in old age' पर प्रतिवेदन प्रकाशित करवाया | 20वीं शताब्दी की फ्रांसीसी महिला लेखिका सिमोन द बुआ ने वृद्धावस्था विषय पर समाज को झकझोरने के लिए अपनी कलम उठाई और उसके परिणामस्वरूप सामने आई उनकी फ्रेंच रचना 'ला विएलेस्से' (1970) जिसका अनुवाद अंग्रेजी में पैट्रिक ओ ब्रैन ने 'ओल्ड एज नाम से किया है | वैश्विक स्तर पर वृद्धों की समस्याओं पर विमर्श हेतु अर्जेंटीना की पहल पर 1982 में वियना में 'विश्व वृद्ध सभा' का आयोजन हुआ | जिसमें 'वृद्धावस्था को सुखी बनाइये' का नारा दिया गया जो नारे तक सीमित रह गया | वर्ष 1990 में संयुक्त राष्ट्र संघ ने वृद्धों के सम्मान हेतु प्रतिवर्ष 01 अक्तूबर को 'अंतरराष्ट्रीय वृद्धजन दिवस' मनाने का निर्णय लिया | वर्ष 1999 को संयुक्त राष्ट्रसंघ ने 'अंतरराष्ट्रीय वृद्ध वर्ष' घोषित किया | भारत ने वर्ष 2000 को 'राष्ट्रीय वृद्धजन वर्ष' के रूप में मनाया गया | किन्तु ये जितने भी कदम है कागजों में अधिक और व्यवहार में कम देखे गए |

'वृद्ध विमर्श' परिवार, समाज और साहित्य में एक ज्वलंत मुद्दा है | यह विमर्श किसी विशेष वर्ग, जाति, धर्म, लिंग का विमर्श नहीं है बल्कि सम्पूर्ण मानव-समाज का विमर्श है | यह विमर्श सार्वदेशिक और सार्वकालिक है | वृद्धावस्था मानव हो या पशु, किसी धर्म या जाति, स्त्री या पुरुष, ग्रामीण हो या शहरी, देशी हो या विदेशी, निर्धन हो या संपन्न, शिक्षित हो अशिक्षित सभी के जीवन में निश्चित आयु के बाद वृद्धावस्था अवश्य आता है | वर्तमान समय में औद्योगीकरण, उपभोक्ता वादी संस्कृति और नगरीकरण के कारण वृद्धावस्था में समायोजन से संबंधित अनेक समस्याएं परिवार में बड़ी तीव्रता से उत्पन्न हो रही हैं वृद्धजनों को भी अपने बच्चों के साथ सामंजस्य बिठा कर चलना जरूरी है | बुजुर्गों को समझना चाहिए की प्रगति के लिए परिवर्तन आवश्यक है | आज का युवा जिस परिवेश में पल रहा है, वह वृद्धों के परिवेश से बिलकुल भिन्न है | आज की युवा पीढ़ी में पारिवारिक एकता से संबंधित नैतिक मूल्य टूटते जा रहे हैं | जिससे वृद्ध परिवार में अपनी भूमिका, स्थिति, आदर, सम्मान तथा प्रभुता को खोते जा रहे हैं | '*समय सरगम*' उपन्यास में दमयंती अरण्या से अपने दर्द को बाँटती हुई कहती है –

> " मैं तुम्हारी तरह अकेली होती तो क्यों परेशान होती | बच्चे साथ रह रहे हैं | मेरे घर मैं मेरा किचन चल रहा हैं, खर्च मैं कर रही हूँ और अपने कमरे में अकेले पड़ी रहती हूँ |......मैं ड्राइंग रूम में नहीं बैठ सकती, मेहमान नहीं बैठ सकते जबकि वहाँ का सब फर्नीचर साज-सामान मेरा अपना बनाया हुआ है और मैं किसी बेजान काठ की तरह देखी जाती हूँ |" (सोबती 74)

बाजार वाद के इस दौर में रिश्तों एवं मूल्यों का बाजारीकरण हो गया है | संयुक्त परिवार की अवधारणा समाप्त हो रही, जहाँ बुजुर्गों को आदर मिलता था | नई पीढ़ी अपने माता-पिता से अलग रहकर संयुक्त परिवार की जगह वैयक्तिक परिवार बना रहे हैं जिसमें पति-पत्नी और बच्चे रह गए | माता-पिता के सुख-दुःख से कोई मतलब नहीं रखना चाहते उन्हें वृद्ध-आश्रम का मार्ग दिखा रहे हैं | संयुक्त परिवार का विघटन, एकल परिवार में अभिवृद्धि एवं नगरीकरण के बढ़ते प्रभाव ने वृद्ध-जीवन को और भी अधिक कारुणिक बना

दिया है | आज हमारी चिंता का विषय विशाल वृद्ध जन समुदाय के जीवन को सुखमय बनाने से संबंधित है – चाहे वे पुरुष हो या स्त्री | यही कारण है कि वृद्धावस्था से जुड़े सेवामुक्ति से लेकर वृद्धाश्रम तक के अथवा देह से लेकर आयु तक के क्षीण होने के मुद्दे चिंतन और साहित्य सृजन के विविध मंचों पर छाए हुए हैं | साहित्य और विमर्श का एक महत्वपूर्ण बिंदु यह भी है कि यह उपेक्षितों को वाणी देने का काम करता है | समाज और साहित्य में वृद्ध कहीं निर्णायक भूमिका में तो कहीं उपेक्षित रहे हैं | 21वीं सदी में सामाजिक और आर्थिक संरचना में परिवर्तन के कारण वृद्धों की भूमिकाओं में भी बदलाव हुआ है | परिवर्तन की इन बारीकियों को समझने के लिए 21वीं सदी का हिंदी कथा साहित्य एक बेहतरीन माध्यम है | प्रस्तुत शोध कार्य में 21वीं शताब्दी के प्रारम्भिक दो दशकों के प्रमुख व चयनित हिंदी कथा साहित्य को शामिल किया जाएगा ताकि सम्पूर्ण शोध कार्य सुव्यवस्थित रूप से हो सके | जिसमें निम्नलिखित प्रमुख व चयनित उपन्यासों को शामिल किया जाएगा – ममता कालिया का '*दौड़*' (2000) कृष्णा सोबती का '*समय सरगम*' (2000), निर्मल वर्मा का '*अंतिम अरण्य*' (2000), रवीन्द्र वर्मा का '*पत्थर ऊपर पानी*' (2000), चित्रा मुद्गल का '*गिलिगडु*' (2002), राकेश वत्स का '*फिर लौटते हुए*' (2003) काशीनाथ सिंह का '*रेहन पर रग्घू*' (2008), रवीन्द्र वर्मा का '*आखिरी मंजिल*' (2008), हृदयेश का '*चार दरवेश*' (2011), ज्ञान चतुर्वेदी का '*हम न मरब*' (2014), रामधारी सिंह दिवाकर का '*दाखिल खारिज*' (2014), टेकचंद का '*दाई*' (2017), गोविन्द मिश्र का '*शाम की झिलमिल*' (2017), सूरज सिंह नेगी के तीन उपन्यास '*रिश्तों की आँच*' (2016), '*वसीयत*' (2018) तथा '*नियति चक्र*' (2019) इत्यादि | इसके साथ वर्ष 2000 ई. के पश्चात वृद्धों पर केंद्रित निम्नलिखित चयनित कहानियों में '*बिल्लियाँ बतियाती है*', '*लोहे का बैल*', '*बीस फुट के बापूजी*', '*कागभाखा*' (एस. आर हरनोट), 'साँझवाती' व '*दादी और रिमोट*' (सूर्यबाला), '*गेंद*' चित्रा मुद्गल, कृष्णा अग्निहोत्री के कहानी संग्रह '*अपना-अपना अस्तित्व*' में संकलित '*झुर्रियों की पीड़ा*', '*अपना-अपना अस्तित्व*', '*मैं जिन्दा हूँ*', '*तोर जवानी सलामत रहे*', '*उसका इतिहास*', '*यह क्या जगह है दोस्तों*', '*बदमिजाज*', '*प्रेमाश्रय*', '*बिदाई समारोह*', '*टीन के घेरे*', '*स्वाभिमानी*', '*वे अकेली थीं*', '*लाजबन्ती*' (भानुप्रताप कुठियाला), '*अग्निदाह*', '*हंसा ताई*', '*साजिश*' (दिलीप मेहरा) '*बेटा*' (सरोज भाटी), 'नहीं अम्मा' रणीराम गढ़वाली, '*ख़त*' शरद अग्निहोत्री, '*छल*' प्रदीप पंत इत्यादि को शामिल किया जाएगा |

1.1 वृद्ध : अर्थ एवं परिभाषा

वृद्ध का शाब्दिक अर्थ है- बढ़ा हुआ, पका हुआ, परिपक्व होने की अवस्था | बृहत हिंदी शब्दकोश में वृद्ध शब्द का अर्थ – "जो पूर्ण रूप से बढ़ चूका हो | जो अपनी प्रौढ़ावस्था पार कर चूका हो |"(वर्मा 2303) वृद्ध यानी कि वह व्यक्ति जिसकी उम्र अधिक हो गई हो, जिसने जीवन का बड़ा हिस्सा पार कर लिया हो और जो शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक दृष्टि से वृद्धावस्था की अवस्था में प्रवेश कर चूका हो | मनुष्य गर्भावस्था, शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था, प्रौढ़ावस्था इत्यादि अवस्थाओं से गुजरते हुए परिपक्वता की स्थिति अर्थात् वृद्धावस्था में पहुँचता है | प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन के सभी चरणों से होकर गुजरना पड़ता है | वृद्धावस्था भी इसी क्रम में है | शैशवावस्था में बालक का पोषण और संरक्षण माता-पिता करते हैं | युवावस्था में जीवन ऊर्जा व शक्ति से भरा होता है | इसमें युवा बड़े-बड़े सपने देखते हैं और उन्हें पूरा करने के लिए संघर्ष करते हैं | वृद्धावस्था जीवन का अनिवार्य पड़ाव है, इसे जीवन की संध्या भी कहा जाता है | इस अवस्था में मनुष्य स्थिर, शांत, शिथिल, अनुभवी एवं परिपक्व होता

है | जीवन के इस आखिरी पड़ाव तक पहुँचते-पहुँचते व्यक्ति अपने जीवन के सभी अनुभवों से गुजरते हुए परिपक्व हो जाता है | उसके पास जिन्दगी के अनुभवों का खजाना हो जाता है | सामान्यतः बुढ़ापा जीवन की उस अवस्था को कहते हैं जिसमें उम्र मानव जीवन के औसत काल के समीप या उससे अधिक हो जाती है | अर्थात जीवन का उतरार्ध, ढलती कायिक अवस्था ही वृद्धावस्था है | अंग्रेजी भाषा में वृद्धों के लिए (aged) वृद्ध, (aging) वयोवृद्ध, (elderly) बुजुर्ग, (senior citizens) वरिष्ठ नागरिक (senility) बुढ़ापा जैसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है | मनुष्य के संदर्भ में वार्द्धक्य की अवस्था के आधार पर दो भेद किए जा सकते हैं – प्रथम ज्ञान वृद्ध और द्वितीय वयोवृद्ध | ज्ञान वृद्ध से आशय ज्ञान प्राप्ति कर वृद्ध के समान सम्मान पाने की अवस्था से है | दूसरी ओर वयोवृद्ध शब्द शरीर की, उम्र की विभिन्न अवस्थाओं के दौरान अंततः प्राप्त अवस्था वृद्धावस्था को सूचित करता है | वृद्धावस्था वस्तुतः जीर्ण होती काया का पर्याय है इसलिए अनेक शारीरिक व्याधियों और कष्टों का केंद्र है | जीवन के इस आखिरी पड़ाव में आदमी के हाथ-पांव थकने लगते हैं | अंग शिथिल होने लगते हैं और सारा शरीर धीरे-धीरे जवाब देने लगता है | वृद्धावस्था में मनुष्य की इन्द्रियाँ कमजोर हो जाती हैं | मिस्र के दार्शनिक प्टाह-होटेप ने कहा था कि कितना कठिन और कष्टदायक होता है बुढ़ापा – "बीनाई मद्धिम, कान बहरे, शक्ति क्षीण, दिल बेचैन, मुंह से बोल बंद, कल की बात याद नहीं, हड्डियाँ चरमराती हैं. कितना दुर्भाग्य ले आता है बुढ़ापा |"(प्रसाद 34) भक्ति कालीन कृष्ण काव्य धारा के प्रवर्तक कवि सूरदास ने वयोवृद्ध का बड़ा ही मार्मिक, जीवंत और स्वाभाविक वर्णन किया है-

> "अब मैं जानी, देह बुढ़ानी |
>
> सीस पाऊं, कर कह्यौ न मानत, तन कौ दसा सिरानी |
>
> आन कहत, आनै कहि आवत, नैन नाक बहै पानी |
>
> मिटी गई चमक-दमक अंग-अंग की, मति अरु दृष्टि हिरानी |
>
> नाहिं रहि कछु सुधि तन-मन की, भई जु बात बिरानी |
>
> सूरदास अब होत बिगूचनि, भजि लै सारंग पानी |" (वर्मा 36)

अर्थात अब मैंने समझ लिया है कि शरीर वृद्ध हो गया | सिर-पैर-हाथ आदि अंग अब कहना नहीं मानते शरीर की दशा समाप्त हो गयी | कहना कुछ चाहता हूँ, पर कहा कुछ जाता है नेत्र और नाक से पानी बहता रहता है | सभी अंगों की चमक-दमक नष्ट हो गयी है | बुद्धि और दृष्टि (सोचने और समझने की शक्ति) लुप्त हो गयी है | तन और मन की कुछ सुध नहीं रही पूरी तरह दूसरों पर निर्भर हो गया | सूरदास कहते हैं कि अब मृत्यु रूपी संकट आना ही चाहता है, अतः शारंगपाणि भगवान् का भजन ले | यह पद वृद्धावस्था की शारीरिक और मानसिक दशा का वर्णनात्मक चित्रण नहीं करता, बल्कि गहराई से यह भी बताता है कि जीवन के इस चरण में मनुष्य को संसार की नश्वरता का बोध होता है | उम्र के साथ शरीर की कार्यक्षमता धीमी होती जाती है, बीमारियाँ बढ़ने लगती हैं और ऊर्जा कम हो जाती है | सामान्यतः उम्र के साथ-साथ प्रत्येक व्यक्तियों में शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तन देखे जा सकते हैं | ईश्वर ने प्रत्येक

प्राणी को निश्चित समय तक के लिए ही कार्यशील रखा है | वृद्धावस्था में कार्य क्षमता में कमी के कारण अनेक समस्याओं का सामना भी करना पड़ता है | वृद्ध व्यक्ति के वाह्य शरीर में स्पष्ट बदलाव दिखाई देने लगते है और आंतरिक शक्तियां क्षीण होने लगती है | '*वृद्धावस्था विमर्श*' पुस्तक में चन्द्रमौलेश्वर प्रसाद लिखते हैं कि सिमोन द बुआ कहती हैं कि -

> 'हिपोक्रेटस ने मानव जीवन की तुलना प्रकृति के चार मौसमों से करते हुए कहा था कि बुढ़ापा शीतकाल की तरह होता है | बुढ़ापे में कम अन्न की आवश्यकता होती है, साँस फूलने लगती है | सर्दी-खाँसी, लघुशंका की कठिनाई, घुटनों में दर्द, गुर्दों की बीमारी, खाज-खुजली, आँतों, आँखों और कानों में जल प्रवाह – इन सबके बावजूद वे कहते हैं कि बूढ़ों को अपना कार्य निरंतर करते रहना चाहिए |'(प्रसाद 21)

वृद्धावस्था शरीर की कमजोरियों और बीमारियों से घिरी अवश्य होती है, लेकिन यह निष्क्रियता का नहीं, बल्कि अनुभव और सक्रियता से जीने का समय है | इस अवस्था में भी संयमित आहार, नियमित कार्य, और सकारात्मक सोच से गरिमा बनाए रखी जा सकती है | बुढ़ापा मानव जीवन की एक ऐसी अवांछनीय अवस्था है जो नितांत प्राकृतिक सत्य है और एक ऐसा सत्य है जो अटल भी है | इसी प्रकार वृद्धावस्था के बारे में प्रसिद्ध उपन्यासकार विक्टर हयूगो का यह कथन है कि इस अवस्था में ऐसा लगता है जैसे तुम सारे छोटे बच्चों के पितामह हो | "यौवन और बुढ़ापे का वर्णन करते हुए वे बताते हैं कि वृद्ध की दाढ़ी झरने में चमकते पानी की तरह श्वेत होती है. युवा सुंदर है तो वृद्ध भव्य. युवक की आँखों में आग है तो वृद्ध की आँखों में प्रकाश |"(राजौरिया 26) कई कवियों ने वृद्धों को दंतहीन, जर्जर काया, रोग ग्रस्त, शिथिल इन्द्रियों की दशा के रूप में वर्णन करने का प्रयास किया | बुजुर्ग शब्द सुनते ही उम्र, ज्ञान व अनुभवों में परिपक्व व्यक्ति की छवि सामने आती है | वृद्धों की बात करने पर फ्रांसीसी लेखक अनातोले फ्रांस का यह कथन बहुत प्रसिद्ध है – 'काश बुढ़ापे के बाद जवानी आती' उनका यह कथन जवानी के जोश, ऊर्जा, उत्साह, स्फूर्ति और शक्ति आदि की ओर संकेत करता है जबकि बुढ़ापे में जवानी वाली ऊर्जा और कार्य क्षमता नहीं रहती बल्कि इस अवस्था में अनुभवों का विशाल भंडार होता है | वृद्धावस्था जीवनानुभवों का ऐसा प्रकाश पुंज है जिसके आलोक में युवा पीढ़ी अपने वर्तमान और भविष्य को संवार सकती है | कहते भी हैं, बड़े बुजुर्ग पथ प्रदर्शक होते हैं जो हमें अपने अनुभव से राह दिखाते हैं | वृद्ध जन हमें जीवन पथ के कठिन मोड़ पर उचित दिशा निर्देश करते हैं | बाल गंगाधर तिलक जी ने कहा था कि 'तुम्हें कब क्या करना है यह बताना बुद्धि का काम है, पर कैसे करना है यह अनुभव ही बता सकता है | उम्र भर कड़ी मेहनत व परिश्रम करने के बाद वृद्धावस्था व्यक्ति के आराम करने की अवस्था होती है | वह जीवन भर दूसरों की जरूरतों को पूरा करने और अपने कर्तव्यों को निभाने में ही लगा रहता है | वृद्धावस्था में उसे अपने ऊपर ध्यान देने का भरपूर समय मिलता है, परन्तु आधुनिक दौर में स्थिति विपरीत है | आधुनिक युग में प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति हुई है किन्तु इस उन्नति को पाने के लिए मनुष्य अपनों से निरंतर दूर होता जा रहा है | आज विज्ञान दिन-प्रतिदिन नई-नई उपलब्धियों को छू रहा है इसी वैज्ञानिक समाज में वृद्ध समुदाय उपेक्षित, आश्रयहीन और एकाकी जीवन जीने के लिए विवश है | बुढ़ापे के नितांत अकेलेपन को अनुभव करते हुए निराला जी लिखते है –

> मैं अकेला;

देखता हूँ, आ रही

मेरे दिवस की सांध्य बेला |

पके आधे बाल मेरे,

हुए निष्प्रभ गाल मेरे,

चाल मेरी मंद होती आ रही,

हट रहा मेला | (निराला 128)

यह कविता वृद्धावस्था का सजीव और मार्मिक चित्र प्रस्तुत करती है | इसमें कवि का आत्मबोध, जीवन की क्षणभंगुरता का दर्शन और संसार से धीरे-धीरे विमुख होने की प्रक्रिया स्पष्ट झलकती है | जीवन के अंतिम पड़ाव में वृद्धजन खुद को अकेलापन महसूस करते हैं | इस उम्र में उनके बाल सफेद, चेहरे की चमक खत्म, काम करने की क्षमता में गिरावट जाती है | इसके साथ वृद्धावस्था में मनुष्य के व्यवहार में उसी प्रकार परिवर्तन आता है जैसे छोटे बच्चों में होता है | कहा जाता है कि बुढ़ापा दूसरा बचपन होता है | इस अवस्था में व्यक्ति बच्चों की तरह जिद्दी, चिड़चिड़े, क्रोधित तथा हर छोटी-छोटी बात पर नाराज हो जाते है | बच्चों को संभालना और वृद्ध लोगों की देखभाल करना एक जैसा ही होता है | कथा सम्राट मुंशी प्रेमचंद ने अपनी कहानी *'बूढ़ी काकी'* में लिखा है कि "बुढ़ापा बहुधा बचपन का पुनरागमन हुआ करता है |"(खान 43) फ्रायड़ के मनोविश्लेषण में भी वृद्धावस्था की स्थिति को अबोध बालक का प्रतिरूप माना गया है | अतः वृद्धावस्था एक ऐसी अवस्था होती है, जिसमें परिवार के सहारे की आवश्यकता पड़ती है | जब परिवार का सहारा नहीं मिलता है अथवा परिवार के सदस्य बुजुर्गों की उपेक्षा करते है, तो उनकी स्थिति दयनीय हो जाती है | वृद्धावस्था जीवन की अंतिम, उपेक्षा पूर्ण तथा महत्वपूर्ण अवस्था है | इसमें बचपन, यौवन और प्रौढ़ता जैसी पहले की अवस्थाएँ शामिल रहती है | बचपन की स्मृतियों तथा यौवन के अनुभवों को समेटकर चलने वाला सारा जीवन ही वृद्धावस्था है | इस अवस्था में अनुभव और ज्ञान तो बढ़ते हैं, लेकिन अकेलापन और असुरक्षा जैसी समस्याएँ भी सामने आती हैं | वृद्धावस्था एक स्वाभाविक, मनोवैज्ञानिक और सार्वभौमिक तथ्य है | प्रो. अनिल अर्जुन अहिवले *'हिंदी साहित्य में दस्तक देता वृद्ध विमर्श'* पुस्तक में लिखते हैं –

> "आधुनिक मनोविज्ञान यह मानता है कि वृद्धावस्था का कोई एक कारण नहीं है, यह जीवन की प्रक्रिया का हिस्सा है | वृद्धावस्था में पहुँचते ही मनुष्य के भीतर शारीरिक और मानसिक बदलाव आते हैं | शरीर में बहुत सी बीमारियां लग जाती हैं – जैसे उच्च रक्तचाप, मानसिक मंदता, हड्डियों और मांसल हिस्सों में बदलाव, श्रवण और दृष्टि शक्ति में क्षीणता आदि लक्षण वृद्धावस्था को प्रभावित करते हैं |"(अहिवले 9)

वृद्धावस्था कोई एक कारण से उत्पन्न अवस्था नहीं है, बल्कि यह जीवन की प्राकृतिक और अनिवार्य प्रक्रिया है | इस अवस्था में शारीरिक रोग, मानसिक क्षीणता और सामाजिक उपेक्षा जैसी समस्याएं आती हैं | वृद्धावस्था व्यक्ति के लिए भले कष्टदायक हो लेकिन परिवार और समाज के लिए वृद्ध बड़े उपयोगी सिद्ध होते हैं | इस ओर संकेत करते हुए तरुण सागर जी कहते हैं –

> "बुजुर्गों की संगति करो क्योंकि उनकी एक-एक झुर्री पर हजार-हजार अनुभव लिखे होते हैं | उनके कांपते हुए हाथ, हिलती हुई गर्दन, लड़खड़ाते हुए कदम और मुरझाया हुआ चेहरा सन्देश देता है कि जो शुभ करना है, वह आज और इसी वक्त कर लो | कल कुछ नहीं कर पाओगे | बूढ़ा इंसान इस पृथ्वी का सबसे बड़ा शिक्षालय है |" (तरुणसागरजी 19)

बुढ़ापा किसी बोझ का प्रतीक नहीं, बल्कि जीवन की सबसे बड़ी सीख देने वाली अवस्था है | एक अफ्रीकी कहावत है कि 'जब एक वृद्ध व्यक्ति मरता है तो एक पूरा पुस्तकालय जलकर खाक हो जाता है |' अर्थात जिस तरह पुस्तकालयों के ज्ञान कोश का भंडार पुस्तकों में भरा होता है उसी तरह हमारे वृद्धों के पास अनुभव का अनमोल खजाना होता है जिनका उपयोग कर हम अपना जीवन सफल बना सकते हैं | वृद्धों के अनुभवों आशीर्वाद स्वरूप प्रयोग कर आदमी कहाँ से कहाँ पहुँच जाता है |

व्यवहारिक रूप से उन लोगों को वृद्ध कहा जाता है जो जीवन की एक विशेष आयु को पूर्ण कर चुके होते है | भारत में इस आयु को साठ वर्ष माना गया है | इस अवधि को पूर्ण करने वाले व्यक्तियों को वृद्ध, वरिष्ठ नागरिक या सीनियर सिटीजन आदि की संज्ञा दी गई है | पारंपरिक मान्यताओं के आधार पर भी 60 वर्ष से अधिक अवस्था वृद्धावस्था है | जिसमें प्रत्येक व्यक्तियों में झुर्रियों का पड़ना, बाल सफेद होना, दांत, हड्डी, नजर का कमजोर होना, कार्य क्षमता में कमी इत्यादि देखा जा सकता है | वृद्धावस्था कब प्रारंभ होती है इसको निर्धारित नहीं किया जा सकता है | विविध समाजों में वृद्धजनों की उम्र का निर्धारण अलग-अलग दृष्टिकोण से किया गया है | ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार – "सामान्य जीवन के परवर्ती काल को वृद्धावस्था कहा जाता है | कुछ विचारक शारीरिक शक्ति के ह्रास को वृद्ध नहीं मानते, बल्कि व्यक्ति जब तक क्रियाशील है तब तक वह वृद्ध नहीं है | परिपक्वता वृद्धावस्था की सर्वश्रेष्ठ पूंजी है |"(झा 2002) संयुक्त राष्ट्र संघ उन्हें वृद्ध नागरिक के रूप में परिभाषित करता है जो 65 वर्ष की उम्र के ऊपर है क्योंकि इस उम्र के बाद शारीरिक अंगों की कार्य क्षमता में कमी आने लगती है अर्थात शारीरिक अक्षमता प्रकट होने लगती है | अधिकांश पाश्चात्य राष्ट्रों ने 65 वर्ष की उम्र को सेवानिवृत्ति के लिए निर्धारित किया है | जहाँ तक भारत का प्रश्न है, सेवानिवृत्ति की उम्र 55 वर्ष से 62 वर्ष के मध्य रखी गयी है |"(चौधरी 25) भारत में जनगणनात्मक तथ्यों के आधार पर 60 वर्ष की उम्र को वृद्धावस्था के रूप में वर्गीकृत किया है | (सूचना मंत्रालय 1998) एच. डी. मेयर के अनुसार- "हर एक व्यक्ति में शारीरिक एवं मानसिक ह्रास होने की प्रक्रिया का समय भिन्न-भिन्न होता है परन्तु सर्वसम्मति से मध्यवय एवं वृद्धावस्था की विभाजन रेखा 60 वर्ष मानी गयी है | (सिंह 21) डॉ. पी. एम. भुमरे अपनी पुस्तक 'साहित्य में चित्रित वृद्धावस्था : जीवन और त्रासदी" में लिखती है – "वृद्ध से हमारा आशय उस व्यक्ति से है जिसने 60 वर्ष की आयु पार कर ली है | इस दृष्टि से साठ वर्ष तक की आयु के व्यक्तियों की पहचान नई पीढ़ी और उससे अधिक आयु के व्यक्तियों की पहचान पुरानी पीढ़ी के रूप में की जा सकती है |"(भुमरे 14) यह कथन आयु के आधार पर नई और पुरानी पीढ़ी की पहचान करने का प्रयास करता है | यह कथन जैविक और सामाजिक दोनों दृष्टियों से प्रासंगिक है |

> 60 वर्ष या उससे ऊपर के वृद्धों की संख्या 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में करीब 104 मिलियन हैं | जिसमें 53 मिलियन बुजुर्ग महिला है और 51 मिलियन बुजुर्ग पुरुष हैं | ग्रामीण और शहरी क्षेत्र के सन्दर्भ में देखे तो बुजुर्ग आबादी का 71% ग्रामीण क्षेत्रों में जबकि 29% शहरी क्षेत्रों में रहता है | ग्रामीण क्षेत्रों की वृद्ध आबादी में 66% पुरुष और 28% महिलाएं काम कर रहे थे, जबकि शहरी क्षेत्र में 46% बुजुर्ग और 11% बुजुर्ग महिलाएं कार्यरत थी | वृद्धजनों में लिंगानुपात प्रति 1000 पुरुषों पर 1033 महिलाओं का था | (केन्द्रीय सांख्यिकी कार्यालय, भारत में वृद्ध 2016)

ये आँकड़े भारत में वृद्धजनों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति का स्पष्ट चित्र प्रस्तुत करते हैं | ये केवल संख्या नहीं बल्कि शहरी-ग्रामीण, कार्य भागीदारी और लिंगानुपात जैसी वास्तविकताओं को उजागर करते हैं | इन आँकड़ों से स्पष्ट है कि भारत में वृद्धजन आबादी न केवल संख्या में बड़ी है, बल्कि उनकी समस्याएँ लिंग, स्थान और आर्थिक स्थिति के आधार पर विविध हैं | अंत: वृद्धजनों की बढ़ती आबादी को देखते हुए सामाजिक सुरक्षा नीतियों और योजनाओं का सशक्त क्रियान्वयन समय की मांग है | "वृद्धावस्था के दौरान होने वाले परिवर्तनों तथा वृद्धावस्था की समस्याओं और परिस्थितियों का विधिवत अध्ययन जेरेंटोलोजी में किया जाता है | जेरेंटोलोजी की उत्पति ग्रीक शब्द 'जेरान' (Geron) तथा 'लोगोस' (logos) से हुआ है | ग्रीक भाषा में Geron का अर्थ है वृद्ध व्यक्ति (Old Man) तथा 'लोगोस' (logos) का अर्थ है बातचीत (speech) करना | अर्थात् वृद्धों के बारे में अध्ययन करना ही जेरेंटोलोजी कहलाता है |"(सिंह 21) जेरेंटोलोजी में वृद्धों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक पक्षों का अध्ययन किया जाता है | वृद्धावस्था जीवन की एक जैविक घटना है जो उत्तर प्रौढ़ावस्था के बाद यानी साठ-पैंसठ वर्ष के बाद आरम्भ होती है | परन्तु वृद्ध होने का यह नियामक वैज्ञानिक (जैविक) हो सकता है – सामाजिक या व्यवहारिक नहीं | व्यक्ति का रहन-सहन, खान-पान, वातावरण, नस्ल, सेहत आदि कई ऐसे पहलू हैं जहाँ जाकर किसी निश्चित उम्र को 'वृद्ध होने की कसौटी नहीं माना जा सकता | वृद्धावस्था के लिए कोई निश्चित उम्र निर्धारित नहीं की गयी है परन्तु आम तौर पर 60 वर्ष और उसके बाद के व्यक्ति को वृद्ध माना जाता है | जैसा कि अमेरिकी जिस्ट होवेल ने कहा है "बुढ़ापा ऐसी ढलान नहीं जिस पर सभी समान रूप से फिसलते जाते हैं | वह ऐसी ऊबड़खाबड़पन सीढ़ियाँ हैं जिन्हें चढ़कर कोई जल्दी पहुँचता है तो कोई देर से |"(प्रसाद 24) इस अवस्था में मनुष्य शारीरिक और मानसिक रूप से अक्षम तथा सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से विपन्न दिखाई देते हैं | यही वृद्धावस्था जीवन अनुभवों के भंडार भी है | परिवार और समाज को उन अनुभवों से अपनी समस्याओं का समाधान मिल जाता है | प्राचीन काल से ही भारतीय समाज में वृद्धजनों को सम्मान व प्रतिष्ठा मिलती थी | बुजुर्ग परिवार के मजबूत स्तम्भ होते थे | परिवार के लिए संपत्ति का संचय और खर्च उनके नियंत्रण में होता था | परिवार के सभी फैसले घर के बड़े बूढ़े ही करते थे | परिवार के बुजुर्गों की आज्ञा का पालन करना घर के सदस्यों का कर्तव्य होता था | पश्चिम की संस्कृति, नगरीकरण, भूमंडलीकरण, युवाओं का पलायन, आर्थिक प्रतिस्पर्धा तथा भारतीय युवाओं की आधुनिक जीवन शैली ने हमारे पारंपरिक मूल्यों का ह्रास किया है | परम्परागत संयुक्त परिवार वर्तमान में एकल परिवार में विघटित हो रहे हैं | आज परिवार का स्वरूप पति-पत्नी और दो बच्चे तक सिमट गया | नई पीढ़ी को संस्कार देने वाले दादा-दादी के लिए कोई स्थान नहीं है | रिश्तों संबंधों की गरिमा व महता से वंचित नई पीढ़ी कैसे समाज का निर्माण करेंगे यह विचारणीय हैं | जिसके परिणामस्वरूप वृद्ध उपेक्षित और अकेले पन के शिकार हो रहे हैं | वह परिवार का मुखिया आज परिवार के लिए बोझ समझा जाने

लगा है | नौकरी या काम-धंधे से निवृत्ति के बाद हर किसी की आर्थिक निर्भरता बढ़ जाती है | यही कारण वृद्धों के प्रति संवेदन हीनता बढ़ रही है, जिससे उनकी गरिमा और आत्मनिर्भरता प्रभावित होती है | युवाओं को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वृद्धावस्था जीवन का वह चरण है, जिससे प्रायः हर किसी को गुजरना है | भारतीय संस्कृति में वृद्धजनों को 'मार्गदर्शक' और 'संस्कार वाहक' माना गया है, जबकि कुछ आधुनिक समाजों में उन्हें बोझ समझा जाने लगा है |

वृद्धावस्था की परिभाषा –

- **हिन्दवी शब्द कोश में वृद्ध** – "मनुष्य की तीन अवस्थाओं में से एक अवस्था जो युवावस्था के उपरांत और सबके अंत में आती है बुढ़ापा, जरा | यह अवस्था प्रायः साठ वर्ष के उपरांत आती है | इसमें मनुष्य दुर्बल और क्षीण हो जाता है, उसके सब अंग शिथिल हो जाते है, शरीर की धातुएँ तथा इंद्रियाँ आदि भी बराबर क्षीण हो जाती हैं, और इसके अंत में मृत्यु आ जाती है |"
- **ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी** में "वसक का अर्थ आयु में बड़े होने से अथवा लंबे समय से अस्तित्व में होने से लिया गया है | वहीं Old Age को वृद्धावस्था कहा गया है |"(मेहरा 16)
- **अंग्रेजी हिंदीकोश** के अनुसार वृद्ध शब्द को old शब्द का हिंदी पर्याय माना गया है | old का अर्थ – बूढ़ा, वृद्ध, पुराना आदि होता है |
- **Bromley (1988) के अनुसार,** 'वृद्धावस्था जीवन की वह अवधि है जिसमें ह्रास धीमी और क्रमिक होता इसकी क्षतिपूर्ति की जा सकती है |"
- **Birren (1959) के अनुसार,** 'वृद्धावस्था से तात्पर्य उन परिवर्तनों से है, जो प्राणी में बढ़ती हुई शारीरिक आयु के साथ दृष्टिगत होती है |"
- **Roebuck, 1979) के अनुसार,** 'वृद्धावस्था से अभिप्राय व्यक्ति की शक्ति, योग्यता, एवं कौशल में ह्रास से है जिससे व्यक्ति अपने कार्यो को संपादित करने में असमर्थ पाता है |"
- **वृहत हिंदी शब्दकोश,** 'जो पूर्ण रूप से बढ़ चूका हो | २. जो अपनी प्रौढ़ावस्था पार कर चूका हो | बड़ी उम्र का | बूढ़ा | ६० वर्ष या अधिक उम्र वाला व्यक्ति |"(वर्मा और वर्मा 2303)

इस प्रकार कह सकते है कि वृद्ध केवल उम्र का एक पड़ाव नहीं है, बल्कि यह जीवन का ऐसा चरण है जहाँ व्यक्ति अनुभवों का खजाना लिए होता है, किन्तु शारीरिक, मानसिक और सामाजिक चुनौतियों से भी जूझता है |

1.2 विमर्श : अर्थ एवं परिभाषा

साहित्य के संदर्भ में 'विमर्श' संकल्पना हिंदी साहित्य के आधुनिक काल की देन है | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में यह संकल्पना विविध विषयों के साथ प्रयुक्त मिलती है | आज दलित-विमर्श, स्त्री-विमर्श, अल्पसंख्यक-विमर्श, पर्यावरण-विमर्श,

प्रवासी-विमर्श, दिव्यांग-विमर्श, किसान-विमर्श, किन्नर-विमर्श, पुरुष-विमर्श, बाल-विमर्श, आदिवासी-विमर्श और वृद्ध-विमर्श आदि संकल्पनाएँ काफी रूढ़ हुई दिखाई देती हैं | विमर्श को केंद्र में रखकर साहित्यिक पहल का श्रेय प्रसिद्ध हिंदी कथाकार और हंस पत्रिका के संपादक राजेन्द्र यादव को जाता है | प्रसिद्ध हिंदी की मासिक पत्रिका 'हंस' के संपादक के नाते उन्होंने स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श, और अल्पसंख्यक विमर्श की न केवल पहल की है, बल्कि इन विषयों को आज पूरे देश भर के साहित्य जगत में चिंतन मनन का विषय बनाया | विमर्श शब्द जिसका सामान्य अर्थ है गहन सोच-विचार, विचार-विनिमय, चिंतन-मनन तथा विवेचन करना | बृहत हिंदी शब्द्कोश में विमर्श शब्द का अर्थ – "(किसी विषय का) विवेचन या विचार | पर्यालोचन |"(वर्मा 2273) प्रो. अनिल अर्जुन अहिवले '*हिंदी साहित्य में दस्तक देता वृद्ध विमर्श*' पुस्तक में लिखते हैं – 'विमर्श' शब्द का अर्थ होता है विचार, विवेचन या परीक्षण | किसी भी समस्या व परिस्थिति को देखकर उसके प्रति वैचारिक धारणाओं का मंथन करते हुए उस पर पूर्ण रूप से चिंतन करना विमर्श कहलाता है | (अहिवले 7) विमर्श का अभिप्राय किसी विषय पर गहन विचार-विमर्श, चर्चा या मंथन करने से है, जिसमें किसी विषय, समस्या या मुद्दे पर तर्कसंगत से विचार किया जाता है और उसके विभिन्न पक्षों का विश्लेषण किया जाता है | "विमर्श का मतलब है बातचीत, विचार, विवेचन, परीक्षण, समीक्षा, तर्क आदि |"(श्रीवास्तव 741) विमर्श केवल साधारण बातचीत नहीं है, बल्कि यह तर्कपूर्ण और गहन चर्चा है | इसमें विचारों का आदान-प्रदान होता है और किसी निष्कर्ष या समाधान तक पहुँचने का प्रयास किया जाता है |

> "विमर्श शब्द को सामान्य अर्थ में विचार, विवेचन तथा परीक्षण के रूप में लिया जाता है | किसी भी समस्या या परिस्थितियों को देखकर उनके प्रति मानसिक, सांस्कृतिक तथा वैचारिक धारणाओं का समाहार करते हुए पूर्ण रूप से चिंतन करना तथा उसे समझने का प्रयास करना विमर्श है |" (बाहरी 466)

विमर्श एक संगठित, गहन और बहुआयामी चिंतन प्रक्रिया है, जो किसी समस्या या परिस्थिति को समझने और समाधान खोजने के लिए की जाती है | इसमें केवल विचारों का आदान-प्रदान बल्कि विभिन्न दृष्टिकोणों का संतुलित परीक्षण और विवेचन भी शामिल है | लोक भारती राजभाषा शब्द कोश (हिंदी-अंग्रेजी) के अनुसार विमर्श का अर्थ पूर्ण चिंतन-मनन, गहन विश्लेषण से है | साहित्यिक परिप्रेक्ष्य में देखें तो इसे 'विचार का गहन विचार' और सर्वस्व की प्राप्ति की आकांक्षा' कहा जा सकता है | अंत: किसी विषय या समस्या को गहराई से समझने और उसके विभिन्न पहलुओं पर विचार करने की प्रक्रिया विमर्श है |

हिंदी में 'विमर्श' शब्द अंग्रेजी के (discourse) शब्द का पर्याय है जिसका अर्थ सुदीर्घ तथा गंभीर चिंतन से लिया जाता है | अर्थात किसी भी समस्या या स्थिति को एक कोण से न देखकर भिन्न मानसिकताओं, दृष्टियों, संस्कारों और वैचारिक प्रतिबद्धताओं को समाहार कर देखना | अंग्रेजी-अंग्रेजी हिंदी शब्दकोश में Discourse शब्द का अर्थ है – "A long and serious discussion of a subject in speech or writing" किसी विषय पर गंभीर चर्चा (भाषण या लेख)"(कुमार और साही 358) समाजशास्त्री व दार्शनिक अकसर (discourse) शब्द का प्रयोग करते हैं | जब एक समूह के लोग समान रूप से कोई विचार अभिव्यक्त करना चाहें तो उसके लिए समाजशास्त्री व दार्शनिक द्वारा (discourse) शब्द का प्रयोग किया जाता है | इसे अंग्रेजी के डिस्कोर्स शब्द का समानार्थी समझा गया है | ऑक्सफोर्ड अडवांसड लेनर्स डिक्शनरी के अनुसार Discourse शब्द का अर्थ –

1.“A Long and Serious Treatment of a Subject in Speech or Writing-

डिक्शनरी. रेफरेंस. कॉम के अनुसार Discourse शब्द का अर्थ है

1. “Communication of thought by words, talk, conversation; earnest and intelligent discourse.
2. A formal discussion of a subject in speech or writing as a dissertation, treatise, sermon, etc.-
3. (linguistic) any unit of connected speech or writing longer than a sentence.” (देवी और सपना 18)

डिस्कोर्स शब्द का आशय सामान्य बातचीत से लेकर औपचारिक और शैक्षणिक लेखन तक फैला हुआ है | भाषाविज्ञान में यह वाक्य से बड़ी इकाई है, जो किसी विषय पर गंभीर और संरचित चिंतन को व्यक्त करती है | फादर कामिल बुल्के ने अपने ‘अंग्रेजी हिंदी शब्दकोश’ में ‘डिस्कोर्स’ के लिए कुछ समानार्थी शब्द दिए हैं- भाषण, प्रचालन, प्रबंध, निबंध आदि समानार्थी शब्द दिए हैं | (तिवारी और सबा 12) ऑक्सफोर्ड के शब्दकोश में ‘डिस्कोर्स’ का अर्थ दिया गया- संभाषण, प्रवचन, व्याख्यान तथा किसी विषय पर महत्वपूर्ण तथा गंभीर स्वरूप का विवेचन या भाषण | ‘डिस्कोर्स’ में इस बात पर महत्व दिया जाता है कि किसी एक विषय पर जहाँ गंभीर ऐसी चर्चा चलती रहती है, उसे विमर्श या डिस्कोर्स कहा जाए | डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे अपनी पुस्तक ‘*विमर्श की अवधारणा स्वरूप और संदर्भ*’ में विमर्श शब्द को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं -

> “विमर्श शब्द की अवधारणा जानने के लिए उसके कोश गत अर्थ को जान लेंगे | हिंदी शब्दकोश (रामचंद्र वर्मा) में विमर्श के कुल 6 अर्थ दिए गए हैं – 1. मन में होने वाली अहंभाव की स्फूर्ति 2. विचार या विवेचन 3. आलोचना 4. परीक्षा 5. परामर्श 6. नाटक की पॉच संधियों में से एक, जिसमें बीज का सबसे अधिक विकास होता है उपर्युक्त छ: अर्थों में से अंतिम अर्थ नाटक की कथा वस्तु की समीक्षा से संबंधित है इसलिए वह हमारे विवेचन की दृष्टि से काम का नहीं है | अन्य पाँच अर्थों का सम्बन्ध विमर्श की अवधारणा से हैं | जो पहला अर्थ है मन में होने वाली अहं भाव की स्फूर्ति इस अर्थ में जो अहं है उसका अर्थ अहंकार न लेते हुए, मनुष्य होने का अहसास इस अर्थ में लें तो अस्मिता की अवधारणा स्पष्ट हो सकती है | अहं के दो अर्थ शब्दकोश में मिलते हैं- अहंकार और अभिमान | अहं शब्द का अर्थ हमें अभिमान अर्थ में लेना है | खुद के प्रति अभिमान ! अपने प्रति अभिमान का संबंध व्यक्ति की अस्मिता के साथ आता है | इस प्रकार विमर्श का संबंध अस्मिता के साथ जुड़ा रहता है | सामुदायिक अस्मिता से जोड़कर ही इस प्रश्न की चर्चा की जानी चाहिए और की भी जाती है | (रणसुभे 11-12)

विमर्श का वास्तविक अर्थ केवल ‘चर्चा’ नहीं है, बल्कि यह विचार, आलोचना, परामर्श और आत्म-अभिमान से जुड़ी हुई वह प्रक्रिया है जो व्यक्ति और समाज दोनों को उनकी अस्मिता से जोड़ती है | इसलिए विमर्श की अवधारणा हमेशा सामाजिक न्याय और अस्मिता की चेतना से संबंधित रहती है | डॉ. फतेह सिंह अपने आलेख ‘*वृद्ध विमर्श : कल और आज*’ में लिखते है -

> "विमर्श युग की एक अनिवार्य मांग के तहत अस्तित्व में आता है | विमर्श वर्ग या समुदाय के अस्तित्व, उसकी आशा-आकांक्षा उसके अधिकार बोध और संघर्ष से जुड़े मुद्दे संबंध बहस की एक वैचारिक प्रक्रिया है | विमर्श एक संवाद, किसी विषय की समीक्षा है, विचारों के आदान-प्रदान की प्रक्रिया है | अंत: विमर्श संवाद और तर्क द्वारा विषय के वस्तुगत सतह और जमीनी हकीकत से परिचय कराकर उसका एक निश्चित स्वरूप निर्मित कर उसके मूल चरित्र और भावी कार्यसूची का निर्माण करता है |" (कामने और देव 69)

विमर्श युग की आवश्यकता से जन्म लेता है | यह वर्ग या समुदाय की पहचान, अधिकार और संघर्ष से जुड़ी हुई वैचारिक व आलोचनात्मक प्रक्रिया है | विमर्श संवाद और तर्क के माध्यम से किसी विषय की वास्तविकता को उजागर करता है और उसके आधार पर भविष्य की कार्य योजना तय करता है |

विमर्श का मतलब – बातचीत, विचार, विवेचन, परीक्षण, समीक्षा, तर्क तथा जीवंत बहस होता है | किसी भी समस्या पर जब बहस होती है तो उसके केंद्र में मनुष्य जीवन से संबंधित प्रश्न होने चाहिए परन्तु मनुष्य संस्कृति की परम्परा यह बताती है कि मनुष्य के चिंतन के केंद्र में मनुष्य नहीं था | राजा, ईश्वर, अध्यात्म, प्रकृति आदि मनुष्य की सोच के केंद्र में थे | मनुष्य की सोच के केंद्र में मनुष्य नवजागरण के बाद आता है | विश्व के अनेक देशों में उस देश की आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से उपेक्षित, शोषित, गुलाम तबकों पर कभी गंभीरता से विवेचना ही नहीं हुई | यह वर्ग हमेशा से वंचित रहा तथा प्रस्थापित वर्ग की दया पर ही जीता रहा | जब शिक्षा और व्यक्तित्व विकास के अवसर सबको उपलब्ध कराए गए तब दबे-कुचले, उपेक्षित, वंचित, शोषित, हाशिए पर रखे वर्ग ने अपने अस्तित्व और अस्मिता को लेकर प्रश्न किए और अपने मानवाधिकारों की मांग रखी | परिणामस्वरूप इस वर्ग की दशा पर प्रस्थापित और उपेक्षित दोनों वर्गों में जो बहस शुरू हुई उसी को विमर्श कहा जाता है | विमर्श का संबंध अस्मिता और अपने मानवाधिकारों एवं अपनी पहचान के साथ गहरा संबंध है | पहचान केवल व्यक्तिगत रूप में नहीं अपितु अपने जैसे संपूर्ण समुदाय की पहचान और अस्मिता से है | विमर्श शब्द का अर्थ व्यक्ति के बहाने सामुदायिक अस्मिता का विवेचन, विचार समीक्षा या आलोचना से है | डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे अपनी पुस्तक 'विमर्श की अवधारणा स्वरूप और संदर्भ' में विमर्श शब्द को और अधिक स्पष्टता प्रदान करते हुए लिखते हैं – "आज विमर्श का संबंध गहरे रूप से दबे-कुचले, शोषित, वंचित श्रमिक स्त्री-पुरुष, वृद्ध आदि के साथ जुड़ गया है | वास्तव में यह अर्थ संकुचित है क्योंकि विमर्श तो विश्व में फैले किसी भी विषय को लेकर शुरू हो सकता है | लेकिन आज विमर्श का संबंध परम्परा द्वारा नकारे गए वर्ग के साथ जुड़ गया है | इस सम्पूर्ण विवेचन से विमर्श की अवधारणा इन लक्षणों के आधार पर स्पष्ट की जा सकती है-

1. विमर्श में किसी एक विचार पर गंभीरता से चर्चा होती है |
2. विमर्श से संबंधित विचार या विषय के विविध आयामों पर विवेचना होती है |
3. उस विषय या विचार की आलोचना भी हो सकती है |
4. विमर्श की शुरुआत व्यक्ति के मानवाधिकार की माँग से होती है |
5. विमर्श का संबंध सामुदायिक अस्मिता के साथ होता है | (रणसुभे 12)

विमर्श एक बहुआयामी प्रक्रिया है जिसमें गंभीर चर्चा, आलोचना, विविध दृष्टियों से विवेचना और मानवाधिकार चेतना का समावेश होता है | इसका अंतिम उद्देश्य व्यक्ति और समुदाय की अस्मिता को स्थापित करना और सामाजिक न्याय की दिशा में ठोस मार्ग प्रशस्त करना है | डॉ. अर्जुन चव्हान अपनी पुस्तक '*विमर्श के विविध आयाम*' में लिखते हैं –

> किसी बात पर गहन सोच विचार विनिमय करना ही विमर्श है | कहना सही होगा कि किसी विषय विशेष के सन्दर्भ में गंभीरता से चिंतन, मनन, विवेचन, सलाह, मशविरा, विचार विनिमय करना ही विमर्श करना है | बहुत कारगर ढंग से सोचकर वस्तुनिष्ठ तथा तर्क संगत विवेचन और आलोचना करना ही विमर्श करना है | विमर्श किसी भी विषय को लेकर हो सकता है | व्यक्ति, समाज, वर्ग, जाति, विचार तथा कोई विशिष्ट स्थिति आदि सब विमर्श के विषय हो सकते हैं | (चव्हान 19)

विमर्श एक ऐसी संकल्पना है जिसके अंतर्गत संसार के किसी भी विषय की गहराई को समझकर उसका तर्कसंगत विवेचन-विश्लेषण और समाधान प्रस्तुत करना है | इसका दायरा व्यक्ति से लेकर समाज और जाति-वर्ग तक फैला हुआ है | आज विमर्श के अंतर्गत दलित, स्त्री, आदिवासी, किसान, किन्नर, पर्यावरण, बाल और वृद्ध इत्यादि कई विषय शामिल हो रहे हैं | वर्तमान में साहित्य की सभी विधाओं में उपर्युक्त सभी विषयों में विमर्श की संभावनाएँ हैं |

विमर्श की परिभाषाएँ :-

- 'संस्कृत हिंदी शब्द कोश' में विमर्श को इस प्रकार परिभाषित किया है – "विचार-विनिमय, सोच-विचार, परीक्षण, चर्चा |"(आपटे 946)
- 'मानक हिंदी कोश' में विमर्श का अर्थ इस प्रकार दिया गया है – "(1) सोच-विचार कर तथ्य या वास्तविकता का पता लगाना | (2) किसी बात या विषय पर कुछ सोचना-समझना | विचार करना | (3) गुण-दोष आदि की आलोचना या मीमांसा करना (डेलीबरेशन) | (4) जाँचना और परखना | (5) किसी से परामर्श या सलाह करना |"(वर्मा 77)
- संपादक आबिद रिजवी ने 'बृहत् हिंदी शब्दकोश' में 'विमर्श' का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा है कि "विमर्श यानी समालोचना, परामर्श, परीक्षा, किसी बात पर अच्छी तरह विचार करना |"(रिजवी 922)
- 'ज्ञान शब्दकोश' के अनुसार, "विचार, विवेचन, परीक्षण, समीक्षा, तर्क, ज्ञान"(श्रीवास्तव 741)
- 'हिंदी विश्व कोश' में विमर्श के आशय को इस प्रकार समझाया है – "1. वितर्क, विचारना | 2. तथ्यानुसंधान, किसी तथ्य का अनुसन्धान | 3. विवेचना, आलोचना | 4. युक्ति द्वारा परीक्षा करना 5. असंतोष 6. अधैर्य, अधीरता |"(वसु 478)
- डॉ. श्याम बहादुर वर्मा ने 'वृहत हिंदी शब्दकोश' में विमर्श' का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा है कि "किसी विषय का विवेचन या विचार | २. वाद-विवाद | बहस | ३. परामर्श | सलाह | (वर्मा 2363)
- डॉ. हरदेव बाहरी के अनुसार – 'विमर्श' का अंग्रेजी समानार्थी शब्द Consultation है"(बाहरी 593)

- डॉ. हरदेव बाहरी द्वारा सम्पादित ‘English Hindi Dictionary’ में ‘consult’ शब्द को ‘विमर्श’ का पर्याय मानते हुए उसका अर्थ दिया है – “किसी आदमी या किताब से संपर्क करना, विचार विनिमय करना |”(बाहरी 168)
- नामवर सिंह ने विमर्श को हिंदी में मिशेल फुको के डिस्कोर्स का अनुवाद मानते हुए परिभाषा दी है – “विमर्श का मतलब किसी एक वस्तु के बारे में लोगों से बातचीत करने के तरीके या सोचने की पद्धति से है | ये तरीके मिल जुलकर लोगों की सामान्य धारणा को बनाते है |”(यादव 196)
- भोलानाथ तिवारी के अनुसार विमर्श का अर्थ – “तबादला-ए-ख्याल, परामर्श, मशविरा, राय-बात, विचार-विनिमय, विचार-विमर्श, सोच-विचार |”(तिवारी 572)
- डॉ. रोहणी अग्रवाल लिखती हैं- “किसी भी समस्या या स्थिति को एक कोण से न देखकर भिन्न मानसिकताओं, दृष्टियों, संस्कारों और वैचारिक प्रतिबद्धताओं का समाहार करते हुए उलट-पुलट कर देखना, उसे समग्रता में समझने की कोशिश करना और फिर मानवीय सन्दर्भों में निष्कर्ष प्राप्ति की चेष्टा करना |”(अग्रवाल 264)
- ‘क्रिस बार्कर’ के अनुसार “विमर्श, ज्ञान की वस्तुओं का बोधगम्य तरीके से परिकल्पना करते हैं, संरचना करते हैं, साथ तर्क के अन्य तरीकों को अबोधगम्य बनाते हैं |”(बार्कर 229)

उपर्युक्त कोश गत अर्थ देखने के पश्चात यह स्पष्ट होता है कि ‘विमर्श में सोच-विचार, चिन्तन, परामर्श, विनिमय का होना जरूरी है | किसी बात पर गहन सोच-विचार विनिमय करना ही विमर्श है | “सामान्यतः विमर्श से तात्पर्य है चर्चा- परिचर्चा, संवाद, तर्क-वितर्क, आदि दूसरे शब्दों में कहा जाए तो जब व्यक्ति द्वारा किसी समूह में किसी विषय, विचार, समस्या या स्थिति पर चिंतन अथवा चर्चा-परिचर्चा किया जाता है | या जब कोई व्यक्ति किसी विषय को लेकर अकेले में गहन, चिन्तन, मनन करके किसी समूह में जाकर उस विषय पर अन्य व्यक्तियों से तर्क-वितर्क करता है तो उसे विमर्श कहते हैं | वस्तुतः कह सकते है कि आपस में तर्क वितर्क द्वारा समस्या को प्रत्येक दृष्टिकोण द्वारा परिभाषित करते हुए उचित समाधान तक पहुँचाने का प्रयास करना ही विमर्श कहलाता है |

1.3 वृद्ध विमर्श : अभिप्राय और विविध आयाम

आधुनिक हिंदी साहित्य में विभिन्न विमर्शों का दौर चल रहा है | स्त्री-विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, किन्नर विमर्श, पर्यावरण विमर्श, अल्पसंख्यक विमर्श आदि | उसी तरह वृद्ध विमर्श भी आधुनिक साहित्य का महत्वपूर्ण विषय बन गया है | वृद्ध विमर्श की परम्परा तब शुरू हुई जब समाज में वृद्धों के साथ संवेदन हीनता बढ़ने लगी, संयुक्त परिवार का विघटन और एकल परिवार का प्रचलन बढ़ने लगा, वृद्धों के साथ दुर्व्यवहार, घरेलू हिंसा बढ़ने लगी, धनार्जन के लिए युवाओं का पलायन होने लगा, वृद्ध उपेक्षित और एकाकी जीवन जीने के लिए मजबूर होने लगे, भारतीय मूल्य टूटने लगे और जब वृद्धाश्रम खुलने लगे | प्रो. ज्योति सूर्यवंशी द्वारा संपादित पुस्तक ‘*वृद्ध विमर्श परम्परा और आधुनिकता का द्वंद्व*’ में प्रो. प्रतिभा पहाड़े द्वारा प्रकाशित आलेख ‘वृद्ध विमर्श : एक चिंतन’ में लिखती है – “हिंदी साहित्य में वृद्ध विमर्श पर जोर विशेषकर आजादी के बाद तब दिया गया जब साहित्यकारों ने यह महसूस किया कि संयुक्त परिवार की प्रथा टूट रही हैं एवं उनका स्थान एकल परिवार प्रथा ले लिया है | जो वृद्ध कल तक घर

के हर मसलों के नीति-निर्णायक, परिवार और समाज के सत्ता-संचालक, पथ प्रदर्शक होते थे वे ही परिवार और समाज द्वारा उपेक्षित हो रहे हैं |"(सूर्यवंशी 62) हिंदी साहित्य में यह विमर्श आधुनिक समय में परिवार और समाज की बदलती संरचना के प्रति आलोचनात्मक दृष्टि प्रस्तुत करता है | वृद्ध विमर्श केवल साहित्यिक मुद्दा नहीं है, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक संकट की अभिव्यक्ति है | भारत में लम्बे समय तक संयुक्त परिवार की परम्परा रही है | इस समय अर्थ उपार्जन करना कठिन होने से एक व्यक्ति के काम करने से परिवार का भरण पोषण करना कठिन हो गया है | आर्थिक दबाव को कम करने के लिए भी संयुक्त-परिवार टूटने लगा एवं एकल परिवार में परिवर्तित होने लगा | एकल परिवार बढ़ने और संयुक्त परिवार के विघटन का सीधा असर बुजुर्गों पर पड़ने लगा | एकल परिवार में घर के बेटे-बहू नौकरी करने चले जाते हैं, बच्चे स्कूल चले जाते हैं | वृद्धों के लिए समय न बच्चों के पास न पोते-पोतियों के पास | पहले बच्चे खाली समय दादा-दादी के साथ बिताते थे अब मोबाइल, टेलीविजन, लैपटॉप में अपना सारा समय बिताते हैं | अब दादा-दादी से कहानी सुनने की परंपरा ही समाप्त हो गई है | वृद्धावस्था में कोई आर्थिक आय न होने के कारण भी उनको बोझ समझा जाने लगता है | वृद्ध माता-पिता का भरण-पोषण और दवाइयों के लिए खर्च करना उन्हें अनावश्यक खर्च लगता है | आधुनिक युग में लोग जितने आधुनिक और आर्थिक संपन्न हो रहे हैं उतने ही संवेदन शून्य होते जा रहे हैं | समाज में आर्थिक संपन्न और मान-प्रतिष्ठा रखने वाले घरों के बुजुर्ग वृद्धाश्रम में पाए जाते हैं | वृद्धों के जीवन की समस्याओं को उजागर करके और उनकी समस्याओं के समाधान हेतु वृद्ध विमर्श का होना अति आवश्यक है |

वृद्ध विमर्श का साधारण अर्थ वृद्धावस्था की सभी परिस्थितियों, घटनाओं आदि का गंभीर चिंतन करना अर्थात वृद्धावस्था की समस्याओं को समझकर उनके लिए उचित समाधान करना ही वृद्ध विमर्श है | वृद्ध विमर्श लक्ष्य यही है कि बुजुर्ग समाज की बोझ न होकर ज्ञान, अनुभव और परंपरा के मार्गदर्शक बने रहें और उन्हें सम्मानजनक जीवन प्राप्त हो | वृद्ध विमर्श किसी एक जाति या समुदाय को केंद्रित कर किया जाने वाला विमर्श नहीं है बल्कि इसका दायरा संपूर्ण मनुष्य जाति का क्षेत्र है | 58-60 साल की उम्र तक केन्द्रीय भूमिका में रहने के बाद जब आदमी को सेवानिवृत्त, वरिष्ठ नागरिक तथा अनुत्पादक उपाधियों के साथ हाशिए पर रख दिया जाता है तो शारीरिक समस्याओं से अधिक मानसिक समस्याएँ वृद्धों को घेर लेती हैं | प्रायः यह देखा जाता है कि जब तक व्यक्ति परिवार के लिए कमाने का यंत्र है तब तक परिवार में उसका सम्मान होता है लेकिन जैसे ही उसका शरीर उसका साथ देना छोड़ देता है वैसे ही परिवार के सदस्यों के लिए वह एक बेकार चीज व बोझ लगने लगता है | ऐसे में उसका अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाता है | इस अनुभवी समुदाय को भविष्य में भी समाज के लिए उपयोगी बनाए रखने की चिंता, बदले हुए परिवेश में इसके मानवाधिकारों को स्वीकृति और इसके पुनर्वास के प्रश्न से ही वृद्ध विमर्श की शुरुआत होती है | डॉ. अशोक कुमार सिन्हा अपने आलेख '*हिंदी कहानी में वृद्ध विमर्श*' में लिखते हैं – "वृद्ध विमर्श' हमारे पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन का एक प्रमुख विचारणीय पक्ष है |" (सिंह 229) वहीं डॉ. सोहन लाल अपने आलेख '*वृद्ध विमर्श को चित्रित करने वाली चर्चित कहानियाँ*' में लिखते हैं – "वृद्ध विमर्श' वृद्धों की समस्त शारीरिक, मानसिक, वैयक्तिक, सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक, एवं अन्य समस्याओं की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करता है |" (सिंह 237) वृद्ध विमर्श का तात्पर्य उन वैचारिक और सैद्धांतिक चर्चाओं से है, जो वृद्धावस्था से संबंधित पारिवारिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक पहलुओं का विश्लेषण करती हैं | यह विमर्श इस बात की ओर ध्यान

केन्द्रित करता है कि वृद्ध व्यक्तियों को समाज में किस प्रकार देखा जाता है और उनके प्रति किस प्रकार की नीतियाँ बनाई जाती हैं | आज हमारी चिंता का विषय बहुतायत वृद्धजनों के जीवन को सुखमय बनाने से संबंधित है - चाहे वे पुरुष हो या स्त्री | 21वी शताब्दी में वृद्ध विमर्श एक ज्वलंत विषय है | इक्कीसवीं शताब्दी के विश्व के समक्ष वृद्धावस्था संबंधी समस्याएँ बड़ी चुनौती प्रस्तुत करने वाली है | क्योंकि भूमंडलीकरण के प्रभाव और इस भौतिकवादी युग में मनुष्य अपने आप में इतना व्यस्त है कि उसके पास बुजुर्गों के लिए समय ही नहीं है | जीवन की इस व्यस्तता के कारण पुरानी और नई पीढ़ी में सामंजस्य की कमी तथा वैचारिक मतभेद में बढ़ोतरी हो रही है | आधुनिक युग में मनुष्य ने प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति अवश्य कर ली परन्तु उन्नति को पाने के लिए वह अपनों से बहुत दूर होता जा रहा है | वर्तमान मनुष्य का जीवन अत्यधिक प्रतिद्वंदिता एवं भाग-दौड़ भरा है | इस भाग-दौड़ भरे जीवन में व्यस्त बच्चों को अपने लिए समय नहीं मिल पाता और न ही अपने बूढ़े माता-पिता के लिए निकाल पाते | वृद्धावस्था में वृद्धों की अपेक्षाएँ अपने बच्चों से रहती है कि वे उन पर अधिक ध्यान दें और उनकी हर आवश्यकताओं को विशेष महत्व दें | बुजुर्गों के प्रति ध्यान न देने का एक अन्य कारण एकल परिवार की परिकल्पना तथा संयुक्त परिवारों का टूटना | जिससे हमारी पीढ़ियाँ एक दूसरे के नजदीक आने की अपेक्षा दूर होती जा रही हैं | परिणामस्वरूप हम अपने बुजुर्गों के ज्ञान, अनुभव, संस्कार तथा मूल्यों को नई पीढ़ी में हस्तांतरित नहीं कर पा रहे हैं | वृद्ध जन अपने अनुभव से हमारे साहस और संघर्ष के साथ हमारे पुरुषार्थ को बढ़ाते हैं | जीवन की वास्तविक परिस्थितियों का दर्पण दिखाकर हम पर ज्ञान की वर्षा करते हैं | लेकिन आज युवा तथा वृद्ध दोनों का जीवन अंधकार की ओर जा रहा है | आज का युवा और समाज वृद्धों को एक समस्या एवं बोझ के रूप में देखता है | पेड़ की तरह छांव फैलाने वाला व्यक्ति बुढ़ापे में अकेला, असहाय जीवन जीने के लिए विवश हो जाता है | जीवन भर अपने परिवार को अनगिनत खुशियाँ देने वाला व्यक्ति घर के एक कोने में उपेक्षित पड़ा मिलता है या अस्पताल व वृद्धाश्रम में मौत की प्रतीक्षा करता दिखाई पड़ता | आधुनिक समाज में मूल्यों, संस्कारों व आदर्शों के ह्रास का यह परिणाम है | परिवार और समाज में उचित सम्मान न मिलने के कारण वृद्धों की दशा दयनीय होती जा रही है | डॉ.पूजा तिवारी और जिनित सबा द्वारा संपादित पुस्तक '*उत्तरशती के साहित्यिक विमर्श*' में कमलानंद झा अपने अपने आलेख 'वृद्ध विमर्श : परम्परा और आधुनिकता का द्वंद्व में लिखते हैं – "वृद्धों के साथ एक विसंगति यह है साहित्य और समाज में कहीं यह निर्णायक भूमिका में है तो कहीं उपेक्षित की भूमिका में |"(तिवारी और सबा 217) प्रत्येक व्यक्ति को यह समझना चाहिए इस चराचर में सबको वृद्धावस्था प्राप्त करना है | इस धरा पर प्रत्येक व्यक्ति को प्रकृति द्वारा निर्धारित जीवन चक्र से गुजरना है | यह भी समझना चाहिए कि माँ-बाप मरने के बाद यहीं नहीं रहते | उनका पार्थिव स्वरूप समाप्त हो जाता है | उनकी स्मृतियाँ ही शेष रह जाती है |

अस्तित्ववादी दार्शनिक सिमोन द बुआ (9 जनवरी, 1908 – 14 अप्रैल, 1986) को स्त्री-विमर्शकार के रूप में विशेष ख्याति प्राप्त है | 1949 में प्रकाशित 'द सेकंड सेक्स' (स्त्री उपेक्षिता) ने उन्हें वैश्विक स्त्री मुक्ति आंदोलन का पुरोधा बना दिया | 1970 में प्रकाशित उनकी शोध पूर्ण कृति 'ला विएलेस्से' (फ्रेंच) भी उतनी ही महत्वपूर्ण है | 'ला विएलेस्से' का अंग्रेजी अनुवाद 'ओल्ड एज' (पैट्रिक ओ ब्रेन) 1977 में प्रकाशित हुआ | हिंदी में चंद्रमौलेश्वर प्रसाद ने इस कृति का सार-संक्षेप 'वृद्धावस्था विमर्श' शीर्षक से प्रस्तुत किया है | सिमोन द बुआ की यह कृति वृद्धावस्था विमर्श पर नई दृष्टि प्रदान करती है | सिमोन ने इन दोनों पुस्तकों में स्त्री और वृद्ध

विषयक विमर्शों पर गहनता से बात की है | आज भी बड़ी मात्रा में स्त्री और वृद्ध सामाजिक उपेक्षा और पराए पन के शिकार हो रहें है | सिमोन ने विश्व भर के विभिन्न समाजों में वृद्धावस्था से संबंधित रूढ़ियों और वृद्धों की दशा तथा उनके प्रति व्यवहार का अलग-अलग दृष्टियों से अध्ययन किया |" (प्रसाद 9) समाज, साहित्य और संस्कृति में वृद्धों की अवस्थिति केंद्र की अपेक्षा परिधि पर अधिक रही है | वृद्धावस्था आने का अर्थ ही है व्यक्ति का केंद्र से हटकर हाशिए में जाने के लिए विवश होना | केंद्र से अपदस्थ होते ही व्यक्ति समाज की उपेक्षा का पात्र बन जाता है | इस प्रकार हाशिए पर धकेले गए वृद्ध दुनिया का बहुत बड़ा उपेक्षित जन समुदाय है | चंद्रमौलेश्वर प्रसाद '*वृद्धावस्था विमर्श*' पुस्तक में लिखते हैं -

> "वृद्धावस्था विमर्श इस उपेक्षित समुदाय की दृष्टि से – अथवा वृद्धावस्था को केंद्र में रखते हुए – समाज, साहित्य और संस्कृति की नई व्याख्या करने वाला विमर्श है |..वृद्धावस्था विमर्श वस्तुतः सामाजिक संबंधों को इन बदली हुई परिस्थितियों में नए ढंग से समझने की ज़रूरत पर बल देता है | शारीरिक अशक्तता, मानसिक समस्याएँ, परनिर्भरता, मूल्य परिवर्तन, आर्थिक संकोच, जीवनसाथी की मृत्यु, निराश्रित होने की आशंका, भविष्य की अनिश्चितता, संबंधों की निरर्थकता का बोध, राग-विराग का द्वंद्व, पराए पन और अलगाव की स्थिति, बचपन और युवावस्था की यादों से जुड़ा अतीत प्रेम, काम और क्रोध जैसी वृतियों का उदात्तीकरण न कर पाने से जुड़ी समस्याएँ और आध्यात्मिक विभ्रम जैसे अनेक पक्ष वृद्धावस्था विमर्श के विचारणीय बिंदु हैं |"(प्रसाद 10)

वृद्ध विमर्श हिंदी साहित्य में एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक विमर्श के रूप में सामने आता है, जो उपेक्षित और हाशिए पर पड़े वृद्ध समुदाय की दृष्टि से समाज, संस्कृति और साहित्य की नई व्याख्या करता है | यह विमर्श इस बात पर बल देता है कि बदलती सामाजिक संरचना और मूल्य प्रणाली के बीच वृद्धजनों की समस्याओं को नए ढंग से समझना आवश्यक है | शारीरिक अशक्तता, मानसिक विकार, आर्थिक संकोच, जीवनसाथी की मृत्यु, भविष्य की अनिश्चितता और पर निर्भरता की स्थिति वृद्धावस्था की प्रमुख समस्याएँ हैं | साथ ही, अतीत प्रेम और स्मृतियों का मोह, वर्तमान जीवन की निरर्थकता का बोध, राग-विराग का द्वंद्व, पराए पन और अलगाव की भावना वृद्धजनों के जीवन को और अधिक जटिल बना देते हैं | इसके अतिरिक्त, अपूर्ण इच्छाएँ, काम-क्रोध जैसी वृतियों का नियमन न कर पाना तथा आध्यात्मिक विभ्रम भी उनके जीवन को गहराई से प्रभावित करते हैं | इस प्रकार, वृद्धावस्था विमर्श केवल उम्र बढ़ने की जैविक प्रक्रिया का वर्णन नहीं करता, बल्कि सामाजिक उपेक्षा और मानसिक संघर्षों को सामने लाकर वृद्धजनों की अस्मिता, गरिमा और अधिकारों की रक्षा के लिए विचार की दिशा प्रदान करता है | वास्तव में, यह विमर्श साहित्य में मानवीय सरोकारों की एक नई संवेदना का उद्घाटन करता है | वृद्ध विमर्श आज के युग की आवश्यकता है क्योंकि वर्तमान समय में वृद्धों को बोझ समझा जाता है | आज हम इतने व्यस्त हो गए हैं कि हमारे पास बुजुर्गों को समझने का समय ही नहीं है | वृद्ध विमर्श सदैव वृद्धों के मान-सम्मान की बात करता हैं | उन्हें घर की पुरानी वस्तु और बोझ न समझा जाये तथा उन्हें मनुष्य मानकर प्यार और सम्मान दिया जाये, जिसके वे हकदार हैं | यह मांग आज वृद्ध विमर्श करता है | वृद्ध विमर्श का साहित्य में प्रयोग वृद्धों के लिए सम्मान का मार्ग है तथा युवा पीढ़ी के लिये उनकी सफलता का मार्ग है | वृद्धों के अनुभवों व संस्कारों से युवा वर्ग के जीवन में हो रहे पारिवारिक विघटन को रोका जा सकता है | यदि वृद्ध विमर्श पर और भी ध्यान दिया जाये तो संभव है वृद्ध अपने ज्ञान और जीवन की ठोस

अनुभव युक्त शिक्षा, योग्यता से नई पीढ़ी की जीवन यात्रा को सही मार्ग दिखा सकते हैं | इसलिए वर्तमान समय में वृद्ध विमर्श बहुत आवश्यक हो गया है | यदि आज की युवा पीढ़ी अपने बुजुर्गों को आदर व सम्मान देना शुरू कर दें तो फिर किसी वृद्ध विमर्श की आवश्यकता नहीं रहेगी | मुनि तरुण सागर जी '*कड़वे प्रवचन*' में कहते हैं –

> "माँ की ममता धरती से भी भारी है और पिता का स्थान आकाश से भी ऊँचा है, क्योंकि बेटे के लिए पिता के अरमान आकाश से भी ऊँचे होते हैं | दुनिया में कोई किसी को अपने आगे बढ़ता और ऊँचा उठता नहीं देख सकता | एक पिता ही है जो अपनी संतान को अपने से आगे देखकर खुश होता है | देश के नौजवानों ! अपने पर्स में रुपये की जगह अपने पिता की तस्वीर रखिए क्योंकि उस तस्वीर ने ही आपकी तस्वीर सँवारी है | पेड़ बूढ़ा ही सही, आँगन में लगा रहने दो | फल न सही, छाँव तो देगा |" (तरुणसागरजी 87)

धन से ज्यादा माता-पिता का मार्गदर्शन और अनुभव मूल्यवान है | अगर कोई वृद्ध प्रत्यक्ष रूप से लाभ न दें, उनका मार्गदर्शन और अनुभव नई पीढ़ियों के लिए अमूल्य है |

सामान्यतः वृद्ध विमर्श वृद्धों की वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक आदि समस्याओं को समझकर उनके लिए उचित समाधान करना वृद्ध विमर्श है | वृद्ध विमर्श आज के युग की जरूरत है क्योंकि आज उन्हें बोझ मानकर वृद्धाश्रम में छोड़ दिया जाता है | वृद्ध विमर्श को आधार बनाकर हम समाज में वृद्धों की व्याप्त समस्याओं की तरफ लोगों का ध्यान आकर्षित कर सकते हैं | वृद्ध व्यक्ति का जीवन निराशा व उपेक्षा में न धकेलकर उनके जीवन में मान-सम्मान व उत्साह से जीने का अधिकार दिया जा सकता है | वृद्ध विमर्श का साहित्य में प्रयोग वृद्धों के लिए सम्मान का मार्ग है तथा युवा पीढ़ी के लिए उनकी सफलता का मार्ग है | वृद्ध विमर्श केवल वृद्धजनों की समस्याओं तक सीमित नहीं है, बल्कि यह समाज में वृद्धावस्था को देखने के दृष्टिकोण को भी दर्शाता है | यह विमर्श इस बात पर बल देता है कि वृद्धजन समाज का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं और उनकी गरिमा तथा अधिकारों की रक्षा की जानी चाहिए | इसके लिए परिवार, समाज, सरकार नीति-निर्माताओं, समाजशास्त्रियों को मिलकर ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है |

वृद्ध विमर्श : विविध आयाम

वृद्ध होना एक क्रमिक और जटिल प्रक्रिया है जिसमें जैविक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक आयाम होते हैं | वृद्धावस्था में शारीरिक परिवर्तन के साथ-साथ सामाजिक और मानसिक परिवर्तन भी महत्वपूर्ण हैं | वृद्धावस्था में मनुष्य विभिन्न प्रकार की व्याधियों, पारिवारिक, सामाजिक झंझटों, आर्थिक असुरक्षा व अन्य समस्याओं से घिर जाते हैं | इन समस्याओं से घिरे व्यक्ति का जीवन व्यथित हो जाता है | परिणामस्वरूप उन्हें बहुत सी शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, पारिवारिक, सामाजिक व स्वास्थ्य सम्बन्धी अनेक परेशानियों से जूझना पड़ता है | जीवन के इस पड़ाव में मनुष्य का शरीर अनेक गंभीर रोगों से ग्रसित हो जाता है | इस अवस्था में हृदय घात, उच्च रक्तचाप, मधुमेह, कैंसर आदि जैसी बीमारियों की संभावना हमेशा से बनी रहती है | इन रोगों के अतिरिक्त कुछ संक्रामक रोगों से संक्रमित होने की संभावना भी हो जाती है | क्योंकि इस अवस्था में प्रतिरक्षा प्रणाली (इम्यून सिस्टम) कमजोर हो

जाता है | वृद्धों में मानसिक तनाव और विकार के कारण भी उनके स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है | समस्याएँ व्यक्ति के जीवन की हर अवस्था का अभिन्न अंग हैं परन्तु वृद्धावस्था में वह एक विशेष रूप धारण करके वृद्ध लोगों की साझी समस्याएँ बन जाती हैं | कारण यह है कि वृद्धावस्था में समस्याओं के निराकरण की क्षमता और ऊर्जा दोनों में कमी आ जाती है | वृद्ध विमर्श केवल वृद्धावस्था से जुड़ी समस्याओं तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक व्यापक सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक विमर्श है, जो वृद्धजनों की स्थिति, अधिकारों और उनके प्रति समाज के दृष्टिकोण को समझने का प्रयास करता है | इसके कई आयाम है, जो वृद्धावस्था को विभिन्न दृष्टिकोण से विश्लेषित करते हैं | वृद्ध विमर्श की पृष्ठभूमि को समझने के विविध आयाम निम्नलिखित अनुसार देखे जा सकते हैं |

1.3.1 वृद्ध विमर्श : वैयक्तिक दृष्टिकोण/(जैविक दृष्टिकोण)

1.3.2 वृद्ध विमर्श : पारिवारिक दृष्टिकोण

1.3.3 वृद्ध विमर्श : सामाजिक दृष्टिकोण

1.3.4 वृद्ध विमर्श : सांस्कृतिक दृष्टिकोण

1.3.5 वृद्ध विमर्श : आर्थिक दृष्टिकोण

1.3.6 वृद्ध विमर्श: मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण

1.3.1 वृद्ध विमर्श : वैयक्तिक दृष्टिकोण/(जैविक दृष्टिकोण)

वृद्धावस्था मनुष्य जीवन की एक जैविक घटना है | वृद्धावस्था की अवधारणा को स्पष्ट करने हेतु जैविक आधार भी है | जैविकीय दृष्टिकोण प्राणी के शरीर में बाहरी व आन्तरिक परिवर्तन से है | वृद्धावस्था में दिन-प्रतिदिन व्यक्ति के शारीरिक व मानसिक क्षमता का ह्रास होता है | व्यक्ति की आयु में परिवर्तन होने के साथ-साथ शारीरिक संरचना में भी परिवर्तन होने लगता है | यह दृष्टिकोण बताता है कि उम्र बढ़ने के साथ शारीरिक अशक्तता, स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ, ऊर्जा में कमी और अंगों की कार्यक्षमता में गिरावट आती है | सुशीला (1990) ने कहा है कि वृद्धावस्था को जीवन के अंतिम पड़ाव पर व उन अंतिम समय के उन परिवर्तनों के रूप में जाना जाता है, जब व्यक्ति की शारीरिक व मानसिक स्थिति का ह्रास होने लगता है | बरब्रूगी, लेपकोवसकी व इमनंका (1989) के अनुसार उम्र के निरंतर बढ़ने के साथ-साथ व्यक्ति में शारीरिक क्षमता में कमी होने लगती है, जिसके फलस्वरूप बहुत सारी बीमारियों से वृद्ध ग्रसित हो जाते हैं | शरीर की सभी मांसपेशियां कार्य करना बंद कर देती हैं | तथा वृद्धों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जिससे उनका दैनिक जीवन भी प्रभावित होता है | अंत: यह दृष्टिकोण वृद्धावस्था में होने वाले शारीरिक और मानसिक परिवर्तनों पर केन्द्रित है | यह केवल स्वास्थ्य-संबंधी नहीं, बल्कि सामाजिक, मानसिक और अनुभवात्मक दृष्टि से भी

महत्वपूर्ण है, क्योंकि इन जैविक बदलावों का असर वृद्धजन की दैनिक जीवन क्रियाओं, सामाजिक सहभागिता और आत्मसम्मान पर पड़ता है |

आयु वृद्धावस्था का मुख्य परिवर्त्य है – ब्राट-रियान (1978), कोगन और शेल्टन (1962), कटनर (1956) कूहेन (1959), रीगल एंड रीगल (1960) इत्यादि विद्वानों का मानना है कि ज्यादातर बुजुर्ग व्यक्ति अपनी उम्र के बारे में नकारात्मक विचार रखते हैं | (सिन्हा 29) कियाक (1982) का मानना है कि व्यक्ति की आयु पर वातावरण, पर्यावरण का बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है | जीव वैज्ञानिक दृष्टि से मनुष्य की आयु में परिवर्तन होने के साथ-साथ शारीरिक संरचना एवं कार्यप्रणाली में भी बदलाव आते है | शारीरिक परिवर्तन में – चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ना, बाल सफ़ेद होना, दांत कमजोर होना, नजर का कमजोर होना, स्मरण शक्ति का कमजोर होना, श्रवण शक्ति का कमजोर होना, शरीर में रोग प्रतिरोधक शक्ति का कम होना, कार्य क्षमता में कमी, शरीर में अशक्ति अनुभव करना आदि | वृद्धावस्था की इन स्थितियों के सन्दर्भ में सूफी कवि मलिक मुहम्मद जायसी '*पद्मावत*' के उपसंहार कांड में लिखते हैं –

'मुहम्मद बिरिध बैस जो भई | जोबन हुत, जो अवस्था गई ||

बल जो गयउ कै खीन सरीरु | दिस्टि गई नैनहिं देई नीरू ||

दसन गए कै पचा कपोला | बैन गए अनरुच देई बोला ||

बुधि जो गई देइ हिय बौराई | गरब गयउ तरहुँत सिर नाई ||

सरवन गए ऊँच जौ सुना | स्याही गई सीस भा धुना ||

भँवर गए केसहि देइ भूवा | जोबन गयउ जीति लेइ जूवा ||

जौ लहि जीवन जोबन साथा | पुनि सो मीचु पराए हाथा ||" (जायसी)

अब बूढ़ी आयु हो गई है | दृष्टि मंद हो गई है और नेत्रों में पानी ढलने लगा है | दांतों के गिरने से गाल पिचक गए है, अब मेरे बोल किसी को नहीं सुहाते | विचारने की शक्ति चली गई है, गर्व चला गया है, शीश धुनी हुई रुई के समान हो गया है | कानों से ऊँचा सुनाई पड़ने लगा है | केशों में रहने वाले भौंरों की श्यामता चली गई है | शरीर जीते जी मृत के समान हो गया है | जब तक यौवन है तभी तक जीवन है | फिर पराये वश हो जाना यही मृत्यु है | जायसी की ये पंक्तियाँ वृद्धावस्था के शारीरिक, मानसिक और सामाजिक क्षय को चित्रित करती हैं | यह व्याख्या बुजुर्गों के अनुभव, संवेदनशीलता और सम्मान की महत्ता को रेखांकित करती है | वृद्ध विमर्श को जब हम वैयक्तिक दृष्टिकोण से देखते हैं, तो यह और अधिक जीवंत तथा संवेदनशील बन जाता है, क्योंकि यह जीवन के उस पड़ाव की बात करता है जहाँ व्यक्ति अनुभवों का भंडार होता है, परन्तु शारीरिक, मानसिक और सामाजिक रूप से कई चुनौतियों का सामना कर रहा होता है | वृद्धों के जीवन में वैयक्तिक चुनौतियाँ निम्नलिखित प्रकार से हैं -

- **वृद्धों में शारीरिक शिथिलता :**

शारीरिक शिथिलता का अर्थ है उम्र बढ़ने के साथ शरीर की सक्रियता और सहनशक्ति में कमी | वृद्धावस्था में शारीरिक शिथिलता एक सामान्य प्रक्रिया है | डॉ. अंजू शुक्ला अपनी पुस्तक 'उपेक्षा का शिकार वृद्ध महिलाएँ' में लिखती हैं – "शारीरिक अस्वस्थता और अकेलेपन का अहसास एवं मानसिक असुरक्षा का भाव भी वृद्धावस्था की भयंकर समस्या है | सर्वाधिक गंभीर एवं अवश्यंभावी समस्या है शारीरिक दुर्बलता |"(शुक्ला 20) उम्र बढ़ने के साथ मनुष्य के शरीर में बहुत अधिक परिवर्तन आ जाते है | इस अवस्था में तरह-तरह की शारीरिक व्याधियाँ शरीर में उत्पन्न होने लगती हैं | शरीर की मांसपेशियों में कमजोरी आने के कारण जल्दी थकावट आ जाती हैं | जोड़ो में दर्द के कारण चलना- फिरना मुश्किल हो जाता है | चलते समय श्वास सम्बन्धी समस्या का सामना करना पड़ता है | बुढ़ापे में कमर दर्द, हाथ पैरो में दर्द, जोड़ो में दर्द, कब्ज, गैस, एसीडीटी, ब्लडप्रेशर, उच्च रक्तचाप, और मधुमेह आदि बीमारियाँ वृद्धों को अपना शिकार बना लेती है | वृद्धों की पाचन शक्ति कम हो जाने के कारण खाना जल्दी पचता नहीं जिसके कारण कब्ज, गैस, एसीडीटी जैसी समस्याएँ हो जाती हैं | वृद्धों की शारीरिक दुर्बलता पर आदि शंकराचार्य लिखते है – अंगम गलितं मुंडम दशनविहिनं जातं तुंडम् वृद्धो याति गृहीत्वा दंड तदपि मुन्चत्शापिपिंडम्" (पाण्डेय 52) अर्थात अंग ढीले हो गये है, सर के बाल पक गये हैं, मुख में दांत नहीं रह गये हैं, लाठी लेकर चलता हैं, फिर भी आशा नहीं छोड़ती है | वृद्धावस्था में मनुष्य के शरीर में सबसे बड़ा परिवर्तन शारीरिक शक्ति और कार्य क्षमताओं का क्षीण होना | अंत: वृद्धों में शारीरिक शिथिलता उम्र बढ़ने के प्राकृतिक परिणामों में से है | यह केवल शारीरिक कमजोरी नहीं, बल्कि स्वतंत्रता और जीवन की गुणवत्ता पर प्रभाव डालने वाला महत्वपूर्ण कारक है | वृद्ध विमर्श में इसे समझना आवश्यक है ताकि वृद्धों की देखभाल, सम्मान और सामाजिक सहभागिता सुनिश्चित की जा सके |

- **वृद्धावस्था में थकावट**

वृद्धावस्था में थकावट का अर्थ है उम्र बढ़ने के कारण शरीर और मानसिक क्रियाओं में जल्दी थक जाना | इस अवस्था में थकावट एक आम समस्या है क्योंकि यह जीवन का वह पड़ाव है जिसमें मनुष्य की शारीरिक क्षमता में कमी आ जाती है | शरीर की सभी इन्द्रियों की गति धीमी पड़ जाती है | शरीर कमजोर व अशक्त बन जाता है | उम्र बढ़ने के साथ शरीर की कार्यक्षमता धीरे-धीरे कम होने लगती है | हड्डियाँ कमजोर होने लगती हैं, मांसपेशियाँ ढीली पड़ जाती हैं और ऊर्जा स्तर पहले जैसा नहीं रहता | साधारण गतिविधियाँ भी थकान पैदा करती हैं | वृद्धावस्था में कई बार थोड़ा चलने, सीढ़ियाँ चढ़ने या घर के छोटे-मोटे काम करने में भी थकावट हो जाती है | जिसके कारण उन्हें चलने और घुमने-फिरने में दिक्कत का सामना करना पड़ता है | इस परेशानी के कारण मजबूरी वश अधिकतर वृद्धों को घर की चार दीवारी में रहना पड़ता है | थकावट वृद्धजन की स्वतंत्रता और दैनिक गतिविधियों में भागीदारियों को प्रभावित करती है | वृद्ध विमर्श में इसे समझना इसलिए महत्वपूर्ण है ताकि वृद्धों की देखभाल और जीवन की गुणवत्ता सुनिश्चित की जा सके |

- **वृद्धावस्था में नींद की कमी**

वृद्धावस्था में नींद की कमी का अर्थ है कि बुजुर्गों को पर्याप्त या गहरी नींद नहीं आती | यह शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाला एक सामान्य लक्षण है | पर्याप्त नींद हर उम्र के व्यक्तियों के स्वास्थ्य के लिए बहुत आवश्यक है | बचपन और युवावस्था में बिना थके भी बहुत नींद आती है लेकिन वृद्धावस्था में नींद बहुत कम आती है | अधिकतर वृद्धों को अनिद्रा का रोग हो जाता है | बुजुर्गों को कई तरह के शारीरिक तथा मानसिक पीड़ाओं का सामना करना पड़ता है | जिसके कारण वृद्धजन अकसर रात भर जागते रहते हैं | नींद न आने के कारण वृद्धों को नींद की गोलियों का सेवन करना पड़ता है | NIH के अनुसार- वृद्ध वयस्कों को सभी वयस्कों के समान हर रात 7 से 9 घंटे की नींद की आवश्यकता होती है | लेकिन कुछ लोगों में जल्दी उठने की आदत बुढ़ापे में पर्याप्त नींद न लेने का कारण बन जाती है और कुछ में स्वास्थ्य में गड़बड़ी के कारण नींद न आने की समस्या हो सकती हैं | (https://www.nia.nih.gov/health/sleep/good-nights-sleep) Pubmed में प्रकाशित एक रिपोर्ट के शोधकर्ताओं का अनुमान है कि 40% से 70% वृद्धों में नींद की क्रॉनिक समस्या होती है | नींद की कमी वृद्धों की दैनिक गतिविधियों में महत्वपूर्ण रूप से हस्तक्षेप कर सकती है | इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि वृद्धावस्था में नींद न आने के कारणों को जानकर समय पर इनका उपचार करना | (https://pubmed.ncbi.nlm.nih.gov/28159095/) वृद्ध विमर्श में इसे समझना बहुत आवश्यक है ताकि बुजुर्गों की स्वास्थ्य सुरक्षा, मानसिक संतुलन और जीवन की गुणवत्ता सुनिश्चित की जा सके |

- **वृद्धावस्था में सौंदर्य में कमी**

उम्र बढ़ने के साथ शरीर में बदलाव होना स्वाभाविक है | बुढ़ापे का असर सबसे पहले त्वचा पर पड़ता है | त्वचा में स्निग्धता की कमी एवं रूखापन आ जाता है | त्वचा के नीचे वसा की कमी के कारण और त्वचा के लचीले पन के कारण झुर्रियां आने लगती है | उसी प्रकार बाल सफेद और झड़ने लगते है | दांत टूटने लगते है | कमर झुकने लगती है | जिससे शरीर का सौंदर्य नष्ट होने लगता है | सौन्दर्य का नष्ट होना एक प्रमुख समस्या है क्योंकि बदसूरत व्यक्ति को कोई पसंद नहीं करता है | सौन्दर्य की कमी वृद्धजन के आत्मसम्मान और आत्मविश्वास पर असर डाल सकती है | परन्तु असली सौन्दर्य केवल बाहरी रूप में नहीं होता | उम्र के साथ सौन्दर्य की परिभाषा भी बदलती है | वृद्ध व्यक्ति के चेहरे पर झलकता अनुभव, आँखों में बसी गहराई, और व्यवहार में आने वाली शांति और संतुलन ये सब मिलकर एक अलग सौन्दर्य का निर्माण करते हैं जो स्थायी और सच्चा होता हैं | समाज को चाहिए कि वह सौन्दर्य को केवल शरीर तक सीमित न रखे | वृद्धावस्था में बाह्य सौन्दर्य भले ही फीका पड़ जाए, परन्तु आंतरिक सौन्दर्य अपने चरम पर होता है |

- **वृद्धावस्था में स्मरण शक्ति, देखने की शक्ति एवं श्रवण शक्ति में कमी**

वृद्धावस्था जीवन का एक ऐसा चरण है, जिसमें शरीर की कार्यक्षमताएँ धीरे-धीरे कम होने लगती हैं | यह समय अनुभवों का भंडार तो होता है, लेकिन इसके साथ-साथ कई मानसिक और शारीरिक चुनौतियाँ भी सामने आती हैं | जिनमें प्रमुख हैं – मनुष्य की देखने, सुनने और स्मरण शक्ति कमजोर हो जाती है | प्रो. अनिल अर्जुन अहिवले अपनी *‘हिंदी साहित्य में दस्तक देता वृद्ध*

विमर्श' पुस्तक में लिखते हैं- वृद्धावस्था भुलक्कड़पन की अवस्था है | साठ पार की इस अवस्था में बूढ़े-बुजुर्ग लोगों की शक्तियाँ क्षीण हो जाती है |"(अहिवले 9) जैसे-जैसे उम्र बढ़ती जाती है उनकी याददाशत शक्ति क्षीण हो जाती है | विस्मृति के कारण वृद्धों को कुछ बाते याद रहती है कुछ बिल्कुल भूल जाते हैं | याददाशत कम होने के कारण बुजुर्ग किसी बात का उत्तर देने में समय लगा देते है | अपनी चीजों का ख्याल भी उन्हें नहीं रहता है | भूलने की आदत से वे परेशान रहने लगते है | जैसे-जैसे उम्र बढ़ती है उन्हें सुनाई भी नहीं देता है | कम सुनाई देने की वजह से उनको कार्य करने में परेशानी का सामना करना पड़ता है | बच्चे बुजुर्गों से बात करना पसंद नहीं करते | उम्र की इस अवस्था में आँखों की रोशनी में भी कमी आती है | जिसके कारण दूर रखी कोई भी वस्तु दिखाई नहीं देती | इस तरह वृद्धावस्था में स्मरण शक्ति, देखने की शक्ति तथा श्रवण शक्ति आदि में कमी से परेशानियों का सामना करना पड़ता है | जिसके कारण उन्हें अपने ही घर में अजनबी की तरह अनचाहे मेहमान बनकर रहना पड़ता है | वृद्धावस्था में स्मरण शक्ति, देखने की शक्ति, और स्मरण शक्ति में स्वाभाविक रूप से कमी आ जाती है | वृद्ध विमर्श में इन परिवर्तनों को समझना आवश्यक है ताकि बुजुर्गों के स्वास्थ्य, मानसिक संतुलन और सम्मानपूर्ण जीवन की व्यवस्था की जा सके |

- **वृद्धावस्था में शरीर विभिन्न रोगों से ग्रसित**

वृद्धावस्था जीवन का अंतिम लेकिन अत्यंत महत्वपूर्ण चरण होता है | यह अनुभव, परिपक्वता और जीवन के गहरे ज्ञान का समय होता है लेकिन इसी अवस्था में शरीर अपनी सक्रियता और प्रतिरोधक क्षमता खोने लगता है | व्यक्ति की उम्र के साथ-साथ मनुष्य की शारीरिक, मानसिक और रोग प्रतिरोधक क्षमता कमजोर होने लगती है | जिसके कारण इस अवस्था में वृद्धों के शरीर पर विभिन्न रोग घर बना लेते है | जिनमें ह्रदय रोग, डायबिटीज, जोड़ो का दर्द, गठिया, मधुमेह, उच्च रक्तचाप, अस्थमा, कैंसर इत्यादि | नियमित शारीरिक क्रियाओं में सबसे ज्यादा बदलाव पाचन क्रियाओं में होता है | विभिन्न रोगों के कारण वृद्ध व्यक्तियों की शारीरिक कार्य शक्ति कम होने लगती है | शारीरिक स्वास्थ्य में गिरावट, आर्थिक तंगी के कारण वृद्ध व्यक्ति में मानसिक तनाव, अवसाद, निराशा, असंतोष तथा डिप्रेशन पैदा हो जाता है | शारीरिक दुर्बलता एवं अस्वस्थता के कारण वृद्धों में मानसिक कमजोरी आने लग जाती है | मानसिक क्षीणता के कारण वृद्ध अपने आप में खोये रहते हैं | इन रोगों के कारण बुजुर्ग परनिर्भर हो जाते हैं और उनकी जीवन- गुणवत्ता प्रभावित होती है | वृद्ध विमर्श इन रोगों को सामाजिक दृष्टि से समझकर बुजुर्गों के स्वास्थ्य और सम्मानपूर्वक जीवन की आवश्यकता पर बल देता है |

वृद्धों की वैयक्तिक समस्याएँ मानव जीवन का स्वाभाविक परिणाम हैं, यदि वृद्ध स्वयं, परिवार, समाज और शासन उनका ध्यान रखें तो ये समस्याएँ कम की जा सकती हैं |

1.3.2 वृद्ध विमर्श : पारिवारिक दृष्टिकोण

वृद्धावस्था केवल जैविक परिवर्तन का परिणाम नहीं है, बल्कि यह एक सामाजिक स्थिति भी है, जिसमें व्यक्ति के कार्य, भूमिकाएँ और पारिवारिक-सामाजिक संबंध बदल जाते हैं | वृद्ध विमर्श पारिवारिक दृष्टिकोण एक महत्वपूर्ण सामाजिक विषय है, जो परिवार और समाज में बुजुर्गों की भूमिका, उनके प्रति दृष्टिकोण और उनकी समस्याओं को समझने तथा उन्हें सुलझाने पर केन्द्रित है

| यह आयाम परिवार के भीतर बुजुर्गों की स्थिति, उनकी आवश्यकताओं और उनके प्रति जिम्मेदारियों के साथ-साथ उनके अधिकारों पर विचार करता है | भारतीय परिवार एवं समाज में प्राचीन काल से वृद्धों का पूजनीय स्थान रहा है | बुजुर्ग अपने जीवन के संचित अनुभवों, ज्ञान और कौशल से परिवार व समाज का मार्ग दर्शन करने में खास भूमिका निभाते है | वे बच्चों को धर्म, नैतिकता, सदाचार और अनुशासन की शिक्षा देते है | वृद्धों के महत्व एवं योगदान के बावजूद भी आज वे पारिवारिक एवं सामाजिक उपेक्षा के शिकार हो रहे हैं | वर्तमान में परिवार एवं समाज की परिस्थितियाँ बदल रही है लोगों की सोच व संस्कार भी उसी तरह परिवर्तित हो रहें हैं | जिस प्रकार मनुष्य पुराने कपड़ों को महत्व नहीं देता उसी प्रकार वृद्धावस्था में पहुँचने के बाद व्यक्ति का परिवार व समाज में कोई विशेष स्थान नहीं रह जाता | आज परिवार व समाज बुजुर्गों को किसी अछूत बीमारी की तरह देखता है हर कोई उनसे दूर भागता है | आज परिवारों में वृद्धजनों की स्थिति और भूमिका में स्पष्ट बदलाव आया है | वृद्ध विमर्श का पारिवारिक दृष्टिकोण बुजुर्गों की स्थिति और समस्याओं को पारिवारिक ढांचे में समझने पर बल देता है | वृद्ध विमर्श इस दृष्टि से बुजुर्गों को बोझ न मानकर अनुभव और परंपरा का धरोहर मानते हुए उनके सम्मानपूर्ण जीवन की आवश्यकता पर बल देता है |

- **एकल परिवार में वृद्ध**

प्राचीन संयुक्त परिवार से जुड़े परिवार अब धीरे-धीरे समाप्त होते जा रहे हैं | इनके स्थान पर एकल परिवार (Nuclear Family) विकसित हो रहे है | जिसमें इकाई के रूप में पति, पत्नी और बच्चे होते हैं | जिसमें वृद्ध माता-पिता के लिए कोई जगह नहीं है | वर्तमान में परिवार का दायरा अधिक सीमित होता जा रहा है जिससे वृद्धों के लिए नई-नई समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं | एकल परिवारों में बुजुर्गों को अक्सर अपने बच्चों से दूर रहना पड़ता है – कभी नौकरी के कारण, कभी विदेश जाने के वजह से, तो कभी अपने निजी जीवनशैली के चलते | इस दूरी से वे अकेलेपन का शिकार हो जाते हैं | संयुक्त परिवार के विघटन एवं एकल परिवार के प्रचलन वाले आधुनिक भारतीय समाज में अत्याधुनिक सामाजिक उन्नति हुई परन्तु इसी उन्नति के परिणामस्वरूप आपसी सम्बन्धों में दिन-प्रतिदिन कमी होती गई | एक समय था जब परिवार के सभी सदस्य एक दूसरे के साथ प्रेम पूर्वक मिल-जुल कर रहा करते थे | बच्चे परिवार में दादा-दादी, नाना-नानी का बहुत आदर करते थे | घर के बुजुर्ग भी बच्चों को एक संयुक्त परिवार में बांधकर सभी के सुख-दुःख के साथी होते थे | परन्तु आज संयुक्त परिवार टूटकर एकल परिवार में बदल रहे है | परम्परागत भारतीय समाज में वृद्धों की परिवार में एक सम्मानित प्रस्थिति होती थी | पहले जब परिवार के संसाधनों का नियंत्रण वृद्धों द्वारा किया जाता था तो पुत्र अपने माता-पिता पर आश्रित होते थे | आज स्थिति बिलकुल विपरीत है | आज अधिक से अधिक वृद्ध माता-पिता आर्थिक रूप से अपने पुत्रों पर निर्भर हैं जिस कारण वृद्धों के आत्म-सम्मान को हानि पहुँच रही है | दूसरी समस्या है परिवार में देखभाल करने वाले सदस्यों की संख्या घटती जा रही है | संयुक्त परिवारों में बुजुर्गों की देखभाल सामूहिक रूप से होती थी | अब वृद्ध अपने पुत्रों और पुत्र वधुओं की सेवाएँ प्राप्त नहीं कर सकते जबकि पहले पुत्र और पुत्र वधुएँ उनकी परम्परागत देखभाल करने वाली होती थी | आज की भौतिक वादी पीढ़ी किसी भी विषय को स्वार्थ की दृष्टि से देखती है | यदि वृद्ध उनके लिए किसी भी तरह लाभप्रद है तो उनकी संतान कुछ हद तक उनका मान-सम्मान तथा देखभाल कर सकती है | आज वृद्धों की सेवा और संरक्षण में एकल परिवारों की रुची और क्षमता

में कमी आई है | परिवार का स्थान कुछ सीमा तक बड़ी संस्थाओं जैसे वृद्ध आश्रम और वृद्ध देखभाल केंद्र ने ले लिया है | वृद्ध देखभाल केंद्र अभी प्रयोगात्मक चरण में हैं और वो भी केवल बड़े शहरों में हैं |

- **संयुक्त परिवार में वृद्ध**

भारतीय संस्कृति में प्राचीन काल से ही संयुक्त परिवार की धारणा रही है | संयुक्त परिवार प्रणाली एक पारम्परिक पारिवारिक संरचना है, जिसमें कई पीढ़ियाँ एक ही छत के नीचे एक साथ रहती हैं- दादा-दादी, माता-पिता, बच्चे और कभी-कभी चाचा-चाची व उनके परिवार भी | इस संरचना में वृद्धजनों की भूमिका न केवल महत्वपूर्ण होती है, बल्कि उनके लिए यह पारिवारिक ढाँचा एक भावनात्मक और सामाजिक सुरक्षा कवच भी प्रदान करता है | वीरेंद्र प्रकाश शर्मा अपनी पुस्तक '*भारतीय समाज - मुद्दे और समस्याएँ*' में लिखते हैं -

> "संयुक्त परिवार में परम्परानुसार वृद्ध पीढ़ी का सम्मान किया जाता था और उनका जीवन सुखमय था | परम्परागत संयुक्त परिवार में तीन या तीन से अधिक पीढ़ी के सगे-संबंधी साथ-साथ रहते थे, जो एक ही वंश के होते थे | विभिन्न पीढ़ियों में अविवाहित, विवाहित, निःसंतान, विधवा-विधुर, बच्चे, बालक, युवा, प्रौढ़, वृद्ध सभी प्रकार के सदस्य साथ-साथ रहते थे |" (शर्मा 149)

परम्परागत संयुक्त परिवार वृद्धों के लिए सम्मान, सुरक्षा और संतोषपूर्ण जीवन का आधार था | संयुक्त परिवार में वृद्धों को हमेशा से आदर-सम्मान मिलता रहा है और उनके अनुभव व ज्ञान से युवा पीढ़ी लाभान्वित होती रही है | संयुक्त परिवार में संयुक्त निवास, संयुक्त पूंजी व संयुक्त उत्तरदायित्व के कारण परिवार में वृद्धों का प्रभुत्व, आदर व अनुशासन का वातावरण हमेशा बना रहता है | लेकिन वर्तमान में औद्योगीकरण, शहरी करण, आधुनिकीकरण, पाश्चात्यीकरण, उपभोक्तावादी संस्कृति, व्यक्तिगत आकांक्षा, स्वकेंद्रित विचार व सामंजस्य की कमी के कारण संयुक्त परिवार टूटते जा रहे हैं | इसके अलावा आज भी कुछ एक वृद्ध संयुक्त परिवार में रहते हैं | लेकिन वर्तमान के संयुक्त परिवारों में वृद्धों को वो आदर सम्मान नहीं मिल पाता | पश्चिम संस्कृति का प्रभाव बढ़ने के कारण नई पीढ़ी का अपने बुजुर्गों के प्रति आदर कम होने लगा है | आज वृद्ध और युवा पीढ़ी में वैचारिक मतभेद, सामंजस्य की कमी, निजी स्वतंत्रता, व व्यक्तिगत स्वार्थ के कारण दोनों पीढ़ियों में आपसी मनमुटाव बढ़ गया है | वृद्ध विमर्श इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए इस बात पर बल देता है कि आधुनिक समाज में भी बुजुर्गों को वही गरिमा और सहयोग मिलना चाहिए, जो उन्हें पहले संयुक्त परिवार में प्राप्त था |

- **नौकरीपेशा परिवार में वृद्ध**

आज के समय में अधिकांश परिवार नौकरीपेशा हो गए हैं, जहाँ पति-पत्नी दोनों कामकाजी होते हैं और दिन का समय अधिकांश कार्यस्थल पर बिताते हैं | ऐसी स्थिति में घर के बुजुर्गों की भूमिका और स्थिति एक नई सामाजिक चुनौती और जिम्मेदारी के रूप सामने आती है | बुढ़ापे में वृद्ध घर परिवार के साथ-साथ समाज के सारे रीति रिवाजों को अच्छी तरह निभाते हैं | अगर परिवार

में पुत्र और पुत्र-वधु नौकरी की वजह से छुट्टी न मिलने के कारण सामाजिक कार्य में उपस्थित नहीं रहता तब उनके बूढ़े माँ-बाप बेटे की जगह जाकर उन सामाजिक कार्यक्रमों में हाजिरी दे देते हैं | इस तरह नौकरीपेशा परिवार में बूढ़े माता-पिता पारिवारिक व सामाजिक रिश्तों को मजबूत करने में सहायक बन जाते हैं | नौकरीपेशा परिवारों में वृद्ध अक्सर बच्चों की देखभाल, घर की निगरानी, और दैनिक गतिविधियों के संचालन में सहायक होते हैं | लेकिन इस उम्र में बूढ़ों को प्यार, मान-सम्मान, सहानुभूति और सहारे की आवश्यकता रहती है | औद्योगीकरण तथा नगरीकरण में वृद्धि के परिणामस्वरूप संयुक्त परिवारों की जगह वैयक्तिक परिवारों की संख्या में वृद्धि होना आरम्भ हुई | परिवार के युवा रोजगार और धनार्जन के लिए नगरों की ओर पलायन कर रहे हैं | युवा वर्ग वही पर विवाह करके और घर लेकर बस जा रहे हैं | आज के इस भागदौड़ भरे जीवन में युवा पीढ़ी के पास घर-परिवार के बुजुर्ग सदस्यों के लिए समय नहीं है | जिसके कारण घर-परिवार में वृद्ध स्वयं को अकेला और निराश्रित महसूस पाते है | यदि वृद्ध माता-पिता में से किसी एक की मृत्यु हो जाती है तो अकेला व्यक्ति अपने दुःख दर्द को किसी से न बाँट पाने के कारण अकेले पन और मानसिक तनावों का शिकार होता है | अनेक युवा अपने वृद्ध-माता-पिता को विदेश ले जाकर उनके साथ घरेलू नौकरों की तरह व्यवहार करते है | जिससे वृद्धों को पारिवारिक शोषण की पीड़ा भी सहनी पड़ती है | नौकरीपेशा परिवार में वृद्धजनों को अकेलापन, देखभाल की कमी और भावनात्मक उपेक्षा इत्यादि विभिन्न चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता हैं |

- **संपन्न परिवार में वृद्ध**

भारतीय समाज आर्थिक आधार पर त्रिस्तरीय है | उच्च, मध्य और निम्न वर्ग में बांटा गया है | संपन्न परिवार की नई पीढ़ी अपने व्यक्तिगत जीवन और स्वतंत्रता को प्रमुखता देने लगी है जिसके परिणामस्वरूप वे वृद्धों को अपने साथ रखना पसंद नहीं करती हैं | आधुनिक सुख-सुविधाओं से संपन्न परिवारों में वृद्धों को निरंतर कोसने की प्रवृत्ति कम होने के स्थान पर बढ़ती जा रही है | कई संपन्न परिवार अपने बुजुर्गों को वृद्धाश्रम में भेज रहे है और जो घर में ही रहना चाहते उनके साथ नौकरों की तरह बुरा व्यवहार होता है | परिवार के भीतर उनकी स्थिति इस कदर शोषित कर दी गयी है | जीवन यापन करने के लिए उनके पास दो ही विकल्प रहे है पहला जीवन भर बच्चों के तानों और शोषण को सहते रहे दूसरा वे अपना सारा जीवन वृद्धाश्रम में व्यतीत करें | संपन्न परिवारों के वृद्ध बड़े-बड़े आलीशान घरों में ज्यादातर अकेले रहते हैं | नौकरी, शिक्षा एवं व्यवसाय के लिए उनके बेटे नगरों महानगरों एवं विदेशों में पलायन करते जा रहे हैं | इस पलायनवादिता ने बुजुर्गों के अकेलेपन को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है | कुछ उच्च वर्गीय बच्चे अपने माँ-बाप की देखभाल के लिए नर्स व नौकरों की व्यवस्था कर देते है और अपनी जिम्मेदारियों से मुक्त हो जाते है | कुछ संपन्न परिवारों के बच्चे अगर उनके साथ है भी तो वे अपने-अपने कामों में इतने व्यस्त हैं कि उनके पास अपने बुजुर्गों से बात करने के लिए भी समय नहीं है | समय एवं स्थान की कमी ने युवा वर्ग एवं वृद्ध वर्ग की दूरी को बहुत बढ़ा दिया है | इसे सांस्कृतिक अद्योपतन कहें या महत्वाकांक्षा की अंधी दौड़ | संपन्न परिवार में वृद्धों की आर्थिक स्थिति अच्छे होने के बावजूद वृद्धावस्था में शारीरिक, सामाजिक और भावनात्मक समस्याएं अधिक उत्पन्न होती हैं | संपन्नता जीवन को आसान बना सकती है, लेकिन वृद्धावस्था में सच्ची खुशी भावनात्मक और सामाजिक संतुलन से मिलती है | सम्पन्नता के बावजूद यदि भावनात्मक सहयोग और

सम्मान न मिले तो वृद्ध असुरक्षित और असंतुष्ट रहते हैं | वृद्ध विमर्श यह इंगित करता है कि वृद्धजनों की वास्तविक सुख-संतुष्टि केवल सम्पन्नता से नहीं, बल्कि स्नेह, सम्मान और संवाद से संभव है |

- **निम्न परिवार में वृद्ध**

आर्थिक दृष्टि से कमजोर परिवार में मनुष्य के जीवन का आरंभ ही अभावों में होता है तथा अंत भी तड़प-तड़प कर समाप्त हो जाता है | निर्धन लोगों के पास बड़े-बड़े आलीशान घर नहीं हैं बल्कि सिर पर बस घास-फूस की छत ज़रूर होती है | ऐसे लोग रोज मजदूरी करके अपना जीवन यापन करते हैं | वे रोज कमाते है तब खाते हैं लेकिन ऐसे लोग कभी अपने वृद्ध माता-पिता के लिए किसी वृद्धाश्रम में जगह खोजने नहीं जाते हैं | वे लोग अपने टूटे-फूटे घरों में हंसी ख़ुशी अपनी जिन्दगी जी लेते है लेकिन माँ-बाप को कभी बोझ समझ कर वृद्धाश्रम नहीं भेजते हैं | इस वर्ग के वृद्धों की कोई इच्छा या अपेक्षा नहीं होती है | यह बात सत्य है कि जिन वृद्धों के पास धन-दौलत का पूरा सहारा होता है उन्हें अपने बुढ़ापे को व्यतीत करने में ज्यादा कष्ट नहीं झेलना पड़ता लेकिन सबसे बड़ी समस्या उन वृद्धों की है जिनके पास न तो जमीन और जायदाद होती है और न कोई जमा पूंजी उनकी स्थिति दयाजनक होती है | बच्चों के लिये ऐसे वृद्ध बोझ लगते है | अंत: इस वर्ग के वृद्धों का जीवन आर्थिक दृष्टि से कष्टमय और अभावग्रस्त होता है | सीमित आय या बचत के कारण उनकी बुनियादी जरूरतें पूरी करने में कठिनाई होती है | पौष्टिक आहार की कमी और स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच न होने के कारण उनकी शारीरिक स्थिति ख़राब होती है | वृद्धजनों के गंभीर बीमारियों का इलाज करना निम्न परिवारों के लिए कठिन होता है | आर्थिक तंगी और व्यस्त जीवनशैली के कारण परिवार के सदस्य वृद्धजनों की शारीरिक और भावनात्मक जरूरतों पर ध्यान नहीं दे पाते | निम्न वर्ग के वृद्धों को समाज में वह सम्मान और सहारा भी नहीं मिल पाता जो उनके आत्मसम्मान के लिए आवश्यक है | वृद्ध विमर्श यह स्पष्ट करता है कि निम्न वर्गीय वृद्ध आर्थिक रूप से सबसे अधिक असुरक्षित हैं और उनके लिए सामाजिक व सरकारी सहयोग अत्यावश्यक है |

- **मध्यम वर्गीय परिवार में वृद्ध**

मध्यम वर्गीय परिवार में बुजुर्गों की स्थिति संतुलित किन्तु चुनौतीपूर्ण होती है | इस भौतिकवादी और आपाधापी युग में उनकी संतानें संघर्ष कर रही हैं | वे अपने भविष्य को बेहतर बनाने में ही समय व्यतीत कर रहे हैं | अपने-आप को आगे बढ़ाने की होड़ में अपने बुजुर्गों के लिये उनके पास भी समय नहीं है | बच्चे नौकरी तथा अन्य कारणों से अपने माँ-बाप से दूर रहते हैं जिससे वृद्ध व्यक्ति को अकेलापन महसूस हो सकता है | मध्यम वर्गीय परिवार में कहीं संपत्ति के बंटवारे की समस्या, कहीं पुत्र माता-पिता की अपेक्षाओं पर खरा नहीं उतरता अर्थात पिता-पुत्र के विचारों में मतभेद के कारण भी वे अपने बुजुर्गों के प्रति संवेदनशील नहीं होते हैं | कुछ बच्चे पूर्ण रूप से अपने माता-पिता के प्रति वफादार होते हैं परन्तु आर्थिक स्थिति अच्छी न होने कारण वे अपने बुजुर्गों का अच्छे से ख्याल नहीं रख पाते | बड़े खर्च जैसे गंभीर बीमारियों का इलाज या अन्य आकस्मिक आवश्यकताओं का सामना करना चुनौतीपूर्ण होता है | यहाँ वृद्धों को कुछ हद तक सुरक्षा, सम्मान और देखभाल मिलती है, बढ़ती आर्थिक चुनौतियों के कारण उनके जीवन में असुरक्षा भी बनी रहती है |

- **वृद्धों के पुनर्वास की समस्या**

वृद्धों का परिवार व समाज में एक विशेष स्थान होता था परन्तु वर्तमान में उन्हें सामान्य भी नहीं समझा जाता | आज के समाज में वृद्धों को एकदम अनुपयोगी माना जाता है | जिन्होंने अपनी मेहनत से सारा घर-परिवार खड़ा किया अब उन्हें निरर्थक और फालतू समझा जाने लगा | इस भौतिकता वादी समाज में बच्चों के पास इतना समय नहीं है कि वे बुजुर्गों के पास कुछ पल बैठ जाए | वृद्धावस्था में वृद्धों को अपने भरे-पूरे परिवार के साथ जीने की चाहत, परिवार व समाज से उचित आदर-सम्मान व देखभाल की आवश्यकता रहती है | बच्चों की अवहेलना, सामाजिक, आर्थिक एवं भावनात्मक असुरक्षा के कारण वृद्धों और युवाओं के बीच वैचारिक मतभेद बढ़ता जा रहा है | ऐसे मतभेद के कारण युवा पीढ़ी स्वतंत्र जीवन जीना व वृद्धों से पीछा छुड़ाना चाहती है | इस मनोवृति के कारण बुजुर्गों को वृद्धाश्रमों में भेजा जा रहा है | वृद्धों के पुनर्वास की समस्या बढ़ने के कारण शहरों में वृद्धाश्रम बढ़ते जा रहे हैं | जिन वृद्धों के पास अपनी जमा-पूंजी होती है उन्हें वृद्धाश्रम में आसानी से प्रवेश मिल जाता है | गरीब बुजुर्गों को धनाभाव के कारण वृद्धाश्रमों में प्रवेश तक नहीं मिलता | सभी सभ्य समाजों ने अपने वृद्धजनों के लिए तरह-तरह की व्यवस्थाएँ की हैं "इंग्लैण्ड में यह चलन है कि स्वस्थ वृद्धों की देखभाल परिवार करें, बीमार वृद्धजनों को अस्पताल भेजा जाए और अक्षम वृद्धों को वृद्धाश्रमों में रखा जाए |" (बुआ) घर-परिवार से संपन्न होने वाले वृद्धों को भी वृद्धाश्रम में जाना पड़ता है और मजबूरी में अपना जीवन गुजारना पड़ता है | कुछ लोग माता-पिता का बँटवारा भी कर लेते हैं | माँ एक भाई के पास पिता दूसरे भाई के पास जबकि इस अवस्था में दोनों को सबसे ज्यादा जरूरत एक दूसरे की पड़ती है | वृद्धावस्था में बूढ़े कभी अपने घर, कभी नगरों व विदेशों में बसे बच्चों के घर, कभी एक बेटे के पास, कभी दूसरे बेटे के पास, कभी वृद्धाश्रम में इस प्रकार वृद्धों का अंतिम निवासस्थान स्थिर नहीं होता | वृद्धों का पुनर्वास उनकी गरिमा, सुरक्षा और सम्मान से जुड़ा गंभीर प्रश्न है | आशय यह है कि कोई भी वर्ग हो अधिकांश वृद्धों की पारिवारिक स्थिति चिंताजनक ही है |

वृद्धों की पारिवारिक समस्याएं केवल व्यक्तिगत या घरेलू नहीं, बल्कि एक सामाजिक और सांस्कृतिक संकट हैं | इनके समाधान के लिए परिवार को अपनी जिम्मेदारी समझनी होगी, समाज को सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाना होगा और सरकार को सुरक्षा व सहयोग योजनाएँ सशक्त बनानी होगी | तभी वृद्धजन अपना जीवन सम्मान, स्नेह और आत्मनिर्भरता के साथ व्यतीत कर सकेंगे |

1.3.3 वृद्ध विमर्श : सामाजिक दृष्टिकोण

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है जिसके कारण उसका परिवार और समाज के साथ गहरा सम्बन्ध होता है | मनुष्य की कुछ न कुछ भूमिकाएं परिवार और समाज के साथ जुड़ी हुई होती है | वृद्धावस्था आने पर मनुष्य के जीवन में कई सामाजिक परिवर्तन होते हैं | वृद्धावस्था में उसके सामाजिक कार्यों, भूमिकाओं, संबंधों आदि में विशेष प्रकार का परिवर्तन आता है | जिसका प्रमुख कारण है शारीरिक, मानसिक एवं आर्थिक रूप से कमजोर होना | समाज वृद्धों को दिन प्रतिदिन नजर अंदाज और उनकी बातों को टालना प्रारम्भ कर देता है | दूसरी तरफ वृद्धों में भी स्वाभाविक परिवर्तन होते है, वह समाज से निरंतर अलग व जिम्मेदारियों से मुक्त होता चला जाता है | वृद्धावस्था में वह अपने जैसे लोगों के साथ रहना पसंद करते है | अर्नाल्ड रोज (1965) ने यह प्रस्तावित किया

की बुजुर्ग अपनी ही उप संस्कृति में रहना पसंद करते है | जैसे-जैसे वृद्धों की उम्र में बढ़ोतरी होती है वे अपने ही उम्र वालों के बीच रहना, व्यवहार करना, भूमिकाओं का निर्वाह करना आदि पसंद करते हैं | जार्ज एल. मैडाक्स (1963) ने इस एक्टिविटी सिद्धांत की वकालत की और यह तर्क दिया कि जो व्यक्ति जितना अधिक क्रियाशील होगा, वृद्धावस्था में उसका मनोबल भी उतना ही अधिक होगा | मनोवैज्ञानिकों के अनुसार उम्र के साथ शरीर में परिवर्तन होना स्वाभाविक है किन्तु मन में उत्साह और उमंग हो तो मनुष्य युवा और सक्रिय बना रह सकता है | वृद्धावस्था को जैविक, चिकित्सकीय या सरकारी प्रयास से रोका नहीं जा सकता | वृद्धावस्था सभी के जीवन में आएगी, यह एक कटु सत्य है | लेकिन वृद्धावस्था में होने वाली शारीरिक, मानसिक, आर्थिक एवं सामाजिक समस्याओं का समाधान ढूँढना होगा ताकि हमारे बुजुर्गों की स्थिति इतनी कारुणिक न हो | वृद्ध विमर्श सामाजिक दृष्टिकोण से न केवल वृद्धों की स्थिति को समझने की दिशा में महत्वपूर्ण है, बल्कि यह समाज की संवेदनशीलता और मानवीय मूल्यों को भी परिभाषित करता है | वृद्धों के जीवन में सामाजिक चुनौतियाँ निम्नलिखित प्रकार से हो सकती है |

- **समाज और स्वयं वृद्धों का नकारात्मक दृष्टिकोण**

समाज का वृद्धों के प्रति दृष्टिकोण समय के साथ काफी बदल चुका है | एक समय था जब वृद्धों को समाज में उच्च स्थान और सम्मान प्राप्त था, वहीं आजकल की तेज और उपभोक्तावादी जीवनशैली में वृद्धों को उपेक्षित किया जाने लगा है | वृद्ध व्यक्ति जब तक अपना योगदान समाज में देता है तब तक वह समाज का अभिन्न अंग बना रहता है | जैसे ही वह समाज के लिए अनुपयोगी होता है वैसे ही समाज से कटता चला जाता है | वृद्धावस्था के कारण समाज की नई पीढ़ी उसकी बातों को अनसुना करके अपना अधिकार स्थापित करने लगी रहती है | समाज में आयु आधारित भेदभाव आम है, जिससे वृद्धों को कमजोर, निर्भर और अप्रासंगिक समझा जाता है | परिणामस्वरूप वृद्धजन असुरक्षा, उपेक्षा और हाशियाकरण का अनुभव करते हैं | कई वृद्ध अपनी बढ़ती उम्र, शारीरिक, मानसिक बीमारियों तथा आत्मनिर्भरता में कमी आने पर खुद को दूसरों पर बोझ समझने लगते हैं | "कभी-कभी वृद्ध व्यक्ति वृद्धत्व प्रक्रिया को स्वीकार न कर, विद्रोही तेवर दिखाकर बुढ़ापे को सामाजिक कलंक मान लेते हैं | अवकाश प्राप्ति, वैधव्य, सामाजिक प्रतिष्ठा में ह्रास, नाते-रिश्तेदारों सामाजिक सहारे का अभाव, अव्यवस्था, विस्थापन, अपर्याप्त पारिवारिक समर्थन तथा देखरेख करने वालों का अभाव आदि बुढ़ापे में सामाजिक रुग्णता के साधारण अंग है | ऐसी स्थिति में वृद्ध अपने आप को असुरक्षित महसूस करने लगता है |" (बाली 11) अक्सर वृद्ध व्यक्ति अपने जीवन के उस दौर को सहजता से स्वीकार नहीं कर पाते जब शारीरिक क्षमता, सामाजिक प्रतिष्ठा और कार्यक्षमता में कमी आने लगती है | इस अस्वीकृति से उनमें विद्रोह की प्रवृत्ति पैदा होती और वे वृद्धावस्था को सामाजिक कलंक के रूप में अनुभव करने लगते हैं | अतः वृद्धावस्था को समाज की रुग्णता और खुद के नकारात्मक दृष्टिकोण से बचाने के लिए समाज और परिवार को सहायक वातावरण उपलब्ध कराना अनिवार्य है |

- **युवा पीढ़ी का वृद्धों के प्रति दृष्टिकोण**

युवा पीढ़ी का वृद्धों के प्रति दृष्टिकोण समाज, संस्कृति, पारिवारिक मूल्यों और व्यक्तिगत अनुभवों पर निर्भर करता है | युवा पीढ़ी का वृद्धों के प्रति दृष्टिकोण मिश्रित है – कहीं सम्मान और आदर है, तो कहीं उपेक्षा और असहिष्णुता | आधुनिक समय

में तकनीकी विकास, जीवनशैली में परिवर्तन और पारम्परिक मूल्यों के ह्रास ने इस दृष्टिकोण को और अधिक जटिल बना दिया है | युवा पीढ़ी वृद्धों को व्यक्ति न मानकर कोई 'विकराल महामारी' मानता है जिसने समूचे समाज को अपने चंगुल में दबोच रखा है | वे वृद्धों को बेकार वस्तु समझते है जिसने घर का काफी बड़ा हिस्सा घेरकर रखा है | आज की पीढ़ी का बहुत बड़ा हिस्सा वृद्धों को कुछ इस तरह आंकने लगा है | जो कल समाज के निर्माता थे आज नई पीढ़ी उसे समाज की छाती पर बोझ मानती है | वृद्धों को एक ऐसी समस्या मानते है जिसे प्रकृति ने बरबस ही समाज पर थोप दिया हो | कुछ युवा वृद्धों को पुराने विचारों और बदलते समय के साथ कदम न मिला पाने वाले व्यक्ति मानते हैं | वृद्धों की परम्परागत सोच और सलाह उन्हें अपने जीवन में हस्तक्षेप की तरह लगती है | कुछ युवाओं की नजर में वृद्ध समाज के पिछड़े पन की 'अनचाही निशानी' मात्र है | अपने बूढ़े माँ-बाप को युवा पीढ़ी अब इन्हीं व्याख्याओं के साथ याद करते हैं | अपने जन्मदाता को आज इस कदर 'हीन' और 'नाकारा' कहकर वृद्धाश्रम छोड़ दे रहें है | वृद्धाश्रम भले ही सेवा भाव से प्रारम्भ किए जाते हैं लेकिन उनका वर्तमान स्वरूप अर्थ-भाव हो गया है | वृद्धाश्रम आज पैसे वालों के लिए ही मृत्यु का प्रतीक्षा फल बना हुआ है | वृद्धाश्रम समस्या का हल नहीं लेकिन तत्काल राहत का केंद्र बिंदु कहा जा सकता है | आज के युवाओं को समझना होगा कि बुढ़ापा उन पर भी आएगा इसलिए अपने बच्चों को अच्छे संस्कार दे ताकि वे बुजुर्गों के प्रति अपने कर्तव्य निभा सकें | युवा और वृद्ध यदि एक-दूसरे को समझें, तो यह समाज और भी सुंदर और सशक्त बन सकता है |

- **नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी में सामंजस्य का अभाव**

नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी के बीच सामंजस्य का अभाव समाज में बढ़ती पीढ़ी गत खाई का परिणाम है | यह अंतर विचारों, मूल्यों, जीवनशैली और प्राथमिकताओं में भिन्नता के कारण उत्पन्न होता है | नई पीढ़ी आधुनिकता को प्राथमिकता देती है जबकि पुरानी पीढ़ी परम्पराओं और रीति-रिवाजों को बनाए रखने की कोशिश करती है | पीढ़ियों के बीच बढ़ती खाई परिवारों को तोड़ने और एकल परिवारों की ओर धकेलने का कारण बनती है |आज इस आधुनिक समाज में प्रत्येक व्यक्ति आधुनिक सुविधाओं से युक्त जीवन जीना चाहता है | इस भागदौड़ और प्रतिस्पर्धा भरे जीवन ने मनुष्य की सुख, शांति छीन ली है और उनकी सोच और विचार में क्रांतिकारी परिवर्तन लाया है | आज की युवा पीढ़ी परम्परागत रूढ़ियों, दकियानूसी मान्यताओं को तोड़ डालना चाहती है | जबकि वृद्धजन परिवार के सदस्यों को अपने समय के संस्कार, जीवन मूल्यों, रीति-रिवाजों और आदर्शों में ढालना चाहतें हैं | आज की नई पीढ़ी वृद्धों की सोच और सिद्धांतों को नकार देती है वह स्वच्छंद व स्वतंत्र होकर जीवन जीना चाहती है | परिणामस्वरूप वृद्धों और युवा पीढ़ी में वैचारिक मतभेद के कारण दूरियां व परिवार में सामंजस्य का अभाव उत्पन्न होने लगता है | जो परिवार के बुजुर्गों के लिए दुखदायी होता है | परिणामस्वरूप घर-गाँव में वृद्ध एकाकी एवं बेसहारा हो जाते है | वृद्धों की इस अवस्था में उनकी देखभाल करने वाला कोई नहीं होता है | जिससे उनमें सामाजिक एवं आर्थिक असुरक्षा की भावना महसूस होती है | नई और पुरानी पीढ़ी में सामंजस्य का अभाव समाज के लिए चिंता का विषय है | यदि अनुभव और ऊर्जा मिलकर चलें, तो समाज संतुलित और प्रगतिशील बन सकता है | अंत: आवश्यक है कि दोनों पीढ़ियाँ एक-दूसरे की पूरक बनें, न कि विरोधी |

- **वृद्धावस्था में सामाजिक असुरक्षा**

सुरक्षा वर्तमान समय और समाज की महत्वपूर्ण समस्या है | सभी वर्ग के लोगों को इसका सामना करना पड़ता है | समाज में बच्चों से लेकर महिलाएँ और वृद्ध कोई भी अपने आप को सुरक्षित नहीं समझता है | भारतीय समाज में संयुक्त परिवार एक ऐसी संस्था मानी जाती है जो अपने पारिवारिक सदस्यों को सुरक्षा प्रदान करता है | संयुक्त परिवार में किसी भी आयु वर्ग का सदस्य अपने आप को अकेला और असुरक्षित महसूस नहीं करता है | किन्तु औद्योगीकरण, आधुनिकीकरण एवं नगरीकरण ने संयुक्त परिवार की संरचना को तोड़ दिया है | प्रत्येक युवा रोजगार के लिए औद्योगिक नगरों में पलायन कर रहा है तथा अपनी पत्नी एवं बच्चों को लेकर वहीं एक अलग 'एकाकी परिवार' की स्थापना कर लेता है | आये दिन कई ऐसी घटनाएँ पढ़ने-सुनने को मिलती हैं | जिससे पता चलता है कि बेटे की नौकरी विदेश में लगी, वह अपनी सारी संपत्ति बेचकर बूढ़े माँ-बाप को असहाय छोड़कर चला गया | कई बार तो घर के नौकर ही बुजुर्गों की कमजोरी का लाभ उठा कर अपराधों को अंजाम देते हैं | कहीं कोई पड़ोसी बदमाश या करीबी व्यक्ति उनकी जायदाद हड़पने का प्रयास करते हैं | नित्य यह भी अखबार में पढ़ने को मिला कि संपत्ति की लिप्सा में किसी ने अमूक वृद्ध की हत्या कर दी | वर्तमान में वृद्धों के लिए परिवार और समाज दोनों स्थानों पर असुरक्षा का माहौल है | अंत: बुजुर्ग व्यक्तियों को अपनी स्वास्थ्य के साथ-साथ अपनी पारिवारिक और सामाजिक सुरक्षा को लेकर भी चिंता सताने लगती है | वृद्धावस्था में सामाजिक असुरक्षा एक बड़ी समस्या है जो परिवार, समाज और सरकार के समन्वित प्रयासों से हल हो सकती है | यदि परिवार, समाज और सरकार मिलकर प्रयास करें तो वृद्धजन न केवल सुरक्षित बल्कि सम्मानजनक और संतोष पूर्ण जीवन सकते हैं

- **वृद्धावस्था में वैधव्यजनित समस्या**

यह तो सत्य है कि प्रत्येक इंसान की मौत होनी है, परन्तु यह भी सत्य है ऐसा निश्चित नहीं कि पति-पत्नी एक साथ दुनिया से विदा लें | किसी भी व्यक्ति को अपने जीवन साथी की सबसे ज्यादा आवश्यकता वृद्धावस्था में होती है | वृद्धावस्था में सुख-दुःख, दर्द, सहानुभूति, सहयोग, विचारों का आदान-प्रदान मुख्यतः जीवन साथी के साथ कर सकते हैं | वृद्धावस्था में पति-पत्नी के साथ होने से बुढ़ापा कुछ हद तक आसान हो जाता है | वृद्धावस्था में जब कोई एक दूसरे का साथ छोड़ कर चला जाता है तो जीवित वृद्ध की दशा दयनीय हो जाती है | जब तक पति-पत्नी दोनों जीवित रहते हैं आपस में सुख-दुःख बाँट लेते हैं | एक के साथ छोड़ने से दूसरा एकदम अकेला हो जाता है और मन ही मन घुटन महसूस करता है | दीर्घकालीन संबंधों के कारण व्यक्ति अपने जीवनसाथी पर अत्यधिक भावनात्मक रूप से निर्भर हो जाता है | जीवनसाथी के जाने के बाद व्यक्ति को गहरा अकेलापन महसूस होता है जिससे अवसाद और तनाव बढ़ता है | यदि व्यक्ति जीवनसाथी पर आर्थिक रूप से निर्भर होता है तो उनके निधन के बाद आर्थिक समस्याएं भी उत्पन्न होती है | वृद्ध महिला विधवाओं को परिवार और समाज में उपेक्षा और भेदभाव का सामना करना पड़ता है | संयुक्त परिवारों की कमी और एकल परिवारों की प्रवृत्ति ने वृद्ध विधवाओं को अधिक असुरक्षित बना दिया है | वृद्धावस्था में वैधव्यजनित समस्या न केवल व्यक्ति की भावनात्मक और आर्थिक स्थिति को प्रभावित करती है बल्कि समाज के लिए भी यह एक बड़ी चुनौती है |

सामाजिक दृष्टिकोण से वृद्ध विमर्श केवल वृद्धों की समस्याओं पर सहानुभूति प्रकट करने तक सीमित नहीं रहना चाहिए, बल्कि समाज को यह समझना होगा कि वृद्ध हमारे अतीत और वर्तमान को जोड़ने वाली कड़ी हैं | उनका सम्मान करना, उनकी देखभाल करना और उन्हें जीवन का गरिमामय वातावरण देना समाज की जिम्मेदारी है |

1.3.4 वृद्ध विमर्श : सांस्कृतिक दृष्टिकोण

वृद्ध विमर्श का सांस्कृतिक दृष्टिकोण वृद्धों की समाज में स्थिति, भूमिका और उनके प्रति व्यवहार को सांस्कृतिक मान्यताओं, परम्पराओं और जीवन मूल्यों की दृष्टि से समझने का प्रयास करता है | भारतीय संस्कृति में वृद्धावस्था का विशेष महत्व है | भारतीय संस्कृति में वृद्धों को हमेशा से सम्मान, श्रद्धा और आशीर्वाद का स्त्रोत माना गया है | प्राचीन समय में भारतीय संस्कृति में संयुक्त परिवार की अवधारणा थी | माता-पिता, दादा-दादी, ताऊ-ताई, चाचा-चाची एवं उनके बच्चे एक ही छत के नीचे रहते थे | एक चूल्हे में उनका भोजन बनता था तथा सब एक साथ भोजन करते थे | विशाल आँगन हुआ करते थे जहाँ सभी एक साथ बैठ कर बाते करते और बच्चे खेलते थे | उस समय के बच्चे अपने दादा-दादी से कहानी सुने बिना सोते नहीं थे | लेकिन 21वीं शती के बाद घर-परिवार संक्षिप्त और एकल परिवार में बदलने लगे | सबसे आगे निकलने की होड़ में सब रिश्ते-नाते पीछे छूटते गए | पूंजीवाद से प्रेरित उपभोक्तावादी संस्कृति ने बुरी तरह से हमारे समाज और संस्कृति को प्रभावित किया है | वृद्ध विमर्श समाज, संस्कृति और व्यक्ति के जीवन में वृद्धावस्था से जुड़े विभिन्न पहलुओं पर विचार करता हैं | सांस्कृतिक दृष्टिकोण से वृद्ध विमर्श का अध्ययन निम्नलिखित बिन्दुओं पर केन्द्रित होता है |

- **सामाजिक व्यवस्था, आदर्शों और मूल्यों में परिवर्तन** –

समाज एक गतिशील इकाई है | परिवर्तन प्रकृति का नियम है | समय, परिस्थितियों और मानवीय आवश्यकताओं के साथ-साथ सामाजिक व्यवस्था, आदर्शों और मूल्यों में भी परिवर्तन होता रहता है | परिवर्तनशीलता ही समाज का स्वभाव है | समाज में कई रीति-रिवाज, परम्पराएँ, मूल्यों और प्रथाएँ समय के अनुसार परिवर्तित होती देखी जा सकती है | आधुनिक विचारों और परम्परागत चले आ रहे विचारों में परिवर्तन आना स्वाभाविक हैं | प्राचीन समय से चले आ रहे आदर्शों, मूल्यों और संस्कारों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचाने का कार्य वृद्ध व्यक्ति ही करता है | आज की पीढ़ी मूल्यों और आदर्शों को छोड़कर स्वार्थ वृति को महत्व दे रही हैं | 21वीं शती में ये परिवर्तन स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है | प्राचीन परम्पराओं के प्रति मोह के कारण बुजुर्ग अपने बच्चों को अपने समय के मूल्यों, परम्पराओं को थोपने लगते हैं | नई परम्पराओं, रीति-रिवाजों को गलत ठहराने से भी वृद्धों के प्रति युवा पीढ़ी का दृष्टिकोण हीन भावना से ग्रस्त हो जाता है | इन्हीं मूल्यों, आदर्शों और परम्पराओं में परिवर्तन की स्थिति में वैचारिक मतभेद उत्पन्न होना एक समस्या का रूप ले लेती हैं | घर-परिवार में वैचारिक मतभेद उत्पन्न होने का सारा बोझ वृद्धों पर थोप कर उन्हें परिवार से अलग कर दिया जाता है | वृद्धों और युवाओं के बीच संवाद और समझ का अभाव बढ़ा है | यह सामाजिक आदर्शों में परिवर्तन और पीढ़ियों के बीच दूरियों का परिणाम है | आदर्शों और मूल्यों में परिवर्तन वृद्धों के जीवन को व्यापक रूप से प्रभावित करते हैं | सामाजिक व्यवस्था और मूल्य समय के साथ बदलते रहते हैं | यह परिवर्तन कभी सकारात्मक तो कभी नकारात्मक

प्रभाव डालते हैं | आवश्यक है कि हम परम्परा और आधुनिकता के संतुलन को बनाए रखें | पारिवारिक और सामाजिक आदर्शों में सामंजस्य बनाए रखने के साथ वृद्धावस्था को गरिमा और सुरक्षा प्रदान करना आज की महत्वपूर्ण आवश्यकता है |

- **पाश्चात्य सभ्यता व संस्कृति का प्रभाव** –

पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति का प्रभाव वैश्वीकरण, शहरीकरण और आधुनिक जीवन शैली के बढ़ते प्रसार के साथ समाज के हर पहलू पर पड़ रहा है | इसका प्रभाव विशेष रूप से वृद्धजनों पर भी देखा जा सकता है | भारतीय समाज में वृद्धों की स्थिति उनकी भूमिका और उनके प्रति दृष्टिकोण में पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से कई परिवर्तन हुए है | पाश्चात्य संस्कृति ने संयुक्त परिवारों की परम्परा को कमजोर कर दिया है | जिससे एकल परिवार और व्यक्तिगत स्वतंत्रता को अधिक महत्व दिया जाने लगा | इस सोच के कारण परिवार में वृद्धों की सामूहिक भूमिका सीमित हो गई है | पारम्परिक भारतीय सभ्यता व संस्कृति में वृद्धों को 'घर का मुखिया' माना जाता था | पश्चिमी संस्कृति और आधुनिक जीवन शैली ने इन मूल्यों को कमजोर किया है | पारम्परिक भारतीय समाज में वृद्धों की देखभाल परिवार का प्राथमिक कर्तव्य माना जाता था जो अब कम हो रहा है | अब भारत देश की युवा पीढ़ी पश्चिम देशों से प्रभावित होकर अपने माता-पिता को अलग कर देना चाहती है | पश्चिम देशों में जनसंख्या और रोजगार की समस्या नहीं है | उनके बच्चे किशोरावस्था आते ही आत्मनिर्भर हो जाते हैं | माता-पिता वृद्धावस्था से पूर्व ही अपने लिए योजनाबद्ध तरीके से जीवन शैली का चयन कर लेते तथा सरकार का भी सहयोग रहता है | किन्तु भारत में न रोजगार न ही सरकार के पास इतना पैसा कि वह वृद्धों की देखभाल के लिए विशेष सुविधाएँ दे सके | पाश्चात्य सभ्यता, संस्कृति और मूल्यों को अपनाना नई पीढ़ी आधुनिकता का प्रतीक समझती है | जिसके कारण माता-पिता अलग किए जा रहे हैं| पाश्चात्य संस्कृति के कारण वृद्धों को एकल जीवन शैली अपनानी पड़ रही है, जिससे वे सामाजिक और भावनात्मक रूप से अलग-थलग महसूस करते हैं | पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति का प्रभाव समाज पर सकारात्मक और नकारात्मक, दोनों रूपों में पड़ा है | जहाँ हमने वैज्ञानिक सोच, समानता और आधुनिक प्रगति की राह खोली, वहीं पारम्परिक मूल्यों, पारिवारिक व्यवस्था और सांस्कृतिक धरोहर को भी चुनौती दी | इस बदलती स्थिति में पारम्परिक और आधुनिक दृष्टिकोण के बीच संतुलन बनाना आवश्यक है ताकि वृद्धावस्था को गरिमा पूर्वक और सुखद बनाया जा सके |

- **भौतिकतावादी दृष्टिकोण -**

भौतिकतावाद उस विचारधारा पर आधारित है जिसमें जीवन के भौतिक और आर्थिक पहलुओं को सर्वोपरि माना जाता है | 21वीं शती के इस उपभोक्ता वादी युग में मनुष्य एक दूसरे से आगे बढ़ने और अधिक से अधिक धन प्राप्त करने की होड़ में लगा है | इस भागदौड़ भरे जीवन में जहाँ नई पीढ़ी के पास अपने लिए समय नहीं है | ऐसे में वे अपने व्यस्तता के क्षणों को बुजुर्गों के नाम नहीं करना चाहते | भौतिकतावादी दृष्टिकोण में वृद्धों का सम्मान और उनकी स्थिति अक्सर उनके आर्थिक योगदान पर निर्भर करती है | जो वृद्ध आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हैं उन्हें परिवार में अधिक सम्मान मिलता है जो वृद्ध दूसरों पर निर्भर रहते है वे अक्सर उपेक्षित महसूस होते हैं | भौतिकतावादी दृष्टिकोण के कारण समाज में वृद्धों के प्रति सहानुभूति और संवेदनशीलता का स्तर घटा है |

.भौतिकतावाद ने पारम्परिक और सांस्कृतिक मूल्यों को कमजोर किया है, जहां वृद्धों को परिवार का मार्गदर्शक और परामर्शदाता माना जाता था वहां भौतिकतावाद के चलते परिवार और समाज में वृद्धों को बोझ माना जाने लगा है | बाजारवाद, उपभोक्तावाद और औद्योगीकरण ने नवीन आविष्कारों के जरिए नई पीढ़ी को प्रभावित किया है | जिसके कारण आज की पीढ़ी समस्त आकर्षक चीजों को भोगना चाहती है | बुजुर्ग समाजशास्त्री डॉ. साहेबलाल कहते हैं कि बाजारवाद और उदारीकरण के बाद बदले हुए समाज में बुज़ुर्गों का सम्मान गिरा है | उपभोक्तावाद समाज में बुजुर्ग 'खोटा सिक्का' समझा जाने लगा हैं |"(धनवडे 77) भौतिकतावादी सोच और युवाओं की आत्मनिर्भरता ने वृद्धों के प्रति भावनात्मक जुड़ाव को कमजोर किया है | वृद्धों का मूल्यांकन उनके आर्थिक योगदान, संपत्ति के स्वामित्व और उपयोगिता से किया जाता है, न कि उनके अनुभव, स्नेह या सांस्कृतिक भूमिका से | भौतिकतावादी दृष्टिकोण ने वृद्धों की समस्याओं को और गहरा कर दिया है | समाज को भौतिक और भावनात्मक पहलुओं के बीच संतुलन बनाना होगा ताकि वृद्धावस्था को सुखी और संतोषजनक बना सके | वृद्ध विमर्श का सांस्कृतिक दृष्टिकोण यह स्पष्ट करता है कि वृद्ध समाज और संस्कृति के धुरी हैं | यदि हम अपने बुज़ुर्गों की उपेक्षा करते हैं तो दरअसल हम अपनी ही सांस्कृतिक जड़ों को कमजोर करते हैं | अंत: आवश्यक है कि वृद्धों को समाज में आदर, सम्मान, गरिमा और सक्रिय भूमिका दी जाए ताकि सांस्कृतिक निरंतरता और सभ्यता का संतुलन बना रहे |

1.3.5 वृद्ध विमर्श : आर्थिक दृष्टिकोण

वृद्धावस्था को आर्थिक दृष्टिकोण से देखना अति महत्वपूर्ण हो जाता है | वृद्ध विमर्श के आर्थिक दृष्टिकोण से तात्पर्य यह है कि वृद्धावस्था में व्यक्ति की आर्थिक स्थिति कैसी होती है, उसे किन आर्थिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, और समाज तथा सरकार की क्या भूमिका होनी चाहिए | भारतीय समाज व संस्कृति को देखते हुए डॉ. शिव चंद्र सिंह ने वृद्धावस्था में आर्थिक आधार को तीन स्तरीय माना – उच्च वर्ग, मध्यम वर्ग तथा निम्न वर्ग | उच्च वर्ग के बुज़ुर्गों को आर्थिक स्तर पर कोई विशेष समस्या का सामना नहीं करना पड़ता | लेकिन भावनात्मक स्तर पर उन्हें पुत्रों का प्यार व अपनापन न मिल पाने की समस्या विमर्श का कारण बनती है | कहीं वृद्धों की महत्वाकांक्षा, कहीं बच्चों का अहंकार और एकल परिवार की चाहत वृद्धों के अकेले पन का कारण बनते जा रहे हैं | नई पीढ़ी द्वारा बुज़ुर्गों को वृद्ध आश्रमों में छोड़ना आधुनिक संस्कृति का हिस्सा बनता जा रहा है | निम्न वर्ग अर्थात किसान, मजदूर छोटे स्तर के व्यापारी आदि बुज़ुर्गों को अपमानजनक व्यवहार एवं आर्थिक विपरीत परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है | पैसों की तंगी के कारण निम्न वर्गीय लोगों के पास घर-आँगन एक ही होता है | जिससे निम्न वर्गीय बुज़ुर्गों को अपने बच्चों और पोतों के मुख देखने का सुख मिलता रहता है | प्रो. शिव चन्द्र के अनुसार सबसे बुरी स्थिति मध्यम वर्गीय शिक्षित समाज की है | मध्यम वर्गीय माता-पिता खुद अभावों में रहकर अपने बच्चों को खून पसीना एक करके पढ़ाते है | बच्चे जब बड़े होकर किसी पद को प्राप्त कर लेते है और शादी करके अपना परिवार बना लेते है तब माता-पिता उन्हें मुसीबत लगने लगते है | मध्यम वर्गीय युवा घर-गाँव से पलायन कर बड़े शहर एवं विदेश में अपने एकल परिवार को लेकर बस जाते है | बुज़ुर्ग घर-गाँव में एकाकीपन का शिकार हो जाते है | वृद्धावस्था में मनुष्य नौकरी से अवकाश प्राप्त होने अथवा शारीरिक क्षमता कम हो जाने के कारण आर्थिक समस्याओं

का सामना करना पड़ता है | वृद्ध विमर्श का आर्थिक दृष्टिकोण यह बताता है कि वृद्धावस्था में व्यक्ति की स्थिति, समस्याएँ और चुनौतियाँ प्रायः उसकी आर्थिक स्थिति और संसाधनों पर निर्भर करती हैं |

- **वृद्धावस्था में आर्थिक असुरक्षा**

वृद्धावस्था जीवन का वह चरण है जब व्यक्ति की कार्यक्षमता घटने लगती है और आर्थिक आय के साधन सीमित हो जाते हैं | यदि पर्याप्त बचत, पेंशन या आय का स्रोत न हो तो वृद्ध आर्थिक असुरक्षा के शिकार हो जाते हैं | इस उम्र में व्यक्ति को आर्थिक सुरक्षा सम्बन्धी समस्याओं का सामना करना पड़ता है | इस अवस्था में व्यक्ति शारीरिक क्षीणता के साथ मानसिक रूप से भी अपने को असहाय महसूस करता है | शारीरिक कार्य क्षमता और सामाजिक उपयोगिता में गिरावट आने लगती है | इस अवस्था में वृद्धों के पास अपनी दैनिक आवश्यकताओं, स्वास्थ्य सेवाओं व सम्मानजनक जीवन के लिए पर्याप्त आय या संसाधन नहीं होते | जब व्यक्ति काम करने की स्थिति में नहीं होता और आय के साधन सीमित हो जाते हैं, तब आर्थिक असुरक्षा वृद्ध जीवन को संघर्षशील बना देती है | जो व्यक्ति पेंशन प्राप्त करता है, मकान या दुकान का किराया या अपनी युवावस्था में अपने बुढ़ापे के लिए धन-संपत्ति इकट्ठा करता है उनका बुढ़ापा कुछ हद तक अच्छे से गुजर जाता है | धन के महत्व को दर्शाते हुए सदियों पहले रजा भृर्तहरि ने कहा था 'जिसके पास धन है वही कुलीन, वही पंडित, विद्वान, वक्ता, गुणवान और रूपवान हैं | धन से सब गुणों को आश्रय मिलता है |' पंचतंत्र में समझाया गया है कि "जिनके पास दौलत है वो यदि वृद्ध भी हो चुके हैं तो जवान हैं और दौलत से जो रहित है वह जवान भी बूढ़े हैं |" (धनवडे 37) जिन वृद्धों के पास बुढ़ापे में जीवन यापन के लिए कुछ भी पूंजी शेष नहीं रहती उनका जीवन नरक के समान बन जाता है | प्रत्येक वृद्ध इतना सौभाग्यशाली नहीं होता है कि वह जीवन के अंतिम पड़ाव तक आत्मनिर्भर बना रहें | इसलिए बहुत से वृद्ध ऐसे होते हैं जिन्हें अपने परिवार के अन्य सदस्यों पर निर्भर रहना पड़ता है | परिवार के सदस्य भी उन बुजुर्गों को भार स्वरूप देखने लगते है | जिसके कारण कुछ वृद्धों को बुढ़ापे में भी नौकरी करनी पड़ती है और कुछ भीख मांगने के लिए मजबूर हो जाते हैं | वृद्धों की आर्थिक तंगी जीवन की सांध्य बेला को अत्यंत कष्ट पूर्ण बना देती है | जीवन की संध्या अच्छे से गुजर जाये इसके लिए वित्तीय रूप से आत्मनिर्भर होना पहली शर्त है लेकिन सभी इस शर्त को पूरा कर सकेंगे यह भी संभव नहीं है | आज का युग 'बाप बड़ा न भैया, सबसे बड़ा रुपया' का है | वृद्धावस्था में आर्थिक असुरक्षा एक महत्वपूर्ण सामाजिक और आर्थिक मुद्दा है, जो मुख्य रूप से स्थिर आय के अभाव, बढ़ती स्वास्थ्य देखभाल लागत और वित्तीय संसाधनों की कमी के कारण उत्पन्न होती है | वृद्धावस्था में आर्थिक असुरक्षा सबसे गंभीर समस्याओं में से एक है | यह न केवल जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं को प्रभावित करती है, बल्कि वृद्धों की गरिमा और मानसिक शांति भी छीन लेती है | अंत: आवश्यक है कि समाज, परिवार और सरकार मिलकर वृद्धों के लिए आर्थिक सुरक्षा सुनिश्चित करें, ताकि वे जीवन के अंतिम पड़ाव को सम्मान और आत्मविश्वास के साथ जी सकें |

- **वृद्धावस्था में आर्थिक रूप से दूसरों पर निर्भर**

वृद्धावस्था में आर्थिक रूप से निर्भरता मुख्यतः आय के स्रोतों के अभाव, बढ़ते स्वास्थ्य खर्च और आर्थिक योजनाओं की कमी के कारण होती है | बुढ़ापे में मनुष्य की शारीरिक, मानसिक क्षमताओं में कमी के कारण वे आर्थिक रूप से अपने बच्चों पर

निर्भर हो जाते हैं | युवा तथा प्रौढ़ावस्था में प्राप्त पूंजी का उपयोग वे अपने बच्चों के पालन-पोषण, पढ़ाई -लिखाई एवं पारिवारिक जीवन की जिम्मेदारियों को पूरा करने में लगा देते हैं | मनुष्य अपना पूरा जीवन परिवार के हित में तथा अपने बच्चों के भविष्य निर्माण में लगा देता है | अपने जीवन की सारी जमा-पूंजी परिवार की जरूरतों पर लगा देता है | वृद्धावस्था में अपनी छोटी-मोटी जरूरतों के लिए भी बच्चों पर आश्रित रहना पड़ता है | कुछ बच्चे अपने वृद्ध माता-पिता को दो वक्त का खाना भी अच्छे से नहीं देते हैं | जीते जी हर तरह की तकलीफ देते हैं और मरने के बाद उनके श्राद्ध पर बड़ा भोज करते हैं | जिंदा रहते अपने बुजुर्गों को अन्न के लिए तरसाना और मरने के बाद कई तरह-तरह के दिखावे करना | ये सब माता-पिता के सम्मान के लिए नहीं बल्कि अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा के लिए मजबूरन करना पड़ता है | जिन वृद्धों के पास धन-संपत्ति है बच्चों में उसे हथियाने की होड़ लगी रहती है जिससे वृद्ध व्यक्ति वृद्धावस्था में अपने घर, अपनी संपत्ति के होते हुए भी दूसरों पर निर्भर रहता है | जीवन के इस अंतिम पड़ाव में वृद्ध का आत्मनिर्भर होना उनके अच्छे जीवन के लिये वरदान होता है | बुजुर्गों के लिए काम करने वाली संस्था एजवेल रिसर्च एंड एडवोकेसी सेंटर के संस्थापक हिमांशु रथ ने बुजुर्गों के कष्ट निवारण के मुद्दे पर कहा "कि प्रायः यह देखने को मिला है कि जो बुजुर्ग अच्छा धन अर्जित किए हुए हैं और उनके पास अच्छी संपत्ति भी है बुढ़ापे में उनकी देखभाल उनके परिवार के सदस्यों द्वारा ज्यादा अच्छी तरह से की जाती है |" (धनवडे 37) धनाढ्य बुजुर्गों की समस्या अन्य बुजुर्गों से कम होती है |

- **वृद्धावस्था में स्वास्थ्य सम्बन्धी निर्भरता**

वृद्धावस्था में स्वास्थ्य संबंधी निर्भरता एक सामान्य और स्वाभाविक प्रक्रिया है | उम्र बढ़ने के साथ व्यक्ति के जीवन में कई शारीरिक और मानसिक परिवर्तन होते है | ये परिवर्तन कई बार बुजुर्गों को दूसरों पर निर्भर बना देते हैं | वृद्धों का स्वास्थ्य उनकी समस्याओं और उपेक्षा का एक प्रमुख कारण है | वृद्धावस्था में मनुष्य के शरीर को अनेक प्रकार की बीमारियाँ घेर लेती हैं | वित्तीय अभाव के कारण स्वास्थ्य सेवाओं से उन्हें वंचित रहना पड़ता है | वृद्धों के स्वास्थ्य को लेकर परिवार के लोग ज्यादा चिंता नहीं करते है उनकी बीमारी को प्राकृतिक मान कर उपचार पर खर्च करना नहीं चाहते | वृद्धावस्था स्वास्थ्य दृष्टि से बीमारी की अवस्था तथा आर्थिक रूप से अनुत्पादकता की अवस्था होती है | जिसके कारण बुजुर्गों को हर छोटी-बड़ी बीमारियों के लिए भी दूसरों पर निर्भर रहना पड़ता है | बुजुर्गों की स्वास्थ्य निर्भरता को सहानुभूति और धैर्य के साथ संभालना आवश्यक है ताकि वे स्वस्थ और सुखी जीवन जी सकें |

- **वृद्धावस्था में संतान संबंधी समस्या**

वृद्धावस्था में संतान व्यक्ति के जीवन का सबसे बड़ा सहारा मानी जाती है | परन्तु बदलते सामाजिक परिवेश, आधुनिकीकरण और परिवार संरचना में आए परिवर्तन के कारण आज अनेक वृद्धजन संतान संबंधी समस्याओं का सामना कर रहे हैं | वृद्धावस्था में संतान संबंधी व्यक्तिगत, समस्याएं सामाजिक, आर्थिक और भावनात्मक दृष्टि से गहरी चिंता का कारण बन सकती हैं | इन समस्याओं का सामना करना अक्सर बुजुर्गों के मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डालता है | माता-पिता अपने बच्चों के जन्म से लेकर उसके पढ़ने-लिखने व रोजगार लगने तक का व्यय उठाने का अपना कर्तव्य निभाते है | माँ-बाप

को अकसर अपनी संतान के सुखी जीवन व अच्छे भविष्य को लेकर चिंता सताती रहती है | इसी प्रकार अपने बेटे-बेटियों के विवाह कर कार्य मुक्त होकर चिंता मुक्त जीवन की कल्पना करते हैं | परन्तु बच्चों की शादियों के पश्चात अनेक प्रकार की नई चिंताएँ सताने लगती हैं | बेटी का ससुराल में सामंजस्य न बना पाना, शादी के बाद बेटे के व्यवहार में बदलाव, बहू का अपेक्षाओं के अनुरूप खरा न उतरना, युवा पीढ़ी का बुजुर्गों के प्रति संवेदन हीन होना तथा संतान की बेरोजगारी के कारण भी वृद्धों को आर्थिक एवं मानसिक परेशानियों का सामना करना पड़ता है | आजकल कई बच्चे नौकरी या अन्य कारणों से विदेश या अलग शहर में बस जाते हैं जिससे वृद्धजन अकेलापन महसूस करते हैं | यदि जीवन के अंतिम पड़ाव में युवा बेटे की मृत्यु हो जाती है तो वृद्धावस्था में इस असहनीय दुख को सहना कष्टदायक लगता है | वृद्धावस्था में शारीरिक, मानसिक अक्षमताओं के साथ संतान की मृत्यु के कारण एकाकीपन वृद्धों के जीवन को अत्यंत कारुणिक बना देता है | मनुष्य अपनी पूरी जिन्दगी जमीन जायदाद एकत्र करने में लगा देता है | जिन बच्चों को सुखी रखने के लिए खून-पसीना तथा दिन-रात एक करके जमीन जायदाद इकट्ठा करता है वही संपत्ति बुढ़ापे में जान की दुश्मन बन जाती है | जिन बुजुर्गों ने अपने जीवन में कठिन परिश्रम से धन संपदा एकत्रित की है | वे इस संपदा को किसी अन्य हाथों सौंपना नहीं चाहते | दूसरी तरफ नई पीढ़ी मानती है उनके माता-पिता ने जो भी कमाया है वह सब उनके लिए ही तो किया है | इसी धन-संपदा के बंटवारे को लेकर आपसी रिश्तों में धीरे-धीरे दरार आने लगती है | धन-संपदा को हासिल करने के लिए नई पीढ़ी किसी भी हद तक जाती है जिससे बुजुर्गों को जमीन जायदाद के कारण अनेक मानसिक एवं आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है | वृद्धावस्था में संतान संबंधी समस्या आधुनिक समाज की गम्भीर सच्चाई है | यह केवल वृद्धों का नहीं, बल्कि पूरे समाज का प्रश्न है | यदि परिवार, समाज और सरकार मिलकर प्रयास करें तो वृद्धजन को संतान से मिलने वाला प्रेम, सम्मान और सहारा पुनः स्थापित किया जा सकता है |

- **बच्चों का पलायन या विदेश में बसना**

आज के वैश्वीकरण और आधुनिक शिक्षा-रोजगार के अवसरों ने युवाओं को गाँव से शहरों और देश से विदेश तक जाने के लिए प्रेरित किया है | संतान का यह पलायन वृद्धावस्था में माता-पिता के लिए गंभीर सामाजिक और भावनात्मक समस्या बन गया है | युवा पीढ़ी का पलायन या विदेश में बसना आज के समय में एक आम प्रवृत्ति बन चुकी है | नई पीढ़ी अधिक से अधिक धनार्जन के लिए बड़े-बड़े शहरों व विदेशों में पलायन कर रही है | नौकरी के साथ अपना घर-परिवार भी वहीं बसा रही है | बेहतर नौकरी, उच्च शिक्षा, या सुविधाजनक व आधुनिक जीवनशैली की तलाश में बच्चे जब बड़े शहर या विदेश में बस जाते हैं, तो माता-पिता के लिए यह कई चुनौतियां लेकर आती है | बच्चों की अनुपस्थिति के कारण माता-पिता अकेलापन महसूस करते हैं | उम्र बढ़ने के साथ यह डर बढ़ता है कि बच्चों की दूरी के कारण उनकी देखभाल कौन करेगा | बीमारी या स्वास्थ्य संबंधी समस्या के समय बच्चों की अनुपस्थिति कठिनाई बढ़ा देती है | भारतीय समाज, संस्कृति और परम्परा में माँ-बाप के चरणों व उनकी सेवा को ही स्वर्ग माना जाता था | आज भौतिकतावाद, नगरीकरण तथा समाज की उन्नति के साथ-साथ हमारी जीवन शैली और मूल्यों में परिवर्तन हो रहा है | आज इस आधुनिक समाज में वही पूज्य समझे जाने वाले माता-पिता बोझ समझे जाने लगे है | युवा पीढ़ी की इस नई सोच के कारण वृद्ध उपेक्षित व एकाकी जीवन जीने को मजबूर हो रहें हैं | बच्चों का पलायन या विदेश में बसना आधुनिक

समाज की वास्तविकता है | यह जहाँ एक ओर युवाओं की सफलता और प्रगति को दर्शाता है, वहीं दूसरी ओर माता-पिता के जीवन में अकेलेपन और असुरक्षा की समस्या भी पैदा करता है | यदि परिवार, समाज और सरकार मिलकर संतुलित प्रयास करें तो वृद्धजन को संतान की अनुपस्थिति में भी सम्मानजनक और सुखी जीवन प्रदान किया जा सकता है | आर्थिक दृष्टिकोण से वृद्ध विमर्श यह दर्शाता है कि वृद्धावस्था की सुख-सुविधा और सम्मान मुख्यतः आर्थिक साधनों पर आधारित हो गया है | आर्थिक स्वावलंबन से वृद्ध आत्मविश्वास और गरिमा के साथ जीवन व्यतीत कर सकते हैं, जबकि निर्भरता उन्हें उपेक्षा और असुरक्षा की ओर धकेलती है | इसलिए आवश्यक है कि समाज और सरकार वृद्धों को आर्थिक सुरक्षा और अवसर प्रदान करें |

1.3.6 वृद्ध विमर्श: मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण

वृद्धावस्था जीवन का ऐसा चरण है जब शारीरिक, पारिवारिक, सामाजिक और आर्थिक समस्याओं के साथ-साथ मानसिक और भावनात्मक समस्याएँ भी गहराई से प्रभावित करती हैं | इस अवस्था में व्यक्ति के व्यवहार, सोच और सामाजिक संबंधों पर मनोवैज्ञानिक कारक निर्णायक प्रभाव डालते हैं | अतः वृद्ध विमर्श को मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से समझना अत्यंत आवश्यक है | मनोवैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाए तो वृद्धावस्था की प्रक्रिया का अध्ययन केन्द्रीय स्नायु संस्थान, संवेदना एवं प्रत्यक्षीकरण की क्षमताओं एवं योग्यताओं में होने वाले परिवर्तन के सन्दर्भ में किया जाता है | "1949 में 'शिकागो कमेटी' द्वारा "ह्यूमन डेवलपमेंट ऑफ द सोशल रिसर्च काउंसलिंग इन यूनाइटेड स्टैट्स ऑफ अमेरिका" में वृद्धावस्था पर प्रथम बार गंभीरता पूर्वक अध्ययन के दौरान मनोवैज्ञानिक अध्ययन को आधार बनाते हुए कार्य आरम्भ हुआ | इसी काउंसलिंग में पोलाक (1948) द्वारा एक रिसर्च प्लानिंग रिपोर्ट प्रस्तुत की गई | इस रिपोर्ट ने 1960 में अच्छी तरह से वृद्धावस्था के मनोवैज्ञानिक अध्ययन पर शोध शुरू किया | (सिंह 10) इस अध्ययन के आधार पर माना गया कि मनुष्य जैसे-जैसे बूढ़ा होता है वैसे उसके भीतर मनोवैज्ञानिक बदलाव होने लगते है | शरीर के बूढ़े होने के साथ मन भी बूढ़ा होता है | मानसिक स्थिति निराशा पूर्ण हो जाती है | याददाश्त कम हो जाती है, अच्छे-बुरे व्यवहार में अंतर न कर पाना, उत्साह और रुचि का कम होना | पुरानी स्मृतियों में खो जाना, अकेलापन महसूस होना, परिवार में अपने पन की आकांक्षा रखना इत्यादि मानसिक अवसादों का होना | वाल्श (1975) ने अपने अध्ययन में यह पाया कि बुजुर्गों की स्मृतियां अपेक्षाकृत अन्य के क्षीण होती है | यू. एन. ओ. के अधीन अन्य देशों ने भी इस विषय पर कार्यक्रम बनाना एवं काम करना शुरू कर दिया | परिणामस्वरूप आज वृद्धावस्था एक विशेष विषय के रूप में उभर रहा | मनोवैज्ञानिकों के लिए यह एक ज्वलंत शोध का विषय है | मनोवैज्ञानिक वृद्धों की मानसिक समस्याओं के समाधान हेतु प्रयासरत है कि वृद्ध मनुष्य किस तरह मनोवैज्ञानिक रूप से अपनी समस्या का समाधान करें | वृद्धावस्था में शारीरिक और मानसिक परिवर्तन होने शुरू हो जाते है | मनोवैज्ञानिक मानते है कि व्यक्ति वृद्धावस्था में मानसिक अवसादों से बच सकते है | अवसाद एक प्रकार की बीमारी है, जिससे निकलने के लिए व्यक्ति को पारिवारिक स्नेह की जरूरत होती हैं | व्यक्ति अपने विचारों, दिनचर्या, खान-पान, रहन-सहन के स्तर में सुधार करके भी मानसिक समस्याओं से बच सकता है | वृद्धों के लिए मनोवैज्ञानिक विचारधारा का संतुलित होना अति आवश्यक हैं |

- **एकाकीपन महसूस करना :**

वृद्धावस्था जीवन का संध्या काल है, जहाँ व्यक्ति को सहारे और भावनात्मक जुड़ाव की सबसे अधिक आवश्यकता होती है | एकाकीपन वृद्धावस्था में एक सामान्य और गंभीर समस्या है | यह केवल शारीरिक अकेलेपन तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें भावनात्मक अलगाव और सामाजिक जुड़ाव की कमी भी शामिल होती है | जिन्दगी के इस अंतिम पड़ाव में वृद्धों को प्रेम, सम्मान, सहानुभूति और सहारे की ज्यादा जरूरत रहती है | परंतु बदलते सामाजिक परिवेश, एकल परिवार की प्रवृत्ति और पीढ़ियों के बीच दूरी ने वृद्धजनों को गहरे एकाकीपन का अनुभव कराया है | यह समस्या शारीरिक और आर्थिक कठिनाइयों से कहीं अधिक मानसिक एवं भावनात्मक है | सेवानिवृत्ति के बाद अधिकांश वृद्ध के मन में निराशा भर जाती है | बेटे-बेटियों की शादी हो जाती है, परिवार के अन्य सदस्य अपने कामकाज व घर गृहस्थी में खुश रहते हैं | वृद्ध स्वयं को परिवार तथा समाज से तिरस्कृत महसूस करने लगते हैं | इस अवस्था में अगर जीवनसाथी की मृत्यु हो जाए तो स्थिति और भी ज्यादा भयावह हो जाती है | जीवनसाथी, दोस्तों और सहकर्मियों की मृत्यु से सामाजिक दायरा सीमित हो जाता है, ऐसी स्थिति में उन्हें अकेलापन चुभने लगता है तथा उनके मन में जीने की लालसा, ख़ुशी, उल्लास, उत्साह सभी कुछ समाप्त हो जाता है | इन सब बातों का प्रभाव उनके स्वास्थ्य के ऊपर पड़ता है | वृद्ध विमर्श में एकाकीपन सबसे बड़ी मानसिक चुनौती है | यदि परिवार, समाज और सरकार मिलकर संवेदनशीलता और सहयोग का वातावरण प्रदान करें, तो वृद्धजन इस एकाकीपन को दूर कर सम्मानजनक और संतुलित जीवन जी सकते हैं |

- **भय :**

वृद्धावस्था जीवन का वह पड़ाव है जहाँ शरीर अशक्त, आय सीमित और सामाजिक स्थिति कमजोर हो जाती है | इस अवस्था में वृद्धजन विभिन्न प्रकार के भयों से घिर जाते हैं। ये भय केवल व्यक्तिगत न होकर सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक स्तर पर भी गहरे प्रभाव छोड़ते हैं | वृद्धावस्था में भय एक सामान्य अनुभव है, जिसमें व्यक्ति विभिन्न शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक कारणों से असुरक्षा महसूस करता है | वृद्धावस्था का भय काफी व्याकुल कर देने वाला होता है | इसके दो विशेष कारण ये हैं कि बुढ़ापे में कार्य क्षमता में कमी के कारण प्रायः आमदनी घट जाती है दूसरे अनुचित बातें मन-मस्तिष्क में जड़ें जमा लेती हैं | वृद्धावस्था में बुजुर्गों के मन-मस्तिष्क में कई तरह के भय घर कर जाते है | जिनमें उनको बीमार होने का भय, स्वयं की देखभाल न कर पाने का भय, वित्तीय रूप से दूसरों पर निर्भर होने का डर, संपत्ति को खोने का डर, रात के अँधेरे में कहीं जाने का डर, सीढ़ियाँ चढ़ने-उतरने का डर, कुतो का डर, बारिश में भीगने और फिसलने का डर, विकलांग बन जाने का डर, मृत्यु और उससे जुड़े अज्ञात अनुभवों का डर तथा परलोक का भय इत्यादि | बूढ़े माता-पिता अपने बेटे-बहुओं से भी डर के रहते हैं | इस आधुनिक युग में बच्चे विदेश या अन्य शहरों में न बस जाएं और उनकी सेवा- सुश्रूषा करेंगे कि नहीं, परिवार द्वारा प्यार और सम्मान न मिलने का डर या उनसे अलग न हो जाए या उन्हें वृद्धाश्रम न भेज दें | इस प्रकार छोटी-छोटी बातों से उनके मन में भय उत्पन्न हो जाता है | शेक्सपियर के प्रसिद्ध पात्र हैमलेट ने कहा "दुःख कभी अकेले नहीं आता, दुखों की तो पूरी सेना हल्ला बोलती है | बुजुर्गों पर यह कथन एकदम सटीक उतरता है | वृद्धावस्था में भय स्वाभाविक है, परंतु यदि परिवार, समाज और सरकार मिलकर सहयोग दें तो यह भय कम किया जा सकता है | इससे वृद्धजन सुरक्षित, सम्मानजनक और निश्चिंत जीवन जी सकते हैं |

- **वृद्धावस्था में लगाव :**

वृद्धावस्था में लगाव मानव जीवन का स्वाभाविक हिस्सा है | इस अवस्था में लगाव की भावना और अधिक प्रबल हो जाती है | वृद्धजन परिवार, संतान, पोते-पोतियों, धार्मिक आस्था तथा अपने जीवन के पुराने अनुभवों से गहरा भावनात्मक संबंध बनाए रखते हैं | इस अवस्था में व्यक्ति भौतिक संपत्तियों, पारिवारिक संबंधों और अपने जीवन की उपलब्धियों के प्रति अत्यधिक जुड़ाव महसूस करता है | इस अवस्था में बूढ़े-माँ-बाप की परिवार, संपत्ति, पद-प्रतिष्ठा और भौतिक वस्तुओं के प्रति अत्यधिक लगाव बढ़ जाता है | अपने बच्चों से ज्यादा पोते-पोतियों, नाती-नातिन के प्रति उनका लाड़-प्यार और लगाव ज्यादा होती है | जीवन के अंतिम क्षण तक वे चाहते हैं, परिवार के सभी सदस्य सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करें | इसके साथ बूढ़ों को अपनी धन-संपत्ति तथा घर के प्रति लगाव रहता है | बूढ़े लोग किसी के घर पर ज्यादा दिन नहीं रुकते, अपने घर में रहना ज्यादा अच्छा लगता है | इसके साथ परिवार और समाज में अपनी भूमिका बनाए रखने की चाह भी वृद्धजनों को अत्यधिक रहती हैं | इस तरह देख सकते है वृद्ध व्यक्तियों को अपने घर-परिवार, बच्चों और अन्य भौतिक वस्तुओं के प्रति लगाव अधिक होता है | वृद्धावस्था में इस लगाव से मुक्त होना आसान नहीं है, लेकिन यह जीवन के अंतिम चरण में संतोष और शांति के लिए आवश्यक है | वृद्धावस्था में लगाव स्वाभाविक है, क्योंकि यह जीवन की संध्या बेला में मानसिक संबल प्रदान करता है | यदि यह संतुलित हो, तो वृद्धजन के जीवन को सुखमय और अर्थपूर्ण बना सकता है |

- **चिड़चिड़ापन और जिद्दीपन :**

वृद्धावस्था वह अवस्था है जब शरीर कमजोर हो जाता है, मानसिक सहनशीलता घटने लगती है और व्यक्ति दूसरों पर निर्भर हो जाता है। ऐसे में कई बार वृद्धजनों के स्वभाव में चिड़चिड़ापन और जिद्दी पन देखने को मिलता है | वृद्धावस्था में चिड़चिड़ापन और जिद्दी पन सामान्य मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक स्थितियां हैं, जो शारीरिक, मानसिक और सामाजिक कारणों से उत्पन्न होती हैं | उम्र के इस पड़ाव में वृद्धजनों में स्वास्थ्य समस्याएं, मानसिक अवसाद तथा पारिवारिक व सामाजिक असंतोष चिड़चिड़ापन और जिद्दी पन को जन्म देता है | वृद्धावस्था और बाल्यावस्था में ज्यादा अंतर नहीं होता है | क्योंकि वृद्धों की ज्यादातर आदतें बच्चों जैसी हो जाती है | बच्चों और बूढ़ों को संभालना एक समान है | वृद्धावस्था में बूढ़े अपनी इच्छाओं और अपनी बातों को मनवाने की जिद करने लगते है | बीमारी के कारण डॉक्टर ने अगर मीठा और तला हुआ खाना खाने को मना किया हो तो भी वे जिद पर अड़े रहकर चोरी छिपे खा लेते है | हर छोटी-बड़ी बातों पर वे नाराज हो जाते है | अगर नई पीढ़ी उनकी बात अनसुनी कर दें, या उनसे बिना पूछे कोई काम कर दें तो वे गुस्सा या रूठ जाते हैं | उनको अपने मान-सम्मान, अधिकार और अहमियत का हनन होता दिखाई देता है | उनको आज की इस नई पीढ़ी का बाहर घूमना फिरना, खाना, पहनावा आदि पसंद नहीं आता तथा उनके व्यवहार से चिड़चिड़ाने लगते हैं | परिणामतः दो पीढ़ियों के बीच वैचारिक मतभेद बढ़ जाता है | यह स्थिति बुजुर्गों और उनके परिवारों के लिए चुनौतीपूर्ण हो सकती हैं | वृद्धावस्था में चिड़चिड़ापन और जिद्दीपन केवल स्वभावगत दोष नहीं है, बल्कि परिस्थितियों से उपजा

हुआ व्यवहार है | यदि परिवार सहानुभूति, सहयोग और सम्मान दे तो वृद्धजन का जीवन अधिक शांत, संतुलित और सम्मानजनक बनाया जा सकता है |

- **मृत्यु बोध**

वृद्धावस्था जीवन का अंतिम पड़ाव है, जहाँ व्यक्ति ज्ञान, अनुभव और समझ से समृद्ध होता है | लेकिन साथ ही यह वह समय भी होता है जब मृत्यु का बोध गहराई से अनुभव किया जाने लगता है | यह मृत्यु का भय नहीं, बल्कि उसके सन्निकट होने का बोध होता है | जिसमें व्यक्ति का मनोविज्ञान, दृष्टिकोण, व्यवहार और सोच प्रभावित होती है | वृद्धावस्था में मृत्यु बोध एक स्वाभाविक और गहन अनुभव है, जिसमें व्यक्ति अपनी नश्वरता, जीवन के अर्थ और मृत्यु के अनिवार्य सत्य का सामना करता है | मृत्यु जीवन का कटु सत्य है जिसे कोई भी मनुष्य झुठला नहीं सकता | प्रत्येक मनुष्य या जीव जिसने इस संसार में जन्म लिया है उसकी मृत्यु निश्चित है | इस सच्चाई से मुंह मोड़ा नहीं जा सकता जैसे-जैसे उम्र बढ़ती जाती है, यह भावना और अधिक प्रबल हो जाती है | जबकि यह भी सत्य है जीवन और मौत पर इंसान का कोई अधिकार नहीं है | मृत्यु का भय प्रत्येक व्यक्ति को जीवन भर लगा रहता है | ऐसा नहीं कि यह भय सिर्फ वृद्धों को होता है यह सभी के मन में रहता है | किन्तु वृद्धजन उम्र के अंतिम अवस्था पर आकर इस विषय के बारे अधिक सोचते रहते है | बुजुर्गों में लम्बे समय तक चलने वाले शारीरिक रोग मानसिक आघात पहुँचाने लगते है | जिससे मृत्यु के निकट आने का एहसास वृद्धों में भय और तनाव पैदा करता है | अकसर जब भी वृद्ध व्यक्ति अपने जीवनसाथी, अपने पड़ोसी, अपने मित्र, अपने प्रियजनों या समवयस्क लोगों की मृत्यु का समाचार सुनता है या देखता है तो उसे स्वयं की संभावित मौत का डर सताने लगता है | मृत्यु बोध वृद्धावस्था का स्वाभाविक अंग है | यदि परिवार, समाज और आध्यात्मिक अभ्यास के माध्यम से इसे सकारात्मक दृष्टिकोण से लिया जाए, तो वृद्धजन जीवन के अंतिम चरण को शांति, संतोष और सम्मान के साथ जी सकते हैं | इस डर का कोई निश्चित समाधान नहीं है | परन्तु इस सच्चाई को स्वीकार कर जितने दिन की जिन्दगी है उसे प्रसन्नतापूर्वक जीना ही मकसद होना चाहिए |

वृद्ध विमर्श का मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण यह दर्शाता है कि वृद्धावस्था केवल शारीरिक या आर्थिक चुनौती नहीं है, बल्कि सबसे बड़ी चुनौती मानसिक संतुलन बनाए रखना है | यदि परिवार, समाज और सरकार संवेदनशील होकर सहयोग करें, तो वृद्धजन जीवन के इस अंतिम पड़ाव को भी सकारात्मकता और आत्मसम्मान के साथ जी सकते हैं |

- **निष्कर्ष :**

इस इकाई में जिन मुख्य बिन्दुओं पर चर्चा की गई है उनका उल्लेख संक्षेप में इस प्रकार से हैं - वृद्ध, विमर्श, वृद्ध विमर्श, वृद्ध विमर्श के विविध आयाम, वृद्धों के शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, पारिवारिक एवं सामाजिक आदि पहलुओं पर बात की गयी वृद्धावस्था जीवन का संध्याकाल है | जीवन के इस अंतिम पड़ाव में व्यक्ति जीवन के कटु-मधुर अनुभवों से भरा होता है | वृद्धों को अनुपयोगी और अनावश्यक समझकर समाज के हाशिए पर धकेलने की इस प्रवृत्ति के कारण उनकी समस्याओं और पुनर्वास पर

बहुत कम ध्यान दिया गया है | वृद्ध समुदाय दुनिया का एक बहुत बड़ा परन्तु उपेक्षित अथवा हाशिया कृत समुदाय है | इसलिए वृद्धावस्था को सोच विचार के केंद्र स्थापित करने वाले विमर्श को वृद्धावस्था विमर्श का नाम दिया जा सकता है | वृद्ध विमर्श वृद्धों को समाज में पुनर्वासित देखना चाहता है | बुढ़ापा जीवन का अनिवार्य क्रम है एक न एक दिन सभी को वृद्ध होना है | लेकिन वृद्ध माता-पिता का हमारे जीवन, परिवार और समाज में बहुत महत्व है | आज बदलते हुए भारतीय परिवार एवं समाज में जिस तरह वृद्ध संघर्ष करते हुए दिखाई दे रहे है, वह दृश्य भयावह है | वृद्धों की वर्तमान स्थिति से अनुमान लगाया जा सकता है कि आगामी कुछ वर्षों में यह समस्या भीषण रूप धारण कर लेगी | इक्कीसवीं शताब्दी के विश्व के समक्ष वृद्धों की दशा और मनोदशा से संबंधित बड़ी गंभीर समस्याएं है | भूमंडलीकृत विश्व द्वारा वृद्धावस्था विषयक विकट समस्याएँ अनुभव की जा रही है | यह समस्या साहित्य के साथ-साथ समाज के संदर्भ में भी अत्यंत प्रासंगिक है | अंततः परिवार, समाज एवं सरकार को वृद्धों के प्रति अपने दायित्वों को महसूस करना होगा | अशेष व निस्वार्थ स्नेह लुटाने वाले माता-पिता ने अपने बच्चों के शैशव-काल में कभी यह नहीं सोचा होगा उनके लिए क्या करें, क्या न करें | आज की नई पीढ़ी को जीवन को विदा कहने जा रही पीढ़ी के प्रति भी वैसा विचार रखना चाहिए जैसा उनके बचपन में उनके जन्मदाता रखते थे | अंत: वृद्धों की हर अभिलाषा को पूरा करने व उनके जीवन को सहज बनाने का प्रयास करना चाहिए | यदि आज हम उनका सम्मान करेंगे, तभी हम आने वाली पीढ़ी से सम्मान प्राप्त करने अधिकारी होंगे |

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं की वृद्धावस्था केवल शारीरिक कमजोरी का चरण नहीं है, बल्कि यह पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और मानसिक दृष्टि से भी चुनौतीपूर्ण है | यदि परिवार, समाज और सरकार मिलकर सहयोग करें और वृद्धजन को सम्मान, सुरक्षा और भावनात्मक संबल दें, तो वे जीवन के अंतिम पड़ाव को सम्मानजनक, सुखद और सकारात्मक दृष्टिकोण के साथ जी सकते हैं।

सन्दर्भ सूची :

सहायक ग्रन्थ :

अहिवले, अनिल अर्जुन. *हिंदी साहित्य में दस्तक देता वृद्ध विमर्श*. प्रथम संस्करण, पूजा पब्लिकेशन, 2022.

अग्रवाल, रोहणी. *साहित्य का स्त्री स्वर*. साहित्य भंडार, 2015.

अग्रवाल, रशिम. *वृद्धावस्था (सामाजिक अध्ययन)*. नजीबाबाद, प्रथम संस्करण, ओपन डोर, 2022.

कामने, भावना. और देव, ममता, आर. *वृद्ध विमर्श परंपरा और आधुनिकता*. कानपूर, प्रथम संस्करण, संकल्प प्रकाशन, 2022.

खान, एम. फीरोज. प्रेमचंद वृद्ध जीवन की कहानियाँ. कानपुर, प्रथम संस्करण, विकास प्रकाशन, 2021.

गोसाईं, वंदना. *हिंदी साहित्य में वृद्ध विमर्श : दृष्टि और विचार*. कानपूर, वान्या पब्लिकेशन, 2022.

चव्हान, अर्जुन. *विमर्श के विविध आयाम*. वाणी प्रकाशन, 2008.

चौधरी, डी. पाल. *एजिंग एंड द एज्ड*. 1992.

तिवारी, पूजा. और सबा, जिनित. *उत्तरशती के साहित्यक विमर्श*. नोशन प्रेस, 2020.

तरुणसागरजी, *कड़वे प्रवचन*. नई दिल्ली, डायमंड पॉकेट बुक्स, 2014.

तुलसीदास, *श्रीरामचरितमानस*. प्रभात प्रकाशन, 2023.

देवी, मोनिका. और सपना. आर. *समकालीन उपन्यासों में विविध विमर्श*. प्रथम संस्करण, विद्या प्रकाशन, 2017.

द्विवेदी, गिरिजा प्रसाद. *मनुस्मृति*. (हिंदी अनुवाद) नवल किशोर प्रेस, 1917

धनवडे, सुरेश. *वृद्धजनों का समाजशास्त्र*. प्रथम संस्करण, वर्ल्ड बुक पब्लिकेशंस, 2022.

निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी. *निराला संचयिता*. वाणी प्रकाशन, 2010.

प्रसाद, चंद्रमौलेश्वर. *वृद्धावस्था विमर्श*. बिजनौर, प्रथम संस्करण, परिलेख प्रकाशन, 2016.

भुमरे, पी.एम. *साहित्य में चित्रित वृद्धावस्था : जीवन और त्रासदी*. कानपुर, वान्या पब्लिकेशंस, 2023.

मेहरा, दिलीप. *हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श*. प्रथम संस्करण, उत्कर्ष पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, 2021.

लाल, विमला. *वृद्धावस्था का सच*. नई दिल्ली, कल्याणी शिक्षा परिषद्, 2019.

शर्मा, वीरेंद्र प्रकाश. भारतीय समाज – मुद्दे और समस्याएँ. 2004.

शुक्ला, अंजू उपेक्षा की शिकार वृद्ध महिलाएँ. कानपुर, संस्करण प्रथम, संकल्प प्रकाशन, 2019.

शर्मा, हरिहरानन्द. *हिंदी कहानी में वृद्ध (संवेदना और संघर्ष)*. राजस्थान, प्रथम संस्करण, अरिहंत प्रकाशन, 2014.

सिंह, शिवचंद्र. *साहित्येतिहास में वृद्ध विमर्श*. ग्रेटर नोएडा, प्रथम संस्करण, दिशा इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, 2017.

सिंह, कुमुद. *वृद्ध महिलाओं का समाजशास्त्र*. उत्कर्ष पब्लिकेशन एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, कानपूर,

सिंह, वृंदा. *वृद्धावस्था जीवन की सांध्यबेला*. गीतांजली प्रकाशन, 2009.

सिन्हा,जे.एन.पी. *प्रॉब्लम ऑफ़ दी एजेड*. क्लासिकल पब्लिकेशन कम्पनी, 1989.

सूर्यवंशी, ज्योति. वृद्ध विमर्श परम्परा और आधुनिकता का द्वंद्व. कानपुर, प्रथम संस्करण, संकल्प प्रकाशन, 2023.

राजौरिया, शिवकुमार. *वृद्धावस्था विमर्श और हिंदी कहानी*. दिल्ली, अद्वैत प्रकाशन. 2021.

रणसुभे, सूर्यनारायण. *विमर्श की अवधारणा स्वरूप और संदर्भ*. नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, परिदृश्य प्रकाशन, मुंबई, 2021.

वर्मा, धीरेन्द्र. *सूरसागर सार*. लोकभारती प्रकाशन 2019.

पत्रिका आलेख :

बाली, पी अरुण. *भारत में वृद्धों की सामाजिक समस्याएँ*. वागर्थ, 1999.

यादव, राजेन्द्र. *हंस*. 2004.

आधार ग्रन्थ :

कालिया, ममता. दौड़. नयी दिल्ली, छठा संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2021.

सोबती, कृष्णा. *समय सरगम*. नई दिल्ली, चौथा संस्करण, राजकमल प्रकाशन, 2019.

शब्दकोश :

आपटे, वामन शिवराम. *संस्कृत-हिंदी कोश*. पृष्ठ 946.

कुमार, सुरेश और साही, रमानाथ. *अंग्रेजी-अंग्रेजी हिंदी शब्दकोश*. दूसरा संस्करण, ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2014.

तिवारी, भोलानाथ. *हिंदी पर्यायवाची कोश.* प्रभात प्रकाशन, 1999.

रिजवी, आबिद. *बृहत् हिंदी शब्दकोश.* पृष्ठ 922.

बाहरी, हरदेव. *हिंदी-अंग्रेजी शब्दकोश.* लोकभारती प्रकाशन, पृष्ठ 593.

..., लोकभारती राजभाषा शब्दकोष. लोकभारती प्रकाशन, पृष्ठ 466.

वर्मा, रामचंद्र. *मानक हिंदी कोश.* पृष्ठ 77.

वर्मा, श्याम बहादुर और वर्मा, धर्मेन्द्र. *बृहत हिंदी शब्दकोश.* दिल्ली, प्रथम संस्करण, प्रभात प्रकाशन, 2010.

वसु, नगेन्द्रनाथ. *हिंदी विश्वकोश.* (खंड 21) पृष्ठ 478.

श्रीवास्तव, मुकंदीलाल. *ज्ञान शब्दकोश.* पृष्ठ 741.

Oxford Advanced learner Dictionary.

वेब पेज :

शब्द कोश, https://www.shabdkosh.com/hi/dictionary/hindi-

https://www.nia.nih.gov/health/sleep/good-nights-sleep

https://pubmed.ncbi.nlm.nih.gov/28159095/

https://www.britannica.com/science/old-age

दूसरा अध्याय

हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श

क्र.स.	विवरण	पृ.स.
2.	**द्वितीय अध्याय- हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श**	74-134
2.1	**21वीं सदी के पूर्व वृद्धों पर केंद्रित हिंदी के प्रमुख उपन्यास** 2.1.1 ‘निर्मला’(1927) प्रेमचंद 2.1.2 ‘गबन’ (1931) प्रेमचंद 2.1.3 ‘नई पौध’ (1993) नागार्जुन 2.1.4 ‘अपने-अपने अजनबी’ (1961) अज्ञेय 2.1.5 ‘उस चिड़िया का नाम’ (1989) पंकज बिष्ट 2.1.6 ‘ऐ लड़की’ (1991) कृष्णा सोबती 2.1.7 ‘विषय पुरुष’ (1997) मस्तराम कपूर 2.1.8 ‘निन्यानवे’ (1998) रवीन्द्र वर्मा 2.1.9 ‘बारहमासी’ (1999) ज्ञान चतुर्वेदी	
2.2	**21वीं सदी में वृद्धों पर केंद्रित हिंदी के प्रमुख उपन्यासों का संक्षिप्त परिचय** 2.2.1 ‘दौड़’ (2000) ममता कालिया 2.2.2 ‘समय सरगम’ (2000) कृष्णा सोबती 2.2.3 ‘अंतिम अरण्य’ (2000) निर्मल वर्मा 2.2.4 ‘पत्थर ऊपर पानी’ (2000) रवीन्द्र वर्मा 2.2.5 ‘गिलिगडु’ (2002) चित्रा मुद्गल 2.2.6 ‘फिर लौटते हुए’ (2003) राकेश वत्स 2.2.7 ‘रेहन पर रग्घू’ (2008) काशीनाथ सिंह 2.2.8 ‘आखिरी मंजिल’ (2008) रवीन्द्र वर्मा 2.2.9 ‘चार दरवेश’ (2011) हृदयेश	

	2.2.10 ‘दाखिल ख़ारिज’ (2014) रामधारी सिंह दिवाकर 2.2.11 ‘रिश्तों की आंच’ (2016) सूरज सिंह नेगी 2.2.12 ‘शाम की झिलमिल’ (2017) गोविन्द मिश्र 2.2.13 ‘दाई’ (2017) टेकचंद 2.2.14 ‘वसीयत’ (2018) सूरज सिंह नेगी 2.2.15 ‘नियति चक्र’ (2019) सूरज सिंह नेगी	
2.3	**21वीं सदी के पूर्व वृद्धों पर केंद्रित हिंदी की प्रमुख कहानियाँ** 2.3.1 ‘बूढ़ी काकी’ (1921) प्रेमचंद 2.3.2 ‘सुभागी’ (1923) प्रेमचंद 2.3.3 ‘बेटों वाली विधवा’ (1932) प्रेमचंद 2.3.4 ‘विध्वंस’ (1932) प्रेमचंद 2.3.5 ‘चीफ की दावत’ (1956) भीष्म सहनी 2.3.6 ‘वापसी’ (1960) उषा प्रियंवदा 2.3.7 ‘पिता’ (1965) ज्ञानरंजन 2.3.8 ‘बीच बहस’ (1973) निर्मल वर्मा 2.3.9 ‘शटल’ (1982) नरेंद्र कोहली 2.3.10 ‘छप्पन तोले का करधन’ (1989) उदय प्रकाश 2.3.11 ‘अपना रास्ता लो बाबा’ (1998) काशीनाथ सिंह	
2.4	**21वीं सदी में वृद्धों पर केंद्रित हिंदी की प्रमुख कहानियों का संक्षिप्त परिचय** 2.4.1 ‘बिल्लियाँ बतियाती है’ (2001) (एस.आर.हरनोट 2.4.2 ‘बीस फुट के बापूजी’ (2001) एस.आर.हरनोट 2.4.3 ‘कागभाखा’ (2001) एस.आर.हरनोट 2.3.4 ‘गेंद’ (2002) चित्रा मुद्गल 2.3.5 ‘दादी और रिमोट’ (2005) सूर्यबाला 2.3.6 ‘साँझवाती’ (2015) सूर्यबाला 2.4.7 ‘झुर्रियों की पीड़ा’ (2018) कृष्णा अग्निहोत्री 2.4.8 ‘अपना-अपना अस्तित्व’ (2018) कृष्णा अग्निहोत्री 2.4.9 ‘मैं जिंदा हूँ’ (2018) कृष्णा अग्निहोत्री	

	2.4.10 'तोर जवानी सलामत रहे' (2018) कृष्णा अग्निहोत्री 2.4.11 'उसका इतिहास' (2018) कृष्णा अग्निहोत्री 2.4.12 'यह क्या जगह है दोस्तों' (2018) कृष्णा अग्निहोत्री 2.4.13 'बदमिजाज' (2018) कृष्णा अग्निहोत्री 2.4.14 'लोहे का बैल' (2019) एस.आर.हरनोट	
•	**निष्कर्ष**	
•	**सन्दर्भ सूची**	

दूसरा अध्याय

हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श

2.1 21वीं सदी के पूर्व वृद्धों पर केंद्रित हिंदी के प्रमुख उपन्यास –

कथा साहित्य में उपन्यास व कहानी दोनों शामिल है | 'उपन्यास' हिंदी गद्य साहित्य की नवीन विधा है | 'उपन्यास' शब्द (उप = समीप तथा न्यास = थाती, रखी हुई वस्तु) के संयोग से निर्मित हुआ है जिसका अर्थ मनुष्य के निकट रखी हुई वस्तु | उपन्यास की संज्ञा ऐसी गद्य रचना को दी जा सकती है, जिसे पढ़कर अपने जीवन की वास्तविक यथार्थवादी प्रक्रियाओं का आभास हो और निकटता की अभिव्यक्ति हो | साधारण शब्दों में कहें तो मनुष्य के निकट रखी हुई वस्तु या कृति जिसको पढ़कर ऐसा लगे कि इसमें हमारे ही जीवन का प्रतिबिम्ब है, इसमें हमारी ही कथा हमारी ही भाषा में कही गई है | मुंशी प्रेमचंद उपन्यास के बारे में लिखते है "मैं उपन्यास को मानव चरित्र का चित्र समझता हूँ | मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्य को खोलना उपन्यास का मूल तत्व है |" (प्रेमचंद 38) आज जिस अर्थ में उपन्यास शब्द का प्रयोग किया जाता है वह अंग्रेजी का 'नॉवेल' शब्द है जिसका अर्थ है 'नवीन' अर्थात एक दीर्घ कथात्मक गद्य-रचना | वह वृहत आकार गद्य आख्यान या वृतांत जिसके अंतर्गत वास्तविक जीवन के प्रतिनिधि का दावा करने वाले पात्रों और कार्यों का चित्रण किया जाता है"| (श्रीवास्तव 260) आधुनिक युग में उपन्यास का प्रयोग साहित्य के एक ऐसे स्वरूप विशेष के लिए होता है जिसमें एक दीर्घ कथा का वर्णन गद्य में किया जाता है | नलिन विलोचन शर्मा के अनुसार, "मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा ही उपन्यास है |" (शर्मा 176) 'उपन्यास' शब्द से सामान्यतः ऐसी गद्य व लघु रचना का बोध होता है, जिसमें काल्पनिक पात्रों के माध्यम से कथा प्रस्तुत होती है | उपन्यास को मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा माना जाता है, साहित्य के क्षेत्र में उपन्यास ही एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा मनुष्य की समस्त भावनाओं एवं चिंताओं को अभिव्यक्त किया जा सकता है | इसमें पात्रों के कार्य, व्यवहार, संघर्ष तथा उनके परस्पर वार्तालाप का चित्रण इस रूप में होता है कि ये सजीव तथा जीवंत प्रतीत होने लगते हैं | पाश्चात्य विद्वान क्रास- "नॉवेल से अभिप्राय उस गद्यमय कथा का है जिसमें वास्तविक जीवन का यथार्थ चित्रण होता है |" (शर्मा 176) पाश्चात्य विद्वान क्रास के अनुसार उपन्यास एक विस्तृत गद्यात्मक रचना है, जिसमें मानव-जीवन या उसके चरित्र का विश्वसनीय चित्र है | वस्तुतः उपन्यास जीवन के यथार्थ की अभिव्यक्ति करने वाली गद्यमय विधा है | जिसका उद्देश्य आनंद प्रदान करना, मनुष्यों को नैतिक आदर्शों की शिक्षा देना तथा आदर्श समाज की कल्पना करना है |

वृद्ध विमर्श को आधार बनाते हुए हिंदी साहित्य में कई उपन्यास लिखे गए हैं | वृद्ध विमर्श से जुड़े उपन्यासों का मुख्य विषय वृद्धों के प्रति पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक दृष्टिकोण से न्याय करना है | प्रत्येक उपन्यास की अपनी-अपनी विशेषता होती

है | 21वीं सदी से पूर्व वृद्ध विमर्श ने बुजुर्गों को एक गंभीर सामाजिक इकाई के रूप में देखा | हालांकि यह विमर्श मुख्यधारा के स्त्री विमर्श या दलित विमर्श जितना प्रखर नहीं था | फिर भी 21वीं सदी के पूर्व कई लेखकों ने वृद्धों की समस्याओं, उनकी चुनौतियों और उनके मूल्यवत्ता को गहराई से चित्रित किया है | 21वीं सदी के पूर्व वृद्ध विमर्श केंद्रित उपन्यासों की चर्चा करें तो प्रेमचंद का '*निर्मला*' (1927), गबन (1930) नागार्जुन का '*नई पौध*' (1953) अज्ञेय का '*अपने-अपने अजनबी*' (1961), पंकज बिष्ट का '*उस चिड़िया का नाम*' (1989), कृष्णा सोबती का '*ऐ लड़की*' (1991), मस्तराम कपूर का '*विषय पुरुष*' (1997), रवीन्द्र वर्मा का '*निन्यानवे*' (1998) ज्ञान चतुर्वेदी का '*बारहमासी*' (1999), आदि प्रमुख उपन्यास है | 21वीं सदी के पूर्व वृद्ध विमर्श अन्य विमर्शों की तरह उभर कर सामने तो नहीं आया था | लेकिन फिर भी हिंदी साहित्य में वृद्धों की स्थिति और उनकी समस्याओं को कई रचनाकारों ने संवेदनशीलता से चित्रित किया है | जिसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार से हैं -

2.1.1 'निर्मला'(1927)

प्रेमचंद द्वारा रचित उपन्यास '*निर्मला*' वर्ष 1927 ई. में प्रकाशित हुआ | यह प्रेमचंद का मनोवैज्ञानिक और यथार्थवादी उपन्यास है | इस उपन्यास में समाज में प्रचलित कुरीतियों विशेषकर दहेज प्रथा और असमान वैवाहिक या वृद्ध विवाह की समस्या को केंद्र में रख कर लिखा गया है | यह असमान विवाह वृद्ध व्यक्ति की असुरक्षा और संदेह को जन्म देता है | एक छोटी सी बालिका का विवाह पिता की उम्र के वृद्ध व्यक्ति के साथ कर दिया जाता है | यह उपन्यास वृद्धों के संबंध में कई पहलुओं को प्रस्तुत करता है | वृद्ध पति की स्वार्थ-परता और शंकालु स्वभाव को भी चित्रित किया गया है | समकालीन समाज में नारी स्वतंत्रता से अपना जीवन नहीं जी पाती थी | जिसके कारण निर्मला का विवाह अधेड़ उम्र के व्यक्ति से कर दिया जाता है | यह उस समय के समाज में स्त्री के प्रति असंवेदनशीलता और पुरुष प्रधान मानसिकता को दर्शाता है | इसके साथ समाज में वृद्ध पुरुषों द्वारा अपनी वृद्धावस्था में युवती से विवाह करना एक आम चलन था | प्रेमचंद आलोचनात्मक दृष्टि से देखकर यह दिखाते हैं कि यह प्रवृत्ति न केवल महिलाओं को पीड़ित करती है, बल्कि वृद्ध पुरुषों को भी आंतरिक रूप से अशांत बनाती है | उपन्यास के वृद्ध का यह समझना कि निर्मला उनसे प्रेम नहीं कर सकती, यह भावना उनके भीतर गहरी असुरक्षा और आत्मग्लानि को जन्म देता है | वृद्धावस्था में यह असुरक्षा और अकेलापन उनके मानसिक संघर्षों को और तीव्र बनाता है | यह उपन्यास न केवल वृद्धावस्था की चुनौतियों और भावनात्मक संघर्षों को सामने लाता है, बल्कि यह भी दिखाता है कि समाज में प्रचलित कुरीतियां वृद्ध और युवा दोनों के जीवन को किस प्रकार प्रभावित करती हैं |

2.1.2 'गबन' (1931)

प्रेमचंद द्वारा रचित उपन्यास '*गबन*' वर्ष 1931 ई. में प्रकाशित हुआ | इस उपन्यास में प्रेमचंद ने वृद्ध-विवाह की समस्या का चित्रण किया है | रतन के माता-पिता न होने की वजह उसका पालन-पोषण उसके मामा ने किया | संपत्ति के अभाव में उसके मामा ने उसका विवाह 60 वर्ष के वृद्ध एडवोकेट इंद्र भूषण से कर देता है | रतन जैसी लड़की से विवाह करके इंद्र भूषण को बुढ़ापे में सहारा मिल जाता है जिससे उनका बुढ़ापा अच्छे से व्यतीत हो सके | वृद्धावस्था में मनुष्य को किसी न किसी के सहारे

की आवश्यकता पड़ती है | वृद्धावस्था में यह अपरिहार्य हो जाता है कि उनकी देखभाल के लिए कोई न कोई हो | अगर उसमें भी जीवन साथी हो तो वे सुखपूर्वक रह सकते हैं |

2.1.3. नई पौध (1953)

नागार्जुन द्वारा रचित 'नई पौध' उपन्यास वर्ष 1953 ई. में प्रकाशित हुआ है | इस उपन्यास का उद्देश्य अनमेल विवाह, लड़की खरीदना और बेचना व दहेज़ प्रथा इत्यादि के प्रति नवयुवकों को जागृत करना है | इस उपन्यास का मूल कथ्य विसेसरी का विवाह है | इसे लेखक ने अलग-अलग सूत्रों के माध्यम से पिरोया है | खोखापंडित जाति से ब्राह्मण होते हुए भी कमजोर आर्थिक स्थिति होने की वजह से अपनी चौदह वर्षीय नातिन के विवाह के लिए सौराठ के मेले से नौ सौ रुपए नकद गिनकर एक साठ वर्षीय वृद्ध को लता है | उस वृद्ध से पेशेवर पंडित और दलाल कमीशन लेते हैं | मजबूरी वश उसे देना पड़ता है | इसके बावजूद भी उस गाँव की नई पीढ़ी इस विवाह को होने नहीं देती है | युवा पीढ़ी चतुरा चौधरी को विवाह किए बगैर वापस लौटने को मजबूर कर देते है उसकी जगह उसका विवाह वाचस्पति झा के साथ कराकर एक आदर्श स्थापित करते है | विवेच्य उपन्यास में वृद्धों से सम्बंधित पात्र की सामान्य चर्चा ही की गई है |

2.1.4 'अपने-अपने अजनबी' (1961)

अज्ञेय द्वारा रचित उपन्यास '*अपने-अपने अजनबी* ' वर्ष 1961 ई. में प्रकाशित हुआ | इस उपन्यास में सेल्मा और योके दो मुख्य पात्र हैं | योके एक जवान लड़की है और सेल्मा कैंसर पीड़ित वृद्ध महिला है | सेल्मा और योके एक बर्फीले तूफान में फँस गए है | दोनों एक दूसरे के लिए अजनबी है | सेल्मा पहाड़ी इलाके में ऊपर रहती हैं | उसका पति यान मर चूका है और तीन बेटे शहर में रहते हैं | एक अजनबी लड़की सेल्मा के पास आकर फँस गई | इस बर्फीले तूफान में दोनों घर में कैद हो गई है | यह घर उन दोनों को कब्रगाह की तरह जान पड़ता है | सेल्मा अपने जीवन की इस अंतिम घड़ी में परिवार के साथ को तरस रही है | परन्तु परिवार की बेरुखी के कारण वह यहाँ पर अकेली मरने को तैयार है | वह प्रतिदिन मृत्यु का इंतजार करती दिखती है | सेल्मा ने यह सत्य को स्वीकार कर लिया है कि वह बीमार है और जल्द ही मरने वाली है ऐसे समय में वह अपने परिवार से दूर रहकर एकांत जीवन चाहती थी परंतु ईश्वर की इच्छानुसार योके वहाँ पहुंचती जाती है | योके को इस घर में सेल्मा के साथ रहना कब्रगाह की तरह लगता है | जब सेल्मा माँ की मृत्यु हो जाती है तभी योके सेल्मा को बर्फ़ में दफना देती है परंतु मृत्यु की गंध उसका पीछा नहीं छोड़ती इसलिए अंत में वह भी आत्महत्या कर लेती है | अपने-अपने अजनबी उपन्यास अज्ञेय का अस्तित्ववादी उपन्यास है इसमें दोनों मुख्य पात्र अंत में मृत्यु को प्राप्त होते हैं | इस उपन्यास में मृत्यु के शाश्वत सत्य को सार्थक रूप में प्रस्तुत किया गया है | व्यक्ति वृद्धावस्था में आकर मृत्यु की प्रतीक्षा करने लगता है और अगर वह किसी बीमारी से ग्रस्त हैं तब वह ईश्वर से प्रतिदिन मृत्यु की मांग करता है | इस उपन्यास में सेल्मा इसका सजीव उदाहरण है | उपन्यास में वृद्धों के अकेलापन और मृत्यु बोध को उद्घाटित किया गया है |

2.1.5 'उस चिड़िया का नाम' (1989)

पंकज बिष्ट द्वारा रचित उपन्यास *'उस चिड़िया का नाम'* वर्ष 1989 ई. में लिखा गया है | पिता की मृत्यु पर बेटा हरीश तथा बेटी रमा के घर आने से उपन्यास का आरम्भ होता है | भारतीय संस्कृति के आधार पर पिता की मृत्यु के बाद क्रिया-कर्म तथा संस्कार के उत्तरदायित्व का वहन बेटे-बेटियों को करना पड़ता है | पिता की मृत्यु पर बेटी पहले आती है और बेटा दाह संस्कार के बाद आता है | रमा चाहती है उसका भाई सारे संस्कार करें | जब वह नहीं आता उसकी अनुपस्थिति में सारे संस्कार करती है | हरीश इस दौरान अपना समय चिड़िया पकड़ने में गुजरता है | वह पिता की मृत्यु पर दुख, शोक प्रकट नहीं करता | उसे पिता के अलावा कुत्ता और मरी हुई माँ याद आती है | वह मानता है कि उसकी मरी हुई माँ के लिए उसके पिता जिम्मेदार थे | हरीश 12 दिन मजबूरी वश वहां रहता है | इस दौरान वह अपने दो-तीन साल के बेटे के लिए चिड़िया को पकड़ने का काम करता है | छोटे बच्चे के लिए चिड़िया खोजना और बाप के क्रिया कर्म में उपस्थित होते हुए भी संस्कारों को न करना | इस उपन्यास में नई पीढ़ी की संवेदन हीनता को दिखाया गया है |

2.1.6 'ऐ लड़की' (1991)

कृष्णा सोबती द्वारा रचित उपन्यास *'ऐ लड़की'* वर्ष 1991 ई. में प्रकाशित हुआ | यह उपन्यास अम्मू वृद्ध पात्र को केंद्र में रखकर लिखा गया है | इसमें वृद्ध अम्मू की समूची जिन्दगी की दास्तान है, जिसे मृत्यु से पूर्व वह अपनी अचूक जिजीविषा शक्ति से याद करती है | लेखिका लिखती हैं- "यह एक लम्बी कहानी है- यों तो मृत्यु की प्रतीक्षा में एक बूढ़ी स्त्री की, पर वह फैली हुई है उसकी समूची जिन्दगी के आर-पार, जिसे मरने के पहले अपनी अचूक जिजीविषा से वह याद करती है | उसमें घटनाएँ, बिम्ब, तस्वीरें और यादें अपने सारे ताप के साथ पुनरावर्तित होते चलते हैं – नजदीक आती मृत्यु का उसमें कोई भय नहीं है बल्कि मानो फिर से घिरती घुमड़ती सारी जिंदगी एक निर्भय न्यौता है कि वह आए, उसके लिए पूरी तैयारी है | पर यह तैयारी अपने मोह और स्मृतियों, अपनी जिद और अनुभवों का पल्ला झाड़कर किसी सादगी में नहीं हैं बल्कि किये धरे को एक बारगी अपने साथ लेकर मोह के बीचोबीच धंसते हुए प्रतीक्षा है – एक भयातुर समय में, जिसमें हम जीवन और मृत्यु, दोनों से लगातार डरते रहते हैं, यह कथा निर्भय जिजीविषा का महाकाव्य है" (सोबती) यह कहानी मृत्यु की प्रतीक्षा में बैठी एक बूढ़ी स्त्री की कहानी है, जिसमें मरने से पहले वह अपने पूरे जीवन को याद करती है | मृत्यु के करीब पहुँची एक वृद्ध स्त्री के मनोविज्ञान व मन स्थिति को उजागर करती है | कूल्हे की हड्डी टूटने के कारण चलने-फिरने से लाचार वृद्धा को बिस्तर पर पड़े-पड़े पीठ में घाव बन चूका है जो फैलता ही जा रहा है | बिस्तर पर पड़ी लाचार बूढ़ी माँ स्मृतियों में जीवन की हर घटना को याद करती है | गगन गिल इस उपन्यास पर टिप्पणी देते हुए लिखते है "ऐ लड़की जो ऊपरी तौर पर एक स्त्री का विदा गीत लग सकता है, दरअसल स्त्री की आकांक्षा का शिल्प है" (गिल 25) यह उपन्यास एक माँ और बेटी के बीच चलने वाले संवादों के माध्यम से समाज, इतिहास और परिवार के भीतर रिश्तों की जटिलता को उकेरता है | जिसमें माँ अपने अनुभव को मृत्यु के अंतिम समय वस्तुनिष्ठ ढंग से देना चाहती है | यह उपन्यास न केवल स्त्री अनुभवों की गहराई में उतरता है, बल्कि पीढ़ियों के बीच संवाद का एक संवेदनशील चित्र भी प्रस्तुत करता है | माँ और बेटियों के संवाद के माध्यम से उपन्यास यह दिखाता है कि कैसे वृद्ध और युवा पीढ़ियों के अनुभव और दृष्टिकोण अलग-अलग होते हैं | माँ की जीवन

के प्रति समझ और बेटी की जिज्ञासा के बीच के संवाद में वृद्धावस्था के अनुभवों का महत्व उभरकर आता है | यहाँ वृद्ध और उससे संबंधित समस्या तो नहीं मिलती परन्तु वृद्ध के जीवन अनुभवों का बोध अवश्य होता है |

2.1.7 'विषय पुरुष' (1997)

मस्तराम कपूर द्वारा रचित उपन्यास '*विषय पुरुष*' वर्ष 1997 ई. में प्रकाशित हुआ | उपन्यास की शुरुआत कथा नायक मन्मथ के एक संगोष्ठी में आने से होती है | लेखक की चिंता रहती है कि स्त्री ही क्यों विषय बनती है ? पुरुष क्यों नहीं ? देश भर की राष्ट्रीय संगोष्ठी में स्त्री विमर्श पर चिंतन और मनन का विषय रहता है | परन्तु वृद्धावस्था की तैयारी कैसे की जाए ? वृद्धत्व की ओर अग्रसर परिवार के मुखिया के लिए जब घर का कोई कोना खाली न हो तो क्या करें ? यह प्रश्न लेखक उपन्यास के माध्यम से पाठकों के लिए छोड़ जाते हैं | उपन्यास मन्मथ के परिवार से शुरू होकर साधना आश्रम तक की यात्रा से पाठक को जीवन के रहस्यों से रूबरू करता है | मन्मथ साहित्यकार और संपादक है, उसकी पत्नी नौकरीपेशा है | इनका एक बेटा सानू और एक लाड़ली बेटी मिनी है | मन्मथ जब तक टी.वी. सीरियल के लिए लिख कर धन कमाते थे तब तक उनकी घर में इज्जत थी | जब वे 'संगिनी' पत्रिका छोड़ देते है तो घर में स्थिति फालतू बन जाती है | घर पर नितांत अकेले हो जाने पर लेखक सोचता है – " मन्मथ को कुछ दिनों से यह तीव्र अहसास होने लगा था कि वह घर में अकेला है और लगभग फालतू बन गया है उसे लगता उसकी किसी को आवश्यकता नहीं रह गई है |...लेकिन अगर कोई पत्नी और बच्चों के लिए आवश्यक ही न रहे गैर जरूरी हो जाए तो उसकी जिंदगी और बूढ़े बीमार बैल की जिंदगी में क्या फर्क रह जाएगा |" (कपूर 46) कथानायक लेखक होने के कारण भावी स्थितियों को जान गए थे इसलिए वह घर छोड़कर चले जाते हैं | उधर उनका बेटा सानू नमिता से विवाह कर लेता है | नमिता के आने से कलह की शुरुआत होती है | सानू और नमिता ने घर में अधिकांश जगहों पर अपना कब्जा कर लिया है और यह माँ और बहन को खलता है उनकी हरकतों की वजह से परिवार में विच्छेद उत्पन्न हो जाता है | सानू के लिए बहन माँ से बढ़कर पत्नी हो जाती है | लेखक उपन्यास में बताते हैं कथानायक अपने घर से दूसरे घर और वहाँ से साधना आश्रम की ओर प्रस्थान करता है वह यहाँ भी एक मोहरा बनता है | अंत में सवाल छोड़ता है कि वृद्धावस्था की तैयारी कैसे की जाए और कहा रहकर की जाए |

2.1.8 'निन्यानवे' (1998)

रवीन्द्र वर्मा द्वारा रचित 'निन्यानवे' उपन्यास वर्ष 1998 ई. में प्रकाशित हुआ | इस उपन्यास में पीढ़ी गत अंतराल को दिखाया गया है | रामदयाल इस उपन्यास के केन्द्रीय पात्र है | इन्हीं के परिवार को केंद्र में रखकर लेखक कथा गढ़ते है | रामदयाल एक शिक्षक है जो गरीबी में अपना जीवनयापन व्यतीत करते हैं | बल्लो, किन्ने, बिन्नू और हरि रामदयाल की संतानें है | बल्लो पढ़ाई-लिखाई कर दवाई सप्लाई का काम करता है | वह मुस्लिम लड़की उल्फत से विवाह कर अपना जीवन व्यतीत करने लगता है | किन्ने कलाकार बन कर देश-विदेश घूमता है | रामदयाल का सबसे छोटा बेटा हरि नेता बनकर उसी गाँव में अमीरों की तरह जीवन जीता है | रामदयाल के बच्चों की संख्याओं में जितनी वृद्धि हुई उतनी गति से उनकी आमदनी में वृद्धि नहीं हुई है | नौकरी से सेवानिवृत होने के बाद उनकी स्थिति और भी दयनीय हो जाती है | परिवार के मूल्यों का किस तरह विघटन होता है जिसे लेखक

बड़ी सूक्ष्मता के साथ व्यक्त करते हैं | किस तरह सिक्के के आगे संबंध, मर्यादा और मनुष्यता समाप्त हो जाती है, यह रामदयाल के बच्चों के व्यवहार और बल्लो के मित्र राजा के कंगालीपन हो जाने पर दिखाई देता है | लेखक ने रामदयाल और हरि के संवाद के माध्यम से इसे दिखाया है- “बाबू में करोड़पति हो गया |”....”क्या हो गए तुम ?” “करोड़पति” तो मैं क्या करूँ ? “अब आप यह धारीदार जाँघिया पहनना छोड़ दीजिए, बाबू | सिर्फ टेरीकॉट के कुर्ते-पाजामे पहनिए क्योंकि खादी आप पहनना नहीं चाहते | मैं टेरीकॉट के बीस थान लाया हूँ |” (वर्मा 175, 176) यहाँ देख सकते हैं कि पैसे के आ जाने की वजह से रहन-सहन में परिवर्तन आ जाता है | जहाँ बेटे के लिए धारीदार जाँघिया पहनना शान के खिलाफ है, वहीं उसके बाप के लिए आवश्यक है | रामदयाल और उसके परिवार की कथा के समानांतर कुछ और कथाएँ भी चलती हैं | रामदयाल की पत्नी किशोरी के दूर के रिश्तेदार बाबा अंग्रेज के भक्त थे | ऐयाशी की वजह से वह चर्चित और बाबा की वजह से वकील बन जाता है | बाबा की तीन बेटियां सुनीता, नीला और लीला की शादी करवा पाना उनके लिए मुश्किल होता है | लेखक ने इन्हीं चरित्रों से विकसित उपभोक्ता वाद, अवसरवाद और उसके लिजलिजे रूप को अनदेखा कर जीने वाली वृद्ध पीढ़ी को आधार बनाकर जीने वाली नई पीढ़ी की जटिलताओं और विडम्बनाओं को भलीभांति व्यक्त किया है |

2.1.9 ‘बारहमासी’ (1999)

ज्ञान चतुर्वेदी द्वारा रचित उपन्यास ‘बारहमासी’ वर्ष 1999 ई. में प्रकाशित हुआ है | यह उपन्यास बुंदेलखंड के छोटे से कस्बे के एक गाँव में पल रहे छोटे-छोटे सपनों की क्षणभंगुरता की कथा है | टूटते बिखरते हालातों में उपन्यास का ताना-बाना बुना गया है | इसे लेखक ने भी लिखा है कि- “बारहमासी’ ऐसा फूल है, जो हर मौसम में उसी शिद्दत से खिल सकता है | मेरे इस उपन्यास के पात्रों के जीवन-चरित्र को इससे बेहतर और किस नाम से पुकारा जा सकता था ?”(चतुर्वेदी 8) उपन्यास की शुरुआत बिन्नू को देखने के लिए आने वाले लड़कों के प्रसंग से होती है और उसी बहाने लेखक बिन्नू की अम्मा, लल्लन मामा, उसके बड़े भाई गुच्चन, बीच वाले भाई छुट्टन और लल्ला तथा सबसे छोटे भाई चंदू के जीवन और उसमें आ रहे बदलाव को व्यक्त करते हैं | भूमंडलीकरण के इस दौर में स्वयं को स्थापित करना कितना कठिन है ये बिन्नू के भाई गुच्चन, छुट्टन और लल्ला के माध्यम से पता चलता है | गुच्चन मैट्रिक में कई बार फेल हो चूका होता है | परिवार में बड़ा होने के नाते करना तो बहुत कुछ चाहता है पर बेरोजगारी के कारण ऐसा कुछ भी नहीं कर पाते हैं और अपनी नाकामी, आलस्यपन की वजह से ही उनका स्वभाव संन्यासी की तरह हो गया है | घंटों पूजा पाठ में लगा रहता है कई बार घर छोड़कर चला जाता है | बिन्नू का मंझला भाई छुट्टन बोलने में तेज तर्रार और नेता के स्वभाव वाला व्यक्ति है | पढ़ाई-लिखाई में उसकी स्थिति भी कुछ खास नहीं थी | वह किसी तरह जुगाड़ करके मैट्रिक की परीक्षा पास कर गए थे | लल्ला पहलवानी का शौक रखते थे उनका भी दोनों भाइयों की तरह पढ़ाई में मन नहीं लगता | एक बार वो मास्टर को पीट भी चुके थे जिसके कारण उन्हें स्कूल से निकला गया था | रम्मू लल्ला की बहन को छेड़ता है जिससे लल्ला आहत होकर रम्मू को मौत के घाट उतर देता है | लल्ला के जेल जाने के बाद पूरा परिवार उसे छुड़ाने में लग जाता है जिसके कारण पूरा परिवार पैसों के अभाव में संघर्षमय जीवन जीते है | घर की स्थिति को देखकर अम्मा की इच्छा थी कि बच्चे पढ़ -लिख कर अपने बाप की भांति शिक्षित और विद्वान निकले लेकिन उनका यह सपना ही रह जाता है | यहाँ वृद्ध माँ का जीवन संघर्ष है | इतने बड़े परिवार का खर्च

उनके कंधों पर ही है | पति की मृत्यु हो चुकी है | उनके पास जमा पूंजी भी बहुत कम है लेकिन बच्चों को लगता है उनकी माँ के पास बहुत पैसा है और वे जान बुझ कर तंगहाली में जीवन जी रही है | सभी बच्चे खुद कमाना नहीं चाहते पर माँ के संचित पैसों पर कुदृष्टि लगाए रखते हैं | अम्मा के कंधों पर बिन्नू के विवाह की जिम्मेदारी, चंदू की पढाई और बाकी बेटे-बहुओं का गुजारा करना है | पैसों की वजह से पति-पत्नी में लड़ाई, बहुओं में झगड़े होते रहते हैं, जिसे अम्मा को ही शांत करना पड़ता है | झगड़े को शांत करने के दिन उन्हें ही घर का सारा काम करना पड़ता है | इस तरह उपन्यास में अम्मा के माध्यम से वृद्ध को तथा पीढ़ी गत अंतर को बेबाकी से चित्रित किया गया है |

वस्तुतः 21वीं शताब्दी के पूर्व भी वृद्ध-जीवन को केंद्र में रखकर कुछ उपन्यास लिखे गये हैं | 21वीं शताब्दी के पूर्व वृद्ध समस्या देखने को कम मिलती है | भारत में संयुक्त परिवार की संरचना थी जिसमें वृद्धों को संरक्षण था | पहले की पीढ़ी कृषि और पारम्परिक व्यवसायों पर निर्भर थी, जहाँ बुजुर्ग अपनी क्षमता अनुसार कार्य करते थे और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होते थे | स्वस्थ खान-पान और शारीरिक श्रम अधिक होने के कारण वृद्धों को बीमारियाँ भी कम होती थी | पहले के बुजुर्गों को पारम्परिक रूप से ज्ञान, कौशल और अनुभव का भंडार माना जाता था, जिससे परिवार और समाज में विशेष सम्मान मिलता था और उनकी सलाह को महत्वपूर्ण माना जाता था | इसके साथ औद्योगीकरण और तकनीकी विकास से पहले जीवन की गति धीमी थी | प्रतिस्पर्धा और मानसिक तनाव कम था, जिससे वृद्धों का जीवन अधिक शांतिपूर्ण होता था | पहले शहरीकरण और पलायन कम था, युवा अपने पैतृक स्थानों में रहते थे, जिससे वृद्धों को अपने बच्चों और परिवार के साथ रहने को मिलता था | लेकिन 21वीं सदी के बाद औद्योगीकरण, शहरीकरण, भूमंडलीकरण, भौतिकतावादी दृष्टिकोण, जीवनशैली में बदलाव, एकल परिवार की बढ़ती प्रवृत्ति, आत्मकेंद्रित व्यस्तता भरा जीवन और सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन इत्यादि के कारण वृद्धों के समस्याएँ बढ़ी है |

2.2 21वीं सदी में वृद्धों पर केंद्रित हिंदी उपन्यासों का संक्षिप्त परिचय

वृद्धावस्था एक महत्वपूर्ण विषय है जो प्रत्येक परिवार से जुड़ा है | 21वीं शताब्दी में भूमंडलीकरण, उपभोक्तावादी संस्कृति के प्रभाव के कारण सामाजिक जीवन में संरचनात्मक परिवर्तन आया है | इस परिवर्तन के कारण संयुक्त परिवार का विघटन और एकल परिवार में वृद्धि हो रही है | वर्तमान समय में नगरीकरण के बढ़ते प्रभाव, टूटते परिवार, गिरते मूल्य, प्रतियोगिता भरी जिन्दगी, भौतिकवादी वस्तुओं के प्रति प्रेम, उच्च जीवन शैली में जीवन जीने की आकांक्षा ने युवाओं को स्वार्थी बना दिया है | परिणामस्वरूप वृद्ध उपेक्षित और संघर्षमय जीवन जीने के लिए मजबूर हो रहे है | 21वीं सदी में वृद्ध विमर्श एक महत्वपूर्ण और आवश्यक सामाजिक व साहित्यिक विमर्श बनकर उभरा है | जो न केवल वृद्धजनों की समस्याओं की ओर संकेत करता है, बल्कि उनकी गरिमा, अनुभव और अस्तित्व को एक नई दृष्टि से देखने की मांग करता है | वृद्धों की स्थिति और उनकी समस्याओं को 21वीं सदी के कई प्रसिद्ध कथाकारों ने अपने कथा साहित्य में चित्रित किया | 21वीं सदी में हिंदी उपन्यासकारों ने वृद्ध विमर्श पर केंद्रित कई उपन्यास लिखे हैं, जिनमें ममता कालिया का उपन्यास '*दौड़*' (2000) कृष्णा सोबती का '*समय सरगम*' (2000), रवीन्द्र वर्मा का '*पत्थर ऊपर पानी*' (2000), निर्मल वर्मा का '*अंतिम अरण्य*' (2000), चित्रा मुद्गल का '*गिलिगडु*' (2002), राकेश वत्स का '*फिर लौटते हुए*' (2003), काशीनाथ सिंह का '*रेहन पर रग्घू*' (2008), रवीन्द्र वर्मा का '*आखिरी मंजिल*' (2008), हृदयेश का '*चार दरवेश*'

(2011), ज्ञान चतुर्वेदी का *'हम न मरब'* (2014), रामधारी सिंह दिवाकर का *'दाखिल खारिज'* (2014), टेकचंद का *'दाई'* (2017), गोविन्द मिश्र का *'शाम की झिलमिल'* (2017), सूरज सिंह नेगी के तीन उपन्यास *'रिश्तों की आँच'* (2016), *'वसीयत'* (2018), तथा *'नियति चक्र'* (2019) इत्यादि उपन्यास शामिल है |

2.2.1 'दौड़' (2000)

ममता कालिया का 'दौड़' उपन्यास 2000 ई. में प्रकाशित हुआ | यह 95 पृष्ठों का लघु उपन्यास है | धन और सम्पत्ति के लालच में संवेदन शून्य होते समाज की नई पीढ़ी की मानसिकता के सहारे पीढ़ियों के संघर्ष की अद्भुत त्रासदी को उकेरता हुआ यह उपन्यास हमें मानव जीवन में आने वाले संकट से सावधान करता है | भूमंडलीकरण, औद्योगीकरण तथा उदारीकरण के दौर में सब कुछ बदल गया | सबसे ज्यादा बदलाव मानवीय संबंधों पर पड़ा है | बाजारीकरण की इस अंधी दौड़ में आज के युवा वर्ग को इस तरह भ्रमित कर रखा है कि पद, पैसा, पोजीशन बढ़ाने के लिए एक कंपनी से दूसरी कंपनी, एक शहर से दूसरे शहर के लिए भागमभाग लगी रहती है | इस भागमभाग में वृद्ध माता-पिता पीछे छूटते जा रहे हैं | इस उपन्यास की पात्र रेखा कहती हैं - "इसको भी ले जाओगे तो हम दोनों बिल्कुल अकेले रह जायेंगे | वैसे ही यह सीनियर सिटिजन कॉलोनी बनती जा रही है | सभी के बच्चे पढ़-लिखकर बाहर चले जा रहे हैं | हर घर में समझो एक बूढ़ा, एक बूढ़ी, एक कुत्ता और एक कार बस यह रह गया है |"(कालिया 40) इस उपन्यास में उपभोगवादी संस्कृति का चित्रण किया गया है | इसके सभी पात्र शिक्षित है जो रोजगार की तलाश में बड़े-बड़े शहर और विदेशों की ओर पलायन करते हैं | उपन्यास के मुख्य पात्र रेखा व राकेश की तरह कई वृद्ध अपने बच्चों के बाहर चले जाने के कारण अकेले हो जाते है | जो माता-पिता अपनी आवश्यकताओं को भूलकर अपने बच्चों की हर खुशियों के लिए अपना पूरा जीवन लगा देते है | धन, पद प्राप्त करने के बाद वही बच्चे माता-पिता के जीवन में अकेलापन भर देते हैं | भारतीय समाज और संस्कृति में बेटे को बुढ़ापे की लाठी समझा जाता है | लेकिन 'दौड़' उपन्यास में दिखाया गया है किस तरह बुढ़ापे के सहारे के पास अपनी पिता की मृत्यु के वक्त भी समय नहीं है | मिस्टर सोनी की मृत्यु के समय उसका बेटा सिद्धार्थ विदेश में है | वह फ़ोन में कहता है –

> "अंकल मैं जितनी भी जल्दी करूँगा, मुझे पहुँचने में हफ्ता लग जायेगा" हफ्ते भर तक बॉडी कैसे पड़ी रहेगी ?".... "हम सब तो आज लुट गये मम्मा | लोग बता रहे है मेरे आने तक डैडी को रखा नहीं जा सकता | आप ऐसा कीजिए, इस काम के लिए किसी को बेटा बनाकर दाह संस्कार करवाइए | मेरे लिए तेरह दिन रुकना मुश्किल होगा | आप सब काम पूरे करवा लीजिए |" (कालिया 88-89)

वर्तमान में विदेश में बैठा पढ़ा-लिखा बेटा अपने पिता की मृत्यु की सूचना पाकर अपनी माँ को फोन पर बताता है कि किसी और को बेटा बनाकर दाह संस्कार करवा लीजिए | भारतीय संस्कृति में पुत्र को बड़ा दायित्व दिया गया है, लेकिन वह हर दायित्व से मुक्त पलायनमुखी है | परंपरागत भारतीय समाज में माता-पिता के प्रति पुत्र का दायित्व निर्विवाद माना जाता था | विशेषकर मृत्यु-संस्कार जैसे अवसरों पर संतान की उपस्थिति और सहभागिता को धार्मिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से आवश्यक समझा जाता था | किंतु आधुनिक जीवन-शैली और व्यावसायिक व्यस्तताओं ने इन दायित्वों को गंभीर रूप से प्रभावित किया है | इस पीढ़ी के पास

इतना समय भी नहीं है कि वे अपने माँ-बाप अंतिम संस्कार जैसा महत्वपूर्ण कार्य न कर सकें | वृद्ध विमर्श इस तथ्य को उजागर करता है कि आज माता-पिता का जीवन ही नहीं, उनकी मृत्यु भी संतान की व्यस्तताओं और उदासीनता के बीच हाशिए पर चली गई है | परंपरागत दायित्व, जो कभी संस्कारों की निरंतरता और पीढ़ियों के बीच भावनात्मक सेतु हुआ करते थे, अब टूट रहे हैं। यह ह्रास न केवल वृद्धों की संवेदनाओं को आहत करता है, बल्कि सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों के क्षरण का भी प्रतीक है | यह देखकर शम्सी शम्स वारसी (आबूरोड़) का शेर याद आता है | उनका कहना है कि –

अब फोन से होते हैं सब काम जनाजे के |

माँ-बाप की मय्यत में बच्चे भी नहीं होते |

आधुनिकता और भौतिकता वादी दृष्टिकोण ने किस तरह मानवीय रिश्तों और संबंधों के स्वरूप को बदल दिया है | बाजार वादी संस्कृति में भावनाओं का कोई महत्व नहीं इस संस्कृति का सम्बन्ध पैसों से हैं | दो पीढ़ियों के बीच मूल्यों और वैचारिक अंतर को भी इस उपन्यास में देखा जा सकता है | पवन की माँ पवन की पत्नी स्टेला को रसोई की कुछ जानकारी देना चाहती है, मगर पवन अपनी माँ को डांटता हुआ कहता है –

> "माँ जब से मैंने होश संभाला, तुम्हें स्कूल और रसोई के बीच दौड़ती ही देखा | मुझे याद है सोकर उठता तुम रसोई में होती और जब में सोने जाता, तब भी तुम रसोई में होती | तुम्हें चाहिए कि स्टैला के लिए जीवन भट्टी न बने | जो तुमने सहा वह क्यों सहे ? (कालिया 68)

ममता कालिया ने 'दौड़' उपन्यास में बाजार वादी संस्कृति की चकाचौंध में आकर अपने ही माता-पिता से दूर होती युवा पीढ़ी का बड़ा ही हृदयस्पर्शी चित्रण किया है | इस प्रकार कह सकते हैं कि 'दौड़' एक ऐसी दौड़ है, जिसमें भौतिकता की चाहत है, लेकिन मानवीय संबंधों, रिश्तों, मूल्यों, संस्कारों और भारतीय संस्कृति के लिए यह दौड़ बहुत ही भयावह है | यह उपन्यास वृद्ध विमर्श का चित्रण करने वाला सशक्त माध्यम है |

2.2.2 'समय-सरगम' (2000)

कृष्णा सोबती द्वारा रचित उपन्यास *'समय सरगम'* 2000 ई. में प्रकाशित हुआ | वृद्धों पर केन्द्रित यह एक प्रमुख उपन्यास है | इस उपन्यास में लेखिका भारतीय परिवार व्यवस्था के हर दृष्टिकोण को उजागर करती है | एक ओर आरण्या जीवन के अंतिम समय तक अकेली रहती है | अंत में ईशान जैसे विधुर का सहारा लेना पड़ता है | दूसरी ओर दमयंती जिसे उसके बेटे और बहू ही अपमानित करते हैं, वहीं प्रभुदयाल जो परिवार के द्वारा मृत्यु के घाट उतार दिए जाते हैं | इसके साथ कामिनी जिसका कोई परिवार नहीं है पर सगे भाई ही उसे ठग रहे थे | उपन्यास के मुख्य पात्र आरण्या और ईशान है | ईशान और आरण्या जैसे बुजुर्ग परस्पर विरोधी स्वभाव के बावजूद साथ होने के लिए जिस वातावरण की रचना करते है वहां न पारिवारिक और सामाजिक उदासीनता है और न ही किसी प्रकार का मानसिक उत्पीड़न | दोनों वृद्ध अपनी बची हुई जिन्दगी चिंता मुक्त होकर जीते है | एक दूसरे के पड़ोसी होने के कारण मित्र बन जाते है और सुख-दुःख में एक दूसरे का साथ देते हैं | *'समय सरगम'* उपन्यास के माध्यम से लेखिका ने बुजुर्गों के साथ किए

जा रहे व्यवहार का यथार्थ चित्रण किया है | इस उपन्यास में प्रमुख रूप से संयुक्त परिवार, परिवार में बुजुर्गों की भूमिका और उनकी वास्तविक स्थिति को कई प्रसंगों के माध्यम से उजागर किया गया है | उपन्यास में दो बूढ़ों के माध्यम से कई बूढ़ों की कथा कही गई है | दमयंती, प्रभुदयाल, कामिनी, ईशान और आरण्या इन पात्रों के माध्यम से बुजुर्गों की स्थिति को उजागर किया गया है | दमयंती अपने समय की आधुनिक लड़की थी | पति की मृत्यु के बाद उसका जीवन नरक बन गया | तमाम संपत्ति होने के बावजूद उसे बेटों के अधीन जीना पड़ता है | दमयंती ईशान की दोस्त है जो अपने बेटे-बहू के दुर्व्यवहार के कारण पीड़ित रहती है | अपने पीड़ा को वह आरण्या से कहती है-

> “मैं तुम्हारी तरह अकेली होती तो क्यों परेशान होती | बच्चे साथ रह रहे हैं | मेरे घर में मेरा किचन चल रहा है | खर्च में कर रही हूँ | और मैं अपने कमरे में अकेली पड़ी रहती हूँ | बिना मेरी इजाजत मेरा सामान इधर से उधर करते रहते है |.....मैं ड्राइंग रूम में नहीं बैठ सकती, मेहमान नहीं बैठ सकते जबकि वहां का सब फर्नीचर साज-सामान मेरा अपना बनाया हुआ है और मैं किसी बेजान काठ की तरह देखी जाती हूँ | आरण्या मैं बहुत दुखी हूँ | पीछे आश्रम गई तो माधो को धमकाते रहे | बताओ मम्मा लॉकर की चाबी कहाँ रखती है |” (सोबती 74)

इस संवाद से आधुनिक परिवारों में बुजुर्गों की स्थिति समझ सकते है | जिस व्यक्ति ने अपने घर को अपने खून-पसीने से बनाया हो, वही बूढ़ा होने पर अपने घर से किनारे कर दिया जाता है | दमयंती उनके बेटे-बहुओं के लिए पैसे खर्च करने का साधन मात्र है | दमयंती के माध्यम से रचनाकार ने एक ऐसे वृद्ध चरित्र को पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है जो प्रतिदिन बहू-बेटे के अपमान झेलकर भी जिन्दगी जी रही है | ईशान और आरण्या की दूसरी दोस्त अविवाहित कामिनी है | दमयंती जिसमें आधुनिकता के सभी गुण मौजूद है | जो बनारस और इलाहाबाद में पढ़ी और लंदन में काम कर चुकी है | कामिनी जिसका अपना कोई परिवार नहीं पर उसे उसके सगे भाई ठग रहे थे | आरण्या और ईशान उसके घर जाते है तो वह बंद कोठरी में बीमार पड़ी हुई दिखती है | इसका जिम्मेदार उसका सगा भाई है | वह चालाकी से कामिनी के घर को बेच देता है | उसके आदेश पर ही कामिनी की नौकरानी खूकू उसे कमजोर होने वाली दवाइयों का सेवन करवाती है | अंततः कामिनी की मृत्यु हो जाती है | कामिनी पात्र के माध्यम से लेखिका ने यह दिखाया है कि व्यक्ति अपनी सारी ऊर्जा एवं शक्ति सुविधाओं को जुटाने में लगा देता है परन्तु भोगने के समय यदि उसके पास शक्ति नहीं है तो उसके अपने ही उसे प्रताड़ित करते है | प्रभुदयाल की कथा आज की पीढ़ी के विषय में हमें सोचने को मजबूर करती है | प्रभुदयाल अपनी कॉलोनी के सबसे बड़े व्यापारी है | विधुर होने के साथ ही तीन बेटों के पिता भी हैं | तीनों बेटों को लगता है कि उनके पिता के पास बहुत धन-दौलत है और वे अपने पिता के कमरे की तलाशी लेने लगते है | “बड़े बेटे ने मंझले को डाँटकर कहा – निकाल इनकी ताली ..लड़के ने सूत में पिरोई ताली गले पर से उतार ली” (सोबती 110) | कुछ समय बाद वह भी गुमनाम रहस्य मौत के शिकार होते हैं | पोस्टमार्टम की रिपोर्ट बताती है कि गला घोंटने से उनकी हत्या हुई है | बदलते रिश्ते और मानवीय संबंध तथा टूटती भावनाएं और संवेदनाओं का पता इन वृद्ध पात्रों की जीवनचर्या से होता है | ईशान और आरण्या की कथा प्रमुख कथा के रूप में आदि से अंत तक चलती है | इस कथा के माध्यम से रचनाकार ने वृद्ध और वृद्ध होते लोगों की वास्तविक स्थितियों का चित्रण

किया है | वृद्धावस्था तक आते-आते मनुष्य के जीवन में मृत्यु का बोध भी जागने लगता है | यही मृत्यु बोध ईशान को उम्र के इस पड़ाव में पीड़ित करने लगता है | जिसके कारण वह आरण्या से कहता है कि –

> "हाँ कुछ भी कहीं अचानक घट सकता है मेरे लिए किसी को इंतजाम में असुविधा हो, यह उचित न होगा ! ऐसा क्यों सोच रहे हैं ईशान ! आप निश्चित होकर जाइए | कुछ होने वाला नहीं ! यह हल्की बात नहीं आरण्या ! मेरे मित्र मालवाडे अमरीका से लौटते हुए लंदन एयरपोर्ट पर ही चिर-विश्राम पा गए | मिसेज मालवाडे साथ थीं | भाग-भागकर बच्चों को सूचना दे सकीं | कौशिक और अलका भी लंदन पहुँच गए ! मिली है न उनसे ? जानती हूँ | पर हम इस घटना को अपवाद क्यों न मान लें ! ईशान शांत स्वर में बोले – इसलिए कि हम पुकार लिए जाने वालों की पंक्ति में हैं |" (सोबती 35)

सोबती के इस अंश में वृद्ध विमर्श मृत्यु-बोध और असुरक्षा-बोध की गहन अभिव्यक्ति है | वृद्ध पात्र जीवन को पीछे मुड़कर देखते हैं और यह अनुभव करते हैं कि अब उनका नाम "पुकार लिए जाने वालों" में जुड़ गया है | यह अनुभव वृद्धावस्था को केवल शारीरिक क्षीणता नहीं, बल्कि मनोवैज्ञानिक और अस्तित्वगत संघर्ष के रूप में प्रस्तुत करता है | निष्कर्ष रूप में कह सकते है कि '*समय सरगम*' उपन्यास में के माध्यम से रचनाकार ने वृद्धों के हर पहलू को दर्शाया है | वृद्धों के संघर्ष, अकेलेपन, तनाव, पीड़ा आदि को उद्घाटित कर यह उपन्यास वृद्ध विमर्श का एक अनुपम उदाहरण है | परिवार के साथ रह रहे वृद्धों की दयनीय दशा तथा सगे सम्बन्धियों द्वारा संपत्ति के लोभ में वृद्धों के साथ किए जाने वाले अत्याचार को भी बखूबी दिखाया हैं |

2.2.3 'अंतिम अरण्य' 2000

निर्मल वर्मा का 'अंतिम अरण्य' 2000 ई में प्रकाशित हुआ है | पूरे उपन्यास में 'मृत्यु' मूल स्वर है | मृत्यु की शुरुआत नायक की पत्नी से होकर स्वयं के देहांत तक जाती है | कथानायक मृत्यु से भयभीत न होकर उसे सहजता से स्वीकारता है | इस उपन्यास में आई.ए.एस. रिटायर्ड अधिकारी मेहरा साहब के जीवन को केंद्र में रखा है | मेहरा साहब दीवा के साथ अपना जीवन व्यतीत करते है | दीवा लाइलाज शारीरिक रोग से मर जाती है | उसकी मृत्यु के बाद मेहरा साहब अंदर ही अंदर व्यथित, उदास तथा अकेले रहने लगे | इस उपन्यास में मेहरा साहब को केंद्र में रखकर वृद्धावस्था में आये अकेलेपन की ओर इशारा किया है | हमारे समाज की विडंबना यह है कि संपन्न वृद्ध की देखभाल के लिए नौकरों को रखा जाता है, पर घर के सदस्यों के पास उनके लिए समय नहीं है | अकेले रह रहे वृद्ध व्यक्ति अपना अकेलापन दूर करने के लिए सारे कमरे की बत्तियां जलाकर रखते है या घर में संगीत बजता रहता है, ताकि उन्हें अकेलापन महसूस न हो | दीवा के साथ रहने के कारण उनकी पहली पत्नी घर छोड़ कर चली जाती है | मेहरा साहब की बेटी तिया शहर में नौकरी करने की वजह से छुट्टियों में ही उनके साथ रहती है | पिता द्वारा दूसरी शादी करनी करने के कारण उसके व्यवहार में अपने पिता के प्रति प्रेम एवं घृणा दोनों दिखता है | उसे पिता से शिकायत है कि उनके कारण माँ घर छोड़ के चली गई | उसे अपने पिता के प्रति इतना आक्रोश है कि अस्पताल में मरीजों की सेवा करना अपना कर्तव्य समझती है मरीजों के प्रति चिंता, करुणा एवं दया भाव दिखाती है | लेकिन अपने वृद्ध पिता की सेवा करने में उसे समय की बर्बादी लगती है | बेटी मेहरा साहब की मौजूदगी में कभी उनका सहारा नहीं बन पायी | जिसके कारण मेहरा साहब अकेलेपन से व्यथित रहे | जिसके कारण वे

बहुत बीमार हो जाते है और उनका शरीर लकवा ग्रस्त हो जाता है | अंत में मेहरा साहब सबको छोड़कर चले जाते है | मेहरा साहब को मृत्यु से भय नहीं है एक जगह वे कहते है – "मृत्यु कोई समस्या नहीं है. तुमने देखा होगा जितनी आसानी से युवा लोग आत्महत्या कर लेते है, बूढ़े लोग नहीं |"(वर्मा 17) बेटी तिया के समय पर न पहुँचने से मेहरा साहब की बेटी से मिल पाने की इच्छा अधूरी रह जाती है | पिता के चले जाने के बाद बेटी अफ़सोस जरूर करती है – "बाबूजी चले गए ? मेरे आने से पहले ही ?" (वर्मा 244) नई पीढ़ी में आजकल यही मानसिकता देखने को मिलती है | वृद्ध माता-पिता की मौजूदगी का कोई मूल्य नहीं है पर उनके चले जाने पर अफ़सोस व्यक्त करते है | अन्य वृद्ध पात्रों में दीवा, अन्ना जी, निरंजन बाबू तथा डॉ. सिंह प्रमुख है | अन्ना जी उम्र के अंतिम पड़ाव में जर्मनी छोड़कर पहाड़ी कस्बे में रहने भारत आई | निरंजन बाबू दर्शन के प्रोफेसर होने के कारण दर्शन की गुथियों को सुलझाते-सुलझाते जीवन की गुथियों में उलझ गये इसलिए पहाड़ी कस्बे में रहकर सेब के बगीचों की देख-रेख करते रहें | '*अंतिम अरण्य*' उपन्यास में वृद्धों की एकलता एवं मनोदशा का यथार्थ चित्रण किया गया है |

2.2.4 'पत्थर ऊपर पानी' 2000

रवीन्द्र वर्मा का '*पत्थर ऊपर पानी*' उपन्यास 2000 ई. में प्रकाशित हुआ है | इस उपन्यास में तीन पीढ़ियों के बारे में बताया गया है | पहली पीढ़ी रामचंद्र की, दूसरी उनके बेटे प्रोफेसर चंद्रा की और तीसरी पीढ़ी प्रो. चंद्रा के बेटे नंदू की है | पूरा उपन्यास इन्हीं के बीच घूमता है | रामचंद्र की पत्नी शांति देवी की मृत्यु हो चुकी है | पत्नी के बिना रामचंद्र की पूरी दुनिया ही वीरान हो गई थी | जीवन के अंतिम पड़ाव में जीवनसाथी की सबसे अधिक आवश्यकता महसूस होती है – "शांति घर में न रही तो घर अकेला हो गया | अब रामचंद्र की दिनचर्या अकेली थी, उठाना अकेला था, चाय अकेली थी, घूमना अकेला था, खाना अकेला था, कहीं जाना अकेला था, कहीं से लौट आना अकेला था, सोना अकेला था, जागना अकेला था |" (वर्मा 22) रामचंद्र पत्नी के जाने के बाद बेटे-बहू और पोते के साथ रहते हुए भी स्वयं को बहुत अकेला महसूस करते है | सभी अपने जीवन में मस्त है, उनसे बात करने के लिए घर में किसी के पास समय नहीं है | संयुक्त परिवार में रहकर भी रामचंद्र अपने जीवन में अकेलापन महसूस करता है | इस उपन्यास की दूसरी वृद्ध पात्र सीता देवी है | उम्र के इस पड़ाव में सीता देवी भी अपने आप अकेला व असहाय महसूस करती है | सीता देवी के पति की मृत्यु हो चुकी है | उनके दो बेटे गिरीश और हरीश अपनी माँ को एक-एक महीने के लिए अपने पास रखते है | इस महीने सीता देवी गिरीश के यहाँ से हरीश के घर रहने के लिए जा रही होती है | हरीश माँ सीता देवी को जानबूझकर पेट्रोल पम्प के सामने जरूरी काम बताकर छोड़ कर चला जाता है | दोपहर से शाम हो जाती है लेकिन वह लेने नहीं आता | कितनी संवेदन शून्यता है, कोई अपनी माँ को कैसे भूल सकता है, छोड़ सकता है | प्रो चंद्रा उन्हें देखते है और घर ले आते हैं | प्रो. चंद्रा के यह कहने पर कि वह उनके खोए बेटे को ढूंढने का प्रयास करेंगे तब सीता देवी सोचती है – "उनका बेटा नहीं खोया था बेटे ने अपनी माँ को खो दिया था | हरीश जब छोटा था तब भी यही करता था जो चीज उसे अच्छी नहीं लगती थी उसे वह खो देता था" (वर्मा 12) बड़े अचरज की बात है एक वृद्ध स्त्री दो संपन्न पुत्रों की माँ लेकिन दोनों में से कोई भी उन्हें स्थाई रूप से अपने साथ नहीं रखना चाहता | जिस स्त्री ने दो बच्चों को पाल पोस कर बड़ा किया, पढ़ाया लिखाया इस काबिल बनाया आज उन्हीं पुत्रों के लिए वह अनचाहा बोझ हो गई | वृद्ध सीता देवी के न चाहते हुए भी उसे एक-एक माह के लिए दोनों पुत्रों के घर जाना पड़ता है | बेटों ने माँ का हरदोई वाला मकान

बेच कर लखनऊ में अपना घर बनाया | अब बेटों के घर पर माँ के लिए कोई जगह नहीं रही | नई पीढ़ी को वृद्ध माता-पिता की पूंजी उनकी जमीन-जायदाद सब कुछ विरासत के तौर पर चाहिए लेकिन जीवन के अंतिम अवस्था में वृद्ध माता-पिता के प्रति नैतिक दायित्व नहीं चाहिए | दोनों बेटों की एक वृद्ध माँ के प्रति बेरुखी भारतीय परिवार व समाज में वृद्धों की स्थिति का जीवंत दस्तावेज प्रस्तुत करती है | कोई भी वृद्ध किसी पर स्वेच्छा से निर्भर नहीं रहना चाहता लेकिन उसकी वृद्धावस्था में कमजोर होती शारीरिक और मानसिक क्षमता उसे अपनों के सहारे की आवश्यकता महसूस कराती है | वर्तमान समाज में व्यक्ति पत्थर से भी सख्त और संवेदन शून्य बनता जा रहा है |

2.2.5 गिलिगडु 2002

चित्रा मुद्गल का *'गिलिगडु'* उपन्यास 2002 ई. में प्रकाशित हुआ | इस उपन्यास में वृद्धों की वर्तमान स्थिति को बड़ी गहराई के साथ वर्णित करता है | इसके साथ यह उपन्यास यथार्थ के कई आयामों को छूता हुआ अपनी महत्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज कराता है | इस उपन्यास की कहानी ऐसे दो बुजुर्गों की है जो घर-परिवार और आर्थिक रूप से समर्थ होते हुए भी अकेले हैं | इस उपन्यास में सेवानिवृत्त इंजीनियर बाबू जसवंत सिंह और रिटायर्ड कर्नल विष्णु नारायण स्वामी के माध्यम से वृद्धों की संवेदनाओं को उजागर करने का प्रयास किया | जसवंत सिंह अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद अकेलापन दूर करने कानपुर से दिल्ली अपने बेटे-बहू के पास रहने आये थे | बेटे के घर में भोजनादि तो मिला, लेकिन वो इज्जत, मान-सम्मान और अपनापन न मिला जिसकी जरूरत सबसे ज्यादा थी | समाज के इज्जतदार शख्सियत, प्रतिष्ठित पद से रिटायर्ड, आर्थिक रूप से मजबूत घर के मुखिया लेकिन बेटे-बहू और पोतों के बीच रहते हुए भी एकदम अकेले और उपेक्षित | कानपुर में अपने बड़े घर के स्वामी जसवंत सिंह को बेटे के घर में कोई स्वतंत्र कमरा नहीं मिलता | शीशे से बनी बालकनी को कमरे में तबदील कर वहां रखा जाता है | जहाँ उस कमरे में टॉमी (कुत्ता) पहले से रहता है | वृद्ध पिता के लिए बेटे-बहू के हृदय में कोई स्थान नहीं है | जसवंत सिंह को घर का 'टॉमी' (कुत्ता) सँभालने का काम सौंप दिया | बेटे के घर में वृद्ध पिता के अपमान, बेगानेपन व दुर्व्यवहार के मार्मिक प्रसंग देखने को मिलते है | जैसे जसवंत सिंह हिंदी समाचार सुनना चाहते हैं | लेकिन उनके समाचार सुनने से टॉमी को आपत्ति है | बहू सुनयना से टॉमी की नाराजगी बर्दाश्त नहीं होती | टोककर कहती है "कोई म्यूजिक चैनल लगा दीजिए न बाबूजी...आज तक का क्या चौबीस घंटे चलता रहता है |" (मुद्गल 11) बहू के लिए कुत्ते के आगे ससुर का कोई मूल्य नहीं | उम्र के साथ-साथ बाबू जसवंत सिंह की याददाश्त कमजोर होने लगी थी | कभी-कभी कमरे की बिजली का बटन बंद करना भूल जाते, कभी लिफ्ट खुली छोड़ देते तो बहू सुनयना उन्हें ताने सुनाने से नहीं चुकती | "भूल जाने से बिजली का मीटर तो नहीं खामोश बैठ जाएगा |" एक दिन बाबू जसवंत सिंह हतप्रभ रह गए जब बहू सुनयना ने उन्हें खरी खोटी सुनाई –

> "आखिर बाबूजी इस संभ्रांत सोसाइटी में उनकी इज्जत खाक में मिलाने पर क्यों उतारू हो | अपनी उम्र का लिहाज किया होता | अभी भी जवानी का जोश बाकी है तो दिक्कत कैसी ? चले जाया करो रेडलाइट एरिया | कौन पेंशन कम मिलती है उन्हें जो उनकी मौज मस्ती में हाथ बांधे हों ? कम से कम अड़ोस-पड़ोस की किशोरियों पर तो नजर न डालें |" (मुद्गल 59)

बाबू जसवंत सिंह के बेटे नरेंद्र और बहू सुनयना का उनके प्रति व्यवहार इतना कठोर है कि वे दोनों उनका अपमान और तिरस्कार करने का कोई भी अवसर नहीं छोड़ते हैं | बाबू जसवंत सिंह के जीवन में पोतों का सुख भी नसीब नहीं | उनके पोते मलय-निलय के मन में भी अपने दादू के प्रति कोई आदर एवं सम्मान नहीं है | उन्हें अपने दादाजी से ज्यादा कंप्यूटर और मोबाइल अधिक प्रिय है | बाबू जसवंत सिंह अपने पोते का जन्मदिन मैकडोनाल्ड्स होटल में मनाना चाहते है | किन्तु मलय पहले से कार्यक्रम बना चुका है कि पार्टी में किसी बड़े को शामिल नहीं करेंगे | इसलिए वह अपने दादू से कहता है "न न दादू ! अपने साथ हम किसी भी बड़े को नहीं ले जायेंगे पार्टी बोरिंग हो जाएगी |"(मुद्गल 34) बेटे और बहू के साथ-साथ पोतों से भी तिरस्कृत या उपेक्षित होकर बाबू जसवंत सिंह को ऐसा लगा कि इस घर में उस की दशा कुत्ते से भी बदतर है क्योंकि टॉमी को भी उनसे अधिक सम्मान मिलता है |

जसवंत सिंह की बहू के मन में ससुर के प्रति कोई आत्मीयता, लगाव तथा मान-सम्मान नहीं है सिर्फ स्वार्थ और लालच है | मृत सास के गहने, साड़ियाँ हड़पने की आकांक्षा जिसने ससुर को साथ रखने को विवश किया है | मृत सास के गहने तथा साड़ियाँ प्राप्ति हेतु कहती है – "अम्मा की गोदरेज अलमारी में टंगी हुई मूल्यवान सिल्क की साड़ियाँ, शालें आदि बिना देख-रेख के टंगे-टंगे गल सकती है | बल्कि इनका इस्तेमाल हो तो और भी अच्छा है |" (मुद्गल 89) सुखी परिवार के आधार सम्पत्ति नहीं बल्कि प्रेम ही हो सकता है | वर्तमान समय में प्रेम का स्थान धन-संपत्ति ने ले लिया है | बाबू जसवंत सिंह का बेटा अपने पिता से प्रेम करने के बजाय बैंक में उनके लॉकर पर नजर रखता है | " सुबह सुनयना अपने काम से बैंक गई थी वो बता रही थी कि लॉकर का किराया अचानक बहुत बढ़ गया है | बाबू जी अपने कानपूर वाले लोकर को सरेंडर क्यों नहीं कर देते ? फिजूल में किराया भरने का कोई अर्थ नहीं | वैसे भी घर में दो-दो लॉकर की जरूरत भी नहीं जहाँ-तहाँ पसरी पड़ी रहे तो उनकी देखभाल में भी दिक्कत आती है |" (मुद्गल 86) आज उपभोक्तावादी समाज में मुनाफा सबसे प्रमुख है | आज यह उपभोक्तावादी सिद्धांत पारिवारिक रिश्तों में भी हावी हो रहा है | जीवन के अंतिम पड़ाव में जब वृद्धों को परिवार की सबसे अधिक आवश्यकता होती है तब उन्हें वृद्धाश्रम में धकेल दिया जाता है | पुत्र के घर में अजनबी बने बाबू जसवंत सिंह को उसकी बहूँ वृद्धाश्रम भेजना चाहती है | जबकि नरेंद्र पत्नी के इस सुझाव पर गुस्सा या नाराज होने की बजाय अपनी बहन शालिनी को भी इस साजिश में शामिल कर लेता है | पिता को वृद्धाश्रम भेजने के प्रस्ताव को लेकर शालिनी भी भाई का साथ देने के लिए तैयार हो जाती है | भैया के प्रस्ताव को इस तरह बताती है –

> "भैया तो यहाँ तक सोच रहे हैं कि जहाँ बाबूजी का मन लगे, वे प्रसन्नचित्त रहे, उन्हें वहीं रखा जाए | हम उम्रों की जमात में बाबूजी का मन लगा रहेगा | भैया जगह देख आए है | वे बता रहे हैं कि बहुत सुंदर है | भोजनादि की व्यवस्था उत्तम कोटि की है | उन्हें वहाँ रखने के निर्णय से भैया पर खर्च का अतिरिक्त बोझ पड़ेगा | भैया उसे सहर्ष उठाने के लिए तैयार है | शालिनी फिर आगे कहती है, भैया हरिद्वार में भी एक आश्रम देख आए है कहती है | "हरिद्वार के किसी आश्रम के विषय में भी भैया के मित्र राजीव रायजादा ने उनसे चर्चा की है | आश्रम ठीक गंगातट पर है | आश्रम से बाहर न भी निकला जाए तो भी आराम से कमरे की खिड़की से सांझ की मनोरम आरती देखी जा सकती है | (मुद्गल 97)"

इस तरह बेटा-बेटी, बहूँ अपने पिता को वृद्धाश्रम में भेजना चाहते हैं | अपने वनवास भेजने के इस षड्यंत्र को बाबू जसवंत सिंह समझ जाते हैं | उन्हें यह भी लगता है कि कोई अपने पिता का इतना तिरस्कार कैसे कर सकते हैं | वृद्धाश्रम में अकेलेपन से ज्यादा

उन्हें अपनों के भयावह हो जाने से तकलीफ होने लगी | बच्चों के इस षड्यंत्र से प्रताड़ित बाबू जसवंत सिंह को निस्वार्थ और स्नेह भाव से सेवा करने वाली नौकरानी सुनगुनिया की याद आती है | बेटे-बहूँ के स्वार्थीपन प्रवृत्ति के कारण बाबू जसवंत सिंह का परिवार के प्रति मोह भंग हो जाता है | जिसके कारण जसवंत सिंह अपनी पुरानी नौकरानी सुनगुनिया के प्रति आकर्षित होते हैं और अपनी सारी धन-संपदा की वसीयत उसके नाम कर देना चाहते हैं | जसवंत सिंह कहते है वे अपनी नई वसीयत बनवाएंगे और उसे रजिस्टर्ड करवाएंगे कि कानपूर वाला घर उनकी पैतृक सम्पत्ति नहीं है | उनकी अर्जित सम्पत्ति है | उनके न रहने पर उस घर की एकमात्र अधिकारिणी सुनगुनिया होगी | अंत में यह भी लिखना चाहते हैं कि सुनगुनिया के पुत्र रामरतन व अभिषेक आसरे को उनके अंतिम दाह संस्कार का अधिकार देते हैं | बाबूजी अपनों द्वारा प्रताड़ित, उपेक्षित और षड्यंत्र के कारण ऐसा करने को मजबूर हुए |

उपन्यास के दूसरे वृद्ध पात्र कर्नल स्वामी है | कर्नल साहब की स्थिति भी बाबू जसवंत सिंह से बेहतर नहीं है | बाबू जसवंत सिंह की कर्नल स्वामी के साथ पहली मुलाकात करवाने में टॉमी का ही हाथ रहा है | टॉमी को सुबह-शाम घुमाने की जिम्मेवारी बाबू जसवंत सिंह को जबरदस्ती ही सौंप दी गई थी | आखिर टॉमी की ज्यादतियों के कारण बाबू जी एक दिन गिर पड़े और उन्हें उठाने के लिए जो अनजाना हाथ आगे बढ़ा वह कर्नल स्वामी का था | बाबू जसवंत सिंह ने सोचा भी नहीं था कि बढ़ा हुआ हाथ गिरने से उठाने में सहायक ही नहीं बल्कि उन्हें जीवन के एकाकीपन और बोरियत से भी बाहर खींचने में भी सक्षम है | यह छोटी सी घटना दोस्ती में बदल गई | दोनों प्रतिष्ठित सरकारी पदों से सेवानिवृत्त, दोनों पत्नी के वियोग को उम्र भर सहने के लिए विवश, दोनों भरे-पूरे परिवार संग रहने के बावजूद नितांत अकेले और उपेक्षित रहने के लिए मजबूर | कर्नल स्वामी और जसवंत सिंह के लिए वृद्ध जीवन एक त्रासदी बन जाता है | जसवंत सिंह अपने परिवार से मिले अपमान, निरादर और उपेक्षाओं को यथार्थ रूप में जी रहें है जबकि कर्नल स्वामी इसी त्रासदी को सपने में बदल कर जीते है | कर्नल स्वामी हँसमुख, मिलनसार तथा एक जीवंत व्यक्तित्व के रूप में सामने आता है | कर्नल स्वामी जसवंत सिंह के नितांत एकाकीपन को दूर करने में सहायक होते हैं | कर्नल स्वामी ने बाबू जसवंत सिंह को दिल्ली भ्रमण करवाया | कई होटलों में ले गया | जूते भी खरीद दिए | उन्हें अपने तीनों पुत्र-बहुएँ पोते-पोतियों से भरे-पूरे परिवार के किस्से सुनाएँ | अपनी बहू माधवी की तारीफ करते हुए कहते कि बड़ी बहू माधवी इतनी मुलायम इडली बनाती है कि मुंह में देते ही घुल जाए | उतनी ही तारीफ़ मंझली बहू अनुश्री की भी करते हैं जो गिलिगडु की माँ है | छोटा बेटा-बहू श्यामली और प्रभाकर के भी बखान करते हैं | सबसे ज्यादा अपनी पोतियाँ गिलिगडु अर्थात कुमुदिनी एवं कात्यायनी की तारीफ़ करते थकते नहीं | कर्नल अपनी पोतियों के बारे में कहते हैं – "लेकिन मेरी गिलिगडु, मेरी जुड़वाँ पोतियाँ | चहकती, फुदकती, मस्ती करती, हुडदंगे मचाती, कुमुदनी और कात्यायनी ...उफ़ कैसी कमाल की है दोनों | पूछिए मत |" (मुद्गल 31) कर्नल स्वामी अपने परिवार के अनेक किस्से सुनाते हैं जिसको सुनकर जसवंत सिंह की आँखें ख़ुशी के आंसू से भर जाती है | जिसके आज के युग में ऐसे आज्ञाकारी पुत्र-बहुएँ पोते पोतियाँ हो उस जैसा सौभाग्यशाली दुनिया में दूसरा कोई नहीं हो सकता |

एक बार जसवंत सिंह बीमार हो गए जिसके कारण जसवंतसिंह और कर्नल स्वामी को मिले काफी दिन गुजर गए थे | इसलिए जसवंत सिंह सोचते हैं कि कर्नल स्वामी को बिना फोन किए सीधे उनके घर जाया जाए | बाबूजी कर्नल के घर को रिक्शा लेते हैं और उनके परिवार की खुशियों के बारे में सोचकर तरह-तरह की कल्पनाएँ करते हैं | बाबू जसवंत सिंह को कर्नल स्वामी से न मिले तेरह दिन हो

गये थे उन्हें ऐसा एहसास हो रहा था तेरह दिन की जगह तेरह साल हो गए हो | बाबू जसवंत सिंह ने अपने मित्र कर्नल स्वामी के फ़्लैट न. 303 की घंटी बजायी | अंदर से कोई जवाब नहीं आया | सामने वाले फ़्लैट में कर्नल स्वामी की पड़ोसिन श्रीमती श्रीवास्तव ने जानकारी देते हुए कहा – "आज उन्हें गए हुए बारह दिन हो गए | तीस नवम्बर की सुबह थी | वह भाई साहब हमेशा की भांति प्रसन्नचित्त सुबह की सैर के लिए निकले | सात-आठ सीढ़ियाँ उतरते ही उनके सीने में अचानक भयंकर दर्द उठा |" (मुद्गल 116) मिसेज श्रीवास्तव से ही उनको जानकारी मिलती है कि- कर्नल स्वामी पिछले आठ वर्ष से अकेले रहते थे | उनके बेटे और बहुएँ उनका ख्याल तो दूर देखने भी नहीं आते थे | बेटा श्रीनारायण तो इतना गिरा हुआ था कि बाप पर हाथ उठाता था | क्योंकि उसकी नज़र उसके बाप के चार कमरों के फ्लैट पर थी | उनकी मंशा यह थी कि बाप यह फ्लैट बेच दे इससे प्राप्त पैसों को तीनों भाइयों में बाँट दे ताकि वे तीनों अपना घर बिना लोन लिए बना सकें | क्रुद्ध श्रीनारायण ने पिता पर हाथ उठा दिया | कर्नल स्वामी के रोने चीखने का आर्त स्वर सुनकर मिस्टर एंड मिसेज श्रीवास्तव का दिल दहल उठा ...पुलिस ने दरवाजा खुलवाया | लहूँ-लुहान कर्नल स्वामी को 'कैलाश अस्पताल' ले जाया गया |" (मुद्गल 75) कर्नल स्वामी की बहू अनुश्री ने डेढ़ साल की मासूम जुड़वा बेटियों को छोड़ उसने अपने नृत्य गुरु के साथ रहना शुरू कर दिया था | बच्चियाँ आज हैदराबाद हॉस्टल में रहकर पढ़ाई कर रही हैं | मिसेज श्रीवास्तव ने दुःख और क्रोध के साथ बताया कि "ऐसी कसाई औलादों से तो आदमी निपूता भला | हमें इस बात का कोई गम नहीं कि हमारी कोई अपनी औलाद नहीं |" (मुद्गल 65) श्रीवास्तव दंपति द्वारा कर्नल स्वामी की वास्तविक स्थिति का पता चलते ही बाबू जसवंत सिंह के पैरो तले की जमीन खिसक जाती है | उनके परिवार के बारे में जो उन्होंने सुना था उससे बिलकुल विपरीत स्थिति थी | बाबू जसवंत सिंह सपने में भी नहीं सोच सकते थे जो हमेशा अपने बेटे-बहुएँ की प्रशंसा करते रहते, हमेशा दूसरों के लिए आदर्श प्रेरणा स्रोत बने रहने वाले कर्नल स्वामी के जीवन की इतनी पीड़ा देने वाली दर्दनाक त्रासदी हो सकती है || वर्तमान में खून के रिश्ते हृदय से, आत्मीयता से व प्रेम भाव से तय नहीं होते बल्कि धन संपत्ति से तय होते है | जिन बच्चों को माँ-बाप अत्यंत लाड़-प्यार से पालते-पोसते है, बच्चे वही लाड़-प्यार अपने वृद्ध माता-पिता को नहीं दे सकते | वैसे माता-पिता का ऋण चुकाया तो नहीं जा सकता किन्तु वृद्धावस्था में उनकी सेवा-सुश्रुषा और आदर करके ऋण को कुछ कम जरूर किया जा सकता है | इस कहानी के दो वृद्ध पात्रों के माध्यम से लेखक वर्तमान के समाज और हर घर के बुजुर्गों की कहानी को प्रस्तुत करते हैं |

2.2.6 'फिर लौटते हुए' (2003)

राकेश वत्स द्वारा रचित उपन्यास 'फिर लौटते हुए' 2003 ई. में प्रकाशित हुआ है | यह उपन्यास दिवाकर शर्मा नामक वृद्ध पात्र के इर्द-गिर्द घूमता है | वे सम्मान के साथ जीते हैं और वृद्धावस्था में भी उसी सम्मान को बचाए रखते हैं | समय के साथ मनुष्यों के मान-सम्मान और रहन-सहन के तरीकों में बदलाव आया है | यह बदलाव दिवाकर शर्मा के पारिवारिक सदस्यों में भी दिखाई देता है | भौतिकतावादी दृष्टिकोण ने व्यक्ति की जगह वस्तुओं को ज्यादा महत्व दिया जाने लगा है | संयुक्त परिवार की जगह एक एकल परिवार लेने लगा जिसमें वृद्धों को एक बोझ की तरह माना जाने लगा | इस उपन्यास का आरम्भ में ही इसी चिंता से होता है कि घर में पिता जी के आने के बाद क्या होगा ? दिवाकर शर्मा जब अपने बड़े बेटे चंद्रमोहन के घर आते हैं तो चंद्रमोहन अपनी पत्नी से विचलित होकर कहते हैं – "अब तुम ही इस मुसीबत को देखना, मुझमें इसको झेलने की ताकत बिलकुल भी नहीं है |"(वत्स 5)

वृद्ध पिता को मुसीबत की तरह देखना वृद्धजनों के लिए सबसे बड़ी चुनौती है | घर के सदस्य दिवाकर शर्मा को एक या दो दिन तक ही रखने के पक्ष में हैं | वहीं दूसरी तरफ उनकी पत्नी लक्ष्मी को रखने में उनको कोई एतराज नहीं है | क्योंकि उन्हें पता है माँ घर के छोटे-मोटे कार्य भी कर लेगी | यहाँ देख सकते है व्यक्ति को उसकी उपयोगिता के हिसाब से मान-सम्मान मिलता है | दिवाकर शर्मा का छोटा बेटा बलबीर अपने बड़े भाई चंद्रमोहन से कहीं ज्यादा चालाक और स्वार्थी प्रवृत्ति का है | वह बड़ी चालाकी से पिता को बताए बिना गाँव की जमीन बेच देता है और पूरे घर कब्ज़ा कर देता है | पिता के लिए बनाए आश्रम को अपने नाम करके उसे बेच देता है | अपने माँ-बाप को सड़क पर छोड़ने की कोई कसर नहीं छोड़ता है | अपनी संतान के धोखे भरे व्यवहार से आहत दिवाकर शर्मा अस्पताल के बाहर गरीबों की मदद का काम करने लगते हैं | धीरे-धीरे बहुत सारे अवकाश प्राप्त बुजुर्ग उनके साथ इस काम में जुड़ जाते हैं | समाजसेवी होने के कारण उनके हृदय का इलाज अस्पताल अपने पैसों से करता हैं | लेखक ने इस उपन्यास में वृद्धों को बोझ समझने की मानसिकता और बच्चों के द्वारा धन-संपत्ति के लिए अपने माँ-बाप को प्रताड़ित करना को बड़े गहराई के साथ चित्रित किया है | इस उपन्यास के माध्यम से लेखक ने वृद्धों को सक्षम होने तथा समाजसेवी बनने की नई राह भी दिखाई है | ऐसा करने से वृद्धों का खाली समय व्यतीत होता है इसके साथ परिवार और समाज में उनकी इज्जत व सम्मान बढ़ता है |

2.2.7 'रेहन पर रग्घू' (2008)

काशीनाथ सिंह का उपन्यास *'रेहन पर रग्घू'* 2008 ई. में प्रकाशित हुआ | यह उपन्यास हमारी सांस्कृतिक परम्परा, जीवन मूल्यों और आदर्शों के अवमूल्यन की महागाथा है | उपन्यास का नायक रघुनाथ एक महाविद्यालय में प्राध्यापक होने के साथ-साथ किसान भी है | रघुनाथ के दो बेटे संजय और धनंजय तथा एक बेटी सरला है | तीनों ही शिक्षित हैं | बड़ा बेटा अमेरिका में सॉफ्टवेयर इंजीनियर बन चुका है | बेटी एक शिक्षिका बन चुकी है | छोटा बेटा नोएडा में एमबीए कर रहा है | हर माता-पिता चाहते हैं उनके बच्चे एक अच्छी जिन्दगी जीयें इस लालसा में वे अपने सपनों की बलि चढ़ा देते हैं | रघुनाथ अपने तीनों बच्चों को पढ़ाने-लिखाने में घर की खेती ही नहीं पूरा जीवन 'रेहन' पर रख देते हैं | सारा कथानक रघुनाथ के इर्दगिर्द घूमता है | भरा-पूरा परिवार के बावजूद भी रग्घू परिवार के लिए तरस रहा है | वह परिवार के लिए जी रहा है लेकिन परिवार उसके लिए नहीं जीना चाहता है | रग्घू के दोनों बेटों का उनके प्रति कोई लगाव नहीं है | इकहत्तर साल के रग्घूनाथ को उम्र के इस पड़ाव में अपनों के साथ की सबसे ज्यादा आवश्यकता है लेकिन वे एकदम अकेले हैं | बड़ा बेटा संजय पढ़-लिखकर अमेरिका चला जाता है और बिना माता-पिता को बताए शादी कर लेता है | रघुनाथ और घर वाले चाहते थे कि संजय की शादी रघुनाथ के महाविद्यालय के मैनेजर और पूर्व विधायक की बेटी से हो | लेकिन संजय सक्सेना सर की बेटी सोनल से विवाह करने का निर्णय लेता है क्योंकि सोनल से विवाह करने के पश्चात वह अमेरिका जा सकेगा | अमेरिका जाने का लालच पाकर संजय सोनल से विवाह कर लेता है | पिता को बिना बताए, उनकी इच्छा, मान-मर्यादा, उनके द्वारा दिए वचन की परवाह किए बिना विवाह करके अमेरिका चला जाता है | बेटे के विवाह से रघुनाथ को अपने कालेज के मैनेजर से अपमानित होना पड़ता है साथ ही उसे नौकरी से भी निकाल दिया जाता है | बड़े बेटे संजय के कारण रघुनाथ का अंतर्मन व्यथित हो जाता हैं | रग्घू ने ऐसी जगह जाना बंद कर दिया जहाँ दो-चार लोग बैठे हों | उन्होंने मान लिया था कि दो बेटों में से एक बेटा मर गया है | जब माँ-बाप की प्रतिष्ठा की चिंता नहीं तो मरा ही समझिए !" (सिंह 24) आज हमारे समाज में परिवार

के सदस्यों के बीच कोई संवाद नहीं हो रहा | संवाद हीनता का परिणाम है की घर के मुखिया की इज्जत, मर्यादा, प्रतिष्ठा और उनकी सहमति की कोई अहमियत नहीं रह गई | रघुनाथ के तीनों बच्चों ने अपने लिए नया मार्ग तलाश लिया था | उनकी बेटी सरला जिसको पढ़ा-लिखा के इस काबिल बनाया कि सर उठा के चल सके | रग्घू चाहता उसकी संतान शिक्षित के साथ-साथ संस्कारित भी हों | लेकिन उनकी बेटी पिता की इच्छाओं के विरुद्ध व्यवहार करती है | वह शहर में अपने अध्यापक कौशिक सर के प्रेम जाल में फंस जाती है | वह अपने आपको अधिक आधुनिक दिखाने के लिए अपनी इच्छाओं को तृप्त करने में लग जाती है | इधर उसका बुजुर्ग पिता बेटी की शादी को लेकर शहर-शहर रिश्ता ढूंढता फिर रहा था | वे चाहते थे बेटी को अच्छा रिश्ता मिले परन्तु उन्हें कई जगह से ताने मिलते थे कि उनके बड़े बेटे ने बिरादरी से बाहर विवाह किया है | एक वृद्ध पिता के लिए अपनी जवान बेटी को अच्छा रिश्ता ढूँढना दुरूह कार्य है | बेटी सरला ने अपने पिता को उसकी शादी के लिए दर-दर भटकते देखा तो उसने स्वयं अपनी शादी का प्रस्ताव पिता को दे दिया | उसने अपनी शादी एक चमार लड़के से कराने की सलाह दी जो एस.डी.एम. के पद पर तैनात था | इस सलाह ने पिता की परेशानी और बेचैनी बढ़ा दी | उसने आकाश की और दोनों हाथ उठाए – "हे भगवान ! यह क्या कर रहे हो मेरे साथ ! लाला एक गनीमत थी लेकिन अब ? मैं क्या करूँ ? किसे मुंह दिखाऊँ ?" (सिंह 52) यहाँ तक कि उन्होंने बेटी को घर से बाहर तक जाने को कह दिया -उसके बाद लौटकर कभी पहाड़पुर मत आना ! अपना थोबड़ा मत दिखाना ! यह याद रखो! कोई जरूरत नहीं तुम्हारी ! मर गए माँ-बाप !" (सिंह 53) मनुष्य अपने बच्चों से कई उम्मीदें पालकर बैठता है | वह चाहता है उसके बच्चे उम्र की इस अवस्था में उनका सहारा बने | यहाँ तो रघुनाथ के साथ सब कुछ विपरीत होता है | बड़े बेटे की तरह बेटी सरला ने भी बिरादरी के बाहर शादी के लिए बगावत कर दी | बच्चों की मनमर्जी ने रघुनाथ का सुकून छीन लिया था | "रघुनाथ कई रातों तक सो नहीं सके ! उन्हें नींद नहीं आ रही थी ! जाने किन जन्मो का पाप था जो इस जन्म में भोग रहे थे | बच्चों को ऐसे संस्कार कहाँ से मिले यह उनकी समझ से बाहर था |" (सिंह 54) रघुनाथ अपनी व्यथा किससे कहे, किससे अपना दर्द बांटे | उसके सारे फैसले बच्चे अपनी इच्छानुसार लेने लग गए | रघुनाथ का छोटा लड़का धनंजय बेरोजगार है | उसे घर का वातावरण रास नहीं आ रहा इसलिए वह भी घर छोड़कर चला जाता है | वह एक ऐसी स्त्री के साथ रह रहा था जिसका पहले से एक बच्चा था | रघुनाथ पत्नी के साथ रहते हुए भी अकेला महसूस करने लगा | उसे तीन-तीन बच्चों के होते हुए भी यह लगने लगा कि वे निःसंतान है | रघुनाथ अपनी पत्नी से कहता है – "शीला, हमारे तीन बच्चे हैं लेकिन पता नहीं क्यों, कभी-कभी मेरे भीतर ऐसी हूक उठती है जैसे लगता है- मेरी औरत बाँझ है और मैं निःसंतान पिता हूँ ! माँ और पिता का सुख नहीं जाना हमने ! हमने न बेटे की शादी देखी, न बेटी की ! न बहू देखी, न होने वाला दामाद देखा | हम ऐसे अभागे माँ-बाप हैं जिसे उनका बेटा अपने विवाह की सूचना देता है और बेटी धौंस देती है कि इजाजत नहीं दोगे तो न्यौता नहीं दूंगी |" (सिंह 89) वृद्ध रघुनाथ अपनी संतान से जो उम्मीदें पालकर बैठता है सब उसका विपरीत होता है | रघुनाथ की पत्नी शीला कहती है – "सारे दुःख इसी बुढ़ापे में देखने पड़े थे क्या ? एक बेटा परदेस में, पता नहीं कब आएगा; दूसरा यहाँ लेकिन उसका भी वही हाल | बल्कि उससे भी ख़राब ! न कोई देखने वाला, न सुनने वाला !जाने किस मनहूस की नजर लग गई इस घर को ?" (सिंह 90) जब वृद्ध माता-पिता की संवेदनाओं को अपनी संतान न समझे तो समाज कहाँ समझने वाला | रग्घू के लिए गाँव में रहना असुरक्षित हो गया है | अपने रिश्तेदार ही उनकी संपत्ति पर नजर गड़ाए बैठे है | रग्घू का भतीजा नरेश उनकी जमीन पर कब्ज़ा कर लेता है | रग्घू के विरोध करने पर उन्हें धक्का देकर गिराया जाता है साथ ही गालियाँ और हाथ उठाने

की कोशिश भी की जाती है | सब तमाशबीन बनकर देखते रहते है कोई उनकी मदद नहीं करता है | यह समाज कैसा बनता जा रहा है जिसमें रिश्तों की मर्यादाएं तथा नैतिकता का कोई मूल्य नहीं रह गया है | गाली-गलौज और मारपीट की घटना ने उन्हें अंदर तक उद्वेलित कर दिया | बाप-दादा से विरासत में मिली जमीन की रखवाली न कर पाने का मलाल भी उनके चेहरे पर साफ़ दिख रहा है | वे अपने बच्चों को इस विषय में कुछ नहीं बताना चाहते थे लेकिन पत्नी के कहने पर वे जब अपने छोटे बेटे को फोन करते है तो उनका बेटा कहता है – "क्यों मरे जा रहे हैं जमीन को लेकर ? (सिंह 84) बच्चों से बात करने के बाद उनकी प्रतिक्रिया रग्घू को अंदर तक झकझोर देती हैं –

> "जाने कहाँ से इतने नालायक और निकम्मे लड़के पैदा हो गए-साले ! पिछले जन्म के पाप ! मैंने तीस-पैंतीस साल नौकरी की, लाखों कमाए और आज हाथ में एक पैसा नहीं ! इस हाथ आए, उस हाथ गए | पूछो कि कहाँ गए तो नहीं बता सकता और यह जमीन ? आज भी जहाँ की तहाँ है ! रत्ती भर भी टस से मस नहीं हुई अपनी जगह से ! इसने तुम्हारे आजा को खिलाया, दादा-परदादा को खिलाया, बाप को खिलाया, तुम्हें खिलाया, यहीं नहीं, तुम्हारे बेटों और नाती-पोतों को भी खिलाएगी ! तुम करोड़ों कमाओगे लेकिन रुपया और डॉलर नहीं खाओगे |" (सिंह 85)

रग्घू दो बेटों और एक बेटी के होते हुए भी अकेला महसूस करते हैं | बेटों और बेटी की जगह उनकी बड़ी बहू सोनल उनकी खैर लेती है | सोनल जो अमेरिका से बनारस वापस आई है | वह यहीं बनारस में प्रोफेसर बन गई है | सोनल के पिता उससे कहते है – " सजूँ के मम्मी-पापा को बुला लो, वे काम आएंगे | घर भी देखेंगे और तुम्हारी भी मदद होगी ?" (सिंह 107) सोनल अपने सास-ससुर रघुनाथ और शीला को अपने यहाँ बुला लेती है | रघुनाथ दुविधा में पड़ जाता है बेटा अमेरिका में तो बहू के पास कैसे रहने जाए | रघुनाथ अपने मन की शंका को व्यक्त करते हैं – "तुम समझती क्यों नहीं ? सोनल बहू है लेकिन घर बहू का है, हमारा नहीं | किस हैसियत से जाऊं मैं ? मेहमान बनकर ? किराएदार बनकर ? किस हैसियत से ?" (सिंह 93) दोनों बुजुर्ग लोकलाज और कुछ दिन गाँव से दूर जाने के मकसद से बहू के घर चले जाते हैं | दोनों का परिचय पहली बार अपनी बहू से हुआ है, जो काफी सुंदर, संस्कारी और देखभाल करने वाली है | लेकिन एक दिन नौकरानी को भोजन खिलाने को लेकर सास-बहू में वैचारिक मतभेद हो जाता है | शीला को लगता है कि नौकरानी भी तो मनुष्य है उसे कुछ खिला दिया तो क्या हो गया | बहू से मतभेद के कारण वह बनारस छोड़ने का निर्णय करती है | रघुनाथ थोड़ा संयम दिखाते है वह नहीं चाहते थे कोई बड़ा विवाद हो इसलिए वे वहीं रुक जाते हैं | शहर में रहकर रग्घू की जिन्दगी भी धीरे-धीरे शहरी होती गई | वे सुबह-सुबह रोज सैर पर जाने लगे | एक सुबह उन्होंने जो देखा वह उन्हें विचलित कर देता है | "उस सुबह ध्यान गया पार्क की ओर आते एक बूढ़े की ओर लकवे का मारा हुआ, मुंह टेढ़ा, गर्दन बेकाबू, बायाँ बाजू झूलता हुआ असहाय, घिसटता हुआ बेबस पाँव, दूसरी गली से निकलता एक दूसरा बूढ़ा जिसकी एक आँख खुली और दूसरी पर हरी पट्टी, उसके पीछे एक और बूढ़ा जिसके गले में कालर यानी, स्पांडीलाइटिस का पट्टा, तीसरी गली से भी एक बूढ़ा आ रहा है पार्क की गेट की तरफ धीरे-धीरे | उसके एक हाथ में बोतल है और ट्यूब लुंगी के अंदर |" (सिंह 125) शहर में कराहते बुजुर्गों की स्थिति देखकर रग्घू व्यथित हो जाते है | शहर में ऐसी अनेक कॉलोनियाँ थी जहाँ केवल बूढ़े ही थे | अशोक विहार उन्हीं में से एक थी –

> "जब कालोनी तैयार हुई तो पाया गया कि यह बूढ़ों की कालोनी है ! ऐसे बूढ़े-बुढ़ियों की जिनके बेटे-बेटी अपने बीवी और बच्चों के साथ परदेस में नौकरी कर रहे हैं- कोई कोलकाता है, तो कोई दिल्ली, कोई मुंबई तो कोई बंगलौर और कइयों के तो विदेश में |" (सिंह 104)

इस भौतिकतावाद में हर एक व्यक्ति अकेला है क्योंकि इसने मनुष्य को वस्तु में बदलकर उसे इस्तेमाल की चीज बना दिया है | वर्तमान में बुजुर्गों के प्रति संवेदनहीनता देखी जा रही है | इस उपभोक्तावादी संस्कृति ने संवेदनाओं और संबंधों को ही समाप्त कर दिया है | यह भोगवादी संस्कृति पैसो के पीछे भागने वाली और संवेदनहीन वस्तु के रूप में हमारे सामने आ चुकी है | इस उपन्यास के अंत में जब रग्घू का भतीजा नरेश उससे जमीन के कागज़ पर हस्ताक्षर कराने के लिए कुछ लोगों को भेजता है तब रघुनाथ कहता है – "कितना दिया नरेश ने ? अस्सी हजार ? एक लाख ?..लेकिन मैं दो लाख दिला दूँ तो ?" (सिंह 162) रघुनाथ दो लाख का लालच दे कर स्वयं का ही अपहरण करवाते है सिर्फ यह देखने के लिए उसकी कोई संतान बूढ़े पिता के लिए इतना पैसा खर्च कर सकता है या नहीं | 'रेहन पर रग्घू' वृद्धावस्था की विवशता का दस्तावेज है | जिस प्रकार रहन पर रखी जमीन या वस्तु का अपना कोई वजूद नहीं होता उसी प्रकार बुढ़ापा भी रेहन के समान है | संस्कारों का अवमूल्यन, अपनों से हरने का दुःख तथा बुजुर्गों की व्यथा इस कथा के मूल में है | इस उपन्यास में पढ़े-लिखे वर्ग का पलायन और अपने बुजुर्गों के प्रति अधिक संवेदनहीन होने तथा वृद्धों के अकेलेपन का मार्मिक चित्रण किया गया है |

2.2.8 आखिरी मंजिल (2008)

रवीन्द्र वर्मा द्वारा रचित उपन्यास '*आखिरी मंजिल*' वर्ष 2008 ई. में प्रकाशित हुआ | यह उपन्यास भी वृद्धावस्था के दंश को केंद्र में रखकर लिखा गया है | इस उपन्यास में वृद्ध पात्र माधव दयाल के जीवन में 'आखिरी मंजिल की अपूर्णता' को चरितार्थ किया गया है | जीवन में व्यक्ति की अभिलाषा का अंत नहीं है वह अपने अंतिम समय तक कुछ न कुछ पाना चाहता है | माधव दयाल अपनी अंतिम अभिलाषा को पूर्ण करने के लिए आखिरी मंजिल की तलाश में रहता है | इस उपन्यास में माधव दयाल के माध्यम से वर्तमान समाज में बदलते साहित्यिक समीकरणों और परिवर्तित जीवन मूल्यों को प्रस्तुत किया है | पचहत्तर वर्षीय माधव दयाल लखनऊ के प्रतिष्ठित, वरिष्ठ लेखक है | माधव दयाल अकेले रहते हैं और अपने लेखन कार्य में व्यस्त रहते हैं | उनका और उनकी पत्नी मधु का तलाक वर्षों पहले ही हो चूका था | उनकी बेटी सुनन्दा का विवाह हो चूका है | माधव दयाल ने गृहस्थ जीवन की अपेक्षा समाज सेवा को महत्व दिया और अकेले जीवन बिताने का निर्णय लिया परन्तु वृद्धावस्था में आकर उन्हें अपने अकेले पन का अहसास होता है | वृद्धावस्था में शारीरिक अक्षमता के कारण प्रायः सभी वृद्ध एक जैसी अवस्था में पहुँच जाते हैं | "माधव दयाल को भी यही लगा कि उनकी उम्र में पहुँचकर सारे बूढ़े एक-से लगते हैं, पालनों में बच्चों की तरह | क्या इसलिए कि जिन्दगी की शुरुआत और अंत एक ही तरह से होता है | (वर्मा 92) माधव दयाल जीवन के अंतिम पड़ाव पर आकर भी अभिलाषा की डोर से बंधे है | उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया जा चूका है | अब वे ज्ञानपीठ पुरस्कार पाने के लिए लालायित व प्रयासरत है | लेकिन जब उन्हें पता चलता है इस वर्ष का ज्ञानपीठ पुरस्कार मदन मोहन को मिला है | तब वे जोर-जोर से रोते हैं | माधव दयाल ने ज्ञान पीठ के लिए बहुत मेहनत की थी, लोगों से दूर रहे, फोन से दूर रहे, परिवार से दूर रहे तब जाकर उन्होंने अपनी

लम्बी कविता को पूरा किया | जिस दिन मदनमोहन का सरकारी अभिनंदन होना था, उसी शाम माधव दयाल पार्क में अकेले मध्य रात्रि तक बैठे रहे और अगली सुबह उन्हें अपने पलंग पर मृत पाया गया | माधव दयाल ने जीवन भर संघर्ष किया, लोगों की सेवा की परन्तु साहित्य में राजनीतिक विचारधारा के प्रवेश से मदन मोहन जैसे लोग काबिल न होते हुए भी सम्मान प्राप्त कर लेते हैं | माधव दयाल की आखिरी मंजिल उन्हें नहीं मिलती तब वे संसार से अलविदा ले लेते हैं | जीवन में कुछ पाने की इच्छा करना सही है परन्तु उसके न मिल पाने पर निराश होना गलत |

2.2.9 'चार दरवेश' (2011)

हृदयेश द्वारा रचित उपन्यास *'चार दरवेश'* वर्ष 2011 ई. में प्रकाशित हुआ है | *'चार दरवेश'* उपन्यास में लेखक ने वृद्धावस्था की दहलीज पर खड़े चार वृद्धों का कारुणिक जीवन को उजागर किया है | रामप्रसाद गुप्ता, दिलीप चंद, शिवशंकर तथा चिंताहरण शर्मा इन चार वृद्धों की समस्याओं को बड़े संवेदशील ढंग से उठाया है | उपन्यासकार ने इन चार वृद्धों को चार दरवेश कहा है | दरवेश का अर्थ फकीर, भिखारी व मांगने वाला आदि होता है | वृद्धावस्था में मनुष्य की स्थिति भी माँगने वाले जैसी ही होती है | चार वृद्धों के माध्यम से भारतीय परिवार और समाज में बुजुर्गों की दशा का चित्रण किया गया है | सभी वृद्धों का अपना-अपना परिवार है | सभी की पारिवारिक समस्याएं भी अलग-अलग है लेकिन नियति एक ही जैसी है | ये सभी थके-हारे, टूटे हुए अपनों के बीच अजनबीपन, उपेक्षा और अपमान की पीड़ा भोग रहे हैं | ये सभी वृद्ध एक दूसरे के घर नहीं जाते हैं बल्कि शहर से बाहर सड़क की एक पुलिया पर मिलते हैं | आज के समाज की सच्चाई जो व्यक्ति किसी समय घर का मुखिया वह आज अपने दोस्तों को अपने घर पर मिलने की बजाए पुलिया पर मिलने को विवश है |

इस उपन्यास के पहले वृद्ध रामप्रसाद गुप्ता जो पहले मुनीमगीरी का काम करते थे | उनकी पत्नी की मृत्यु हो चुकी है | वे अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए अपनी बेटी और दामाद को अपने घर पर साथ रहने के लिए बुला लेते है | उनके साथ रहने पर भी उनका अकेलापन दूर नहीं होता | बल्कि उन्हें अपने साथ घर में रखकर मुसीबत मोल ले लेते है | बेटी और दामाद की नजर उनके घर पर थी | रामप्रसाद अपने खुद के घर से कब पराये हो गए और मेजबान से मेहमान कब बन गये इसका पता ही नहीं चला | अपने ही घर में अपनी इच्छानुसार कुछ नहीं कर सकते थे | किचन में जा नहीं सकते थे, चाय बिना शक्कर के पीनी पड़ती, टी.वी. खराब और बल्ब फ्यूज होने पर ठीक करवाने वाला कोई नहीं | रामप्रसाद को अपनी मरी हुई पत्नी हरदम याद आने लगी | उनकी पत्नी की मृत्यु के बाद जमाई बार-बार उनका अपमान करने लगा | दामाद तो दामाद, बेटी भी उनकी उपेक्षा करती है | एक बार उनके कमरे का बल्ब फ्यूज हो जाता है तो वह बेटी से कहते हैं | बेटी जब इस बारे पति से कहती है तो बड़े अपमानजनक ढंग से कहते है –

> "तेरा बाप हरदम ततैया मिर्च बना रहता है | शिकवा-गिला ले अलावा कुछ जानता नहीं | वह भी तो घर से बाहर निकलता है | साँझ को जब बैठकबाजी से लौटता है तब किसी बिजली वाली दुकान से क्यों नहीं बल्ब ले लेता है | सो क्यों ? अपनी टेंट से दस-बारह रुपए जो ढीले करने पड़ेंगे | बुड्ढा चालाक कौवा है |" (हृदयेश 16)

ऐसी बाते सुनकर उसके दिल को बहुत ठेस पहुँचती है | रामप्रसाद सारा अपमान झेलकर भी अपने ही घर में बेटी और दामाद के साथ परायों की जैसे रहने को मजबूर है | उनकी विवशता तब छलकती है जब वह रात को अकेले में अपनी मृत पत्नी से रोते हुए बातें करते हैं |

> "उन्होंने पत्नी के फोटो की ओर दोनों हाथ जोड़ दिए | वह रोने लगे | समझ में नहीं आता करूँ मैं क्या ? तुम थी तो इतनी घबराहट नहीं होती थी | | इतनी बेचैनी मुझे नहीं सताती थी |.. मैं तुम्हारा न होना बहुत महसूस कर रहा हूँ | तुमको मुझे छोड़कर नहीं जाना चाहिए था | हम दोनों को साथ मरना था |" (हृदयेश 120)

परिवार में यदि वृद्ध दंपति साथ हो तो समस्या थोड़ी कम होती है | पर यदि दोनों में से किसी एक की मृत्यु हो जाए तो दूसरे की जिन्दगी जीना मुश्किल हो जाता है | रामप्रसाद की बड़ी दुखद मृत्यु होती है | जब रामप्रसाद को कुत्ते ने काट लिया तब उनकी बेटी और दामाद ने उन्हें रेबीज का इंजेक्शन लगवाना जरूरी नहीं समझा ताकि फिजूलखर्ची न हो | रेबीज के जहर से तड़प-तड़प कर उनकी मौत हो जाती है | लेकिन देखा जाए तो यह मौत नहीं बल्कि बेटी और दामाद द्वारा की गई हत्या है | लेखक इस मौत पर कहते है – "कुत्ता काटने से पैदा रेबीज से पहले उनको अपने बेटी दामाद के काटे से पैदा रेबीज हो चुका था | अपनों के काटे से पैदा रेबीज की पीड़ा ज्यादा तकलीफदेह होती है, असह्य बनती किस्म की और व्यक्ति अपनी मृत्यु की कामना करने लगता है | रामप्रसाद मानसिक रूप से पहले ही मृत हो चुके थे, शारीरिक रूप से बाद में हुए |" (हृदयेश 143) हमारे समाज में वृद्धों की सेवा न करने पर बेटों को भला-बुरा कहा जाता है | परन्तु यहाँ एक बेटी ही अपने पिता के दर्द को समझ नहीं पाती है | अपने पति के साथ मिलकर अपने देवता समान पिता का अपमान करती है | एक बेटी का ऐसा रूप देखकर लगता है पिता के लिए प्यार, संवेदना, इंसानियत और मानवीय मूल्यों से उसका कोई लेना-देना नहीं |

उपन्यास के दूसरे वृद्ध दिलीप चंद पढ़े-लिखे धनवान परिवार से थे | वे सप्लाई इंस्पेक्टर के पद से सेवानिवृत्त हो चुके थे | जिसके कारण वे देश-दुनिया के बारे अधिक जागरूक थे | उनके जीवन में बेटे-बहू की प्रताड़ना नहीं थी | उनकी जीवन कथा थोड़ी अलग है | वे सीधे-सादे स्वभाव के कारण हमेशा ठगे जाते हैं | जब दिलीपचंद का विवाह हुआ तो उसकी पत्नी उसे बताती की वो किसी और से प्रेम करती है और उसके पास जाने की अनुमति मांगती है | दिलीपचंद ने उसे जाने की अनुमति तो दे दी पर खुद आजीवन शादी नहीं करते हैं | दूर का रिश्तेदार रामचंद्र उन्हें अपना जमानतदार बनाकर धोखा देते हैं | मुख्य बाजार में उन्होंने पुश्तैनी दुकानों को किराए पर दे रखा था इनमें कई किराएदार बरसों से बिना कराया बढ़ा के दुकानें चला रहे थे | कोई समय पर पैसा नहीं देते | एक किराएदार ने तो दुकान ही हड़प ली | जिसके कारण कोर्ट-कचहरी, वकील व पुलिस के झंझट में पड़ना | आए दिन समाचार-पत्रों में बुजुर्गों के प्रति अपराध की खबरें उन्हें भयभीत करती है | वे वृद्धावस्था में हर जगह असहाय और अकेलापन महसूस करते हैं | अपने घर और जीवन के खालीपन से भयभीत होकर वे खुद को बेसहारा समझने लगते हैं | अकेलेपन से लड़ते-लड़ते वह अपनी हिम्मत खो देते हैं | इसलिए अपने जीवन से तंग आकर पलायन करते हुए आत्महत्या की ओर बढ़ जाते हैं |

उपन्यास के तीसरे वृद्ध पढ़े-लिखे शिवशंकर हैं | वे इंटर कॉलेज से बाबू के पद से सेवानिवृत्त हुए हैं | सेवानिवृत्त होने के बाद पश्चात वे होम्योपैथिक दवाओं से लोगों का निशुल्क इलाज करते हैं | बेटा उनको होम्योपैथिक दवाओं के लिए पैसे लेने का सुझाव देते हैं लेकिन वे हर बार टाल जाते हैं | शिवशंकर का एक बेटा और दो बेटियाँ है | बेटा प्रवक्ता होने के बावजूद निजी स्कूल खोलने के लिए अपने पिता के पुश्तैनी मकान को बेच देते हैं | पिता को अपने साथ रहने के लिए मना लेते हैं | शिवशंकर बेटे की बातों में आकर अपना घर बार बेचकर अपने बेटे के पास अपनापन पाने की उम्मीद लिए रहने चले जाते हैं | अब शिवशंकर पूरी तरह अपने बेटे पर आश्रित हो जाते हैं | बेटे के घर आकर वे अकेले पड़ जाते हैं | उन्हें महसूस होने लगता है कि उन्होंने बेटे के घर आकर गलती कर दी है | इस पीड़ा का जिक्र वे अपने मित्र चिंताहरण से करते हैं |

> "एक पत्र में उन्होंने लिखा कि दो बार उनको सपने में रामप्रसाद गुप्ता दिखाई दिये | सपने में गुप्ता जी कह रहे थे कि उन्होंने बेटी-दामाद को अपने घर में रखकर गलती की | भाई शिवशंकर वही गलती आपने अपना घर बेचकर बेटे के पास रहना स्वीकार करके की |" (हृदयेश 153)

वृद्धावस्था की लाचारी और संतान मोह के कारण वे कुछ नहीं कहते | बेटे के घर में उनका दम घुटने लगा था | ऐसी स्थिति में वे अपने बेटे के घर ज्यादा नहीं रहना चाहते थे | अंत में उनका ठिकाना वृद्धाश्रम बन जाता है | कुछ दिनों बाद शिव शंकर का फोन 'स्विच ऑफ' से 'डज नॉट एक्सिस्ट' आने लगा | उनके फ़ोन नम्बर का अस्तित्व नहीं रहने का अर्थ स्पष्ट है कि शायद अब इस दुनिया में उनका भी अस्तित्व नहीं रहा |

उपन्यास के चौथे वृद्ध चिंताहरण शर्मा भरे-पूरे परिवार में भी अकेले हैं | उनके दोनों बेटे उनसे कुछ भी विचार-विमर्श करना उचित नहीं समझते थे | बेटे उनसे दूरी बना के रखते थे | पिता-पुत्र के बीच कोई संपर्क न होने के कारण अजनबीपन है | लेखक इस अजनबीपन वाले रिश्ते का वर्णन करते हुए लिखते है –

> "एक ही घर में रहते हुए भी बेटा उनसे दूरी बनाए रखता था | और वह भी उससे दूरी बना के रखते थे | दोनों की स्थिति घड़ी के उन दो सुइयों की भांति थी, जो एक-दूसरे से जुड़ी होने के बावजूद फासला बना कर चलती हैं और बीच में कभी-कभी मिलती भी हैं तो यह मिलना ना मिलना जैसा होता है |" (हृदयेश 33)

जब चिंताहरण के पोते अतुल का अपहरण हो जाता है तब उनका बेटा रघुनाथ बिना उनसे चर्चा किए अपहरणकर्ताओं को मांगी हुई रकम देकर अपने बेटे को छुड़वा लाते हैं | इससे विपरीत जब कुछ बदमाशों द्वारा चिंताहरण का अपहरण किया जाता है | तब नई पीढ़ी – फिरौती में एक करोड़ की माँग की जाती है | परन्तु दोनों बेटे अपने बाप के लिए पैसे देने को तैयार नहीं है | दोनों बेटे उन्हें छुड़ाने में न कोई रुचि दिखाते हैं न ही कोई प्रयास करते हैं | जब रघुनाथ का बेटा मुसीबत में था तब वह सब कुछ करने के लिए तैयार था पर जब यही स्थिति बाप के साथ आती है तब बेटा स्वार्थ ही देखता है | उनके लिए अपने पिता का न कोई महत्व था और न ही कोई विशेष आवश्यकता थी | बच्चों के मन में उनके प्रति न कोई लगाव था और न ही कोई सम्मान |

इस उपन्यास में ऐसे कई गौण वृद्ध पात्र भी है जो अपनों की उपेक्षा व प्रताड़ना के शिकार है | जिसमें दिलीप चंद की विधवा मौसी है | जो अपने बच्चों द्वारा उपेक्षित और तिरस्कृत है | दिलीप चंद उसे अपने घर में शरण देता है | बूढ़ी विधवा मौसी की तरह एक पोस्टमास्टर की विधवा भी है | उसके बच्चे भी उसे प्रताड़ित करते है | वे उसकी सारी पेंशन हड़प कर लेते हैं | जब वे घर से बाहर जाते है तो घर में ताला लगाकर जाते हैं कि कहीं बुढ़िया घर से कुछ निकलकर खा न लें | लाचार बुढ़िया अपने कष्टों का अंत आत्महत्या करके समाप्त कर लेती है | थावरमल सिन्धी अपने पिता टावरमल सिन्धी के जीवित रहते उनका समुचित इलाज नहीं करवाते | लेकिन उनकी मृत्यु के पश्चात उनके नाम पर दान करने का दिखावा करता है | इसी तरह एक पुत्र अपने नौकरीशुदा पिता को जहर दे देता है ताकि उसकी नौकरी का लाभ खुद ले सके | इन सभी प्रसंगों के माध्यम से स्वार्थी खून के रिश्तों व संबंधों पर चोट किया है |

2.2.10 'दाखिल ख़ारिज' (2014)

रामधारी सिंह 'दिवाकर' द्वारा रचित उपन्यास *'दाखिल-ख़ारिज'* में बेटे-बहुओं द्वारा पिता व ससुर के शोषण का दृश्य चित्रित किया गया है | जहाँ माँ-बाप अपने बच्चों के हर सुख-दुःख में उनके साथ खड़े रहते हैं | उनकी हर छोटी-बड़ी ख्वाहिशों को पूरा करते हैं | इस उपन्यास का पात्र डॉ. बनर्जी भरे-पूरे परिवार में अकेले और असहाय थे | लेखक लिखते हैं - "चार साढ़े चार महीने पहले ...| बहुत दयनीय दिखे थे डॉक्टर बनर्जी, बेटों-बहुओं और पोते-पोतियों से भरे परिवार में एकदम अकेले निस्सहाय |" (दिवाकर 27) डॉ. बनर्जी के दोनों बेटे बेरोजगार निकम्मे हैं | डॉक्टर बनर्जी के क्लिनिक से घर का खर्चा चलता है | उनके बच्चे बूढ़े कमजोर शरीर को कमाई की मशीन समझते हैं | आज के युवा वृद्धों की दशा के प्रति संवेदन हीन होते जा रहे हैं | "बाहर ले जाने में खर्च होगा न सर, हार्ट का आपरेशन कराना होगा | दो तीन लाख खर्च होंगे | फिर कुछ महीनों तक क्लिनिक बंद रहेगी रोज-रोज होने वाली आमदनी भी गई |" (दिवाकर 30) माँ-बाप अपने बच्चों के बीमार होने पर चिंतित हो जाते हैं और उनके इलाज करवाने के लिए खुद को भी दांव पर लगा देते हैं | वहीं बच्चे अपने बूढ़े माँ-बाप के इलाज का खर्च नहीं उठाना चाहते हैं | यहाँ तक डॉक्टर बनर्जी को खाना भी अच्छा नहीं मिलता | डॉक्टर साहब खाने के लिए मछली मांगते है तो बड़ी बहू जहर उगलने लगती है | "सोचा नहीं जा सकता कि राजकुमारों जैसे पले बेटे बूढ़े बाप की ऐसी दुर्दशा कर सकते हैं |" (दिवाकर 32) जो माँ-बाप अपने बच्चों को राजकुमारों की तरह पालते हों उनके बच्चे जब अपने पिता के खाने और इलाज के लिए तड़पाए तो ऐसी औलाद होने से तो अच्छा है कि औलाद ही न हो | इस कथा के अंत में डॉक्टर बनर्जी बिना इलाज के दुनिया छोड़ देते हैं | तो उनकी बड़ी बहू का रोना-बिलखना ऐसा प्रतीत होता है जैसे कि वह अपने ससुर से अत्यधिक प्रेम करती थी | "डॉक्टर बनर्जी बेंच पर मृत पड़े थे | दोनों बहुएँ पछाड़ खाकर औंधे मुंह गिर पड़ी | बड़ी बहू जोर से चीखी – माँ गो की होलो ....|" (दिवाकर 33) यह दृश्य केवल समाज को दिखने के लिए था | वास्तविकता तो यह थी कि डॉक्टर बनर्जी के निधन से उनकी जरूरतों के लिए पैसे कहाँ से आएंगे | इस तरह का दृश्य आजकल के समाज में भी दिखाई देता हैं |

2.2.11 'रिश्तों की आंच' 2016

सूरज सिंह नेगी द्वारा रचित *'रिश्तों की आंच'* उपन्यास वर्ष 2016 ई. में प्रकाशित हुआ है | *'रिश्तों की आँच'* उपन्यास में वर्तमान समय में पारिवारिक संबंधों में गिरते जीवन मूल्यों व जीवन शैली में परिवर्तन के कारण रिश्तों में आती खटास को दिखाने का प्रयास किया गया है | यह उपन्यास रामप्रसाद को केंद्र में रखकर लिखा गया है | रामप्रसाद बचपन से पढ़ने में बहुत होशियार था वह हमेशा कक्षा में अव्वल आता था | उसके पिता गिरधारी लाल उसे शहर में पढ़ाकर एक बहुत बड़ा इंजीनियर बनाना चाहते थे | एक सड़क दुर्घटना में उनकी मृत्यु के बाद रामप्रसाद के सारे सपने टूट जाते हैं | रामप्रसाद पिता की मृत्यु के बाद खुद की पढ़ाई व करियर को दांव में लगाकर छोटे भाई-बहन को पढ़ाने-लिखाने व करियर बनाने में लगा देता हैं | वह शहर में जाकर छोटी-मोटी नौकरी से शुरुआत करता है | जीवन भर संघर्षो से जूझ कर वह अपने भाई-बहन को पढ़ा लिखा कर काबिल बनाता है | रामप्रसाद अपने छोटे भाई-बहन का ख्याल एक पिता की तरह करता है | वह एक पिता की तरह अपनी बहन ममता की शादी के सारे खर्चा का जिम्मा उठाता है | लड़के वाले दहेज़ की मांग करते हैं | रामप्रसाद बहन ममता की शादी के लिए अपने जी.पी.एफ., इंश्योरेंस, साथियों से लोन ले लेता है जिनको चुकाने के लिए वह सुबह-शाम निजी कम्पनी में अकाउंटेंट का काम भी शुरू कर देता है | वह अपनी बहन की शादी में अपने सामर्थ्य से भी अधिक खर्च करता है | रामप्रसाद जब अपनी बहन को स्नेह वश आशीर्वाद के साथ विदा करने लगते है तो बहन कहती है – " क्या भैया ! इतना खर्च तो किया ही था एक कार भी दे देते तो कितना अच्छा होता |" (नेगी 48) बहन की यह बात सुनकर उसे लगा जैसे किसी ने उसे जोरदार तमाचा मारा हो | एक भाई पिता की तरह अपना सारा समय, आराम, पैसा सब कुछ लगा कर बहन की ख़ुशियों को बटोरने में लगा है लेकिन बहन को उसके बाद भी संतोष नहीं है | धीरे-धीरे समय के साथ रामप्रसाद के बहन और भाई उसके त्याग, संघर्ष व प्यार को भूल जाते हैं | रामप्रसाद के छोटे भाई रमेश की भी शहर के बड़े अस्पताल में नौकरी लग जाती है | नौकरी के कुछ दिन बाद रमेश अपने भाई से कहता है – "भाई साहब अब मैं नौकरी करने लगा हूँ | अस्पताल के मालिक की बेटी नेहा जो स्वयं भी डॉक्टर है, मैं उससे शादी करने जा रहा हूँ | अगले पाँच दिन बाद हमारी शादी है | मैं कल सुबह ही नए मकान में शिफ्ट हो जाऊँगा |"(नेगी 51) वर्तमान में इस भौतिकवादी युग में जीवन शैली और सामाजिक व्यवस्था में अप्रत्याशित परिवर्तन हुआ है | जिस रामप्रसाद ने अपने खर्चों में कटौती कर अपने भाई को पढ़ाया वह आज एकदम से शादी और कहीं शिफ्ट होने का जिक्र कर रहा है | पहले बहन ने जख्म दिए थे अब भाई ने भी कोई कसर नहीं छोड़ी | रमेश अपने स्वार्थ के कारण अपने भाई और बूढ़ी माँ को छोड़कर घर जमाई बन जाता है | रामप्रसाद के त्याग व दर्द को उसकी माँ कस्तूरी देवी समझती है | वह कहती हैं – "देख बेटा रामप्रसाद ! मैं तेरे दर्द को समझती हूँ | ममता और रमेश ने जो व्यवहार किया वह ठीक नहीं किया | तेरे त्याग को समझ न सके | खैर जाने दे वह दोनों तेरे अपने हैं |"(नेगी 59) एक माँ अपने बच्चों के दर्द को समझती हैं महसूस करती हैं | रामप्रसाद भी एक आज्ञाकारी बेटे की तरह अपनी माँ का खूब ख्याल रखता लेकिन माँ को अपने छोटे बेटे रमेश और बेटी ममता की याद आती तो अन्दर ही अंदर छटपटाती रहती है | समय के साथ रामप्रसाद का बेटा विपिन और बेटी रश्मि भी बड़े हो जाते है | वे भी अपने पिता की मजबूरियों और आर्थिक स्थिति को नहीं समझते | अपने शौक पूरे करने के लिए नई-नई फरमाइशें करते रहते हैं | वे अपने पिता को उनकी मांगे पूरी न करने पर ताने भी कसते हैं | विपिन कहता है – "देखो मम्मी ! मुझे पता था कि पिताजी हमारी माँग पूरी करने वाले नहीं है | आज पूरा एक महीना हो गया है मोटरसाइकिल की मांग किए हुए इन्होंने तो कुछ सुना ही नहीं | खुद तो यार दोस्तों के साथ देर तक गप्पें लड़ाते रहते हैं और आराम से घर आते हैं |"(नेगी 67) अपने बच्चों की इस तरह

की बातें सुन कर वे अन्दर तक हिल जाते हैं | वह सुबह ऑफिस जल्दी जाते हैं शाम को देर से आते हैं किसी ने यह तक नहीं पूछा कि वे ऐसा क्यों करते हैं कहीं कोई परेशानी तो नहीं है | एक बाप अपने बच्चों की हर ज़रूरतों को पूरा करने के लिए अपना समय, आराम, सुख-चैन सब लगा देता हैं | अपनों की ख़ुशियों के लिए अपने स्वास्थ्य को भी दाँव पर लगा देते हैं | एक बाप अपनी मजबूरियों को किसी के साथ साझा भी नहीं कर पाता | रामप्रसाद मन ही मन सोचता है – "युवा होने पर माँ-बाप द्वारा मजबूरी वश कोई माँग पूरी न की जाए तो उनकी नजर में माँ-बाप का कद क्या इस कदर गिर जाता है |"(नेगी 70) रामप्रसाद अपने जीवन में ऐसे कई उतार-चढ़ाव से गुजरता है लेकिन कभी भी अपनों की मदद करने से पीछे नहीं हटते | वह अपने बेटे के इंजीनियर की फ़ीस के पैसे से अपनी बहन के बेटे का इलाज करवाते हैं | जब उसे पता चलता है उसके छोटे भाई की मानसिक स्थिति अच्छी नहीं है तब वह घर छोड़ चुके अपने छोटे भाई रमेश की हर तरह से मदद करते हैं | वृद्धावस्था में उसके भाई-बहन व बच्चे अपने दायित्वों को भूल जाते हैं परन्तु माँ-बाप सब कुछ जानते हुए भी उनसे कभी कोई मन मुटाव नहीं रखते | रामप्रसाद अंत तक परिवार के बिखराव को रोकने, धन के आगे अंधी हो चुकी बहन की मदद करने, घर छोड़ चुके भाई को वापिस लाने, भटक चुकी नई पीढ़ी के युवाओं को रास्ते में लाने का प्रयास करते दिखाई देते हैं | वह खुद संघर्षों से जूझते हुए भी अपनी माँ, बहन-भाई, बेटे-बेटी सभी को साथ लेकर चलते हैं | यह उपन्यास माता-पिता एवं संतान के रिश्तों को आधार बनाकर लिखा गया है | इसमें यह बताया गया है कि किस प्रकार माता-पिता अपना सम्पूर्ण जीवन अपने बच्चों के हित में लगा देते हैं | जब वही माँ-बाप वृद्ध हो जाते हैं तब बच्चे उनके प्रति अपने कर्तव्य और दायित्वों को भूल जाते हैं |

2.2.12 'शाम की झिलमिल' (2017)

गोविन्द मिश्र द्वारा रचित रचित उपन्यास *'शाम की झिलमिल'* वर्ष 2017 ई. में प्रकाशित हुआ | *'शाम की झिलमिल'* का अर्थ यहाँ पर मृत्यु के अंधकार से पहले की रोशनी से है | लेखक अपने जीवन के अंतिम पड़ाव में सुख के पल बिताना चाहता है | इस उपन्यास में पत्नी के देहांत के बाद लेखक अपने जीवन में आए अकेलेपन और खालीपन को फिर से भरना चाहता है | इस अकेलेपन को भरने के लिए वह अपनी पूर्व प्रेमिका के साथ वृद्धावस्था का आखिरी पड़ाव पार करना चाहता है | परन्तु समाज के बंधन और पारंपरिक संस्कारों के कारण ऐसा नहीं कर पाते हैं | इस अवस्था में व्यक्ति स्वयं के विचारों में स्थिरता लाने का प्रयास करता है | किताबों को साथी बनाना चाहता है, नए मित्र बनाना चाहता है तथा परिवार के साथ समय बिताना चाहता है | परन्तु वर्तमान समय में वृद्धावस्था का एक ही अर्थ अकेलापन और असहाय बन गया है | अकेलापन बिताने के लिए बूढ़े ने अपने पूर्वपरिचितों को कई बार पत्र लिखे परन्तु किसी का सकारात्मक उत्तर नहीं मिला | अंत में अकेलेपन, हताश जीवन जीने की मजबूरी लिए कहता है कि "अकेलापन इस अवस्था की नियति है ..अधिकतर लोग यहाँ पहुँचकर खाट से लग अकेलेपन को भोगते है, बूढ़ा चल फिरकर भोग रहा है ..बस इतना ही फर्क है |" इस प्रकार लेखक जीवन में कई उतार-चढ़ाव से गुजरते हुए अंत में एक कश्मीरी महिला से मित्रता कर लेता है और शाम की झिलमिल का आनंद उठाता है | मनुष्य अपने पारिवारिक और सामाजिक विचारधारा से प्रभावित होकर जीवन की समस्याओं और परेशानियों में उलझकर रह जाते हैं |

2.2.13 'दाई' (2017)

टेकचंद द्वारा रचित '*दाई*' उपन्यास वर्ष 2017 ई. में लिखा गया | पहले ज़माने में गाँव में दाई महिला के प्रसव का क्रियान्वयन करती है | दाई जीवन देने वाली, जीवन जगाने वाली, दुनिया में आये इंसान को पहली इंसानी छुअन देने वाली, इंसानी अहसास से रूबरू करवाने वाली होती है | वर्तमान में डॉक्टर और नर्स आ जाने से 'दाई' की भूमिका समाप्त हो गई | आलोच्य उपन्यास में दाई के रूप में रेशम बुआ का चित्रण किया है | रेशम बुआ संघर्ष, सेवा, त्याग, मनोरंजन व श्रम की प्रतिमूर्ति बनकर नजर आती है | कई औरतों की प्रसूति करने वाली दाई के रूप में रेशम बुआ सबका प्यार, सम्मान व भरोसा पाती है | लेकिन अपने ही घर में पति व बेटों के द्वारा प्यार, सम्मान व सुख नहीं मिलता है | रेशम बुआ ने अपने आठ बच्चों को पाल पोसकर बड़ा किया | तीन बेटियों की शादी करवाती हैं तथा दो बेटियों को ससुराल से निकाले जाने पर उनकी परवरिश करती है | लेखक उनके व्यक्तित्व के बारे में लिखते हैं – "अर रेसम नै देखो आठ-आठ बालक जण दिये, पाल दिये अर आज बुढ़ापे मैं बी घोड़ा सी हांडे है |" (टेकचंद 28) रेशम बुआ अपना संपूर्ण जीवन दूसरों के लिए जीती हैं | नाचगी की आय से रेशम बुआ परिवार का खर्चा चलाती है | वह अपने पति, बेटों और जमाईयों के लिए धनार्जन का साधन थी | रेशम बुआ की मृत्यु भी उसके बड़े बेटे के कारण हुई थी | उसने नशे की हालत में रेशम बुआ को धक्का दिया था | धीरे-धीरे सेवा व दवाई के अभाव में रेशम बुआ की मृत्यु हो जाती है | श्मशान ले जाने से पूर्व कहा जाता है कि "देख ल्यो भाई मरने वाले का कोई पुराणा लता-कपड़ा घड़ में नहीं रहना चाहिए |" (टेकचंद 71) रेशम बुआ की मृत्यु के बाद भी उसके बेटे की नजरे पैरों में पहने कड़ों पर रहती है | यही सच्चाई हर वृद्ध की मृत्यु के बाद देखने को मिलती है | वृद्धों को सिर्फ पैसों के लिए संभालना यह नई बात नहीं है | अगर बुजुर्ग आर्थिक उत्पादन का साधन नहीं तो उन्हें इसी तरह धक्के, मार व गाली गलौच को सहना पड़ता है |

2.2.14 'वसीयत' 2018

सूरज सिंह नेगी का उपन्यास '*वसीयत*' 2018 ई. में प्रकाशित हुआ है | यह उपन्यास पारिवारिक संबंधों और बुजुर्गों की संवेदना पर आधारित है | आज के इस युग में मानवीय मूल्य ख़त्म होते जा रहे है सिर्फ स्वार्थवादिता हावी है | यह उपन्यास तीन पीढ़ियों को समानांतर लेकर लिखा गया उपन्यास है | उपन्यास का मुख्य पात्र विश्वनाथ है | कथाकार ने विश्वनाथ के माध्यम से उनके पिता एवं पुत्र राजकुमार दोनों के व्यवहार को अपनी स्थिति से तुलना करते हुए कहानी को आगे बढ़ाया है | इस उपन्यास में विश्वनाथ के पुत्र से पिता बनने की यात्रा का मार्मिक चित्रण है | युवावस्था में विश्वनाथ अपने पिता से उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए आग्रह करता है | उनके पिता किसी कारणवश मना कर देते हैं | पिता के विदेश न भेजने से नाराज विश्वनाथ अपने माता-पिता से दूर शहर तक सीमित रह जाता है | वह किसी तीज-त्योहार पर भी गाँव नहीं जाता | अपने विवाह और पुत्र होने पर भी उन्हें नहीं बुलाता | उसके बूढ़े माता-पिता हर दिन उसके लौटने की राह देखते है तथा अंत में मर जाते हैं | इस घटना को कई साल बीत गए थे | विश्वनाथ को बचपन में मिले अपार लाड़-प्यार को वह समय के साथ भूलता गया | उसके बूढ़े माँ, बाबूजी, दादा जी, गाँव की गलियाँ, पगडंडियाँ, तीज-त्यौहार उसकी प्रतीक्षा करते रहे | सोचते रहे शायद विश्वा इस साल आएगा, अगले साल आयेगा | लेकिन प्रतीक्षा

करते-करते उस दुनिया से कभी के विदा हो चुके थे | विश्वनाथ जो दिन-प्रतिदिन उन्नति करने लगा | हमेशा काम में व्यस्त रहने लगा | लेकिन उससे उन लोगों और उस माटी के लिए कभी समय नहीं मिल सका, जो निस्वार्थ रूप से बस उसकी प्रतीक्षा करते रहे | माँ-बाप की इस असहनीय पीड़ा को कोई महसूस नहीं कर सकता | कहते है जो बोया जाता है वही काटा जाता है | विश्वनाथ जो व्यवहार अपने युवावस्था में अपने माता-पिता के साथ करता है | वृद्धावस्था में उसके पुत्र राजकुमार द्वारा वही व्यवहार देखने को मिलता है | विश्वनाथ कहते है –

> “एक पिता की तड़प क्या होती इसे लंबे अरसे से महसूस कर रहा था जब तक राजकुमार नहीं लौटा था | उसे यह विश्वास था कि बेटा पढ़ने गया हुआ है | वापस लौटने पर उसके साथ रहेगा बेटा स्वदेश तो आ चुका था लेकिन अपने माँ-बाप से दूर हो चुका था | बार-बार उसके मस्तिष्क में कई प्रश्न कौंध रहे थे | आज उसका मन अत्यधिक विचलित हो रहा था |” (नेगी 28) |

विश्वनाथ अपने बच्चे के पालन-पोषण और शिक्षा के लिए हर संभव प्रयत्न करते हैं | उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए विदेश भेजते हैं | वे सब सुविधाएँ जुटाते हैं जो उन्हें खुद भी न मिली | माता-पिता हमेशा यही चाहते उनके बच्चे खूब तरक्की करें और उनका जीवन खुशहाल हो | माँ-बाप अपना पूरा जीवन अपने बच्चों का जीवन सँवारने में लगा देते हैं | वहीं बच्चे इसे माँ-बाप की नैतिक जिम्मेदारी समझते हैं | माँ-बाप अपने असहनीय दर्द को किसी से साझा भी नहीं कर सकते |

> “पापा आप ठहरे रिटायर्ड आदमी दिन भर आराम ही आराम | अरे ! हमें ठीक से काम करने दो जानते हो कितना कम्पटीशन है यहाँ पर, थोड़ी देर पहले मम्मी का फोन आया था फिर आपने कर दिया | मैंने कल ही नया हॉस्पिटल ज्वाइन किया है बहुत काम रहता है और एक आप लोग हैं जब भी बात करनी हो तो छुट्टी के दिन कर लिया कीजिए या मुझे फुर्सत मिलने पर मैं ही कर लिया करूँगा |” (नेगी 47)

विश्वनाथ का पुत्र राजकुमार अपने वृद्ध पिता की उपेक्षा करता है | पुत्र द्वारा की गई यह उपेक्षा विश्वनाथ को अपने पिता के साथ किए गए व्यवहार की स्मृति जागृत कर देती है | उसे याद आता है कि किस तरह उसने अपने पिता को इसलिए दोषी माना कि उन्होंने उसे पढ़ने के लिए विदेश नहीं भेजा | अपनी युवावस्था में माता-पिता की चिंताओं को भूलकर उन्हें अकेला छोड़ कर विदेश चले गए थे | पिता द्वारा भेजे गये पत्र जिसमें माँ की बीमारी तथा अंतिम इच्छा को लिखते हुए पिता उसे घर बुला रहा था | माँ की बीमारी से मृत्यु होने पर भी विश्वनाथ गाँव नहीं जाता परन्तु सरकार द्वारा भेजे गए पत्र पर विदेश चला जाता है | पिता के पत्र की उपेक्षा करते हुए विदेश जाने के पत्र को स्वीकार करता है | अपने युवावस्था में की गई गलतियों के लिए विश्वनाथ पश्चाताप बोध से ग्रस्त होता है | अंततः अपने पिता की डायरी पढ़ने से विश्वनाथ अपनी मिट्टी के प्रति अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने के लिए कदम बढ़ता है | जो सपने उसके पिताजी और दादाजी ने देखे थे उन्हें पूर्ण करने के लिए कमर कस लेता है |

> “मेरे प्रिय विश्वा मुझे पूरा यकीन है तू एक दिन गाँव वापस जरूर आएगा | तू मेरी वसीयत का असली हकदार तभी कहलाएगा | जब तू यह करने का संकल्प ले कि गाँव में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने में लगाएगा | लोगों की न्याय करेगा

और अपने गाँव को उसी स्थिति में ले आएगा जैसा वह पहले था | बेटा अपने लिए सभी जीते है, दूसरे के लिए जीवन जीने वालों का जीवन सार्थक इस बात को जीवन भर के लिए गाँठ बाँध लेना |" (नेगी 264)

इस उपन्यास में एक अन्य प्रसंग के माध्यम से वृद्ध पीढ़ी की स्थिति को रखा है | विश्वनाथ के बुजुर्ग मित्र शर्मा जी जो अपने परिवार द्वारा उपेक्षित है | उनके पोते के जन्मदिन पर घर के नौकर को पार्टी में बुलाया जाता है लेकिन उनको नहीं | पार्टी के दिन घर में अकेले रह रहे शर्मा जी को भोजन तक की व्यवस्था की जाती | शर्मा जी कहते है –

"बहू तो पराए घर की बेटी है उसे क्या दोष दूँ, उसने तो मेरी तकलीफें नहीं देखी है | पर मेरा करण जो बचपन से मेरी मजबूरी देखता आ रहा है आज मेरी भावना को न समझ सका | मैंने एक-एक पल कैसे बिताया, मेरी आत्मा ही जानती ही | रात को ग्यारह बजे तक बेसब्री से इंतजार करता रहा | न कोई फ़ोन आया, न ही वह लोग पार्टी कर घर वापस लौटे | भूख के मारे हाल बेहाल हो रहा था | सोचा था पार्टी में से लौटते समय मेरे लिए खाना पैक करके ले आयेंगे | मैंने किचन में देखा कुछ न था, तभी टिफिन पर नजर पड़ गई | अकसर सुबह की बची हुई रोटियाँ टिफिन में रख दी जाती है और शाम को काम वाली बाई को दे दी जाती है | मैंने टिफिन में रखी रोटी निली और खाकर भूख शांत कर डाली |" (नेगी 80)

यह प्रसंग वृद्ध विमर्श के उस करुण पक्ष को उजागर करता है जिसमें वृद्धों की उपेक्षा, असुरक्षा और भावनात्मक अकेलापन प्रमुख है। "बासी रोटी" केवल भूख शांत करने का प्रतीक नहीं है, बल्कि यह वृद्ध की टूटी हुई उम्मीदों और टूटते पारिवारिक मूल्यों का भी प्रतीक है | आधुनिक उपन्यासों में ऐसे प्रसंग यह दर्शाते हैं कि वृद्धावस्था केवल शारीरिक क्षीणता नहीं, बल्कि अपनों की बेरुख़ी और संवेदनहीनता का परिणाम भी है | आज युवा पीढ़ी पाश्चात्य सभ्यता की चकाचौंध में अपनों के अपने पन को भूलती जा रही है | इसका बखूबी चित्रण उपन्यास में किया गया है |

2.2.15 'नियति चक्र' 2019

सूरज सिंह नेगी का उपन्यास *'नियति चक्र'* 2019 ई. में प्रकाशित हुआ है | यह एक संवेदनात्मक और भावनात्मक उपन्यास है | परम्परा से परिवार में मुखिया का पद घर के सबसे बड़े-बुजुर्गो के पास रहती आई है किन्तु समय परिवर्तन के साथ परिस्थिति भी बदली है | सत्ता का हस्तांतरण बुजुर्ग पीढ़ी से युवा कंधों पर आ गयी है | सत्ता के हस्तांतरण ने बुजुर्गों को हाशिये पर खड़ा कर दिया है | यह उपन्यास सेठ नितिन घोष को केंद्र में रखकर लिखा गया है | 'नियति चक्र' उपन्यास का नायक सेठ नितिन घोष अपनी औलाद के प्रति वात्सल्य एवं प्रेम के कारण अपनी सारी संपत्ति अपने पुत्र चित्रांश के नाम कर देता है | जिससे उसका बेटा एंटरप्राइजेज का मालिक और घर का मुखिया बन जाता है | घर का मुखिया बनते ही चित्रांश अपने पिता के वात्सल्य एवं प्रेम को नहीं समझ पाता | वह अपने कर्तव्य और जिम्मेदारियों को भी भूल जाता है | यहाँ तक वह अपने पिता को ही अपना प्रतिद्वंदी मान बैठा था इसलिए सबसे पहले वह अपने पिता के विश्वास पात्रों को नौकरी से निकाल देता है | जिसमें पिता के सबसे करीबी नौकर किशन काका भी शामिल है जिससे नितिन घोष पूरी तरह टूट जाते है | चित्रांश अपने पिता को भी कहीं चले जाने को कहते है | वृद्धों को धन-दौलत से ज्यादा अपनों के प्रेम व सम्मान की जरूरत होती है | जिस पिता ने पुत्र-प्रेम के कारण अपनी सारी संपत्ति औलाद को

सुपुर्द कर दी वही जब प्रश्न खड़ा कर दे कि आपने किया ही क्या है ? तो व्यक्ति टूट जाता है | यही नितिन घोष के साथ होता तो वह किशन से कहते हैं – "किशन जानते हो एक बाप के लिए दुनिया में सबसे बड़ी गाली क्या है ?...एक जवान बेटा यदि अपने बाप को कहे कि तुमने उसके लिए किया ही क्या है ? वह उस बाप के लिए सबसे बड़ी गाली है |" (नेगी 66) एक पिता की भावनाओं का मार्मिक चित्रण इस उपन्यास में इन पंक्तियों के माध्यम से देखने को मिलता है | नितिन घोष बहुत ही संवेदनशील और भावुक है | अपने बेटे चित्रांश द्वारा तिरस्कृत, उपेक्षित व निष्कासित होने के बाद वे अपने द्वारा बनाए गए अस्पताल में भरती हो जाते हैं | वे नाम बदलकर जतिन दास नाम से अस्पताल में भरती होते हैं | वे अपना वास्तविक नाम इसलिए छुपाते हैं ताकि दुनिया उनके बेटे को ताने न दे | नितिन घोष पर हितकारी व एक भले इंसान है | बेटे द्वारा की गई अनैतिकता के कारण इस धर्मात्मा प्रवृत्ति के व्यक्ति का जीवन अंतिम समय में अपना वास्तविक नाम छिपाकर मृत्यु को प्राप्त होता है | नियति चक्र घूमता है नियति ने चित्रांश को अर्श से फर्श पर ला दिया | एक दिन चित्रांश की कार दुर्घटना ग्रस्त होती है और नियति उसे उसी अस्पताल के उसी बेड न. दस पर लाती है जहाँ उसके पिता की मृत्यु हुई थी | चित्रांश को अपने कुकृत्य पर पश्चाताप होता है | चित्रांश कहते हैं –

> "मैंने बाबूजी के जीवन काल में उनका तिरस्कार किया, मैं स्वयं उनको अपना प्रतिद्वंदी मान बैठा, मुझे लगा जैसे वह पुरातनवादी विचारधारा के साथ जी रहे है | यहाँ तक कि उनके घर से जाने के बाद भी मुझ पर कोई असर नहीं हुआ, लेकिन इस पुण्यात्मा को सम्मान न देने का नुकसान मुझे उठाना पड़ा | धीरे-धीरे कंपनी घाटे में जाने लगी, तैयार किए जाने वाले माल की गुणवता घटिया होने से बाजार में खरीददार नहीं मिले | कार्य का बोझ बढ़ता जा रहा था | इसी दौरान जब आपसे मुलाकात हुई और बाबूजी के विषय में नजदीक से जानने का अवसर मिला, मैंने प्रण कर लिया था कि उनके बताए मार्ग पर चलूँगा आप द्वारा सौंपी गई बाबूजी की डायरी एक जीता जागता जीवन दर्शन है |" (नेगी 122)

पुत्र की बदलती हुई मानसिक स्थिति का चित्रण प्रस्तुत किया है | उपन्यासकार अपने उपन्यासों के माध्यम से बूढ़ों के प्रति आदर, सम्मान, संवेदना जगाने का प्रयास करते हैं | इसी का प्रतिफल है कि '*वसीयत*' उपन्यास के विश्वनाथ और '*नियति चक्र*' उपन्यास के चित्रांश पश्चाताप ग्रस्त अपने-अपने पिता के सम्मान में अनेक सामाजिक कार्य करते हैं | "पिता-पुत्र के आपसी रिश्तों में बढ़ती दूरी को दिखाने के बाद पुनः जोड़ने का आदर्शवादी उपक्रम मिलता है |" (नेगी 151) ये पंक्तियां उनके वसीयत उपन्यास पर भी लागू होती है |

अंत: 21 वीं सदी के हिंदी उपन्यासों में वृद्धों की हर तरह की समस्याओं को उजागर करने का सफल प्रयास किया गया है | इस दौर के लेखकों ने वृद्धावस्था से जुड़ी वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक और मानसिक समस्याओं को केंद्र में रखकर रचनाएँ की हैं | वृद्धों को परिवार में उपेक्षित महसूस करना, विशेष रूप से जब बच्चे व्यस्त जीवनशैली में रहते हैं या विदेश चले जाते हैं यह एक आम विषय बन चूका हैं | कई उपन्यासों में वृद्धों की शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य का चित्रण गहरे से किया गया है | तो कुछ उपन्यासों में परिवार के सदस्यों द्वारा भावनात्मक दूरी, कुछ में वृद्धों को अनावश्यक या बोझ समझना, कुछ में वृद्धों को वृद्धाश्रम भेजना, कुछ उपन्यासों में संतान द्वारा संपत्ति हथियाने के लिए बुजुर्गों के साथ दुर्व्यवहार इत्यादि समस्याओं को 21सदी के उपन्यासों में संवेदनशीलता और यथार्थ के साथ चित्रित किया गया है | जिससे समाज में वृद्धों की स्थिति, समस्याओं और चुनौतियों पर ध्यान

देने की आवश्यकता महसूस होती है | 21वीं सदी के हिंदी उपन्यास वृद्ध विमर्श को केवल पारंपरिक सामाजिक और पारिवारिक दृष्टि से नहीं, बल्कि व्यक्तिगत, आर्थिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक और अस्तित्वगत संघर्ष के रूप में प्रस्तुत करते हैं | यह विमर्श वृद्धों के अकेलेपन, उपेक्षा, मृत्यु-बोध और अस्मिता के प्रश्नों को अधिक गहनता से उकेरता है | पूर्व के उपन्यास जहां वृद्धों की समस्याओं को सामाजिक संरचना के संदर्भ में देखते थे, वहीं आधुनिक उपन्यास उन्हें व्यक्तिगत चेतना और अनुभव के केंद्र में रखते हैं | इस तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि हिंदी कथा-साहित्य में वृद्ध विमर्श समय के साथ अधिक जटिल, संवेदनशील और बहुआयामी होता गया है |

2.3 21वीं सदी के पूर्व वृद्धों पर केंद्रित हिंदी की प्रमुख कहानियाँ

प्राचीन काल में पंचतंत्र, हितोपदेश, जातककथा, पुराणकथा इत्यादि में कथा साहित्य उपलब्ध होता है, लेकिन जिसे आज हम कहानी कहते हैं | कहानी हिंदी साहित्य की समस्त विधाओं में सबसे अधिक लोकप्रिय विधा है | कहानी शब्द का मूल सम्बन्ध संस्कृत के 'कथ्' धातु से माना जाता है | 'कथ्' धातु से उत्पन्न 'कथा' शब्द का सामान्य अर्थ है – 'वह जो कहा जाए' अर्थात अभिव्यक्त किया जा सके | कहानी का सामान्य अर्थ भी 'कहना' होता है | अंग्रेजी में कहानी को 'SHORT STORY' कहा जाता है | बांग्ला में 'गल्प' तथा हिंदी में कहानी शब्द प्रचलित है | इसके अलावा, "खंडकथा, परिकथा, कथालिका जैसे शब्दों का प्रयोग संस्कृत कथा साहित्य में हुआ है | डॉ. दीपिका परमार *'हिंदी कहानियों के आईने में वृद्ध विमर्श'* पुस्तक में लिखती हैं - 'खंडकथा' छोटी कहानी के लिए, पशु-पक्षियों की कहानियों के लिए 'परिकथा' और जहाँ एक कथा में अनेक कथाएँ जुड़ी हुई हो उसके लिए 'कथालिका' शब्द का प्रयोग हुआ है |" (परमार 14) इस प्रकार कहानी के लिए 'कथा', 'आख्यायिका', 'खंडकथा', 'परिकथा', 'कथालिका', 'गाथा', 'वृतांत', 'आख्यान', 'छोटी कहानी', 'लघुकथा', 'आदि शब्द प्रयुक्त होते हैं | सामान्यत: समाज में कहानी का प्रचलित अर्थ किसी भी प्रसंग या घटना से होता है | डॉ. ब्रह्मदत शर्मा *'हिंदी कहानियों के विवेचनात्मक अध्ययन'* पुस्तक में लिखते हैं - "कहानी वह स्वत:पूर्ण रचना है जिसमें जीवन के किसी एक मर्म अथवा लक्ष्य की एक ही घटनात्मक स्थिति में अभिव्यक्ति हो |" (शर्मा 27) वहीं मुंशी प्रेमचंद कहानी को इस प्रकार परिभाषित करते हैं – "कहानी एक गल्प रचना है, जिसमें जीवन के लिए एक अंग या किसी एक मनोभाव को प्रदर्शित करना लेखक का उद्देश्य रहता है | उपन्यास की भांति उसमें मानव जीवन का सम्पूर्ण तथा वृहद रूप दिखाने का प्रयास नहीं किया जाता | न उसमें उपन्यास की भांति सभी रसों का समिश्रण होता है | वह एक रमणीय उद्यान नहीं जिसमें भांति-भांति के फूल-बेल-बूटे सजे हुए हैं बल्कि एक ऐसा गमला है जिसमें एक ही पौधे का माधुर्य अपने समुन्नत रूप से दृष्टिगोचर होता है |" (परमार 16) डॉ. श्यामसुंदर दास- " आख्यायिका को एक निश्चित लक्ष्य या प्रभाव में रखकर लिखा गया नाटकीय आख्यान मानते हैं |" (दास 225) कहानी में जीवन के किसी एक प्रसंग को मार्मिकता के साथ अभिव्यंजित किया जाता है | एसी भावाभिव्यंजना जो भावनाओं को प्रायः उसी रूप में, उसी तीव्रता के साथ, उसी प्रभाव के साथ व्यक्ति तक प्रेषित कर सके, जिस रूप में उसका उदय रचनाकार के अंतर्मन में हुआ है | निष्कर्षत: कह सकते हैं कहानी समस्त साहित्यिक विधाओं की जननी है | कहानी पचास पृष्ठों तक की हो सकती है, पर उसका प्रतिपाद्य अथवा मूलभाव एक ही रहेगा | कुछ भी हो कहानी मानव हृदय की तृप्ति है, आनंद और समाधान है | यही कारण है कि सृष्टि के आरंभ से आज तक कहानी से मानव का घनिष्ठ संबंध है और कहानी

मनुष्य को अति प्रिय है | साहित्य की विभिन्न विधाओं में कहानी ही एक ऐसी विधा है जिसका उदय मानवीय अभिव्यक्ति के क्षेत्र में सर्वप्रथम हुआ है | कहानी का आरम्भ वैदिक काल में ही हो गया था | प्राचीन समय में वेद, ब्राह्मणग्रन्थ, उपनिषद, महाभारत, रामायण, आदि में ही कहानी के बीज विद्यमान है | इन ग्रंथों में उपदेशपरक एवं नीतिपरक हुआ करती थी | हिंदी कहानी की विकास यात्रा में कई कहानीकारों का योगदान रहा है | जिन्होंने अलग-अलग विषय वस्तु को लेकर कहानी की रचना की | कल्पना की उड़ान के साथ-साथ यथार्थ के धरातल पर भी कई कहानियाँ लिखी गयी | वृद्ध विमर्श जैसे संवेदनशील विषय को लेकर भी कई कहानीकारों ने अपनी लेखनी चलाई | 21वीं सदी के पूर्व वृद्ध विमर्श मुख्य रूप से निम्न कहानियों में देखा जा सकता है –*'बूढ़ी काकी'*, *'बेटों वाली विधवा'* और *'सुभागी'*, (प्रेमचंद) *'वापसी'* (उषा प्रियंवदा), *'चीफ की दावत'*, (भीष्म साहनी) *'शटल'* (नरेंद्र कोहली) *'पिता'* (ज्ञानरंजन), *'छप्पन तोले का करधन'* (उदय प्रकाश) *'पागल है'*, *'दुःख का अधिकार'*, *'कौन जाने'*, *'समय'* (यशपाल) *'बूढ़ा ज्वालामुखी'* (गिरिराज शरण अग्रवाल), *'बीच बहस में'* (निर्मल वर्मा), *'कमरा नंबर 103'* (सुधा ओम ढींगरा) 'कैलाशी नानी' (सुभद्रा कुमारी चौहान) *'वसीयत'* (भगवतीचरण वर्मा) 'परमात्मा का कुता' (मोहन राकेश) *'आजादी'* (ममता कालिया) *'उधार की हवा'*, *'बांसफल'*, *'छत पर दस्तक'*, 'उर्फ़ सैम' (मृदुला गर्ग) 'मज़बूरी' (मन्नू भंडारी) 'सीढ़ी', 'सौगात', *'दादी का खजाना'*, (सूर्यबाला) *'दादी माँ'* (शिवप्रसाद सिंह) *'दादी'* (शिवानी), *'ताई'* (विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक), *'हरिहर काका'* (मिथिलेश्वर), *'उतनी दूर'*, *'उसका आकश'* (राजी सेठ), *'सांधे'* (गोविन्द मिश्र), *'फाइल दाखिल दफ्तर'* (गिरिराज किशोर), *'अपना* घर' (रामधारी सिंह दिवाकर), *'बुढऊ का आधुनिकीकरण'* (गिरीश अस्थाना), *'बांधों न नाव इस ठांव बंधु'* (उर्मिला शिरीष), *'आँख मिचौनी'* (अमृतराय), *'सीमेंट में उगी घास'* (दयानंद अनंत) *'तिनको का घोंसला'* (प्रतिमा वर्मा), 'ग्राम माता' (बाबू सिंह चौहान) *'दादी का बटुआ'* (मंजुल भगत), *'मोहताज'* (राजकुमार भ्रमर), *'मौत के लिए एक अपील'* (साजिद रशीद), *'माचिस की डिबिया'* (चंद्रमौलेश्वर प्रसाद), *'माई'* (हरि भटनागर) इत्यादि सम्मिलित हैं | इस तरह सैकड़ों कहानियाँ हैं जो वृद्धों की दयनीय स्थिति को बारीकी से चित्रित करते हुए पाठकों में संवेदना और सहानुभूति जगाने का प्रयास कर रही है | इनमें से कुछ प्रसिद्ध कहानियों का संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित प्रकार से हैं -

2.3.1 'बूढ़ी काकी' (1921)

वर्तमान में जितने भी विमर्श चल रहे हैं उसका आरंभ कहीं न कहीं प्रेमचंद के कथा साहित्य में मिल ही जाता है प्रेमचंद के कथा साहित्य में चाहे नारी विमर्श हो, विकलांग विमर्श हो, दलित विमर्श हो या वृद्ध विमर्श हो इन सभी विमर्शों के संकेत उनके साहित्य में मिल जाता है | क्योंकि प्रेमचंद आदर्शोन्मुख यथार्थवादी के साथ मानवीय संवेदना के कथाकार भी है | बूढ़ी काकी कहानी में वृद्ध विधवा महिला की समस्याओं का चित्रण करते हुए प्रेमचंद ने बूढ़ों के बड़प्पन, सहनशील और क्षमाशील स्वभाव को प्रदर्शित किया है | कहानी में बूढ़ी काकी की दुर्गति का मार्मिकता के साथ चित्रण किया है | इस कहानी में बूढ़ी काकी की दुर्गति तब से होती है जब काकी अपने पति और बच्चों के मरने के बाद अपनी पूरी जायदाद अपने भतीजे बुद्धिराम के नाम करती है | प्रेमचंद लिखते हैं – भतीजे ने सारी संपत्ति लिखते समय खूब लंबे-चौड़े वादे किए | किन्तु वे सब वादे कुली डिपो के दलालों के दिखाए हुए सब्जबाग थे | (फिरोज 43) जायदाद जब तक काकी के नाम पर थी तब तक बुद्धिराम और उसकी पत्नी रूपा काकी को मान-सम्मान और

इज्जत के साथ रखते थे | जैसे ही जायदाद बुद्धिराम के नाम पर होती है तो काकी को तरह-तरह से अपमानित करने लगते हैं | बुद्धिराम के बड़े बेटे मुखराम के तिलक-भोज में सारा समाज भोजन करता है लेकिन बूढ़ी काकी को भूखा रखते | यहाँ काकी के जीवन-कथा का सबसे करुण प्रसंग घटित होता है | प्रेमचंद लिखते हैं -"मेहमानों ने भोजन किया | घरवालों ने भोजन किया | बाजे वाले, धोबी, चमार, भी भोजन कर चुके परन्तु बूढ़ी काकी को किसी ने नहीं पूछा |"(फिरोज 47) जिह्वालोलुप, भूखी, विवश और अकेली बूढ़ी काकी अपनी कोठरी में पूड़ियों की सुगंध लेकर बेचैन हो रही थी | भूख के कारण लोगों की झूठी पतलों से चाट के खाने के लिए मजबूर होती है | जब यह दृश्य रूपा देखती है तब उसे अपनी स्वार्थपरता और अन्याय पर पश्चाताप होता है | वृद्धावस्था में व्यक्ति का मन चंचल और मासूम होता है जिसे प्रेम के दो शब्दों से भी जीता जा सकता है, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं उन्हें पहले अपमानित करें और फिर उनसे क्षमायाचना करें | इस कहानी के माध्यम से लेखक ने वृद्धों की समाज में दयनीय स्थिति की यथार्थता को प्रस्तुत कर युवा पीढ़ी में वृद्धों के प्रति मानवता के व्यवहार को जगाने का प्रयास किया है |

2.3.2 'सुभागी' (1923)

सुभागी कहानी भारतीय समाज में स्वतंत्रता पूर्व बेटियों के जन्म पर दुःख मनाया जाता था, फिर भी बेटियों ने ही वृद्धावस्था के दौरान अपने बूढ़े माँ-बाप की लाठी बनकर उनको सम्भाला है | सुभागी भी एक ऐसी बेटी है जो अपने माता-पिता की सेवा करना ही अपना धर्म मानती है | बचपन में ही विधवा हो जाने के बाद सुभागी दूसरा विवाह नहीं करना चाहती और माता-पिता की सेवा में जीवन समर्पित करना चाहती है | परन्तु सुभागी का बड़ा भाई रामू और उसकी पत्नी माँ-बाप की जिम्मेदारी नहीं उठाना चाहते हैं | तब सुभागी के पिता तुलसी को अपनी गलती का अहसास होता है | "जब रामू के जन्मोत्सव पर उन्होंने रुपये कर्ज लेकर जलसा किया था, और सुभागी पैदा हुई तो घर में रुपये रहते हुए भी एक कौड़ी खर्च नहीं की | पुत्र को रत्न समझा था, पुत्री को पूर्वजन्म के पापों का दंड | वह रत्न कितना कठोर निकला और वह दंड कितना मंगलमय |"(प्रेमचंद 219) बुढ़ापे में आकर माँ-बाप को अपनी गलती का अहसास होता है जब बेटे और उनकी बहुएँ उन्हें प्रताड़ित और अपमानित करके घर से बहार निकाल देते हैं | रामू ने अपने माँ-बाप को घर से निकल दिया, अंतिम समय में मिलने भी नहीं गया और न ही अंतिम संस्कार में मुखाग्नि देने को तैयार हुआ | वही सुभागी ने अपने माँ-बाप की जिम्मेदारी उठाई | अपने पिता को मुखाग्नि दी और माँ की भी अंतिम समय तक सेवा करके अपना कर्तव्य निभाया | व्यक्ति जीवन भर अपने बच्चों की अच्छी परवरिश के लिए संघर्ष करता है | फिर भी वृद्धावस्था के दौरान उसे अपने ही परिवार से सुख प्राप्त नहीं हो पाता है | यह पीड़ा वृद्ध व्यक्ति को मौत के मुंह में जल्दी ले जाती है |

2.3.3 'बेटों वाली विधवा' (1932)

बेटों वाली विधवा कहानी भारतीय समाज में स्त्री को जन्म से पिता पर विवाह के बाद पति पर पति के बाद बेटों पर बोझ ही माना ही गया है | इस तथ्य को प्रेमचंद की कहानी बेटों वाली विधवा में सफलतापूर्वक दिखाया गया है | पंडित अयोध्यानाथ के निधन के बाद उनकी विधवा फूलमती का जीवन कष्टों भरा हो जाता है, जो आजतक घर की मालकिन थी अब नौकरानी बन चुकी थी | उसके चार बेटे और बहुएँ प्रतिक्षण उनकी भावनाओं को ठेस पहुँचाने वाला व्यवहार करते हैं | ये सभी पिता द्वारा छोड़ी गई धन-

दौलत, गहने, बाग-बगीचे आदि पर नजर गड़ाए रखते हैं | फूलमती का बड़ा बेटा कामतानाथ कहता है – जिन रुपयों को तुम अपना समझती हो, वह तुम्हारे नहीं हैं | (फ़िरोज 114) फूलमती को अपने ही घर में भिखारिन की तरह जीवन जीना पड़ता है | एक माँ चार पुत्रों को पाल लेती है लेकिन चार पुत्र मिलकर भी एक माँ को क्यों नहीं पाल पाते हैं | बुढ़ापे में चार बेटों की माँ होने पर भी फूलमती को संघर्षमय जीवन बिताना पड़ता है | लेखक लिखते हैं - "पति के मरते ही अपने पेट के लड़के उसके शत्रु हो जाएंगे, उसको स्वप्न में भी अनुमान न था | जिन लड़कों को उसने अपना ह्रदयरक्त पिला-पिलाकर पाला वही आज उसके ह्रदय पर यों आघात कर रहे हैं |" (फ़िरोज 115) फूलमती का जीवन पति की मृत्यु के बाद नरक बन जाता है | इस कहानी में सामाजिक जीवन में घटित सजीव घटना का चित्रण किया हैं |

2.3.4 'विध्वंस' (1938)

प्रेमचंद की कहानी 'विध्वंस' वृद्ध जीवन की अन्य चर्चित कहानी है | इसमें असहाय संतानहीन विधवा, वृद्धा भुनगी के उत्पीड़न को रेखांकित किया गया है | भुनगी सामंती उत्पीड़न का जीता-जागता उदाहरण है | भुनगी के पास जीविका का एक मात्र सहारा उसका भाड़ है | गाँव के जमींदार पंडित उदयभान पांडे से भुनगी त्रस्त है | उसे बेगारी करनी पड़ती है और कई बार तो भूखे पेट सो जाना पड़ता है | संक्रांति के अवसर पर जमींदार दो टोकरा अनाज भूनने के लिए भेज देता हैं | उसे डराया जाता है कि सूर्यास्त के पहले सारा अनाज भुन जाना चाहिए | भुनगी के लिए कम समय में अनाज भूनना संभव नहीं था क्योंकि उसे गाँव वालों का अनाज भी भूनना था | शाम को जमींदार और उसके आदमी उसका भाड़ खोद डालते हैं | वह विधवा वृद्ध अभागिन अब निरालम्ब हो जाती है | वृद्ध भुनगी क्रोध में आकर कहती है "महाराज, तुम्हें आदमी का डर नहीं तो भगवान् का डर तो होना चाहिए | मुझे इस तरह उजाड़कर क्या पाओगे |" (खान 54) इस कहानी में सामंत उदयभान पांडे द्वारा एक विधवा संतानहीन वृद्ध भुनगी की प्रताड़ना की मार्मिक कथा प्रस्तुत की गई है | प्रेमचंद जी सामन्ती प्रवृत्तियों के विरोध में हमेशा सजग रहे हैं | जमींदार के आदमियों द्वारा वृद्ध भुनगी के भाड़ को खोद डालना, उसके साथ दुर्व्यवहार करना, मार-पीट, करना, पत्तियों को आग लगाना, आग में भुनगी का जल जलकर भस्म हो जाना | कहानी का यह अंत ह्रदय विदारक है | विधवा वृद्धा के प्रति समाज की संवेदनहीनता को मार्मिकता के साथ चित्रित किया गया है |

2.3.5 'चीफ की दावत' (1956)

'चीफ की दावत' भीष्म साहनी द्वारा रचित कालजयी कहानी है, जिसमें वृद्ध विमर्श का उत्कर्ष दिखाई देता है | कहानी में वृद्ध माँ के प्रति शामनाथ का वस्तुवादी दृष्टिकोण और असंवेदनशील व्यवहार समाज की कुरूप सच्चाई को बयां करता है | इस कहानी में शामनाथ के माँ की स्थिति घर की बेकार वस्तु सी दिखाई गई है | लेखक लिखते हैं – "घर का सारा फालतू सामान आलमारियों के पीछे और पलंगों के नीचे छिपाया जाने लगा | तभी शामनाथ के सामने सहसा एक अड़चन कड़ी हो गयी, माँ का क्या होगा ?" (साहनी 6) शामनाथ अपने घर में चीफ की दावत रखते है | लेकिन वह अपनी बूढ़ी गँवार माँ को अपने चीफ के समक्ष नहीं लाना चाहता था | शामनाथ अपनी पत्नी से कहता है – " नहीं-नहीं, मैं नहीं चाहता कि उस बुढ़िया का आना-जाना यहाँ फिर

से शुरू हो |"(साहनी 6) उसे लगता था गँवार बूढ़ी माँ को देखकर उसके चीफ नाराज होकर उसका प्रमोशन नहीं करेंगे जबकि माँ की बदौलत ही उसको प्रमोशन मिलता है | क्योंकि चीफ माँ की बनाई फुलकारी से प्रभावित होते है | जो माँ चीफ के आने से पहले समस्या बनी हुई थी अब वही माँ चीफ के सामने जरूरत बन जाती है | माँ घर में घुटन और डर भरा जीवन जीती है | वह हरिद्वार जाना चाहती है लेकिन शामनाथ अपनी माँ को कहीं जाने नहीं देने चाहता क्योंकि इसमें भी उसका स्वार्थ छुपा था | वह कहता है – "तुम चली गई तो फुलकारी कौन बनाएगा | माँ तुम मुझे धोखा देकर चली जाओगी ? मेरा बना काम बिगाड़ोगी ? जानती नहीं साहब खुश होगा, तो मुझे तरक्की मिलेगी |"(साहनी 8) वात्सल्यमयी वृद्ध माँ यह सोचकर खुश होती है कि बेटे को तरक्की मिलेगी | इसलिए वह आँखों से कम दिखाई देने के बावजूद भी फुलकारी बनाने के लिए तैयार हो जाती है | यह कहानी आधुनिक युग में वृद्ध माँ-बाप के प्रति असंवेदनशील व्यवहार, जरूरत के वक्त बदलते व्यवहार, पारिवारिक मूल्यों के ह्रास और नई पीढ़ी की स्वार्थी प्रवृत्ति को उजागर करती है | इस कहानी में रिश्ते पर स्वार्थ हावी दिखाया गया है |

2.3.6 'वापसी' (1960)

'वापसी' उषा प्रियंवदा की बहुत चर्चित कहानी है | इस कहानी में उपभोक्तावादी संस्कृति को दिखाया गया है कि किस तरह घर के न कमाने वाले बुजुर्ग बेकार वस्तु में बदलते जा रहे हैं | इसमें गजाधर बाबू को माध्यम बनाकर सेवानिवृत के बाद व्यक्ति के कटु अनुभवों का चित्रण किया गया है | गजाधर बाबू रेल विभाग में नौकरी करते थे | 35 वर्ष नौकरी पूर्ण करके सेवानिवृत्त के पश्चात अपने परिवार के साथ रहने आते हैं | परन्तु कुछ ही दिनों में परिवार वालों ने उनको घर से बाहर कर दिया | जिस परिवार के लिए पूरी जिंदगी पैसों की मशीन बने रहे उस सेवानिवृत्त बुजुर्ग गजाधर बाबू को घर छोड़कर नौकरी के लिए जाना पड़ा | यह पीड़ा केवल गजाधर बाबू की नहीं है बल्कि समस्त बुजुर्गों की पीड़ा है | नौकरी करते हुए छुट्टियों में घर आए पिता के साथ परिवार वालों का व्यवहार और सेवानिवृत्त के बाद घर आए बुजुर्ग पिता के साथ परिवार वालों का रवैया की वास्तविकता को यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया है | गजाधर बाबू परिवार के साथ सम्मान तथा प्यार से समय बिताना चाहते हैं | लेकिन कुछ ही दिनों में परिवार वालों को घर में उनकी उपस्थिति खटकने लगती है | गजाधर बाबू अपने ही घर में अपनों के द्वारा की गई उपेक्षा व पराए पन को सहन नहीं कर पाते हैं | जिसके कारण सेवानिवृत के बाद भी नई नौकरी पर जाने का फैसला करते हैं | इस कहानी में लेखिका ने अत्यंत मार्मिक ढंग से स्पष्ट किया है कि सेवानिवृत वृद्धों के लिए परिवार में कोई स्थान नहीं रह गया है | परिवार के युवा सदस्य अपने ही ढंग से परिवार चलाना चाहते हैं | वृद्धों का मार्गदर्शन उन्हें बिलकुल स्वीकार्य नहीं है | वृद्धावस्था में घर का मुखिया बन कर अनुशासन लाने की बात सोचना बेकार है | यह कहानी अवकाश प्राप्त वृद्ध की प्यार, आदर तथा सम्मान पाने की ललक और वास्तव में मिलने वाली उपेक्षा, अनादर तथा तिरस्कार की मार्मिक व्यथा का चित्रण करती है |

2.3.7 'पिता' (1965)

'पिता' ज्ञानरंजन की बहु चर्चित कहानी है | इसमें पिता पुत्रों द्वारा की जाने वाली सेवा को स्वीकार नहीं करता हैं | पिता का मानना है कि 'पिता का कर्तव्य है पालन करना, पलना नहीं' | इस कहानी में रूढ़ियों से टकराव एवं जिद्दी पिता के स्वाभिमान से

उपजे संकट को दर्शाया गया है | 'पिता' कहानी के पिता असहाय नहीं हैं | वे स्वाभिमानी हैं | वे परिस्थितियों के अनुसार अपने को ढाल लेते हैं | किसी का अहसान नहीं लेना चाहते, यहाँ तक अपने बेटों का भी नहीं | बेटे जब पिता के लिए सुख सुविधा का प्रबंध करते हैं और पिता इनकार कर देता है | यह भी आज के वृद्ध विमर्श का एक नया दृष्टिकोण है | जहाँ बच्चे सक्षम हैं, वे पिता को सुविधा देना भी चाहते हैं किन्तु पिता अपने बच्चों पर ज्यादा खर्च नहीं डालना चाहते हैं | यह कहानी पुरानी और नई पीढ़ियों की परिवर्तित सोच एवं बदली हुई परिस्थितियों का चित्रण करती है | इस कहानी का वृद्ध पिता जीवन की अनिवार्य सुविधाओं से चिढ़ते हैं सबके लिए सुविधाएँ जुटाते रहेंगे लेकिन खुद उसमें शामिल नहीं होंगे | लेखक कहते हैं उनके दादा भाई ने पिता के लिए अपनी पहली तनख्वाह से एक खूबसूरत शावर बाथरूम में लगाया, उन्हें लगा पिता खुश होंगे किन्तु उन्होंने कोई उत्साह प्रकट नहीं किया | यहाँ तक वे बाहर आँगन में ही नहाते है | इस कारण उनके पुत्रों में पिता को लेकर रोष होता है |लेखक लिखते हैं – "वे पुत्र जो पिता के लिए कुल्लू से सेव मंगाने और दिल्ली एम्पोरियम से बढ़िया धोतियाँ मँगाकर उन्हें पहनाने का उत्साह रखते थे, अब तेजी से पिता विरोधी होते जा रहे हैं | (ज्ञानरंजन 3) पिता अपने बच्चों को आधुनिक बनने से नहीं रोकते किन्तु स्वयं आधुनिकता की चमक में शामिल नहीं होते | यही द्वंद्व पिता-पुत्र में रहता है | पिता का घर के बाहर सोना पुत्र की प्रतिष्ठा के लिए अपमान है | "कई बार कहा, मोहल्ले में हम लोगों का सम्मान है, चार भले लोग आया-जाया करते हैं, आपको अंदर सोना चाहिए, ढंग के कपड़े पहनने चाहिए |" (ज्ञानरंजन 3,4) उसे खीझ होती है पिता से क्यों वो अपने को नहीं बदलते वर्तमान परिवेश के साथ | यह आजकल हर घर की कहानी है | नई पीढ़ी को पुरानी पीढ़ी से हमेशा यह आपत्ति रहती है कि इस नए युग के साथ खुद को क्यों नहीं बदलते | यही पीढ़ी गत अंतराल इस कहानी का मूल विषय है |

2.3.8 'बीच बहस में ' (1973)

'बीच बहस में ' निर्मल वर्मा की प्रसिद्ध कहानी है | इस कहानी में बीमारी से जूझते एक पिता की बेबसी को उजागर किया है | बीमारी और बुढ़ापे का चोली और दामन का संबंध है | '*बीच बहस* में' कहानी में बीमार पिता अस्पताल में है | डॉक्टर का कहना है 'वह कभी भी मर सकता है, के बावजूद भी वह जिंदा है | सभी उसके जाने की प्रतीक्षा में हैं | इसमें पिता-पुत्र के संघर्ष और दोनों के अहं के टकराव को दिखाया गया है |

2.3.9 'शटल' (1982)

'शटल ' कहानी के रचनाकार नरेंद्र कोहली है | कहानी वृद्धों के पीड़ा व बेबसी की मार्मिक गाथा है | वृद्धावस्था में मनुष्य की जिंदगी शटल कॉक की तरह हो जाती है जो बच्चों की इच्छा से एक दूसरे के घर में टकराती फिरती हैं | इस कहानी के मुख्य पात्र ईश्वर दास और भागवंती वृद्ध है | ईश्वरदास को बढ़ती हुई बीमारी के कारण काम धंधा छोड़ना पड़ा | बच्चों के लिए वह एक ऐसी पुरानी वस्तु है, जो घर में बेकार है | भागवंती बड़े बेटे के घर बड़ी बहू के बीमार हो जाने पर उसकी देखभाल करने गयी है | तब से ईश्वरदास अकेले हो गए है | ईश्वरदास अपने छोटे बेटे के साथ रहते है परन्तु वह भी अलग होने की तैयारी में है | भागवंती की अनुपस्थिति में उन्हें किसी पालतू जानवर की तरह ठीक समय पर खाना मिल जाता है, बहू दो फुलके-सब्जी थाली में रखकर पकड़ा

जाती है फिर रोटी-सब्जी के लिए पूछती नहीं है | भागवंती को बेटे के घर गये दस दिन हो गये थे | ईश्वरदास और भागवंती पेंतीस सालों से साथ रह रहें हैं अब भागवंती के बिना उनका मन नहीं लगता | इसलिए उसने सोचा बड़े बेटे के घर भागवंती से मिलकर आए | उसने जैसे ही छोटे बेटे से जाने के बारे कहा उसने एक थैला तैयार कर लिया बोला एक दो दिन रहकर ही आना | जब वहां जाकर उसने देखा बड़ी बहू स्वस्थ लग रही थी और भागवंती कमजोर हो गई थी | ईश्वरदास को क्रोध आया, परन्तु बेटे को नाराज नहीं करना चाहते थे इसलिए कुछ नहीं बोला | बड़ा बेटा ईश्वरदास के बैग देखकर समझ गया कि वह रहने आये है, उसने थोड़ी ही देर में अँधेरा हो जायेगा का बहाना बनाकर उन्हें बस में बिठा दिया | आजकल बच्चे यही तो चाहते है कि भागवंती उनके बच्चे संभाले, रोटियां पका दे, घर की रखवाली किया करें और माँ के रूप में उन्हें सस्ती और विश्वसनीय नौकरानी मिल गयी | समाज में युवा वर्ग को बूढ़ी माँ की आवश्यकता है परन्तु बूढ़ा पिता किसी को नहीं चाहिए | इस बुढ़ापे में जब उन्हें एक दूसरे के साथ की आवश्यकता है तब उन्हें दूर करके अमानवीय व्यवहार किया जा रहा है |

2.3.10 'छप्पन तोले का करधन' 1990

'छप्पन तोले का करधन' उदय प्रकाश की बहुत प्रसिद्ध कहानी है | जो उनके *'तिरिछ'* कहानी संग्रह में संकलित है, जिसका प्रकाशन 1990 ई. में हुआ है | इस कहानी में आर्थिक अभावों के परिणाम स्वरूप मनुष्य के मशीन बनने और मानवीय भावों से शून्य हो जाने की कहानी है | वृद्धों के साथ होने वाले अमानवीय व्यवहार को इस कहानी में मार्मिक ढंग से अंकित किया गया है | अस्सी वर्षीय दादी को उसकी बेटी और बहुओं द्वारा अंधेरी, गंदी और सीलन भरी कोठरी में रहने को मजबूर किया है, जहाँ वह नारकीय जीवन जीती है | परिवार के लोग महीनों उससे नहीं मिलते, कोई उससे बात नहीं करता कोठरी की देहरी पर उसका खाना रख दिया जाता | कई बार उसके खाने में धूल मिट्टी तक डाल दी जाती | दादी से काल्पनिक सोने के करधन के रहस्य जानने के लिए कभी नारकीय यातनाएं और कभी उसकी खुशामद की जाती है | उसके जीवित रहने या मर जाने से किसी को कोई सरोकार नहीं परिवार के लोग उसे केवल छप्पन तोले के करधन की स्वामिनी होने के कारण जिन्दा रख रहे थे | दादी अपने बेटे रामे से कहती भी है मेरे पास कोई करधन नहीं है, परन्तु बहुओं को जब तक करधन होने का भ्रम बना रहेगा तब तक ही वे उसे जीवित रखेंगी | यह आज के समाज की वास्तविकता से रु-ब-रु करवाती हैं कि वृद्धों के पास जब तक धन-दौलत है तब तक उनका अस्तित्व है वरना उन्हें बेकार वस्तु की तरह फेंक दिया जायेगा | वर्तमान में परिवार वृद्धों के प्रति संवेदन हीन बनते जा रहे है | इस कहानी में लेखक यह बताने का प्रयास भी कर रहे हैं कि आर्थिक विपन्नता सारे भावनात्मक संबंधों को सुखा डालती है | इसके साथ ही लेखक ने इंसानी रिश्तों में आ रही गिरावट के परिणामस्वरूप बुजुर्गों के प्रति अमानवीय व्यवहार को बड़ी मार्मिकता के साथ दिखाया है |

2.3.11 'अपना रास्ता लो बाबा' 1998

'अपना रास्ता लो बाबा' काशीनाथ सिंह की प्रसिद्ध कहानी है | इस कहानी में शहरीकरण के चलते मानवीय रिश्तों में आ रहे बिखराव एवं विघटन का चित्रण हुआ है | देवनाथ जो अपनी पत्नी आशा और दो बच्चों के साथ शहर में रहता है | गाँव से उसका ताऊ बूढ़ा बेंचू बाबा उसके पास शहर आता है | बेंचू बाबा अपने टी.बी. का इलाज करवाने शहर आता है | देवनाथ और उसकी

पत्नी आशा बेंचू बाबा को जल्द से जल्द गाँव भेजना चाहते थे | वे यह नहीं चाहते थे कि बेंचू बाबा अस्पताल में दाखिल हो जाए ताकि उन्हें उनकी सेवा न करनी पड़ी | देवनाथ की पत्नी आशा कहती हैं – " अस्पताल में भरती होने के लिए आये हैं | एक तो किसी तरह भरती कराओ, दूसरे देखभाल करो, दवा-दारु ख़रीदो, डॉक्टर के कहे के मुताबिक खाना बनवा के पहुँचाओ |" "क्यों नहीं कह देते फ़ुर्सत नहीं है मुझे ?" बूढ़े ताया बेंचू बाबा की सेवा न करनी पड़े इसलिए देवनाथ उन्हें अपने दोस्त डॉ गर्ग के पास दिखाने ले जाते है | डॉ गर्ग ने बताया कि टी.बी की पहली स्टेज है अस्पताल में इलाज करवाने पर ठीक हो सकते हैं | देवनाथ के कहने पर डॉ. गर्ग ने बेंचू बाबा को कहा कि उन्हें कुछ नहीं हुआ है | देवनाथ ने लिव फिफ्टी की गोलियां ले कर ले आया और खाने का तरीका व समय समझा कर उन्हें गाँव भेज दिया | यहाँ गाँव जाने से संकेत यह है कि बाबा को बिना इलाज के मरने के लिए गाँव जाने दिया गया | यहाँ यह दिखाया गया कि किस तरह नई पीढ़ी के लोग अपने दायित्व से पल्ला झाड़ लेते है | यहाँ लेखक गाँव से शहर में बसने वाले लोगों की जीवन शैली का चित्रण भी करते हैं | शहर में रहने वाले देवू की आर्थिक स्थिति अच्छी है, वह 'ए' क्लास अधिकारी बनने जा रहा था | वह अच्छी सिग्रेट पीता है, अच्छे मकान में रहता, बड़ा बंगला बना रहा है और अपने बॉस को दावत पर बुलाने की सोचता रहता है | लेकिन परिवार के वृद्ध ताया के लिए खर्च करते समय संकोच करता है | परिवार में वृद्धों की देख-रेख और सम्मान देने की परम्परा मिट रही हैं | आधुनिक शहरीकरण के कारण नई पीढ़ी अपनी जड़ो से कटती जा रही है | वे अपने बुजुर्गों के प्रति संवेदनहीन होते जा रहे हैं | इस कहानी में लेखक ने टूटते मानवीय सम्बन्ध, मानवीय रिश्तों में बिखराव तथा वृद्धों के प्रति संवेदनशीलता की कमी का चित्रण बड़े मार्मिक ढंग से किया है |

अन्य प्रसिद्ध कहानियाँ- *'कमरा नंबर 103'* सुधा ओम ढींगरा की कहानी है | इस कहानी में अति महत्वाकांक्षी होने के कारण नष्ट होती इंसानियत को दिखाया गया है | विदेशों में रह रहे भारतीय अपने बच्चों की देख रेख करने के लिए तथा 'डे केयर' और 'बेबी सिटर' का पैसा बचाने के लिए अपने बूढ़े माँ-बाप को अपने पास बुला लेते हैं | जब तक माँ-बाप स्वस्थ रहते हैं, बच्चों की देख-रेख करते हैं व घर का काम करते रहते हैं तब तक उनको घर में रखा जाता है | माँ-बाप जैसे ही अस्वस्थ हो जाते हैं, उन्हें सरकारी अस्पताल में भर्ती करा दिया जाता है और फिर देखने तक नहीं जाते हैं | इस कहानी की वृद्ध पात्र मिसेज वर्मा को उनके बेटे और बहु अस्पताल में भर्ती कर देते है लेकिन उनकी देखभाल करने नहीं आते | लेखिका लिखती हैं – "ज्योहीं उन्हें आईसीयू से कमरा न 103 में स्थानांतर किया गया, उस दिन से आज तक, उनके बेटे और बहू की किसी ने सूरत नहीं देखी ..वे उन्हें घर के फालतू सामान की तरह हस्पताल छोड़ गए |"(ढींगरा) यह कहानी विदेशों में वृद्धों के अकेलेपन और उनके साथ अमानवीय व्यवहार को दिखाया गया है | *'बूढ़ा ज्वालामुखी'* गिरिराज शरण अग्रवाल की कहानी है | इस कहानी में बूढ़ों के जड़ व जिद्दी स्वभाव को दिखाया है | इस कहानी का पात्र पचहत्तर वर्षीय रायबहादुर प्रतापनारायण सिंह अपनी अनगिनत संपति और भौतिक सुख सुविधाओं के बावजूद अपने जड़ और जिद्दी स्वभाव के कारण वृद्धावस्था में नितांत अकेले रह जाते हैं | उनकी बेटी शकुन्तला ने एक ऐसी जाति के युवक से प्रेम-विवाह कर लिया जिसे वह नीच समझते है | वह शकुन्तला से सारे सम्बन्ध तोड़ देते हैं और अकेले पड़ जाते हैं | वे एक कुतिया कैरी और नौकर इमाम के साथ रहते हैं | रायबहादुर अपनी प्यारी कुती कैटी को दूसरे बहरी कुत्तों के साथ देखकर उसे गोली मार देते हैं | पचहत्तर साल की आयु में वे शारीरिक रूप से तो स्वस्थ हैं पर मानसिक रूप से तथा भावनात्मक रूप से एकदम

अस्वस्थ है | *'पुनरागमन'* उर्मिला शिरीष की कहानी है | इस कहानी में पत्नी की मृत्यु के बाद बूढ़ा पति अपने बेटों तथा भाई के घर में उपेक्षा का शिकार हो जाता है | गाँव में रहने के लिए आता है, तो अपने गाँव में भी उसके लिए सब पराये हो जाते हैं | इस अवस्था में अपने घर तथा जमीन के लिए लड़ना पड़ता हैं | अपने हक़ की जमीन के लिए अपनों से लड़ना आज के समाज की वास्तविकता हैं | *'बेटी'* वीरेंद्र कुमार की कहानी है | इस कहानी में एक ही घर के दूसरे हिस्से में रहने वाले बूढ़े माँ-बाप के प्रति बेटे और उसके परिवार के उपेक्षा पूर्ण व्यवहार को दिखाया गया है | अनिल अपने बीवी-बच्चों के साथ मकान के ऊपर वाले हिस्से में रहता हैं | नीचे वाले हिस्से में उसकी छोटी बहन उमा और बूढ़े माँ-बाप रहते हैं | अस्सी वर्ष की उम्र में उसके पिता अस्पताल में आखिरी साँसे गिन रहे हैं | लेकिन अनिल एक ही घर में साथ रहते हुए भी अनजान बना हुआ है | 'अनिल भैया, बाबूजी जा रहें हैं |' कहाँ जा रहे हैं ? संसार छोड़ कर जा रहे हैं |' 'तो' 'बार-बार तुम्हें याद कर रहें हैं |' मैं क्या करूँ ? मेरे पास कुछ पैसा-वैसा नहीं है |'नहीं, खर्च का मैंने सब प्रबंध कर दिया है लेकिन तुम अगर बच्चों को साथ लेकर उनसे मिल जाओ तो शायद उन्हें तृप्ति मिलेगी |' (सिंह 226) इस कहानी में बेटे की संवेदनहीनता को दिखाया गया है | इसके साथ ही अन्य प्रसिद्ध कहानियों में अमृतराय की 'आँखमिचौनी' कहानी में हर वृद्ध की मानसिक स्थिति का वर्णन किया गया है | यशपाल की 'समय' कहानी भी वृद्ध जीवन से सम्बंधित है | मृदुला गर्ग ने वृद्धों की समस्याओं को लेकर अनेक कहानियों की रचना की है जिनमें 'बेंच पर बूढ़े', 'साथ साल की औरत', 'बांस फल', 'छत पर दस्तक', 'उर्फ़ सेम', 'उधार की हवा', आदि कहानियां उल्लेखनीय हैं | वृद्धों की पीड़ा व दशा का उल्लेख सूर्यबाला की निम्नलिखित कहानियों में मिलता है - 'निर्वासित', 'सौगात', 'समापन', 'बाबूजी और बंदर', 'वाचाल सन्नाटे', और 'दादी का खजाना' आदि | अंत: उपर्युक्त परिचय से देख सकते हैं कि 21वीं सदी के पूर्व वृद्धों की समस्याओं को लेकर भरपूर कहानियाँ लिखी गई हैं | ये कहानियाँ वृद्ध विमर्श को केवल सहानुभूति के स्तर पर नहीं, बल्कि सामाजिक यथार्थ और सांस्कृतिक संकट के रूप में प्रस्तुत करती हैं |

2.4 21वीं सदी में वृद्धों पर केंद्रित हिंदी कहानियों का संक्षिप्त परिचय

21वीं सदी का हिंदी कथा-साहित्य जीवन के विविध यथार्थों को चित्रित करता है | इनमें वृद्धावस्था से जुड़ी समस्याएँ एक महत्त्वपूर्ण विमर्श के रूप में उभरकर सामने आई हैं | बदलते सामाजिक परिदृश्य, संयुक्त परिवारों के विघटन और तीव्र आधुनिक जीवन-शैली ने वृद्धों को विशेष रूप से प्रभावित किया है | पहले जहाँ वृद्ध परिवार और समाज में मार्गदर्शक तथा अनुभव-संपन्न माने जाते थे, वहीं अब वे प्रायः उपेक्षा, अकेलेपन और असुरक्षा का शिकार हो रहे हैं | इसी संदर्भ में 21वीं सदी की हिंदी कहानियाँ वृद्धों की आर्थिक निर्भरता, सामाजिक हाशियाकरण, पारिवारिक उपेक्षा, भावनात्मक अकेलापन और मृत्यु-बोध को मार्मिक ढंग से प्रस्तुत करती हैं | कथाकार केवल संवेदना जगाने तक सीमित नहीं रहते, बल्कि बदलते सामाजिक ढाँचे में वृद्धों की बदलती भूमिका और उनकी अस्मिता के प्रश्न को भी गहराई से उठाते हैं | इस प्रकार 21वीं सदी में रची गई हिंदी कहानियाँ न केवल वृद्धों की समस्याओं को उजागर करती हैं, बल्कि यह भी प्रश्न खड़ा करती हैं कि आधुनिक समाज में वृद्धों के सम्मान और गरिमा की रक्षा किस प्रकार संभव हो | वर्ष 2000 ई. के पश्चात वृद्धों पर केंद्रित हिंदी कहानियों में एस. आर हरनोट की *'बिल्लियाँ बतियाती है'*, *'लोहे का बैल'*, *'बीस फुट के बापूजी'* और *'कागभाखा'*, चित्रा मुद्गल की 'गेंद', कृष्णा अग्निहोत्री के कहानी संग्रह *'अपना-अपना*

अस्तित्व' में संकलित *'झुर्रियों की पीड़ा', 'अपना-अपना अस्तित्व', 'मैं जिन्दा हूँ', 'तोर जवानी सलामत रहे', 'उसका इतिहास', 'यह क्या जगह है दोस्तों', 'बदमिजाज', 'प्रेमाश्रय', 'बिदाई समारोह', 'टीन के घेरे', 'स्वाभिमानी', 'वे अकेली थीं'*, सूर्यबाला की *'दादी और रिमोट'* और 'साँझवाती', डॉ. दिलीप मेहरा की *'अग्निदाह', 'हंसा ताई', 'साजिश'*, सरोज भाटी की *'बेटा'*, भानुप्रताप कुठियाला की *'लाजबन्ती'*, सूरजपाल सिंह चौहान की *'सासु की मानसिकता'* रत्नकुमार साम्भ्रिया की *'बूढी'* निरुपमा राय की *'चलो एक बूढ़े की कथा सुनते है'* इत्यादि | 21वीं सदी की प्रमुख व चयनित कहानियों का संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित प्रकार से हैं –

2.4.1 'बिल्लियाँ बतियाती हैं' (2001)

'बिल्लियाँ बतियाती है' एस.आर हरनोट की प्रसिद्ध कहानी है | यह उनके कहानी संग्रह 'दारोश तथा अन्य कहानियों' में संकलित है, जिसका प्रकाशन 2001 ई. में हुआ है | यह कहानी गाँव में अकेली रह रही वृद्ध माँ की पीड़ा का अनोखा और मार्मिक चित्र प्रस्तुत करती है | इसमें अम्मा के अकेले पन का विचित्र संसार है | उम्र की जिस अवस्था में अम्मा है, वहां उसे सबसे अधिक भावनात्मक सहारे की जरूरत है | अम्मा ने बेटे को हजारों कर्जा लेकर खूब पढ़ाया-लिखाया | अपने खेत रेहन पर रक्खे | बेटा शहर में नौकरी करने चला गया और वहीं शहर में किसी लड़की से ब्याह भी कर लिया | बेटा गाँव और अम्मा को भूलकर वहीं का हो गया | लेकिन पति की मृत्यु और बेटे का शहर में बस जाना ने अम्मा को नितांत अकेला कर दिया | अम्मा का साथ निभाने वाला उसका बेटा नहीं बल्कि उसके अकेले पन के साथी काली और निक्की नामक बिल्लियां, ओबरे में बांधे पशु, आँगन में चहकती चिड़िया | और इसके साथ गाँव के हर लोगों के साथ अम्मा किसी न किसी तरह व्यस्त रहती है | "ऐसा कोई बच्चा गाँव का न होगा जो अम्मा के यहाँ गुड की डाली या मक्खन-रोटी न खा जाता हो, ऐसी औरत नहीं होगी जो पानी-पनिहार, घास लकड़ी को आते जाते अम्मा के आँगन बैठ बीड़ी का कश न मार जाती होगी, ऐसा कुता न होगा जो अम्मा के दरवाजे टुकड़ा न खा जाता होगा |" (हरनोट 12) अब यही अम्मा का भरा-पूरा परिवार जिनसे वह अपना अकेलापन दूर करती हैं | अम्मा अपनी पीड़ा को किसी से नहीं बाँटती और न ही किसी से कोई शिकायत करती | जबकि उसका बेटा माँ की चिंताओं से विमुख अपने बीवी-बच्चों के साथ शहर में मजे से जी रहा है | माँ दिन-रात बेटे-बहू और पोतो की चिंता में लगी रहती | "अम्मा को डाकिये की बातें कई बार अकेले में याद आ जाया करती हैं | दंगे फसाद होते हैं, लाठियां-गोलियां चलती है | इन सभी के बीच उसके बेटे-बहू कैसे रहते होंगे | पोतू स्कुल कैसे जाता होगा | माँ का दिल है न ...बेटा दूर ही क्यों न हो, बहू नफरत क्यों न करें, अम्मा उन्हें याद किया करती है |" (हरनोट 14) अंत में बेटा गाँव आता है, माँ से मिलने या हाल-चाल पूछने नहीं बल्कि पैसे लेने | लेकिन माँ से कहने की हिम्मत नहीं होती | पर माँ बेटे की बेचैनी और परेशानी समझ जाती है कि उसे पैसो की जरूरत है | अम्मा बेटे के बिना बोले अपनी सारी जमा-पूंजी ख़ुशी-ख़ुशी सौंप देती है | "तेरे सिरहाने पैसे रख दिए है बेटा | लेते जाना | तेरे काम आएंगे |" (हरनोट 23) यहाँ माँ के चरित्र में जो सादगी, सहजता, वात्सल्य और प्रेम है वह अन्य किसी रिश्तों में नहीं | आधुनिकता के इस दौर में बच्चे माँ की ममता, त्याग, समर्पण, एकाकीपन को महसूस नहीं कर पाते | लेकिन माँ अपने बच्चों की हर समस्याओं और जरूरतों को बिना बोले समझ जाती है |

2.4.2 'बीस फुट के बापू जी' (2001)

'*बीस फुट के बापू जी*' एस.आर हरनोट की चर्चित कहानी है | यह कहानी भी '*दारोश*' कहानी संग्रह में संकलित है, जिसका प्रकाशन 2001 ई. में हुआ है | यह कहानी बदलते परिवेश, टूटते मानवीय मूल्यों, पीढ़ियों के अंतराल की कहानी है | इस कहानी में अम्मा की जगह शिमला के रिज मैदान पर पर्यटकों की घुड़सवारी के लिए घोड़े का काम करने वाले स्वाभिमानी, आत्मनिर्भर पचहत्तर वर्षीय चाचू नामक पात्र का विवरण प्रस्तुत हुआ है | जो अकेलेपन का शिकार होता है | चाचू ने घर-परिवार और लड़के की पढ़ाई के लिए दिन-रात मेहनत की | बेटा स्कूल से निकला तो सेना में नौकरी मिल गयी | लेखक लिखते हैं - "चाचू चाहता था बेटा जहाँ भी नौकरी करें ठीक है पर अपने गाँव को न भूले | वहां अच्छा सा घर बनाए, ब्याह करके बच्चों को वहां रक्खे | आखिर अपनी जगह जमीन है | पर बेटे को यह नहीं भाया | उसने बार-बार चाचू को घोड़े का धंधा छोड़ने को कहा पर चाचू नहीं माना | अंत में बेटे ने चाचू को ही छोड़ दिया |" (हरनोट 31) जिस घुड़सवारी के काम से चाचू ने अपने बेटे को पढ़ाया-लिखाया, उसी काम-धंधे की वजह से उसके बेटे ने अपने पिता को छोड़ दिया | इस कहानी में युवाओं का पलायन, वैचारिक मतभेद, वृद्धों की उपेक्षा, अकेलापन और जीवन संघर्ष का मार्मिक यथार्थ प्रस्तुत करती है |

2.4.3 'कागभाखा' (2001)

'*कागभाखा*' एस.आर हरनोट की बहुचर्चित कहानी है | यह '*दारोश*' कहानी संग्रह की चौथी कहानी है, जिसका प्रकाशन 2001 ई. में हुआ है | 'दादी' इस कहानी की प्रमुख पात्र है | बहू-बेटे द्वारा उपेक्षित स्वाभिमानी दादी को कई वर्ष अकेले हो गए | दादी का एक बेटा था जो दोघरी में अपने बीवी बच्चों के साथ रहता था | बहू को दादी अच्छी नहीं लगती थी | वह जब भी बीमार होती हल्का जुखाम भी हो जाए उसका दोष भी दादी को जाता बजाय इसके कोई दवा लें | "इस बुढ़िया के पास भूत है | उसी ने कुछ कर दिया है |" (हरनोट 53) दादी 'काग' यानी कि कौए की भाषा समझती थी | जिससे गाँव की नई पीढ़ी दादी को अच्छा नहीं समझती थी | वे समझते थे दादी जरूर कोई जादू टोना जानती होगी | कुछ लोग तो दादी को डायन तक कह देते थे | दादी ये सुनकर चुप चाप इधर उधर निकल जाया करती, कभी पेड़ के नीचे बैठकर खूब रोया करती | यही दादी मौका मिलने पर गलत बातों का विरोध भी करती है | दादी जानती है कि गाँव के प्रधान ने अधेड़ उम्र के मंगलू की जमीन के कागजात पर जबरदस्ती अंगूठा लगाकर उसकी हत्या कर दी | पुलिस पूछताछ के लिए जब गाँव में आती है तो पुलिस द्वारा भी वृद्ध पात्र दादी से बदतमीजी की जाती है | "ये रे बुढ़िया | पूछ रहा हूं तने तो नहीं कुछ कहना |" (हरनोट 57) गाँव में प्रधान द्वारा वृद्धों की पेंशन में भ्रष्टाचार करना | "अपने परधान से क्यों नहीं पूछते | वह पेंशन मेरे नाम से इसने अपनी जनानी को लगा रखी है |" (हरनोट 59) प्रधान के विरुद्ध आवाज उठाने की सजा दादी को मिलती है | प्रधान दादी के घर में आग लगा देता है | दादी किसी तरह जान बचाकर अपने बेटे के घर पहुँचती है | दरवाजा खड़खड़ाया | "बहू. कौन है इस वक्त ? "मैं हूं बहू, मैं | आवाज सुनकर बच्चे भी उठ गए | बड़ी लड़की ने पूछा, "अम्मा कौन है ? दरवाजा खोलूं ?" "नहीं ..नहीं मत खोलना | वह डायन है |" दादी ने सुना तो भीतर तक टूट गयी | पता नहीं कितनी देर दरवाजे

के पास अँधेरे में रोती रही |" (हरनोट 59,60) कहानी में दादी को बेटे-बहू, गाँव की नई पीढ़ी, प्रधान, पुलिस वाले आदि से संघर्ष करते दिखाया गया है |

2.3.4 'गेंद' (2002)

'गेंद' चित्रा मुदगल की वृद्धावस्था पर आधारित प्रसिद्ध कहानी है | यह कहानी उनके कहानी संग्रह *'लपटें'* में संकलित है, जिसका प्रकाशन 2002 ई. में हुआ है | इस कहानी में वृद्धों के जीवन में आ रही उपेक्षा से उत्पन्न पीड़ा एवं विपदाओं के साथ-साथ बच्चों के प्रति माता-पिता की लापरवाही का भी चित्रण किया है | आज भौतिकवादी युग में प्रत्येक मनुष्य विकास के पीछे दौड़ रहा है | इस दौड़ में स्वयं को आधुनिक मानकर वह आर्थिक समृद्धि की लालसाओं में अपने परिवार से दूर होते जा रहे है | यह कहानी सेवानिवृत्त सचदेवा की पीड़ा को बयान करती है | सचदेवा का बेटा इंग्लैण्ड चला गया और वहीं शादी करके बस गया | पिता के अंतिम दिन ठीक से बीते इसलिए उसने पिता की व्यवस्था वृद्धाश्रम में कर दी | सचदेवा इस अवस्था में अपने परिवार से स्नेह और संवेदना पाना चाहते थे लेकिन अपने बच्चों द्वारा हो रही उपेक्षा से पीड़ित है | वह अपने बेटे विनय को फोन करता लेकिन फोन को उसकी बहु मारग्रेट उठाती है | वे एक-दूसरे की बात को समझ नहीं पाते है | सचदेवा का मन अपनी पोती सुवीना से भी बाते करने का होता है | लेखिका लिखती हैं – "पोती सुवीना से बाते न कर पाने का मलाल हफ्तों कोंचता रहा | हालाँकि बाते तो वह उस गुड़िया की भी नहीं समझते |"(मुद्गल 12) कहानी में सचदेवा को आर्थिक व्यथा से ज्यादा भावनात्मक साहचर्य के लिए पीड़ित दिखाया गया है | दूसरी ओर एक छोटा सा बच्चा भी माँ की उपेक्षा का शिकार है | बच्चे की माँ डॉक्टर होकर भी डिस्पेंसरी जाते समय अपने बच्चे को घर में बंद कर देती है, ताकि वह आस-पास के बच्चों के संपर्क से बिगड़ न जाए | ऐसी स्थिति में वृद्ध सचदेवा और वह छोटा बच्चा पारिवारिक साहचर्य के अभाव की पूर्ति एक-दूसरे के साहचर्य से करते हैं | यह कहानी परिवार में बच्चों द्वारा वृद्धों के प्रति बढ़ती उपेक्षा को प्रस्तुत करती है |

2.4.5 'दादी और रिमोट' (2005)

सूर्यबाला की प्रमुख कहानी *'दादी और रिमोट'* है | यह उनके कहानी संग्रह 'मानुष गंध' में संकलित है | इस कहानी में गाँव से शहर लायी गयी एक दादी की कहानी है | उसका बेटा और बहू दोनों नौकरी करते है तथा पोता-पीती स्कूल जाते है | दादी पूरे घर में अकेली रह जाती है | शहर के ऊँची इमारत वाले सातवीं मंजिल पर बेटे-बहु, पोते-पोती के साथ रहते हुए भी दादी को अकेलापन सताता है | जिसका चित्रण लेखिका करती हैं – "घर के लोग अपने-अपने समय पर आते-जाते | आपस में थोड़ी बातचीत करते, फिर अपने-अपने काम में मशगूल हो जाते | दादी उनके आसपास कहीं न कहीं बैठने-उठने, चलने-फिरने की कोशिश करती रहती | फिर थककर अपनी कोठरी में आकर रिमोट का बटन दबा देती | (सूर्यबाला 56) आज भौतिकतावाद और भाग-दौड़ भरे जीवन में किसी के पास अपने बुजुर्गों से बात करने का समय भी नहीं है | दादी को अपना अकेलापन दूर करने के लिए टी.वी. और रिमोट का सहारा लेना पद रहा है | दादी को घर के अंदर टी.वी. तथा दो तीन वीडियो गेम्स दे दिए जाते है जिससे उसका वक्त कट जाए | दादी को जितना टी.वी. देखना होता देखती उसके बाद आँखें बंद करके सो जाती | दादी को समझाया जाता है कि कोई भी

दरवाजा खटखटाए तो दरवाजा खोलना नहीं है | हम सबके पास अलग-अलग चाबी है अगर हम हैं तो हम दरवाजा खुद खोलकर अंदर आ जायेंगे | दादी गाँव वालो को कोसती है कि अगर उन लोगों ने मेरे बेटे को चिट्ठी लिख कर मुझे ले जाने को नहीं बोला होता तो आज मेरी यह स्थिति नहीं होती है | गाँव से शहर में गए वृद्धों के सामंजस्य की समस्या को दिखाया गया है |

2.3.6 'साँझवाती' (2015)

'साँझवाती' सूर्यबाला की प्रसिद्ध कहानी है | यह कहानी उनके 'साँझवाती' कहानी संग्रह में संकलित है, जिसका प्रकाशन 2015 ई. में हुआ है | यह वृद्धों के फालतूपन के अहसास की कहानी है | इसमें बुजुर्ग दंपत्ति के अकेलेपन की समस्या को उठाया गया है | इस कहानी का वृद्ध एक बेटे के पास रहता है और उसकी पत्नी दूसरे बेटे के पास रहती है | दोनों एक-दूसरे से मिलने के लिए तड़पते रहते है | अस्सी वर्षीय वृद्ध अपनी बहत्तर वर्षीय पत्नी को मिलने सात काले कोस पैदल चलकर पहुँचता है | हालाँकि बेटे के पास गाड़ी ड्राइवर सब कुछ है सिर्फ अपने बीवी-बच्चों के लिए बूढ़े पिता के लिए नहीं | वृद्ध पत्नी जब पूछती है ड्राइवर कहाँ है तो वृद्ध पति कहता हैं – ड्राइवर कित्थे बेगम ? गड्डी कौन बेवकूफ लाया ? तो फिर ? शान की सवारी बस | इस उम्र में..(सूर्यबाला 104) खाट पर पड़ी वृद्ध पत्नी की अपाहिज काया बहुत दुखी हुई | तीन-तीन बेटे के होते हुए भी किसी में हिम्मत नहीं कि माँ-बाप को इकट्ठा अपने पास रख सके | वृद्ध दंपत्ति बेटों के बीच बाँट लिए गए हैं लेकिन दूर रहकर भी इनका आपसी लगाव और प्यार कम नहीं हुआ है | इस उम्र में और इतने दूर रहकर भी वे एक-दूसरे के खाने-पीने, रहने व स्वास्थ्य की चिंता लगी रहती है | अस्सी वर्षीय वृद्ध जब अपनी वृद्ध पत्नी से मिलने अपने दूसरे बेटे के घर पैदल पहुँचते है तब वे एक-दूसरे का हाल चाल पूछते हैं उस समय वृद्ध कहता है – "चंगा है तेरा यार बेगम, ऐन तेरे सामने और क्या चाहिए तुझे ? "रोटी खा के आया क्या मेरा यार ? उदास शब्दों में मसखरी फूटी | रोटी की ऐसी की तैसी, लंच बोल लंच .." झूठ ! और झूठ बोले तो .." (सूर्यबाला 103) वृद्ध पत्नी को भी पता था कि वे भूखे पेट मुझसे मिलने आये है | यहाँ पुरानी पीढ़ी में प्रेम, समर्पण, सामंजस्य, आपसी समझ को दिखाया गया है | जो आजकल के एकल परिवार में दुर्लभ है | तनाव भरा जीवन जीने वाली यह पीढ़ी सिर्फ 'मैं' को महत्व देती है | आधुनिकता की इस अंधी दौड़ में नई पीढ़ी को बाहरी दुनिया में काम करके ज्यादा ख़ुशी मिलती है जबकि पुरानी पीढ़ी के लोग परिवार की ख़ुशी में ही खुश रहते हैं | यह कहानी युवाओं के जीवन मूल्यों के प्रति गहरी चिंता व्यक्त करती है तथा वृद्धों के प्रति पाठक को संवेदनशील बनाती है |

2.4.7 'झुर्रियों की पीड़ा' (2018)

कृष्णा अग्निहोत्री के कहानी संग्रह '*अपना-अपना अस्तित्व*' की पहली कहानी '*झुर्रियों की पीड़ा*' है | 'अपना-अपना अस्तित्व' कहानी संग्रह का प्रकाशन 2018 ई. में हुआ है | जिसमें लेखिका ने वृद्धाश्रम में रह रही भिन्न-भिन्न परिवेश की औरतों की पीड़ा व दुख को अभिव्यक्त किया है | लेखिका वृद्धाश्रमों में रहने वाले वृद्धों की जीवन शैली, समस्याओं व परिस्थितियों से परिचय करवाती है | लेखिका इन बातों को भी उजागर करती है कि वृद्धाश्रम में बुजुर्ग अपनी इच्छा से आए या उन्हें मज़बूरीवश आना पड़ा या जबरदस्ती उन्हें उनकी संतानों द्वारा भेजा गया | लेखिका एक वृद्ध महिला गोमती से उनके घर-परिवार के बारे में तथा उनके आश्रम में आने का कारण पूछती है | गोमती अपने परिवार के बारे में बताती है, उनके परिवार में सभी है लेकिन पति के मरते

ही उनसे सारे घर के काम करवाए जाने लगे जब काम नहीं हो पाया तब उन्हें बोझ समझ कर यहाँ छोड़ गए | "पति के मरते ही जब मुझसे काम नहीं हो पाया तो मुझे सीढ़ियों के नीचे रहने का आदेश मिला | बर्तन, कपड़े भोजन मुझसे नहीं संभल रहा था | बहू-बेटे ने मेरी जमा पूंजी सब छीन ली, मुझे अधपेट भोजन मिलता | जब मैंने आवाज उठाई तो मुझे यहाँ वे छोड़ गए | (अग्निहोत्री 12) जो वृद्ध परिवार के काम न आए, जिनके पास धन-दौलत नहीं होती उन वृद्धों की स्थिति अच्छी नहीं होती | ऐसे वृद्धों को उनकी संताने बेकार वस्तु के समान घर से बाहर कर देते हैं | मान-सम्मान की अपेक्षा रखने वाले वृद्ध अपने ही बच्चों का निरादर देख टूट जाते हैं | लेखिका ने एक अन्य महाराष्ट्रियन वृद्ध महिला से उनका हाल पूछा | उसकी भी वही स्थिति पति की मृत्यु के बाद बच्चों द्वारा उपेक्षा इसका वर्णन लेखिका ने किया है - "मरद के मरते ही बहू के बीमार बच्चे रोज रुला देते, बहू रोज मुझे कोसती, अरी मर जा, तेरे इस मकान को बेच छोटे घर में ही बच्चे पाल लेंगे | मेरे मरद बाबू था प्राविडेंट फंड भी मिला, परंतु वे ढीठ बन उसे छीना, मुझसे बर्तन का काम करवाया | बेटे ने मदद न कर एक दिन रिक्शा बुलाकर यहाँ रखा व मुंह फेरकर चलता बना |" (अग्निहोत्री 12) जिन बच्चों के लिए माँ-बाप अपनी सारी खुशियों की कुर्बान कर दे देते है वही संतानें जब वृद्धावस्था में उन्हें अनुपयोगी समझ कर वृद्धाश्रम भेज देते हैं | लेखिका एक अन्य 90 वर्षीय वृद्ध महिला कांता देशपांडे से उनकी परिस्थिति को जानने का प्रयास किया | कांता जी सम्पन्न परिवार की से संबंध रखती थी | उसके पति ज्वेलर थे | पक्का दो मंजिल का मकान था जहाँ बेटा-बेटी बहू, पोते-नाती सभी साथ रहते थे | पति की मृत्यु के बाद सब बदल गया | बेटा दुकान से जेवर चुराकर अपनी दुकान ले जाने लगा |

> "एक दिन बेटे ने मेरे सामने कागज़ रख कहा "आई इन पर साइन कर दे, कर्ज उठाना है दुकान में घाटा हो रहा है, सब ठीक हो जाएगा |" मैंने बिना सोचे समझे दस्तखत कर दिए | दस्तखत क्या किये कि जैसे बुरे दिन पलटकर आ गये | मानो अपनी विषमताओं पर साइन किया | एक दिन बेहोश हो गई तो मुझे अस्पताल दोनों बेटे ले गए, वहीं से यहाँ पटक गये |" (अग्निहोत्री 13)

बड़े दुख की बात है माँ अपने बच्चों के प्रति वात्सल्य एवं प्यार के वशीभूत अपना सब कुछ संतान को सुपुर्द कर देती है | यहाँ देख सकते है किस तरह वृद्ध माँ अपनी सारी संपत्ति अपने बच्चों के नाम मोह वश कर देती है | लेकिन बच्चे उस संपत्ति के मिलते खुद को मालिक समझ बैठ और माँ का तिरस्कार कर उन्हें वृद्धाश्रम भेज देते हैं | आज के इस आधुनिक दौर में वृद्धों को वृद्धाश्रम में भेजने की परम्परा सी बनती जा रही है | वृद्ध माँ-बाप की अनगिनत कुर्बानियों को उनके बच्चे भूल जाते हैं | आज की पीढ़ी यह क्यों नहीं समझ पाती कि जिस उम्र में बुजुर्गों को उनके सहारे, प्यार, सम्मान और सहयोग की आवश्यकता पड़ती है उस उम्र में उन्हें बेसहारा छोड़ वृद्धाश्रम में अकेले जीवन यापन करने के लिए मजबूर कर दिया जाता है | वृद्धाश्रम में एक अन्य वृद्ध पात्र सुमित्रा जी अपने बारे में बताती है कि उसकी दो बेटियां हैं | दोनों ने प्रेम विवाह किया अब वे विदेश में रह रही है | उनके साथ उनके पतियों के माँ-बाप, भाई-बहन साथ रह रहे हैं | वह कहती है बूढ़े होने के कारण हम विदेश जा नहीं पाते | यहाँ इस आश्रम में दंपति को अलग से कमरा मिलता है | मेरे पति की पूरी पेंशन यहाँ लगा देते है | जिस कारण आश्रम में सब देख-रेख करते हैं | वृद्धाश्रम में देख-भाल तो होती है लेकिन स्वतंत्रता से घूमना-फिरना व समाज और रिश्तों से कट जाते हैं | यहाँ बेटियों की शादी हो जाने के बाद अकेले रह रहे वृद्धों की दशा का चित्रण किया गया है | उन्हें मजबूरी वश वृद्धाश्रम का चयन करना पड़ता है | गोमती, महाराष्ट्रीयन महिला, कांता, सुमित्रा

आदि सभी वृद्धों के दुःख-दर्द थोड़े बहुत अंतर के साथ एक ही जैसे है | ये सभी अपनी ही संतानों द्वारा उपेक्षित की गयी है | लेखिका खुद माँ की मृत्यु के बाद सेवानिवृत्त के सात वर्ष तक नितांत एकाकी जीवन व्यतीत करती रही | लेखिका को अपना जीवन निरुद्देश्य महसूस होने लगता तो कुंठित होकर आत्महत्या का साहस जुटाने लगती है | तब हिम्मत हार वह वृद्धाश्रम में अपना सामान लेकर चली जाती है | जिस कमरे में सुमित्रा जी रहती थी, उसी कमरे में लेखिका भी रहने लगी | लेखिका सोचती है मानव जीवन की इस प्रक्रिया में झुर्रियों का आना स्वाभाविक है | समय से पूर्व अपने जीवन को नष्ट क्यों करें तथा इस सुख भरी यात्रा को पूर्ण करें | कहानी के अंत में यह दिखाया गया है कि जो लेखिका वृद्धाश्रम में रह रहे वृद्धों की दशा को समाज के सामने रखना चाहती थी लेकिन वह स्वयं बुढ़ापे में अपने निर्वाह के लिए उसी वृद्धाश्रम में शरण लेती है |

2.4.8 'अपना-अपना अस्तित्व' (2018)

यह 'अपना-अपना अस्तित्व' कहानी संग्रह की दूसरी कहानी है जिसकी कथावस्तु दो वृद्ध स्त्री पात्रों दिव्या और निर्मला के इर्द-गिर्द घूमती रहती है | इस कहानी में निर्मला और दिव्या अपने-अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रही है | दिव्या और निर्मला दोनों अपने पारिवारिक जीवन में अनेक संघर्षों का सामना करती हैं | दिव्या घर के काम-काज और पोते की देखभाल में लगी रहती है | उसके घर के कामकाज में उसकी बहू किसी तरह की कोई मदद नहीं करती है | रिटायर्ड वृद्धों के जीवन को नई पीढ़ी केवल एक केयरटेकर मानकर चलती है | जो वृद्धों के लिए मानसिक दंश से कम नहीं है | इस कहानी की पात्र दिव्या कहती है -"हाँ, लेकिन यदि हमारी पीढ़ी हमें अपने व्यवहार से यह समझाए कि हम अब रिटायर्ड हैं तो केवल केयर-टेकर की भूमिका निभा उनका खर्चा बचाएँ तो यह हमारे लिए एक मानसिक दंश ही है |" (अग्निहोत्री 19) वृद्धों का जीवन पोते-पोतियों और घर की देखभाल में निकल जाता है | अगर यह काम न करो तो वे बोझ माने जाते है उन्हें घर से निकलने की धमकियाँ व ताने दिए जाते है | एक दिन अखबार में दिव्या के मृत्यु का समाचार सुन निर्मला उसके घर पहुँची | वापस घर पहुँचने पर बेटे-बहू के ताने सुनने पड़े | "बहुत शौक है घूमने-फिरने का तो रहो कहीं अकेली | हमारे साथ ये गुलछर्रे नहीं चलेंगे ..."हाँ-हाँ, तुम्हीं ने दोनों को पाला है न |" "तो कौन सा एहसान किया है ? हमारे साथ रहती हो तो ये सब करना ही चाहिए वरना अन्यत्र रहो |" (अग्निहोत्री 25) वृद्धों अगर अपनी मर्जी से घर से बाहर जाता हो, मित्रों से मिलने जाता हो तो वह इतना बड़ा अपराध हो जाता है कि उन्हें घर से निकलने तक की धमकी दी जाती है | क्या बूढ़ों का जीवन सिर्फ अपने बच्चों और पोतों को पालने तक सीमित रह गया है | माँ-बाप अपना सब कुछ लूटा कर अपने बच्चों को पालते हैं बदले में उन्हें वह मान-सम्मान नहीं मिलता जिसके वे हकदार होते है | निर्मला जब यह सब महसूस करती है तब उसे लगता है कि वह इस अन्याय को नहीं सहेगी | निर्मला अपने बेटे-बहू के व्यवहार से पीड़ित उन्हें घर खाली कर कहीं जाने को कहती है - "मैं अपनी इच्छा से जितनी भागीदारी कर सकी, करती रहूंगी | मुझ पर जोर जबरदस्ती न लादी जाए | यदि तुम्हें मेरे आराम-सुख नहीं पसंद है तो तुम सपरिवार कहीं शिफ्ट हो जाओ | मैं अपना ठौर नहीं छोडूँगी | मकान मेरे नाम है इसलिए तुम मुझे कहीं नहीं भेज सकते |" (अग्निहोत्री 26) इस प्रकार निर्मला वृद्धावस्था में अन्याय न सहने में सक्षम है, तथा अपने आत्मसम्मान और अस्तित्व की रक्षा कर पाती है | लेकिन कुछ वृद्ध अपमानित होकर मृत्यु की राह देखते हुए जीवन व्यतीत कर लेते हैं |

2.4.9 'मैं जिंदा हूँ' (2018)

यह *'अपना-अपना अस्तित्व'* कहानी संग्रह की तीसरी कहानी है | यह एक ऐसी वृद्ध स्त्री की कहानी है जिसके पास सब कुछ होते हुए भी एकाकीपन का जीवन जी रही हैं | इस कहानी की प्रमुख पात्र रागिनी जो शिक्षित और स्वाभिमानी महिला है, जो अपने माता-पिता की इकलौती संतान थी | अंग्रेजी में एम.ए. प्रथम श्रेणी में पास राग का विवाह डिप्टी कलेक्टर मनीष से हुआ | वह रुढ़िग्रस्त परम्परा को मानने वाले है | उनका मानना है बच्चे भगवान का रूप होते हैं | पति की इस सोच के कारण जब राग छ: बच्चे की माँ बनी तो जचकी में सन्निपात हो गया | राग के लिए उसका जीवन चुनौतीपूर्ण था | उसका पति जब भी दौरे से लौटकर घर आते बीमार पत्नी के जिस्म को नोचना अपना अधिकार मानते | धीरे-धीरे राग का मानसिक संतुलन बिगड़ने लगा | उसका शरीर अस्थिर हो चूका था | पति की घृणा व ससुराल की उपेक्षा ने उसे और भी लापरवाह बना दिया | समय के साथ-साथ बच्चे बड़े हुए एक बेटा वकील व एक इंजीनियर बन गया | बेटियों की शादी हो गई न्यूयॉर्क में बस गई | एक बार उनका पति मनीष टूर पर गया था और उसको हार्ट अटैक आकर वही उसका देहांत हो गया | पति की मृत्यु के बाद वृद्धावस्था में अपने बेटे-बहू पर इतनी आश्रित हो जाती है कि वह अपने मूल स्वरूप को ही भूल जाती है | परिणामस्वरूप उसके बेटे-बहू उसकी उपेक्षा और तिरस्कार करने लगते हैं | पति की तेरहवीं के बाद राग को सामान सहित एक छोटे से कमरे में शिफ्ट कर दिया गया | बहू उन्हें ताने देती है-

> "निकम्मी, निठल्ली यहीं रहो और हमें जीने दो |"... "पड़ी रहो चुपचाप | बूढ़ी तो हो ही, उस पर आधी पागल |"..तुम्हारी जैसी अभागी के साथ जो होना था वो हो गया | तुम्हारे माता-पिता तीर्थयात्रा के दौरान केदारनाथ में दफन हो गए" (अग्निहोत्री 31)

बहू उसे बूढ़ी और पागल कहती है | पोता ओल्डी कहकर चिढ़ाता है | जैसे बेटे बहू को पता चलता है उसके माता-पिता ने 50 लाख की जमा राशि राग के नाम जमा कर रखी है | पति की पेंशन तीस हजार अलग से मिलते है | तो उन्होंने राग के लिए अलग से नौकरानी भी लगा दी | साल में एक दो बार बेटे बहू कार में बैठा कर बैंक ले जाकर 'मैं जिंदा हूँ' का फार्म जमा करवाते थे | बेटा पहली तारीख को माँ को कुछ अच्छा खाना, मिठाई व फल खाने को दे जाता और उसके बदले में माँ से चेक बुक पर साइन करवा कर पेंशन की सारी रकम हड़प लेता है | बूढ़ी रागिनी अच्छा भोजन और मिठाई पाने के लिए इस दिन का बडी बेसब्री से इन्तजार करती हैं | "राग पहली तारीख को बेइंतहा प्रसन्न हो साइन करके अच्छे भोजन पाने की प्रतीक्षा में व्याकुल रहती |" (अग्निहोत्री 32) माँ को अपने बच्चों के लालन-पालन करने में कई प्रकार की मुश्किलों का सामना करना पड़ता है, फिर भी माँ अपनी संतान को हर प्रकार की सुख-सुविधाएँ प्रदान करती हैं | वहीं बच्चे वृद्धावस्था में अपनी माँ को उन्हीं की पेंशन को धोखे से हड़पते है और उन्हें दो वक्त का अच्छा खाने तक के लिए तरसाते हैं | वृद्ध होना कोई गुनाह नहीं है | यह एक स्वाभाविक प्रक्रिया है | इस अवस्था में माँ-बाप के साथ अन्याय करना सबसे बड़ा गुनाह है | भारतीय समाज में महिलाओं की समस्याएं और भी विचारणीय है वे जीवन के आरम्भ में पिता, युवावस्था में पति व वृद्धावस्था में पुत्र की दयनीयता का पात्र बनती है | एक दिन छोटी बेटी आई तो उसने माँ को रद्दी जैसी बेतरतीब देखा तो कहा –

> "तुम्हें ही तुम्हारे घर में कबाड़ा बना दिया गया, और तुम टुकड़ों पर खुश होती हो | क्या माँ तुम्हें अपने अस्तित्व की पहचान नहीं रही ? ..माँ, अन्याय आदर्श नहीं | पिता की मनमानी सहकर तुमने परिवार व समाज को कोई नीतियाँ नहीं दी और न ही अब बेटे-बहू की उपेक्षाएँ सहकर कोई नारियों के लिए इतिहास गढ़ रही हो | वृद्ध होना कोई पाप नहीं | किसी भी उम्र में व्यक्ति सहज जिन्दगी जी सकता है | बस थोड़ा संघर्ष व प्रयत्न चाहिए |" (अग्निहोत्री 33)

उसकी यह हालत देखकर उसकी छोटी बेटी उसकी इस दशा के लिए उसे जिम्मेदार मानते हुए फटकारती है और उसको उसके अधिकारों का बोध करवाती है तथा खोए हुए आत्मविश्वास को जगाने की कोशिश करती है | राग को तब अहसास होता है वह जीवन भर दूसरों की बातों को सुनती आई है | जिसमें उसके स्वयं के अस्तित्व की पहचान नहीं रही है | आशीष जब चेक पर साइन करने के लिए कुछ जलेबी साथ लाता है तब वह अपने अस्तित्व की रक्षा करते हुए कहती है कि -

> "मुझे मेरी पूरी पेंशन दो |..मैं उपेक्षा व घृणा क्यों सहूँ ? मुझे मेरा अधिकार दो वरना मैं चेक पर साइन नहीं करूँगी | मुझे मेरा कमरा वापस चाहिए | ..मैं वहां बैंक में 'मैं जिंदा हूँ' का फार्म भरने भी नहीं जाऊँगी, क्योंकि तुमने मुझे जीवित रखने का धर्म नहीं निभाया |" (अग्निहोत्री 34)

आशीष समझ गया था कि माँ से अब जबरदस्ती कोई काम नहीं करवा सकता है | रागिनी को उसका बेटा बैंक में ले जाकर 'मैं जिंदा हूँ' का फ़ार्म भरवाता है और अपनी पेंशन निकाल कर अपने पास रखती है | बेटी की फटकार से राग की सोई हुई चेतना जागती है और उसे अपने अधिकारों का बोध होता है | बेटे-बहू के अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठाती है तथा अपने अस्तित्व की रक्षा करती है |

2.4.10 'तोर जवानी सलामत रहे' (2018)

यह *'अपना-अपना अस्तित्व' कहानी* संग्रह की चौथी कहानी है | इसमें निम्न वर्ग की वृद्ध पात्र सावित्री की मार्मिक कहानी है | सावित्री का इकलौता बेटा गोपाल और उसकी पत्नी कला अपनी माँ का बहुत आदर-सत्कार करते थे | उसका बेटा एक प्राइमरी पाठशाला में अध्यापक के पद पर था | घर का खर्चा चलाने के लिए वह बच्चों को ट्यूशन पढ़ाकर घर की आवश्यकताओं को पूरा करता था | उसकी पत्नी कला चौथी पास है फिर भी कम खर्चा करके सारी व्यवस्था करती है | एक तरफ बहू कला अपनी सास सावित्री की बहुत अच्छी देखभाल व खूब सेवा करती है दूसरी तरफ उसका बेटा लल्लन अपनी दादी से बहुत घृणा करता है | लल्लन अपनी बूढ़ी दादी को पसंद नहीं करता है | सावित्री का बेटा गोपाल जितना गुणवान था पोता उतना ही अवगुणी | सावित्री समय के साथ धीरे-धीरे शारीरिक रूप से कमजोर होती जा रही थी | जिसके कारण वह कला की घर के काम-काज में कोई मदद नहीं कर पा रही थी | कला उन्हें घर के काम करने के लिए कई बार मना करती है | वह उनका पूरा ध्यान रखती थी | गोपाल की मृत्यु के बाद घर की जमा पूंजी ख़त्म होने लगी तो कला ने कुछ घरों में काम ढूँढ़ लिया | घर पर अकेली सावित्री घर साफ कर रोटी सब्जी बनाकर बहू का हाथ बंटाती | लल्लन अपने दोस्तों को बुलाकर शराब पीता | गोपाल के रहते वह थोड़ा बहुत डरता था | पिता की मृत्यु के बाद लल्लन और भी अधिक बिगड़ गया | पिता के अभाव में लल्लन में संवेदना भी लुप्त हो गई | सावित्री और कला दोनों ही बुढ़ापे

के कारण शारीरिक रूप से कमजोर होती जा रही थी और लल्लन बहुत शराब पीकर आता और माँ और दादी से झगड़ा करता | एक दिन जब सावित्री खाना बना रही थी तो लल्लन मछली बनाने को कहता है | सावित्री के मना करने पर वह उसके मुंह में मछली डाल देता है | "सावित्री उठ कर जाने लगी तो लल्लन ने उस बूढ़ी को दबोच उसके मुँह में मछली ठूँस दी | ये लो यहीं खाओ | सावित्री ने हाथ-पैर मारे व मछली मुँह से उलट दी | लल्ला छोड़ दे मैं ना खाऊँ ये |" (अग्निहोत्री 39) लल्लन जो नई पीढ़ी का युवा है उसका अपनी दादी के साथ इस तरह का व्यवहार बहुत शर्मनाक है | लल्लन एक दिन अपनी दादी को ठंड भरी रात में सड़क पर मरने के लिए छोड़ आता है | "अँधेरे में थकी-माँदी बुढ़िया कभी एक पेड़ छूती तो कभी दूसरा और चिल्लाती बेटा लल्लन तेरी जवानी सलामत रखे, मुझे घर ले चल |" (अग्निहोत्री 41) बुजुर्ग जहाँ लोगों के लिए सम्माननीय हुआ करते थे वे आज भार बन गए है | यहाँ लल्लन बिगड़ी युवा पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करता है जिसके मन में बुजुर्गों के प्रति कोई सम्मान नहीं है | लेखिका कला के माध्यम से युवाओं की भूमिका पर विचार करती हैं – "ये युग जवानों का कहा जाता है | युवा पीढ़ी तो क्या ये लोग कभी बूढ़े नहीं होंगे | तब आने वाली नई पीढ़ी भी इनके विचारों ...बूढ़ा या चूका हुआ नहीं कहेगी तब ये क्या उत्तर देंगे |"(अग्निहोत्री 42)

2.4.11 'उसका इतिहास' (2018)

यह कृष्णा अग्निहोत्री कृत *'अपना-अपना अस्तित्व'* कहानी संग्रह की पाँचवी कहानी है | इस कहानी की प्रमुख वृद्ध पात्र मानवी है | उसने पति की मृत्यु के बाद तीन बच्चों को अकेले ही पाला | उसका बड़ा बेटा दिल्ली में चार्टर्ड अकाउंटेंट है | बेटी की शादी लखनऊ में की उसका पति इंडस्ट्री में अफसर है | बेटी प्रीति भी विद्यालय में पढ़ाती है | घर में दो बच्चे और सभी प्रकार की सुख सुविधाएं है | मकान को भी स्वयं बनाया | 70-75 साल की होने पर भी उसने अपने बच्चों से कभी कोई आर्थिक सहायता नहीं ली | उम्र के साथ-साथ मानवी धीरे-धीरे शारीरिक रूप से कमजोर होती जा रही थी | बेटे-बहू उससे मिलने नहीं आते थे तब भी वह बुरा नहीं मानती | एक बार जब उसके बेटे-बहू छुट्टियाँ मनाने बाहर जाते है और मानवी को घर की रखवाली के लिए एक वफादार कुत्ते की भांति घर पर ही छोड़ चले जाते है | घर पर रह रहे पोता-पोती की जरूरतों को पूरा करती, आराम तक नहीं कर पाती | मानवी के नई पीढ़ी के पोते-पोती अपने दोस्तों के साथ घर पर आते, जोर-जोर से हँसते, म्यूजिक लगाते जिससे उसे शांति से रहने को भी नहीं मिलता | उसके आँखों के सामने पोता-पोती बिना बताए पार्टी के लिए चले जाते और देर रात घर आकर ब्लैक कॉफी में नींबू डालकर बनाने का आदेश देते | नवरात्रि में पोती को आधी टाँगे खुले कपड़े पहने देख उसे टोका तो वह स्वयं को पढ़ी लिखी आधुनिक मानकर पुरानी सड़ी गली जिंदगी जीते भारतीय सभ्यता पर सवाल करती है | मानवी ने जब कहा-

> "ये ड्रेस गरबे में ?" "पोती विशाखा ने उसे यूँ घूरा जैसे वो कुत्ते को भौंकते देख रही हो, "तो क्या चादर ओढ़ लूँ ? अब आप तो सड़ी गली जिन्दगी जीती रहीं | मैं आज की पढ़ी-लिखी लड़की हूँ, इंजीनियरिंग पढ़ रहीं हूँ ..मैं क्या उस पुराने इतिहास में जीऊँगी | जब मम्मी हमें टोकती तो आपको क्या परेशानी हो रही है ?" (अग्निहोत्री 45)

विशाखा एक बंद डार्क ग्लासेज की गाड़ी में बैठकर चली जाती है | रह जाती है मानवी जिसे देर रात तक अपने पोते अमृत को उसके मित्रों के साथ कमर हिलाते देखना पड़ा | अमृत की गर्लफ्रेंड सुनीता जब उसके सीने से लग कर नृत्य में हिल रही थी तो मानवी को

तेज सरदर्द हो जाता है | आधुनिक समाज पाश्चात्य सभ्यता की ओर जिस तेजी से बढ़ रहा है उसी प्रकार वह अपने मूल्यों की आहुति दे रहा है | आज माँ-बाप, दादा-दादी जैसे रिश्तों में कड़वाहट आ रही है | बच्चे युवा होते ही परिवार के बंधन से मुक्त हो अपनी ही दुनिया बनाने लगते है | पाश्चात्य सभ्यता के प्रति रुझान के चलते अधिकांश लोग अपने वृद्धों का तिरस्कार करते हैं | मानवी भी अपने पोते-पोतियों की पाश्चात्य सोच के कारण तिरस्कृत होती है | वह सोचती हर तरफ शहर में मानो भारत न हो अमेरिका ही अमेरिका है | आधुनिकता के इस युग में एक ओर हम पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित हो अपनी रूढ़िवादिता विचारधारा से निकलकर विकासोन्मुख तो हो रहे हैं लेकिन वहीं दूसरी ओर इन सब के बीच उन पारम्परिक मूल्यों एवं संस्कारों को भूलते जा रहें है जो हमारे चरित्र-निर्माण में सहायक हैं | मानवी का सरदर्द बढ़ता गया उसने डॉ. महाजन को फोन किया अस्पताल ले जाया गया | ब्रेन हैमरिज से बच गई लेकिन दाएँ पैर व हाथ में हल्का सा लकवा लग गया | अस्पताल से छुट्टी मिलते ही सहारे की चिंता उसे सताने लगी | बेटे-बहू आवास स्थान की शिकायत करते हुए अनमने मन से अपने घर चलने को कहते है लेकिन मानवी अपने ही छोटे से घर में चली जाती है | रात को पोता अमृत दस बजे जोर-जोर से फिल्मी गाने सुनता है तो मानवी का सिर दर्द से फटा जाता है | बर्दाश्त न होने के कारण वह पोते को टी.वी. और लाईट बंद करने को कहती- "अमृत बेटे, अब तो टी.वी. बंद कर दे बड़ा सरदर्द है |" बस अमृत बूढ़ी पर बरस पड़ा, "ये मत करो, वो मत करो-दादी मैं इस तरह तो यहाँ नहीं रुकूँगा |" (अग्निहोत्री 47) अगली सुबह बहू मानवी को शिकायती स्वर में ताने सुनाने लगती है |

> "माँ एक तो बच्चा सोने गया, उस पर आप ढेरों रूकावटें डालती है | ...बड़े बच्चों पर रोक टोक न लगाएँ |... अभी तो हमें आपके हॉस्पिटल का बिल पे करने का जुगाड़ करना है | "मैं कल ही चैक काट दूंगी, सुधा |" "हाँ, वो तो करना ही चाहिए पर पहले ही हमें अपना फिक्स्ड तोड़ना पड़ा है | उसका ब्याज ही समाप्त हो गया है | मानवी के हृदय में गोली-पर गोली लगने से न जाने कितने छेद हो गये |" (अग्निहोत्री 47)

आज इस भौतिकतावादी युग में बढ़ता स्वार्थ और पैसों की लालसा ने वृद्धों की स्थिति को चिंताजनक बना दिया है | परिणाम स्वरूप परिवार में बच्चों द्वारा माता-पिता के प्रति उपेक्षा और संवेदनहीनता का भाव दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है | एक दिन मानवी को तेज हार्ट अटैक आ जाता है | मानवी के तीनों बच्चे अस्पताल में पहुँच जाते है | विशाल ने सुयश और प्रीति को बताया

> "डॉ. कह रहे कि माँ अब चार माह से अधिक नहीं जियेगी | तुम इन्हें साथ ले जाओ, बड़े शहर में अच्छा इलाज भी होगा | मैं करियर देखूँ ? तुम चाहे तो उनके फिक्स्ड भी ले जा सकते हो |" "क्या बात करते है ? सारा दवाई खर्च भी हमने उठाया है | मुझे क्या करना है इस फिक्स्ड का ? मेरे बच्चे इस बीमारी से उकता गये हैं |" मानवी ने सब सुना व धीरज से कहा, "अरे, मैं तो एकदम ठीक हूँ |" "क्या करें माँ ...बच्चों की आज की पढ़ाई है, मरतों की कहाँ तक चिंता करें या हम जिएँ |" मैं ठीक हूँ, बाई आ जाएगी, तुम सब अपने-अपने कामों में व्यस्त रहो |" सब बच्चे अपने-अपने घोंसलों में लौट गए | रह गई अकेली वीरान मानवी | अपने पलंग में सोचती कि यह कैसी भाग-दौड़, कैसा जमाना और कैसा नया इतिहास, जो मात्र स्वयं के सुखों पर सीमित है ?" (अग्निहोत्री 49)

मानवी ने पति की मृत्यु के बाद तीनों बच्चों को पाला, पढ़ाया इस काबिल बनाया | आज मानवी की इस हालत में तीनों बच्चे उसका साथ छोड़ जाते हैं | वृद्धावस्था में भौतिक सुख सुविधाओं की बजाय भावनात्मक संबल की ज्यादा आवश्यकता होती है | जीवन के अंतिम पड़ाव में अपनी संतान का सान्निध्य, उनका निकट होना, प्यार, सम्मान और देखभाल से बढ़कर वृद्धों के लिए कुछ भी श्रेयस्कर नहीं हो सकता | लेकिन यहाँ वृद्ध मानवी का साथ उनके तीनों बच्चे छोड़ जाते है | उनके लिए अपने शौक और आवश्यकताएं ही महत्वपूर्ण है |

2.4.12 'यह क्या जगह है दोस्तों' (2018)

कृष्णा अग्निहोत्री के '*अपना-अपना अस्तित्व*' कहानी संग्रह की छठी कहानी 'यह क्या जगह है दोस्तों' इसमें वृद्ध ऋतु के अकेलेपन का चित्रण किया है | ऋतु के पति रितेश की मृत्यु के बाद उसे ढेरों ज्यादतियों को सहना पड़ता है | देवरों ने अपने अस्वस्थ पिता से सारी सम्पत्ति अपने नाम करवा ली | ऋतु संगीत की छोटी सी नौकरी करके अपने तीनों बच्चों को पालती है | वही बच्चे बड़े होकर अपनी माँ की उपेक्षा करते हैं | माँ को घर के काम-काज के काबिल मानते है | ऋतु अपनी मर्जी से टी.वी. में सीरियल नहीं देख सकती, फोन पर बात नहीं कर सकती, शादी में नहीं जा सकती, गाने का रियाज नहीं कर सकती इत्यादि | लेखिका लिखती है ऋतु का छोटा बेटा जब अपने दोस्तों के साथ आता है और माँ से कहता है- "माँ जरा उपमा बना दो |" "मेरा कार्यक्रम है मुझे अभ्यास करने दे.. "मम्मी ये क्या रें-रें लगा देती हो | कोई आप गंधर्वसेन तो हो नहीं | पहले अपने बच्चों का सुख देखो तब शौक पूरे करो |" (अग्निहोत्री 57) ऋतु स्तब्ध सी खड़ी, उसे अपनी योग्यता का उपहास अंदर तक छील कर रख देता है | उसे अपने ही घर में सभी सुविधाओं से वंचित रहना पड़ रहा था | जिसने अकेले संघर्ष करके अपने बच्चों को पाला-पोसा, पढ़ाया-लिखाया | अंत में उसके खुद के बच्चे ही उसकी बीमारी के वक्त उसे भगवान भरोसे छोड़ देते है | उसके इलाज के लिए खर्च करना उचित नहीं मानते है | ऋतु जब डॉ. के पास चेकअप करने जाती है तो उसने सुना कि डॉ. महाजन कह रहें है कि हार्ट की दो आर्टरी में ब्लॉक है | जल्दी ऑपरेशन करना पड़ेगा | दो लाख तक का खर्चा होगा | इस पर बड़ा बेटा कहता है – "बैंक में दो लाख व पोस्ट ऑफिस में एक लाख हैं, अब क्या माँ ही पर दो लाख खर्च कर दें ?" "और भैया बैंक लोन भी तो है | छोटा चीखा | तो क्या माँ को यूँ ही मर जाने दें ? उदास हेमा ने पूछा | माँ ने तो यूँ भी पैंसठ वर्ष की जिन्दगी जी ली | साठ के बाद तो वैसे भी उधारी जिन्दगी जीते हैं | अब माँ के पीछे हम तीनों का भविष्य तो मारा नहीं जा सकता | ठीक है घर ले चलते हैं | दवाई देते रहेंगे | जितने दिन जिएँ जी लें |"(अग्निहोत्री 60) बच्चों का अपनी माँ के प्रति इतना संवेदनहीन व अमानवीय व्यवहार चिंता का विषय है | अपने ही बच्चों द्वारा उपेक्षित व तिरस्कृत वृद्ध ऋतु का वर्णन लेखिका ने बड़े मार्मिक ढंग से किया है |

2.4.13 'बदमिजाज' (2018)

कृष्णा अग्निहोत्री के '*अपना-अपना अस्तित्व*' कहानी संग्रह की सातवीं कहानी '*बदमिजाज*' है | इस कहानी के मुख्य पात्र वेदप्रकाश और हेमवती है | वेदप्रकाश का बेटा प्रताप अपने पिता के बीमार होने पर उनके इलाज पर पैसे खर्च नहीं करना चाहता जिससे उनकी मृत्यु हो जाती है | इसके बाद हेमवती के बुरे दिन शुरू हो जाते हैं | पति के मरने के बाद हेमवती अपने बेटे-बहू के

हिंसात्मक व्यवहार का शिकार होती है | वह अपनी बूढ़ी माँ को बहनों की जिम्मेदारी की धमकी देकर दुकानें अपने नाम करवा लेता है | एक दिन उसकी बहु नीला जब उससे बहस कर रही होती है तो प्रताप अपनी माँ को बदमिजाज कहते हुए उसके मुहँ में जोरदार थप्पड़ मार देता है और कहता है कि – "कबाड़ा तो नहीं पर बेहद बदमिजाज चटोरी बूढ़ी हो |"(अग्निहोत्री 70) प्रताप का यह व्यवहार उसकी आत्मा को झकझोर देता है | आज के समय में बच्चे अपने बूढ़े माँ-बाप पर हाथ उठाने से भी परहेज नहीं करते |कृष्णा अग्निहोत्री की कहानियों में अधिकतर वृद्ध महिलाओं के जीवन संघर्षों और समस्याओं का चित्रण मिलता है | '*अपना-अपना अस्तित्व'* कहानी संग्रह वृद्ध नारी जीवन का दस्तावेज है |

2.4.14 'लोहे का बैल' (2019)

'*लोहे का बैल'* एस. आर. हरनोट की एक मार्मिक कहानी है | यह कहानी कीलें कहानी संग्रह में संकलित है, जिसका प्रकाशन वर्ष 2019 ई. में हुआ है | इस कहानी में बेटा नौकरी शुदा और शादीशुदा के बाद अपने बूढ़े माता-पिता की मेहनत और त्याग को भूल जाता है | कहानी का वृद्ध पात्र शोभा जब शहर में रह रहे अपने बेटे को फ़ोन करता है | तो बेटे को अपने पिता से बात करने की बजाय रविवार की छुट्टी में सोना ज्यादा सुखदायक लगता है | "अरे कौन बोल रहा है, आराम से सोने भी नहीं देते ?"... "मैं बोल रहा हूँ बेटा".. "हाँ ..हाँ पहचान लिया, बोलो, क्यों किया फ़ोन सुबह. सुबह" (हरनोट 65,66) शोभा ने बेटे को फ़ोन अपने सुख-दुःख प्रकट करने के लिए किया था | उसका एक बैल गिर के मर गया था | बेटे को लगा पैसे के लिए फ़ोन किया था | "मेरे से पैसों की उम्मीद मत रखना | तुम तो जानते हो, शहर के खर्चे कितने होते है | उस पर दिनोदिन महँगाई आसमान छू रही है | मैंने इसी साल एक घर ले लिया है, उसकी किश्तें जाती हैं | अब कार के लिए लोन ले रहा हूँ | छोटी गाड़ी तो रख नहीं सकता | हैसियत के मुताबिक बड़ी रखनी पड़ेगी | घर का सारा सामान बदला है | नया एल.सी.डी. लिया है | फुली ऑटोमेटिक वाशिंग मशीन और तीन सौ लीटर का सेमसंग का फ्रिज" (हरनोट 68) बहुत बड़ी विडंबना है जो बाप अपनी पूरी जिन्दगी कर्ज लेकर अपने बच्चों के भविष्य को बनाता है | अपनी खून पसीने की कमाई सिर्फ उसी पर लगाकर उसे इस काबिल बनाता है | लेकिन उस बेटे के पास बुजुर्ग माँ-बाप से बात करने की फुर्सत भी नहीं | ग्रामीण समाज भी शहरी परिवार की परिकल्पना के विस्तार से अछूता नहीं रहा | शोभा के बेटे ने अपनी पसंद से अपनी ही कंपनी में काम करने वाली अफसर से शादी की थी | उसकी पत्नी को गाँव के नाम से एलर्जी थी | शोभा और उसकी बीवी ने तो कभी बहू का चेहरा तक नहीं देखा था | कहानी में शहर और गाँव दोनों की अति-आधुनिकता की स्वार्थी मनोवृति पर व्यंग्य किया गया है | जिसमें बेटे द्वारा पिता के साथ किया गया विश्वासघात को भी दिखाया गया है | शहर में रहने वाला बेटा अपने पिता से पूछे बिना गाँव की जमीन को बेच देता है | गाँव के मास्टर जी "पूरा एक लाख दिया है ब्याज पर | उसने शहर में घर लेना था | मैंने बिना सोचे उसे एक लाख दे दिया | अब देख न, पक्का कागज़ बनाया है | मैं जानता हूँ साल दर साल ब्याज बढ़ता रहेगा और जिस दिन शोभा गया जमीन हमारी |" (हरनोट 77) यह सब सुनकर एक पिता के हृदय में क्या गुजरी होगी | माता-पिता खून पसीने की कमाई से अपने बच्चों को पढ़ाते हैं | लेकिन युवाओं का गाँव से पलायन और नगरों के होकर रहना | माँ-बाप को बिना बताए शादी करना | गाँव एवं बुजुर्ग माता-पिता को उपेक्षित और अकेला छोड़कर शहरों में बस जाना | एस. आर हरनोट इन समस्याओं को गहन संवेदनाओं और यथार्थ के साथ चित्रण करते हैं |

अन्य प्रसिद्ध कहानियाँ – 21वीं शताब्दी में वृद्ध विमर्श पर कुछ अन्य कहानियाँ भी लिखी गई है जो अपने समय और समाज का दस्तावेज हैं | जिनमें कुछ महत्वपूर्ण कहानियां इस प्रकार हैं –

'अग्निदाह' यह दिलीप मेहरा की वृद्धावस्था पर आधारित प्रसिद्ध कहानी है | जिसमें पिता पुत्र के अत्याचार से पीड़ित होकर आत्महत्या कर देता है | किन्तु एक सुसाइड नोट छोड़ देता है जिसमें वह पुत्रों से अपने अग्निदाह के अधिकार को छिनते हुए इसे अपनी पुत्री को देता है एवं अपने प्रति किए गए पुत्रों द्वारा सभी अत्याचारों का लेखा-जोखा देता है | इस कहानी में आर्थिक स्थिति के नाम पर माता-पिता को पुत्रों द्वारा अलग कर दिया जाता है | माता को रमेश तथा पिता को अमृत के पास रहना पड़ता है | आश्चर्य की बात है जिन बच्चों को पढ़ा-लिखाकर बड़ा करने में माँ-बाप अपना सम्पूर्ण जीवन लगा देते हैं | वही बच्चे जीवन के अंतिम क्षणों में महंगाई के नाम पर उन्हें साथ रहने के सुख से भी वंचित कर देते हैं | वृद्धावस्था में अपने जीवनसाथी से अलग हो जाना वास्तव में बहुत कष्टदायक होता है | मनसुखलाल की पुत्रवधू तथा रमेश की पत्नी अंबा अपनी सास के साथ नौकरों की तरह व्यवहार करती है | "रमेश की पत्नी अम्बा को पटरानी-सिंहासन मिल गया था | अम्बा उषा से नौकरानी से भी ज्यादा काम लेती थी तब जाकर उसे खाना मिलता था |" (मेहरा 110) दूसरे बेटे अमृत की पत्नी सुनयना भी अपने ससुर मनसुखलाल से घर का काम करवाती थी | "मनसुखलाल ने पूरे घर का झाड़ू पोछा करने का काम प्रारम्भ दिया | बुढ़ापे में मनसुखलाल को काम होता नहीं था फिर भी वे काम करते रहते थे.. बी.पी. की वजह से काम करते-करते उनकी सांस फूल जाती थी" (मेहरा 111) झाड़ू पोछा करने तथा घर के अन्य कामों को निपटाने के बाद थका टूटा बीमार और पसीने से सराबोर मनसुखलाल पंखा भी चालू करता है तो बहू फालतू खर्च के नाम पर वह भी बंद करती है किंतु स्वयं कूलर चलाकर सो जाती है यहाँ तक कि खाना प्राप्त करने के लिए इन्हें उस उम्र में रोज़ ₹50 कमा के देने की शर्त रखी जाती है | मनसुख लाल अपनी ऐसी स्थिति देखकर भगवान को कोसने लगते हैं – "हे भगवान मैंने तेरा क्या बिगाड़ा जो ये दिन देखने के लिए जिंदा रखा | तू बता भगवान की मैंने कौन सा पाप किया है जिसकी यह सजा आज मैं भुगत रहा हूँ | हे ईश्वर तुम मुझे शीघ्र तेरे पास बुला ले | मैं अब इस नर्क में नहीं रह सकता |" (मेहरा 112) आज वृद्धों के पास केवल तीन रास्ते बचे हैं | पहला अपने ही घर में नौकरों की तरह काम करते हुए तानो को सहकर जीवन व्यतीत करें | दूसरा वृद्धाश्रम चले जाए तीसरा आत्महत्या कर लें | इस कहानी का वृद्ध पात्र मनसुखलाल तीसरा रास्ता अपनाने हैं | आत्महत्या के साथ एक सुसाइड नोट छोड़ जाते है | इस सुसाइड नोट में वे अपने अपने बेटे-बहू द्वारा किए गए अत्याचारों का सम्पूर्ण वर्णन करते है | वे लिखते हैं –

> "इस जीवन से तंग आकर दुनिया छोड़ कर जा रहा हूँ, मेरा नम्र निवेदन है कि मेरी लाश बेटों को न दी जाये | अगर मेरी लड़की मिताली आती है तो उसे अग्निदाह का अधिकार देता हूँ | पुलिस से मेरा निवेदन है कि मेरी बेटी अगर नहीं पहुँच पाती है तो मेरी लाश को आवारा लाश की तरह जला दी जाए, परन्तु मेरे पुत्रों को न दी जाए |" (मेहरा 114)

चिंतन का विषय यह है कि आज भी न जाने कितने मनसुखलाल हैं जो इस तरह या घुट-घुट कर जी रहे हैं या आत्महत्या करने को मजबूर हैं |

'हंसा ताई' यह दिलीप मेहरा द्वारा रचित चर्चित कहानी है | जिसमें युवा पीढ़ी द्वारा किस तरह वृद्धों को सताया जा रहा है, उसका चित्रण किया है | यह एक माँ की बेबसी की कहानी है जो पुत्र एवं पुत्रवधू द्वारा प्रताड़ित होने के बावजूद भी उनका भला चाहती हैं | | इस कहानी में लेखक ने ग्रामीण परिवेश में बुज़ुर्गों के साथ होने वाले अत्याचार का यथार्थ चित्रण किया है | इस कहानी की मुख्य पात्र हंसा है | हंसा ताई को उनके देवर, बहू और गाँव वालों द्वारा प्रताड़ित दिखाया गया है | हंसा के पति शिवलाल की मृत्यु के बाद उसका देवर लल्लू सिंह गाँव वालों की बातों में आकर उनके खिलाफ होकर जमीन का बंटवारा कर देता है | हंसा का एक बेटा और एक बेटी थी | बेटी सुशीला की शादी हो जाती है लेकिन बेटे नार सिंह की शादी के लिए हंसा ताई चिंतित रहती है | क्योंकि नार सिंह दसवीं में केवल चित्रकला विषय में ही पास था | जिस वजह से उसको शादी के लिए अच्छा रिश्ता नहीं मिल पाता | कितने ही प्रयत्न के बाद रेवा नाम की एक विधवा लड़की नार सिंह को पसंद आती है और दोनों की शादी अच्छे से संपन्न हो जाती है | रेवा और नार सिंह की शादी के बाद रेवा की एक बात सबके सामने आ जाती है कि उसने अपने पहले पति की हत्या की थी | इसके साथ वह नशीले पदार्थ का सेवन भी करती थी | हंसा ताई ने अपने बहू को लेकर बड़े-बड़े सपने देखे थे | लेकिन बहू ने आते ही चमत्कार दिखाने शुरू कर दिए | वह बात-बात पर हंसा को गालियाँ देती रहती है | इतना ही नहीं कभी-कभी ताई की पिटाई भी कर देती है | हंसा ताई अपने बेटे नार सिंह से कहती है – "नारिया, तू तेरी बैरी को कुछ कहता क्यों नहीं रे ? ये तेरी रांड मेरे साथ जुल्म कर रही है और तू शांति से बैठा है | (मेहरा 96) उसका बेटा नार सिंह सब चुपचाप देखता रहता अगर वह उसको एक शब्द भी बोलता तो वह उसकी भी पिटाई कर देती थी | इस कहानी में दिखाया गया है कि बेटा अगर माँ की सेवा करना चाहता भी है तो बहू उनके खिलाफ हो जाती है तथा बुजुर्ग अपनी आखिरी सांस तक अपने परिवार का भला ही चाहते है | भले ही उनको कितनी यातनाएँ सहन करनी पड़े |

'*साजिश*' कहानी में अनमेल विवाह और व्यसन वृत्ति के कारण वृद्ध जीवन की विषमता का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया गया है | इस कहानी में देवीलाल नामक एक वृद्ध के जीवन की पीड़ा को दिखाया गया है | देवीलाल अपनी पत्नी पार्वती से ग्यारह साल बड़े है | अनमेल विवाह होने से बुढ़ापे में देवीलाल अपनी व्यभिचारी पत्नी की धोखेबाजी के चलते शराबी बन जाते है | पार्वती का अवैध संबंध किराना स्टोर चलाने वाले भंवर लाल से होता है | देवीलाल के साथ नौकरी करने वाले संदीप ने यह बात देवीलाल को बताई | संदीप की स्थिति तो देवीलाल से भी बुरी थी | संदीप कहता है – "भाभी ने भले ही गलत रास्ता अपनाया, घर में तो रहती है, खाना तो देती है | हमारी ससुरी नेहा तो दो छोटे-छोटे बच्चों को छोड़कर पड़ोसी के लड़के के साथ भाग गई | आज छ: साल हो गए हैं देवीलाल, पर अभी तक नहीं लौटी | मेरी बूढ़ी माँ जो है, वह बच्चे पाल रही है |" (मेहरा 92) देवीलाल भी अपना दुख संदीप के सामने प्रकट करता हैं कि जीवन के अंतिम दिनों में उन्हें कोई गैर नहीं बल्कि अपने ही धोखे दे रहें है | देवीलाल के जीवन में उनकी नौकरी ही उनके जीवन के लिए उत्साहवर्धक थी | लेकिन उनका बेरोजगार बेटा उनके सेवानिवृत्त होने से पहले उनकी नौकरी पाने के लिए माँ के साथ षड्यंत्र रचता है | पार्वती उसकी बात से सहमत हुए कहती है " बात तो तेरी सोलह आने सच है बेटा, तेरे पापा अब पका पण हो गए है, कभी भी गिर सकते हैं पर कब गिरेगा पता नहीं | मरने का अपने हाथ थोड़ा होता है बेटा, अगर भगवन ने चाहा तो जरूर तेरी इच्छा पूरी होगी" (मेहरा 94) प्रकाश अपनी मम्मी से कहता है – "मम्मी सभी बातें भगवान पर निर्भर नहीं होती

है | कुछ बातें हम पर भी निर्भर होती हैं | तुम चाहो तो पक्का पण कभी भी गिर सकता है |" (मेहरा 94) रिटायर होने के छ: महीने पहले ही माँ-बेटे मिलकर देवीलाल को मौत के घाट उतार देते है | पिता की मौत के बाद नौकरी बेटे प्रकाश को मिल जाती है | वृद्धावस्था में साजिश किसी गैर नहीं बल्कि देवीलाल के अपनों द्वारा ही रची गई थी | आज के कलियुग की वास्तविकता को इस कहानी के माध्यम से मर्मस्पर्शी ढंग से चित्रित किया गया है | दिलीप मेहरा ने अपनी तीन कहानियों '*हंसा ताई*', '*अग्निदाह*' और '*साजिश*' के माध्यम से वृद्धावस्था की वर्तमान सच्चाई को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है |

'*बेटा*' सरोज भाटी की प्रसिद्ध कहानी है | इस कहानी में दो पुत्रों की संवेदनहीनता तथा दो वृद्धों की संवेदना एवं उनके जीवन के अंधकार को प्रकट किया गया है | इस कहानी में सोमनाथ और सविता दो ऐसे वृद्ध पात्र हैं, जिन्हें अपने-अपने बेटों से निराशा ही प्राप्त होती है | सोमनाथ और उनकी पत्नी ने अपने बेटे राजेश को पढ़ाया-लिखाया, काबिल बनाया | मुंबई जैसे शहर में इंजीनियरिंग करवाया और वहीं नौकरी भी मिल गई | वहीं खुद की पसंद लड़की से शादी भी करवा दी | बहू एक ही बार गांव आई, फिर आने से इनकार कर दिया | बेटा भी धीरे-धीरे कम आने लगा | बेटे की याद में माँ बीमार रहने लगी लेकिन बेटे के पास माँ की सेवा व हाल-चाल पूछने को भी वक्त नहीं है | बेटा कहता है – "मुझे तो छुट्टी नहीं मिल सकती और यहाँ भी हमारे पास रहने को एक ही कमरा है | मुंबई में घर मिलते ही कहाँ है ? ठीक से घर लें तो किराया भी बहुत लगता है | इसलिए मेरे पास तो रहने की जगह नहीं है |" (भाटी 69) सोमनाथ अपने बेटे को कुछ नहीं कह पाता और छ: महीने बाद उसकी पत्नी की मृत्यु हो जाती है | सोमनाथ का पुत्र राजेश माँ की मृत्यु के बाद पिता के अकेलेपन को दूर करने के बजाय कितनी आसानी से उनकी संपत्ति पर अधिकार जमा लेता है | वह कहता है – "पिता जी आप घर पर अकेले रहते है | आप की देखभाल करने वाला भी कोई नहीं मैं दिल्ली के एक वृद्धाश्रम में आपके रहने का इंतजाम करवा देता हूँ | आप वहाँ अपने हम उम्र लोगों के साथ रहोगे, वहाँ आप की देखभाल भी हो जाएगी | आप वह घर बेच दीजिए | मैं यहाँ मुंबई में एक फ्लैट खरीद रहा हूँ | अब एक कमरे में गुज़ारा नहीं हो सकता है | इसलिए मुझे पैसों की भी जरूरत होगी | वह घर मेरा ही तो है | मुझे वहाँ आकर रहना नहीं है, इसलिए मैं उसे बेचकर यहाँ फ्लैट आराम से खरीद पाऊँगा | आप कोई ग्राहक ढूंढकर रखना मैं अगले महीने आ रहा हूँ | " (भाटी 70) बेटा अपने पिता की इच्छा के विरुद्ध उनकी संपत्ति को बेच देता है और अपने पिता सोमनाथ को वृद्धाश्रम छोड़ देता है | ऐसी समस्या इस कहानी की दूसरी उपेक्षित पात्र सविता के साथ भी देखने को मिलती है | उसका पति शिक्षक था, उनका एक ही बेटा था | दोनों ने खूब मेहनत करके उसे पढ़ाया-लिखाया जिसके कारण उसे अमेरिका में अच्छी नौकरी भी मिल गई | बेटा अमेरिका में ही किसी गोरी मेम से शादी कर के घर बसा लेता है | पिता की मृत्यु पर भी घर नहीं आता है | बाद में जब आया घर आया तो माँ को अमेरिका ले जाने का झूठा दिलासा देकर सारी संपत्ति बेचकर चला जाता है | माँ को वृद्धाश्रम में छोड़ देता है | जब सविता को उसका बेटा वृद्धाश्रम भेजता है तब सोमनाथ जी कहते है – "आज फिर कोई माँ अपने बच्चों पर भार बन गई है | हे भगवान क्या हो गया है इस पीढ़ी को ? माँ-बाप के प्रति इतने कठोर कैसे हो सकते हैं ?" (भाटी 68) आज युवा वर्ग में वृद्धों के प्रति इतनी संवेदनहीनता, अनास्था, तिरस्कार और उन्हें बोझ समझने की प्रवृत्ति देखने को मिल रही हैं | इस प्रवृत्ति के चलते कितने परिवारों के वृद्ध पीड़ित और बेसहारा होते जा रहे हैं |

'बूढ़ी' रत्नकुमार सांभरिया की चर्चित कहानी है | इसमें एक सत्तर साल की बूढ़ी औरत की कहानी है | वह अपनी एक छोटी सी झोंपड़ी में अकेले रहती थी | उसकी इकलौती बेटी सरिता जिसकी शादी हो गई होती है | उसकी बेटी पत्र भेजकर अपने आने की खबर भेजती है | जिस खबर से बूढ़ी मन ही मन खुश हो जाती है | घर की आर्थिक स्थिति ठीक न होने की वजह से वह बेटी के लिए वह अपने पुरखों की कांसे की थाली तक गिरवी रख देती है | गाँव के मास्टर जी कहती है – "उसे मेरे घर की तंगी खलेगी |" तो ? "मेरी पेंसन चार दिन बाद मिलेगी |" तो ? मुझे सौ रुपये उधार दे दो | पेंसन मिलते ही लौटाने आऊँगी |"(रणसुभे 19) बूढ़ी अपनी बेटी की ख़ुशी के लिए वह सब कुछ करना चाहती थी जिससे उसे किसी भी प्रकार की परेशानी न हो | वह रिक्शा लेकर बस स्टेशन पहुँच जाती है | "वह बड़े घर में ब्याही है | पैदल नहीं चलती |"(रणसुभे 24) उसे अपने आप पर नाज होता है कि उसने एक सपूत बेटी को जन्म दिया है | शादी होने पर बेटा बहु का हो जाता है परन्तु बेटी उम्र भर माँ-बाप की रहती है | इस कहानी में 'बूढ़ी' के माध्यम से लेखक ने उसके अकेलेपन, गरीबी, और संघर्ष की कथा को मार्मिकता के साथ चित्रण किया है |

'नहीं अम्मा' रणीराम गढ़वाली की प्रमुख कहानी है | इसमें झाँपा नामक बुढ़िया की कहानी है | झाँपा का एकमात्र सहारा उसका बेटा 'राजी' घर की पुश्तैनी जमीन छोड़ कर शहर पैसे कमाने जाता है | उसे गए कई साल हो गए लेकिन उसकी एक चिट्ठी भी नहीं आई | घर में अकेली बुढ़िया आज भी बेटे की चिट्ठी का इंतजार कर रही थी | झाँपा यह सोचती कि बेटे की चिट्ठी आयेगी और उसमें लिखा होगा 'माँ तू कैसी है ? तू मेरी चिंता मत करना | अपना ख्याल रखना | उसके बेटे का पत्र नहीं आया परन्तु बुढ़िया दुनिया को छोड़ चुकी थी | पोस्टमैन झाँपा के मृत शरीर को देखकर मन ही मन सोच रहा था कि उस देहरी मैं बैठकर उससे प्यार से कौन पूछेगा, " मेरी चिट्ठी आई है बेटा ? तो वह अब किसे जवाब देगा, "नहीं अम्मा !" (सिंह 263)

'*खत*' शरद अग्निहोत्री की कहानी है | इस कहानी में एक बूढ़ी माँ की दास्ताँ है – जिसमें बच्चों के द्वारा न पालने का भय आजकल के वृद्ध महसूस करते हैं | धन-संपति के लालच में ही आजकल की संतान अपने वृद्ध माँ-बाप को पनाह देते हैं | यह बात विधवा बूढ़ी माँ बखूबी जानती थी तभी तो लॉकर में लाखों के जेवरात का रहस्य रखा | ताकि वृद्धावस्था में बेटे-बहू उसे सम्मान के साथ रख सकें | चोरी के बाद चोर से रहस्य का पर्दाफाश होता है कि लॉकर में कुछ रुपयों के सिवाय केवल एक ख़त था और कुछ भी नहीं | उसी ख़त में माँ ने माफ़ीनामा लिखा था – "माफ करना बेटा यह झूठ में इसी डर के कारण बोलती रही कि कहीं किसी दिन तुम भी बसंत के लड़कों जैसे न बन जाओ) |" (सिंह 263)

'*छल*' प्रदीप पन्त की कहानी है | इस कहानी में एक वृद्ध पति अपनी वृद्ध पत्नी के लिए हर महीने बेटे के नाम से चिट्ठी लिखता है | उनका बेटा अमेरिका में जाकर बस गया है और माता-पिता को भूल गया है | चिट्ठी में हर बार माँ-बाप को अमेरिका ले जाने की बात लिखी होती है | पत्र पढ़कर माँ अमेरिकी चकाचौंध, बेटे का साथ, बुढ़ापे का सहारा आदि कई ख्वाबों में खो जाती हैं | बेटे और अमेरिका का धौंस पूरे मुहल्ले में जमाती हैं | एक दिन जब उसे सच्चाई का पता चलता है तो उस सदमे को सहन नहीं कर पाती और बेटे व अमेरिका के दर्शन किए बिना स्वर्ग सिधार जाती हैं | बूढ़ा अकेले रह जाता है और मलाल करते हुए कहता है – "जिसे पाल पोसकर बड़ा किया, उसने हमसे ही छल किया, जिसे ब्याह कर लाया और जिसके सामने मैंने कभी झूठ नहीं बोला,

उससे जीवन के अंतिम वर्षों में ही छल करता रहा, लेकिन..लेकिन अब तो छल करने के लिए भी कोई नहीं रहा – सिवा खुद के |" (सिंह 264) इसमें एक वृद्ध की मजबूरी का मार्मिक चित्रण हुआ हैं |

'लाजवंती' भानुप्रताप कुठियाला की कहानी है | इस कहानी में गाँव में साठ साल की उम्रवाली विधवा लाजवंती की कहानी है | लाजो के पति की मौत बस से गिरने से हुई थी | उसका एक बेटा जीवन नशा, आवारा और गुंडागर्दी करता था | नशे की आदत के कारण उसने चोरी की और चोरी के इस गंदे काम में उसे जेल की हवा खानी पड़ी | लाजो मेजर राणा के यहाँ झाड़ू पोंछा करके और फूल सब्जी बेचकर अपना जीवन गुजारती | लाजो ने अपने जीवन में दुःख के अलावा और कुछ भी नहीं देखा था | इस कहानी में एक बुजुर्ग औरत का अकेलापन, बेटे का कुपूत होना, गाँव के ठेकेदार का अकेली विधवा बुजुर्ग औरत की जमीन को हड़पना दिखाया गया है |

'चलो एक बूढ़े की कथा सुनते है' – निरुपमा राय द्वारा रचित प्रसिद्ध कहानी है | इस कहानी का बूढ़ा बाप लाचार और निस्सहाय नजर आता है | घर के बच्चे 'फादर्स डे' मन रहें है और अपने पापा को गिफ्ट दे रहें है |यह सब देखकर बूढ़े बाप को ताज्जुब होता है कि उसकी अपने ही परिवार में उपेक्षा की जा रही है | एक समय था जब घर के बड़ों का ईश्वर के समान आदर और सम्मान दिया जाता था | उस समय 'फादर्स डे', 'मदर्स डे' भी नहीं मनाया जाया था फिर भी बच्चे माँ-बाप का ख्याल रखते थे, उनकी सेवा चाकरी करते थे | इस कहानी में नई पीढ़ी की आडम्बरप्रियता को दिखाया गया है | बूढ़ा बाप घर में छोटा सा मंदिर चाहता है लेकिन बेटे को मंदिर बनाने के लिए घर में जगह नहीं मिलती | मंदिर की बदले बार बनाने के लिए बेटे के पास घर में खूब जगह है | "शीशे की नक्काशीदार अलमारियों में भांति-भांति की बोतलें सजी हैं .. और बच्चे कार्टून चैनलों में जीवन के वास्तविक सुख के संधान में रत है |" (राय 144) अब अपने कार्य में व्यस्त है वृद्धों के लिए किसी का पास समय नहीं है | आजकल की पीढ़ी घर में अपना हुक्म चलाती है और बूढ़े लोग चुपचाप उसका पालन करते है |

इसके अतिरिक्त अन्य चर्चित कहानियाँ जैसे- *'दहलीज पर संवाद'* और *'उघड़ा हुआ स्वेटर'* सुधा आरोड़ा की प्रसिद्ध कहानियाँ है | जो वृद्धों की स्थिति पर गहन विचार करती हैं | *'दहलीज पर संवाद'* में सेवानिवृत्ति के बाद पेंशन के सहारे जीवन जी रहे वृद्ध-दंपति की कहानी है | *'उघड़ा हुआ स्वेटर'* में एक जिंदादिल अंग्रेजीदाँ वृद्ध की कहानी है | वह अकेला है और उसके अकेलेपन का साथी *'उघड़ा हुआ स्वेटर'* है जो उसकी पत्नी बिंदा ने बुना था | बिंदा की मृत्यु के बाद स्वेटर के रूप में बूढ़े के पास उसकी यादें और जीने का सहारा है | दोनों कहानियों में वृद्धों के जीवन में अकेलेपन की घुटन, लाचारी और बेवसी का मार्मिक चित्रण किया हुआ है | *'वानप्रस्थ'* वंदना सहाय की कहानी है | यह शहरी सोसायटी के मंदिरों पर बैठे रहने वाले तीन बूढ़ों की कहानी है | वे अस्सी वर्ष के पार का जीवन और घर-गृहस्थी से पूरी तरह से टूटे हुए हैं | उन्होंने अपने जीवन का अधिकतर समय बच्चों को पढ़ाने-लिखाने और उनकी सुख-सुविधा जुटाने में खर्च कर दिया था और अब जो इनके हिस्से में खर्च करने के लिए रह गया था – वे थी, लम्बी रात और लम्बे दिन, न लम्बी रात कटती थी न लम्बे दिन | *'सासू की मानसिकता'* – सूरजपाल सिंह की कहानी है | इस कहानी में एक माँ, बेटा और बहू तीन पात्र है | इस कहानी में सास की रूढ़िवादी मानसिकता को दिखाया गया है | इस तरह वृद्ध विमर्श पर अनगिनत कहानियों का प्रकाशन हुआ है | उपर्युक्त 21वीं सदी की प्रमुख व चयनित कहानियों को ही शामिल किया गया

है | 21वीं सदी की हिंदी कहानियों में वृद्ध विमर्श केवल करुणा और सहानुभूति का विषय नहीं है, बल्कि यह समाज की बदलती संरचना और पारिवारिक मूल्यों के क्षरण का गहरा चित्रण है | इन कहानियों में वृद्धावस्था की समस्याएँ—अकेलापन, उपेक्षा, असुरक्षा, संपत्ति विवाद, आर्थिक निर्भरता और मृत्यु-बोध—स्पष्ट रूप से सामने आती हैं | विशेष रूप से वृद्धा स्त्रियों की स्थिति और भी जटिल और त्रासद रूप में उभरती है | कथाकारों ने यह दिखाया है कि आधुनिक जीवन-शैली और उपभोक्तावादी दृष्टिकोण ने वृद्धों के प्रति संवेदनशीलता को कमजोर किया है | साथ ही, कुछ रचनाएँ यह भी इंगित करती हैं कि यदि पारिवारिक संवाद, संवेदना और सहअस्तित्व की भावना जीवित रखी जाए तो वृद्ध जीवन गरिमामय और संतुलित बनाया जा सकता है | इस प्रकार 21वीं सदी की हिंदी कहानियों का वृद्ध विमर्श हमें केवल वृद्धावस्था की पीड़ा का अनुभव नहीं कराता, बल्कि समाज से आग्रह करता है कि वह अनुभव-संपन्न पीढ़ी को सम्मान और सहारा देकर अपनी सांस्कृतिक धरोहर को सुरक्षित बनाए |

- **निष्कर्ष :**

21वीं शताब्दी में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक व सांस्कृतिक बदलाव बहुत तेजी से हो रहे हैं | इस बदलते युग में भारतीय समाज में अनेक विकृत समस्याएँ जड़े गड़ाई बैठी है | जैसे – बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, जनसंख्या वृद्धि, आतंकवाद, प्रदूषण, घरेलू हिंसा, किसानों की आत्महत्या, बलात्कार, शोषण, भेदभाव, सांप्रदायिकता आदि अनेक समस्याएँ भारतीय समाज में विद्यमान है | इसके साथ आधुनिक समाज में वृद्धजनों की सामाजिक, शारीरिक एवं मानसिक समस्याएँ गंभीर रूप से उभर रही है | आज वृद्ध घरेलू हिंसा, दुर्व्यवहार, अकेलापन, उपेक्षा, वृद्धों को वृद्धाश्रम भेजना, आर्थिक असुरक्षा, शारीरिक व मानसिक पीड़ा आदि समस्याओं के शिकार होते जा रहें है | इन समस्याओं से उच्च, मध्यम, निम्न कोई भी वर्ग अछूता नहीं है | आधुनिक समाज ने एक उपभोगत्तावादी दृष्टिकोण को अपना रखा है | जो चीज उसके उपयोग की है उसे वह अपनाता है और बाकी को सिर्फ व्यर्थ मानता है | संबंधों के बीच भी आज यही मानसिकता आ गयी है | उपयोगिता के मुताबिक ही रिश्तों को आँका जाता है | इसी कारण घर पर व्यर्थ बैठे वृद्धजन आजकल नई पीढ़ी के लिए समस्या अथवा बोझ बन गए हैं | प्रस्तुत अध्याय में इक्कीसवीं सदी के पूर्व और इक्कीसवीं सदी के प्रारम्भिक दो दशकों में वृद्ध विमर्श पर आधारित प्रमुख व चयनित हिंदी उपन्यासों और कहानियों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है | *'दौड़'* उपन्यास भूमंडलीकरण के दौर में वृद्ध माता-पिता की अनदेखी को प्रस्तुत करता है | *'समय सरगम'* उपन्यास में प्रमुख रूप से संयुक्त परिवार, परिवार में बुजुर्गों की भूमिका और उनकी वास्तविक स्थिति को कई प्रसंगों के माध्यम से उजागर किया गया है | उपन्यास में दो बूढ़ों के माध्यम से कई बूढ़ों की कथा कही गई है |*'गिलिगडु'* उपन्यास में वृद्ध जसवंत सिंह शहरीकरण की प्रगतिशील विचारधारा और सामाजिक पृष्ठभूमि को स्वीकार नहीं कर पाते और समस्याग्रस्त पात्र बनकर रह जाते है | *'रेहन पर रग्घू'* उपन्यास में भारतीय और पाश्चात्य संस्कृति में मूल्य परिवर्तन को देखा जा सकता है | *'चार दरवेश'* उपन्यास में लेखक ने वृद्धावस्था की दहलीज पर खड़े चार वृद्धों का कारुणिक जीवन को उजागर किया है |*'नियति चक्र'* उपन्यास में सत्ता के हस्तांतरण ने बुजुर्गों को हाशिये पर खड़ा कर दिया है |*'वसीयत'* यह उपन्यास पारिवारिक संबंधों और बुजुर्गों की संवेदना पर आधारित है | आज के इस युग में मानवीय मूल्य ख़त्म होते जा रहे है सिर्फ स्वार्थवादिता हावी है |*'रिश्तों की आंच'* यह उपन्यास माता-पिता एवं संतान के रिश्तों को आधार बनाकर लिखा गया है | *'शाम की झिलमिल'* इस उपन्यास में पत्नी के देहांत के बाद

लेखक अपने जीवन में आए अकेलपन और खालीपन को फिर से भरना चाहता है | *'दाखिल-ख़ारिज'* में बेटे-बहुओं द्वारा पिता व ससुर के शोषण का दृश्य चित्रित किया गया है | इसके साथ 21वीं सदी की कहानियां वृद्धों की कई समस्याओं और चुनौतियों को हर दृष्टिकोण से देखने का प्रयास करती हैं | अंत: इक्कीसवीं शताब्दी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धावस्था का चित्रण व्यापक रूप से हुआ है | इक्कीसवीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धजनों की मानसिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक सभी स्थितियों का बेहद सूक्ष्म एवं सजीव चित्रण किया गया है | हिंदी कथाकारों ने वर्तमान समाज की वास्तविकता को उजागर किया है | निष्कर्षत: 21वीं शताब्दी के हिंदी कथाकारों ने वृद्ध विमर्श को केवल वृद्धावस्था की जैविक या व्यक्तिगत समस्या न मानकर, उसे सामाजिक, पारिवारिक, सांस्कृतिक और आर्थिक यथार्थ से जोड़कर प्रस्तुत किया है | उनके कथा-साहित्य में वृद्ध व्यक्ति का अकेलापन, असुरक्षा, उपेक्षा, आर्थिक निर्भरता, वैधव्यजनित पीड़ा, पीढ़ियों के बीच संवादहीनता तथा बदलते पारिवारिक ढाँचे की विडंबनाएँ प्रमुख रूप से उभरकर सामने आती हैं | साथ ही, अनेक कथाकारों ने वृद्धों की संवेदनाओं, अनुभवों और संघर्षों को मानवीय गरिमा के साथ चित्रित कर यह संदेश दिया है कि वृद्ध केवल सहानुभूति के पात्र नहीं, बल्कि जीवन-ज्ञान, परंपरा और मूल्यबोध के संवाहक भी हैं | इस प्रकार 21वीं शताब्दी का हिंदी कथा-साहित्य वृद्ध विमर्श को एक महत्वपूर्ण विमर्श के रूप में स्थापित करता है, जो बदलते समाज में नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी के बीच समझ, सहयोग और संवेदना की आवश्यकता पर बल देता है |

सन्दर्भ सूची :

आधार ग्रन्थ : (उपन्यास)

कपूर, मस्तराम. विषय पुरुष. दिल्ली, प्रथम संस्करण, परमेश्वरी प्रकाशन, 1997.

कालिया, ममता. *दौड़*. नयी दिल्ली, छठा संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2021.

गिल, गगन. देह की मुंडेर. नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2019.

चतुर्वेदी, ज्ञान. बारहमासी. नयी दिल्ली, सातवाँ संस्करण, राजकमल पेपरबैक्स, 2018.

चंद, टेकचंद. *दाई*. नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2017.

ठाकुर, देवेश. *संध्या छाया*. प्रथम संस्करण, शिखरदीप प्रकाशन, 2011.

दिवाकर, रामधारी सिंह. *दाखिल ख़ारिज*, नयी दिल्ली, दूसरा संस्करण, राजकमल प्रकाशन, 2019.

नेगी, सूरज सिंह. *रिश्तों की आंच*, नवजीवन पब्लिकेशन, 2016.

नेगी, सूरज सिंह. *वसीयत*. जयपुर, प्रथम संस्करण, साहित्यागार प्रकाशन, 2018.

नेगी, सूरज सिंह . *नियति चक्र*. जयपुर, प्रथम संस्करण, सनातन प्रकाशन, 2019.

मुद्गल, चित्रा. *गिलिगडु*. नयी दिल्ली, सातवां संस्करण, सामयिक प्रकाशन, 2020.

मिश्र. गोविन्द. *शाम की झिलमिल*. नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, किताबघर प्रकाशन, 2017.

वत्स, राकेश. *फिर लौटते हुए*. दिल्ली, प्रथम संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज, 2003.

वर्मा, निर्मल. *अंतिम अरण्य*. नयी दिल्ली, द्वितीय संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2021.

वर्मा, रवीन्द्र. *निन्यानवे*. नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2002.

वर्मा, रवीन्द्र. *पत्थर ऊपर पानी*. नयी दिल्ली, दूसरा संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2023.

वर्मा, रवीन्द्र. *आखिरी मंजिल*. नई दिल्ली, पहला संस्करण, राजकमल प्रकाशन, 2008.

सिंह, काशीनाथ. *रेहन पर रग्घू*. नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, 2008.

सोबती, कृष्णा. *ऐ लड़की*. नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, 2012.

सोबती, कृष्णा. *समय सरगम*. नई दिल्ली, चौथा संस्करण, राजकमल प्रकाशन, 2019.

हृदयेश, *चार दरवेश*. नयी दिल्ली, दूसरा संस्करण, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, 2013.

आधार ग्रन्थ : (कहानी)

अग्निहोत्री, कृष्णा. *अपना-अपना अस्तित्व*. दिल्ली, प्रथम संस्करण, नयी किताब प्रकाशन, 2018.

खान, एम. फ़िरोज. प्रेमचंद वृद्ध जीवन की कहानियाँ. कानपूर, प्रथम संस्करण, विकास प्रकाशन, 2021.

भाटी, सरोज. *मुकुंद मणि*. बीकानेर, सूर्य प्रकाशन मंदिर, 2022.

मुद्गल, चित्रा. *लपटें*. नयी दिल्ली, छठा संस्करण, वाणी प्रकाशन ग्रुप, 2024.

मेहरा, दिलीप. *वृद्धावस्था केन्द्रित हिंदी कहानियाँ*. कानपुर, उत्कर्ष पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, 2022.

रणसुभे, सूर्यकुमार. वृद्ध विमर्श रत्नकुमार सांभरिया की चयनित कहानियाँ. नई दिल्ली, हँस प्रकाशन, 2021.

साहनी, भीषम. *पहला पाठ*. दिल्ली, प्रथम संस्करण, शीर्षक प्रकाशन, 1956.

सूर्यबाला. *साँझवाती*. नई दिल्ली, ग्रन्थ अकादमी, 2015.

सूर्यबाला. मानुष गंध. नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2022.

हरनोट, एस. आर. *दारोश तथा अन्य कहानियां*. पंचकूला हरियाणा, द्वितीय संस्करण, आधार प्रकाशन, 2012.

हरनोट, एस.आर. *कीलें*. नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2019.

ज्ञानरंजन. पिता (ज्ञानरंजन संकलित कहानियां). राष्ट्रीय पुस्तक न्यास भारत, 2014.

सहायक ग्रन्थ :

अग्रवाल, रोहणी. *साहित्य का स्त्री स्वर*. साहित्य भंडार, 2015.

केटिल, अर्नाल्ड. *एन इंट्रोडक्शन टू द इंग्लिश नॉवेल*,

खान, एम. फिरोज. *वृद्ध जीवन की कहानियाँ (भारतीय एवं प्रवासी लेखक)*. प्रथम संस्करण, विकास प्रकाशन, 2021.

चौधरी, डी. पाल. *एजिंग* एंड द एज्ड. 1992.

दास, श्यामसुंदर. *साहित्यालोचन*. प्रथम संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2014

परमार, दीपिका. *हिंदी कहानियों के आईने में वृद्ध विमर्श*. प्रथम संस्करण, उत्कर्ष पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, 2021.

प्रियदर्शन. *बड़े बुज़ुर्ग : कहानियाँ रिश्तों की*. नयी दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, पहला संस्करण, 2014.

बाली, पी अरुण. *भारत में वृद्धों की सामाजिक समस्याएँ*. वागर्थ, 1999.

व्याहुद, सुशीला प्रसाद. *हिंदी के महाकाव्यात्मक उपन्यास*.

शर्मा, आर. पी. *हिंदी साहित्य का इतिहास*. एच. जी. पब्लिशर्स, 1995.

शर्मा, अंकिता. *हिंदी कथा साहित्य में वृद्धावस्था का यथार्थ*.प्रथम संस्करण, उत्कर्ष पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, 2021.

शर्मा, ब्रह्मदत्त. *हिंदी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन*.

शुक्ल, रामचंद्र. *हिंदी साहित्य का इतिहास*. नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, प्रभात प्रकाशन, 2017

सिन्हा,जे.एन.पी. *प्रॉब्लम ऑफ़ दी एजेड*. क्लासिकल पब्लिकेशन कम्पनी, 1989.

श्रीवास्तव, राजेन्द्र. प्रसाद. *हिंदी भाषा एवं साहित्य का इतिहास संस्करण*. 1994-95.

पत्रिकाएँ

अहमद, डॉ.एम. फीरोज. वृद्ध विमर्श पर केन्द्रित कहानियाँ, वाङ्मय, वर्ष : 17, जनवरी-मार्च, 2021

मेहरा, डॉ. दिलीप, *साजिश*. साहित्य वीथिका, जून 2021.

राय, निरुपमा. *चलो एक बूढ़े की कथा सुनते है*. नई धारा, अप्रैल-मई, 2020.

वर्मा, निर्मल. *बीच बहस में*. सम्भावना, 1973.

तीसरा अध्याय –

21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श : सामाजिक और सांस्कृतिक पक्ष

क्र. स.	विवरण	पृष्ठ संख्या
3.	**तृतीय अध्याय- 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श : सामाजिक और सांस्कृतिक पक्ष**	**137-208**
3.1	21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की वैयक्तिक समस्याएं 3.1.1 शारीरिक शिथिलता 3.1.2 थकावट 3.1.3 नींद की कमी 3.1.4 सौन्दर्य की कमी 3.1.5 देखने और सुनने की शक्ति में कमी 3.1.6 वृद्धावस्था में शरीर विभिन्न रोगों से ग्रसित	
3.2	21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की पारिवारिक समस्याएं 3.2.1 एकल परिवार में वृद्ध 3.2.2 संयुक्त परिवार में वृद्ध 3.2.3 नौकरीपेशा परिवार में वृद्ध 3.2.4 संपन्न परिवार में वृद्ध 3.2.5 निम्न परिवार में वृद्ध 3.2.6 मध्यम वर्गीय परिवार में वृद्ध 3.2.7 संतान संबंधी समस्या 3.2.8 वृद्धों के पुनर्वास की समस्या	
3.3	21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की सामाजिक समस्याएं 3.3.1 समाज का वृद्धों के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण 3.3.2 युवा पीढ़ी का वृद्धों के प्रति दृष्टिकोण	

	3.3.3 नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी में सामंजस्य का अभाव 3.3.4 सामाजिक असुरक्षा 3.3.5 वैधव्यजनित समस्या 3.3.6 नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी में वैचारिक मतभेद	
3.4	21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की आर्थिक समस्याएं 3.4.1 वृद्धावस्था में आर्थिक असुरक्षा 3.4.2 आर्थिक रूप से दूसरों पर निर्भरता 3.4.3 स्वास्थ्य संबंधी निर्भरता 3.4.4 धन संपत्ति व जमीन जायदाद के लिए वृद्धों के साथ हिंसा	
3.5	21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की सांस्कृतिक समस्याएं 3.5.1 सामाजिक व्यवस्था, आदर्शों और मूल्यों में परिवर्तन 3.5.2 पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति का प्रभाव 3.5.3 भौतिकतावादी दृष्टिकोण 3.5.4 बच्चों का पलायन	
●	निष्कर्ष	
●	सन्दर्भ सूची	

तृतीय अध्याय

21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श : सामाजिक और सांस्कृतिक पक्ष

21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श एक महत्वपूर्ण सामाजिक और सांस्कृतिक विषय बनकर उभरा है | आधुनिक जीवन-शैली, औद्योगीकरण, शहरीकरण और संयुक्त परिवार से एकल परिवार की ओर परिवर्तन ने वृद्धों की स्थिति को जटिल बना दिया है | इस संदर्भ में कथाकारों ने वृद्धावस्था को केवल शारीरिक दुर्बलता या व्यक्तिगत असहायता के रूप में नहीं देखा, बल्कि उसे सामाजिक और सांस्कृतिक संरचनाओं में उपेक्षा, असुरक्षा और हाशियाकरण के संदर्भ में प्रस्तुत किया | कथाओं में वृद्धों की समस्याएँ जैसे अकेलापन, पारिवारिक दूरी, संपत्ति और उत्तराधिकार के विवाद, सामाजिक उपेक्षा और मृत्यु-बोध, आधुनिक समाज की बदलती संवेदनशीलता और सांस्कृतिक मूल्यों के क्षरण का संकेत देती हैं | इसके माध्यम से लेखक यह प्रश्न भी उठाते हैं कि आधुनिक समय में वृद्धों के प्रति समाज की जिम्मेदारियाँ और पारिवारिक सहारा कैसे सुनिश्चित किया जा सकता है | इस प्रकार 21वीं सदी का हिंदी कथा साहित्य वृद्ध विमर्श को सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टि से गहनता और बहुआयामीता प्रदान करता है, जिससे पाठक और समाज दोनों ही वृद्धावस्था की वास्तविकताओं और चुनौतियों के प्रति संवेदनशील बनते हैं | हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श व वृद्ध समस्या अनेक पक्षों को लेकर गतिमान रहा है | 21वीं सदी में वृद्ध जीवन पर आधारित उपन्यास लगातार लिखे जा रहे हैं | हिंदी के इन उपन्यासों में वृद्धों की समस्याओं को अनेक परिप्रेक्ष्यों में चित्रित किया गया है | 21वीं सदी के निम्नलिखित चयनित कथा साहित्य पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि इन कथाकारों ने अपने कथा साहित्य में वृद्धों की समस्याओं को सशक्त अभिव्यक्ति प्रदान की है | ममता कालिया का ‘*दौड़*’ (2000), कृष्णा सोबती का ‘*समय सरगम*’ (2000), निर्मल वर्मा का ‘*अंतिम अरण्य*’ (2000), रवीन्द्र वर्मा का ‘*पत्थर ऊपर पानी*’ (2000), चित्रा मुद्गल का ‘*गिलिगडु*’ (2002) राकेश वत्स का ‘*फिर लौटते हुए*’ (2003), काशीनाथ सिंह का ‘*रेहन पर रग्घू*’ (2008), रवीन्द्र वर्मा का ‘*आखिरी मंजिल*’ (2008), हृदयेश का ‘*चार दरवेश*’ (2011), देवेश ठाकुर का ‘*संध्या छाया*’ (2011), ज्ञान चतुर्वेदी का ‘*हम न मरब*’ (2014), रामधारी सिंह दिवाकर का ‘*दाखिल खारिज* (2014), टेकचंद का ‘*दाई*’ (2017), गोविन्द मिश्र का ‘*शाम की झिलमिल*’ (2017), सूरज सिंह नेगी के चार उपन्यास ‘*रिश्तों की आँच*’ (2016), ‘*वसीयत*’ (2018), तथा ‘*नियति चक्र*’ (2019) इत्यादि प्रमुख है | वृद्ध विमर्श मुख्य रूप से निम्नलिखित चयनित कहानियों में देखा जा सकता है | वर्ष 2000 ई. के पश्चात वृद्धों पर केंद्रित कहानियों में जिनमें एस. आर हरनोट के कहानी संग्रह ‘*दारोश*’ में संकलित ‘*बिल्लियाँ बतियाती है*’, ‘*कागभाखा*’, और ‘*बीस फुट के बापूजी*’, ‘*कीलें*’ कहानी संग्रह में संकलित ‘*लोहे का बैल*’, *चित्रा मुद्गल की ‘गेंद*’, कृष्णा अग्निहोत्री के कहानी संग्रह ‘*अपना-अपना अस्तित्व*’ में संकलित ‘*झुर्रियों की पीड़ा*’, ‘*अपना-अपना अस्तित्व*’, ‘*मैं जिन्दा हूँ*’, ‘*तोर जवानी सलामत रहे*’, ‘*उसका इतिहास*’, ‘*यह क्या जगह है दोस्तों*’, ‘*बदमिजाज*’, ‘*प्रेमाश्रय*’, ‘*बिदाई समारोह*’, ‘*टीन के घेरे*’, ‘*स्वाभिमानी*’, ‘*वे अकेली थीं*’, , दिलीप मेहरा की ‘*अग्निदाह*’, ‘*हंसा ताई*’, ‘*साजिश*’ सरोज भाटी की ‘*बेटा*’ सूर्यबाला की ‘साँझवाती’, ‘*दादी और रिमोट*’ भानुप्रताप कुठियाला की ‘*लाजबन्ती*’,

सूरजपाल सिंह चौहान की '*सासु की मानसिकता*', रत्नकुमार साम्भ्रिया की '*बूढी*' निरुपमा राय की '*चलो एक बूढ़े की कथा सुनते है*' आदि सम्मिलित हैं | उपर्युक्त कथा साहित्य के केन्द्रीय विषय में वृद्धजन की विविध समस्याओं का यथार्थ अंकन उभरता है | कहीं वृद्धावस्था में स्त्री-पुरुष नितांत अकेले रहने को अभिशप्त हैं, कहीं परिवार से उपेक्षित हैं, कहीं बीमारियों से ग्रस्त हैं, कहीं पति या पत्नी की अकाल मृत्यु से अधूरे जीवन को ढो रहे हैं | 21वीं सदी का हिंदी कथा साहित्य वृद्धों की वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक तथा मनोवैज्ञानिक समस्याओं को उजागर करता है |

3.1 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की वैयक्तिक समस्याएं

वृद्धावस्था का आगमन सृष्टि का शाश्वत नियम है | इस अवस्था में व्यक्ति शारीरिक, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक तथा मानसिक क्षेत्र में शिथिल पड़ जाता है | वृद्धावस्था में शारीरिक क्षमताएं क्षीण हो जाती है और व्यक्ति कई तरह की गंभीर समस्याओं से घिर जाता है | वृद्धावस्था में वृद्ध व्यक्ति का शरीर शिथिल, नेत्र क्षीण, सुनने में कमी, गिरे हुए दांत, पोपला मुँह, झुकी हुई कमर, चलने में तकलीफ आदि साफ नजर आती है | वृद्ध व्यक्ति के रक्त संचार, पाचन तथा मलमूत्र वहिर्गमन आदि की क्रियाएँ शिथिल हो जाती है | व्यक्ति हठ और मानसिक अतिरंजनाओं के प्रयोग की ओर झुक जाता है, आत्मविश्वास की भावनाएँ समाप्त होने लगती हैं |

3.1.1 शारीरिक शिथिलता

मनुष्य बचपन से जवानी तक स्वस्थ जीवन व्यतीत करता है परन्तु वृद्धावस्था तक पहुँचते-पहुँचते व्यक्ति का शरीर शिथिल हो जाता है | जिन कार्यों को वह यौवन काल में सुगमता से कर पाता था उन्हीं कार्यों को करने में वृद्धावस्था में परेशानियों का सामना करना पड़ता है | इन्द्रियां कमजोर होने लगती है | आँखों से दिखना कम हो जाता है | कान से कम सुनाई पड़ने लगता है | दांत कमजोर हो जाते है | शरीर को गति व शक्ति प्रदान करने वाले प्रमुख संस्थान जैसे पाचन संस्थान, रक्त परिभ्रमण संस्थान, स्वशन संस्थान आदि कमजोर पड़ने लगते हैं | वृद्धावस्था में शरीर का अशक्त हो जाना, क्षीण हो जाना बुजुर्ग की प्रमुख समस्या होती है | विमला लाल अपनी पुस्तक '*वृद्धावस्था का सच*' में लिखती है – "जीवन के इस चौथेपन तक पहुँचते-पहुँचते आदमी के हाथ-पांव थकने लगते हैं | अंग शिथिल होने लगते हैं और सारा शरीर ही धीरे-धीरे जवाब-सा देने लगता है | (लाल 58) वृद्धावस्था की शिथिलताओं को व्यक्त करते हुए रवीन्द्र वर्मा के '*आखिरी मंजिल*' उपन्यास में माधव दयाल शारीरिक शिथिलता के शिकार दिखाई देते हैं –

> "इन दिनों उन्हें अपने शरीर को लेकर काफी शक होने लगा था | कभी लगता कि दिल कुछ ज्यादा तेजी से धड़क रहा है | ऐसा अकसर बिस्तर पर लेटे हुए महसूस होता था | तब वह करवट बदल लेते और दिल सम पर आ जाता | कभी पीठ में दर्द होता और उन्हें संदेह होता कि कैंसर तो नहीं है | जब तक वे डॉक्टर के पास जाने की सोचते, दर्द ठीक हो जाता था और वे भूल जाते थे | दायें घुटने में गठिया पुराना और पुश्तैनी था | जब तक खूब ठंड रही, वे घुटनों के ऊनी मोज़े पहनते रहे और ठीक रहे | ठंडी उतरी तो उन्होंने मोज़े उतार दिये | उन्हें लगा घुटनों में जान नहीं बची जैसे घुटनों की जान उनके मोजों में हो |" (वर्मा 121)

यहाँ लेखक वृद्धावस्था के शारीरिक क्षरण, मानसिक असुरक्षा और आत्मसंशय का जीवंत चित्रण प्रस्तुत करते हैं | लेखक ने वृद्धों की दुविधा को मानवीय संवेदनाओं के साथ उकेरा है, जिससे पाठक उनके दर्द और असहायता को गहराई से महसूस कर पाता है | वृद्धावस्था में मनुष्य अपाहिज व्यक्ति के समान हो जाता है, न ठीक से चल पाता, न ठीक से सो पाता और न तो ठीक से खाना खा पाता | कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी *'बदमिजाज'* में वृद्ध पात्र हेमवती कमर दर्द से कराहती है – "उन्होंने अपनी कमर सीधी करने की चेष्टा की ...पर वह झुकी रही और उनके मुहँ से एक हलकी दर्दीली आह निकल गई, "उफ ज़रा कमर सीधी करो तो चक्कर आ जाता है, हे ईश्वर शारीरिक चलते-फिरते ले जाना |" (अग्निहोत्री 61) इसमें वृद्ध व्यक्ति की असहायता के साथ-साथ जीवन के अंतिम पड़ाव को गरिमापूर्ण ढंग से जीने की आकांक्षा भी झलकती है | ये उदाहरण दर्द से कराहते बुजुर्गों के शरीर में आई शिथिलता के कारण उत्पन्न समस्या से है | बुढ़ापे में व्यक्ति का शरीर वैसा नहीं रहता जैसा कि युवावस्था में था | वृद्धावस्था में शरीर धीरे-धीरे साथ छोड़ता चला जाता है | बुढ़ापे में शारीरिक दुर्बलता के साथ विभिन्न बीमारियों का लगा रहना आम बात है | शारीरिक शिथिलता और अस्वस्थता के कारण वृद्धों का मनोबल कमजोर होने लगता है | बीमार वृद्ध व्यक्ति हर दिन ईश्वर से मृत्यु की भीख मांगते दिखाई देते हैं | वृद्धावस्था में शारीरिक कमजोरी के साथ मृत्यु बोध भी बढ़ जाता है | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की शारीरिक शिथिलता केवल शारीरिक कमजोरी तक सीमित नहीं है, बल्कि यह उनके भावनात्मक और सामाजिक संघर्षों का भी प्रतीक है |

3.1.2 थकावट

वृद्धावस्था में थकावट एक सामान्य लेकिन महत्वपूर्ण शारीरिक और मानसिक स्थिति है, जो बढ़ती आयु के साथ व्यक्ति के शरीर और मन पर पड़ने वाले प्रभावों को दर्शाती है | वृद्धावस्था में जवानी वाली ऊर्जा शक्ति तो नहीं रह जाती, रह जाता है विविध अनुभवों का भंडार | युवावस्था में व्यक्ति एक नहीं अनेक कार्यों को अंजाम देता है लेकिन उम्र के इस पड़ाव में उनके जीवन में एक तरफ थकान तो दूसरी ओर उनमें असुरक्षा, अनादर और कष्टों का सामना करना पड़ता है | वृद्धावस्था में मनुष्य थकावट के कारण अपनी इच्छानुसार किसी परिचित से मिलने नहीं जा पाता | - "अकसर बुढ़ापे में इंसान दूसरों पर निर्भर हो जाया करता है | जो काम हम यौवनावस्था में स्वयं कर लेते हैं जैसे कहीं भी आना-जाना हो, क्या खाना, किससे मिलना इन सब में स्वतंत्र होते हैं | बुढ़ापा आते ही इन सभी कामों के लिए दूसरों पर निर्भर हो जाते हैं | (नेगी 101, 102) वृद्धावस्था में शरीर की मांसपेशियां कमजोर हो जाती है, जो काम करने की क्षमता को सीमित कर देती है | साधारण से साधारण काम भी थकान का कारण बन जाते हैं | मनुष्य अपनी युवावस्था में खूब चलते-फिरते, दौड़ते-कूदते हैं | वृद्धावस्था में व्यक्ति थोड़ा चलने में भी असमर्थ दिखाई पड़ता है | रमेशचंद्र के *'कथा सनातन'* उपन्यास में वृद्ध पात्र सनातन की स्थिति इसी तरह की है |

> "जहाँ उठते ही सुबह-सुबह पूरे छह मील का फर्राटा लगाते थे, वहाँ अब मुश्किल डेढ़ मील चल पाते हैं | तो क्या अब इतने से भी गए ? बुढ़ापा क्या इसी को कहते हैं ? यह जरा सी चढ़ाई में हाँफने लगना ? पर यह तो चढ़ाई भी नहीं, उतार है सीधा | चलो, सीधा नहीं उबड़-खाबड़ ही सही | परन्तु इससे क्या ? हजारों बार रौंदा होगा यह रास्ता उन्होंने-इन्हीं-इन्हीं पांवों से | आँखों पै पट्टी भी बाँध दे कोई, तो भी ये पाँव...अपने जाने-पहचाने रास्ते को आप से आप ढूँढ़ लेंगे खुद अपनी आँख बनके |" (शाह 19)

बुढ़ापे में व्यक्ति जल्दी थक जाता है जिससे कभी-कभी ऐसी परेशानियों के कारण ही अधिकतर बूढ़ों को घर की चार दीवारी के अन्दर ही बंद रहना पड़ता है | काशीनाथ सिंह के उपन्यास *'रेहन पर रग्घू'* में भी इस समस्या के बारे में बताया है –

> "रघुनाथ दौड़ लगाते थक गए थे ! यह उम्र भी ऐसे कार्यों के लिए नहीं रह गई थी | अब पहले जैसा दमखम भी नहीं रह गया था | घुटनों में भी दर्द रहता था और गर्दन में भी | शीला अलग मरीज थी दम और गैस की ! जब भी रघुनाथ के सामने आती, डकार लेती हुई ही आती |" (सिंह 83)

उम्र बढ़ने के साथ मधुमेह, हृदय रोग, जोड़ों व घुटनों का दर्द तथा अन्य बीमारियां शरीर को थका देती हैं | कृष्णा सोबती के उपन्यास *'समय सरगम'* में आरण्या और ईशान पार्क को घूमने जाते है | शाम को पार्क में घूमने से पहले आरण्या आराम कर लेती है | ईशान कहता है – "हाँ, शाम को पार्क चलने का इरादा है क्या ! चल सकूँगी ! कितने बजे ? ठीक साढ़े चार ! फाटक पर ही मिलेंगे | आरण्या को कुछ हड़बड़ाहट हुई | सैर को जाने से पहले आराम जरूरी है | थकान सी हो रही है ! सुबह विटामिन लेना भी भूल गई थी |"(सोबती 9) सोबती के इस अंश में वृद्धावस्था की दिनचर्या और शारीरिक सीमाएँ उभरकर आती हैं | साधारण-सी सैर के लिए भी मन में उत्साह और शरीर में थकान साथ-साथ मौजूद हैं | विटामिन लेना भूल जाना वृद्ध स्मृति की कमजोरी को दर्शाता है | यह अंश वृद्ध जीवन की नाजुकता, असुरक्षा और साधारण कार्यों के लिए भी शारीरिक व मानसिक तैयारी की आवश्यकता का यथार्थ चित्रण करता है | वृद्धावस्था में मेटाबोलिज्म धीमा हो जाने के कारण वृद्ध व्यक्ति जल्दी थक जाते हैं और अधिक समय तक आराम की आवश्यकता होती है | वृद्ध आरण्या शाम की सैर से पहले आराम करती है उसे पता है उम्र के इस पड़ाव में बहुत जल्दी थकावट हो जाती है | उसका मानना है इस सयानी उम्र में यह भी दुविधा रहती है कि हल्का पहनो या भारी | हल्का पहनने से सर्दी लगने का डर और भारी पहनने से चलना मुश्किल हो जाता है | इस उम्र में ऐसे कपड़े पहनने चाहिए जिनका भार शरीर उठा सके | यहाँ देख सकते है कि उम्र की अवस्था में वृद्धों को थकावट की चिंता रहती है |

3.1.3 नींद न आना

वृद्धावस्था में आयु बढ़ने के साथ स्वास्थ्य संबंधी कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है | लेकिन इन सबसे अलग वृद्धों को नींद न आने की समस्या भी है | बुढ़ापे में नींद न आने के कई कारण होते है | जिनमें तनाव, शारीरिक और मानसिक श्रम में कमी आदि प्रमुख है | कई बार वृद्धों की नींद रात को ही खुल जाती है | नींद न आने के कारण उनकी आँखें नींद को तरस जाती हैं | जिसके कारण कुछ वृद्ध नींद की गोलियाँ का सेवन भी करते हैं | रवीन्द्र वर्मा के उपन्यास *'आख़िरी मंजिल'* में वृद्ध माधव दयाल की पत्नी मधु को कई बार रत को नींद नहीं आती है जिसके कारण वह नींद की गोलियों का सेवन भी करती हैं | "ऐसा अक्सर हो जाता था जब मधु को बिल्कुल नींद नहीं आती या एक नींद के बाद आधी रात को नींद टूट जाती और फिर नींद न आती | वह हमेशा अपने पास नींद की गोलियाँ रखती थी | (वर्मा 42) बुज़ुर्गों के जीवन में नींद जैसी सामान्य क्रिया भी संघर्ष पूर्ण हो जाती है और वे दवाइयों पर आश्रित हो जाते हैं | बुढ़ापे में रात को अच्छी नींद न आने से वृद्ध परेशान रहते हैं | बुढ़ापे में अनिद्रा के शिकार वृद्ध नींद पूरी न लेने के कारण अन्य कई बीमारियों से भी ग्रसित रहते हैं | उचित नींद न लेने से थकावट, ऊर्जा में कमी, उच्च रक्तचाप, अवसाद

और दिन भर आलस्य इत्यादि शारीरिक व मानसिक प्रभाव पड़ता है | इस उपन्यास में मधु अपनी नींद न आने का कारण अपनी बढ़ती आयु को मानती है | "मम्मी |" सुनंदा बोली, "जब तक मैं दिल्ली में थी, तुम नींद की गोली नहीं लेती थीं |" हाँ | "फिर क्या हुआ ?" "तुम लखनऊ चली आयी|" मधु हँसी, "या शायद मेरी उम्र का तकाजा हो |"(वर्मा 43) उम्र के साथ नींद की गुणवत्ता और मात्रा दोनों में गिरावट आती है | बुढ़ापे में अगर अच्छी नींद आये तो उनके वृद्ध शरीर की आधी बीमारियां गायब हो जाती हैं | वृद्धों के लिए बेहतर नींद केवल शारीरिक आराम का जरिया नहीं, बल्कि मानसिक और भावनात्मक स्वास्थ्य के लिए भी आवश्यक है |

3.1.4 सौन्दर्य की कमी

बचपन से लेकर वृद्धावस्था तक मनुष्य एक समान नहीं रह सकता बल्कि उसकी शारीरिक अवस्था में परिवर्तन होता है | सौन्दर्य का नष्ट होना एक प्रमुख समस्या है, क्योंकि जब व्यक्ति कुरूप हो जाता है, तो उसके प्रति आकर्षण कम हो जाता है | कभी-कभी परिवार के सदस्य भी अपने दोस्तों और रिश्तेदारों के सामने आने के लिए मना कर देते है | टेकचंद का प्रसिद्ध उपन्यास '*दाई*' में वृद्ध रेशम बुआ का चित्रण लेखक करते हैं –

> "रेशम बुआ समाई हुई थी | कभी गेहुआँ ललाया रंग अतिशय झुर्रियों से काला पड़ चुका था | दांत दो चार-चार बचे थे, पोपला मुंह, बाल सफेद मटमैल सन से अस्त-व्यस्त | पहनावे से लेकर गुदड़ी चद्दर, तकिया सब मैले चीकट | घर में बदबू भी लग रही थी जैसे बरसाती पानी के बाद तीखी धूप से होती है | जैसे ताजा पैदा हुए बच्चे के आसपास होती है |"(टेकचंद 63)

टेकचंद जी ने '*दाई*' उपन्यास में एक वृद्ध स्त्री के जीवन की घटना को दिखाकर यह बताया है कि वृद्ध होने पर किस तरह के हाल होते हैं | वृद्धावस्था में चेहरे की त्वचा ढीली पड़ने लगती है, झुर्रियाँ आने लगती है, बाल सफ़ेद हो जाते हैं और शरीर की आकृति भी बदलती है | वृद्ध होते ही मनुष्य की सारी शक्ति, ऊर्जा क्षीण हो जाती है और उसका सौन्दर्य भी नष्ट हो जाता है | जीवन भर अपने परिवार को पालने वाली दाई अंतिम समय में उनके अपने ही उन्हें घर का एक सामान हो ऐसे अंतिम संस्कार कर आते हैं |

3.1.5 वृद्धावस्था में देखने और सुनने की शक्ति में कमी

उम्र बढ़ने के साथ व्यक्ति के देखने, सुनने और स्वाद शक्ति पर भी असर पड़ता है | इस अवस्था में आँखों से कम दिखाई और कानों से कम सुनाई देने लगता है | दांत न होने से खाना खा नहीं पाते | कृष्णा सोबती के उपन्यास '*समय-सरगम*' में आरण्या और ईशान के संवाद से वृद्धों के चक्षु लोप की चिंता दिखाई देती है –

> "और उम्र ? वह बकरी बनी चर रही है, धीरे-धीरे | चरने दो | उस ओर मत देखो ! आरण्या ने अपने से चुपके से पूछा- आँखों को कम तो नहीं दिख रहा ! कैमिस्ट से ड्राप लेना जरूरी है | डॉक्टर से कब का वक्त है भला ! सुना, ईशान कह रहें हैं – लगता है मेरा दूर का चश्मा बदलने को है |" (सोबती 15)

उम्र के इस पड़ाव में मनुष्य के हर अंग धीरे-धीरे कमजोर पड़ने लग जाते है | ईशान और आरण्या के इस संवाद से वृद्धों के अपने आँखों को लेकर चिंता स्पष्ट दिखाई पड़ती है | वृद्धों को आँखों से कम दिखाई देने लगता है बिना चश्मे के उन्हें साफ़-साफ़ देखने में मुश्किल आती है | रवीन्द्र वर्मा के उपन्यास में वृद्ध माधव दयाल बिना चश्मे के हरि को नहीं पहचान पाता –

> "बाहर कोई था | वे उठे | उन्होंने दरवाज़ा खोला : चेहरा धुँधला था | "कौन ?" उन्होंने आँखें झपझपाते हुए पूछा, "आप कौन हैं ?" अजनबी हँसा "सर आपने मुझे पहचाना नहीं |" तब माधव को याद आया कि उनकी आँखें नंगी हैं | वे अपना चश्मा मेज पर भूल आये थे | में मुड़े | उन्होंने अपना चश्मा उठा कर आँखों पर लगाया और पीछे मुड़ कर सामने देखा | "अरे हरि तुम हो |" वे मुस्कराये |" (वर्मा 48)

उम्र बढ़ने के साथ आँखों की रौशनी को समायोजित करने की क्षमता घट जाती है, जिससे दूर या पास की वस्तुओं को देखने में समस्या होती है | वृद्धजनों को बुढ़ापे में बिना चश्मे के दिखाई न देने से किसी परिचित व्यक्ति को पहचानने में भी मुश्किल आती है | वृद्धावस्था में देखने सुनने की शक्ति में कमी एक सामान्य समस्या है जो उम्र बढ़ने के साथ लगभग हर व्यक्ति को प्रभावित करती है | यह केवल शारीरिक समस्या नहीं है, बल्कि व्यक्ति के दैनिक जीवन, भावनात्मक स्वास्थ्य और सामाजिक सम्बन्धों पर भी प्रभाव डालती है |

3.1.6 वृद्धावस्था में शरीर विभिन्न रोगों से ग्रसित

वृद्धावस्था में कोई भी व्यक्ति रोगों से बच नहीं सकता है | इस उम्र में शरीर का विभिन्न रोगों से ग्रसित होना एक सामान्य प्रक्रिया है, क्योंकि उम्र बढ़ने के साथ शरीर की प्रतिरोधक क्षमता कमजोर हो जाती है | इस अवस्था में व्यक्ति तरह-तरह की साध्य-असाध्य बीमारियों से पीड़ित रहता है | सामान्यतः वृद्धजन रक्तचाप, हृदय रोग, किडनी रोग, ब्रेन हेमरेज, स्मृति लोप, मधुमेह, लकवा, गठिया, टयूमर, बवासीर, खाँसी, दमा, टी.बी. जैसी जानलेवा बीमारियों के शिकार हो जाते है | काशीनाथ सिंह के उपन्यास '*रेहन पर रग्घू*' में अशोक विहार कॉलोनी में रह रहे बीमार वृद्धों का मार्मिक दृश्य देखकर देख सकते है-

> "उस सुबह ध्यान गया पार्क की ओर आते एक बूढ़े की ओर- लकवे का मारा हुआ मुँह टेढ़ा, गर्दन बेकाबू, बायाँ बाजू झूलता हुआ असहाय, घिसटता हुआ बेबस पाँव, दूसरी गली से निकलता एक दूसरा बूढ़ा जिसकी एक आँख खुली और दूसरी पर हरी पट्टी, उसके पीछे एक और बूढ़ा जिसके गले में कालर यानी, स्पांडिलाइटिस का पट्टा, तीसरी गली से भी एक बूढ़ा आ रहा है पार्क के गेट की तरफ धीरे-धीरे | उसके एक हाथ में बोतल है और ट्यूब लुंगी के अंदर !" (सिंह 125)

कराहते बुजुर्गों का यह दृश्य देखकर रघुनाथ विचलित हो जाता है | क्या शहर में रहने वाले वृद्धों की स्थिति ऐसी होती है ? वह खुद से प्रश्न करता है | उसे लगता है कि शहर में बूढ़े अपनी मृत्यु के विरोध में लगे रहते हैं | जबकि उनका जीवन नीरस होता जाता है | वृद्धावस्था में कौन-कौन से समस्याएँ आती हैं इसके बारे में ज्ञान चतुर्वेदी के उपन्यास '*हम न मरब*' में लिखा है- "सांस फूल जाती है | घुटने सूजे पड़े हैं |...आँखों से टिपता नहीं | पेशाब रुक-रुक के निकलती हैं, और टट्टी कांख-कांख के | क्या करें | बहुत ही ख़राब

चीज होती है बुढ़ापा |” (चतुर्वेदी 185) यहाँ वृद्धों के सांस फूलने, घुटने के दर्द, आँखों से दिखाई न देना आदि बीमारियों से पीड़ित दिखाई देते हैं | रवीन्द्र वर्मा के ‘*पत्थर ऊपर पानी*’ उपन्यास में वृद्ध पात्र सीता देवी को गठिया हो जाता है | लेखक लिखते हैं –

> “फिर जाड़ों में सीता देवी बीमार पड़ी थी | गठिया का दर्द था | खाट से उठते न बनता था | हरीश अपनी मारुती लेकर आया था और उन्हें मारुती में बिठाकर लखनऊ ले गया था | बड़े डॉक्टर का इलाज हुआ | वे ठीक हो गयीं | उन्होंने लौटने को कहा | लेकिन वे लौटी कहाँ ? लड़कों ने हरदोई का घर बेच दिया था क्योंकि उन्हें लखनऊ में अपने घर बनाने थे | फिर ये तुम्हारे भी तो घर होने अम्मा, हरीश ने कहा था | यह तीन साल पहले की बात है |” (वर्मा 13)

यह अवस्था ही ऐसी है जिसमें व्यक्ति को अनेक बीमारियों का सामना करना पड़ता है | शारीरिक और मानसिक कमजोरी कुछ करने नहीं देती | चित्रा मुद्गल के ‘*गिलिगडु*’ अपन्यास में जसवंत सिंह भी बवासीर से पीड़ित दिखाई देते हैं | वे अपनी बीमारी का जिक्र कुछ इस तरह करते हैं -

> “कब्ज के पुराने मरीज ठहरे | बवासीर की शिकायत इन दिनों खासी उछाल लिए हुए है | पेट सुबह लोटा-भर पानी पी लेने के बावजूद टुकड़ों में साफ होता है | मस्से रह-रहकर रिस्ते रहते हैं | ऐन निकलने के समय पेट में ऐंठन सी हुई | रुकना पड़ा | यों तो बाबू जसवंत सिंह ने त्रिफला में पंचस्कार के साथ कायमचूर्ण मिलाकर रखा हुआ है | ताकि तकलीफ कम हो | तकलीफ कम होती नजर नहीं आ रही | रात में फंकी लीलते हुए अलबता भ्रम ढांढस बंधाए रखता है कि उनकी अगली सुबह तकलीफ रहती होगी |...अब तो खून से भरा कमोड देख उन्हें घबराहट होने लगती है | ‘हिमअप गोलियों की मात्रा उन्होंने बिना डॉक्टरी सलाह के बढ़ा ली है | खून कुछ तो बने | कैसे भी बने | हालांकि जानते हैं कि बिना डॉक्टर से पूछे उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए | मजबूरी है | एक तो उनके डॉक्टर-डॉक्टर सक्सेना कानपुर में जो बैठे हुए है |” (मुद्गल 9,10)

वृद्धावस्था में कुछ बुजुर्ग बिना डॉक्टर की सलाह से दवाइयों का सेवन करने लग जाते हैं | जो कभी-कभी वृद्धों के लिए घातक सिद्ध होती है | बाबू जसवंत सिंह बवासीर के मरीज है और बिना डॉक्टरी सलाह से दवाई लेने लगते है | बवासीर के साथ उनका रक्तचाप भी बढ़ जाता है जिसके कारण उन्हें कई बार रात को नींद तक नहीं आती –

> “उन्हें यह भी महसूस हो रहा कि उनका रक्तचाप शायद बढ़ा हुआ है | रात नींद दसियों बार उचटी | लगा कि सुबह हो गई है | अँधेरे ने समझाया कि यह समय सोने का समय है | सो जाएं | सुबह उन्हें स्वयं जगा देगी | अलार्म के बजते ही रक्तचाप दिखाना जरूरी है | दिखाना तो उन्हें हर पन्द्रह दिन में चाहिए, लेकिन डॉक्टर अनुराग चतुर्वेदी की तगड़ी फीस इस दिशा में पहल नहीं करने देती |”(मुद्गल 55)

वृद्धों के शरीर में कई तरह की व्याधियां घर कर जाती है जिनसे वे बहुत परेशान रहते हैं | जसवंत सिंह की पत्नी मधुमेह की मरीज है जिससे उसे साइलेंट अटैक आता है और उसकी मृत्यु हो जाती है |

"इतनी गहरी नींद कभी नहीं सोई नरेंद्र की अम्मा ! सरककर उसके माथे को छूआ | चेहरा हिलाया | जिस ओर कर दिया, उसी ओर बना रहा | लुढ़का-सा | डॉक्टर सक्सेना ने आते ही हाथ खड़े कर दिए मधुमेह के मरीजों को अमूमन साइलेंट अटैक होता है | अन्य दिल के मरीजों की भांति उन्हें असहनीय पीड़ा नहीं होती कि पास के लोगों को अटैक का पूर्वानुमान हो सके |"(मुद्गल 51)

वृद्धावस्था में मानव शरीर जर्जर हो जाता है | इस जर्जर और दुर्बल शरीर में अगर कोई रोग लग जाए तो उसका दर्द उनके लिए असहनीय हो जाता है | कई वृद्धों की शारीरिक रोगों के कारण मृत्यु तक हो जाती है | गिलिगडु उपन्यास में जसवंत की पत्नी मधुमेह की शिकार थी जिससे वह साइलेंट अटैक को सह न सकी | बाबू जसवंत सिंह अपनी पत्नी के मौत से अभी उबरे ही नहीं थे कि उनके बचपन के दोस्त हरिहर दुबे का निधन हो गया |

"अचानक खबर मिली- बालसखा दुबे का निधन हो गया | बिरहाना रोड स्थित 'मंगल-भवन' में कोठीनुमा दो कमरे और दालान वाली पुरानी रिहाइश थी हरिहर की | महीना-भर पहले कोलकाता से छोटे बेटे आदित्य के यहां से लेजर से मोतियाबिंद का ऑपरेशन करवाकर लौटा था | आते ही फोन किया था |...तीन रोज बाद घर का दरवाजा तोड़ा गया | बदबू ने पड़ोसियों को परेशान किया तब ! पीढ़ी बदल गई थी 'मंगल भवन' की | कब आता-जाता था, किसी को कोई लेना-देना नहीं था | लाश खटिया के नीचे मिली थी हरिहर की | एक हाथ सीने पर दबा हुआ था | पोस्टमार्टम से पता लगा कि जबरदस्त हृदयघात हुआ था उसे | दरवाजे की सांकल खोलने खटिया से उठाना चाहा होगा- ढेर हो गया |"(मुद्गल 53,54)

जसवंत सिंह के दोस्त मोतियाबिंद के शिकार थे | उन्हें उसका आपरेशन करना पड़ता है | इसके साथ ही कुछ समय बाद हृदयघात के कारण उनकी मौत हो जाती है | कर्नल स्वामी की मृत्यु भी सीवियर अटैक से हो जाती है | कर्नल स्वामी कई दिनों से सैर पर नहीं आते तो जसवंत सिंह को उनकी चिंता हो जाती है | वे उनसे मिलने उनके घर पर पहुँच जाते है तब उन्हें उनके पड़ोसन मिसेज श्रीवास्तव से पता चलता है कि उनकी मौत को बारह दिन हो गए है -

"कब ... आज उन्हें गए बारह दिन हो गए | तीस नवम्बर की सुबह थी वह !' भाई साहब हमेशा की भांति प्रसन्नचित्त सुबह की सैर के लिए निकले | सात-आठ सीढ़ियां उतरते ही उनके सीने में अचानक भयंकर दर्द उठा | दर्द से बेहाल वे सीढ़ियों पर बैठ गए | कुछ देर बाद हिम्मत जुटाकर उन्होंने हमारे घर की घंटी बजाई | श्रीवास्तवजी ने दरवाजा खोला | उन्हें पसीने से लथपथ देख किसी प्रकार सोफे पर लिटाया और फौरन फैमिली डॉक्टर को फोन किया | उन्हें देखते ही डॉक्टर ने कह दिया- भाई साहब को दिल का दौरा पड़ा है | नर्सिंग होम के चक्करों में समय नष्ट करना उचित नहीं | सीधे ले जाकर इमरजेंसी- 'अपोलो' में दाखिल कीजिए | 'अपोलो' ले जाते हुए रास्ते में उन्हें दूसरा सीवियर अटैक हुआ और उस अटैक को भाई साहब झेल नहीं पाए"(मुद्गल 136)

वृद्धावस्था में मनुष्य का शरीर कई रोगों से ग्रस्त रहता है | शरीर की शक्ति क्षीण हो जाती है | उनका कमजोर शरीर किसी भी बड़े आघातों को सहन नहीं कर पाता | अगर वृद्ध अकेले हो तो उनके मन में कई भावनाएं दबी रहती है जो बड़े अटैक का कारण बन जाती है | यहाँ कर्नल स्वामी कई सालों से अपने बच्चों और पोते-पोतियों की याद में अकेले फ्लैट में जीवन व्यतीत कर रहें थे | वो हमेशा अपनी गिलिगडु (कात्यायिनी और कुमुदनी) पोतियों की बातें जसवंत को बताया करते थे |

हृदयेश के उपन्यास '*चार दरवेश*' में चौथा वृद्ध दमे की बीमारी से पीड़ित दिखाई देता है – "यह चौथा वृद्ध दमे का मरीज था | दमा अकसर उसे सलाह देता था, बगैर बोले काम चल सकता है तो बगैर बोले चलाओ |" (हृदयेश 9) वृद्ध व्यक्तियों में अकसर दमे की शिकायत रहती ही है | कुछ लोगों को बीड़ी-सिगरेट की आदत के कारण वृद्धावस्था में दमे की बीमारी जकड़ लेती है | इस उपन्यास में भी चौथा वृद्ध रामप्रसाद बीड़ी के अधिक सेवन से दमे का मरीज बन जाता है | "दमा भी अब दुश्मन बन गया है | पहले दिन भर में एक बंडल बीड़ी तो पी ही लेता था | कम करते-करते फिर बीड़ी, सिगरेट को हाथ जोड़ दिये |" (हृदयेश 11) इस दमे बीमारी पर किसी का कोई वश नहीं चलता | इस उपन्यास में भी रामप्रसाद दमे की बीमारी के कारण जितनी जरूरत पड़ती है उतनी ही बात करते हैं | वृद्धों को मजबूरी वश बीमारी के साथ समझौता करना पड़ता है | रामप्रसाद की पत्नी को कफ़ की शिकायत थी | "पत्नी को कफ़ की शिकायत हो गयी थी | खाँसने पर पिला पका हुआ बलगम निकलता था ढेर सारा | साँस भी फूलती थी | बीच-बीच में ज्वर भी हो आता था |" (हृदयेश 77) शारीरिक रोगों के कारण कुछ समय बाद उनकी पत्नी की मृत्यु हो जाती है | वृद्धावस्था में दमा, साँस का फूलना और कफ़ आमतौर पर सभी वृद्ध इस समस्या से गुजरते हैं | निर्मल वर्मा के 'अंतिम अरण्य' उपन्यास में अन्ना जी दीवा की बीमारी के बारे में बताती है-

> "ओह, उन्होंने यह नहीं बताया, वह कितने कष्ट से मरी थीं | पेट में टयूमर था...मरने के बाद जब उसे पेट से निकाला तो इतना बड़ा, जैसे टेनिस की गेंद होती है-लेकिन जब वो जीती थीं, दर्द की इतनी सी हाय भी उनके मुँह से नहीं निकलती थी | उलटे वह मुझे दिलासा देती थीं, जब मैं उन्हें देखकर बेहाल हो जाता था |" (वर्मा 51)

वृद्ध महिला के पेट में ट्यूमर होने के बावजूद उन्होंने दर्द छुपाकर दूसरों को दिलासा दिया | यह उनके धैर्य, मानसिक मजबूती और सहानुभूति को दर्शाता है | ममता कालिया के उपन्यास '*दौड़*' में सोनी साहब को दिल का दौरा पड़ता है जिससे उनकी मृत्यु हो जाती है | उनकी चौंसठ साल की पत्नी गठिया से पीड़ित है |-

> "कॉलोनी के सोनी साहब को दिल का दौरा पड़ा था, हॉस्पिटल में भरती हैं | रेखा और राकेश फिक्रमंद हो गए | मिसेज सोनी चौंसठ साल की गठियाग्रस्त महिला हैं | अस्पताल की भाग-दौड़ कैसे संभालेंगी ?...पर सोनी के दिल ने इतनी मोहलत न दी | वह थककर पहले ही धड़कना बंद कर बैठा | शाम तक कॉलोनी में अस्पताल की शव वाहिका सोनी का पार्थिव शरीर और उनकी बेहाल पत्नी को उतारकर चली गई |" (कालिया 80)

यहाँ देख सकते है कॉलोनी में अकेले रह रहे सोनी साहब और उनकी पत्नी मिसेज सोनी दोनों विभिन्न रोगों से ग्रसित है | सोनी साहब का दिल का दौरा पड़ने से मौत हो जाती है वहीं उनकी पत्नी उम्र के इस पड़ाव में गठिया की बीमारी से ग्रसित है | इस दुख की घड़ी

में अपनी बीमारी को सहन करें या अपने पति की मृत्यु का दुख को सहन करें | बेटी देहरादून में ब्याही है बेटा सिद्धार्थ विदेश में नौकरी करता है | जो अपने पिता की चिता को मुखाग्नि देने भी नहीं आ पाता | वृद्धों के जीवन में विभिन्न शारीरिक रोगों से ग्रसित होने के साथ अपनों के पास न होने का दर्द उन्हें और भी अधिक कारुणिक बना देता है | डॉ. सूरज सिंह नेगी के उपन्यास *'नियति चक्र'* में वृद्ध नितिन घोष जो टी.बी. की बीमारी से ग्रसित है | डॉ. सचिन अवस्थी कहते है – "मेरे सामने मृतक व्यक्ति जतिन दास की फाइल थी | वह फेफड़ों की टी.बी. से ग्रसित था | बीमारी बहुत पुरानी थी, रिपोर्टों से लग रहा था कि मृतक द्वारा इलाज में लापरवाही बरती गई है, वरना आजकल टी.बी. लाइलाज भी नहीं रही |" (नेगी 40) यहाँ वृद्ध नितिन घोष अपनी सारी संपत्ति अपने बेटे चित्रांश घोष को सुपुर्द कर देता है | बेटा उस पिता के त्याग और प्यार को नहीं समझ पाता | अपने अंतिम समय में पिता को अपने ही घर से बेघर होना पड़ता है | वृद्धावस्था में टी.बी. की बीमारी और बेटे के व्यवहार से पीड़ित नितिन घोष की मृत्यु हो जाती है | राकेश वत्स के उपन्यास 'फिर लौटते हुए' में वृद्ध दिवाकर शर्मा दिल का मरीज है | दिवाकर शर्मा अपने छोटे बेटे बलबीर के घर से बड़े बेटे चंद्रमोहन के घर के लिए जब आते है तो चंद्रमोहन को चिंता हो जाती है | वे सोचते है – "साठ साल का बूढ़ा आदमी उस पर भी दिल का मरीज अगर फूँक इसी घर में निकल गई तो अरथी को कन्धा देने के लिए चार आदमी भी नहीं जुटेंगे | कोई क्यों आएगा जब हम खुद किसी के यहाँ नहीं जाते |"(वत्स 7) यहाँ देखा जा सकता है वृद्ध किस तरह गंभीर बीमारियों का शिकार होते है | वहीं उनकी संतान ऐसी परिस्थिति में उनकी जरूरतों को बोझ समझकर चिड़चिड़ा महसूस करता है | वृद्धों का जीवन विभिन्न शारीरिक रोगों से घिर जाता है इसका उल्लेख चित्रा मुद्गल की 'गेंद' कहानी में देखने को मिलता है | डॉ. मनीष कुशवाहा वृद्ध सचदेवा से उनका हाल-चाल व उनकी तकलीफों के बारे में पूछते हैं – "शुगर कितना है ? ब्लडप्रेशर के लिए कौन-सी गोली ले रहें हैं ? कितनी ले रहें है ?"(मुद्गल 11) बढ़ती उम्र के साथ शरीर की कार्यक्षमता कम होने लगती हैं, जिससे मधुमेह और उच्च रक्तचाप जैसी समस्याएँ आम हो जाती हैं | स्वस्थ जीवनशैली अपनाकर इन बीमारियों को नियंत्रण में रखा जा सकता है और बुजुर्गों का जीवन सुखद और स्वास्थ्य पूर्ण बनाया जा सकता है | वृद्धों की शारीरिक दुर्बलता और अस्वस्थता का वर्णन कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी *'उसका इतिहास'* में भी अभिव्यक्त किया गया है | मानवी का सर दर्द से फटा जा रहा था कि तभी वह चक्कर खाकर फर्श पर गिर गई | बढ़ती उम्र में मानवी से सारा दिन भागदौड़ नहीं होता था | वह दिन भर घर का काम करती अपने लिए आराम तक का समय नहीं निकाल पाती | "मानवी लगभग बेहोश रही थी, सिटी-स्केन टेस्ट, इंजेक्शन, एंटीबॉयटिक- सबसे त्रस्त मानवी समझ रही थी कि वह ब्रेन हैमरिज से बाख गई ...पर हल्का लकवा दाएँ पैर व हाथ में लग गया | (अग्निहोत्री 46) वृद्धावस्था में शारीरिक कमजोरी के साथ-साथ मानसिक तनाव भी बढ़ जाता है | कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी 'स्वाभिमानी' में वृद्ध पात्र वैजंती दमे की गोली खा कर दहशत से अपनी खांसी को दबाने की कोशिश करती तभी बहू ताने मारती हुई कहती अपनी खांसी की आवाजों से पूरे घर को सोने मत देना | दोनों हाथों को बैजंती मुंह पर रख खांसती रही उसकी आँखें लाल और और शारीरक कमजोरी के कारण उसकी सांस फूलने लगती है |

> "एक जोर का ठसका आया, तुरंत तत्परता से उठकर उसने दमे की गोली खा ली | दहशत से वह अपनी उभरी खाँसी दबाने लगी, अन्यथा अभी कांता आकर घूरने लगेगी, "खाँसो...खाँसी तुम्हारा घर है न ...हम सबको सोने मत दो और मेरे बच्चों

> को दम कर दो ..बहुत सफाई और स्वास्थ्य पर भाषण देती व लिखती हो न |" बैजंती की आँखें खाँसी के संतुलन से भर गयीं ...वह बेचैन हो गयी |" (अग्निहोत्री 100)

'वे अकेली थी' कहानी में भी वृद्धों की अस्वस्थता को कृष्णा अग्निहोत्री ने दिखाया है | कमला और कांता कई वर्षों से साथ रह रही थी किन्तु कभी लड़ी नहीं थी | दोनों वृद्धावस्था में आकर अपनी बहू की चाल में फँस जाती है जिससे वे आपस में एक दूसरे से घृणा करने लगती है | बहू मेम साहब की तरह देर से उठती और रसोई घर का मुआयना करती और सारा काम विधवा वृद्ध कांता से करवाती | कांता बहू के सारे काम करती और बहू आराम फरमाती यह बात कमला को बिलकुल पसंद नहीं थी | कमला की बेटी किन्ना ने जब दोनों बुढ़ियों की थकी-शिकस्त बेचैन आत्माओं की तड़प को देखा तो अपने साथ कलकत्ता जाने को कहा | लेकिन कांता जाने से मना कर देती है | इस पर कमला उसे भरपूर कोसते हुए कहा –

> "तू है ही अभागी | रह यहाँ, कर मेरी बुराई | तेरा कभी मंगल न हो |" कांता को उस दिन पहली बार हार्टअटैक आया और कमला कलकते जाकर रोयी | कांता को छोड़कर आना उसे अच्छा नहीं लगा था | उसे रोते-रोते बहुत खाँसी आई तो पता लगा, अब वह दमे की मरीज है |" (अग्निहोत्री 119)

कांता आजीवन ननद कमला का सम्मान करती निरुत्तर चुप खामोश मौन रह सब कहा मानती रही और उसके बदले जब उसे सहारे की जरूरत पड़ी तो कमला के उस व्यवहार ने उसे बहुत दुख पहुँचाया जिसके कारण उसे हार्टअटैक आया | इस बात का पता जब कमला को चला तो वह अपने व्यवहार पर अपने आपको कोसते रोते-रोते उसे भी खाँसी आती है और खाँसते-खाँसते वह भी दमा का शिकार हो जाती है | निष्कर्ष में कह सकते कि उपर्युक्त कथा साहित्य में वृद्ध पात्र विभिन्न बीमारियों से पीड़ित हैं | शारीरिक रोगों की वजह से जो काम पहले कर पाते थे अब वह नहीं कर पाते हैं | जिससे उनके वैयक्तिक जीवन कष्टदायक हो गया है | वृद्धावस्था में शरीर का विभिन्न रोगों से ग्रसित होना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है, क्योंकि जैसे-जैसे उम्र बढ़ती है, शरीर की प्रतिरोधक क्षमता धीरे-धीरे कम होने लगती है | वृद्धावस्था कोई रोग नहीं है, बल्कि एक सुंदर और अनुभवों से भरपूर अवस्था है | इस अवस्था में शरीर भले कमजोर हो जाए, लेकिन मनोबल और अनुभवों की शक्ति उसे ऊँचा बनाए रखती है | 21वीं सदी के हिंदी कथाकारों ने वृद्धजनों की शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक समस्याओं का यथार्थ चित्रण किया है | वृद्ध अक्सर शारीरिक कमजोरी, रोग, गठिया, दृष्टि और सुनने की कमी जैसी समस्याओं से जूझते हैं | इसके साथ ही अनिद्रा, स्मृति दोष, थकान और स्वास्थ्य संबंधी आशंकाएँ उन्हें मानसिक रूप से असहाय बनाती हैं | वृद्धावस्था में स्वावलंबन कम हो जाता है और रोज़मर्रा के कार्यों में दूसरों पर निर्भरता बढ़ जाती है | इसके कारण उनके आत्मसम्मान और आत्मविश्वास पर असर पड़ता है | इस प्रकार, 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में शारीरिक समस्याओं पर केंद्रित वृद्ध विमर्श यह समझने में सहायक है कि वृद्धावस्था का अनुभव केवल मानसिक या सामाजिक नहीं, बल्कि शारीरिक वास्तविकताओं और सीमाओं के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है | यह पाठक को वृद्धों के जीवन की संवेदनशीलताओं और उनके दैनिक संघर्षों से परिचित कराता है | हमें चाहिए की हम वृद्धजनों को सहारा, सम्मान और प्यार दें | यही उनके स्वास्थ्य की सबसे बड़ी औषधि है |

3.2 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की पारिवारिक समस्याएं :-

मनुष्य जब इस सृष्टि पर जन्म लेता है तो उसे अलग-अलग अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है | मनुष्य की जन्म से लेकर मृत्यु तक अधिकतर गतिविधियाँ परिवार में होती है | परिवार समाज की महत्वपूर्ण संस्था होती है | समाज या परिवार की कोई गतिविधियाँ कभी भावनात्मकता से ऊपर नहीं गयी | इसलिए इस भावना प्रधान समाज में परिवार एक मजबूत स्तंभ की तरह रहा | परिवार समाज की छोटी व आधारभूत इकाई है | इस आधारभूत इकाई के मुखिया वृद्ध हुआ करते थे | परिवार के संचालन में वृद्धों के निर्णय को पारिवारिक लोग स्वाभाविक रूप से स्वीकार करते थे | भारतीय समाज व संस्कृति में परिवार के वरिष्ठतम सदस्य ही परिवार के कर्ता-धर्ता होते थे | परिवर्तन के इस दौर ने पारिवारिक प्रतिमानों को प्रभावित किया है | पारिवारिक प्रतिमानों में आधुनिक युग में उनके मूल्यों तथा आदर्शों में परिवर्तन हो रहें हैं | प्राचीन काल में पारिवारिक प्रतिमान वृद्धों के सम्मान पर आधारित था | परिवार में वृद्धों की सम्मानजनक स्थिति थी | पारिवारिक कार्य प्रणाली का संचालन बुजुर्ग सदस्य के द्वारा ही संपन्न किया जाता था | वर्तमान समय में पारिवारिक जीवन में संवेदनाओं एवं भावनाओं का कोई स्थान नहीं रहा | भूमंडलीकरण, औद्योगीकरण, नगरीकरण, तकनीकी उन्नति, भौतिकतावादी दृष्टिकोण व उच्चस्तरीय जीवनशैली की इच्छा आदि ने वृद्धों को परिवार के केंद्र से हटाकर परिधि पर खड़ा कर दिया है | भावनात्मकता के ऊपर भौतिकतावादी मानसिकता का प्रभुत्व बढ़ने लगा | ऐसी स्थिति में वृद्धों का परिवार में सम्मान घटता जा रहा है तथा कई पारिवारिक समस्याएँ उत्पन्न हो रही है | अंत: वृद्धाश्रमों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है | वर्तमान समय में सम्पूर्ण विश्व में वृद्धों के भविष्य के संदर्भ में स्थिति चिंताजनक निर्मित हो रही है | 21वीं सदी का हिंदी कथा साहित्य समाज के बदलते परिवेश, मूल्यों और संघर्षों को गहराई से अभिव्यक्त करता है | इसमें वृद्धों की पारिवारिक समस्याओं को विशेष रूप से उकेरा गया है | 21वीं सदी के चयनित कथा साहित्य में वृद्धों की परिवार में स्थिति की पड़ताल की जाएगी |

3.2.1 एकल परिवार में वृद्ध

आधुनिकीकरण की अंधी दौड़ में आहिस्ता-आहिस्ता संयुक्त परिवार टूटने लगे हैं और उसकी जगह एकल परिवार ने ले ली | आज हर व्यक्ति अपना स्वतंत्र परिवार बनाना चाहता है | आज का परिवार पति-पत्नी और बच्चों तक सीमित हो गया है, वृद्ध माता पिता तो परिवार की सीमा से बाहर होते जा रहे हैं | एकल परिवार में वृद्ध घर के केंद्र से निकलकर घर के कोने और फिर कब घर के बाहर होता गया पता ही नहीं चला | वृद्ध व्यक्ति का नया स्थान अब वृद्धाश्रम बनता जा रहा है | जिस कारण वृद्ध एकाकी जीवन जीने के लिए विवश हो जाते हैं | परिवार में इस बदलाव का चित्रण 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में देखने को मिलता है | आज परिवार व समाज में कई ऐसे बुजुर्ग देखे जा सकते हैं जिनका कोई परिवार नहीं है | जिन वृद्धों का परिवार है वे परिवार में परिवार के होते हुए भी अकेले जीवन जीने को विवश है | कृष्णा सोबती के उपन्यास *'समय सरगम'* में ईशान पत्नी की मृत्यु के बाद भरे-पूरे परिवार के बावजूद अकेले रहते हैं | एक तरफ दमयंती और प्रभुदयाल जो परिवार होते हुए भी एकाकीपन जीवन जीने को विवश है | दूसरी तरफ वृद्ध पात्र कामिनी जिसका कोई परिवार नहीं पर उसे उसके सगे भाई ही ठग रहे थे | एक अन्य वृद्ध पात्र आरण्या जिसका कोई परिवार नहीं है, अकेले जीवन की इस अंतिम पड़ाव को जीती है | ईशान और आरण्या के संवाद इस अकेलेपन की इबारत को और स्पष्ट करते हैं, आरण्यया कहती है –

"हम लोग अकेले रहते है, तभी इसी मौन का पाठ सुन सकते हैं | क्या अकेलापन महसूस करती हैं ? नहीं | इतना जरूर कि कभी बाहर से घर पहुँचती हूँ तो हाथ-पाँव धो, कपड़े बदलकर स्वयं चाय बना अपना स्वागत करती हूँ | यह तो मालूम ही है कि घर में कोई दूसरी आवाज नहीं | और हर आवाज जो मेरी नहीं, दूसरों की है | बाहर की है | ऐसे में टी.वी. की मैत्री बुरी नहीं |"(सोबती 63)

यहाँ आरण्या अकेले जीवन जीने में विश्वास करती हैं | परिस्थितियों के कारण अब उसे अकेलापन भाने लगा है | जब आरण्या और ईशान संयुक्त परिवार की व्यवस्था पर बातचीत कर रहे होते है तो ईशान यह बताना चाहता है की हमारा देशगत संस्कार संयुक्त परिवार व्यवस्था पर पनपा है और इसे हम फिर से खोज रहे हैं | इस पर आरण्या का मत बिल्कुल अलग होता है | आरण्या में धीरे-धीरे यह बदलाव आने लगा कि अब वह खुद की निकटता में कभी अकेलापन महसूस नहीं करती | ईशान संयुक्त परिवार व्यवस्था में विश्वास करता है और इसी कारण वह साथ रहते परिवार को खुली किताब मानता है | ईशान आरण्या को समझाना चाहते है कि – "परिवार सुरक्षा का एक नीड़ है |" ईशान जीवन को एकवर्णी नहीं मानता है इसी कारण वह यह समझता है कि परिवार 'एक-दूसरे को सहारा देने वाली घनी छाहं भी है | उसकी दृष्टि में परिवार में पनपा आपसी सामंजस्य भी जरूरी है | सामाजिक संरचना के बदलने और संयुक्त परिवारों के स्थान पर एकल परिवारों के बढ़ते प्रचलन ने वृद्धों के जीवन में अकेलेपन, असुरक्षा और भावनात्मक संघर्ष को जन्म दिया है | एकल परिवार में वृद्धावस्था की कठिनाइयाँ अधिक स्पष्ट होती हैं | हिंदी कथा साहित्य में इसे अकेलेपन, सामाजिक उपेक्षा और जीवन की असुविधाओं के रूप में उजागर किया गया है, जो समाज में वृद्धों के लिए संवेदनशील दृष्टिकोण की आवश्यकता को रेखांकित करता है |

3.2.2 संयुक्त परिवार में वृद्ध

संयुक्त परिवार में वृद्धों की स्थिति एक ऐसा विषय है जो भारतीय समाज की परम्पराओं, मूल्यों और बदलती जीवनशैली के बीच संतुलन को उजागर करता है | संयुक्त परिवार की संरचना में वृद्धों को आदर, सहयोग और भावनात्मक समर्थन मिलता है, लेकिन आधुनिक समय में यह स्थिति भी चुनौतियों से मुक्त नहीं है | भारत में सदैव संयुक्त परिवार की परंपरा रही है | अभी भी यह परम्परा पूरी तरह से ख़त्म नहीं हुई है | परन्तु निरंतर यह परम्परा क्षीण होती जा रही है | भारतीय संयुक्त परिवार में वृद्ध महत्वपूर्ण सदस्य हुआ करते थे | प्राचीन समय में जहाँ वृद्ध व्यक्ति संयुक्त परिवार में सुखी और सुरक्षित रहता था आज वही वृद्ध परिवार में उपेक्षित और असुरक्षित महसूस करता है | बेटे और बहुओं द्वारा वृद्ध को प्रताड़ित किया जा रहा है, उनकी संपत्ति पर कब्ज़ा करके उन्हें घर से बाहर किया जा रहा है | कृष्णा सोबती के *'समय सरगम'* उपन्यास में आधुनिक संयुक्त परिवारों में वृद्धों के प्रति जो असहनीय व्यवहार अपनाया जा रहा है उसका भावपूर्ण चित्रण दिखाया गया है | प्रभुदयाल, कामिनी, दमयंती तीनों अपने ही परिवार में घुट-घुट कर रहने को मजबूर है | दमयंती के शब्दों में –

"मैं तुम्हारी तरह अकेली होती तो क्यों परेशान होती | बच्चे साथ रह रहे हैं | मेरे घर में मेरा किचन चल रहा है, खर्चा में कर रही हूँ और मैं अपने कमरे में अकेली पड़ी रहती हूँ | बिना मेरी इजाजत मेरा सामान इधर से उधर करते रहते हैं... मैं

> अपने बच्चों से वैर विरोध क्यों करूँगी ! उनका भी फर्ज बनता है, मैंने कुछ खाया पिया की नहीं बीमार हूँ, दवा लानी है, टेस्ट करवाना है डॉक्टर के पास जाना है वह सब मैं अपने आप करूँ... मैं ड्राइंग रूम में नहीं बैठ सकती, मेरे मेहमान नहीं बैठ सकते जबकि वहां का सब फर्नीचर साज-सामान मेरा अपना बनाया हुआ है और मैं किसी बेजान काठ की तरह देखी जाती हूँ| (सोबती 74)

आधुनिक जीवनशैली में कई बार वृद्धों की भूमिका केवल देखरेख और परम्परागत जिम्मेदारियों तक सीमित कर दी जाती है | यह स्थिति उनके आत्मसम्मान को ठेस पहुंचा सकती है | इस संवाद से हम आधुनिक संयुक्त परिवारों में बुजुर्गों की स्थिति समझ सकते है | दमयंती अपने समय की आधुनिक लड़की थी | पति की मृत्यु के बाद दमयंती का जीवन एकाकी और नरक बन गया था | जिसने खूब मेहनत करके अपने घर को बनाया हो, वृद्धावस्था में वही वृद्ध अपने घर से किनारे कर दिया जाता है | तमाम संपत्ति होने के बावजूद दमयंती को अपने बेटों के अधीन जीना पड़ता है | वह आरण्या से मिलकर उनसे कहने लगती है कि परिवार के कारण ही उनकी जिंदगी ख़राब हुई है | यदि वह भी उनकी तरह स्वतंत्र रहती तो इन परेशानियों से बच जाती | वह कहती है सारा खर्चा मैं करती हूँ न तो कोई मुझसे बात करता है और न ही मैं अपने मन का कुछ कर सकती हूँ | मैं अपने कमरे में अकेले पड़ी रहती हूँ और मेरी इजाजत के बिना मेरा सामान हड़प लिया जाता है | कहीं मुझसे फ्लैट के कागजात मांगे जाते है | मुझे न अपने कमरे से निकलने की इजाजत है और न ही अपने मेहमानों को ड्राइंग रूम में बिठाने की | आरण्या और ईशान के कारण दमयंती एक दिन विरोध करने का साहस तो करती है लेकिन अंदर से बहुत डर जाती है | उसका डर सही भी निकलता है | अंत में उसे अपनी जान गँवा कर हरजाना भरना पड़ता है | संयुक्त परिवार में कुछ वृद्ध अपनी संतानों द्वारा धन-संपत्ति के लिए प्रताड़ित किए जाते है | कृष्णा सोबती के उपन्यास *'समय सरगम'* में प्रभुदयाल के तीनों बेटे उनके धन-दौलत को पाने के लिए अपने बाप से जबरदस्ती करने पर उतर आ जाते है |

> "तीन बेटों के परिवार में विधुर पिता प्रभुदयाल अपने ही घर में पराए हो गए | उनका गुमसुम कृपण स्वभाव लड़कों को खलने लगा | धीरे-धीरे खुफिया खोज-खबर इकट्ठा शुरू हो गई | पिता की ताली सदा उनके गले में और जब भी बाहर निकलें, कमरे पर ताला |...बड़े बेटे ने मंझले को डांटकर कहा-निकाल इनकी ताली | इसके पहले की प्रभुदयाल गले में लटकती ताली की छूएँ, लड़के ने सूत में पिरोई ताली गले पर से उतार ली |"(सोबती 110)

प्रभुदयाल की कथा आज के संयुक्त परिवार के विषय में हमें सोचने को मजबूर करती है | धन-संपत्ति के लिए तीनों बेटे अपने बाप की गले घोंट कर हत्या कर देते है | ऐसी घटना देख कर आज हर व्यक्ति का संयुक्त परिवार में अपने खुद के बच्चों से विश्वास उठता जा रहा है | एक तरफ भारतीय संस्कारों की दुहाई दी जाती है दूसरी तरफ उन संबंधों को तार-तार किया जाता है | गरिमा के प्रतीक माने जाने वाले वृद्धों को निरर्थक समझकर उनका निरादर किया जाने लगा है | घर परिवार में उनकी इच्छा और अनिच्छा का कोई महत्व नहीं रह जाता है | चित्रा मुद्गल के उपन्यास *'गिलिगडु'* में वृद्ध बाबू जसवंत सिंह अपनी इच्छा अनुसार टी.वी. में समाचार भी नहीं देख सकता है |

> “उनके समाचार सुनने से टॉमी की कट्टर दुश्मनी है | ...उनके ‘आज तक’ लगाते ही भिनक शुरू हो जाती है | मुश्किल से मुख्य समाचार-भर सुन पाते हैं कि टॉमी की कुंकुआहट गुर्राहट में तब्दील होती बैठक में आतंक फैलाने लगती | बहू सुनयना से टॉमी की नाराजगी बरदाशत न होती | दखल देती हुई उन्हें टोंकती- कोई म्यूजिक चैनल लगा दीजिए न बाबूजी ! आज तक का क्या है | चौबीस घंटे चलता ही रहता है |”(मुद्गल 11)

यदि परिवार के सदस्य वृद्धों की भावनाओं को न समझें या उन्हें केवल एक दायित्व समझें, तो वे उपेक्षित महसूस करते हैं | यहाँ देखने को मिलता है कि आज की नई पीढ़ी कुत्ता-बिल्ली पालना पसंद करती है और उनकी हर ख्वाहिश पूरी करते हैं तथा उन्हें किसी भी प्रकार से कोई परेशानी नहीं देना चाहते | उनका जानवरों के प्रति यह प्रेम और संवेदना बहुत बढ़िया है लेकिन बूढ़े माँ-बाप की उपेक्षा और निरादर करना बिलकुल सही नहीं है | इस उपन्यास में जसवंत सिंह की बहू टॉमी कुत्ते की नाराजगी नहीं सहती भले ही उसे अपने बुजुर्ग ससुर को टोकना पड़े | संयुक्त परिवार में अब घर के मुखिया वृद्ध न रहकर उनके बेटे-बहू होते हैं | वृद्धजन अगर कभी किसी अपने पड़ोसी मित्र को घर पर चाय-कॉफी को बुलाना चाहो तो भी उन्हें कई बार सोचना पड़ता है कि उन्हें न्यौता दे या नहीं | चित्रा मुद्गल के उपन्यास ‘*गिलिगडु*’ में बाबू जसवंत सिंह अपने पड़ोसी मित्र को कॉफी के लिए बुलाना चाहता था | लेकिन घर में बेटे-बहू के स्वभाव को देखते हुए सोच में पड़ जाते है –

> “गेट के निकट पहुंचकर बाबू जसवंत सिंह की इच्छा हुई कि अजनबी को घर चलकर एक कप कॉफी पीने का न्यौता दें | लेकिन न्यौता देने का साहस नहीं जुटा | इस समय बहू सुनयना मलय-निलय को स्कूल भेजने की तैयारी में व्यस्त होगी | रसोई के भूगोल से वे सर्वथा अपरिचित हैं कि स्वयं आगे बढ़ दोनों के लिए कॉफी बना सकें | कानपुर से दिल्ली आए हुए उन्हें अरसा हो गया है | घर की चौखट में दाखिल होते ही वे स्वयं को अपरिचितों की भांति प्रवेश करता हुआ अनुभव करते हैं | कैसे कहें !”(मुद्गल 14)

आधुनिक सोच और परम्परागत मूल्यों के बीच अंतर वृद्धों और नई पीढ़ी के बीच तनाव का कारण बन सकता है | बाबू जसवंत सिंह अपने अजनबी दोस्त कर्नल स्वामी को एक कप कॉफी पिलाने का निर्णय भी नहीं ले पा रहें थे | वर्तमान में बुजुर्ग अपने बेटे-बहू के साथ तो रह रहें है लेकिन उन्हें वो सम्मान, आदर और अधिकार नहीं है जो पहले हुआ करते थे | कुछ बच्चे अपने माँ-बाप को अपने साथ तो रखते हैं परन्तु उन्हें ये एहसास भी करवाते रहते है कि वे उन्हें खिला-पिला कर एहसान कर रहें हैं | बहुत से वृद्ध अपने बच्चों के साथ रहते हैं और चाहते हैं कि वे अपने बच्चों और पोते-पोतियों के साथ बैठकर बातें करें परन्तु आज की भाग-दौड़ भरी जिन्दगी में समय का अभाव है | बेटे-बहू नौकरी से थक हारकर आते हैं और पोते पोतियों के पास स्कूल और ट्यूशन वीडियो गेम आदि से फुरसत नहीं है | ऐसे में वे साथ रहकर भी अकेलापन महसूस करते हैं | चित्रा मुद्गल के उपन्यास ‘गिलिगडु’ में बाबू जसवंत सिंह पत्नी की मृत्यु के बाद अपना अकेलापन को दूर करने के लिए अपने बेटे-बहू और पोतों के साथ रहने दिल्ली चले जाते हैं | वहाँ उन्हें आत्मिक लगाव तो दूर कोई उनसे ठीक से बात तक नहीं करता | बेटा बालकनी में पिता के रहने की जगह तो बनवा देता है | पर मन के किसी भी कोने में जगह नहीं दे पाता | परिवार के सभी सदस्य अपनी-अपनी दुनिया में इतने व्यस्त हैं कि उनके रहने का किसी को एहसास ही नहीं होता | अपनी जिन्दगी में वे इतने उपेक्षित कभी नहीं हुए जितना कि अपने बेटे के परिवार में होते हैं | आधुनिक संयुक्त

परिवारों में उचित सम्मान न मिल पाने के कारण वृद्ध परेशान दिखाई देते हैं | इन्हीं कारणों से वृद्ध असहज हो जाते हैं और वृद्धाश्रमों का सहारा लेते हैं | संयुक्त परिवार, बड़ों का सम्मान, प्रेम, सद्भावना, लगाव, अनुराग इत्यादि संकल्पनाएँ प्राचीन भारत के प्रतिमान रहे हैं | परन्तु आज इसके ठीक विपरीत वे सम्माननीय वृद्ध अपने ही बच्चों द्वारा प्रताड़ित किए जा रहे हैं | वर्तमान में वृद्धजन युवाओं के लिए बोझ बन गए हैं | उनकी राय और इच्छाओं को अनदेखा करना एक आम बात हो गयी है | कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी *'बदमिजाज'* में वेदप्रकाश की पत्नी हेमा अपने बेटे-बहू और दो बेटियों के साथ रहती है | उसकी बड़ी बेटी उसे जब ये बताती है भाभी ने तुम्हारे लिए अलग से सब्जी बनाने का मना किया जो सभी के लिए बना वो ही मसालेदार खाना पड़ेगा | तो हेमा बहू नीला से कहती है –

> "तुम बहू साफ-साफ क्यों नहीं कहती कि तुम्हारी अब नियत खेत पर है | चटनी नहीं बनेगी, सेब फल नहीं दोगी | डॉक्टर को नहीं दिखाओगी | मैं क्या कोई कबाड़ा हूँ, जो तुम मुझे निर्जीव-सा समझ जो चाहो कहीं भी पटको और जब चाहो घर से बाहर फेंक दोगी | अरे मेरा पति क्या मरा कि तुम सब शेर हो गए | ...नयी मोटर रोककर प्रताप ने बरामदे में पैर रखते ही हेमा की बड़बड़ सुन ली | तुरंत तेजी से एक थप्पड़ उसने माँ के मुहँ पर मार दिया, "कबाड़ा तो नहीं पर बेहद बदमिजाज बूढ़ी हो, अरे पति की क्या धौंस देती हो ? उसने कौन सा लाखों का धन छोड़ा है, तुम्हें खेत प्यारे है तो वहीं जाकर रहो | करो अपनी लाड़लियों का ब्याह हमें बख्शो |" (अग्निहोत्री 70)

संयुक्त परिवार में नई पीढ़ी अपने माँ-बाप के प्रति संवेदनहीन हो गई है | जो माँ-बाप अपने बच्चों के जीवन पर पूर्णतः हृदय से समर्पित हो जाते हैं | उन माँ-बाप का ऋण कभी चुकाया नहीं जा सकता किन्तु उनकी सेवा करके उनके जीवन को थोड़ा सुखमय बना सकते हैं | सेवा तो दूर नई पीढ़ी के कुछ बच्चे अपने उन पूजनीय माँ-बाप पर धन-संपत्ति के लिए हाथ तक उठा लेते हैं | सुखी परिवार का आधार संपत्ति नहीं बल्कि प्रेम और आपसी सहयोग हो सकता है | जहाँ वर्तमान समय में प्यार और सहयोग का स्थान धन-संपत्ति और स्वार्थ ने ले लिया है | संयुक्त परिवार में वृद्धों को आमतौर पर सुरक्षा और सहयोग मिलता है, लेकिन बदलते समय और आधुनिक जीवनशैली ने उनके सामने कुछ चुनौतियाँ भी खड़ी की हैं | संयुक्त परिवार में वृद्धावस्था के कुछ नकारात्मक पहलू भी सामने आते हैं | अक्सर परिवार में पीढ़ियों के बीच मतभेद, आधुनिक सोच बनाम परंपरा, और निर्णयों में उनकी अनदेखी जैसे संघर्ष पैदा होते हैं | कभी-कभी वृद्धों की स्वतंत्रता सीमित, और उनकी इच्छाओं को प्राथमिकता न दी जाने के कारण मन स्थिति में तनाव और असंतोष उत्पन्न होता है | इसके अलावा, कई बार घरेलू झगड़े या ध्यान न मिलने की वजह से वृद्ध अकेलेपन और अवहेलना का अनुभव कर सकते हैं | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में इन स्थितियों का सजीव चित्रण न केवल समस्याओं को समझने का माध्यम है, बल्कि समाधान और सहानुभूति का मार्ग भी प्रशस्त करता है |

3.2.3 नौकरीपेशा परिवार में वृद्ध:-

नौकरीपेशा परिवार में वृद्धों की स्थिति 21वीं सदी के सामाजिक परिवर्तनों और जीवनशैली में आए बदलावों को स्पष्ट रूप से दर्शाती है | शहरीकरण, व्यस्त दिनचर्या और दोनों जीवन साथियों के नौकरी में होने के कारण वृद्ध माता-पिता की स्थिति पर

गहरा प्रभाव पड़ा है | आज हर माँ-बाप अपने बच्चों के भविष्य के बारे में जागरूक है | सभी माता-पिता अपने बच्चों को अच्छे से अच्छे स्कूल और कालेज में पढ़ाना चाहते हैं | भविष्य में ये बच्चे इसी पढ़ाई की वजह अपने माता-पिता से दूर हो जाते है | वही माँ-बाप अपने बच्चों को अपने से दूर भेजना नहीं चाहते हैं | एक तरफ माँ-बाप अपने बच्चों की तरक्की देख खुश भी हैं और हताश भी | ममता कालिया के *'दौड़'* उपन्यास में बड़ा बेटा पवन अपने छोटे भाई सघन को भी दूसरे शहर नौकरी करने को कहता है | तो उसकी माँ कहती है -

> “इसको भी ले जाओगे तो हम दोनों बिल्कुल अकेले हो जायेंगे | वैसे ही यह सीनियर सिटिजन कॉलोनी बनती जा रही है | सबके बचे पढ़-लिखकर बाहर चले जा रहे हैं | हर घर में, समझो एक बूढ़ा, एक बूढ़ी, एक कुत्ता और एक कार बस यही रह गया है | (कालिया 40)

आज हर व्यक्ति समाज में खुद को बड़ा दिखाना चाहता है और इस झूठी शान-शौकत के लिए बड़े-बड़े नगरों और विदेशों में नौकरी करने चले जाते हैं | यह अच्छी बात है हम परिश्रम कर रहे हैं अपने भविष्य को सुरक्षित करने के लिए, गंभीर हैं, किन्तु ऐसा करने से हम अपने नैतिक कर्तव्यों पर खरा नहीं उतर रहे हैं दुनिया को मुट्ठी में करने वाले अपने ही घर को नहीं बचा पा रहे हैं | वर्तमान समय में मनुष्य मशीन बनकर रह गया है, जिसमें लोगों की दिनचर्या सुबह से आरम्भ होकर देर रात तक चलती है | आज व्यक्ति के पास खुद के लिए भी समय नहीं है | बेटे-बहू के विदेशों में नौकरी करने से वृद्ध घर-गाँव या शहर की कालोनी में एकाकी जीवन जीने के लिए मजबूर हो जाते हैं | काशीनाथ सिंह के *'रेहन पर रग्घू'* उपन्यास में नौकरीपेशा परिवार के उपेक्षित वृद्धों के बारे में बताया गया है –

> “जब कालोनी तैयार हुई तो पाया गया कि यह बूढ़ों की कालोनी है ! ऐसे बूढ़े-बुढ़ियों की जिनके बेटे-बेटी अपनी बीवी और बच्चों के साथ परदेस में नौकरी कर रहे हैं – कोई कलकत्ता है, तो कोई दिल्ली, कोई मुंबई तो कोई बैंगलौर और कइयों के तो विदेश में | इनका दुःख अपरम्पार था | उन्होंने बेटे-बेटियों के लिए अपने गाँव छोड़े थे – अपनी जन्मभूमि- कि यह हमारे लिए तो ठीक, चाहे जैसे रह लें लेकिन उनके लिए नहीं | न बिजली, न पानी, न लिखने पढ़ने, न आने जाने की सुविधा ! घर हो तो ऐसी जगह जहाँ से खेती-बारी पर भी नजर रखी जा सके और बेटों बेटियों को भी असुविधा न हो ! वे अपनी जगह जमीन, रिश्ते नाते, संगी साथी, ताल तलैया छोड़ कर जिन संतानों के लिए आए, वे ही बाहर | इतने तक तो गनीमत थी | लेकिन अब हालत यह है कि जो जहाँ सर्विस कर रहा है, वह उसी नगर ,में रम गया है और वहाँ से लौट कर यहाँ नहीं आना चाहता | अगर वह आना भी चाहता है तो उनके बच्चे नहीं आना चाहते !” (सिंह 104)

वृद्ध अपने बच्चों के लिए अपना घर-गाँव छोड़ देते हैं | शहरों की तंग कालोनियों में ऐसे लोगों के बीच रहने लगते है जिनको किसी से कोई मतलब नहीं होता है | नई जगह पर वृद्ध खुद को असहज और अकेला महसूस करते हैं | उनकी संतानें अपने भाग-दौड़ भरे जीवन में व्यस्त रहते हैं | वे अपने व्यस्त जीवन में इतने रम जाते हैं उन्हें अपने बुजुर्गों की कोई चिंता नहीं रहती हैं | इस उपन्यास में रघुनाथ उम्र के ऐसे पड़ाव पर खड़े हैं जहाँ उन्हें अपनों के साथ की आवश्यकता है लेकिन वे अकेले हैं | बड़ा बेटा पढ़-लिखकर

अमेरिका चला जाता है | छोटा बेटा पढ़ाई और नौकरी की तलाश में दूसरे शहरों में भटका है | बेटी घर से दूर नौकरी करती है | नौकरी के लिए परिवार का दूसरी जगह बसना, जिससे वृद्ध परिवार का हिस्सा होते हुए भी खुद को अलग-थलग महसूस करते हैं | नौकरीपेशा परिवार में वृद्ध अपने बच्चों से दूर जीवन के आखिरी पड़ाव को अकेले जीने के लिए विवश हो जाते हैं | नौकरी पेशा परिवार में वृद्ध व्यक्ति अक्सर अकेलेपन और उपेक्षा का अनुभव करता है | परिवार के सभी सदस्य अपने काम और व्यस्तताओं में लगे रहते हैं, जिससे वृद्धों को स्नेह, देखभाल और संवाद की कमी महसूस होती है |

3.2.4 संपन्न परिवार में वृद्धः-

संपन्न परिवार के वृद्धों को आर्थिक रूप से परेशानी नहीं होती है | ये वृद्ध आर्थिक दृष्टि से अपने संतानों पर आश्रित नहीं दिखते | शहरों के सुशिक्षित परिवारों में बुजुर्गों को आर्थिक संपन्नता रहती है | पैसा इनके पास बहुत होता है परन्तु बच्चे साथ नहीं होते | इन व्यक्तियों को भावनात्मक सहारे की आवश्यकता होती है | संपन्न परिवार के वृद्धों का जीवन नौकरों पर आश्रित होता है | निर्मल वर्मा के अंतिम अरण्य उपन्यास में अधिकतर वृद्ध पात्र जमीन-जायदाद, सुख- संपत्ति से परिपूर्ण दिखाई पड़ते हैं | मेहरा साहब आई.ए.एस. अधिकारी, अन्ना जी गवर्नेस, डॉ. सिंह भी पेशे से क्लिनिक चलाते हैं | निरंजन बाबू और लेखक जब अन्ना जी के यहाँ जाते हैं तब वे उनसे पूछती है-

> "अन्ना जी भीतर गई और एक काले रंग की चौकोर बोतल ले आई, जिसे मैंने पहले कभी नहीं देखा था, हालाँकि मैंने उनके घर तरह-तरह की शराबें चखी थी इस बोतल की बनावट कुछ अनोखी थी ...वह एक किताब की शक्ल में बंद थी और उसकी स्पाईन पर उसका नाम लिखा था...जो दूर से पढ़ा नहीं जाता था | वॉटर ऑफ़ लाइफ़ – संजीवनी जल |" (वर्मा 28)

उम्र के इस पड़ाव में मनुष्य के पास इतना पैसा नहीं होता कि वे अपने दोस्तों के लिए ब्रांडेड शराब की बोलते प्रस्तुत करें | यहाँ संपन्न परिवार के वृद्धों की समृद्धि को दिखाता है जिन्हें आर्थिक परेशानी नहीं होती | निरंजन बाबू की संपन्नता के बारे में निर्मल वर्मा लिखते हैं –

> लेकिन निरंजन बाबू ? वह तो कहीं से टूटे दिखाई नहीं देते थे | साल के कुछ महीने यहाँ बिताते थे ...फिर नीचे की दुनिया में चले जाते थे, यहाँ उनकी पत्नी थी, बड़ी लड़की दिल्ली के किसी अखबार में काम करती थी...एक लड़का रुड़की के कॉलेज में था ...एक भरा-पूरा परिवार, उनके सेब के बगीचे की तरह...जो उनके बिना भी फल-फूल रहा था...|" (वर्मा 33)

निरंजन बाबू के पास सेब का बड़ा बगीचा है जिसकी देखभाल के लिए नौकर रखा हुआ है | परिवार के अन्य सदस्य भी पढ़े-लिखे और अच्छी नौकरी में कार्यरत हैं | यहाँ देखा जा सकता है जिनका परिवार आर्थिक दृष्टि से संपन्न है उन्हें पैसों की कमी से कोई परेशानी नहीं थी | अन्य वृद्ध पात्र डॉक्टर सिंह के बारे में लेखक लिखते हैं – "डॉक्टर सिंह थे, जिनके घर वह जब चाहें, जा सकते थे ... "उनके घर नहीं ...आज उन्होंने मुझे क्लब खाने पर बुलाया है |" (वर्मा 35) क्लब पर खाने के लिए कोई समृद्ध व्यक्ति ही बुला सकता है | यहाँ डॉक्टर सिंह की संपन्नता का अंदाजा लगाया जा सकता है | इसी तरह '*समय सरगम*' उपन्यास में दमयंती की समृद्धि

के बारे में कृष्णा सोबती लिखती हैं – "कोने में सोफा, लंबी मेज, फ्रिज और दूसरी ओर पलंग | साथ लगी शेल्फ पर किताबें-पत्रिकाएँ | सजावट में दिल्ली और लाहौर की पुरानी झलक और कर्जन रोड होस्टल की सुरुचिपूर्ण तराश |" (सोबती 71) दमयंती के घर में बहुमूल्य वस्तुओं से उनकी आर्थिक समृद्धि का अंदाजा लगा सकते हैं | कामिनी की समृद्धि के बारे में कृष्णा सोबती लिखती हैं – "रंग-बिरंगा कश्मीरी कालीन अधमरा, बेरौनक-सा दीखने लगा था, ज्यों उसे भी अपनी सुध न हो | जब यह घर पहले-पहल बना होगा तभी शायद कालीन से सजा होगा यह फर्श | दीवारों पर चित्र भी लगे होंगे |" (सोबती 97) उपर्युक्त उपन्यासों में सभी संपन्न परिवार के वृद्ध हैं जिन्हें आर्थिक दृष्टि से कोई परेशानी नहीं है | ये सभी वृद्ध निम्न परिवारों के वृद्धों की तरह मूलभूत आवश्यकताओं के लिए संघर्ष करते हुए नहीं दिखाई देते है | सम्पन्न परिवारों में भौतिक सुख-सुविधाएं पर्याप्त होने के बावजूद, वृद्धों को अक्सर भावनात्मक उपेक्षा का सामना करना पड़ता है | परिवार के सदस्य अपने करियर, सामाजिक दायित्वों और व्यक्तिगत जीवन में इतने व्यस्त होते हैं कि वृद्धों के साथ संवाद सीमित हो जाता है | बड़े घरों और सुख-सुविधाओं के बीच भी वे आत्मीयता और संबधों की कमी महसूस करते हैं | ऐसे सम्पन्न वृद्धों को वृद्धावस्था में उनकी देखभाल उनके नौकर करते है | '*समय-सरगम*' उपन्यास में कामिनी की नौकर ख़ुकू, दमयंती का नौकर माधो उनकी देखभाल करते हैं | इस तरह के कुछ वृद्ध पात्र अपनों के अभाव में अकेलेपन की पीड़ा से व्यथित है तो कुछ अपनों के द्वारा धन-संपत्ति के लिए प्रताड़ित किए जा रहे हैं | संपन्न परिवार के वृद्धों को पैसों की समस्या नहीं आती बल्कि पैसा ही इनकी समस्या का कारण बन जाता है | कृष्णा सोबती के उपन्यास '*समय सरगम*' में वृद्ध कामिनी के भाई-भाभी ही उसकी संपत्ति को हड़पना चाहता है | "मुझे दलाल बता गया है कि भाई ने मेरे घर का सौदा कर लिया है | बयाना ले चूका है ! खूकू ने मुझे नहीं बताया पर बिल्डर दो बार घर को आगे-पीछे और अंदर से देख गया है |" (सोबती 98) नौकरानी खूकू भी पैसों के लालच में उसके भाई का साथ देती है | खूकू कामिनी के खाने में उसे नींद की गोलियां खिलाती है जिससे वह कमजोर रहे तथा उसे बंद कमरे में रखने में आसानी हो | खूकू ईशान से कहती हैं –

> "साहिब, गैराज के ऊपर वाले कमरे में रहती हूँ | मेमसाहब से कहकर वह मेरे नाम करवा दीजिए | ईशान चौंके | संयत स्वर में कहा-ऐसा कैसे हो सकता है खूकू ? साहिब, मेमसाहब का कुछ रहने वाला नहीं | भाई लोग घर बेच चुके हैं | मेरे पास इनके हाथ का कागज होगा तो मेरे भी दस-बीस हजार बन जाएंगे | इनके भाई इन्हें कब मिलने आए थे | वह मेमसाहब से नहीं मिलते | हफ्ते में तीन-चार बार ठेकेदार-इंजीनियर के साथ आते हैं | बाहर से ही चले जाते हैं | मेमसाहब कुछ...वह तो सोई रहती हैं | डॉक्टर शायद उन्हें नींद की गोली देता होगा सोई बेखबर |" (सोबती 99)

आर्थिक संसाधन होते हुए भी वृद्धों को व्यक्तिगत देखभाल और पारिवारिक स्नेह की कमी महसूस होती है | देखभाल के लिए अक्सर नौकरों या पेशेवर सेवाओं पर निर्भर रहना पड़ता है, जिससे वृद्ध भावनात्मक रूप से अलग-थलग महसूस करते हैं | सम्पन्न वृद्धों की सम्पत्ति पर अधिकार ज़माने के लिए अपने-पराये सब मिलकर षड्यंत्र रचते हैं | यहाँ देख सकते कामिनी का भाई और नौकरानी खूकू उसके घर को पाने को लिए उसे नींद की गोलियाँ खिलाते हैं | जमीन-जायदाद पाने के लिए संपन्न परिवार के सदस्य वृद्धों के साथ छिना-झपटी, मार-पीट तथा हत्या करने में भी संकोच नहीं करते | समय सरगम उपन्यास में वृद्ध प्रभुदयाल के तीनों बेटे उनके पैसों को जबरदस्ती छीन के ले जाते हैं – बड़े बेटे ने मँझले को डाँटकर कहा – निकाल इनकी ताली | इसके पहले कि प्रभुदयाल गले कि

ताली को छुएँ, लड़के ने सूत में पिरोई ताली गले से उतार ली |" (सोबती 110) जो बेटे धन-दौलत के लिए बाप के गले में हाथ डालकर छिना-झपटी कर सकते हैं, वह क्या नहीं कर सकते | कुछ दिनों बाद पता चलता है, गला घोंटने से उसकी उनकी मृत्यु हो जाती है | इसी उपन्यास की अन्य संपन्न वृद्ध पात्र दमयंती जिसका बेटा उससे घर के कागजात मांगता हैं | दमयंती आरण्या से कहती है –

> "मैं अपने बच्चों से बैर विरोध क्यों करूँगी ! उनका भी कोई फर्ज बनता है | मैंने कुछ खाया-पीया है कि नहीं - बीमार हूँ- दवा लानी है, टेस्ट करवाना है- डॉक्टर के पास जाना है – वह सब मैं अपने आप करूँ !...बच्चों की ऐसी हरकतों से धीरज ख़त्म हो रहा है | फ्लैट के कागज माँग रहा है बेटा | डॉक्टर के गई थी तो पीछे से बहू ने मेरा दीवान उठवा अपने कमरे में रख लिया | कहा, उसे पसंद है |" (सोबती 74)

कुछ दिनों बाद दमयंती की मृत्यु की खबर नौकर माधो ईशान को देता है | यह आज के संपन्न परिवार के वृद्धों की व्यथा है जहाँ उनके परिवार के अन्य सदस्य रिश्ते और संबंधों की जगह पैसों को महत्व देती है | धन-संपत्ति के लिए वे किसी भी हद तक जा सकते हैं | आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होना हर समस्या का समाधान नहीं होता है | वृद्धावस्था में भौतिक सुख सुविधाओं की बजाय भावनात्मक संबल की आवश्यकता अधिक होती है | जीवन के इस पड़ाव में अपनी संतान के सान्निध्य, उसका निकट होना प्यार-दुलार, सम्मान और देखभाल से बढ़कर वृद्धों के लिए कुछ भी श्रेयस्कर नहीं हो सकता | कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी '*झुर्रियों की पीड़ा*' में 90 वर्षीय सम्पन्न परिवार की सुंदर गोरी कांता देशपांडे की पीड़ा को दिखाया गया है | आश्रम में आई लेखिका से मीठे सभ्य लहजे में बताती है -"सम्पन्न परिवार की कांता जी के पति ज्वेलर थे; उनका पक्का दुमंजिला सुंदर घर है जहाँ बेटी-बेटे-बहू, नाती-पोते रहते हैं | उन्होंने परिवार को सुख से पलने में कोई कोर-कसर नहीं रखी | खूब उत्सव मनाते, खाना-पीना भरा रहता | पति के मरते ही काला-धुआँ फैल गया व अच्छाई व मूल्य धुँधला गये | बहू को क्या कहूँ, मेरा बेटा दुकान से जेवर चुरा अपने नाम की दुकान में पहुँचाने लगा और प्रत्येक त्योहार पर बेहद प्यार से कहता –

> "आई इस बार संध्या को अपनी बजरवही दे दो उसे बहुत पसंद है |" मैं भी विश्वास और मोह में जकड़ी अपने कीमती जेवर बाँटती रही | सोचा, आखिर है तो सब इन्हीं लोगों का | बेटी आई तो बोली, "आई तुम्हारे दमाद कहते हैं तू मुझे कुछ नहीं दोगी," तो उसे भी मैंने जेवरों से लाद दिया | एक दिन बेटे ने मेरे सामने कागज रख कहा, "आई इन पर साइन कर दें, कर्ज उठाना है दुकान में घाटा हो रहा है, सब ठीक हो जायेगा |" मैंने बिना सोचे-समझे दस्तखत कर दिये | दस्तखत क्या किए कि जैसे बुरे दिन पलटकर आ गये | मानो अपने जीवन की विषमताओं पर साइन किया | एक दिन बेहोश हो गई तो मुझे अस्पताल दोनों बेटे ले गये, वहीं से यहाँ पटक गये | मैंने घर में काम किए : आचार-बड़ी डाली, नाती-पोतों को रात-रात जाग पाला पर पुरस्कार में ये आश्रम मिला |" (अग्निहोत्री 13)

सम्पन्न परिवार में सम्पत्ति का मुद्दा वृद्धों की मानसिक शांति भंग कर देता हैं | कई बार संतानें उनकी सम्पत्ति पर अधिकार ज़माने के लिए भावनात्मक सहारे का प्रयोग करती तो कई बार जबरन दबाव डालने का प्रयास करती है | यहाँ संपन्न परिवार की वृद्ध अपनी

सारी संपत्ति अपनों को सौंप देती है फिर भी उन्हें अपने ही घर में बेटे-बहू, पुत्री पोता से वह प्यार और सम्मान नहीं मिलता जिसकी उन्हें अपेक्षा थी | संपन्न परिवारों में धन-दौलत, जायदाद संबंधी विवादों में अकसर वृद्धजनों को घिरते देखा गया है | सम्पन्न परिवारों में अक्सर युवा पीढ़ी और वृद्धों के बीच जीवनशैली और मूल्यों को लेकर टकराव होता है | वृद्ध पारम्परिक दृष्टिकोण रखते हैं, जबकि नई पीढ़ी आधुनिक सोच के साथ आगे बढ़ते है | सम्पन्न परिवारों में वृद्धों को अपने बच्चों से सेवा भाव की असुरक्षा, पीढ़ीगत अन्तराल, भावनात्मक उपेक्षा, और अकेलापन जैसी समस्याएँ उनके जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित करती है | संपन्न परिवार वृद्धों को भौतिक दृष्टि से सुरक्षित बनाता है, लेकिन मानसिक और भावनात्मक दृष्टि से अकेलेपन और उपेक्षा जैसी समस्याएँ रह सकती हैं | 21वीं सदी का हिंदी कथा साहित्य ने इन मुद्दों को गहराई से उजागर करते हुए समाज को संवेदनशीलता और समाधान का मार्ग दिखाया है |

3.2.5 निम्न परिवार में वृद्ध

निम्न परिवार में वृद्धों की स्थिति समाज के सबसे संवेदनशील और चुनौतीपूर्ण पहलुओं में से एक है | निम्न आय वर्ग के परिवारों में वृद्धों को आर्थिक, सामाजिक और भावनात्मक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है | आर्थिक विपन्नता की वजह से वृद्धों की स्थिति दयनीय हो जाती हैं | निम्न परिवार के वृद्धों की मुख्य समस्या बीमारी है | बीमारी की हालत में उनका इलाज तो एकमात्र कल्पना ही रहती है, इलाज तो बहुत दूर की बात है | परिवार के प्रत्येक सदस्य उन्हें उनकी हालत पर अकेला छोड़कर अपने कार्य में व्यस्त हो जाते हैं | टेकचंद द्वारा रचित '*दाई*' उपन्यास में रेशम बुआ को उनके बच्चे बुढ़ापे में अकेला छोड़ देते हैं | "ठीक कहवै भाई दैराम (दयाराम) बिचारी एकली नैं आठ-आठ बालक पाल दिये पर आठू मिल कै इस एकली नैं न राख सके ...|" (टेकचंद 67) काम करने में असमर्थ होने पर वे पूरी तरह से अपने बच्चों या परिवार के सदस्यों पर निर्भर हो जाते हैं | यहाँ देख सकते हैं रेशम बुआ जीवन भर आठ बच्चों को पाल-पोसकर बड़ा करती हैं पर रेशम की बीमारी व वृद्धावस्था में आठ बच्चे एक बूढ़ी माँ को नहीं पाल सकते | वृद्ध बेचारे घुट-घुटकर मृत्यु की कामना करते हुए जीते रहते हैं | वहीं वृद्ध स्त्रियों विशेषतः विधवाओं को तो घर के एक कोने में ही मृत्यु की प्रतीक्षा करनी पड़ती है | निम्न परिवार में वृद्ध व्यक्ति को अक्सर आर्थिक और सामाजिक असुरक्षा का सामना करना पड़ता है | संसाधनों की कमी और जीविका की प्राथमिकता के कारण उनकी बुनियादें जरूरतें अक्सर अनदेखी रह जाती हैं | सीमित संसाधनों और रोज़मर्रा की जरूरतों की पूर्ति में कठिनाइयों के कारण वृद्ध स्वास्थ्य देखभाल, पोषण और आराम से वंचित रह जाते हैं | परिवार के सदस्य भी अपने जीविकोपार्जन में व्यस्त रहते हैं, जिससे वृद्ध को अकेलापन, उपेक्षा और मानसिक तनाव का अनुभव होता है | इसके साथ ही उनकी स्वतंत्रता और आत्मसम्मान पर भी असर पड़ता है |

3.2.6 मध्यम वर्गीय परिवार में वृद्ध

माध्यम वर्गीय परिवार में वृद्धों की स्थिति भारतीय समाज में पारिवारिक, सामाजिक और आर्थिक बदलावों को प्रतिबिंबित करती है | माध्यम वर्ग जो परम्परागत और आधुनिक मूल्यों के बीच संतुलन साधने की कोशिश करता है, उसमें वृद्धों की भूमिका और स्थिति विशेष महत्व रखती है | मध्यम वर्गीय वृद्धों को अपना अधिकांश समय किसी चबूतरे पर, प्लेटफार्म पर, पार्कों में या फिर घर के किसी अकेले कमरे में बिताना पड़ता है | हृदयेश के '*चार दरवेश*' उपन्यास में लेखक लिखते हैं –

> "चिंताहरण ने बढ़ी हुई आयु में भी किसी भी प्रकार से अपने को अपनों का आश्रित नहीं बनाया था | आश्रित बनना अपने को बेचारा बनाना है | वह एक चीनी मिल में बहैसियत एक शुगर केमिस्ट नौकरी करते थे | सेवा-निवृत्ति में अभी चार साल शेष थे कि चीनी मिल बंद हो गयी | ग्रेच्युटी की रकम के अलावा उनको समय से पूर्व नौकरी चले जाने व अन्य सुविधाओं की क्षति का पैसा मिला था | सारे धन को उन्होंने एक विश्वसनीय पेंशन योजना में निवेशित कर दिया था | इस योजना के अंतर्गत हर माह मिलने वाले पैसे से उनका अपना निजी खर्च पूरा हो जाता था |"(हृदयेश 62)

मध्यम वर्गीय परिवार के वृद्ध बहुत स्वाभिमानी होते हैं | वे खुद को किसी के सहारे का अहसान नहीं लेना पसंद करते हैं | इसलिए थोड़ा-थोड़ा धन जोड़कर एकत्रित करते हैं, ताकि भविष्य की जरूरतों को पूरा कर सकें | उस धन पर भी उनके बेटे-बेटी तथा पोता-पोती-नाती आदि की नजर गढ़ी रहती हैं | हृदयेश '*चार दरवेश*' उपन्यास में लिखते हैं –

> "नाना जी, बैंक बचत खाते के रुपयों के अलावा आपकी एफ़.डी.आर. भी है, पच्चीस हज़ार रुपयों की |" उनके चेहरे पर सकपकाहट दौड़ गयी | गर्दन पर ठंडे पसीने ने अपने होने का अहसास जगाया | इसको सब पता है | बैंक पर जाकर सुरागरशी की होगी | मैं घर से बाहर के लिए निकला था तो इसकी मम्मी को भी पता चल गया था कि मैं बैंक जा रहा हूँ |... "बाप-बेटे दोनों की मेरे पैसों, मेरी जायदाद पर गिद्ध जैसी नज़र है | सगे होकर भी नीयत में खोट है, अनसगों की तरह |"(हृदयेश 95,96)

वृद्धावस्था में आर्थिक असुरक्षा और पारिवारिक अविश्वास का यथार्थ चित्रण है | नाना जी के चेहरे की सकपकाहट और ठंडे पसीने से स्पष्ट होता है कि वे अपने पैसों और संपत्ति को लेकर तनाव और भय महसूस कर रहे हैं | यह दिखाता है कि वृद्ध व्यक्ति अपने ही परिवार में आर्थिक हितों को लेकर शंका और अनिश्चय का सामना कर सकता है | अंश में यह भी स्पष्ट है कि सगे-संबंधी होने के बावजूद, वृद्धों के प्रति नीयत में खोट मानसिक पीड़ा का कारण बन सकती है | मध्यम वर्गीय परिवार के वृद्ध ख़ुद अभावों में रहकर अपने सभी बच्चों को बड़े मुश्किलों से पाल-पोसकर बड़ा करते हैं | नई पीढ़ी वृद्धों के पैसों पर नज़र गड़ाए रखते हैं, उस पैसों पर अपना अधिकार समझने लगते हैं | माँ-बाप के पैसों से सब कुछ करना चाहते हैं, खुद कमाना नहीं चाहते | पढ़ाई और डोनेशन के नाम पर उनसे पैसा माँगते हैं और उनको उनकी तंगहाली के लिए ताने कसते हैं | काशीनाथ सिंह के उपन्यास '*रेहन पर रग्घू*' में छोटे बेटे के इस व्यवहार के बारे में लिखते हैं –

> "हमारे बापजान के दो बेटे-संजू और मैं ! इन्होंने एक आँख से हमें देखा ही नहीं | सारी मेहनत और सारा पैसा इन्होंने उस पर खर्च किया | पढ़ाया, लिखाया, कम्प्यूटर इंजीनियर बनाया और मेरे लिए ? कॉमर्स पढ़ो | जिसे पढ़ने में न यह मेरी मदद कर सकते थे, न मेरा मन लगता था ! किसी तरह बी.कॉम किया तो कोचिंग करो, ये टेस्ट दो, वह टेस्ट दो ! मैं थक गया हूँ टेस्ट देते ! इनसे कहो, ये रुपए कहीं इधर उधर खर्च न करें, डोनेशन के लिए रखें | बिना डोनेशन के कहीं एडमीशन नहीं होने वाला ! साफ-साफ बता दे रहा हूँ |" ...डोनेशन की बात आई तो दीदी याद आ रही है | पहले तो इनसे कहो कि ये कंजूसी और दरिद्रता छोड़ें अब ! हँसी उड़ाते हैं लोग | यह ढिबरी और लालटेन छोड़ें और दूसरों की तरह तार खिंचवा के-

> कम से कम आँगन और दरवाजे पर लट्टू लगवा लें | रोशनी हो घर में ! इसके साथ फोन भी लगवा रहें हैं लोग |...माथा पीटते हुए फिर बैठ गए रघुनाथ – "हाय रे किस्मत | जिनके लिए कंजूसी की, उन्हीं के मुंह से यह सुनना बदा था |" (सिंह 28)

डोनेशन न देने के लिए बेटा अपने पिता रघुनाथ को जिम्मेदार मानता है | प्राइवेट नौकरी करने वाले सेवानिवृत्त वृद्धों के पास जमा-राशी कम होती है | जो डोनेशन से बच्चों की पढ़ाई और नौकरी लगा सके | साथ ही नई पीढ़ी घर की विपन्नता की आलोचना करते है | उसके लिए भी माँ-बाप को जिम्मेदार मानते हैं | माध्यम वर्गीय परिवारों में वृद्धजनों की स्थिति अक्सर विरोधाभासों से भरी होती हैं | एक ओर वे अनुभव और परम्पराओं के प्रतीक होते हैं, तो दूसरी ओर आधुनिक जीवन की भाग-दौड़ में उन्हें कभी-कभी उपेक्षा का सामना करना पड़ता है |

3.2.7 संतान संबंधी समस्या

वृद्धावस्था में संतान संबंधी समस्याएं वृद्धों के जीवन का एक महत्वपूर्ण और संवेदनशील पहलू हैं | संतान से संबंधित भारतीय अवधारणा रही है कि वे वंश चलाते हैं | मनुष्य अपनी आधी से अधिक आयु बच्चों को सुखी बनाने के लिए लगा देता है | जब वह वृद्धावस्था में पहुँच जाता है तब अपने परिवार और बच्चों से आशा करता है कि वे भी उसकी बचे जीवन को शांति से जीने में उसका साथ दें | जिस प्रकार उसने परिवार के सदस्यों का ध्यान रखा है तथा उनकी हर जरूरतों को पूरा किया है, वह भी इसी प्रकार उनका ध्यान व आवश्यकताओं को पूरा करने में सहभागी बने | माँ-बाप जब असहाय हो जाते हैं तब उनका सहारा बनते हैं | टेकचंद का उपन्यास '*दाई*' जिसमें रेशम बुआ अपने जीवन का सम्पूर्ण भाग अपने परिवार और दूसरों के लिए जीती है | रेशम बुआ सबका प्यार, सम्मान और भरोसा पाती है मगर उनके अपने ही घर में पति या बेटों के द्वारा उन्हें कभी सुख नहीं मिलता | नाचगी की आय से रेशम बुआ घरवालों के शौक पूरे करती हैं | हजारों गम को चेहरे के भीतर छिपाकर सबको हंसाने वाली बुआ अपने बेटों के लिए एकमात्र धन ग्रहण करने का साधन थी | रेशम बुआ के बेटे उसकी कमाई से नशे में धुत रहते थे-

> "बड़ा लड़का दारु बाज हो चला था | रेशम की कमाई को छीन-झपटकर वह अपना शौक (ऐब) पूरा करता | धक्का-मुक्की के साथ-साथ वह गाली-गलौज करता और हाथ-पाँव भी चला देता था | ऐसा ही उस दिन हुआ था जब रेशम गाँव से दो जचगी करवाकर कुछ रुपया पैसा लायी थी |... बड़े लड़के का गुस्सा बढ़ता गया | एक तो जवान उस पर नशे की तलब | रेशम के पेट पर लात लगाकर उसने ज्यों जोर से धकेला तो रेशम की ओर देखे डिब्बा लेकर बड़ा लड़का बाहर निकला | बाद में "हाय! हाय!" करती रेशम को घर कुनबे वालों ने संभाला | उठाकर खाट पर लिटाया | कूल्हे की हड्डी टूट गयी थी | फिर रेशम नहीं उठ पायी | चोट शरीर से ज्यादा मन पर लगी थी | गहरा सदमा लगा |"(दाई 69)

जब संतान माता-पिता की स्वास्थ्य समस्याओं और भावनात्मक जरूरतों को समझने में असमर्थ होती है तो वह उनके मानसिक तनाव का कारण बनता है | यहाँ सबको सुख देने वाली दाई रेशम बुआ अपनी वृद्धावस्था तक घर-परिवार का लालन-पालन करती है | उनकी अपनी ही संतान पैसों के लिए उन्हें उम्र के इस पड़ाव में धक्का-मुक्की करते हैं | बड़े लड़के ने अपनी माँ रेशम बुआ को

नशे के कारण लात मारकर उन्हें खाट पर लिटा दिया | नशे की हालत में माँ को धक्का देना ही रेशम बुआ की मृत्यु का कारण बनता है | धीरे-धीरे सेवा दवाई के अभाव में मृत्यु हो जाती है | यह घटना ज्यादातर वृद्ध महिलाओं के साथ होती है | वृद्ध लोगों को उनकी जायदाद के लिए संभालना यह नई बात नहीं है | पैसों के लिए इसी तरह धक्के, गाली गलौच, मार वृद्धों को सहनी पड़ती हैं | एक व्यक्ति अपनी संतान को सर्वोत्तम बनाने में अपना सुख गिरवी रख देता है | लेकिन वही संतान जब अपने माँ-बाप को वृद्धावस्था में अकेले और निस्सहाय छोड़ देता है | '*दाई'* उपन्यास में रेशम बुआ आठ बच्चों को अकेले पाल लेती है लेकिन आठ-आठ बच्चे एक माँ की देखभाल नहीं कर पाते – "ठीक कहवै भाई दैराम (दयाराम) बिचारी एकली नै आठ-आठ बालक पाल दिये पर आठू मिल कै इस एकली नै ना राख सके"(दाई 67) रेशम बुआ संयुक्त परिवार का पालन करती है | कई औरतों की प्रसूति करने वाली दाई के रूप में रेशम बुआ सबका भरोसा, प्यार, सम्मान पाती है | पशु-पक्षियों तथा जानवरों को अपना दूध पिलाकर पोसने वाली दाई मगर अपने ही घर में अपनों द्वारा उपेक्षित होती है | रेशम बुआ की जब मृत्यु होती है तब घरवालों से ज्यादा बिरादरी और गाँववालों को ज्यादा दुःख होता है | पर उनके बेटों को तो उनकी जायदाद संपत्ति में ही रुचि है | माँ के मृत शरीर से उनकी संताने किस तरह गहने निकालते है उसका चित्रण लेखक करते है –

> "मृत देह के पाँवों में चाँदी के जो मोटे छैल कड़े थे उन्हें निकालने के लिए जूझने लगे, प्लास पेचकर लेकर |..सारी उमर बुढ़िया चूंट-चूंट (नोच-नोच) कै खाई इन बाप-बेटा नै! अर ईब इस माट्टी की बी दुरगत बना रे सै |' एक अन्य ने झुलसे हुए क्रोध में कहा |"(टेकचंद 70)

पैरो में पहने कड़े को निकलने के लिए उनका बेटा जिस हद तक जाता है, वह ह्रदय को विचलित करता है | थोड़ी सी भी मानवता नहीं, थोड़ी सी भी शर्म नहीं | यही सच्चाई ज्यादातर वृद्धों की मृत्यु के बाद देखने को मिलती है | चाहे वह अमीर हो या गरीब | वर्तमान में संतानों की इस दूषित सोच को लेखक को दाई' उपन्यास में बखूबी दर्शाया है |काशीनाथ सिंह के उपन्यास '*रेहन पर रग्घू*' में रघुनाथ की अपनी संतान ने ही जो दर्द दिया है, वह असह्य हैं | बड़े बेटे संजय ने बिना माता-पिता को बताए शादी कर ली | वह भी जाति से बाहर | भारतीय समाज में अभी भी शादियाँ अपनी ही जाति और परिवार की सहमति से होती आ रही हैं | ऐसे में रघुनाथ का अंतर्मन कितना व्यथित था | इसे वे किन्हें बताए ? लेखक लिखते हैं -

> "ऐसी चोट लगी थी रघुनाथ और शीला को जिसे न वे किसी को दिखा सकते थे, न किसी से छिपा सकते थे | ऐसी जगहों पर जाना उन्होंने बंद कर दिया था जहाँ दो चार लोग बैठे हों | उन्होंने मान लिया था कि दो बेटों में से एक बेटा मर गया | जब माँ-बाप की प्रतिष्ठा की चिंता नहीं तो मरा ही समझिए !" (सिंह 24)

जब बेटे के बुरे कर्मों से माँ-बाप की प्रतिष्ठा, मान-सम्मान धूमिल हो जाए तो ऐसी संतान को माँ-बाप मरा हुआ मान लेते हैं | आज परिवार के सदस्यों के बीच कोई संवाद नहीं हो रहा है | लगभग सभी परिवारों की स्थिति ऐसी है | संवाद हीनता आज की सबसे बड़ी समस्या बन गई है | इसी का परिणाम है कि बुजुर्ग की प्रतिष्ठा की कोई अहमियत नहीं रह गई है | बेटे के इस कार्य से रघुनाथ मान-

प्रतिष्ठा के अलावा अन्य कई मुसीबतों से घिर गए थे | रघुनाथ की नौकरी चली जाती है, बेटी के लिए रिश्ता ढूँढना मुश्किल हो गया | कॉलेज के मैनेजर ने उन्हें धमकाते हुए कहा –

> "अभी तुम्हारी समझ में नहीं आ रहा है कि तुम्हारे बेटे ने तुम्हारे साथ क्या किया है ? अपनी नासमझी में तुम्हें कितनी मुसीबत में डाल दिया है ? अकारण नहीं कह रहा हूँ ? तुम्हें तब पता चलेगा जब बेटी के लिए वर देखने निकलोगे ! जहाँ जाओगे और बातों से पहले लोग यही पूछेंगे कि आपके रिश्ते कहाँ-कहाँ हैं ? बताओगे या छिपा जाओगे ? ऐसी बातें छिपती तो है नहीं ! तुम छिपाओगे तो वे दूसरे से पता कर लेंगे !" (सिंह 47)

इन शब्दों में मैनेजर का गुस्सा भी था जो उनकी बेटी का रिश्ता रघुनाथ के बेटे द्वारा नहीं स्वीकार किया गया | आखिर रग्घू करे तो क्या करें, वह लाचार था | रघुनाथ के बड़े बेटे पवन ने जो किया सो किया लेकिन उसकी बेटी सरला उसने भी अपने माँ-बाप को कम आहत नहीं किया | वह शहर में अपने अध्यापक कौशिक सर के प्रेम जाल में फँस जाती है | आधुनिकता की हवा उसे संस्कारहीन बना देती है | वह अपने आपको अधिक आधुनिक दिखने की चाह में अपनी यौनिक इच्छा को तृप्त करने में लग जाती है | दूसरी तरफ उसके वृद्ध पिता उसकी शादी के लिए सही रिश्ते की तलाश में शहर-शहर भटकता फिर रहा है | एक मध्य वर्गीय परिवार के वृद्ध पिता के लिए जवान बेटी के लिए अच्छा रिश्ता खोजना निश्चित ही दुरूह कार्य है | कई जगह उन्हें ताने सुनने पड़ते थे कि उनके बेटे ने जात बिरादरी से बाहर शादी की है | रघुनाथ इससे पहले कभी इतने विवश नहीं था | भारतीय सामाजिक परिवेश में बेटी का पिता होना इस समाज में निरीह हो जाना है | शायद यही वजह थी कि जब सरला ने अपने पिता को अपनी शादी के लिए दर-दर भटकते देखा तो उसने स्वयं अपनी शादी का प्रस्ताव अपने पिता को दे दिया | उसने अपनी शादी एक निम्न जाति के लड़के से कराने की सलाह दी जो मिर्जापुर में एस.डी.एम. के पद पर तैनात था | यह सलाह तो पिता के लिए वज्रपात ही था | उसने आकाश की ओर दोनों हाथ उठाए – "हे भगवान ! यह क्या कर रहे हो मेरे साथ लाला एक गनीमत थी लेकिन अब ? मई क्या करूँ ? किसे मुंह दिखाऊं ?...इससे तो अच्छा है कि कुंवारी ही रह ! "(सिंह 52) लेकिन सरला का निर्णय वही था कि वह उसी से शादी करेगी | रघुनाथ ने अपनी बेटी को घर से बाहर तक जाने को कह दिया – "उसके बाद लौट कर कभी पहाड़पुर मत आना ! अपना थोबड़ा मत दिखाना ! यह याद रखो ! अब जाओ यहाँ से कोई जरूरत नहीं तुम्हारी ! मर गए माँ-बाप !"(सिंह 53) रघुनाथ भीतर से टूट चुका था | वे इस बात को सहन नहीं कर पा रहे थे कि उनकी बेटी इस तरह निम्न जाति के लड़के से शादी करने के लिए तैयार बैठी है | इससे पहले उनका बड़ा लड़का संजय ऐसा काम कर चूका था | यही कारण है कि उसने अपनी बेटी के लिए इतने कठोर शब्दों का प्रयोग किया | संतान के इन फैसलों ने रघुनाथ के जीवन का सुकून छीन लिया था | मनुष्य बुढ़ापे में अपनी संतान से कई उम्मीद पालकर बैठता है | वह चाहता है उसकी संतान उनका सहारा बने | यहाँ रघुनाथ के साथ इससे विपरीत होता है | अपनी संतान के व्यवहार से क्षुब्ध और पीड़ित होकर रघुनाथ अपनी पत्नी शीला से कहते हैं –

> "शीला, हमारे तीन बच्चे हैं लेकिन पता नहीं क्यों, कभी-कभी मेरे भीतर ऐसी हूक उठती है जैसे लगता है- मेरी औरत बाँझ है और मैं निःसंतान पिता हूँ ! माँ और पिता होने का सुख नहीं जाना हमने ! हमने न बेटे की शादी देखी, न बेटी की, न बहू

देखी, न होने वाला दामाद देखा | हम ऐसे अभागे माँ-बाप है जिसे उनका बेटा अपने विवाह की सूचना देता है और बेटी धौंस देती है कि इजाजत नहीं दोगे तो न्यौता नहीं दूँगी |" (सिंह 89)

शीला अपने दर्द को प्रकट करती हुई कहती है –

"सारे दुख इसी बुढ़ापे में देखने बदे थे क्या ? एक बेटा परदेस में, पता नहीं, कब आएगा; दूसरा यहाँ लेकिन उसका भी वही हाल | बल्कि उससे भी खराब ! न कोई देखने वाला, न सुनने वाला ! जाने किस मनहूस की नजर लग गई है इस घर को ?" (सिंह 90)

जिस संतान को माँ-बाप अत्यंत लाड़-प्यार से पालते हैं, संतान वाही लाड़-प्यार उनको लौटने की बजाय अपनी संतान पर लुटाने लगती है | प्यार सिर्फ संतान के हिस्से ही आता है, माँ-बाप के हिस्से बेहद कम आता है | बेटे का बेरोजगार होना भी वृद्धों को समस्याएँ उत्पन्न कर देता है | राकेश वत्स के उपन्यास 'फिर लौटते हुए' उपन्यास में वृद्ध दिवाकर शर्मा का छोटा बेटा बलबीर चालाकी से बगीची को बेच देता है और घर और अन्य धन-सम्पत्ति पर कब्ज़ा कर बैठता है, जिससे वृद्ध दिवाकर शर्मा को गहरा आघात लगता है| लेखक लिखते है – "बलबीर अपनी इस जमीन को भी सुगनचंद के पास तीन गुना ज्यादा दाम पर बेच चूका था | यहाँ भी स्टाम्प पेपर पर बलबीर शर्मा के हस्ताक्षर मौजूद थे, जैसा की खानपुर में था |"(वत्स 141)बेटे द्वारा बार-बार दिए जाने वाले धोखे से दिवाकर शर्मा का हार्ट फेल हो जाता है | यहाँ देख सकते है कुछ बलबीर जैसे स्वार्थी बच्चे माता-पिता को नजरंदाज कर उनकी संपत्ति बेच देते हैं, जो नैतिक, सामाजिक और कानूनी तौर पर गलत है | अधिकांश वृद्ध अपनी धन-संपदा अपने बच्चों के नाम कर देते हैं फिर भी उनकी संतानें उन्हें तिरस्कृत करती है | चित्रा मुद्गल की गेंद कहानी में लेखिका लिखती है – "वृद्धाश्रम में रहकर भी बुजुर्ग अपनी बची-खुची सम्पत्ति अंत में अपनी नालायक औलादों के नाम लिख जाते हैं जिन्होंने उन्हें तिरस्कृत कर घर से बाहर कर दिया |" (मुद्गल 17) बच्चे माँ-बाप की धन-संपत्ति तो ले लेते हैं, लेकिन उनको उन्हीं द्वारा बनाए गए घर में रखने को तैयार नहीं है | उन्हें औलाद के होते हुए भी वृद्धाश्रम का रास्ता देखना पड़ता है | जिससे न केवल माता-पिता मानसिक आघात झेलते हैं बल्कि यह बच्चों की संवेदन हीनता को भी दर्शाता है | दिलीप मेहरा की कहानी '*साजिश*' जिसमें एक शिक्षित बेरोजगार पुत्र अपने पिता को अपनी बेरोजगारी का कारण मानता है | प्रकाश गुस्से में पिता का अपमान करते हुए कहता है –

"पापा सरकारी नौकरी किसको मिलती है ? ...जिनकी पहचान हो उसको नौकरी मिलती है, समझे ...कोई भी इस थर्मल पावर स्टेशन का अधिकारी आपको जानता है ? अगर थोड़ी बहुत जान-पहचान होती तो मेरी भी ..कोई न कोई जगह नौकरी लग जाती |... आप फालतू बाते करते हो पापा | आपने जीवन में मेरे लिए कुछ नहीं किया | आप रिटायर हो जाओगे तो कौन सुनेगा आपकी इस पावर स्टेशन में?" (मेहरा 91,92)

प्रकाश का यह कथन कि उसके पिता ने उसके लिए कुछ नहीं किया | इस कथन से देवीलाल को बहुत दुख पहुँचता है | आजीवन अपने परिवार के लिए त्याग करने वाले व्यक्ति के जीवन के अंतिम पड़ाव में जब उसे अपनों से इस तरह की बातें सुनने मिलती हों तब वह मानसिक रूप से टूट जाता है | देवीलाल अपने मित्र संदीप के सामने अपने जीवन के दुख को व्यक्त करते हुए कहते हैं –

> "मेरा लड़का बी.ए. पास है, उसकी कहीं नौकरी नहीं लग रही है; उसके लिए वह मुझे जिम्मेदार मानता है | मेरी बढ़ती उम्र में पत्नी तथा बच्चे ने साथ छोड़ दिया, पर मेरी लड़की ने साथ नहीं छोड़ा | यह समझ लो कि उसकी वजह से मैं जिन्दा हूँ | भगवान ने दूसरी और बेटी दी होती तो मुझे ये दिन देखने को नहीं मिलते | ये तो मैं कमाता-धमाता हूँ इसलिए मुझे घर में रहने दे रहे हैं | अगर न कमाता होता तो कब का घर से ....." (मेहरा 90)

यहाँ पर कहानीकार ने परिवार में बेटी के अनन्य महत्व को उजागर किया है | लेकिन वहीं एक पुत्र अपने पिता की नौकरी हासिल करने के लिए उनकी हत्या कर देता है | पार्वती और देवीलाल के बेटे प्रकाश का संवाद –

> "तेरे पापा अब पका पान हो गए हैं, कभी भी गिर सकता है, पर कब गिरेगा पता नहीं | मरने का अपने हाथ में थोड़ी होता है बेटा, अगर भगवान ने चाहा तो जरूर तेरी इच्छा पूरी होगी | प्रकाश – मम्मी सभी बातें भगवान पर निर्भर नहीं होती हैं |...तुम चाहो मम्मी तो पका पान कभी भी गिर सकता है | प्रकाश – देखो मम्मी, अब पापा किसी काम के नहीं रहे | ..छह महीने के बाद पूरी तनख्वाह भी नहीं मिलेगी | घर कैसे चलेगा ? अगर वे छः महीने में नहीं रहे तो मेरी नौकरी पक्की हो जाएगी | ... पापा की छ: महीने की नौकरी बाकी रह गई | वैसे भी पापा एक दो साल के मेहमान हैं | मम्मी-पापा छ: महीने पहले मर जाते तो मुझे भी कांतिलाल की तरह पावर स्टेशन में पापा की जगह पर नौकरी मिल जाती |" (मेहरा 93)

आधुनिक पीढ़ी सिर्फ अपने करियर और सुख-सुविधाओं पर ध्यान देती है | देवीलाल की नौकरी पाने के लिए उनका बेटा और पत्नी दोनों मिलकर उसकी बेरहमी से हत्या कर देते हैं | आज समाज का अधिकांश वर्ग काफी हद तक भौतिकवादी हो चूका है | उसकी संवेदनहीनता इस बात से प्रकट होती है कि वह किसी व्यक्ति की मृत्यु में भी लाभ ढूंढ़ लेता है | देवीलाल के व्यसनी होने की वजह उसकी मौत की कोई जांच नहीं होती | दूसरी ओर उनकी पत्नी और बेटे के रोने-धोने को देखकर कोई उन पर संदेह भी नहीं करता | लोगों का ध्यान केवल प्रकाश के भाग्य पर गया था कि अब उसे उसके पिता की जगह पर नौकरी मिल जाएगी | यदि बेटा बेरोजगार है तो भी वृद्ध चिंतित रहते है | कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी '*बदमिजाज*' में वेदप्रकाश ने अपने बेटे प्रताप को सिविल इंजीनियरिंग करवाई | प्रताप अब बेरोजगार बैठा है | वेदप्रकाश उसे किसी ठेकेदार के पास काम करके अनुभव लेने को तथा प्रतियोगिता की तैयारी करने को कहता | इस पर वह उखड़ता है –

> "आपका महापौर होना निरर्थक है | आप एक स्वार्थी मनुष्य हैं | बस अपनी छवि निखारने के लिए जीते हैं एक बेटा, दो बेटी हैं उनका कुछ ख्याल नहीं ? क्यों, क्या आप मंत्री से कहकर मेरे लिए नगर निगम में किसी नौकरी का बंदोबस्त नहीं करवा सकते |" "मुझे कहना अच्छा नहीं लगता", वेदप्रकाश क्षुब्ध हो उठे | तो माँ ही कह दें | दिन-रात तो उनके देवर यहीं खाते-पीते हैं |" देख बेटे मैं कह दूंगी आनंद से परंतु ढंग से मुझे समझाकर बात कह ताने-तिशने गुर्राहट की तेरी आदत मुझे अच्छी नहीं लगती |" "मैं जानता हूँ पिता बददिमाग, माँ बदमिजाज है, अच्छी बात कहो तो कहने का ढंग ही गलत है |" (अग्निहोत्री 62)

बेरोजगार बेटा जब पॉकेट मनी की बात करता है तो वेदप्रकाश कहता जब सब जरूरतें हम पूरी कर देते तो पॉकेट मनी की लत क्यों पालनी है | प्रताप गुस्से में कहता है –

> "आप कुएँ के मेंढक हैं | ज़रा मेरे दोस्तों से पूछें किसी को पाँच सौ, तो किसी को एक हजार रुपये की पॉकेट मनी मिलती है | हमें पचास रुपये देने में भी आपकी दम फूलती है |" "वे होंगे ब्लैकमनी वाले उद्योगपति, हमारे पास उल्टा-सीधा रुपया नहीं है |" "हाँ-हाँ आप तो नाम के महापौर हैं, वास्तव में तो आपका नाम फटीचर होना चाहिए था |" (अग्निहोत्री 63)

कभी-कभी किसी संतान का वैवाहिक जीवन सामान्य रूप से नहीं चल पाता तो वृद्ध माँ-बाप का शेष जीवन तनाव ग्रस्त होकर बीतता है | यदि किसी का पुत्र चरित्रहीन और कठोर निकल जाता है तो माँ-बाप का शेष जीवन नरक तुल्य हो जाता है | सूरज सिंह नेगी उपन्यास '*नियति चक्र*' में नितिन घोष की संतान चित्रांश अपने पिता की धन-संपत्ति और कंपनी के अधिकार मिलते ही अपने पिता का तिरस्कार करने लगता है | लेखक लिखते है –

> "जिस पिता ने अपने जीवन की सम्पूर्ण संपत्ति बेटे को सौंप दी, उसी पिता का तिरस्कार कर दिया गया, जिस बेटे की चाह में सेठजी और सेठानी जी ने न जाने कहाँ-कहाँ माथा टेका, मन्नते माँगी, जरुरतमंदों को दान दिया, कई पुण्य कार्य किए, उसी बेटे द्वारा बाप को गंभीर बीमारी की हालत में ऐसे छोड़ देना पूरी तरह अमानवीयता थी | यह संवेदनहीनता की पराकाष्ठा थी, लेकिन सच सामने था |"(नेगी 79)

व्यक्तिगत आकांक्षाओं और व्यस्त जीवनशैली के कारण संतान माता-पिता की देखभाल के प्रति उदासीन हो जाती है | धन-संपदा के लोभ में युवा पीढ़ी जिस जद्दोजहद की जिन्दगी जी रही है, उससे मानवीय खोखले होते जा रहे हैं | जीवन के अंतिम पड़ाव में मनुष्य को जिस ममता, लगाव और अपनत्व की आवश्यकता होती है | वहाँ उन्हें आत्मिक लगाव तो दूर उनकी निर्दयी संतान उन्हें अकेले छोड़ देती है | वृद्धावस्था में संतान संबंधी समस्याएँ माता-पिता के जीवन को गहराई से प्रभावित करती हैं | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य ने इन समस्याओं को मार्मिकता के साथ समाज के सामने उजागर करने का प्रयास किया है |

3.2.8 वृद्धों के पुनर्वास की समस्या

वृद्धों के पुनर्वास की समस्या वर्तमान समाज का एक गंभीर मुद्दा है, जो परिवार, समाज और सरकार के सामने एक बड़ी चुनौती प्रस्तुत करता है | वृद्धावस्था में शारीरिक और मानसिक कमजोरी, आर्थिक असुरक्षा, सामाजिक उपेक्षा और भावनात्मक अकेलेपन की स्थिति में वृद्धों के लिए सम्मानजनक और सुरक्षित पुनर्वास की आवश्यकता पड़ती है | माँ-बाप अपनी मेहनत से सारा घर-परिवार खड़ा करते है | वृद्धावस्था में वही वृद्ध माँ-बाप अपने भरे-पूरे परिवार के साथ जीने की चाहत, परिवार व समाज से उचित आदर-सम्मान व देखभाल की अपेक्षा करते हैं | लेकिन बच्चों की अवहेलना, सामाजिक, आर्थिक एवं भावनात्मक असुरक्षा के कारण वृद्धों और युवाओं के बीच वैचारिक मतभेद बढ़ता जा रहा है | ऐसे मतभेद के कारण युवा पीढ़ी स्वतंत्र जीवन जीना व वृद्धों से पीछा छुड़ाना चाहती है | इस मनोवृति के कारण बुजुर्गों को वृद्धाश्रमों में भेजा जा रहा है | वृद्धों के पुनर्वास की समस्या बढ़ने के कारण शहरों में वृद्धाश्रम बढ़ते जा रहे हैं | जिन वृद्धों के पास अपनी जमा-पूंजी होती है उन्हें वृद्धाश्रम में आसानी से प्रवेश मिल जाता

है | गरीब बुजुर्गों को धनाभाव के कारण वृद्धाश्रमों में प्रवेश तक नहीं मिलता | जिन माँ-बाप ने अपने बच्चों को उंगली पकड़कर चलना सिखाया, उनकी हर छोटी-बड़ी जरूरतों को पूरा कर उन्हें बड़ा किया उन बच्चों ने अपने देवता समान माँ-बाप को जीवन के इस पड़ाव में वृद्धाश्रम तक पहुँचा दिया | आज के इस फैशनपरस्त दौर में वृद्धों को वृद्धाश्रम में भेजने की परंपरा सी बनती जा रही है | यह स्थिति सिर्फ उनकी नहीं है जो आर्थिक रूप से कमजोर है बल्कि सच्चाई इसके विपरीत है जिन्हें समाज में रईस कहा जाता है उन्हें भी अपने बुजुर्गों को वृद्धाश्रम का रास्ता दिखाते तनिक भी हिचक नहीं होती | जिनके यहाँ कुत्ते बिल्लियां ऐश फरमाते हैं उनका पेट इतना भरा रहता है कि रबड़ी मलाई से भी मुँह फेर लेते हैं, रोज़ शैंपू से स्नान करते हैं तथा जिनकी सेवा सुश्रुषा के लिए एक अलग से सेवक की नियुक्ति की जाती है | ऐसे घरों में माँ बाप के लिए एक कोने तक नसीब नहीं उनके लिए माँ बाप एक बोझ की तरह है जिनके लिए उचित स्थान वृद्धाश्रम ही है | ये रईस यह भूल जाते हैं कि माँ बाप की अनगिनत कुर्बानियों की बदौलत ही आज वे इस मुकाम पर हैं | माँ बाप छोटी सी कुटिया में चार पांच बच्चों का भरण पोषण खुशी-खुशी करते हैं, स्वयं आधा पेट खा पीकर, आधा तन ढककर उनकी सारी जरूरतों का पूरा ख्याल रखते हैं | अपने बुढ़ापे की परवाह किए बगैर बच्चों के भविष्य को सजाने संवारने हेतु अपनी पूरी जिंदगी गुजार देते हैं | वे चार पांच बच्चे बड़े हो कर माता पिता के बुढ़ापे की लाठी बनने से इनकार कर देते हैं | बचपन में अकसर मेरी माँ मेरे पापा कहकर आपस में झगड़ने वाले बच्चे बड़े होकर तेरी माँ तुम्हारे बाप कहने लगते हैं | आजकल युवा गाँव को छोड़कर बड़े शहर या विदेशों में बसने लगे हैं | कुछ युवा अपने वृद्ध माँ-बाप को अकेला न छोड़कर शहरों, महानगरों तथा विदेशों में साथ ले जा रहे हैं | वृद्धावस्था में बूढ़े नगरों व विदेशों में बसे बच्चों के घर पर अपनी भूमिका और महता को खोजते रहते है | चित्रा मुद्गल द्वारा रचित उपन्यास '*गिलिगडु*' में जसवंत सिंह पत्नी की मृत्यु और रिटायरमेंट के बाद कानपूर से दिल्ली अपने बेटे नरेंद्र के घर रहने चले जाते है | अपने घर से बेटे के घर में स्थानांतरित होते ही घर के मुखिया की भूमिका भी स्वतः स्थानांतरित हो जाती है | कानपुर में अपने बड़े घर के स्वामी जसवंत सिंह को बेटे के घर में बालकनी को कमरे में तब्दील कर वहाँ रखा जाता है | रवीन्द्र वर्मा के उपन्यास '*आख़िरी मंजिल*' वृद्ध पात्र राजीव रंजन शहर के सबसे बुजुर्ग लेखक थे | वे लखनऊ की अपनी कोठी बेच कर अपने इकलौते बेटे के पास अमेरिका चले जाते है | लेकिन उसका बेटा उसे बूढ़ों के घर में भेजना चाहते हैं –

> "उन्होंने बताया कि सातवें महीने की पहली तारीख को बेटे-बहू ने उन्हें बताया था कि उन्होंने राजीव रंजन के रहने का इंतजाम एक 'बूढ़ों के घर' में कर दिया है | बेटे-बहू ने उन्हें प्यार से समझाने की कोशिश की थी कि यही अमेरिका की रिवायत थी | राजीव रंजन नहीं माने | 'बूढ़ों के घर' जाने के बजाय वे लखनऊ चले आये | उन्होंने एक घूंट और शराब पीकर भरी आँखों से बताया कि अमेरिका में उन्होंने बेटे को लखनऊ का मकान बेचने के बारे में नहीं बताया था | उसने पूछा जरूर था क्योंकि उसे अपने अपार ऋणों के भुगतान के लिए पैसे की जरूरत थी | लौट कर उसी पूंजी से उन्होंने इंदिरा नगर में एक मकान खरीद लिया था और उसमें वे एक मारुति और एक नौकर के साथ रहते थे, जो उनका ड्राइवर भी था |"(वर्मा 78)

मनुष्य जब वृद्धावस्था की दहलीज पर पहुँचता है, तो वैसे ही समाज उसे एक बेकार सामान की तरह एक कोने में डाल देता है | वृद्ध अपना सब कुछ बेच कर अपने इकलौते बेटे के पास रहने चले जाते हैं लेकिन वही बच्चे उन्हें वृद्धाश्रम भेजना चाहते हैं | यहाँ राजीव

रंजन भी अपना सब कुछ बेच कर अपने इकलौते बेटे के पास रहने चला जाता है | लेकिन बेटा उन्हें वृद्धाश्रम भेजना चाहता है | वृद्ध जिस उम्मीद से अपनी संतान के पास जाते हैं उनकी वह उम्मीद टूट जाती है जब उनकी संतान उन्हें पराया कर देती है | तो ऐसी स्थिति में वृद्ध अपने घर से बेटे के घर फिर बेटे के घर से अपने घर वापस चले आते हैं | वृद्ध राजीव रंजन की मृत्यु हो जाती है लेकिन उसका बेटा अमेरिका से उनकी चिता को आग लगाने नहीं पहुँच पाता |

> "मदन मोहन अपने घेरे में खड़े लोगों से कह रहे थे, "आदमी जिन्दगी भर जोड़ता है | एक दिन सब छोड़ कर चला जाता है |" "किसके लिये" किसी ने कहा | एक क्षण चुप्पी छायी रही | फिर कोई बोला, "बेटे के लिए |" राजीव रंजन का बेटा अमेरिका से इतनी जल्दी नहीं आ पाया था | उसने फ़ोन पर बताया था कि कानपुर से उसके ममेरे भाई मुन्ना को बुला कर उससे आग दिलवा दें | वह तीन दिन बाद आयेगा और पिता की राख लेकर हरिद्वार जाएगा | वह इकलौता बेटा था | तभी उसने बरसों पहले पिता को लिखा था कि मैं सब कुछ छोड़कर आपके पास नहीं आ सकता, आप सब कुछ बेच कर मेरे पास आ जाइए और यहीं जिंदगी गुजारिए |"(वर्मा 94)

वृद्धावस्था में बूढ़े कभी एक बेटे के पास, कभी दूसरे बेटे के पास रहने के लिए भी मजबूर हो जाते है | रवीन्द्र वर्मा के उपन्यास '*पत्थर ऊपर पानी*' में वृद्ध सीता देवी को न चाहते हुए भी एक-एक माह दोनों बेटों के घर बारी-बारी रहना पड़ता है | सीता देवी एक बेटे के घर में मन लगाती तब तक दूसरे बेटे के घर जाने का समय आ जाता | वह प्रो. चंद्रा से भीगे आँखों और भर्राये गले से कहती है – "एक बेटे के घर से आ रही हूँ | दूसरे बेटे के घर जा रही हूँ |"(वर्मा 9) एक दिन उनका बेटा हरीश उन्हें जानबूझकर सड़क पर छोड़ देता है | प्रो. चंद्रा के यह कहने पर कि वह उनके खोए हुए बेटे को ढूंढने का प्रयास करेंगे तब सीता देवी सोचती है –"उनका बेटा नहीं खोया था बेटे ने अपनी माँ को खो दिया था | हरीश जब छोटा था तब भी यही करता था जो चीज उसे अच्छी नहीं लगती थी उसे वह खो देता था |" (वर्मा 12) एक माँ के प्रति अपने नैतिक दायित्वों से बेटों की यह बेरुखी वृद्धों की दयनीय दशा का जीवंत दस्तावेज प्रस्तुत करता है | एक वृद्ध स्त्री दो संपन्न पुत्रों की माँ लेकिन दोनों में से कोई भी उन्हें स्थाई रूप से अपने पास नहीं रखना चाहता | कोई भी व्यक्ति स्वेच्छा से किसी पर निर्भर नहीं रहना चाहता लेकिन जीवन के इस पड़ाव में दिनों दिन कमजोर होती देह उसे अपनों के अपनत्व व सहारे की आवश्यकता महसूस कराती है | किसी-किसी परिवार में तो बुजुर्ग माता-पिता को अलग-अलग बच्चों के पास रखा जाता है | माता जी बड़े बेटे के पास तो पिता जी छोटे बेटे के पास | बुढ़ापे में जीवन-साथी से अलग कर कितना बड़ा कष्ट दोनों बुजुर्गों को दिया जाता है | दिलीप मेहरा की कहानी '*अग्निदाह*' में मनसुखलाल की संतानों द्वारा माता-पिता का बंटवारा किया जाता है | मनसुखलाल की तीन संतानों में दो बेटे अमरुत और रमेश तथा मिताली थी | पचहत्तर वर्षीय मनसुखलाल और उनकी पत्नी अपनी सारी जिम्मेदारियों से मुक्त होकर बुढ़ापा एक दूसरे के साथ चैन से बिताना चाहते थे | लेकिन महंगाई का बहाना करके उनके बेटे अमृत और रमेश ने अपने माँ-बाप को बांट कर अलग कर दिया | बड़ा बेटा रमेश और उसकी पत्नी अंबा मनसुखलाल की पत्नी उषा से कामवाली जैसा व्यवहार करते हैं | यह देखकर छोटे बेटे अमृत की पत्नी सुनयना भी अमृत का साथ पाकर मनसुखलाल से कहती है – "पापा जी महंगाई कितनी बढ़ गई है, अब इस घर में कम वाली रखना मुश्किल है, आप घर में थोड़ा हाथ बटाएंगे तो सहायता हो जाएगी | हमारी जेठानी को मम्मी साथ देती है तो नौकरानी का फिजूल खर्च नहीं होता | (मेहरा 46)

मनसुखलाल उनकी बात मान लेते है; यही से उनके बुरे दिन शुरू होते है | बहू के अत्याचार दिन-प्रतिदिन इतने बढ़ जाते है कि मनसुखलाल को अपना जीवन निरर्थक लगने लगता है | पूरे घर के कपड़े धोने के बाद उन्हें सब्जी रोटी खाने को मिलती | कम से कम पचास रुपये जब वे घर में जमा करते तब उन्हें दाल-चावल-सब्जी-रोटी के रूप में पूरा खाना मिलता | काम न करने पर उन्हें खाना ही नहीं मिलता | ऐसी स्थिति में वे ईश्वर से अपनी मृत्यु का आह्वान कर देते हैं | नर्मदा नाहर में कूदकर मनसुखलाल आत्महत्या कर लेते हैं | मनसुखलाल की बेटी मिताली यह खबर पाकर तुरंत सूरत से आ जाती है | मनसुखलाल द्वारा लिखी गई सुसाइड नोट पढ़कर मिताली बुरी तरह से आहत हो जाती है | नोट में मनसुखलाल ने अपनी नरकीय जीवन का ब्यौरा देते हुए अंत में लिखा था-

> "इस जीवन से तंग आकर दुनिया छोड़कर जा रहा हूँ | पुलिस से मेरा निवेदन है कि मेरी लाश मेरे बेटे को न दी जाए | अगर मेरी लड़की मिताली आती है तो उसे अकेला देने का अधिकार देता हूँ पुलिस से मेरा निवेदन है कि मेरी बेटी अगर नहीं पहुंच पाती है तो मेरी लाश को आवारा लाश की तरह जला दिया जाए परंतु मेरे पुत्रों को न दी जाए |" (मेहरा 51)

कहानी के अंत में मिताली अपने पिता को अग्निदाह देते हुए अपनी माँ को अपने साथ लेकर सूरत शहर चली जाती है | मनसुखलाल ने अपनी त्रासदी अपनी बेटी को पहले ही बता दी होती तो उनके जीवन का इस प्रकार दर्दनाक अंत नहीं होता और वे अपनी पत्नी के साथ शांति से अपनी वृद्धावस्था व्यतीत कर पाते | अनेक वृद्ध ऐसे है जिन्हें उनकी संतान वृद्धाश्रमों में छोड़ देती है | वे अपने भाग्य को कोसते हुए अंतिम समय में मृत्यु की प्रतीक्षा करते हैं | चित्रा मुद्गल की 'गेंद' कहानी में वृद्धाश्रम में रह रही चटर्जी दी कहती हैं – "मरुँ तो दाह-संस्कार चाहे जिससे करवा देना, नालायक बेटे को ख़बर न करना |"(मुद्गल 18) जब वृद्ध चटर्जी दी की मृत्यु हो जाती है तो उनका बेटा स्पष्ट कहता है – "जो होना है आश्रम में होगा | उन्हें चंडीगढ़ ले जाने का प्रश्न ही नहीं उठता |" (मुद्गल 22) जिस घर को माँ-बाप अपनी मेहनत से बनाते है, आज उसमें ही वृद्धों के लिए कोई स्थान नहीं | यहाँ तक मृत्यु के बाद उनके क्रियाकर्म के लिए भी उनकी संतानें उन्हें घर नहीं ले जाना चाहती | कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी *'झुर्रियों की पीड़ा'* में भी वृद्धाश्रम में रह रहे वृद्धजनों की पीड़ा को उजागर किया गया है –

> "गोमती धीरे-धीरे लाठी टेकती", मुझसे वे प्रणाम कहती इसके पूर्व मैंने ही उन्हें प्रणाम कर नम्रता से पूछा "कैसे हैं! घर में कौन-कौन हैं?" उनकी गोरी देह कंपकंपाई व वे बोलीं, सभी हैं | पति के मरते ही जब मुझसे काम नहीं हो पाया तो मुझे सीढ़ियों के नीचे रहने का आदेश मिला | बर्तन कपड़े, भोजन नहीं संभल रहा था | बेटे-बहू ने मेरी सारी जमापूँजी सब छीन ली, मुझे अधपेट भोजन मिलता | जब मैंने आवाज उठाई तो मुझे यहाँ वे छोड़ गये" (अग्निहोत्री 12)

गोमती कभी-कभी अपने पुराने दिन याद कर अतीत में खो जाती | मन में अतीत की यादों को लिए गोमती उदास हो जाती है | लेखिका ने देखा आश्रम में कुछ दूर लम्बी साँवली महाराष्ट्रियन महिला उसे हाथ हिला कर बुला रही हो | लेखिका से अपनी कहानी साझा करना चाह रही थी | लेखिका उससे मिलने जाती है और वह अपनी व्यथा सुनाते हुई कहती है –

> "मरद के मरते ही बहू के बीमार बच्चे रोजा रुला देते, बहू रोज मुझे कोसती, अरी मर जा, तेरे इस मकान को बेच छोटे घर में बच्चे पल लेंगे | मेरा मरद बाबू था प्रोविडेंट फंड भी मिला, परन्तु वे लोगों ने ढीट बन उसे छीना, मुझसे बर्तन का काम

करवाया | बेटे ने मदद न कर एक दिन रिक्शा बुलाकर यहाँ रखा व मुँह फेरकर चलता बना; यहाँ का खर्च भर जाता है | मैं उससे हाथ पकड़कर कहती हूँ, बेटे त्योहार पर तो घर ले चल" (अग्निहोत्री 12)

हर माँ-बाप सोचते हैं उनकी आँखों के तारे बुढ़ापे में उनकी लाठी बनेंगे लेकिन समय का चक्र ऐसे चलता है, कि बच्चे बड़े होकर उन्हें उन्हीं के घर से निकालने पर लगे रहते है | आज की युवा पीढ़ी अपने माँ-बाप की धन-संपत्ति तो चाहती है लेकिन अनके प्रति अपने कर्तव्यों व जिम्मेदारियों को उठाना नहीं चाहती | जीवन के इन क्षणों में वे माँ-बाप की सेवा करने की बजाय उन्हें वृद्धाश्रम में छोड़ जाते हैं | उन्हें लगता बूढ़े माँ-बाप घर में रहेंगे तो टोका-टोकी करते रहेंगे जो उन्हें उनकी निजी आजादी के लिए कतई गवारा नहीं | वृद्धावस्था में बूढ़े कभी अपने घर, कभी नगरों व विदेशों में बसे बच्चों के घर, कभी एक बेटे के पास, कभी दूसरे बेटे के पास, कभी वृद्धाश्रम में इस प्रकार वृद्धों का अंतिम निवासस्थान स्थिर नहीं होता | आज की पीढ़ी क्यों नहीं समझती की जिस उम्र में बुजुर्गों को प्यार स्नेह सम्मान और सहयोग की जरूरत है उस उम्र में उन्हें बेसहारा छोड़ दर-दर की ठोकर खाने के लिए मजबूर कर दिया जाता है | वृद्धों के पुनर्वास की समस्या एक व्यापक सामाजिक चुनौती है, जिसका समाधान परिवार, समाज और सरकार के सामूहिक प्रयासों से ही संभव है | परिवार को वृद्धों के प्रति अपनी जिम्मेदारी समझनी चाहिए जबकि सरकार और सामाजिक संगठनों को वृद्धों के पुनर्वास के लिए ठोस कदम उठाने चाहिए |

21वीं सदी के हिंदी कथाकारों ने वृद्धावस्था में पारिवारिक समस्याओं को प्रमुख विषय के रूप में प्रस्तुत किया है | वृद्ध अक्सर अकेलेपन, उपेक्षा और सम्मान की कमी का सामना करते हैं, खासकर जब परिवार के सदस्य अपनी व्यस्तताओं में लगे हों | संयुक्त परिवार टूटकर एकल परिवार बनना, नौकरीपेशा परिवार में व्यस्तता, या संपन्न परिवार में समय की कमी वृद्धों की समस्याओं को और बढ़ा देती है | इसके अलावा, आर्थिक हितों को लेकर पारिवारिक टकराव, निर्णयों में अनदेखी और पीढ़ियों के बीच मतभेद भी वृद्धों के जीवन को चुनौतीपूर्ण बनाते हैं | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की पारिवारिक समस्याएं न केवल पारिवारिक व सामाजिक सत्य को उजागर करती है, बल्कि इनसे परिवार व समाज को संवेदनशीलता और समाधान का मार्ग भी मिलता है |

3.3 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की सामाजिक समस्याएं:-

भारतीय समाज में भावनात्मक संबंधों पर समाज की व्यवस्था आधारित रही है | 21वीं शताब्दी में भूमंडलीकरण, उपभोक्तावादी-संस्कृति और आधुनिकता के बढ़ते प्रभाव के कारण सामाजिक जीवन में संरचनात्मक परिवर्तन आया है | इन परिवर्तनों के कारण एकल परिवार में अभिवृद्धि, संयुक्त परिवार का विघटन एवं नगरीकरण के बढ़ते प्रभाव ने वृद्ध-जीवन को और अधिक कारुणिक बना दिया है | आज भारतीय समाज में भी प्रगाढ़ रक्त संबंधों में भी औपचारिकता का ग्रहण लग गया है | जीवन मूल्यों में स्वार्थ ने जगह बना ली है | आज का समाज वृद्धावस्था को समस्या की दृष्टि से देख रहा है और उन्हें बोझ समझकर नजरंदाज कर रहा है | समाज में उचित मान-सम्मान न मिलने के कारण वृद्ध व्यक्तियों का जीवन निराशा की तरफ जा रहा है | संबंधों के इस खोखलेपन को स्वाति तिवारी अपनी पुस्तक '*अकेले होते लोग*' में लिखती हैं – "अखबारों में प्रायः बुजुर्गों से दुर्व्यवहार या उनकी उपेक्षा के समाचार पढ़ने को मिलते है | भारत में होटल, स्टेशन, रेस्टोरेंट, पार्क, अस्पताल, धार्मिक भवनों के सामने बुजुर्गों की दयनीय

स्थिति के चित्र देखे जा सकते हैं | आधुनिक समय में सामाजिक और पारिवारिक ढांचे में हुए बदलावों ने वृद्धों के जीवन को कई प्रकार की चुनौतियों से भर दिया है | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की सामाजिक समस्याओं को लेखकों ने संवेदनशीलता और गहराई से चित्रित किया है |

3.3.1 समाज का वृद्धों के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण:-

समाज का वृद्धों के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण एक गंभीर सामाजिक समस्या है, जो बदलते सामाजिक और पारिवारिक ढांचे, आर्थिक दबावों और आधुनिक जीवनशैली के कारण अधिक स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आई है | समय के साथ-साथ घर-परिवार, समाज के माहौल में भी बदलाव आया है | कृष्णा सोबती अपने उपन्यास *'समय सरगम'* में समाज की यथार्थ तस्वीर दिखाती हैं | इस उपन्यास में अधिकांश वृद्ध पात्र घर-परिवार व समाज के लोगों से त्रस्त हैं | इस कथा में आरण्या को मकान बदलने की जरूरत पड़ती है वह किराए का मकान ढूंढने निकल पड़ती है |

> "एक अच्छे घर को पसंद कर उसका एडवांस देना चाहा तो एजेंट के साथ खड़े बुजुर्ग ने पूछा, यह बताएँ कि आपकी जिम्मेदारी कौन लेगा ? जिम्मेदारी ? क्या मतलब ? आप अकेली रहेंगी कि कोई और भी साथ में होगा ? मैं रहूंगी और मैं ही अपने लिए जिम्मेदार हूँ | आपकी जन्म तारीख किस सन की है ? यह क्यों पूछ रहे आप ? इसलिए कि हमें पूछना चाहिए | कल को चली-चलाई को कुछ चक्कर हो तो हम झमेले में क्यों पड़े | आरण्या जाने कैसी ज़हरीली आँखों से देखती रही, फिर ठंडी आवाज में कहा मुझे यह घर नहीं चाहिए | आप किसी ऐसे किराएदार को दीजिए जिसे मरना न हो |
> (सोबती 122)

मृत्यु का आकलन करके मकान को किराए पर देना एकदम अमानवीय विचार है | किन्तु यही सामाजिक सत्य है | मृत्यु आयु का उतार-चढ़ाव नहीं देखती है | शिशु, युवा, वृद्ध कोई भी इसका शिकार हो सकता है | बदलते सामाजिक परिवेश में रिश्ते और मानवीय सम्बन्ध समाप्त हो गए हैं | गाँव और शहर के युवा वृद्धों का सम्मान नहीं करते | उनके व्यवहार से विनम्रता समाप्त हो गयी है | रामधारी सिंह दिवाकर के उपन्यास में रिटायर होकर आये प्रोफेसर प्रमोद सिंह से 'लाल सेना' के लड़के लेवी वसूलने आते हैं | उसी गाँव के होते हुए भी वे लड़के उनको अपमानित करते हैं – "सबसे लम्बे-तगड़े लड़के ने सीढ़ी से उतरते हुए पीछे मुड़कर प्रमोद बाबू को देखा और बदतमीजी-जैसा बोला, 'आप यहाँ नहीं रह सकेंगे सर ! याद रखिएगा | चेतावनी देते हुए अपने साथियों से कहा, 'चलो रे ! ई बुढ़वा प्रोफेसर ऐसे नहीं देगा |" उम्र में पिता समान सेवानिवृत्त प्रोफेसर प्रमोद सिंह से बातचीत में भाषा का ऐसा प्रयोग छिन्न-भिन्न होते सामाजिक ताने-बाने को उजागर कर देता है | गाँव और समाज में वृद्धों का जो सम्मान था वह वर्तमान युवा पीढ़ी में दिखाई नहीं देता है | कार्यालयों में भी अनुभवी वृद्ध पीढ़ी के प्रति नई पीढ़ी द्वारा उपहासात्मक रवैया अपनाया जाता है | तकनीकी कौशल की आड़ में पुरानी पीढ़ी को नकारा और अकर्मण्य मानती है | सूरज सिंह नेगी के उपन्यास *'रिश्तों की आँच'* में इस पक्ष को यथार्थता के साथ उठाया है -

> "आप ठहरे पुराने आदमी आज नई तकनीकी का जमाना आ चुका है | आपकी सीट का उत्तरदायित्व किसी अन्य को दे दिया जाए तो आपको कोई एतराज तो नहीं होगा | साहब का यह कथन रामप्रसाद को अपनी बेइज्जती लगता है | "क्या मैं पुराने ज़माने का आदमी हूँ | इस संसार में क्या कोई चीज सदैव नवीनता लिए हुए है | क्या नए के आगे पुराने का कोई मूल्य नहीं है | नींव के पत्थर जो हर दुःख व पीड़ा को अपनी आत्मा में छिपाए रखते हैं क्या इमारत के कंगूरों के आगे उनका कोई मूल्य नहीं है भला ? (नेगी 127)

डिजिटल युग में वृद्धों को तकनीकी रूप से पिछड़ा हुआ समझा जाता है, जिससे उन्हें निर्णय लेने की प्रक्रियाओं से बाहर रखा जाता है | आधुनिक समाज में 'उत्पादकता' को अत्यधिक महत्व दिया जाने लगा है, जिसके कारण वृद्धों को 'अप्रासंगिक' या 'बेकार' समझा जाने लगा है | नए के सर्वमान्य स्वीकार के समय क्या पुराने के महत्व और प्रासंगिकता को नकार दिया जाना उचित है | यह बुज़ुर्गों के प्रति समाज की पूर्वाग्रह से ग्रसित संकीर्ण मानसिकता को दर्शाता है | नई पीढ़ी के लिए वृद्धजन पुराने विचारों और परम्पराओं के प्रतीक बन जाते हैं, जिन्हें वे 'आउटडेटेड' मानते हैं | चित्रा मुद्गल के उपन्यास '*गिलिगडु*' में वृद्ध पात्र मिस्टर भट्ट बाबू जसवंत को बताते है कि सोसाइटियों के वृद्धों ने मिलकर एक 'लाफिंग क्लब' बनाया था | लेकिन पार्क में आने वाली युवा पीढ़ी ने इसका विरोध करना शुरू कर दिया –

> "सेहत को दुरुस्त रखने के उद्देश्य से सुबह आठ बजे के लगभग सभी बूढ़े पार्क में इकट्ठे हो जाते और समवेत स्वर में खुलकर ठहाके भरने का अभ्यास करते | दो-अढ़ाई महीने बूढ़ों का 'लाफिंग क्लब' जोरशोर से चला | पार्क में सुबह की सैर करने वाले जवानों को लटक रही खालों और नकली बत्तीसी वाले बूढ़ों की राक्षसी हा, हा, हा, हा, बरदाश्त नहीं हुई | उनका तर्क था- उन्हें उनकी हँसी-ठहाके कम, हाहाकार अधिक प्रतीत हुए | मनहूसियत कब तक झेलते ? विरोध शुरू हो गया | हँसना है तो जाकर अपने घरों में हँसे | पार्क सार्वजनिक स्थल है | कल यहाँ समवेत स्वर में वे रोना आरम्भ कर देंगे की रोना सेहत के लिए फायदेमंद है, कैसे सहा जा सकता है ? बूढ़े दर गए | अगली सुबह वे मिले जरूर लेकिन हँसे नहीं |"(मुद्गल 66)

यहाँ नई पीढ़ी वृद्धों के प्रति संवेदन हीन दिखाई पड़ती है | वृद्धों को पार्क में हंसने के लिए प्रतिबन्ध लगाना मनुष्यता की दृष्टि से उचित नहीं है | वो भी इसलिए कि उन्हें वे वृद्ध चेहरे हँसते हुए अच्छे नहीं लगते है | अपने अधिकारों की बात करके वे वृद्धों के 'लाफिंग क्लब' को बंद करवा देते हैं | वृद्धावस्था में अगर एक साथ वृद्ध कुछ वक्त बिताकर, हँस कर अपने जीवन को थोड़ा खूबसूरत और स्वस्थ बनाने की इच्छा रखते हैं उनकी इस इच्छा पर भी नई पीढ़ी दखल करती है | वो भूल जाते है एक दिन उन्हें भी वृद्ध होना है | एस. आर. हरनोट के '*दारोश*' कहानी संग्रह में संकलित कहानी '*कागभाखा*' में दादी के साथ उसके बेटे-बहू नकारात्मक व्यवहार करते है |

> "दादी की उम्र पैंसठ से चार महीने ऊपर थी | लेकिन वह अभी सठियायी नहीं थी | चौकस, फुर्तीली, एक गबरू की तरह चुस्त | दो तीन गाय, सात बकरियां, तीन भेड़ें और एक छोटा बच्छु दादी के ओबरे में थे | परिवार ज्यादा बड़ा नहीं | एक

> बेटा था जो दोघरी में ब्याहने के बाद चला गया | बहू को दादी अच्छी नहीं लगी | बहू जब भी बीमार होती या जुकाम तक भी आ जाता तो बजाय इसके कि दवा-दारू करें, दादी पर ही इल्जाम लगते | "इस बुढ़िया के पास भूत है | उसी ने कुछ कर दिया है |" दादी सुनकर चुप रहती | इधर-उधर निकल जाती | या पेड़ के नीचे बैठकर सिर घुटनों के बीच धर खूब रोया करती |" (हरनोट 53)

गाँव में दादी कौवे की भाषा समझती थी | इसलिए बहू और गाँव की कुछ औरतें दादी को डायन मानते थे | उन्हें लगता था दादी जादू-टोना करती हैं | इसलिए उसके बेटे-बहू अपने बच्चों के साथ दोघरी में अलग रहते थे | बेटा कभी-कभार दिन-दिन को आ जाया करता था | भारतीय समाज में वृद्धों को परिवार का मार्गदर्शक माना जाता था, लेकिन अब यह स्थिति बड़ी तेजी से बदल रही हैं | काशीनाथ सिंह के उपन्यास '*रेहन पर रग्घू*' में जब रघू से कागजात पर दस्तखत करवाने के लिए उसका भतीजा नरेश दो लड़कों को भेजता है | तब रघुनाथ अपने जीवन से व्यथित होकर और अपना अपहरण यह जानने के लिए करवाते हैं कि उनके बेटों के लिए उनके जीवन का कोई मोल है या नहीं |

> "मुझे ले चलो ! अगवा करो मुझे और फिरौती माँगो दो लाख !" "कौन देगा तुम्हारे जैसे सड़े गले बुड्ढ़े का दो लाख ?" "सिर्फ दो लाख इसलिए कि रकम नहीं अखरेगी देने में | मिल भी जायेगी और हत्या से भी बच जाओगे ?" अरे देगा कौन इस सड़े गले का ?" "सड़ा गला तुम्हारे लिए हूँ, बेटों के लिए तो नहीं, बेटी के लिए तो नहीं ?"

रघुनाथ की यह ऊब वृद्धों के प्रति नई पीढ़ी के नकारात्मक दृष्टिकोण को दिखाता है | वृद्धों को नई पीढ़ी कोई अहमियत ही नहीं देती उन्हें सड़ा गला समझकर उपेक्षित किया जाता है | घर के बाहर और घर के अंदर वृद्धों की स्थिति एक जैसी ही है | चित्रा मुद्गल के उपन्यास '*गिलिगडु*' में बहू सुनयना बाबू जसवंत सिंह से कहती हैं –

> "अभी भी जवानी का जोश बाकी हो तो दिक्कत कैसी ? चले जाया करें रेडलाइट एरिया | कौन पेंशन कम मिलती है उन्हें जो उनकी मौजमस्ती में हाथ बंधे हों ? कम से कम अडोस-पड़ोस की किशोरियों पर तो न नजर डालें | मुंह दिखाने लायक रखें उन्हें सोसाइटी में | स्तब्ध बमुश्किल मुंह खोल पाए बाबू जसवंत सिंह |" (मुद्गल 59)

इस उपन्यास में बाबू जसवंत सिंह का कोई मूल्य नहीं है | बहू उनका निरादर करती है | उन्हें ताने कसती है | उनके प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण रखती है | समाज का वृद्धों के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण न केवल मानवीय मूल्यों के खिलाफ है, बल्कि यह सामाजिक विघटन का संकेत भी देता है | हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों के प्रति समाज के नकारात्मक दृष्टिकोण को उजागर किया गया है | यह दृष्टिकोण वृद्धों की सामाजिक, मानसिक और भावनात्मक चुनौतियों को बढ़ाता है और समाज में संवेदनशीलता की आवश्यकता को रेखांकित करता है | इसे बदलने के लिए जागरूकता, शिक्षा और सहानुभूति की आवश्यकता है | वृद्धों को सम्मान और अपनापन देकर ही एक स्वस्थ और सामंजस्यपूर्ण समाज का निर्माण कर सकते हैं |

3.3.2 युवा पीढ़ी का वृद्धों के प्रति उपेक्षित दृष्टिकोण

बुजुर्गों के उपेक्षित होने के मुख्य कारण है – मानव के विकास की तीव्र गति | 20वीं शताब्दी में मानव के भौतिक और तकनीक का इतना विकास नहीं हुआ जितना 21वीं शताब्दी में हुआ | इस भौतिक विकास ने कई मूल्यों में परिवर्तन किया जैसे - मनुष्य की बौद्धिक क्षमता, जीवन शैली में बदलाव, नई विचारधारा, नई आवश्यकताएं , वैभवपूर्ण जीवन इत्यादि | इन सब परिवर्तनों का प्रभाव युवा पीढ़ी के मूल्यों और विचारों पर पड़ा है | जिससे उनके वृद्धों के प्रति दृष्टिकोण में भी बदलाव हुआ है | माँ-बाप अपना सारा जीवन जिन बच्चों के पालन पोषण व पढ़ाने-लिखाने में लगा देते हैं अंत में वही बच्चे उनको बोझ समझकर उनके प्रति उपेक्षा पूर्ण दृष्टि को अपनाते हैं | बड़े दुख की बात है कि जिन बच्चों के लिए पिता अपनी खुशियों की कुर्बानी दे देता है | उनकी हर एक जिद को पूरी करने के लिए कड़ी से कड़ी मेहनत करता है | वृद्धावस्था में उसी पिता का अपमान किया जाता है | इसका बखूबी चित्रण हृदयेश के '*चार दरवेश*' उपन्यास में देखने को मिलता है | रामप्रसाद अपने घर में अपनी बेटी और दामाद को साथ रखते हैं | रामप्रसाद खुद अपने घर से कब पराए हो गए और मेजबान से कब मेहमान बन गये इसका पता ही नहीं चला | दामाद के साथ उनकी बेटी भी उनकी उपेक्षा करती थी | एक दिन उन्होंने अपने दामाद को बेटी से कहते हुए सुन लिया |

> "तेरा बाप हर दम ततैया मिर्च बना रहता है | शिकवा गिला के अलावा कुछ जानता ही नहीं | वह भी तो घर से बाहर निकलता है | सांझ को जब बैठक बाजी से लौटता है तब किसी बिजली वाली दुकान से क्यों नहीं बल्ब ले लेता है ? सो क्यों ? अपनी टेंट से दस-बारह रुपये जो ढीले करने पड़ेंगे | बुड्ढा चालाक कौवा है |" (हृदयेश 16)

वृद्धों को परिवार में एक आर्थिक बोझ के रूप में देखा जाता है, विशेषकर तब जब वह आर्थिक रूप से दूसरों पर निर्भर होते हैं | वृद्धजनों की अस्वस्थता की स्थिति में उन्हें तिरस्कृत होना पड़ता है | जब रामप्रसाद को कुत्ते ने काट लिया तब उनकी बेटी और दामाद ने उन्हें इंजेक्शन लगवाना जरूरी न समझा बल्कि फिजूलखर्ची माना | इसके चलते रामप्रसाद को रेबीज हो गया और उनकी मृत्यु हो गई | हमारे समाज में बेटों के लिए कहा जाता है कि बेटा बहू के उकसाने पर अपने माँ-बाप की उपेक्षा करता है | पर यहाँ तो बेटी भी अपने पिता के दर्द को समझ नहीं पाती | अपने पति के साथ मिलकर अपने देवता सामान पिता को अपमानित करती है | बेटी का ऐसा रूप देखकर निश्चय ही कहा जा सकता है कि अब व्यक्ति अपना स्वार्थ देखता है | बाहर के लोगों की उपेक्षा को तो सहन किया जा सकता है लेकिन जब अपने ही बच्चे उपेक्षा करते हैं तब वृद्धों में असुरक्षा का अनुभव होने लगता है | रामप्रसाद अपनी बेटी और बहू के व्यवहार से बहुत दुखी होते हैं | जिसके कारण उनको अपनी पत्नी की बहुत याद आती है और रोते-सिसकते उनको याद करते हैं | बेटी अपने पति को जब यह बात बताती है तो वे उनको पागल बूढ़ा कह कर पुकारते हैं |

> "पागल हो गया है बूढ़ा | "सुना तुमने, तुम्हारा यह जमाई बाबू मुझे बूढ़ा कह कर रहा है |" उनकी आँखें अँधेर में फोटो की ओर फिर उठ गयीं, "आज बूढ़ा कहा है,, कल या परसों गाली देगा, पागल से भी बड़ी | वह घुटक-घुटक कर सिसकियाँ लेने लगा |"(हृदयेश121)

यह सुनकर उनके हृदय को बहुत ठेस पहुँचती है | बेटी और दामाद का ऐसा रूप देखकर निश्चय ही कहा जा सकता है वर्तमान में मानवीय मूल्यों और संस्कारों से उनका कोई लेना देना नहीं है | युवा पीढ़ी का अपने माँ-बाप के प्रति इस तरह का दृष्टिकोण बहुत

पीड़ादायक है | रामप्रसाद को जब कुत्ते ने काट दिया था उन्हें रेबीज के इंजेक्शन लगाने की आवश्यकता थी | बेटी और दामाद पैसा खर्च नहीं करना चाहते थे | उन्हें जीते जी मरने के लिए छोड़ देते हैं |

> "जमाई बाबू, "मेरे एक जानने वाले के बेटे को कुत्ते ने काटा था | पूरे पाँच इंजेक्शनो का कोर्स है | करीब दो हजार रुपये खर्च में आ गये |' बेटी, बाप रे | इतने महंगे ? सरकारी अस्पताल में होंगे ?" जमाई बाबू, "होना चाहिए | तुम्हारा बाप पैसा निकालने रिक्शे पर लदकर बैंक जाता है कि नहीं | अस्पताल चला जाए पता लगाने | अपने बाप को लेकर दुबली होने की जरूरत नहीं | तुम्हारा बाप कुत्ते के काटने से मरने वाला नहीं | हाँ, वह कुत्ते के काट लेता तो कुत्ता मर जाता |"(हृदयेश 140)

आज का समाज भौतिकतावादी और आत्मकेंद्रित होता जा रहा है | बेटी और दामाद ने अपने पिता के इलाज में खर्च करना फिजूल समझा | उनके इस उपेक्षित दृष्टिकोण के कारण रामप्रसाद को रेबीज हो गया और उनकी मृत्यु हो गई | बड़े दुख की बात है कि जिन बच्चों के लिए एक पिता अपनी खुशियों की कुर्बानी दे देता है | अपनी संतान की हर छोटी-बड़ी जिद को पूरी करने के लिए कड़ी से कड़ी मेहनत करते हैं | जब वही पिता बूढ़ा हो जाता है, तो वही बच्चे उनके इलाज करने को फिजूल खर्च समझते हैं | साथ ही बड़े-बड़े ताने सुनाने में भी संकोच नहीं करते हैं | आज की युवा पीढ़ी संयुक्त परिवार में रहना पसंद नहीं करती हैं, जिससे वृद्ध व्यक्तियों को कई समस्याओं से जूझना पड़ रहा है | यह एक ऐसी अवस्था है जिसमें वृद्ध अपने बच्चों से शारीरिक, नैतिक, वित्तीय एवं भावनात्मक सहारे की जरूरत महसूस करते हैं | कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी '*अपना-अपना अस्तित्व*' में दिव्या का पालित पुत्र उसे बिना बताए अपनी पत्नी के साथ घर छोड़ देता है | यह देख दिव्या बहुत दुखी हो जाती है और अपनी सहेली निर्मला को अपने घर बुलाती है –

> "दीदी, प्लीज आ जाइए न |" निर्मला तत्काल सब छोड़ वहाँ जा पहुँची | दिव्या बाल खोले पागल-सी बैठी थी | "ये क्या हालत बनाए हो?" "दीदी सदन मुझे छोड़ चला गया |" कहाँ ? हतबुद्धि निर्मला ने पूछा | "उसने एक कमरे का फ्लैट चुपके से खरीद लिया | मुझे तो पता ही नहीं चला कि हेमा यहाँ खुश नहीं जो अलग रहना चाहती है | मुझे तो मेरी पोती के बिना नींद नहीं आती | सदन को मुझसे बात तो करनी चाहिए थी | मैंने तो प्यार देने में कोई कसर नहीं रखी | इधर तो रोटी वाली भी लगा ली थी |" दिव्या फूट-फूटकर रो रही थी |" (अग्निहोत्री 23)

माँ-बाप के लिए सबसे बड़ा कटु अनुभव होता है जब उसकी संतान उन्हें छोड़ कर चली जाती है | दिव्या को भी इस बात से गहरा आघात पहुँचता है जिससे उसे हार्ट अटैक आ जाता है | निर्मला जब उससे मिलने जाती है तो उसके बहू-बेटे शाम को प्रताड़ित करते हैं –

> "बहू गुर्रा रही थी | जैसे ही निर्मला ने भीतर पैर रखा तो वह उन्हें घूर , चीखी, "बहुत शौक है घूमने-फिरने का तो रहो कहीं अकेली | हमारे साथ ये गुलछर्रे नहीं चलेंगे |" बेटा मिमियाया, "माँ बताकर तो जाना था ना | बिटिया पलंग से गिर गई |" "तो ? निर्मला ने घूरा | "तो क्या ? आप घूमेंगी और मैं काम करूँगी? दफ्तर ही में थक जाती हूँ | इज्जत से रहती है | जैसा

> चाहे खाती-पीती हैं तो क्या इतना भी बच्चों का ख्याल नहीं रखेंगी ?" हाँ-हाँ तुम्हीं ने तो दोनों को पाला है न |" "तो कौन सा एहसान किया है ? हमारे साथ रहती हो तो ये सब करना ही चाहिए वरना अन्यत्र रहो |" (अग्निहोत्री 25)

बदलते इस वर्तमान समय में माता-पिता का सम्मान न कर उन्हें तिरस्कार कर बोझ व घृणा भरी दृष्टि से देखा जा रहा है | संतान के अनुसार घर में रहना बूढ़े माँ-बाप की बेबसी है | युवा पीढ़ी अपनी माँ को बूढ़ी और नौकरानी समझकर घर का सारा काम करवाना चाहती है, अपने बच्चों को पालने की जिम्मेदारी भी माँ-बाप पर थोपना चाहती है | माँ-बाप अपने बच्चों के प्यार और मोह वश परिवार को सँभालने का काम निस्वार्थ भाव से करते भी है | अगर माँ-बाप उनके किसी काम नहीं आते तो वे उन्हें एक बोझ समझकर हमेशा उनकी उपेक्षा करते रहते हैं | वृद्ध व्यक्ति के प्रति ऐसी उपेक्षा का कारण समाज में बढ़ता भौतिकवाद है | आधुनिक परिवार में हर सदस्य प्रत्येक सदस्य से आय की उपेक्षा करता है जिससे पारिवारिक जीवन सुखद एवं आरामदेह हो और ऐसे में अगर कोई कमाई नहीं कर रहा हो तो वह परिवार के लिए बोझ माना जाता है | माता-पिता अपनी संतान का निस्वार्थ पालन-पोषण करते हुए अपने कर्तव्यों का पालन करते हैं | संतान के सुख के लिए माता-पिता बड़े से बड़ा बलिदान तक देने से नहीं हिचकिचाते | संसार में केवल माता पिता का कर्तव्य ही नहीं है कि वे अपनी संतान का पालन पोषण करें बल्कि संतान का भी कर्तव्य है कि माता-पिता का आदर करें उन्हें सम्मान दें तथा वृद्धावस्था में उनका सहारा बनें | कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी '*यह क्या जगह है दोस्तों*' में वृद्ध विधवा ऋतु अपने ही तीन बच्चों के द्वारा उपेक्षित और एकाकी जीवन जीने को मजबूर है | तीनों बच्चे बात-बात पर माँ को ताने कसते रहते है | बड़ा बेटा जब ऋतु से कहता है कि वह रात को देर से आएगा फ़िल्म देखने जा रहा है तो माँ साथ चलने की बात करते हुए कहती है मुझे भी फ़िल्म देखना अच्छा लगता है | बड़ा बेटा कहता है -

> "रहने दो मम्मी, मैं आपके साथ नहीं अपने दोस्तों के साथ एंजाय करूँगा और अब बुढ़ापे में क्या आपको मूवी देखने का शौक चर्राया है ?" "पचास-पचपन ही में मैं इतनी बूढ़ी हो गई कि मनोरंजन की भी अधिकारिणी नहीं रही ?" "आपको अब सत्संग व मंदिरों का सोचना चाहिए | जाना है तो किसी की कंपनी ढूँढ़ लो |" (अग्निहोत्री 56)

बच्चे और परिवार के सदस्य वृद्धों की भावनाओं और अनुभवों की कद्र नहीं करते, जिससे वे मानसिक रूप से टूट जाते हैं | उसकी बेटी हेमा को किसी बर्थडे पार्टी में जाना है तो कहती है – "नहीं...मुझे...कल मेरे दोस्त के 'बर्थडे' पर जाना है, आप चुपचाप रुपये निकालें, यदि बच्चों के खर्च नहीं निभते तो तीन-तीन पैदा क्यों किए ? (अग्निहोत्री 56) नई पीढ़ी की सोच और पुरानी पीढ़ी के संघर्ष के बीच मतभेद बढ़ते जा रहे हैं, जिससे पारिवारिक संबंधों में दूरी आती है | ऋतु को रेडियो के कार्यक्रम में गाने का अवसर मिला था जिसके लिए वह अभ्यास कर रही थी | तभी छोटा बेटा अपने दोस्तों के साथ आता और चीखता है –

> "माँ ज़रा उपमा बना दो |" "मेरा कार्यक्रम है मुझे अभ्यास करने दे, हेमा से कह वह बना देगी |" "मम्मी ये क्या रें-रें लगा देती हो | कोई आप गंधर्वसेन तो हो नहीं | पहले अपने बच्चों का सुख देखो तब शौक पूरे करो | ऋतु ठगी सी रह गई, अपनी योग्यता का उपहास उसे अंदर तक छील गया" (अग्निहोत्री 57)

ऋतु जब टीवी. देखने बैठती तो उसकी बेटी हेमा रिमोट लेकर फिल्मी संगीत लगा दिया | बड़ा बेटा माँ को भाजी तलने का आदेश देता हुआ अंग्रेजी फ़िल्म लगा देता है | ऋतु जब फोन में बात कर रही होती तो उसकी बेटी हेमा उनसे फोन छीन कर कहती मेरी फ्रेंड का फोन आने वाला है | ऋतु को फोन और टी.वी. से वंचित रखा जा रहा था और उसका रियाज छुटा जा रहा था | ऋतु अपने घर में सुविधाओं से वंचित रह रही थी | छोटा बेटा कंप्यूटर की मांग करने लग जाता है | माँ जब पैसों का अभाव बताती हुई कहती है कि फीस जुटाने के लिए भी ट्यूशन पैदल जाती हूँ तो छोटा बेटा इधर-उधर देखकर बोला –

> “आप अपने साज बेच दीजिए, और बैंक से लोन ले लो |” “बैंक से लोन ले लूँ समझी, पर मेरे साजों को बेचने की बात तेरे दिमाग आयी कैसे ?” ऋतु एकदम उबल पड़ी | क्यों ? क्या कोई गाली दे दी, ट्यूशन पर साज मिल ही जाते हैं | घर में हमें रें-रें पसंद नहीं, तब इन पर जंग चढ़ाकर क्या करेंगी | और वह बेशर्मी सी हंसी चल दिया | (अग्निहोत्री 58)

ऋतु हैरान हो गई आखिर उनके बच्चे इतने कठोर कैसे हो गए | जिन्हें किसी की भी भावनाओं की कोई अहमियत ही नहीं | वह सोचती है कि माँ-बाप के गुण बच्चों में आते हैं पर न उनके पति रितेश ऐसे थे न वो खुद फिर बच्चे इतने संवेदन शून्य कैसे हो सकते हैं | तीनों बच्चों की संवेदन शून्यता, स्वार्थीपन और उपेक्षा पूर्ण व्यवहार तब देखने को मिलता है जब ऋतु की दो हार्ट आर्टरी ब्लाक हो गयी थी और डॉक्टर ने ऑपरेशन करने को कहा जिसमें दो लाख का खर्चा होगा | यह सुन बड़ा बेटा पैर पटककर तेज आवाज में कहता है –

> “बैंक में दो लाख व पोस्ट ऑफिस में एक लाख हैं, अब क्या माँ ही पर दो लाख खर्च कर दें ? उदास हेमा ने पूछा | “माँ ने तो यूँ भी पैंसठ वर्ष की जिन्दगी जी ली | साथ के बाद तो वैसे भी उधारी जिन्दगी जीते हैं | अब माँ के पीछे हम तीनों का भविष्य तो मारा नहीं जा सकता |” बड़े ने ढीठता से कहा | “ठीक है घर ले चलते हैं | दवाई देते रहेंगे | जितने दिन जिएँ जी लें, शेष हरि इच्छा |” (अग्निहोत्री 60)

वृद्धावस्था का सबसे बड़ा दुख जब व्यक्ति बीमार हो जाता है तो अपने बच्चे भी अकेले छोड़ जाते हैं | बच्चों का यह तिरस्कार उन्हें जीते जी मार देता है | सूरज सिंह नेगी के उपन्यास *‘नियति चक्र’* में वृद्ध टी. बी. के बीमार नितिन घोष के प्रति उसके इकलौते बेटे चित्रांश की उपेक्षा को लेखक ने इस तरह प्रकट किया है -

> “अपना सब कुछ बेटे को दे चुकने के बाद अपने ही घर में जैसे वह पराए से हो गए थे | वह अंदर से बिल्कुल टूट चुके थे | जल्द ही टी.बी. ने उनको घेरा, इलाज करना तो दूर चित्रांश उनके पास जाने से भी कतराने लगा | बेचारी पुत्रवधू कृष्णा को भी सख्त हिदायत दी गई कि उनसे हमदर्दी रखने की कोई जरूरत नहीं | घर का नौकर सुबह शाम खाने की थाली उनके सामने रख आता | महीनों तक यह चलता रहा | बीमारी ने सेठजी को पूरी तरह अपने आगोश में ले लिया था | एक दिन चित्रांश ने पिता से कह ही दिया, क्यों नहीं वह कहीं चले जाते | कब तक बीमारी से घर का सुख-चैन छिनते रहेंगे | दरअसल चित्रांश की नजर सेठजी के कमरे पर थी जिसे वह अपना कार्यालय कक्ष बनाना चाहता था | चित्रांश के मुँह से यह सुनते सेठजी की आत्मा रुदन करने लगी |”(नेगी 77)

आज मनुष्य के भीतर से ममत्व, अपनापन और आस्था के संस्कार धीरे-धीरे लुप्त होते जा रहे हैं | आज की नौजवान पीढ़ी सिर्फ अपने और अपने भविष्य के विषय सोचती है | मनुष्यता को जैसे ताक पर रख दिया गया हो किसी को किसी के दुख दर्द से कोई वास्ता ही नहीं रह गया है | ऐसे में वृद्धों के सामने अपने अस्तित्व को परिवार व समाज के सामने बनाए रखने की चुनौती है | आज की युवा पीढ़ी अक्सर वृद्धों के प्रति उपेक्षा और असंवेदनशीलता दिखाती है | व्यस्त जीवनशैली, आधुनिक सोच और तकनीकी प्रवृत्तियों के कारण वे वृद्धों के अनुभव, ज्ञान और भावनाओं को महत्व नहीं देते। युवा कभी-कभी वृद्धों के निर्णयों, सलाह और परंपराओं की अनदेखी करते हैं, जिससे वृद्धों को अकेलापन, असुरक्षा और मानसिक तनाव का सामना करना पड़ता है | यह दृष्टिकोण पारिवारिक संवाद और पीढ़ियों के बीच सामंजस्य को भी कमजोर करता है | हिंदी कथा साहित्य में युवा पीढ़ी के उपेक्षित दृष्टिकोण को उजागर किया गया है | यह वृद्धों की सम्मानहीनता, सामाजिक अलगाव और भावनात्मक चुनौती को दर्शाता है और समाज में संवेदनशीलता की आवश्यकता को रेखांकित करता है |

3.3.3 नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी में सामंजस्य का अभाव

आधुनिक समय में अत्यधिक विकास के कारण जीवन शैली और सामाजिक व्यवस्था में अप्रत्याशित परिवर्तन हुआ है | वर्तमान बदलाव के कारण बुजुर्ग परिवार एवं समाज के नए वातावरण में समायोजित कर पाने में असमर्थ है | वर्तमान समय में औद्योगीकरण और नगरीकरण के कारण वृद्धावस्था में समायोजित से सम्बंधित अनेक समस्याएं परिवार में बड़ी तेजी से उत्पन्न हो रही हैं | आधुनिकता ने नई पीढ़ी को इतना व्यस्त और मानसिक तनाव से इतना ग्रस्त कर दिया है जिससे उनके मन में कटुता उत्पन्न हो गई है | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी के बीच सामंजस्य के अभाव को एक गंभीर पारिवारिक और सामाजिक समस्या के रूप में उभारा गया है | यह टकराव केवल विचारों का नहीं है, बल्कि जीवनशैली, मूल्यों, उम्मीदों और रिश्तों की समझ में भी फर्क को उजागर करता है | चित्रा मुद्गल के उपन्यास '*गिलिगडु*' में नई पीढ़ी में सामंजस्य का अभाव देख सकते हैं | नरेंद्र अपने पिता बाबू जसवंत सिंह से कहते हैं - "खाना खाने के बाद थोड़ा कमरे में टहल लिया कीजिए बाबूजी |' 'कौन से कमरे में ? 'यही आदत आपकी ठीक नहीं हर बात को अन्यथा ले लेते हैं |' 'तुम कभी बूढ़े नहीं होंगे नरेंद्र ?' 'सवाल बुढ़ापे और जवानी का नहीं है बाबूजी – एडजस्टमेंट का है |"(मुद्गल 80) यहाँ स्पष्ट देख सकते हैं कि दोनों पीढ़ियों के बीच सामंजस्य का अभाव है | यहाँ नरेंद्र और उसकी पत्नी सुनयना को समझना चाहिए कि छींक, डकार और पाद आदि पर बूढ़ों का कोई नियंत्रण नहीं रहता हैं | यही स्थिति हृदयेश के '*चार दरवेश*' उपन्यास में बाप और बेटी के संवाद में दिखाई पड़ती है |

> "मैंने इसलिए कहा, घर या गली में पेशाब करते हुए अकसर आपका पतलून या पाजामा भीग जाता है |" "जानबूझकर तो भिगोता नहीं | बूढ़ा हूँ | बच्चों की तरह बूढ़ों से भी बहुत कुछ संभलता नहीं |" "फिर भी बड़ों की यह गंदगी सुहाती नहीं है | पाजामा तो पहनोगे ही |" (हृदयेश 14)

रामप्रसाद जान बुझ कर पाजामा में पेशाब नहीं करते | लेकिन बेटी के कथनों से उसे ठेस पहुँचती है | जिस पीढ़ी ने वर्तमान युवा पीढ़ी को बनाने और सँवारने में अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया, वह आज निपट पराये की तरह पेश आ रही है | भौतिक संसाधनों से

सम्पन्न नई पीढ़ी आज अपने माता-पिता को लेकर दोहरी मानसिकता में जी रही है | शहर में रह रहे बच्चे समाज की नजरों में अपने माँ-बाप के परम सेवक कहलाने की हर संभव कोशिश करते हैं और दूसरी तरफ उन्हें अपने पास बुलाकर मुसीबत मोल लेना भी नहीं चाहते | इस प्रवृत्ति पर व्यंग्य करते हुए गोविंद मिश्र जी लिखते हैं –

> "लड़के बच्चे हैं | बच्चे क्या पूर्ण विकसित मनुष्य हैं वे, उम्र में चालीस के ऊपर ...अलग-अलग इकाइयाँ...दूसरे शहरों में रहते हैं ! हमारे संबंध अच्छे हैं...जैसे हिंदुस्तान के चीन से या पाकिस्तान से अच्छे हैं | डायलॉग चलता रहता है, विजिट्स होती रहती हैं | भीतर डिप्लोमैसी है- एक दूसरे को बेवकूफ बनाने, अपना स्वार्थ साधने की कला | हकीकत खोदने चलूँ तो यह कि मैं एक हफ्ते से ज्यादा किसी के साथ नहीं चलता | उसकी बुनियादी वजह यह है कि हमारे मिजाज नहीं मिलते ...खटपट हो बैठती है ...जो फिर मनमुटाव में तन जाती है | वे कहते हैं – तुम अपने बाप की तरह सोचते हो और हमसे भी यही चाहते हो कि हम अपने बाप की तरह सोचें !" (मिश्र 7)

पुरानी पीढ़ी परम्पराओं और सांस्कृतिक मूल्यों पर अधिक जोर देती है, जबकि नई पीढ़ी आधुनिकता और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता को प्राथमिकता देती है | युवा पीढ़ी पुरानी पीढ़ी को अपनी प्रगति के मार्ग में बाधक मानती है और उनके साथ किसी भी प्रकार का वैचारिक सामंजस्य नहीं रख पाती | नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी के बीच सामंजस्य का अभाव आज के समाज में एक प्रमुख सामाजिक और सांस्कृतिक समस्या बन गयी है | यह अंतर मुख्य रूप से मूल्य प्रणाली, जीवनशैली और प्राथमिकताओं के कारण होता है | बदलती जीवनशैली, आधुनिक सोच और तकनीकी साधनों के बढ़ते प्रयोग के कारण नई पीढ़ी और वृद्धों के बीच संवादहीनता और समझ का अभाव उत्पन्न होता है | वृद्ध अपनी अनुभवजनित सलाह और परंपराओं के माध्यम से मार्गदर्शन देना चाहते हैं, जबकि युवा उनकी बातों को अनदेखा या बोझ समझते हैं | इससे पारिवारिक तनाव, अकेलापन और मानसिक असुरक्षा बढ़ती है | साहित्य में इसे वृद्धों की मानसिक और सामाजिक चुनौतियों के रूप में प्रस्तुत किया गया है | यह दर्शाता है कि पीढ़ियों के बीच सहयोग, सम्मान और संवाद की कमी वृद्धावस्था को और कठिन बनाती है |

3.3.4 सामाजिक असुरक्षा

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है | मनुष्य में समाज का निर्माण इसलिए किया था कि वह अकेले जीवन नहीं जी सकता | समाज में कुछ नियम कायदे कानूनों का निर्माण कर मानव ने नैतिकता को बढ़ावा दिया ताकि हर एक के जीवन में सुख सुरक्षा रहे | वृद्धजनों की सामाजिक असुरक्षा एक गंभीर सामाजिक समस्या है, जो उनके शारीरिक, मानसिक और आर्थिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है | आधुनिक व वैश्वीकरण के कारण रहन-सहन में बदलाव, लोगों के नए-पुराने विचारों में बदलाव, संस्कार-संस्कृति में बदलाव आए हैं | इस सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन के कारण वृद्ध पीढ़ी सामाजिक परिवेश में रहते हुए भी अपने आप को असुरक्षित महसूस कर रही हैं | समाज में आए दिन अपराधी बुजुर्गों को अपना शिकार बनाते रहते हैं | उनके साथ लूट-पाट करना, उनकी हत्या कर देना नित्य अखबार की सुर्खियों बनती हैं | अकेले रहने वाले बुजुर्गों की सुरक्षा भी बड़ी समस्या है | वृद्धावस्था में सामाजिक असुरक्षा एक अत्यंत गंभीर और संवेदनशील विषय है, जिसे 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य ने विशेष रूप से रेखांकित

किया है | कृष्णा सोबती के उपन्यास '*समय सरगम*' में वृद्ध पात्र आरण्या के घर लौटने के दौरान लुटेरों ने पुलिस की वर्दी में गाड़ी रोककर उसका सामान और पर्स लूट लिया जिसमें ड्राइवर की मिलीभगत थी |

> "ओवरब्रिज की ढलान से गाड़ी तेजी से उतर रही है | जाड़ों की रात का अजब-सा डरावना मगर मोहक सन्नाटा | सहसा ड्राइवर ने ब्रेक लगाई | गाड़ी जैसे किसी के हुक्म से रुकी हो | आरण्या ने पूछा क्यों ड्राइवर साहब ..पिछली खिड़की के शटर पर खटखटाहट..इससे पहले की आरण्या कुछ सोचे, ड्राइवर ने हाथ पीछे फैला कर शटर नीचे कर दिया | अपना सामान दिखाओ | इधर लाओ पर्स | आप है कौन ! पुलिस | अपना आइडेंटीकार्ड दिखाइए | मेरी आइडेंटी जानना चाहती है, मैडम | खोलकर बताऊँ ? चाकू चमका हाथ में | देखा है न यह ! हाँ पर मेरे पास ऐसा कुछ नहीं जो तलाशी के लायक हो | जिरह बंद करो .. मजबूती से पकड़ा पर्स मजबूत हाथ में खींच लिया गया | डिक्की खोलो | आवाज कड़की | क्लीनर ने तेजी से नीचे उतर डिक्की खोल दी | सामान उठा लिया गया और पिछली सीट का दरवाजा बंद हो गया | जाओ छोड़ दो इस मुर्गी को इसके घर | रास्ते में कम्प्लेंट को रुकी तो पुलिस चौकी से वापिस नहीं जाएगी | (सोबती 44, 45)

वृद्ध महिला को अकेला देखकर असामाजिक तत्व वाले लोग उसका पर्स, सामान छीन कर ले जाते हैं | इससे यह पता चलता है कि राजधानी में भी महिला एवं बुजुर्ग कितने असुरक्षित हैं तथा उनके कमजोर एवं लचर होने का फायदा किस तरह उठाया जाता है ? यदि आरण्या जैसी सशक्त बुजुर्ग महिला विरोध करने की कोशिश करती तो उन्हें डरा-धमकाकर चुप करा दिया जाता है | इससे यह सहज अंदाजा लग सकता है कि शहरों में वृद्ध किस तरह डरकर जीवनयापन करते हैं | काशीनाथ सिंह के '*रेहन पर रग्घू*' उपन्यास में रग्घू के दोनों बेटे उनसे दूर रहते हैं | एक तो नौकरी के कारण विदेश में और दूसरा बेरोजगारी के कारण दूसरे शहर में रहता है | उनके दोनों बेटों का उनके प्रति किसी तरह का लगाव नहीं है | रघुनाथ का भतीजा उसकी जमीन हथियाना चाहता था | उसके भतीजे नरेश ने दो लोगों को जमीन के कागजात पर दस्तखत करवाने को भेजा |

> "सर, इस पर सिग्नेचर कर दीजिए ! एक ने एक कागज़ बढ़ाया जिस पर पहले से कुछ लिखा था | रघुनाथ ने चश्मा लगा कर पढ़ना शुरू ही किया था कि दूसरे ने छीन लिया –"हमसे पूछिए न ! हम बता देंगे | पहले सिग्नेचर करो |" रघुनाथ ने उसे घूर कर देखा | उसने रिवाल्वर निकाल कर दरी पर उनके आगे रख दी ! "कितना दिया नरेश ने ? अस्सी हजार ? एक लाख ? इससे ज्यादा कीमत तो नहीं है जमीन की ? पूछा रघुनाथ ने | "सिग्नेचर करते हो कि नहीं ?" (सिंह 162)

यहाँ रघुनाथ पर उसके अपने ही भतीजे से ही जमीन-जायदाद के लिए असुरक्षा उत्पन्न हो जाती है | उसके खुद के बेटों की इस बात पर की कोई परवाह नहीं दिखाई पड़ती | वृद्धावस्था में व्यक्ति जब असहाय और अकेला हो जाता तब वह खुद को असुरक्षित समझने लगता है | हृदयेश के उपन्यास '*चार दरवेश*' में बदमाशों द्वारा पैसों के लिए वृद्ध चिंताहरण का अपहरण किया जाता है | अपहरणकर्ता जब पैसों के लिए उनके घर पर फोन करते हैं | चिंताहरण का बेटा रघुनाथ फोन उठाता है –

> "हैलो करते हुए रघुनाथ ने पूछा, "पापा, आप कहाँ हैं ? उधर से जवाब आया, "पापा नहीं, पापा का पापा बोल रहा हूँ | तुम्हारे पापा हमारे कब्जे में हैं | पापा की सही-सलामत छूडौती चाहते हो तो एक करोड़ रूपये का चौबीस घंटे के अंदर इंतजाम कर लो | चौबीस घंटे से पहले बता दिया जाएगा कि कहाँ और कैसे यह रकम पहुँचाई जाए |"(हृदयेश 169)

यहाँ देख सकते है अपराधी मानसिकता के लोगों द्वारा वृद्धों का पैसों के लिए अपहरण करना उनकी सामाजिक असुरक्षा को दिखाता है | इसके साथ ही उनके बच्चों द्वारा अपने बाप को छुड़ाने हेतु ज्यादा प्रयास न करना दिखाई देता है | चिंताहरण की पत्नी अपने सारे गहने और चूड़ियों को बेचने की बात करती है तब उनके बेटे रघुनाथ का उत्तर होता है –"मम्मी, बदमाशों की हजारों की नहीं लाखों की माँग है |" (हृदयेश 171) लेकिन दस साल पहले जब रघुनाथ के बेटे का अपहरण हुआ था | तब रघुनाथ अपने पिता चिंताहरण से बिना सलाह मशविरा किए अपहरणकर्ताओं की मांगी हुई रकम देकर अतुल को छुड़वा लेता है | "रघुनाथ ने इतनी जल्द इतनी बड़ी राशि का प्रबंध चुपचाप कर लिया, चिंताहरण को आश्चर्य हुआ था | बेटे ने प्रबंध के सम्बन्ध में उनसे कोई सलाह-मशविरा नहीं किया था |...एक ही घर में रहते हुए भी बेटा उनसे दूरी बनाये रखता था |" (हृदयेश 33) इसके विपरीत जब बदमाशों द्वारा उनके पिता चिंताहरण का अपहरण किया जाता है तब रघुनाथ अपने पिता के लिए कुछ भी करने के लिए तैयार नहीं है | उसके लिए अपने बाप का कोई महत्व नहीं है | वर्तमान में वृद्धों की पारिवारिक और सामाजिक असुरक्षा सबसे बड़ा चिंता का विषय है | आए दिन ऐसी घटनाएँ प्रकाश में आती रहती है | जब वृद्धों के विरुद्ध अपराधियों या उनके नजदीकियों द्वारा धन-संपदा के लालच में आपराधिक कृत्यों को अंजाम दिया जाता है | एस. आर. हरनोट के '*दारोश*' कहानी संग्रह में संकलित कहानी '*कागभाखा*' में परधान ने वृद्ध मंगलू का खून कर दिया और गाँव वालों को यह विश्वास दिला देता है कि उसकी मौत पेड़ से गिरने के कारण हुई है |

> "मंगलू अधेड़ उम्र का था | उसका एक बेटा था | जो शहर डाकखाने में नौकर था | मंगलू घर में अकेला रहता | उसके पास जमीन काफी थी | परधान कई दिनों से कुछ जमीन मांग रहा था लेकिन मंगलू राजी नहीं हुआ | इसलिए परधान ने जमीन के कागजातों पर जबरदस्ती उसका अंगूठा लगवाकर उसे मार दिया |" (हरनोट 56)

दादी ने परधान को अधेड़ मंगलू का खून करते देख लिया था | गाँव में किसी कि हिम्मत नहीं जो प्रधान के विरुद्ध आवाज उठा सके | दादी ने सारी बात उसके बेटे को बता दी | बात थाने तक गई | दादी को प्रधान के विरुद्ध आवाज उठाने की सजा मिलती है, उसे घर के अंदर जिन्दा जलाने से | प्रधान दादी के घर में आग लगा देता है | दादी किसी तरह जान बचाकर दोघरी अपने बेटे के घर पहुँचती है | दरवाजा खड़खड़ाया |

> " कौन है इस वक्त ? "मैं हूं बहू, मैं | जल्दी से दरवाजा खोलो बहू |" बहू पहचान गई | उसकी सास, जिससे वह नफरत करती है | आवाज सुनकर बच्चे भी उठ गए | बड़ी लड़की ने पूछा, "अम्मा कौन है ? दरवाजा खोलूं ?" "नहीं ..नहीं मत खोलना | वह डायन है |" दादी ने सुना तो भीतर तक टूट गयी | पता नहीं कितनी देर दरवाजे के पास अँधेरे में रोती रही |" (हरनोट 59,60)

वृद्धों की सामाजिक सुरक्षा एक चिंतनीय बिंदु है जिसकी ओर समाज और सरकार को पर्याप्त ध्यान देकर कोई ठोस पहल करनी होगी | वृद्धजन उम्र के अंतिम क्षणों में खुद को असुरक्षित महसूस करते हैं | वृद्धों के प्रति असुरक्षा का चित्रण कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी 'तोर जवानी सलामत रहे' में पोते लल्लन के मन जो दादी को लेकर नफरत थी उसका वर्णन किया गया है | कहानी का प्रमुख पात्र लल्लन अपनी दादी (सावित्री) को घर में अकेला देख बोला –

> "ये क्या घास-पात बना रही हो | लो ये मछलियाँ, इन्हें बनाओ | सावित्री उठकर जाने लगी तो लल्लन ने उस बूढ़ी को दबोच उसके मुंह में मछली ठूंस दी | ये लो यही खाओ | सावित्री ने हाथ-पैर मारे व मछली मुँह से उलट दी | लल्ला छोड़ दे मैं ना खाऊँ ये | नहीं छोड़ूंगा | तुम वापस जाओ हमें व माँ को सुख से रहने दो | तुम्हें छोटेपन में मैंने रात-रात जागकर पाला है ललुआ | तो कौन सा अहसान किया है | मेरे खेतों से तो अभी भी गेहूँ, चना आता है | तो तुम महीने-भर चरती भी तो हो | मुझे चुपचाप पड़ा रहने दे ललुआ | कभी तुम अच्छी नहीं लगतीं | ये तुम्हारी सिकुड़ी खाल, हिलता व घसीटता शरीर, अच्छा नहीं लगता, अब तुम रात में बहुत खाँसती भी हो |" (अग्निहोत्री 39)

वृद्ध कहीं अपने परिवार के लोगों से ही असुरक्षित रहते हैं | यहाँ अपने पोते लल्लन के इस अमानवीय व्यवहार से सावित्री को अपनी असुरक्षा को लेकर भय उत्पन्न हुआ, डरती घर के एक कोने में बैठ गई | एक दिन अपनी माँ की अनुपस्थिति में लल्लन अपनी दादी को अँधेरे में सुनसान सड़क पर छोड़ आता है –

> "लल्लन ने सावित्री का हाथ पकड़ा और पीछे-पीछे ले जाकर सूनसान सड़क पर छोड़ भाग आया | अँधेरे में थकी माँदी बुढ़िया कभी एक पेड़ छूती तो कभी दूसरा और चिल्लाती, बेटा लल्लन ईश्वर तेरी जवानी सलामत रखे, मुझे घर ले चल | गाढ़ा अँधेरा, गुप-चुप, सावित्री धीरे-धीरे गाँव के नुक्कड़ में पहुँच थकी बैठ कलपने लगी | गोपाल के बापू मुझे भी साथ ले जाते | कुत्ते भौंक रहे थे | राहगीर एक बूढ़ी के विलाप को नकार चले जा रहे थे | ठण्ड में सिकुड़ती एक बूढ़ी जो जीवन भर संस्कारों की जमीं पर लेटी रही, बूढ़े होने की सजा भोग रही थी, वहाँ कभी आसमान तो कभी आस-आस घूरती शेष जिन्दगी को सहारा देने वाला खोज रही थी |" (अग्निहोत्री 40)

समाज में वृद्धों की असुरक्षा के अलग-अलग पहलू है | कहीं पारिवारिक, कहीं सामाजिक तो कहीं आर्थिक असुरक्षा का डर वृद्धों को हमेशा सताता रहता हैं | वृद्धजन समाज का एक महत्वपूर्ण हिस्सा होते हैं, लेकिन आधुनिक जीवनशैली, परिवार संरचना में बदलाव और समाज में उनकी घटती भूमिका के कारण वे असुरक्षित महसूस करते हैं | वृद्धावस्था में सामाजिक असुरक्षा एक ऐसी वास्तविकता है, जो केवल सामाजिक नहीं, आर्थिक नहीं, भावनात्मक, मानसिक और सांस्कृतिक स्तर पर भी दिखाई देती है | हिंदी कथा साहित्य इस विषय को केवल संवेदना के स्तर पर नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना के औजार के रूप में प्रस्तुत करता है, जो समाज को आत्मचिंतन की प्रेरणा देता है |

3.3.5 वैधव्यजनित समस्या

वृद्धावस्था में जीवनसाथी की मृत्यु के बाद उत्पन्न होने वाली समस्याएँ एक अत्यंत संवेदनशील और गहराई से जुड़ा हुआ सामाजिक विषय है | वैधव्य सामाजिक जीवन में बड़ी घटना मानी जाती है | यह एक ऐसी घटना है जो युवा हो या वृद्ध महिला हो या पुरुष किसी के जीवन में बिना चेतावनी दिए आती है | परिवार में यदि वृद्ध दंपति साथ रहते है तो समस्या थोड़ी कम होती है पर यदि दोनों में से किसी एक को अकेला रहना पड़ जाए तो जिन्दगी जीना मुश्किल हो जाता है | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में इस समस्या को भावनात्मक, सामाजिक और आर्थिक स्तरों पर बखूबी उकेरा गया है | रवीन्द्र वर्मा के उपन्यास 'पत्थर ऊपर पानी' में रामचंद्र और सीता देवी वृद्धावस्था में स्वयं को अकेले और असहाय महसूस करते हैं | पत्नी शांति के स्वर्गवास के बाद रामचन्द्र का जीवन वीरान हो गया था | जीवन के अंतिम पड़ाव में साथी की कमी सबसे अधिक महसूस होती है –

> "शांति घर में न रही तो घर अकेला हो गया | अब रामचंद्र की दिनचर्या अकेली थी, उठना अकेला था, चाय अकेली थी, घूमना अकेला था, खाना अकेला था, कहीं जाना अकेला था, कहीं से लौट कर आना अकेला था, सोना अकेला था, जागना अकेला था |" (वर्मा 22)

कई बार जीवनसाथी की मृत्यु के बाद परिवार में वृद्ध व्यक्ति की भूमिका सीमित हो जाती है | वृद्धावस्था में जीवनसाथी की मृत्यु व्यक्ति को आत्मिक स्तर पर तोड़ देती है | रामचन्द्र अपनी पत्नी शांति के जाने के बाद बहुत अकेला महसूस करते हैं | सीता देवी भी पति की मृत्यु के बाद बेटों द्वारा सड़क किनारे पेट्रोल पम्प पर छोड़ दी गयी थी | जब वह सीता देवी से मिलते हैं तो सीधे-साफ शब्दों में कहते हैं – "हम शादी कर लें" (वर्मा 34) सीता देवी बेटे और समाज क्या कहेंगे की चिंता करती है | रामचंद्र कहता है – "उनसे कह देना कि अब तुम्हें मुझे पेट्रोल पंप छोड़ने की जरूरत नहीं |" (वर्मा 27) यहाँ रामचंद्र की सोच आधुनिकतावादी है | वे व्यवहारिक सोच के अनुसार निर्णय लेते हैं, लेकिन सीता देवी परिवार व समाज क्या कहेगा पुरातन मान्यताओं व परम्पराओं के कारण उन्हें अपने निर्णय को फलीभूत होते देखने से वंचित कर देती है | वैधव्य के बाद वृद्ध व्यक्ति अक्सर बच्चों या परिजनों पर निर्भर हो जाते हैं | हृदयेश द्वारा रचित उपन्यास '*चार दरवेश*' में विधुर रामप्रसाद अपने ही घर में बेटी और जमाई के साथ परायों के जैसे रहने के लिए अभिशप्त थे | उनकी बेचारगी तब दिखती है जब वे रात को अकेले में अपनी मृत पत्नी से रोते हुए बातें करते हैं | कथाकार इसका बड़ा मार्मिक चित्रण करते हुए लिखते है –

> "तुम चली गयीं, मैं बहुत अकेला हो गया हूँ | मैं अपने आपको बहुत असुरक्षित महसूस करता हूँ, तुम थी तो हिम्मत बनी रहती थी | किये गये ग़लत को भी बरदाश्त कर लेता हूँ | तुमको मुझे अकेला छोड़कर नहीं जाना था |...उन्होंने पत्नी के फोटो की ओर दोनों हाथ जोड़ दिए | वह रोने लगे | समझ में नहीं आता करूँ मैं क्या ? तुम थी तो इतनी घबराहट नहीं होती थी | इतनी बेचैनी मुझे नहीं सताती थी |... तुम्हारा न होना बहुत महसूस कर रहा हूँ | तुमको मुझे छोड़ कर नहीं जाना था | हम दोनों को साथ-साथ मरना था | धीमे पड़ गए आँसू तेज हो गये | मैं बहुत परेशान हूँ | भगवान् कसम, सच कहता हूँ, मैं बहुत परेशान हूँ | पहले नहीं जानता था तुम्हारे बिना मैं इतना बेसहारा हो जाऊँगा | " (हृदयेश 120)

पति-पत्नी में से किसी एक की मृत्यु हो जाने पर उस समय जीवित रह गए व्यक्ति को जीवन का खालीपन अत्यधिक खलने लगता है और वे मन ही मन ईश्वर से मृत्यु की कामना करने लगते है | - खास करके पुरुषों के लिए रमेश चन्द्र शाह के उपन्यास '*सफेद परदे पर*' में विधुर लेखक की पीड़ा को इस प्रकार प्रकट किया गया है | बेटा-बहू से अलग होकर वृद्ध लेखक सोचता है –

> "तू ही जिम्मेदार है मेरी इस दुर्दशा के लिए जाह्नवी | जल्दी क्या थी तुझे ! अरे लड़ते-झगड़ते भी जब हमने तीस बरस काट ही लिए थे तो पांच-दस बरस और काट लेते | कोई दिन ऐसा नहीं जाता – जबसे तू गई है -जब कोई-कोई चीज, कोई न कोई घटना मुझे तेरी याद नहीं दिला देती | मन ही मन देखती नहीं तू अब भी झगड़ता रहता हूँ तुझसे | बिना वजह आपसे आप चलती रहती है एक अंतहीन जिरह, जिसका कभी कोई फैसला नहीं हो |....शिकायतें तो थी वो सबकी सब तुझी से थीं या फिर तुझी से की जा सकती थीं | अब किससे करूँ शिकायत ? आदत तो आदत है | तुझ पर खीजने-झल्लाने के लिए तेरा सामने होना क्यों जरूरी है ?" (शाह 16)

लम्बे समय तक साथ रहने के बाद जीवनसाथी की मृत्यु व्यक्ति को भावनात्मक रूप से कमजोर और अकेला कर देती है | जीवनसाथी के बिना जीने की भावना, निराशा और उदासी अकेला कर देती है | उपन्यास '*सफेद परदे*' में भी विधुर कथा नायक के वैधव्य जीवन के मार्मिक पक्ष को दिखाया है | उसकी पत्नी साथ छोड़ चुकी है | भारतीय पुरुष अपनी पत्नी पर बहुत ज्यादा अवलंबित रहता है ऐसे में उसका न रहना भी कहीं न कहीं मन को आहत तो करता ही है | मानसिकता पर भी इसका प्रभाव पड़ता है | यह दर्द उनके संवादों में भी दिखाई पड़ता है –

> "मेरी पत्नी के रहते हमारे घर में ऐसी अराजकता तो ना थी...अब किसी को क्या फर्क पड़ता है, मेरी खीज से ? उसको पढ़ता था | उसके लिए मेरी झुँझलाहट भी कोई मतलब रखती थी | वह मतलब उसी के साथ चला गया | अब में अपने सिवा और किस पर झुँझलाऊं ? (शाह 10)

अतीत की यादों में खोए रहना मानसिक तनाव को बढ़ा सकता है | एक वृद्ध विधुर का दर्द यहाँ स्पष्ट दिखाई दे रहा है | उम्र के इस पड़ाव में जीवन साथी का साथ न होना बहुत दुखदायी लगता है | उम्र के इस पड़ाव में जीवनसाथी की सबसे ज्यादा आवश्यकता होती है | कुछ वृद्ध वैधव्य के कारण भावनात्मक रूप से अलग-थलग कर दिए जाते हैं | कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी '*मैं जिन्दा हूँ*' में रागिनी नामक वृद्ध स्त्री पात्र की कहानी है | जिसके पास सब कुछ होते हुए भी अकेलेपन का जीवन जी रही थी | पति की मृत्यु के बाद उसके बेटे-बहू उसे किस तरह प्रताड़ित करते है इसका जीवंत चित्रण लेखिका ने किया है –

> "तेरह दिन बाद ही राग को उनके टूटे-फूटे सामान सहित सबसे छोटे कमरे में शिफ्ट कर दिया गया | बहू आहिस्ते से बड़बड़ाई , "निक्कमी, निठल्ली यहीं रहो हमें जीने दो |" तेज छुरी से कटने की व्यथा सहकर भी मासूमियत से बहू के सर पर हाथ रख राग बोली, "यहाँ ? क्यों ?" "पड़ी रहो चुपचाप | बूढ़ी तो हो ही उस पर आधी पागल |"...तुम्हारी जैसी अभागी के साथ जो होना था वो हो गया | तुम्हारे माता-पिता तीर्थयात्रा के दौरान केदारनाथ में दफन हो गए |"...एक दिन

> पोते ने यह कहकर उसे हतप्रभ किया कि “दादू की जगह आपको मरना था | दादू तो मुझे नयी-नयी चाकलेट देते थे | (अग्निहोत्री 31)

यदि जीवनसाथी परिवार के वित्तीय मामलों का प्रबंधन करता था, तो उसकी मृत्यु के बाद आर्थिक असुरक्षा हो सकती है | वृद्धावस्था में अधिकांश महिलाएँ सामाजिक और आर्थिक रूप से अवांछित जीवन जीने को बाध्य हो जाती हैं | उनको सम्मान देना तो दूर की बात उन्हें बोझ समझा जाने लगता है | वृद्ध महिलाओं की स्थिति इसलिए और भी दयनीय हो जाती है, कि उनके पास कोई भी जमा पूंजी नहीं होती जिससे वे अपना जीवनयापन कर सकें | यहाँ यह दिखाया गया है कि जैसे किसी वृद्ध स्त्री का पति मर जाता है परिवार के सदस्य किस तरह उसे ही दोषी मानकर उसे प्रताड़ित करते है | विधवा बूढ़ी को घर के केंद्र से हटाकर परिधि में रख दिया जाता है | जब आशीष और उसकी पत्नी को पता चलता है जायदाद का बड़ा हिस्सा माँ के नाम है | एक शाम जब उनकी छोटी बेटी आती है और माँ की हालत को रद्दी की तरह देखा तो माँ से कहती है –

> “तुम्हें पता नहीं कि पिता जी की पेंशन तीस हजार जमा होती है | नानी-नाना यानी तुम्हारे माँ-बाप ने तुम्हारे नाम पचास लाख जमा कर दिए है ... तुम्हें ही तुम्हारे घर कबाड़ा बना दिया गया और तुम टुकड़ों पर खुश होती हो | ...जैसे ही उन्हें पता लगा कि रागिनी के नाम उनकी जायदाद का बड़ा हिस्सा है और शेष ट्रस्ट में चला गया, वैसे ही उन्होंने राग के लिए एक अलग से नौकरानी लगा अपने कर्तव्य का पालन किया | उन्हें यह भी पता था कि मनीष की पे पर राग का अधिकार है | वर्ष बीता कि आशीष व मीना कार में राग को बैठा बैंक ले गए और उसने वहाँ *‘मैं जिन्दा हूँ’* का आवेदन पत्र जमा किया |...बस पहली तारीख को रूखे अंदाज से चैकबुक पर साइन करवा कुछ विशेष खाने को दे जाता | राग पहली तारीख को प्रसन्न हो साइन करके अच्छे भोजन पाने की प्रतीक्षा में व्याकुल रहती |” (अग्निहोत्री 31, 32)

पति की मृत्यु के बाद कई महिलाओं को पेंशन, सम्पत्ति या आर्थिक अधिकारों के लिए संघर्ष करना पड़ता है | आशीष अपनी वृद्ध विधवा माँ रागिनी के प्रति अपने कर्तव्य को भूलता जा रहा था | वह केवल जायदाद का बड़ा हिस्सा मिलने की लालसा रखता है | इसलिए जब पेंशन के लिए साइन कराने चेक लेकर माँ के पास जाता तो कुछ स्वादिष्ट भोजन उन्हें दे देता था | रागिनी पति के मरने के बाद अपने ही पैसे और धन-संपत्ति होने के बावजूद अपने परिवार के लोगों से अच्छा खाना और पहनने के लिए भिक्षुक की तरह तरसती है | कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी *‘बदमिजाज’* में विधवा वृद्ध हेमवती की स्थिति पति की मृत्यु के बाद बदल जाती है | “पति के जाते ही बहू-बेटे ने उनसे उनकी काँच की बड़ी अलमारी बेशर्मी से माँग ली | उनकी भौंहें तनी तो बहू ने स्पष्ट सुना दिया, “बड़ी बदमिजाज है, बुढ़ापे में भी बढ़िया फर्नीचर की इच्छा बनी ही रही | (अग्निहोत्री 61) पति के होते परिवार में अहम भूमिका निभाने वाली विधवा हेमा अब बहू-बेटे के सामने दबी सी रहने लगी | बहू दुकान अपने नाम करवाने के लिए कहती है –

> “अब आज दुकानों के कागज तैयार हो गये हैं...तुम उन्हें मेरे नाम कर दो |” क्यों मेरे नाम से हैं तो कुछ कष्ट है क्या ?” हेमा सख्त थीं | “हाँ है, मैं क्यों जाकर किराया वसूलूँ, टैक्स भरूँ और मरम्मत करवाऊँ, तुम्हीं यह सब भी करो न | “किराया तो घर में ही खर्च होता है न ?” हेमा ने बल लगाकर गले से भराई आवाज निकाली | “तो क्या तुम व तुम्हारी बेटियाँ घर

> में नहीं रहतीं |" प्रताप की लाल सुर्ख बड़ी आँखें व चेहरे पर तमतमाता क्रोध देख हेमा काँप गई | दूसरे दिन दुकानें चुपचाप प्रताप के नाम कर दीं |" (अग्निहोत्री 68)

जब तक महिला का पति जीवित रहता है उसे अपने घर में पूरे अधिकार प्राप्त होते हैं जैसे ही पति की मृत्यु हो जाती है वैसे ही महिला अपने ही घर में सारे अधिकार खो देती है और समाज की संकीर्ण मानसिकता उन्हें पुनः सामाजिक जीवन में स्थान नहीं देती | उसे घर के किसी कोने में रख दिया जाता है | पति के न होने से उसे अपनी वृद्धावस्था में आर्थिक समस्याओं का भी सामना करना पड़ता है | जीवनसाथी की मृत्यु के बाद आय का एक प्रमुख स्रोत भी समाप्त हो जाता है | वृद्धावस्था में जीवनसाथी की मृत्यु एक कठिन अनुभव है, लेकिन सही देखभाल, भावनात्मक समर्थन और समाज के सहयोग से इसे सहन किया जा सकता है | इस स्थिति में परिवार और समाज का दायित्व है कि वे वृद्ध व्यक्ति को सम्मान, स्नेह और सुरक्षा का एहसास कराएं, ताकि वे अपने जीवन के इस चरण को सकारात्मकता के साथ व्यतीत कर सकें |

3.3.6 नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी में वैचारिक मतभेद

21वीं सदी में परिवार व समाज में दो पीढ़ियों की जीवन शैली एवं आचार-व्यवहार में अंतर देखने को मिलता है | पुरानी पीढ़ी थोड़ी परम्परागत है और नई पीढ़ी शिक्षित होने के साथ आधुनिक रहन-सहन के साथ स्वतंत्रता की समर्थक हैं | आज दो पीढ़ियों के बीच वैचारिक मतभेद इतना बढ़ गया है कि दोनों पीढ़ियों के बीच मनमुटाव की स्थिति उत्पन्न हो गई है | एक तरफ वृद्ध तो दूसरी तरफ युवा पीढ़ी दोनों एक दूसरे के विपरीत होते हैं | दोनों अपनी जीवन शैली के हिसाब से जीवन जीना चाहते हैं | यह भी मतभेद व असामंजस्य की स्थिति का कारण बनती है, जो आज के समय की ज्वलंत समस्या बन गई है | ममता कालिया के 'दौड़' उपन्यास में पवन की माँ उसकी पत्नी स्टैला को रसोई की कुछ जानकारी देना चाहती है, मगर पवन अपनी माँ को डांटता हुआ कहता है -

> "तुम्हें चाहिए कि स्टैला के लिए जीवन भट्टी ना बने जो तुमने सहा वह क्यों सहे ? रेखा ने कहा, "यह दाल रोटी तो बनानी सीख ले |" पवन ने जवाब दिया "खाना बनाने वाला पाँच सौ रुपए में मिल जायेगा माँ, इसे बावर्ची थोड़ी बनाना है |" "और मैं जो सारी उम्र तुम लोगों की बावर्ची, धोबिन, जमादारिन बनी रही वह ?" "गलत किया आपने और पापा ने | आप चाहती है वही गलतियाँ मैं करूँ | जो गुण है इस लड़की के उन्हें देखो | कम्प्यूटर विजर्ड है यह इसके पास बिल गेट्स के हस्ताक्षर से चिट्ठी आती है |" "पर कुछ स्त्रियोचित गुण भी तो पैदा करने होंगे इसे |" "अरे माँ आज के जमाने में स्त्री और पुरुष का उचित अलग-अलग नहीं रहा है | आप तो पढ़ी लिखी हो माँ, समय की दस्तक पहचानो | इक्कीसवीं सदी में ये सड़े-गले विचार लेकर नहीं चलना है हमें, इनका तर्पण कर डालो |"(कालिया 63)

पुरानी पीढ़ी परम्पराओं और रीति-रिवाजों को प्राथमिकता देती हैं, जबकि नई पीढ़ी स्वतंत्रता और प्रगतिशील सोच पर जोर देती है | यहाँ नई पीढ़ी का सामान्य बात पर भी विरोधी रूप सामने दिखाई देता है | वहीं पुरानी पीढ़ी का मानना है कि घर में बहू को रसोई का थोड़ा -बहुत काम आना चाहिए | पवन नई पीढ़ी का युवा है और उसके माता-पिता पुरानी सभ्यता के समर्थक हैं | इसी कारण दो

संस्कृतियाँ टकरा रही हैं | पवन के पिता इस बात को लेकर परेशान और उखड़े हुए थे कि शादी के तुरंत बाद पवन और स्टैला एक दूसरे के साथ नहीं रहेंगे बल्कि एक-दूसरे से तीन हजार किलो मीटर दूर रहेंगे | राकेश और रेखा पवन को शादी की जिम्मेदारियों को लेकर समझाने की कोशिश करते हैं | वे उससे कहते हैं तुम अपने फायदे के लिए अपनी पुरानी कंपनी और पत्नी को अनजान शहर में अकेले छोड़ दोगे | पवन का मानना है कि वह कंपनी अब उसके लायक नहीं रही है | स्टैला और पवन दोनों अपने-अपने करियर को लेकर इतने व्यस्त है कि दोनों के पास इन्टरनेट और फोन पर भी बात करने की फुर्सत नहीं | इस बात पर राकेश कहता है –फेंक

> "यानी सेटेलाइट और इंटरनेट से तुम लोगों का दाम्पत्य चलेगा ?" "यस पापा |" मैं तुम्हारी प्लानिंग से जरा भी खुश नहीं हूँ पुन्नू | एक अच्छी भली लड़की को अपना जीवन साथी बनाकर कुछ जिम्मेदारियों से सीखो | और बेचारी जी.जी.सी.एल. ने तुम्हें इतने वर्षों में काम सिखाकर काबिल बनाया है | कल तक तुम इसके गुण गाते नहीं थकते थे | तुम्हारी एथिक्स को क्या होता जा रहा है ?" पवन चिढ़ गया, "मेरे हर काम में आप यह क्या एथिक्स, मोरेलिटी जैसे भारी-भरकम पत्थर मारते रहते हैं | मैं जिस दुनिया मैं हूँ वहाँ एथिक्स नहीं, प्रोफेशनल एथिक्स की जरूरत है | चीजों को नई नजर से देखना सीखिए नहीं तो आप पुराने अखबार की तरह रद्दी की टोकरी में फेंक दिए जाएंगे | आप जेनरेशन गैप पैदा करने की कोशिश कर रहे हैं | इससे क्या होगा, आप ही दुखी रहेंगे |"(कालिया 65,66)

यहाँ देख सकते हैं माता-पिता अगर बच्चों के जीवन में दखल देने की कोशिश करते हैं तो बच्चे उन्हें अपनी जिंदगी अपने हिसाब से जीने की बात करते हैं | माँ-बाप जिन्होंने अपनी संतानों को इस काबिल बनाया आज वही बच्चे अपने जीवन में उन माँ-बाप की दखल उन्हें पसंद नहीं | पवन अपने पिता का विरोध करते हुए कहता है- "हर पुरानी चीज आपको श्रेष्ठ लगती है, यह आपकी दृष्टि का दोष हैं | फ़ेंक दीजिए अपना टी.वी. सेट, टेलीफोन और कुकिंग गैस | आप नयी चीजों का फायदा भी लुटते हैं और उनकी आलोचना भी करते है | (कालिया 45) पीढ़ी का अंतराल अपने पारिवारिक परम्परा व्यक्तिगत मूल्यों को खोती जा रही है | इस उपन्यास में जहाँ दो पीढ़ियों के बीच 'जनरेशन गैप' दिखाया गया है | वही आज की इस युवा पीढ़ी की संवेदनशून्यता, बेबाकपन, सहनशीलता, अहं तथा उस पर पाश्चात्य संस्कृति के प्रभावों को भी उभारा है | पाश्चात्य शिक्षा पद्धति व सभ्यता, अर्थ प्रधान समाज तथा अनेक प्रकार के सामाजिक कारणों के परिणामस्वरूप संघर्ष बढ़ता जा रहा है | पीढ़ी गत द्वंद्व का संकेत काशीनाथ सिंह के '*रेहन पर रग्घू*' उपन्यास में शीला और सोनल के आपसी संबंधों में भी देखा जा सकता है | शीला अपनी बहू सोनल के घर अशोक विहार में रहती है | शीला रात का बचा खाना नौकरानी गीता को दे देती है जो सोनल को अच्छा नहीं लगता | शीला ग्रामीण संस्कारों एवं परम्परागत मान्यताओं को मानने वाली स्त्री है जिसमें ममता, सहानुभूति और दया का भाव भरा हुआ है | सोनल एक आधुनिक मान्यताओं व सोच वाली स्त्री है जो हर चीज को व्यावसायिक दृष्टिकोण से देखती है | सोनल कहती हैं – "मम्मी ..आप क्यों आदत बिगाड़ रही उसकी ?" (सिंह 120) शीला बहू के इस प्रतिक्रिया पर हैरान रह जाती है कि ऐसा कौन सा गुनाह उसने कर दिया | सिर्फ बचा-खुचा खाना ही तो दिया | वैसे भी फेंकने या कुत्ता-बिल्ली को खिलाने से अच्छा यह है किसी इंसान के काम आए | सोनल का मानना था – "कुत्ते बिल्ली को भले खिला दें, उसे न दें |" (सिंह 120) यहाँ सास-बहू के बीच वैचारिक मतभेद को देख सकते हैं | इसी तरह का मतभेद रग्घू और उनकी बेटी सरला के संबंध में नई और पुरानी पीढ़ी के बीच द्वंद्व को देखा जा सकता है | सरला

अंतरजातीय विवाह के पक्ष में है जबकि उसके पिता रघुनाथ इसका विरोध करते हैं | सुदेश भारती से अंतरजातीय विवाह के लिए रघुनाथ से कहती हैं – “किसी सुदेश भारती की याद है आपको ?”...उसके साथ मेरी शादी करेंगे आप ?”(सिंह 52) रघुनाथ और उसकी पत्नी शीला यह सुनकर दुखी हो जाते हैं कि उनकी बेटी किसी निम्न जाति के लड़के से शादी करना चाहती है | इस पर रघुनाथ क्रोधित होकर कहता है – “अपना थोबड़ा मत दिखाना | यह याद रखो !” रघुनाथ खड़े हो गए – “अब जाओ यहाँ से ! कोई जरूरत नहीं तुम्हारी ! मर गए माँ बाप !” (सिंह 53) ‘*रेहन पर रग्घू*’ उपन्यास में रघुनाथ और उनकी बेटी सरला के बीच शादी को लेकर वैचारिक मतभेद देखने को मिलता है | सरला अपने पिता से कहती हैं –

> “आप दूसरों की शर्तों पर शादी कर रहे थे, यहाँ में करूँगी लेकिन अपनी शर्तों पर; आप मेरी स्वाधीनता दूसरे के हाथ बेच रहे थे, यहाँ मेरी ;स्वाधीनता’ सुरक्षित है; आप अतीत और ‘वर्तमान’ से आगे नहीं देख रहे थे, हाँ मैं, ‘भविष्य’ देख रही हूँ जहाँ ‘स्पेस’ ही ‘स्पेस’ है | स्पेस ही स्पेस, हूंह ! स्पेस माने क्या ? ‘आरक्षण’ और ‘कोटा’ के सिवा भी, इसका कोई मतलब है ? ...तुम्हीं कहती थी एकदम गधा है, कुछ नहीं समझता | आज पी.सी.एस. हो गया तो उस जैसा कोई नहीं ?” (सिंह 44)

नई पीढ़ी व्यक्तिगत स्वतंत्रता को प्राथमिकता देती है, जबकि पुरानी पीढ़ी अनुशासन और सामूहिकता में विश्वास करती है | यहाँ रघुनाथ को बेटी की शादी से कोई आपत्ति नहीं है बल्कि जिससे शादी कर रही है उसकी जाति को लेकर है | समाज में लोग क्या कहेंगे की चमार से शादी की है | समाज और वृद्धों की जाति को लेकर रूढ़िवादी सोच के कारण नई पीढ़ी के साथ वैचारिक मतभेद का सामना करना पड़ता है | यहाँ देख सकते है कि माँ-बाप और बच्चों के बीच पीढ़ी गत अंतर के कारण वैचारिक मतभेद बढ़ता है | एक तरफ माता-पिता पारंपरिक सोच रखते हैं, जबकि बच्चे आधुनिक विचारों के होते हैं | नई पीढ़ी स्वतंत्रता चाहती है और पुरानी पीढ़ी नियंत्रण रखना चाहते हैं | राकेश वत्स के उपन्यास ‘*फिर लौटते हुए*’ में बाप और बेटे के बीच कभी छह-छह महीने संवाद नहीं होता है | वृद्ध पात्र लक्ष्मी अपने पति दिवाकर शर्मा और बेटे बलबीर के बीच रिश्ते को उजागर करती हुई कहती है – “बलबीर के सुभा तू जानता ही है, छे-छे महीने इन दोनों की आपस बिच्च बात नहीं होती | वहाँ ये हर बखत तनाव बिच्च रहते हैं |”(वत्स 31) माँ-बाप और बच्चों के बीच मतभेद व दूरियों को सही संवाद, परस्पर सम्मान और समय देने से कम किया जा सकता है | कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी ‘उसका इतिहास’ में वृद्ध मानवी और उसके पोता-पोती दोनों में पीढ़ीगत अंतराल देखने को मिलता है | मानवी जब अपनी बहू सुधा और पोती वैशाली को बड़े उमंग और उत्साह के साथ सूट खरीदती है | दोनों ने जब सूट देखे तो वे सूट को ऐसे देख और छू रही थी मानो कोई रद्दी वस्तु छू रही हो | मानवी की पोती विशाखा कहती है –

> “दादी ये आपने किस फुटपाथ से खरीदे हैं ? ऐसे अफलातून कपड़े तो आजकल बाइयाँ भी नहीं पहनती |” “क्या कह रही हो ? मैंने तो ग्लोबस से ख़रीदे हैं पूरे एक हजार में |” “माँ आपसे किसने कहा कि बेकार की सस्ती-पस्ती चीजें हमारे सिर मढ़ें | देना है तो कुछ अच्छा ही दें |” “और क्या आप जैसे ओल्ड ट्रैडिशन के तो हैं नहीं, आप तो हमें पाँच-पाँच हजार कैश दे दिया करें | इन्हें अपने ही पास रखें, सौ रुपये की चीज के हजार बताती हैं | मैंने हाल ही में टॉप एवं फ्लेयर देखा है, वही खरीदूंगी |” (अग्निहोत्री 48)

नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी के बीच वैचारिक मतभेद स्वाभाविक हैं, यदि दोनों पीढ़ियां एक-दूसरे की भावनाओं, मूल्यों और विचारों को समझने का प्रयास करें तो यह मतभेद सहयोग और आपसी सम्मान में बदल सकता है | अंत: 21वीं सदी का हिंदी कथा साहित्य सामाजिक यथार्थ का दर्पण बनकर उभरा है, जिसमें वृद्धों की समस्याओं को विशेष रूप से स्थान मिला है | यह साहित्य न केवल वृद्धावस्था की जैविक अवस्था को दर्शाता है, बल्कि बदलते पारिवारिक व्यवस्था, सामाजिक ढांचे और मूल्यों के क्षरण को भी उजागर करता है |

3.4 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की आर्थिक समस्याएं; -

वृद्धों के जीवन में आर्थिक पक्ष भी बेहद महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है | व्यक्ति अपना संपूर्ण यौवन निवेशित करके भी अपने वृद्धावस्था को सुखमय और शांतिमय बनाने में असफल हो जाता है | वह अपनी पूरी जवानी धन कमाने, अपने पारिवारिक जीवन की जिम्मेदारियों को पूरा करने में लगा देता है | जिन वृद्धों के पास धन-संपदा और आय के स्रोत होते हैं उनका बुढ़ापा अलग तरह का होता है | उन्हें अपने बुढ़ापे में आर्थिक कष्ट ज्यादा नहीं उठाने पड़ते हैं | लेकिन जिनके पास धन-संपत्ति और जमीन-जायदाद नहीं होती है उनकी स्थिति दया जनक होती है | बिना धन के बुढ़ापा बड़ा ही अपमानजनक एवं कष्टदायक होता है | 21वीं सदी का हिंदी कथा साहित्य वृद्धों की आर्थिक समस्याओं को समाज के समक्ष एक गंभीर मुद्दे के रूप में प्रस्तुत करता है |

3.4.1 वृद्धावस्था में आर्थिक असुरक्षा

वृद्धावस्था में व्यक्ति के पास आमतौर पर आय के सीमित स्रोत होते हैं और स्वास्थ्य, सामाजिक व भावनात्मक जरूरतें बढ़ जाती हैं | वृद्धावस्था के लिए जिन वृद्धों ने कुछ बचत नहीं की होती है तो उन्हें आर्थिक असुरक्षा का एहसास और अधिक होने लगता है | आर्थिक स्थिति दयनीय होने से वृद्धों का परिवार से नियंत्रण का खो जाना, सत्ता का चले जाना, उनके मूल्यों की अवहेलना आदि उनके लिए दुखदायी होता है | ममता कालिया के 'दौड़' उपन्यास में राकेश अपने छोटे बेटे को सिंगापूर से घर आने को कहते हैं तो सघन कहता है मैं एक ही शर्त पर घर आऊंगा अगर मुझे अपना काम करने के लिए तीस-चालीस लाख रुपये की जरूरत होगी | "राकेश गड़बड़ा गए | तुम्हें पता है घर का हाल | जितना कमाते है उतना खर्च कर देते हैं | सारा पोंछ-पाँछकर निकालें तो भी एक डेढ़ से ज्यादा नहीं होगा |" (कालिया 85) पारिवारिक आय कम होने से परिवार के लोग बुजुर्गों को प्रायः भार स्वरूप देखने लगते है | नई पीढ़ी के लोग वृद्ध को बेकार, रुढ़िग्रस्त और अनावश्यक हस्तक्षेप करने वाला समझते हैं और उनसे छुटकारा पाना चाहते हैं | चित्रा मुद्गल की 'गेंद' कहानी में वृद्धाश्रम में रहने वाला वृद्ध सचदेवा अपने बेटे विनय को पैसे भिजवाने के लिए पत्र लिखता है | "बड़े दिनों तक वे अपने नाम आने वाले रुपयों का इन्तजार करते रहे | गुस्से में आकर उन्होंने उसे एक और ख़त लिखा | जवाब में उसका एक और फोन आया | एक पेचीदे काम में उलझा हुआ था | इसलिए उन्हें रुपये नहीं भेज पाया |"(मुद्गल 11) यहाँ देख सकते हैं विदेश में रहने वाला बेटा विनय अपने पापा के बार-बार ख़त लिखने, फ़ोन करने के बावजूद भी उन्हें कोई आर्थिक सहायता नहीं करता | हर बार नया बहाना लगा कर पैसों को भेजना टाल देता है | इस प्रकार कई बुजुर्ग जो अकेले रहते हैं उनके बच्चे आर्थिक रूप से सहायता नहीं कर पाते | बढ़ती उम्र के साथ बीमारियाँ बढ़ती हैं, और स्वास्थ्य सेवाओं का खर्च बहुत अधिक होता है | वृद्धावस्था में आर्थिक असुरक्षा एक गंभीर सामाजिक और व्यक्तिगत समस्या है, जो बुजुर्गों के जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित करती है |

3.4.2 आर्थिक रूप से दूसरों पर निर्भरता

वृद्धावस्था में आत्मनिर्भरता परनिर्भरता में बदल जाती है | मनुष्य अपना सम्पूर्ण जीवन पारिवारिक और सामाजिक जिम्मेदारी उठाते हुए बिता देता है | वह वृद्धावस्था में भी स्वयं को सक्रिय रखकर आत्मनिर्भर बने रहने का भरसक प्रयास करता है, परन्तु बुढ़ापे में शारीरिक कमजोरी के कारण उन्हें मजबूरन दूसरों पर निर्भर रहना पड़ता है | आर्थिक रूप से सक्षम वृद्धों को दूसरों पर उतना निर्भर नहीं रहना पड़ता है परन्तु ऐसे वृद्ध जिनकी जमा पूंजी न के बराबर होती है, उन्हें दूसरों पर आश्रित रहना पड़ता है | क्योंकि प्रत्येक वृद्ध इतना सौभाग्यशाली नहीं होता कि वह जीवन के अंतिम पड़ाव तक आत्मनिर्भर बना रहे | सभी वृद्धों के लिए यह संभव नहीं कि जीवन भर की बचत और ब्याज से शेष जीवन का निर्वाह कर सके | अंत: अनेक वृद्धों को आर्थिक रूप से अपने परिजनों जैसे पुत्र, पुत्री, भाई इत्यादि पर निर्भर रहना पड़ता है | व्यक्तिगत खर्चों के लिए भी दूसरों पर निर्भर रहना पड़ता है | जिससे कई बार असहज स्थितियों का सामना करना पड़ता है | व्यक्ति का आत्म सम्मान भी दांव पर लग जाता है | कभी-कभी आत्मग्लानि होती है तथा जीवन निरर्थक लगने लगता है | दिलीप मेहरा रचित '*अग्निदाह*' कहानी में वृद्ध मनसुखलाल को अर्थाभाव का सामना करना पड़ता है | उसने अपने तीनों बच्चों को पढ़ा-लिखा कर काबिल बनाया | वृद्धावस्था में जब बूढ़े मनसुखलाल को बेटों के सहारे की आवश्यकता पड़ी तो उसके बच्चों ने दोनों माँ-बाप को अलग कर दिया | माँ को बड़े बेटे ने बाप को छोटे बेटे ने रख लिया | इस उम्र में माँ-बाप को अलग-अलग रखना बदतर जीवन के समान है | मनसुखलाल कहते हैं –

> "जब तक मेरे पास जमापूँजी थी तब तक तो मुझे कोई परेशानी नहीं थी, पर जैसे मेरे पास जमापूँजी ख़त्म हुई, दोनों लड़कों ने मुंह फेर लिया | मुझे इस उम्र में नौकर से भी बदतर जीवन जीने के लिए मजबूर किया | दाने-दाने के लिए मुझे मोहताज होना पड़ा |"(मेहरा 113)

जब कोई व्यक्ति जीवन के उत्तरार्ध में आर्थिक रूप से दूसरों पर निर्भर हो जाता है, तो उसकी स्वतंत्रता, आत्म-सम्मान और निर्णय लेने की क्षमता पर असर पड़ता है | वृद्ध व्यक्ति जब तक आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर है तभी तक उसका आदर, सम्मान होता है | अर्थाभाव आते ही वह परिवार व समाज में बोझ की दृष्टि से देखा जाने लगता है | जीवन के इस पड़ाव में वृद्धों का आत्मनिर्भर होना उनके आत्मसम्मान पूर्ण और दीर्घ जीवन के लिए वरदान होता है | चित्रा मुद्गल के '*गिलिगडु*' उपन्यास में जसवंत सिंह कानपुर छोड़कर दिल्ली अपने बेटे के साथ रहने आते हैं | आधुनिकता के इस दौर में वह परिवार के लिए बोझ बनकर रह जाते है | आर्थिक रूप से निर्भर होने पर भी कुछ वृद्ध पारिवारिक प्रेम और सहयोग के लिए तरसते दिखाई देते हैं |

3.4.3 स्वास्थ्य संबंधी निर्भरता

मनुष्य के जीवन में वृद्धावस्था एक स्वाभाविक स्थिति है | इस अवस्था से कोई भी मनुष्य बच नहीं सकता | उम्र की इस अवस्था में बुजुर्गों को स्वास्थ्य एवं उससे संबंधित समस्याओं से जूझना पड़ता है | वृद्धावस्था में मनुष्य को तरह-तरह की बीमारियाँ घेर लेती हैं | कार्य मुक्त होने के कारण अधिकतर बुजुर्गों के पास धन का अभाव होता है और बीमारियाँ बुढ़ापे की मुश्किलों का पर्याप्त कारण बन जाती हैं | विशेष तौर पर गंभीर रोग जैसे – कैंसर, दमा, टी. बी. डायबिटीज, हृदय रोग इत्यादि जिनमें अत्यधिक

व्यय होता है | यदि कोई वृद्ध आर्थिक रूप से पराधीन है तो उसके लिए रोग का निदान कर पाना असंभव हो जाता है | माँ-बाप अपने बच्चों की अच्छी परवरिश के लिए हर मुमकिन कोशिश करते हैं | बच्चों के हर सुख-दुःख में साथ खड़े रहते हैं | जरा सा बुखार लगने पर भी चिंतित हो जाते हैं | माता-पिता अपने बच्चों को किसी भी कष्ट में नहीं देख सकते | उनकी हर छोटी-बड़ी ख्वाहिशों को पूरा करते हैं | आज कैसी विडम्बना है कि बच्चे अपने माता-पिता के इलाज का खर्च नहीं उठाना चाहते हैं | रामधारी सिंह दिवाकर द्वारा रचित उपन्यास 'दाखिल खारिज' में पुत्र व पुत्र वधुओं द्वारा बीमार पिता व ससुर के शोषण का दृश्य अंकित किया गया है |

> "बाहर ले जाने में खर्च होगा न सर ! हार्ट का ऑपरेशन कराना होगा | दो-तीन लाख खर्च होंगे | फिर कुछ महीनों तक क्लिनिक बंद रहेगी | रोज-रोज होने वाली आमदनी भी गई और डॉक्टर साहब के इलाज का खर्च ऊपर से |" (दिवाकर 30)

इस कथा में डॉ. बनर्जी बिना इलाज के स्वर्ग सिधार जाते हैं तो उनकी बड़ी बहू का रोना-बिलखना ऐसा प्रतीत होता है | जैसे कि वह अपने ससुर से अत्यधिक प्रेम करती हो | डॉ. साहब बेंच पर मृत पड़े थे | दोनों बहुएँ जोर-जोर से चीखने लगी "माँ गो ! ई की होलो" (दिवाकर 33) यह सब दिखावा सिर्फ समाज के लिए था | वास्तव में किसी को डॉ. बनर्जी के मरने का शोक नहीं था बल्कि उनके निधन के बाद उनकी जरूरतों के लिए रुपये कहाँ से आते इस बात की चिंता ज्यादा थी | आज की आधुनिकता और दिखावे के कारण भरे-पूरे परिवार में वृद्ध अपने को अकेले और असहाय महसूस करते हैं | हृदयेश के '*चार दरवेश*' उपन्यास में रामप्रसाद को कुत्ते ने काट लिया लेकिन बेटी और जमाई ने उन्हें रेबीज का इंजेक्शन केवल इसलिए नहीं लगाया क्योंकि उसमें दो हजार का खर्चा होना था | जबकि रामप्रसाद के घर और धन-संपत्ति के वारिस यही बेटी और जमाई थे | रेबीज के जहर से ही रामप्रसाद की तड़प-तड़प कर मौत हो जाती है | इस तरह से देखा जाए तो वृद्धों को अपने स्वास्थ्य के लिए दूसरों पर निर्भर रहना पड़ता है | वृद्धावस्था में स्वास्थ्य समस्याओं के कारण चिकित्सा खर्च में वृद्धि होती है, जिसे वहन करना कई वृद्धों के लिए मुश्किल हो जाता है | चित्रा मुद्गल के '*गिलिगडु*' उपन्यास में बाबू जसवंत सिंह पैसे की वजह से अपने बी.पी. का समय पर चैकअप नहीं करवा पाते हैं | "अलार्म के बजते ही रक्तचाप दिखाना जरूरी है | दिखाना तो उन्हें हर पंद्रह दिन में चाहिए, लेकिन डॉक्टर अनुराग चतुर्वेदी की तगड़ी फीस इस दिशा में पहल नहीं करने देती |" (मुद्गल 55) डॉक्टर की अधिक फीस के कारण बाबू जसवंत अपना चैकअप समय पर नहीं करवा पाते | अगर किसी वृद्ध को गंभीर बीमारी है तथा जान बचने की संभावना भी कम है | तो इस अवस्था में बच्चे भी बूढ़ों पर अधिक पैसा खर्च नहीं करते हैं | अगर बीमारी गंभीर हो तो नई पीढ़ी पैसा खर्चना उचित नहीं समझते | उनकी इस सोच के कारण कई बार वृद्धों की जान चली जाती है | कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी '*उसका इतिहास*' में वृद्ध पात्र मानवी बेहोश हो जाती है तो उसे अस्पताल ले जाया गया जहाँ पता चला ब्रेन हैमरिज से बच गई लेकिन दाएं पैर व हाथ पर हल्का लकवा लग गया | तो बहू सुधा मानवी को ताना देकर कहती है –

> "अभी तो हमें आपके हॉस्पिटल का बिल पे करने का जुगाड़ करना है | "मैं कल ही चैक काट दूंगी, सुधा |" "हाँ वो तो करना ही चाहिए पर पहले ही हमें अपना फिक्स्ड तोड़ना पड़ा है | उसका ब्याज ही समाप्त हो गया | मानवी के हृदय में गोली-पर-गोली लगने से न जाने कितने छेद हो गये |" (अग्निहोत्री 47)

वृद्धों की शारीरिक ताकत तो पहले ही टूट चुकी होती है जो आर्थिक बल थोड़ा बहुत रहा भी होता है बच्चे उसे भी धीरे-धीरे मांग लेते है | वृद्ध केवल हड्डियों का ढांचा लेकर परिवार के सदस्यों का मुँह निहारते रह जाते है |कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी '*बदमिजाज*' में वेदप्रकाश को हार्टअटैक आ जाता है | उसके इलाज के खर्च से उसकी बहू नीला और बेटे प्रताप का चेहरा क्रोध में लाल हो जाता है | हेमा बेटे को ऐसे समय पर नरमाई से व्यवहार करने को कहती है | लेकिन प्रताप गुस्से में कहता है -

> "तो ऐसा करो-तुमने जो दौलत गाड़कर रखी है वह निकाल दो |" "क्या अपनी दो दुकानों का किराया नहीं आता ? खेत है तुम चले जाया करो, सब संतोषजनक ही रहेगा, ऐसा तो कोई अभाव अभी नहीं कि तुम पिता को पूरे समय जली-कटी ही सुनाओ |" खेत व तुम्हारे वो गाय-भैंस संभालना मेरे वश में नहीं |" हेमा का भय सच हुआ, वेदप्रकाश जी को प्रताप बम्बई नहीं ले गया और अटैक में वे चल बसे |" (अग्निहोत्री 66)

उम्र बढ़ने के साथ शरीर की क्षमता कम हो जाती है, जिससे व्यक्ति स्वास्थ्य देखभाल और दैनिक गतिविधियों के लिए दूसरों पर निर्भर हो जाता है | यह निर्भरता वृद्धों के जीवन को प्रभावित करती हैं | माँ-बाप अपना सम्पूर्ण जीवन अपने परिवार की खुशियों में लगा देते हैं | जब वह इस अवस्था में आता है कि उसे अपने बच्चों के सहारे की आवश्यकता पड़ती है तो बच्चे वहाँ कोई न कोई बहाना बनाकर अपना पल्लू झाड़ लेते है | वृद्धावस्था में वृद्धों को अपने स्वास्थ्य को लेकर दूसरों पर निर्भर रहना पड़ता है | युवा पीढ़ी अपने बूढ़ों के स्वास्थ्य पर खर्च करना फिजूलखर्च मानती है | जिसके कारण निम्न और मध्यम वर्गीय परिवार के वृद्धों को स्वास्थ्य पर खर्च करने में आर्थिक तंगी का सामना करना पड़ता है | वृद्ध अपने स्वास्थ्य और छोटी-छोटी जरूरतों के लिए दूसरों पर निर्भर रहते हैं | कुछ वृद्ध अच्छी जगह से इलाज नहीं करवा पाते तो कुछ बिना इलाज किए जीवन जीने को मजबूर रहते हैं | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में यह दिखाया गया है कि कैसे बच्चे अपने माता-पिता की बीमारी के समय आर्थिक मदद से कतराते है या उनकी उपेक्षा करते हैं | वृद्धावस्था में स्वास्थ्य संबंधी निर्भरता को कम करने के लिए पारिवारिक सहयोग, बेहतर स्वास्थ्य सेवाएं और सरकारी नीतियों का प्रभावी क्रियान्वयन आवश्यक है |

3.4.4 धन-संपत्ति व जमीन-जायदाद के लिए वृद्धों के साथ हिंसा

धन-संपत्ति और जमीन-जायदाद के लिए वृद्धों के साथ हिंसा आधुनिक समाज में एक चिंताजनक समस्या बन चुकी है | यह समस्या परिवार के भीतर बढ़ते लालच, नैतिक मूल्यों के पतन और पारिवारिक संबंधों में आई दरार का परिणाम है | वर्तमान समाज में मानवीय संवेदना को भौतिकतावाद और अर्थतंत्र की विचारधारा अधिक प्रभावित कर रही है | इस कलयुगी समाज में जमीन-जायदाद के लिए अपने ही अपनों के साथ हिंसात्मक व्यवहार करने लगे |'*समय सरगम*' उपन्यास में दमयंती आरण्या से कहती है –

> "आरण्या, मैं बहुत दुखी हूँ | पीछे आश्रम गई तो माधो को धमकाते रहे | बताओ, ममा लॉकर की चाबी कहाँ रखती हैं | मैं अपने बच्चों से वैर-विरोध क्यों करूँगी उनका भी कोई फर्ज बनता है | मैंने कुछ खाया-पीया है कि नहीं – बीमार हूँ – दावा लानी है, टेस्ट करवाना है- डॉक्टर के पास जाना है वह सब मैं अपने आप ही करूँ ! भला हो इस माधो का, इसी के

> बल पर चला रही हूँ|... बच्चों की ऐसी हरकत से मेरा धीरज खत्म हो रहा है | फ्लैट के कागज माँग रहा बेटा |......महीने भर बाद – ईशान के यहाँ माधो का फोन था – साहिब, मेम साहिब नहीं रही | उनका चौथा कल शाम को है | क्या ? क्या हुआ माधो ! टेलीफोन पर क्या बतावें साहिब- आइएगा तो खुद ही जान जाइएगा | (सोबती 74)

वृद्धजनों को संपत्ति और आर्थिक संसाधनों के कारण अक्सर शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक हिंसा का सामना करना पड़ता है, जो उनके जीवन की गरिमा और सुरक्षा को छीन लेता है | दमयंती के माध्यम से रचनाकार ने एक ऐसे वृद्ध चरित्र को पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है जो अपने ही घर में अपनी संपत्ति होते हुए भी उसका भोग नहीं कर सकती थी | उसे अपने बेटे-बहू से हर दिन अपमानित होना पड़ता था | वह अपने ही घर में किनारे कर दी गई थी | अंत में तो जीवन से ही किनारे कर दिया जाता है | इसी उपन्यास में प्रभुदयाल की कथा आज की पीढ़ी के विषय में हमें सोचने को मजबूर करती है | तीन बेटों के विधुर पिता का जीवन अपने बच्चों के सहारे कट रहा था | जब बच्चों को पता चलता है कि पिता के पास बहुत कुछ धन-दौलत है और वे पिता के कमरे उनसे पैसे माँगने पहुँच जाते हैं | प्रभुदयाल के बड़े बेटे उनसे कहते हैं –

> "बाबूजी, आपको अपने अकाउंट में से रुपया निकालना होगा | आज भुगतान न हुआ तो फैक्टरी और दुकान में ताले पड़ जाएँगे | यहाँ तक नौबत क्यों पहुँचा दी ? पहले क्यों नहीं बताया ?...मँझला बोला – बाबूजी, यह टालमटोल का वक्त नहीं | जो करना है वह करिए ...मुझे-मुझे क्या करना है ? काम तुम संभाल रहे हो – यह भी तुम्हीं करोगे | बड़े बेटे ने मँझले को डाँटकर कहा – निकाल इनकी ताली | इसके पहले कि प्रभुदयाल गले में लटकती ताली को छुएँ, लड़के ने सूत में पिरोई ताली गले पर से उतार ली | बाप का इससे बड़ा अपमान भी क्या हो सकता है | (सोबती 110)

कुछ समय बाद प्रभुदयाल की हत्या हो जाती हैं | पोस्टमार्टम की रिपोर्ट बताती है की गला घोटने से उनकी हत्या हुई है | यहाँ देख सकते है कि किस तरह वृद्धों की सम्पत्ति और जायदाद हड़पने के लिए हिंसात्मक तरीके अपनाए जाते हैं | इसी उपन्यास की एक अन्य पात्र ईशान और आरण्या की दूसरी दोस्त अविवाहिता कामिनी की कथा भी करुणा से आपूरित है | उसके सगे भाई और भाभी की नजर उसके घर पर रहती है | वे कई बार दलाल को घर दिखाकर सौदा करने की तैयारी में होते है | उसकी सेवा करने वाली परिचारिका खूकू भी हर समय मौके का फायदा उठाने की फिराक में रहती है | भाई और नौकरानी दोनों उसे नींद की गोलियाँ देकर सुलाए रखते है और हर समय अवसर की तलाश में रहते हैं | भाई के आदेश पर नौकरानी खूकू उसे ऐसी कोठरी में बंद करके रखते है, जहाँ हवा और सूरज के दर्शन नहीं होते हैं तथा ऐसी दवाइयों का सेवन करवाती है, जिससे वह दिन-प्रतिदिन कमजोर होती जाती है | उसका भाई संपत्ति हड़पने के घिनौने षड़यंत्र के तहत कामिनी के घर को बेच देता है | कामिनी उसके साथ हो रहे साजिशों को इस प्रकार व्यक्त करती है-

> "मुझे दलाल बता गया है कि भाई ने मेरे घर का सौदा कर लिया है | बयाना ले चूका है ! खूकू ने मुझे नहीं बताया पर बिल्डर दो बार घर को आगे-पीछे और अंदर से देख गया है ...एक रात तो मेरी डॉक्यूमेंट फाइल में घर के पेपर नहीं थे |

> अगली रात यह बाहर ताला डालकर चली गई तो फिर अलमारी खोली | सब खाने छान मारे ! फाइल खोली तो असली की जगह फोटोस्टेट कॉपी रखी थी |.. असली अब मेरे पास नहीं है | (सोबती 98)

कामिनी का भाई बिना बताए उसका घर बेच देता है और चाहता है कि कामिनी फार्म हाउस पर आकर रहे लेकिन कामिनी को डर है कि वहाँ वे उनका गला घोंट देंगे | कामिनी ईशान और आरण्या से कहती है - "भैया और भाभी अपने घर में नहीं बुला रहे | फार्म पर | वहां तो मैदान साफ़ है ! कोई भी मेरा गला घोंट सकता है |" (सोबती 97) अंततः कामिनी की भी मृत्यु हो जाती है | कामिनी के माध्यम से लेखिका ने यह दिखाने की कोशिश की है कि व्यक्ति अपने युवापन की अधिकतम ऊर्जा सुविधाओं को जुटाने में लगा देता है | लेकिन जब वृद्ध हो जाता है तो उसकी स्थिति कितनी दयनीय हो जाती है कि पारिवारिक लोगों से अकेले रहते हुए भी, उन्हीं लोगों से प्रताड़ित होना पड़ता है | आज घरेलू हिंसा का शिकार हमारे बुजुर्ग हो रहे हैं | अर्थ के पीछे भागने, संयुक्त परिवार की प्रथा के स्थान पर व्यक्तिगत परिवार को पसंद करने एवं पाश्चात्य सभ्यता के प्रति रुझान के चलते अधिकांश लोग अपने बुजुर्ग माता-पिता का तिरस्कार करते हैं | पैतृक संपत्ति प्राप्त करने के लिए, उनके साथ मारपीट करना आम घटनाएँ है | चित्रा मुद्गल के उपन्यास '*गिलिगडु*' में कर्नल स्वामी के साथ उनका बेटा दुर्व्यवहार करता है | कर्नल स्वामी की पड़ोसिन श्रीवास्तव जी बाबू जसवंत सिंह को बताती है कि –

> "पिछली गर्मियों मैं मंझला बेटा श्री नारायण आया था | हैदराबाद से | आया वह विशेष प्रयोजन से ही था कि उनके अप्पु नोएडा वाला चार कमरों वाला फ्लैट बेवजह अगुवाए हुए हैं | फ्लैट बेचकर क्यों नहीं अप्पू उससे प्राप्त रकम तीनों भाइयों को बांट दें ? उनके तंग फ्लैट अब उन्हें तंग कर रहे हैं | तीनों ने अपने-अपने शहर में प्लॉट खरीद लिए हैं और अब उन्हें इस तरह की जरूरत महसूस हो रही है कि अपने प्लॉटों पर वे अपने मनपसंद बंगले का निर्माण कर जितनी जल्दी हो सके खुले घरों में पहुँच खुलकर रह सके खुलकर रहने के लिए उन्हें तगड़ी रकम की जरूरत है | लोन के चक्कर में बैठे बिठाए फंसना उन्हें मंजूर नहीं | मंजूर भी क्यों हो जब साधना घर में मौजूद हो | कर्नल स्वामी पहले ही राजनगर स्थित गाजियाबाद वाली कीमती प्लॉट को बेचकर उन्हें फ्लैट खरीदने में मदद कर चूके थे | श्री नारायण का प्रस्ताव उन्होंने ठुकरा दिया क्रुद्ध श्री नारायण ने पिता पर हाथ उठा दिया |" (मुद्गल 137)

कर्नल स्वामी की पड़ोसिन निःसंतान श्रीवास्तव यह दृश्य देखकर कहती है " ऐसी कसाई औलादों से तो आदमी निपूता भला | हमें इस बात का कोई गम नहीं है कि हमारी कोई अपनी औलाद नहीं है |"(मुद्गल 138) यहाँ हम देख सकते हैं कि वर्तमान समय में बच्चे अपने कर्तव्य को भूल कर अपने माता-पिता के साथ हिंसक व्यवहार करने में ज़रा भी शर्म नहीं करते | कर्नल स्वामी पिता होने का फर्ज अंत में भी एफ.आई.आर. न लिखाकर निभा देते हैं | आज रिश्ते, संबंध तथा भावनाएँ और संवेदनाओं की कोई अहमियत नहीं रह गई है | उसकी जगह पैसा ने ले लिया है | व्यक्ति अपना सम्पूर्ण जीवन आने वाले भविष्य को सुख-सुविधापूर्ण बनाने के लिए धन-संपत्ति, जमीन-जायदाद को जुटाने में लगा देता है | बुढ़ापा आसानी से कट जाए इस आशा में अपने आर्थिक स्तर को मजबूत करता है | जिन बच्चों को सुखी रखने के लिए वह दिन-रात एक करके धन-संपदा इकट्ठा करता रहा वही धन-संपदा बुढ़ापे में उनकी जान की दुश्मन बन जाती है | एक तरफ पूरा परिवार इकट्ठा हो जाता है और दूसरी तरफ वह वृद्ध जिसने अपने जीवन में कठिन परिश्रम से

पूरी जमा पूंजी इकट्ठी की थी | युवा पीढ़ी यह सोचती है जो कुछ माँ-बाप ने कमाया है वह सब उनके लिए ही तो है | अब उस जमीन-जायदाद को उन्हें देने में क्या आपत्ति है | इसी धन संपदा के कारण आपसी रिश्तों में धीरे-धीरे दरार आने लगती है | यह दरार इस प्रकार बढ़ जाती है कि नौजवान पीढ़ी अपनी वृद्ध पीढ़ी से जमीन-जायदाद हासिल करने के लिए किसी भी हद तक जा सकती है | दिलीप मेहरा की 'साजिश' कहानी में बूढ़े देवीलाल की सरकारी नौकरी पाने के लिए बेटा प्रकाश और उनकी पत्नी पार्वती ने उनकी हत्या कर दी | "दोनों देवीलाल के कमरे में जाकर दरवाजा बंद कर देते है | पार्वती तकिया चारपाई से उठती है और प्रकाश को पैर पकड़ने का इशारा करती है | प्रकाश देवीलाल के जोर से पैर पकड़ता है तभी पार्वती देवीलाल के हाथ अपने घुटनों के बल से जकड़ती हुई देवीलाल के मुँह पर तकिया रख देती है देवीलाल साँस लेने के लिए छटपटाते है पर कुछ नहीं कर पाते | (मेहरा 94) धन-संपत्ति और जमीन-जायदाद के लिए वृद्धों के साथ हिंसा समाज के नैतिक पतन को दर्शाती है | पिता की नौकरी पाने के लिए एक बेटे द्वारा पिता की हत्या करना समाज में हो रहे मूल्य परिवर्तन और धन-दौलत को अहमियत देने की विचारधारा को दर्शाया गया है | आजीविकावाद के इस दौर में व्यक्ति का जीवन संवेदनशून्य और मूल्यहीन होता जा रहा है | युवा-पीढ़ी वृद्ध माता-पिता की धन-संपत्ति तथा जमीन-जायदाद लेने का अधिकार चाहती है, लेकिन जीवन के अंतिम दिनों में वृद्ध माँ-बाप के प्रति अपने नैतिक दायित्व को नहीं निभाना चाहती | 21वीं सदी का हिंदी कथा साहित्य वृद्धजनों की आर्थिक समस्याओं को न केवल दर्शाता है, बल्कि समाज और परिवार को उनकी जरूरतों के प्रति जागरूक करने का प्रयास भी करता है | इन रचनाओं में वृद्धावस्था की आर्थिक असुरक्षा और उससे उत्पन्न मानसिक, सामाजिक और भावनात्मक संघर्षों को गहराई से उभारा गया है | यह साहित्य पाठकों को वृद्धजनों की समस्याओं को समझने और उनके प्रति संवेदनशील बनने का प्रेरणा स्त्रोत बनता है |

3.5 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की सांस्कृतिक समस्याएं

भारत की सभ्यता एवं संस्कृति संसार की सबसे पुरानी संस्कृतियों में से एक है | भारतीय संस्कृति में संबंधों का बड़ा महत्व रहा है यह संस्कृति धर्म एवं अध्यात्मपरक होने के साथ-साथ हमें संस्कारित भी करती है | हमारी सभ्यता में संस्कारों व परम्पराओं को सर्वोपरि माना गया है | जिन्हें भारतीय लोग अपने जीवन में पूरी तन्मयता के साथ निभाते हैं | भारतीय समाज व संस्कृति में बुजुर्गों को सम्माननीय व पूजनीय स्थान प्राप्त है | किन्तु आधुनिक युग के प्रभाव में हम दिशाहीन और मूल्यहीन हो रहे हैं | हमारी आधुनिक सोच ने हमारे भारतीय समाज, संस्कृति और मूल्यों के लिए एक खतरनाक स्थिति पैदा कर दी है, जहाँ हमारी सोच हमारे समाज को खोखला कर रही है | विकास के साथ-साथ सामाजिक परिवर्तनों ने पूरे समाज को झकझोर दिया है | संयुक्त परिवार टूट रहे है, पारम्परिक मान्यताएं, अवधारणायें बिखरती जा रहीं हैं | युवा पीढ़ी स्वतंत्र जीना पसंद कर रही है | इन सभी परिवर्तनों के कारण सबसे ज्यादा वृद्धजन प्रभावित हो रहे हैं | आधुनिक युग में वृद्धजन जिन सांस्कृतिक समस्याओं का सामना कर रहे हैं, वे न केवल सामाजिक संरचना में बदलाव का परिणाम हैं, बल्कि पारिवारिक और सांस्कृतिक मूल्यों के क्षरण की ओर भी इशारा करती हैं | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में इन समस्याओं को बड़े ही संवेदनशील और प्रभावी तरीके से चित्रित किया गया है |

3.5.1 सामाजिक व्यवस्था, आदर्शों और मूल्यों में परिवर्तन

पारंपरिक भारतीय समाज में वृद्धों का विशेष महत्व रहा है | वृद्धों की पारंपरिक मूल्य व्यवस्था की सेवा जो उच्च और उदात जीवन मूल्य माना जाता है | आधुनिक समाज में रहन-सहन के साथ-साथ जीवन मूल्यों की दशा भी बदल रही है | वैश्वीकरण के कारण पारंपरिक मूल्यों, आदर्शों और सामाजिक व्यवस्था में आए बदलाव के चलते बुजुर्गों के प्रति हमारा नजरिया भी बदल चुका है | काशीनाथ सिंह ने *'रेहन पर रग्घू'* उपन्यास में वर्तमान दौर में पारिवारिक जीवन में होता बदलाव, रिश्तों के बीच पनपता अजनबीपन, स्वार्थ केंद्रित बनती जिन्दगी आदि का मार्मिक चित्रण किया है | बुजुर्गों के अनुभवों का उपयोग करने की बजाय उन्हें अनुपयोगी और बेकार वस्तु मानने लगे हैं | वर्तमान समय में युवा वर्चस्व शाली होता जा रहा है और बुजुर्ग हाशिए पर जा रहे हैं | वृद्ध विशालकाय पुस्तक है जिसके पास अनुभव का विशाल मैदान है जिसे युवा पीढ़ी अपने हित के लिए प्रयोग कर सकती है किन्तु अपने अहम में चूर, बाजारवादी संस्कृति के प्रभाव से उन्होंने बुजुर्गों को बोझ समझा है | डॉ. सूरज सिंह नेगी के उपन्यास 'नियति चक्र' के नायक सेठ नितिन घोष अपनी सारी संपत्ति अपने पुत्र चित्रांश के नाम कर देता है जिससे चित्रांश घोष एंटरप्राइजेज का मालिक बन जाता है साथ ही घर का मुखिया भी | घर का मुखिया बनते ही वह अहम में चूर हो जाता है | अपने कर्तव्य, मूल्यों और जिम्मेदारियों को भूल जाता है | यहाँ तक कि अपने पिता के कारण उसे अपना व्यक्तित्व कमजोर प्रतीत होने लगता है इसलिए सबसे पहले अपने पिता के सभी विश्वास पात्रों को नौकरी से निकाल देता है | नितिन घोष के सबसे करीबी नौकर किशन काका को भी निकल लेता है और अंततः अपने पिता को भी कहीं चले जाने के लिए कहता है जिससे नितिन घोष पूरी तरह टूट जाते हैं |

> "घोष विला में उनको धीरे-धीरे यह अहसास कराया जाने लगा था कि अब वह बूढ़े हो चले हैं, वहाँ उनकी कोई आवश्यकता नहीं है | संस्था का कोई कर्मचारी कभी बंगले में आता भी तो चित्रांश से आवश्यक कागजात पर हस्ताक्षर करवा कर वापस चला जाता, सेठजी सोचते शायद वापसी में उनसे मिलकर जायेगा लेकिन देर तक दरवाजे की तरफ टकटकी लगाए रहने के बाद भी उनको निराशा ही हाथ लगती | एकाध बार चित्रांश से कंपनी और कारोबार के विषय बातचीत भी की लेकिन वह टका सा जवाब देकर उनका मुँह बंद कर देता | (नेगी 64)

नई पीढ़ी के बच्चों में बूढ़ों के प्रति संवेदना, प्यार और सम्मान का कोई महत्व नहीं रहा है | अपने माँ-बाप की संपत्ति लेकर उनकी उपेक्षा करना उनके सुझावों को महत्व न देना एक बड़ी समस्या है | बुजुर्गों को धन दौलत से ज्यादा अपनों के प्रेम एवं सहारे आवश्यकता होती है | अपने प्रेम और स्नेह से जिसे सींच कर बड़ा करते हैं वही अगर प्रश्न खड़ा कर दे कि आपने किया क्या है ? तो व्यक्ति टूट जाता है | यही सेठ नितिन घोष के साथ होता है | वह किशन से कहते भी है -

> "किशन जानते हो एक बाप के लिए दुनिया में सबसे बड़ी गाली क्या है ? ...एक जवान बेटा यदि अपने बाप को कहे कि तुमने उसके लिए किया ही क्या है ? वह उस बाप के लिए सबसे बड़ी गाली है | जिसने अपना सब कुछ यहाँ तक कि सुख, चैन, रातों की नींद अपने बच्चों पर न्यौछावर कर दी हो, जिसकी हर साँस में अपनी औलाद के लिए दुआएँ निकलती हों | बड़ी होने पर वाही औलाद कह दे कि तुमने उनके लिए किया ही क्या है" (नेगी 66)

वृद्ध माँ-बाप के लिए सबसे कटु अनुभव यह है जब उनके बच्चे माँ-बाप के त्याग को यह कहकर नकार देती है कि उन्होंने उनके लिए कोई विशेष नहीं किया | सभी माँ-बाप की तरह अपना फर्ज अदा किया है | दिन-रात खून पसीना बहाकर माँ-बाप इस लायक बनाते हैं कि भविष्य में समाज में सर उठाकर जी सकें | माँ-बाप को अपनी संतान और अपने दिए संस्कारों पर विश्वास होता है कि उनके बच्चे बुढ़ापे में उनकी सेवा करेंगे | इसी भरोसे में वे अपना सब कुछ उनके नाम कर देते हैं | नई पीढ़ी को फिर भी लगता है कि उनके माँ-बाप ने उनके लिए कुछ भी नहीं किया | नई पीढ़ी की यह सोच संवेदनाओं को जाग्रत करती है | वर्तमान युग में हर व्यक्ति बनावटी संस्कारों का एक मुखौटा चेहरे पर चढ़ाकर अपने को आधुनिकता सिद्ध करने के प्रयत्न में लगा हुआ है | ममता कालिया द्वारा रचित उपन्यास *'दौड़'* में पवन अपने जन्मदिन को मनाने के संबंध में अपनी माँ से कहता है –

> "माँ मेरा जन्मदिन इस बार यों ही निकल गया | आपने फोन किया पर ग्रीटिंग कार्ड नहीं भेजा | रेखा हैरान रह गई | "बेटे ग्रीटिंग कार्ड तो बाहरी लोगों को भेजा जाता है | तुम्हें पता है तुम्हारा जन्मदिन हम कैसे मनाते हैं | हमेशा की तरह मैं मंदिर गई, स्कूल में सबको मिठाई खिलाई, रात को तुम्हें फोन किया | मेरे सब कलीग्स हँसी उड़ा रहे थे कि तुम्हारे घर से कोई ग्रीटिंग कार्ड नहीं आया | माँ को लगा उन्हें अपने बेटे को प्यार करने का नया तरीका सीखना पड़ेगा | (कालिया 43)

21वीं सदी में तकनीकी प्रगति और वैश्वीकरण के कारण पारम्परिक रीति-रिवाजों और सांस्कृतिक मूल्यों का महत्व घटा है | पवन के भौतिकवादी एवं उपभोगवादी संस्कार न सिर्फ पवन के माँ-बाप को आहत करते हैं बल्कि भारतीय संस्कृति की दीर्घकालीन पारिवारिक ढांचे को भी जर्जर करते हैं | ममता कालिया के 'दौड़' उपन्यास में पवन अपनी बिजनेस पार्टनर तथा रूम पार्टनर स्टैला से शादी करना चाहता है | जिसके लिए वह माँ-बाप से बिना पूछे और बिना बताए सारी तैयारी कर लेता है | उसकी माँ रेखा कहती है –

> "यह तेरा अंतिम निर्णय है ?" "हाँ माँ | स्वामी जी ने भी इस रिश्ते को ओ.के. कर दिया है |" "अपने पापा को तुमने बिल्कुल किनारे कर दिया | उनसे पूछा तक नहीं और सब तय कर लिया |" "उनसे मैं फोन पर बात कर लूँगा | वैसे स्वामी जी सबके सुपर पापा हैं, वे सोच-समझकर हामी भरते हैं | उन्होंने भी इस डील पर मुहर लगा दी |" "डील का क्या मतलब है | तुम अभी शादी जैसे रिश्ते की गंभीरता नहीं जानते | शादी और व्यापार अलग-अलग चीजें हैं | कोई भी नाम दो, इससे फर्क नहीं पड़ता |अगले महीने आप चौबीस को आप मद्रास पहुँचो | स्वामी जी की सालगिरह पर चौबीस जुलाई को बड़ा भारी जलसा होता है, कम-से-कम पचास शादियाँ कराते हैं स्वामी जी |" "सामूहिक विवाह" हाँ | एक घंटे में सब काम पूरा हो जाता है |" शल्य क्रिया की तरह बेटे ने सब कुछ निर्धारित कर रखा था | (कालिया 58)

यह सब बाते जब पवन की माँ रेखा सुनती है तो वह आहत मन और सुन्न मस्तिष्क लिए वापस लौट आती है | शादी संस्कार जो भारतीय समाज में बहुत महत्वपूर्ण संस्कार माना जाता है | माँ-बाप अपने बच्चों की शादी में अहम भूमिका निभाते हैं | यहाँ देख सकते है शादी को लेकर युवा पीढ़ी अपने माता-पिता को बताए बिना सब कुछ तय कर लेते हैं | शादी को व्यवसाय की तरह एक प्रकार की डील करार देते हैं | इस सामूहिक विवाह में यह डील एक घंटे के अंदर पूरा करने की बात की जाती हैं | चित्रा मुद्गल ने

'*गिलिगडु*' उपन्यास में पात्रों के माध्यम से सामाजिक मूल्यों के क्षरण को बड़ी कुशलता के साथ रूपांतरित किया है | संयुक्त परिवार भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषता रही है जिसमें संबंधों को बहुत महत्व दिया जाता था | किन्तु आज न तो सम्बन्ध रहे न ही मूल्य | '*गिलिगडु*' उपन्यास में बेटे और बेटी दोनों ही जसवंत सिंह की जमीन, जायदाद, बैंक बैलेंस को लेकर लालायित है | जसवंत सिंह की बेटी उनसे कहती है –

> "लॉकर में अभी है तो बहुत कुछ बाबूजी ! अम्मा के अपने कई सेट, पाँच तोले के आजीवाली नाथ, चांदी का ढेरो सामान | अम्मा हमेशा कहती रही- अपनी पचलड़ और कुंदन का सेट वे अन्विता को देंगी और विक्रम की बहू के लिए ..." (मुद्गल)

अपनी बेटी से ये बाते सुनकर जसवंत सिंह को गहरा आघात पहुँचता है और उनके हाथों से फोन का रिसीवर छूट जाता है | यही कारण है कि उनका प्रेम बेटा-बेटी और बहु की अपेक्षा कानपुर के घर में रहने वाली नौकरानी सुनगुनियाँ और उनके बच्चों के प्रति अधिक उमड़ता है | इतना ही नहीं अपने शव को मुखाग्नि देने की जिम्मेदारी भी उसे ही सौंपते है | वस्तुतः इस उपन्यास में मूल्यों के टूटन से उपजी भयावहता का मार्मिक चित्रण हुआ है | जहाँ न आपसी प्रेम है, न लगाव सिर्फ स्वार्थ है | सामाजिक व्यवस्था, मूल्यों और आदर्शों में परिवर्तन समय के साथ अपरिहार्य है, लेकिन जब यह परिवर्तन बुजुर्गों के जीवन को कठिन बना दे, तो समाज को आत्ममंथन करना चाहिए | बुजुर्ग हमारे अनुभवों, परम्पराओं और संस्कृति के संवाहक हैं | यदि हम उन्हें साथ लेकर नहीं चलेंगे, तो हमारा सामाजिक ताना-बाना कमजोर हो जाएगा | सामाजिक व्यवस्था, मूल्यों और आदर्शों में परिवर्तन समाज को नए अवसर और चुनौतियां देता है | हालांकि, यह महत्वपूर्ण है कि हम आधुनिक और प्रगति को अपनाते हुए अपनी परम्पराओं, नैतिकता और सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करें | संतुलन बनाए रखने से ही एक समृद्ध और सामंजस्यपूर्ण समाज का निर्माण संभव है |

3.5.2 पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति का प्रभाव

आज पूरा विश्व एक वैश्विक गाँव बन चूका है, जहाँ एक देश की सभ्यता और संस्कृति का प्रभाव दूसरे देशों पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है | विशेष रूप से पश्चिम देशों की सभ्यता और संस्कृति ने भारत की जीवनशैली, सोच, व्यवहार, भाषा, रहन-सहन और मूल्यों पर गहरा प्रभाव डाला है | यह प्रभाव कहीं सकारात्मक है तो कहीं चिंताजनक | आज हमारी संस्कृति पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से अपने मूल स्वरूप को नष्ट करती जा रही है | भारतीय संस्कृति में वृद्धों को परिवार का मुखिया और परिवार का कर्ता धर्ता माना जाता है | परिवार में वृद्धों को मान-सम्मान दिया जाता था, संयुक्त परिवार प्रणाली का पालन किया जाता था, परन्तु वर्तमान समय में पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से संयुक्त परिवार का विघटन बढ़ता जा रहा है और एकल परिवार का चलन बढ़ रहा है | परिणामस्वरूप परिवार के वृद्ध सबसे अधिक प्रभावित हो रहे हैं | आज की युवा पीढ़ी पाश्चात्य सभ्यता की चकाचौंध कर देनी वाली रोशनी में अपनों के अपनेपन का प्रकाश खोती जा रही है इसका बखूबी चित्रण सूरज सिंह नेगी के 'वसीयत' उपन्यास में किया गया है – एक प्रसंग में विश्वनाथ जी के बुजुर्ग मित्र शर्मा जी की स्थिति को रखते हुए आज की सम्पूर्ण वृद्ध पीढ़ी की स्थिति को रख

दिया गया है | जहाँ अपने ही पोते के जन्मदिन पर घर के नौकर को तो पार्टी में ले जाया जाता है किन्तु दादा को नहीं | पार्टी के दिन घर में रह रहे दादा के भोजन तक की व्यवस्था नहीं की जाती है | शर्मा जी की पंक्तियों में –

> "बहू तो पराये घर की बेटी है उसे क्या दोष दूँ, उसने तो मेरी तकलीफ़ें नहीं देखी हैं | पर मेरा करण जो बचपन से ही मेरी मज़बूरी देखता आ रहा है आज मेरी भावना को समझ न सका | मैंने एक-एक पल कैसे बिताया, मेरी आत्मा ही जानती है | रात के ग्यारह बजे तक बेसब्री से इंतजार करता रहा | न ही कोई फोन आया न ही वह लोग पार्टी कर घर में वापिस लौटे | भूख के मारे हाल बेहाल हो रहा था | सोचा था पार्टी में से लौटते समय मेरे लिए खाना पैक करके ले आयेंगे | मैंने किचन में देखा कुछ न था, तभी टिफिन पर नजर पड़ गई | अक्सर सुबह की बची रोटियाँ टिफिन में रख दी जाती है और शाम को काम वाली बाई को दे दी जाती हैं | मैंने टिफिन में रखी रोटी निकाली और खाकर भूख शांत कर डाली |" (नेगी 213)

यहाँ देखा जा सकता है कि एक तरफ नई पीढ़ी अपने बच्चों पर विशेष ध्यान देती है उनकी हर जरूरत के अनुसार उनकी देखभाल की जाती है | उनका जन्मदिन धूम-धाम से मनाया जाता है | दूसरी तरफ जिन वृद्ध माता-पिता ने उन्हें जन्म दिया, जिन्होंने अपना पूरा जीवन अपने बच्चों के भविष्य को बनाने में लगा दिया | आज वो नई पीढ़ी अपने बच्चों के मोह में डूब कर अपने बूढ़े माता-पिता को बेकार और नकारा समझकर घर के एक कोने में बिठा देते हैं | अपने बच्चों के इस प्रकार के व्यवहार के कारण वृद्धों में अपने रहने, खाने-पीने के प्रति असुरक्षा दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगती है | पाश्चात्य सभ्यता व संस्कृति के कारण आज बड़े-बड़े नगरों में युवा पीढ़ी अपने साथ काम करने वाली लड़की के साथ लीव इन में रहने लगी है | जिससे उनके माँ-बाप अनजान होते है लेकिन जब उन्हें यह पता लगता है तो उन्हें गहरा आघात पहुँचता है | ममता कालिया के '*दौड़*' उपन्यास में पवन और स्टैला शादी से पहले एक साथ रहते है | पवन की माँ रेखा जब यह देखती है तो उसे आश्चर्य होता है –

> "पवन ने कहा – माँ स्टैला मेरी बिजनेस पार्टनर, लाइफ पार्टनर, रूम पार्टनर तीनों है |"...मैंने तो ऐसी लड़की नहीं देखी जो शादी के पहले ही पति के घर में रहने लगे |" "तुमने देखा क्या है माँ ? इलाहाबाद से निकलोगे तो देखोगी न यहाँ गुजरात, सौराष्ट्र में शादी तय होने के बाद लड़की महीने भर ससुराल में रहती है | लड़का-लड़की एक दूसरे के तौर-तरीके समझने के बाद ही शादी करते हैं |" (कालिया 52)

वृद्ध माता-पिता पारम्परिक सोच से जुड़े होते हैं, जहां विवाह को सामाजिक और नैतिक बंधन माना जाता है | जब उनके बच्चे बिना विवाह के संबंध में रहते हैं, तो वे मानसिक रूप से आहत और असहज महसूस करते हैं | पाश्चात्य सभ्यता व संस्कृति में डूबी नई पीढ़ी वृद्धों के प्रति संवेदन शून्य हो गई है | कृष्णा अग्निहोत्री की कहानी '*उसका इतिहास*' में पोते-पोती द्वारा वृद्ध मानवी के साथ व्यवहार चिंता प्रकट करता है | मानवी जब पोती विशाखा को नवरात्रि में छोटी ड्रेस पहनने पर टोकती है | तो विशाखा गुस्से में -

> "पोती विशाखा ने उसे यूँ घूरा जैसे कुत्ते को भौंकते देख रही हो, "तो क्या चादर ओढ़ लूँ ? अब आप तो पुरानी सड़ी-गली जिन्दगी जीती रहीं | मैं आज की पढ़ी-लिखी लड़की हूँ, इंजीनियरिंग पढ़ रही हूँ ...मैं क्या उसी पुराने इतिहास में जीऊँगी | जब मम्मी हमें नहीं टोकती तो आपको क्या परेशानी हो रही है |" (अग्निहोत्री 45)

यहाँ एक तरफ पोती विशाखा को टोकने पर उसे उसकी कटु बाते सुननी पड़ी | दूसरी तरफ पोते अमृत जो रात को दस बजे बाहर से आकर जोर-जोर से टी.वी. पर फिल्मी गाने सुनने लगता है | जब रात एक बजे तक वे गाने बजते रहे और तेज रोशनी जलती रही और मानवी का सरदर्द बढ़ता रहा तो वह बोल ही पड़ी –

> "अमृत बेटे, अब तो टी. वी. बंद कर दे बड़ा सरदर्द है |" ...बस अमृत बूढ़ी पर बरस पड़ा "ये मत करो, वो मत करो-दादी मैं इस तरह तो यहाँ नहीं रुकूँगा | वैसे भी मुझे भूख लग रही है ...अभी तो एक घंटे पढ़ना भी है |" मानवी चक्करों से तंग थी पर कोई चारा नहीं था...वह कराही और उठकर उसने आँखे बंद-बंद ही उपमा बनाकर परोस दी | दूसरे दिन सुधा ने शिकायती स्वर में सास को ताना दिया | "माँ, एक तो बच्चा सोने गया, उस पर आप ढेरों रूकावटे डालती हैं |" (अग्निहोत्री 46)

पाश्चात्य प्रभाव के कारण नई पीढ़ी में नैतिक मूल्य, मानवीय संबंध, भावनात्मक लगाव तथा पारिवारिक रिश्ते आदि में गिरावट आई है | नई पीढ़ी अपने बच्चों को भी एक अलग तरह का वातावरण दे रहें हैं जिसमें न संवेदना है, न आपसी मेलजोल और न ही संस्कार सिर्फ खुद तक सीमित रहते जा रहें है | पुरानी पीढ़ी और नई पीढ़ी में सोच, मूल्यों और आदर्शों को लेकर टकराव बढ़ता है | यह केवल व्यक्तिगत स्तर पर नहीं, बल्कि पारिवारिक शांति को भी प्रभावित करता है | चित्रा मुद्गल के उपन्यास '*गिलिगडु*' में जसवंत सिंह के बेटे-बहु अपने पोते को इसी तरह का वातावरण देते हैं | इसी वातावरण में पला-बड़ा मलय अपने दादू जसवंत सिंह से न घुलता-मिलता है न ही उसे अपने जन्मदिन की पार्टी में शामिल करते हैं –

> "बाबू जसवंत सिंह उदास हो आए | बच्चों की गलती नहीं | उन्हें अपने तक सीमित रहना सिखाया जा रहा है | उन्हें समझाया जा रहा है कि उन्हें किसी की जरूरत नहीं | उन्होंने इसी के चलते मलय-निलय को कभी कोई खेल- 'ब्लॉक्स' 'मेकनिक्स', 'पजल्स' नहीं भेंट किए | नरेंद्र और बहू तब भी विचित्र लगे थे जब बच्चों के बिना मांगे ही वह उन्हें विचित्र-विचित्र खेल-खिलौने लाकर दिया करते थे | वे खेल-खिलौने नन्हें मलय-निलय को अपने में उलझाए और रिझाए रहते | उन्हें किसी की जरूरत महसूस नहीं होती | कानपुर आते तो उन्हीं खेलों के साथ आते | गली के बच्चों के साथ खेलने में उनकी कोई दिलचस्पी न होती | न अपने खेलों में उन उत्सुक बच्चों को साझीदार बनाते | न हाथ लगाने देते | उन्हें खेल-खिलौने में भी षड्यंत्र की बू आती | बुद्धि विकास की आड़ में बड़ी खूबसूरती से बच्चों को संवेदना-च्युत किया जा रहा-इतना कि बच्चे कभी परिवार में न लौट सकें, न कभी अपना कोई परिवार गढ़ सकें |" (मुद्गल 34)

आज व्यक्ति सब कुछ पाश्चात्य सभ्यता का अनुसरण करना चाहता हैं | शिक्षा, संस्कार, खेल-कूद, पारिवारिक संबंध आदि सभी में पाश्चात्यीकरण चाहते हैं | पाश्चात्यीकरण का अनुसरण आज के समय में फैशन हो गया है जो इसका अनुसरण नहीं करता उसे पिछड़ा माना जाता है | यही वजह है आज सभी अपने बच्चों को उनके हिसाब से जीने देना चाहते हैं उन्हें भारतीय परम्परा के मूल्य थोपना नहीं चाहते हैं | परन्तु इससे वृद्धजन उपेक्षित, उदास, असहाय और अकेलापन महसूस करते हैं |

3.5.3 भौतिकतावादी दृष्टिकोण

भौतिकतावादी दृष्टिकोण जीवन के भौतिक सुख-सुविधाओं, संपत्ति और उपभोग पर अत्यधिक ध्यान केन्द्रित करता है | आज उपभोक्तावादी युग में यह दृष्टिकोण तेजी से फ़ैल रहा है, जहाँ व्यक्ति की सफलता का मापदंड उसके पास मौजूद सामग्री वस्तुओं से किया जाता है, न की उसके संस्कारों, चरित्र या मानवीय मूल्यों से | आधुनिक उपभोक्तावादी युग में मनुष्य अधिक से अधिक धन प्राप्त करने की दौड़ में लगा है | भौतिकतावादी के इस दौर में विघटित होते मूल्य, टूटते परिवार, परिवार में बढ़ता स्वार्थ व अजनबीपन से वृद्धों की समस्या विकराल रूप धारण कर रही है | ममता कालिया का 'दौड़' उपन्यास बाजारवाद, भूमंडलीकरण के परिप्रेक्ष्य में लिखा गया है, जो हमारे बदलते मानवीय मूल्य और विघटित होते संस्कार का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करता है | रेखा और राकेश का बड़ा बेटा पवन अपने पिता से कहता है –

> "पापा मेरे लिए शहर महत्वपूर्ण नहीं है, कैरियर है | अब कलकत्ते को ही लीजिए | कहने को महानगर है पर मार्केटिंग की दृष्टि से एकदम लद्धड़ | कलकते में प्रोड्यूसर्स का मार्केट है, कंज्यूमर्स का नहीं | मैं ऐसे शहर में रहना चाहता हूँ जहाँ कल्चर हो न हो, कंज्यूमर कल्चर जरूर हो मुझे संस्कृति नहीं उपभोक्ता संस्कृति चाहिए, तभी मैं कामयाब रहूँगा |" (कालिया 40, 41)

इस उत्तर ने उसके माँ-बाप को अचंभित कर दिया | वह आदर्श की जगह यथार्थ को महत्व देने लगा है | यह इस बात का सूचक है कि आज के युवाओं में आदर्श के स्थान पर यथार्थवाद का प्रभाव अधिक है | पवन जितने भी दिन अपने माता-पिता के साथ समय बिताता है उसके व्यवहार में कई परिवर्तन आते रहते हैं | पवन के बारे में उसके पिता राकेश के विचार पूरे समाज को सचेत करने वाले हैं | राकेश कहते हैं –

> "आज पवन की बातें सुनकर मुझे बड़ा धक्का लगा | इसने तो घर के संस्कारों को एकदम ही त्याग दिया ... पवन के बहाने एक पूरी की पूरी युवा पीढ़ी को पहचानो | यह अपनी जड़ों से कटकर जीने वाले लड़के समाज की कैसी तस्वीर तैयार करेंगे | (कालिया 41,42)

आज का युवा अपने कर्तव्यों, मूल्यों, मान्यताओं और जरूरतों को नजरंदाज करता हुआ बाजार के नियमों के तहत संचालित होने लगा है | वर्तमान नई पीढ़ी पारिवारिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और परम्परागत रीति-रिवाजों एवं संबंधों से अलग होकर अपनी, कंपनी तथा अपने कम्प्यूटर की सीमा रेखा के भीतर नियंत्रित कर लिया | रिश्तों-नातों का अर्थ इनके लिए कुछ भी नहीं है | 'दौड़' उपन्यास में पवन को अपने घर, गाँव, शहर से वो लगाव नहीं रहा वह कहता है-

> "मुझे लगता है यह वह शहर नहीं जिसे मैं छोड़कर गया था |" "शहर और घर रहने से बसते है बेटा | अब इतनी दूर एक अनजान जगह को तुमने अपना ठिकाना बनाया है | परायी भाषा, पहनावा, और भोजन के बावजूद वह तुम्हें अपना लगने लगा होगा |" " सच तो यह है पापा जहाँ हेर महीने वेतन मिले, वही जगह अपनी होती है और कोई नहीं |" (कालिया 45)

भौतिक सुखों की चाह में परिवार के सदस्य अपने व्यावसायिक और व्यक्तिगत हितों में व्यस्त हो जाते हैं, जिससे वृद्ध लोग अकेलापन और उपेक्षा का शिकार हो सकते हैं | पवन के दृष्टिकोण में जो अधिक वेतन दे वही कंपनी अपनी और जो शहर उसे रोजगार दे रहा

है वही शहर अपना इसके लिए चाहे अपने शहरों की उपेक्षा करनी पड़े | एक पिता अपने बेटे में इस तरह के बदलाव देखता है तो उसे चिंता सताती है | "पिता आहत हो देखते रह गए | उनके बेटे के व्यक्तित्व में भौतिकवाद, अध्यात्म और यथार्थवाद की कैसी त्रिपथगा बह रही थी |" (कालिया 46) भौतिकवादी दृष्टिकोण का वृद्धों पर प्रभाव गहरा और व्यापक है | रामधारी सिंह दिवाकर द्वारा रचित '*दाखिल ख़ारिज*' उपन्यास में नई पीढ़ी का भौतिकवादी दृष्टिकोण स्पष्ट दिखाई देता है | रिश्ते-नाते मानवीय मूल्यों और संबंधों का उनके लिए कोई मोल नहीं | उपन्यास के मुख्य पात्र प्रमोद सिंह के दो बेटे अमरेश और समरेश है | उनके दोनों बेटे बाहर रहते हैं | माता-पिता के दुःख व परेशानियों को उन्होंने कभी भी समझने का प्रयास नहीं किया | प्रमोद जब बड़े बेटे के साथ रहने की इच्छा प्रकट करते हैं तो वह तैयार तो हो जाता है किन्तु यह अपेक्षा रखता है कि मकान की किश्त प्रमोद सिंह स्वयं भरें | अमरेश लड़खड़ाती हुई आवाज में कहता है –

> "ऐसा है पापा कि फ्लैट तो मैंने लोन पर ख़रीदा है | हर महीने पन्द्रह हजार रुपये क़िस्त के जमा करने होते हैं | तो पापा, आपको अच्छी-खासी पेंशन मिलती है | आप आराम से आकर फ्लैट में रहें | बस पन्द्रह हजार रुपये बैंक की माहवारी क़िस्त देते रहें | इसे फ्लैट का किराया नहीं समझेंगे | है तो आपका ही फ्लैट, लेकिन किस्त तो देनी ही पड़ती है | फ्लैट का बीस हजार किराया मिल रहा था, लेकिन आप दोनों आने वाले थे, सो मैंने किसी को किराये पर दिया नहीं |" (दिवाकर 266)

बेटे अमरेश की इस अपेक्षा से प्रमोद सिंह को आघात पहुँचता है | अपने बच्चों को उज्ज्वल भविष्य देने वाले प्रमोद सिंह आज बेटों के इस व्यवहार से आश्चर्यचकित होते है | जीवन भर सम्मान की नौकरी करने वाले प्रमोद सिंह वृद्धावस्था में आप को असहाय और दीन-हीन महसूस करते हैं | भौतिकतावाद के प्रभाव में कई बार वृद्ध केवल आर्थिक योगदान के रूप में देखे जाते हैं | नई पीढ़ी का सारा समय पैसा कमाने में जा रहा है, वृद्धों की सेवा को अपना परम्परागत व नैतिक कर्तव्य वे नहीं समझते | उनकी नजर में वे बेवजह के बोझ है जिसे कुछ पैसे दे कर नौकरों से भी करवाया जा सकता है | कृष्ण अग्निहोत्री की कहानी '*उसका इतिहास*' में वृद्ध मानवी को जब हार्ट अटैक आता है तो उसके बेटे और बेटी को समाचार दिया जाता है | सुयश और प्रीति भी तत्काल पहुँच जाते है | मानवी दोनों के हाथ पकड़कर कहती है –

> "तुम दोनों ही अपनी माँ को भूल से गये |" ऐसा नहीं है माँ ...अभी नया-नया सैटलमेंट है, दुकान में फर्नीचर लग रहा है, बड़े शहर में बड़ी 'कॉम्पीटीशन होती है | समय नहीं मिल पाता | ये जमाना ही भागम-भाग का है वरना पिछड़ ही जायेंगे |" प्रीति बोली मेरी भी इच्छा होती है कि आपके पास रहूँ, परन्तु बच्चों की पढ़ाई, परीक्षाएं इन सबसे तो छुटकारा नहीं मिलता | सोचती रही कि आपको साथ ले जाऊं, परन्तु शादी के बाद तो ससुरालवालों का मुहँ देखना पड़ता है | इसी समय विशाल अंदर आया व सुयश एवं प्रीति से बोला, "डॉ. कह रहे है कि माँ अब चार माह से अधिक नहीं जियेगी | तुम इन्हें साथ ले जाओ, बड़े शहर में अच्छा इलाज भी होगा | मैं अपना कैरियर देखूँ ? तुम चाहो तो उनके फिक्स्ड भी ले जा सकते हो |" "क्या बात करते हैं ? सारा दवाई खर्च भी हमने ही उठाया है | मुझे क्या करना इस फिक्स्ड का ? मेरे बच्चे तक इस बीमारी से उकता गये हैं |" मानवी ने सब सुना व धीरज से कहा, "अरे मैं तो एकदम ठीक हूँ |" "क्या करें माँ...बच्चों की

> आज की पढ़ाई है, मरतों की कहाँ तक चिंता करें या हम जिएँ |" मैं ठीक हूँ बाई आ जायेगी, तुम सब अपने-अपने कामों में व्यस्त रहो |" सब बच्चे अपने-अपने घोंसलों में चले गए | रह गई अकेली वीरान मानवी | अपने घर के पलंग पर लेटी वह यही सोचती कि यह कैसी भाग-दौड़, कैसा जमाना और कैसा नया इतिहास, जो मात्र स्वयं के सुखों पर सीमित है ? क्या इस नये समय की पीढ़ी रुपयों व ऐश पर अकेली बहुत समय तक बिना संबंधों के खुश रह पायेगी |" (अग्निहोत्री 49)

भौतिकतावादी समाज में सम्बन्धों की जगह भौतिक चीजों को अधिक महत्व दिया जाता है जिससे वृद्धों को भावनात्मक सहारा नहीं मिल पाता | चित्रा मुद्गल की 'गेंद' कहानी में वृद्धाश्रम में रह रही सिद्धेश्वरी बहन के माध्यम से नई पीढ़ी की भौतिकतावादी दृष्टिकोण को लेखिका उजागर करती हैं | लेखिका लिखती हैं- "सिद्धेश्वरी बहन का किस्सा भूले नहीं होंगे आप | एकमात्र मकान बच्चों के नाम लिख देने के बावजूद इसी शहर में होकर भी उनके घरवाले उनके क्रियाकर्म को सामने नहीं आये | इसी बात पर ख़फा थे कि उन्होंने क्यों अपनी सोने की चूड़ियाँ और गले की भारी लड़ आश्रम को दान कर दी |"(मुद्गल 17) माता-पिता अपना पूरा जीवन उन पर लगा देते हैं, लेकिन जब वही बच्चे उन्हें छोड़ देते हैं यहाँ तक उनके क्रियाकर्म तक नहीं करते इससे बड़ी त्रासद स्थिति क्या हो सकती है | वृद्धों को केवल उपयोगिता की दृष्टि से देखना एक असंवेदनशील समाज की निशानी है | धन-दौलत से बढ़कर माँ-बाप का स्नेह, दुआएँ और आशीर्वाद होता है जिसे समझने की जरूरत है |

3.5.4 बच्चों का पलायन

बच्चों का पलायन आज की सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों का एक महत्वपूर्ण पहलू बन गया है | यह स्थिति तब महसूस होती है जब बच्चे, विशेषकर युवा वर्ग अधिक शिक्षा, रोजगार, या बेहतर जीवनशैली की तलाश में अपने गाँव, कस्बे या देश को छोड़कर बड़े नगरों या विदेशों की ओर पलायन कर जाते हैं | यह प्रक्रिया जहाँ एक ओर उनकी प्रगति का प्रतीक है, वहीं दूसरी ओर इससे अनेक पारिवारिक, सामाजिक और सांस्कृतिक दुष्परिणाम भी है | ममता कालिया के 'दौड़' उपन्यास में भी राकेश और रेखा का बड़ा बेटा पवन अपने घर, गाँव शहर छोड़ कर दूसरे बड़े शहर में नौकरी करने जाता है –

> "पवन घर से अठारह सौ किलोमीटर दूर आ गया है पर एम.बी.ए. के बाद वह कहीं न कहीं तो उसे जाना ही था | उसके माता-पिता अवश्य चाहते थे कि वह वहीं उनके पास रहकर नौकरी करें पर उसने कहा, "यहाँ मेरे लायक सर्विस कहाँ ? यह तो बेरोजगारों का शहर है | ज्यादा से ज्यादा नूरानी तेल की मार्केटिंग मिल जाएगी |" माँ-बाप समझ गए थे कि उनका शिखरचुम्बी बेटा कहीं और बसेगा |" (कालिया 11)

यहाँ देख सकते है कि युवा वर्ग पढ़-लिखकर अपने उज्ज्वल भविष्य तथा अधिक से अधिक सफलता और धनार्जन करने के लिए घर से दूर बड़े-बड़े नगरों में जाना पसंद करते हैं | जो कि आज के इस स्पर्धा और संघर्ष भरे जीवन की मजबूरी भी है | पवन अपने छोटे भाई सघन को अपने साथ जाने की बात करता है –

> "माँ ने कहा, " इसको भी ले जाओगे तो हम दोनों बिल्कुल अकेले रह जाएंगे | वैसे भी यह सीनियर सिटिजन कॉलोनी बनती जा रही है | सबके बच्चे पढ़-लिखकर बाहर चले जा रहे हैं | हर घर में, समझो एक बूढ़ा, एक बूढ़ी, एक कुत्ता और एक कार बस यह रह गया है |" (कालिया 40)

राकेश और रेखा सघन को अपने से दूर इसलिए नहीं भेजना चाहते क्योंकि उनका बड़ा बेटा पवन अपने शहर से बहुत दूर बड़े-बड़े शहरों में नौकरी करता हैं | उन्हें लगता अगर सघन भी अपने घर और शहर छोड़ किसी दूसरे शहर जाएगा तो वे दोनों बिल्कुल अकेले रह जाएंगे | लेकिन जब कुछ वर्षों बाद राकेश और रेखा के छोटे बेटे सघन को ताइवान की सौफ्टवेयर कंपनी से नौकरी को बुलावा आता है तो वह भी घर से दूर किसी अजनबी शहर जाने के लिए तत्पर हो जाता है | कहने लगा –

> "मुझे दस दिनों से इसका इंतजार था | सारे बैच ने एप्लाय किया था पर पोस्ट सिर्फ एक थी |" माँ-बाप के चेहरे फक पद गए | एक लड़का इतनी दूर मद्रास में बैठा है | दूसरा चला जाएगा एक ऐसे परदेस जिसके बारे में वे स्पेलिंग से ज्यादा कुछ नहीं जानते | राकेश कहना चाहते थे सघन से, " कोई जरूरत नहीं इतने दूर जाने की, तुम्हारे क्षेत्र में यहाँ भी नौकरी है |" पर सघन सहमति भेज चूका था | पासपोर्ट उसने पिछले साल ही बनवा लिया था | वह कह रहा था, "पापा बस हवाई टिकट और पांच हजार का इंतजाम आप कर दो, बाकी मैं मैनेज कर लूँगा | आपका खर्च मैं पहली पे में से चूका दूंगा |" रेखा को लगा सघन में से पवन का चेहरा झाँक रहा है | वही महाजनी प्रस्ताव और प्रसंग | उसे यह भी लगा की जवान बेटे ने एक मिनट को नहीं सोचा कि माता-पिता यहाँ किसके सहारे जिंदा रहेंगे |" (कालिया 72)

वैश्वीकरण के कारण अब दुनिया एक 'ग्लोबल विलेज' बन चुकी है, जहाँ लोग आसानी से एक देश से दूसरे देश में बस सकते हैं | रोजगार की तलाश में युवाओं का बड़े-बड़े नगरों तथा विदेशों में पलायन और वही बस जाने के कारण वृद्धजन अपने आपको अकेला, असहाय और असुरक्षित महसूस कर रहे हैं | 'दौड़' उपन्यास में रेखा और राकेश के तरह कॉलोनी के सभी लोगों का यही हाल था | सभी अपने बच्चों के भविष्य को सुरक्षित रखने के लिए उन्हें तैयार कर रहे थे और बुढ़ापे में खुद असुरक्षित जीवन जीने को विवश थे –

> "कॉलोनी में कमोबेश सभी की यह हालत थी | इस बूढ़ा-बूढ़ी कॉलोनी में सिर्फ सर्दी-गर्मी की लम्बी छुट्टियों में कुछ रौनक दिखाई देती जब परिवारों के नाती-पोते अंदर बाहर दौड़ते-खेलते दिखाई देते | वरना यहाँ चहल-पहल के नाम पर सिर्फ सब्जी वालों के या रद्दी खरीदने वाले कबाड़ियों के ठेले घूमते नजर आते | बच्चों को सुरक्षित भविष्य के लिए तैयार कर हर घर परिवार के माँ-बाप खुद एकदम असुरक्षित जीवन जी रहे थे |" (कालिया 75)

माँ-बाप अपने बच्चों को कामयाब देखना चाहते है जिसके लिए वे उन्हें खूब पढ़ा-लिखाकर उन्हें तैयार भी करते है | हर माँ-बाप अपने बच्चों को खूब तरक्की करते हुए देखना चाहता है लेकिन अपने से दूर जाने भी नहीं देना चाहते | युवा वर्ग अपनी यह सफलता बड़े-बड़े नगरों और विदेशों में देखने लगते है | जिसके लिए उन्हें माँ-बाप, घर-परिवार, गाँव-शहर को छोड़कर जाना पड़ता है | वहाँ जाकर कुछ युवा मजबूरी वश तो कुछ खुद की ख़ुशी के कारण हमेशा के लिए वहीं बस जाते है | कुछ युवा साल-दो साल में छुट्टियां

मनाने अपने घर-गाँव वापस आ भी जाते है | कुछ युवा अपने माँ-बाप की मृत्यु और दाह-संस्कार के समय भी नहीं आ पाते | डॉ. सूरज सिंह नेगी के उपन्यास *'वसीयत'* में उपन्यास का प्रमुख पात्र विश्वनाथ ग्रामीण परिवेश से संबंध रखता है | जब वह बड़ा होता है तो अपने पिता से विदेश जाने के लिए आग्रह करता है लेकिन उसके पिता किसी कारणवश मना कर देते है | विश्वनाथ इस बात से नाराज होकर कभी घर वापिस नहीं आता तथा शहर तक सीमित रह जाता है | वह अपने विवाह तथा पुत्र होने के बाद भी गाँव नहीं आता | किसी तीज-त्यौहार पर भी गाँव नहीं आता | यहाँ तक माँ की मृत्यु होने पर भी विश्वनाथ गाँव नहीं जाता अपितु सरकार के द्वारा भेजे गये पैसे से विदेश चला जाता है –

> "इस घटना को आज कई साल हो चुके थे, विश्वनाथ को बचपन में मिले लाड़-प्यार को वह समय के साथ-साथ भूलता गया | उसके बूढ़े माँ-बाबूजी, दादाजी, गाँव की गलियाँ, पगडंडियाँ तीज-त्यौहार, उसका वह घर सदैव उसकी प्रतीक्षा करते रहे, सोचते शायद विश्वा इस साल आएगा, अगले साल आएगा, लेकिन प्रतीक्षा करते-करते वे इस दुनिया से कभी के विदा हो चुके थे | विश्वनाथ भी दिन-प्रतिदिन उन्नति करने लगा, वह हमेशा काम में व्यस्त रहा लेकिन अपने उन लोगों और उस माटी के लिए उसे कभी समय नहीं मिल सका जो सदैव निस्वार्थ रूप से बस उसकी प्रतीक्षा करते रहे | (नेगी 92)

माँ-बाप इस असहनीय पीड़ा का अंदाजा कोई नहीं लगा सकता | माँ-बाप हमेशा अपने कलेजे के टुकड़े को अपने आस-पास देखना चाहती है | वे चाहते है उनके बच्चे उन पर अधिक ध्यान दें, उनकी हर जरूरत को विशेष महत्व दें, वही दूसरी तरफ युवा पीढ़ी की अपनी समस्याएँ होती हैं | नित्य परिवर्तनशील भाग-दौड़ भरी जिन्दगी में प्रत्येक मनुष्य हद से ज्यादा व्यस्त है | जिसमें उसे अपने लिए ही समय नहीं है वे अपने वृद्धों के लिए समय कहाँ से देंगे ? वे समय खुद की यातनाओं के काल में फंसे रहते है | लेकिन इस पलायन से घर में माँ-बाप के सामने एकाकीपन की समस्या उत्पन्न होती जा रही है | बच्चों का पलायन या विदेशों में बसना आज के समय में एक आम प्रवृत्ति बन चुकी है | विदेशों में उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा, विश्वस्तरीय संस्थानों का आकर्षण, विकसित देशों में बेहतर रोजगार व वेतन युवाओं को पलायन के लिए प्रेरित करता है | इसके साथ भारत में पारिवारिक और सांस्कृतिक मूल्यों में काफी परिवर्तन आया है, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों के लोग बड़े नगरों व विदेशों में पलायन कर रहे हैं | महानगरों और विदेशों में आजीविका की तलाश में नई पीढ़ी वहीं जाकर बस जाती है | वृद्धावस्था में मनुष्य सोचता है कि बुढ़ापे में अपने बेटे-बहू के साथ आराम से रहेंगे लेकिन ऐसा होता नहीं है | काशीनाथ सिंह के *'रेहन पर रग्घू'* उपन्यास में रघुनाथ और शीला ने अपने दोनों बेटों संजय और धनंजय को पढ़ा-लिखा कर काबिल बनाया | संजय अमेरिका में जाकर बस गया और वही विवाह कर लिया | छोटा बेटा धनंजय भी दिल्ली में बस गया | अब बूढ़े रघूनाथ और उनकी पत्नी शीला ग्रामीण समाज में अकेले और असुरक्षित रह जाते है , जिनको उनके भतीजे जमीन को लेकर प्रताड़ित करते रहते हैं | शीला चिंतित होकर कहती हैं –

> "सारे दुख इसी बुढ़ापे में देखने बदे थे क्या ? एक बेटा परदेस में, पता नहीं, कब आएगा; दूसरा यहाँ लेकिन उसका भी वही हाल | बल्कि उससे भी ख़राब ! और इधर बाप की अलग मुसीबत | गाँव छोड़े तो जान बचे, नहीं मारे जाएँ | न कोई देखने वाला, न सुनने वाला |"(सिंह 90)

यहाँ एक वृद्ध माँ अपने दोनों बच्चों के साथ न होने पर असुरक्षित महसूस करती है | इस उपन्यास में उम्र के इस पड़ाव में पहुँचे वृद्ध पात्रों के जीवन को उद्घाटित किया गया है | विदेशों और बड़े शहरों में पलायन के कारण गाँव और छोटे शहरों में अनेक ऐसी कॉलोनियां थी जहाँ केवल बूढ़े ही थे | अशोक विहार उन्हीं में से एक थी –

> “जब कॉलोनी तैयार हुई तो पाया गया कि यह बूढ़ों की कॉलोनी है ! ऐसे बूढ़े-बूढ़ियों की जिनके बेटे-बेटी अपनी बीवी और बच्चों के साथ परदेस में नौकरी कर रहे हैं – कोई कलकाता है, तो कोई दिल्ली, कोई मुंबई तो कोई बंगलौर और कइयों के तो विदेश में | (सिंह 110)

पूरी कालोनी का वृद्धों से भरा होना वर्तमान समय की भयावहता को व्यक्त करता है जिसमें वृद्धजन अपने ही लोगों के बीच उपेक्षा और अकेलापन महसूस करते हैं | आर्थिक सुख-सुविधाओं एवं भौतिक सुख की तलाश में युवा पीढ़ी अपना घर-परिवार छोड़कर बड़े-बड़े शहरों तथा विदेशों की ओर रुख कर रही है | कुछ अपने बूढ़े माँ-बाप को अकेले, कुछ नौकरों के सहारे, कुछ अपने बूढ़े माँ-बाप की व्यवस्था वृद्धाश्रम में कर जाते है | वहीं वृद्ध माँ-बाप बच्चों के लौटने की आस लगाए बैठे रहते हैं | वृद्धावस्था एक ऐसी अवस्था है जिसमें सब उसका साथ छोड़ने लगते है, देह भी और रिश्ते भी | जीवन के रिश्तों की यह कैसी विडंबना है जिनके लिए जीवन भर दुख गम सहें वे अपने ही ठुकरा जाते है | रिश्तों की नाजुक डोर को एक ही पल में समाप्त कर अपना स्वार्थ देखकर जीवन के भावी सफर के लिए आगे चल पड़ते है | पीछे रह जाते बिलखते बूढ़े माँ-बाप जिनकी आज उन्हें कोई जरूरत नहीं | कभी यही बच्चे अपने माँ-बाप को एक पल के लिए भी छोड़ने को तैयार नहीं होते थे | आज परिस्थितियां पूरी तरह बदल चुकी हैं | नई पीढ़ी के बच्चे गाँव से निकलकर बड़े-बड़े नगरों में बस कर वहीं पर शादी कर अपना परिवार बसा लेते है | वृद्ध माँ-बाप को शहर में रह रहे बेटे की शादी के बाद बेटे-बहू पोते का मुँह देखने को भी नसीब नहीं होता | बच्चे शहरों में बसने के बाद अपने माता-पिता, घर-परिवार, गाँव के खेत-खलियान सब भूल जाते हैं | जिन बूढ़े माँ-बाप ने खेती-बाड़ी में मेहनत करके अपने बच्चे को पढ़ाया-लिखाया वे अपनी उसी गाँव की जमीन-जायदाद को बेच कर शहरों में बसना चाहते है | एस.आर. हरनोट की कहानी *‘लोहे के बैल’* में वृद्ध पात्र शोभा सिंह का बेटा सुरमेया (एस.सी. कोहली) गाँव की जमीन बेचने की बात अपने पिता से फोन में करते हुए कहता है-

> “आपको तो कहा था डैड इतनी जमीन है गाँव में, पूरी नहीं तो आधी बेच देते | मेरे शहर के खर्चे तो निकल जाते | पर आप है इस बुढ़ापे में भी चिपके रहना चाहते हैं उस जमीन से, जिसकी आज मार्केट वैल्यू शून्य है | क्या पैदा होता है वहाँ ...कितनी साहूकारी चलती है आपकी ..? आज बड़ी-बड़ी कंपनियाँ गाँव की तरफ आ रही हैं | वे जानते है कि पत्थर मिट्टी से कैसे सोना निकाला जाता है | मैं इतनी बड़ी पोजीशन में हूँ | एक-दो जगह बात की थी | वे मान भी गए थे | अच्छा-खासा पैसा मिल जाता और आप दोनों को भी वहीं वे कुछ काम दे देते | पर आप हैं न डैड न खुद आराम से रहोगे, और न मुझे आराम से रहने देंगे |” (हरनोट 70)

शोभा और उसकी धर्मपत्नी हंसमी ने मेहनत-मजदूरी, खेती-बाड़ी करके अपने बेटे सुरमेया (एस.सी. कोहली) को पढ़ाया इंजिनियर बनाया | बड़े शहर में बेटे की नौकरी से दोनों बहुत खुश थे | लेकिन बेटे की नौकरी क्या लगी जैसे पंख लग गए हो | न घर-गाँव आया न जगह-जमीन, न माँ-बाप से मिलने आया |

> “बेटा जब से नौकरी लगा था, गाँव और जमीन से कोई लेना-देना नहीं रह गया था | कंपनी ने उसे अच्छा खासा पैकेज तय किया था लेकिन खर्चे भी उसने उसी अनुपात में बढ़ा लिए थे | शादी भी अपनी मर्जी से कंपनी में ही काम करने वाली एक अफसर से की थी | उसकी बीवी को गाँव के नाम से इतनी एलर्जी थी जितनी दमे के मरीजों को बरसात की घनी धुंध से होती है | शोभा ने तो कभी बहू का मुँह तक नहीं देखा था | कई बार कोशिश की कि दोनों बेटे के पास जाकर रह आयें, पर वह हमेशा किसी न किसी बहाने उन्हें टाल दिया करता | (हरनोट 67)

हर माँ-बाप की ख्वाहिश होती है बेटा नौकरी लगे उसके बाद उसकी शादी धूम-धाम से हो | पोते पोतियाँ उनके आँगन में खेले, बच्चों की किलकारियों से भरा घर हो | लेकिन शोभा और उसकी पत्नी हंसमी को न बेटे की शादी देखने को मिली, न बहू, न पोता-पोती | गाँव के सेवानिवृत्त मास्टर मजीठा राम शर्मा की नजरे शोभा के खेतों पर थी | उसने कई बार शोभा को उसकी जमीन खरीदने का प्रस्ताव रखा | शोभा अपनी जमीन कभी बेचना नहीं चाहता था | लेकिन मास्टर ने उसके बेटे सुरमेया से जमीन बेचने की बात रखी तो वह राजी हो गया | मास्टर यह बात शोभा के भाई सेवा से बताते हुए कहता है –

> “वह तो राजी है सेवा, पर इसको देखो तो | सांप की तरह बैठा है जमीन पर | वह तो बोलता था उसका बाप जब तक है वह बेचने ही नहीं देगा | जिस दिन वह नहीं रहा, दूसरे दिन दे देगा सारी जमीन | ...अभी से एडवांस भी दे दिया है उस बेवकूफ को | एडवांस ? हाँ भई हाँ, एडवांस | उसे जरूरत थी | मैं पिछले साल उसकी कंपनी किसी काम से गया था | इसी बहाने उससे भी मिल लिया | बातों-बातों में उसने कुछ मदद की बात की तो मैंने लगे हाथ जमीन की बात चला दी | वह मान तो गया पर कहने लगा कि साड़ी तो नहीं लेकिन अपने हिस्से की ज़रूर ठहर कर दे देगा | बई सेवा तू तो जानता है मैंने अपने महकमे में लोग ही चारे हैं | एक बार उँगली हाथ आ जाए तो बाँह पकड़ते कौन सी देर | पूरा एक लाख दिया है ब्याज पर | उसने शहर में घर लेना था | मैंने बिना सोचे उसे एक लाख दे दिया | अब देख न पक्का कागज बनाया है | मैं जानता हूँ साल-दर-साल ब्याज बढ़ता रहेगा और जिस दिन शोभा गया जमीन हमारी |” (हरनोट 77)

यह बात जानकर वृद्ध शोभा को गहरा आघात पहुँचता है और सोचने लगता है –“बेटे को बाप नहीं याद आया वरना एक तो क्या दो लाख मार देता उसके मुँह पर | मारता क्यों प्यार से दे देता उसे | उसी का सब कुछ है | हमारा क्या आज मरे तो कल दूजा दिन |” (हरनोट 78) शहर में रहने वाला बेटा शहर में घर खरीदने के लिए अपने पूर्वजों की जमीन माँ-बाप से पूछे बिना बेचने का निर्णय ले लेता है | यह बात एक बाप को गहरा सदमा पहुंचाती है | गाँव में अकेले रह रहे बूढ़ों की संपत्ति और सहारा उनके खेत-खलियान, पशु और घर-गाँव ही होता है | शहर में रहने वाला बेटा अपने स्वार्थ के लिए उनसे वो सहारा भी छिनना चाहता है | बच्चों का बड़े शहरों व विदेश में बसना एक आधुनिक प्रवृत्ति है, जो अवसरों और चुनौतियों दोनों को साथ लाती है | यह माता-पिता और बच्चों

दोनों की जिम्मेदारी है कि वे भावनात्मक, आर्थिक और सांस्कृतिक संतुलन बनाए रखें | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की सांस्कृतिक समस्याएं केवल संवेदना नहीं, बल्कि समाज के बदलते मूल्य बोध और पारिवारिक संरचना पर भी प्रश्न चिह्न हैं | यह साहित्य न केवल इन समस्याओं को उजागर करता है, बल्कि समाज को संवेदनशील बनाने का प्रयास भी करता है |

- **निष्कर्ष :**

वृद्धावस्था जीवन की एक ऐसी सच्चाई है, जिसका सामना करने के लिए मनुष्य को सहज रूप से तैयार रहना चाहिए | इस अवस्था में मनुष्य को अनेक शारीरिक व्याधियां घेर लेती है | विभिन्न रोगों से ग्रसित होने के साथ-साथ परिवार के सदस्यों का उनके प्रति उपेक्षा पूर्ण व्यवहार उनकी समस्या को और बढ़ा देता है | भारतीय समाज में संयुक्त परिवार की व्यवस्था धीरे-धीरे एकल परिवार में बदलती जा रही है | एकल परिवार में नई पीढ़ी रोजगार की तलाश में घर से दूर जाने को मजबूर है | घर से दूर जीवन की समस्याओं और व्यस्तताओं में उलझे हुए है | आधुनिकता, वैश्वीकरण, पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव और भौतिकतावादी युग में पारम्परिक जीवन और सांस्कृतिक मूल्यों का ह्रास दिन-प्रतिदिन होता जा रहा हैं | वृद्धों को उम्र के इस पड़ाव में शारीरिक, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक आदि कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श उनके वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक समस्याओं के रूप में उजागर होता है | वृद्धावस्था में शारीरिक कमजोरी, मानसिक तनाव और स्वास्थ्य संबंधी परेशानियाँ सामान्य हैं | पारिवारिक दृष्टि से अकेलापन, उपेक्षा और पीढ़ियों के बीच संवादहीनता प्रमुख समस्याएँ हैं | सामाजिक रूप से वे सम्मानहीनता, अलगाव और मानसिक असुरक्षा का अनुभव करते हैं | आर्थिक रूप से कई वृद्ध दूसरों पर निर्भर रहते हैं, जबकि सांस्कृतिक दृष्टि से उनका अनुभव और परंपरा अवमूल्यित होता है | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धजनों की सांस्कृतिक समस्याएं पारिवारिक और सामाजिक बदलावों का प्रतिबिंब हैं | इस युग का कथा साहित्य एक ओर आधुनिकीकरण, वैश्वीकरण और भौतिकतावाद के प्रभाव को दर्शाता हैं वहीं दूसरी ओर परम्परागत भारतीय संस्कृति, संस्कारों और संबंधों के विघटन की पीड़ा को भी उजागर करता है | इस युग के लेखकों ने संवेदनशीलता, आत्ममंथन और यथार्थवाद के माध्यम से यह दिखाया है कि कैसे बदलते सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश में मानवीय संबंध, मूल्य और पहचान संघर्ष रत है | यह साहित्य समाज को आईना दिखाते हुए परिवार, समाज और सरकार को इन समस्याओं का समाधान खोजने के लिए प्रेरित करता है | वृद्धजनों की सांस्कृतिक पहचान और सम्मान की रक्षा न केवल उनका अधिकार है, बल्कि हमारी सभ्यता और संस्कृति का भी आधार है | वृद्ध विमर्श बुजुर्गों से जुड़ी प्रत्येक समस्या का प्रत्येक दृष्टिकोण से वास्तविक स्वरूप समाज के सामने लाने का कार्य कर रहा है | वृद्धावस्था एक ऐसी अवस्था है, जिसका इलाज प्रेम, सहयोग, आदर, सम्मान और उनकी सेवा आदि के द्वारा ही संभव है |

संदर्भ ग्रन्थ :-

आधार ग्रन्थ :

उपन्यास -

कालिया, ममता. *दौड़*. नयी दिल्ली, छठा संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2021.

चतुर्वेदी, ज्ञान. *हम न मरब*. नई दिल्ली, तीसरा संस्करण, राजकमल प्रकाशन, 2017.

टेकचंद. दाई. नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2017.

दिवाकर, रामधारी सिंह. नयी दिल्ली, *दाखिल खारिज*. पहला संस्करण, राजकमल प्रकाशन, 2014.

नेगी, सूरज सिंह. *वसीयत*. जयपुर, साहित्यागार प्रकाशक, 2018.

नेगी, सूरज सिंह. *रिश्तों की आंच*. जयपुर, नवजीवन पब्लिकेशन, 2016.

नेगी, डॉ. सूरज सिंह, *नियति चक्र*. जयपुर, सनातन प्रकाशन, 2019.

बख्शी, कमलेश. *अतीत से गुजरते*. प्रथम संस्करण, प्रेम प्रकाशन मंदिर, 2009.

मिश्र, गोविन्द. *शाम की झिलमिल*. नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, किताबघर प्रकाशन, 2017.

मुद्गल, चित्रा. *गिलिगडु*. नयी दिल्ली, पहला संस्करण, सामयिक प्रकाशन, 2002.

वर्मा, निर्मल. *अंतिम अरण्य*. नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2000.

वर्मा, रवीन्द्र. *पत्थर ऊपर पानी*. नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2000.

वत्स, राकेश. *फिर लौटते हुए*. प्रथम संस्करण, राजपाल एंड सन्स, 2003.

सिंह, *काशीनाथ*. *रेहन पर रग्घू*. नयी दिल्ली, चौथा संस्करण, राजकमल प्रकाशन, 2014.

सोबती, कृष्णा. *समय सरगम*. नयी दिल्ली, चौथा संस्करण, राजकमल प्रकाशन, 2019.

हृदयेश. *चार दरवेश*. नयी दिल्ली, दूसरा संस्करण, भारतीय ज्ञानपीठ, 2013.

शाह, रमेशचंद्र. *सफेद परदे पर*. किताबघर प्रकाशन, 2011.

कहानी संग्रह –

अग्निहोत्री, कृष्णा. *अपना-अपना अस्तित्व*. प्रथम संस्करण, नयी किताब प्रकाशन, 2018.

कुठियाला, भानुप्रताप. *लाजवंती*.

मुद्गल, चित्रा. *लपटें*. नयी दिल्ली, छठा संस्करण, वाणी प्रकाशन ग्रुप, 2024.

मेहरा, दिलीप. *साजिश कहानी*. साहित्यक वीथिका, 2021.

हरनोट, एस आर. *कीलें*. प्रथम संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2019.

हरनोट, एस आर. *दारोश तथा अन्य कहानियां*. पंचकुला हरियाणा, प्रथम संस्करण, आधार प्रकाशन प्राईवेट लिमिटेड, 2001.

हरनोट, एस आर. *कीलें*. प्रथम संस्करण, नयी दिल्ली, आधार प्रकाशन प्राईवेट लिमिटेड, 2001.

सहायक ग्रन्थ –

परमार, दीपिका. *हिंदी कहानियों के आईने में वृद्ध विमर्श*. प्रथम संस्करण, उत्कर्ष पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्युटर्स, 2021.

लाल, विमला. *वृद्धावस्था का सच*. कल्याणी शिक्षा परिषद, 2019.

पत्रिका –

वांग्मय, अंक जनवरी-मार्च 2021

राकेश, सुशील. (संपादक) साझा कहानी संग्रह. 'अक्षरार्थ' पहला संस्करण, 2021.

दिलीप, मेहरा. साहित्य-वीथिका, 2021.

चौथा अध्याय

21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श : मनोवैज्ञानिक पक्ष

क्र.स.	विवरण	पृ.स.
4.	**चतुर्थ अध्याय - 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श : मनोवैज्ञानिक पक्ष**	**210-236**
4.1	21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की मनोवैज्ञानिक समस्याएं 4.1.1 अकेलापन 4.1.2 लगाव 4.1.3 चिड़चिड़ापन और जिद्दीपन 4.1.4 भय 4.1.5 मानसिक अवसाद 4.1.6 याददाश्त में कमी 4.1.7 मृत्यु बोध	
•	निष्कर्ष	
•	सन्दर्भ सूची	

चौथा अध्याय

21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श : मनोवैज्ञानिक पक्ष

21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में बुज़ुर्गों की आंतरिक भावनाओं, मानसिक द्वंद्व और मनोवैज्ञानिक स्थिति को गहराई से उजागर किया है | वृद्धावस्था केवल शारीरिक क्षीणता का समय नहीं है, बल्कि यह मानसिक संघर्ष, आत्मबोध और जीवनानुभवों के पुनर्पाठ का भी काल है | मनोविज्ञान शब्द आंग्ल भाषा के शब्द साइकोलॉजी का हिंदी रुपान्तर है | साइकोलॉजी शब्द ग्रीक भाषा के दो शब्दों – Psyche तथा Logos से मिलकर बना है | ग्रीक भाषा में 'Psyche' का अर्थ 'आत्मा' तथा 'Logos' का अर्थ है 'विज्ञान' इस प्रकार शाब्दिक अर्थ में साइकोलॉजी का अर्थ है 'आत्मा का विज्ञान' | डॉ. सीमा श्रीवास्तव अपनी पुस्तक *'हिंदी साहित्य में मनोविज्ञान'* में लिखती हैं – "मनोविज्ञान वह शास्त्र है जिसमें चित की वृतियों का विवेचन होता है, जिसके द्वारा यह जाना जाता है कि चित्त में कौन सी वृत्ति कब, क्यों और किस प्रकार उत्पन्न होती है | चित्त की वृत्तियों की मीमांसा करने वाला शास्त्र|"(श्रीवास्तव 14) यह परिभाषा मनोविज्ञान को चित्त और उसकी वृत्तियों के विश्लेषण तक सीमित करती है | इसमें मनोविज्ञान का मूल कार्य मानव-मन की गहराई में जाकर यह जानना बताया गया है कि विचार, भावना और वृत्ति किस कारण से और कैसे उत्पन्न होती है | यह दृष्टिकोण पारंपरिक और दार्शनिक है, जबकि आज के युग में मनोविज्ञान अधिक व्यापक, प्रयोगात्मक और वैज्ञानिक हो गया है | डॉ. एस.एस. माथुर अपनी पुस्तक *'शिक्षा मनोविज्ञान'* में लिखते हैं – "मनोविज्ञान दर्शनशास्त्र की वह शाखा है जिसमें मन और मानसिक क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है |"(माथुर 6) माथुर की यह परिभाषा मनोविज्ञान को दर्शन से जुड़ा और मन-केन्द्रित शास्त्र मानती है | यह पारंपरिक दृष्टिकोण है, जबकि आधुनिक मनोविज्ञान मन और मानसिक क्रियाओं के साथ-साथ व्यवहार और अनुभवों का भी वैज्ञानिक अध्ययन करता है | मनोविज्ञान की आधार भूमि दर्शनशास्त्र ही है | प्राचीनकाल में यह दर्शनशास्त्र का ही एक अंग था और दार्शनिकों ने ही मनोविज्ञान को एतिहासिक जड़े प्रदान की पश्चिम में प्लेटों, अरस्तु तथा यूनानी दार्शनिकों ने तथा हिन्दू, बौद्ध कन्फ्युसियस सम्प्रदाय के चीनियों ने मनोविज्ञान सम्बन्धी विचारधाराएँ प्रचलित की | मनोविज्ञान एक ऐसा ज्ञानानुशासन रहा है जिसने ज्ञान के तमाम अन्य अनुशासनों को सबसे ज्यादा प्रभावित किया है | युंग, फ्रायड, एडलर आदि के चिंतन का प्रभाव समाज और ज्ञानानुशासनों पर इस कदर रहा कि कोई भी ज्ञानानुशासन उठाकर देखा जाए उसमें मनोवैज्ञानिक अध्ययन की एक धारा जरूर मिल जायेगी | चिकित्सा, धर्म, न्याय, विज्ञान, कला और साहित्य सब जगह मनोविज्ञान की उपस्थिति अनिवार्य रूप से दृष्टिगत होती है | ऐसे में हिंदी साहित्य मनोविज्ञान से अछूता नहीं रह सकता है | हिंदी साहित्य की तमाम विधाओं में मनोवैज्ञानिक धारा की उपस्थिति रही है | मनोवैज्ञानिक आलोचना, कविता, उपन्यास और कहानियाँ आदि हिंदी साहित्य में पढ़ी पढ़ाई जाती है और पर्याप्त लेखन इसमें हुआ है और आज भी हो रहा है | यूँ तो प्रेमचंद के कथा साहित्य से ही मनोविज्ञान के तत्व दिखाई देने लगते है | मुंशी प्रेमचंद के बाद हिंदी कथा साहित्य में यह मनोवैज्ञानिक धारा और मजबूत बनी | इलाचंद जोशी, जेनेन्द्र, अज्ञेय, यशपाल इत्यादि ने हिंदी में बेहतरीन मनोवैज्ञानिक कथा साहित्य लिखा | बाल मनोविज्ञान, स्त्री मनोविज्ञान, पुरुष मनोविज्ञान

और वृद्ध मनोविज्ञान आदि पर हिंदी कथा साहित्य में श्रेष्ठ साहित्य लिखा जा रहा है | 21वीं सदी का हिंदी कथा साहित्य न केवल सामाजिक यथार्थ को उजागर करता है, बल्कि मनुष्य की मानसिक और भावनात्मक दुनिया की भी गहराई से पड़ताल करता है | इस संदर्भ में वृद्ध विमर्श का मनोवैज्ञानिक पक्ष विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि यह वृद्धजनों के भीतर चल रही भावनात्मक हलचलों, असुरक्षा, अकेलेपन, भय और अस्तित्व संकट को सामने लाता है | साथ ही, कुछ रचनाएँ यह भी दर्शाती हैं कि आध्यात्मिकता और जीवनानुभवों का संतुलन वृद्धों को मानसिक दृढ़ता प्रदान करता है |

4. 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की मनोवैज्ञानिक समस्याएं

21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श एक महत्वपूर्ण और समकालीन विषय है | यह विमर्श समाज में वृद्धजनों की बदलती स्थिति, उनके अनुभव और उनके प्रति बदलते दृष्टिकोण को प्रस्तुत करता है | मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से यह विमर्श वृद्धजनों की मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक पहलुओं को केंद्र में रखता है | मनुष्य की आयु बढ़ने के साथ उसके अंदर मनोवैज्ञानिक परिवर्तन होते हैं | शारीरिक कार्यक्षमता घटने और सामाजिक उपयोगिता कम होने के साथ वृद्ध व्यक्ति को अनेक मानसिक चिताएँ घेर लेती है | वृद्धावस्था में काया के क्षीण होने के साथ मन भी टूटता है और मानसिक दशा अति निराशा पूर्ण हो जाती है | विमला लाल अपनी पुस्तक '*वृद्धावस्था का सच*' में लिखते है –

> "असमर्थता की इस प्रतीति के साथ ही मन पर एक अनजाना-सा भय हावी होने लगता है – आने वाले समय में आशंकित घोर संघर्ष, तनाव, संताप और समाज से, विशेषकर उन अपनों से ही मिलने वाले अपमान और यातनाओं का भय, जिनके लिए मनुष्य अपने जीवन की महत्त्वपूर्ण घड़ियों को बलिदान कर-करके उनके सुख का भार ढोता-ढोता ही इस अवस्था में पहुँच गया है ! इस अवस्था का आरंभ होते ही मानो सारा संसार अपना रंग बदलने लगता है | आदमी के मन में एक संत्रास सांप कुंडली-सी मारकर बैठ जाता है | उस परिवेश में आदमी खुलकर सांस तक नहीं ले पाता | वह जीता तो है, किंतु जीवन पर जैसे हर पल मौत की धमक-सी रहती है | मानसिक एवं शारीरिक स्तर पर अनेक भयंकर संघर्ष और नैतिक-अनैतिक दबाव उसे इस सीमा तक विचलित करते रहते हैं कि वह किसी भी तरह उबर नहीं पाता और हर पल का निरंतर तनाव तथा पस्ती उसे घोर हताशा से तोड़ती रहती है |" (लाल 58-59)

यह उद्धरण वृद्धावस्था के मनोवैज्ञानिक पक्ष को बड़ी मार्मिकता से दर्शाता है | इसमें असमर्थता, भय, अपमान, संत्रास और हताशा जैसे भावों का चित्रण है | वृद्ध व्यक्ति जीवन तो जीता है, परंतु उसे हर क्षण मृत्यु का भय और अपनों की उपेक्षा का दर्द सालता रहता है | वृद्धावस्था में बच्चों, परिवार और समाज से मिलने वाला भावनात्मक समर्थन बहुत मायने रखता है | वृद्धों को कई बार उपेक्षित, असहाय और अलग-थलग महसूस कराया जाता है, जो उनके मानसिक अवस्था को प्रभावित करता है | 21वीं सदी का हिंदी कथा साहित्य वृद्ध विमर्श को समाज और पाठकों के समक्ष एक गंभीर और संवेदनशील मुद्दे के रूप में प्रस्तुत करता हैं | मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से यह साहित्य वृद्धजनों की समस्याओं, भावनाओं और संघर्षों को गहराई के साथ उजागर करता है |

4.1.1 अकेलापन

अकेलापन एक मनोवैज्ञानिक समस्या है | वृद्ध व्यक्ति समाज में होने वाले वैश्वीकरण के बदलाव के साथ सामंजस्य नहीं कर पाते हैं | वृद्ध व्यक्ति परिवार व समाज की गति के साथ चलने में असमर्थ होता है | परिणामस्वरूप वे पीछे छूट जाते हैं और फिर धीरे-धीरे वे समाज में मेलजोल न रख पाने के कारण एकदम अकेले हो जाते हैं | वृद्धावस्था जीवन की अंतिम अवस्था मानी गयी है | इस अवस्था में वृद्धों को सहानुभूति, प्रेम व सहारे की ज्यादा आवश्यकता होती है | औद्योगीकरण तथा नगरीकरण के प्रभाव के कारण संयुक्त परिवारों की जगह एकल परिवारों की संख्या में वृद्धि हो रही है | परिवार जितना छोटा होता गया आदमी उतना ही एकाकीपन का शिकार होता जा रहा है | परिवार के युवा सदस्य नगरों में जाकर बसने लगे है तथा अपने माता-पिता के साथ रहना नहीं चाहते | फलस्वरूप जिस आयु में व्यक्ति को अपने बच्चों से सबसे अधिक सहायता और संरक्षण की आवश्यकता होती हैं, उस उम्र में वे खुद को अकेला और निराश्रित महसूस करने लगते है | जीवन की अंतिम अवस्था में अकेलापन व्यक्ति को खोखला बना देता है | अकेलेपन की यह भावना वृद्धावस्था में मानसिक तनावों का एक प्रमुख कारण हैं | ममता कालिया ने *'दौड़'* उपन्यास में बुढ़ापे में अकेले और बेबस परिवारों का चित्रण किया है |

> "सिन्हा साहब बताते है उनका अमित मुंबई में है, वहीं उसने किश्तों पर फ्लैट खरीद लिया है | सोनी साहब बताते उनका बेटा एच.सी.एल. की ओर से न्यूयॉर्क चला गया है | मजीठिया का छोटा भाई कैनेडा में हार्डवेयर का कोर्स करने गया था, वहीं बस गया है | ये सब कामयाब संतानों के माँ-बाप थे | हर एक के चेहरे पर भय और आशंका के साए थे | इतनी दूर चला गया है बेटा, पता नहीं हमारा क्रिया करम करने भी पहुंचेगा या नहीं ?" सोनी साहब कहकर चुप हो जाते है |" (कालिया 68, 69)

संतान की सफलता और प्रवासी जीवन माता-पिता के लिए गौरव लाता है, लेकिन साथ ही उन्हें अकेलेपन, असुरक्षा, मृत्यु-बोध और उपेक्षा का गहरा भय भी देता है | बाजारवादी संस्कृति ने रोजगार के अवसर खोल दिए है | इस संस्कृति का संबंध पैसों से है | युवा वर्ग अपना करियर और उज्ज्वल भविष्य बनाने के लिए बड़े-बड़े शहर और विदेशों में पलायन कर रहा है | जीवनयापन और बेहतर भविष्य के लिए नौकरी करना बहुत आवश्यक है | लेकिन अपने करियर के चक्कर में युवाओं के पास अपने माँ-बाप के लिए भी वक्त नहीं है यहाँ तक जब उनके माता-पिता की मृत्यु हो जाती है उस वक्त भी उनके बच्चे उनका दाह संस्कार करने के लिए उपस्थित नहीं रहते | बाजारवादी संस्कृति ने मानवीय रिश्तों को तहस-नहस कर दिया है | अपनत्व की भावना की कोई कदर नहीं की जा रही है | *'दौड़'* उपन्यास में सोनी साहब की मृत्यु हो जाने पर न्यूयॉर्क में रहने वाला उनका बेटा दाह संस्कार के लिए नहीं आ पाता | और पूछने पर सलाह देता है –"आप ऐसा कीजिए , इस काम के लिए किसी को बेटा बनाकर दाह-संस्कार करवाइए | मेरे लिए तेरह दिन रुकना मुश्किल होगा | आप सब काम पूरे करवा लीजिए |"(कालिया 81) संतान आधुनिक जीवन की व्यस्तताओं और पारंपरिक कर्तव्यों के बीच फँस जाती है | परिणामस्वरूप वह अपनी सामाजिक भूमिका से बचने लगती है | आज युवा पीढ़ी विदेशों में जाती तो कुछ वर्षों के लिए नौकरी करने के लिए लेकिन स्थायी रूप से वहीं का निवासी बन कर रह जाती है | उनके माँ-बाप उनकी यादों में तड़पते रहते हैं | माँ-बाप के जीते जी न सही लेकिन उनके मरने के पश्चात भी वे वापस नहीं आ पाते | समाज में पारिवारिक मूल्यों का क्षरण हुआ है | पहले माता-पिता के अंतिम संस्कार को 'पवित्र दायित्व' माना जाता था, अब यह केवल एक औपचारिक

कार्य बन गया है | वर्तमान में हर व्यक्ति को स्वतंत्रता चाहिए, इसलिए आज बच्चे अपने माता-पिता से दूर रहते हैं | बदलते सामाजिक ढांचे के इस रूप से आज एक तरफ युवा पीढ़ी भौतिकवादी दृष्टिकोण अपनाकर अर्थार्जन के लिए भागी जा रही है तो दूसरी तरफ बुजुर्ग पीढ़ी नितांत अकेली, हताश, निराश तथा अवसादग्रस्त जीवन जीने को विवश है | आज की विडंबना है कि वृद्ध की मन: स्थिति को समझने का प्रयास युवा पीढ़ी नहीं करती | 'दौड़' उपन्यास में पवन और सघन के बाहर चले जाने के बाद उनके माता-पिता के अकेलेपन की समस्या खड़ी हो जाती है | छोटा लड़का सघन विदेश और बड़ा लड़का पवन मध्य भारत चला जाता हैं अब घर में दो ही लोग रहते हैं दोनों के अकेलेपन का चित्रण लेखिका ने उनकी पीड़ा के द्वारा चित्रित करते हुए लिखा है –

> "घर वही था, दर ओ दीवार वही थे, घर का सामान वही था, यहाँ तक कि रुटीन भी वही था पर पवन और सघन के माता-पिता को मानो बनवास मिल गया | अपने ही घर में वे आकुल पंछी की तरह कमरे-कमरे फड़फड़ाते डोलते | पहले दिन तो उन्हें बिस्तर पर लगता रहा जैसे कोई उन्हें हवा में उड़ाता हुआ ले जा रहा है | जब तक सघन का वहाँ से फोन नहीं आ गया, उनके पैरों की थरथराहट नहीं थमी | छोटे बेटे के जाने से बड़े बेटे की अनुपस्थिति भी नए सिरे से खलने लगी |" (कालिया 74,75)

यह उद्धरण वृद्धावस्था में अकेलापन और मानसिक असुरक्षा को गहराई से उजागर करता है | अपने ही घर में रहते हुए माता-पिता अजनबी और असुरक्षित महसूस करते हैं, क्योंकि संतान दूर है | घर, दीवारें और दिनचर्या वही हैं, फिर भी उनके भीतर अकेलापन, अधूरापन और भय उत्पन्न हो जाता है | छोटे बेटे के जाने से बड़े बेटे की अनुपस्थिति भी खलने लगती है और यह मानसिक तनाव शारीरिक प्रतिक्रिया के रूप में दिखाई देती है, जैसे पैरों की थरथराहट और कमरे-कमरे फड़फड़ाना | इस प्रकार उद्धरण वृद्धावस्था में भावनात्मक निर्भरता, अकेलापन और सामाजिक दूरी जैसी मनोवैज्ञानिक समस्याओं को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करता है | बच्चे होते हुए भी माँ-बाप को बाजारवादी संस्कृति के कारण अकेले जीने के लिए मजबूर होना पड़ता है | बच्चों का अधिक से अधिक धनार्जन और पद प्राप्त करने के लिए बड़े-बड़े शहरों और विदेशों में पलायन के कारण माँ-बाप अपने बच्चों की यादों के सहारे जीवन जीने को विवश है | 'दौड़' उपन्यास में पवन और सघन के विदेश में जाने के पश्चात उनकी माँ रेखा अपने बच्चों के बचपन की यादों में उलझी रहती हैं –

> "उसका मन बार-बार बच्चों के बचपन और लड़कपन की यादों में उलझ जाता | घूम-फिरकर वही दिन याद आते जब पुन्नू छोटू धोती से लिपट-लिपट जाते थे | कई बार तो इन्हें स्कूल भी लेकर जाना पड़ता क्योंकि वे पल्लू छोड़ते ही नहीं | किसी सभा-समिति में आमंत्रित किया जाता तब भी एक-न-एक बच्चा साथ जरूर चिपक जाता | वह मजाक करती, "महारानी लक्ष्मीबाई की पीठ पर बच्चा दिखाया जाता है, मेरा उँगली से बंधा हुआ |" क्या दिन थे वे ! तब इसकी दुनिया को धुरी माँ थी, उसी में था उनका ब्रह्माण्ड और ब्रह्मा | माँ की गोद इनका झूला, पालना और पलंग | माँ की दृष्टि इनका सृष्टि विस्तार |...रेखा के कलेजे में हुक-सी उठती, कितनी जल्दी गुजर गए वे दिन | अब तो दिन महीनों में बदल जाते हैं और महीने साल में, वह अपने बच्चों को भर नजर देख भी नहीं पाती |" (कालिया 76)

यहाँ देख सकते है कि बच्चों से दूर रहने के कारण एक माँ के मन की स्थिति का चित्रण किया है | माँ के लिए बच्चे कितने भी दूर क्यों न हो लेकिन माँ को हमेशा अपने बच्चों का ध्यान और याद रहती है | बुढ़ापे में एक माँ अपने बच्चों की बचपन और जवानी सब यादों को याद करके ही अपना जीवन बिताने को मजबूर रह जाती है | बचपन में बच्चों की दुनिया उनकी माँ ही होती है लेकिन जैसे वे युवा हो जाते है तो हर कार्य में स्वतंत्रता चाहते है | युवावस्था में उन्हें एक नई दुनिया दिखाई पड़ती है और वे उस दुनिया में अपना अस्तित्व, पहचान बनाने में लग जाते है | इस नई भागमभाग दुनिया में संघर्ष व भाग-दौड़ के लिए उन्हें अपने माँ-बाप को अकेला छोड़ना पड़ता है | यह स्मृति और वर्तमान के बीच भावनात्मक दूरी और अकेलापन को उजागर करता है | उद्धरण से स्पष्ट होता है कि वृद्धावस्था में माता-पिता के लिए संतानों की अनुपस्थिति केवल सामाजिक समस्या नहीं, बल्कि मनोवैज्ञानिक पीड़ा और स्मृति-संवेदनाओं का द्वंद्व बन जाती है | काशीनाथ सिंह द्वारा रचित उपन्यास *'रेहन पर रग्घू'* में रघुनाथ तीन बच्चों के पिता होते हुए भी अपने जीवन में खुद को अकेलापन महसूस कर रहा था | बच्चे इतने दूर होते जा रहे थे जहाँ से उन्हें बुलाना संभव नहीं लग रहा था | इसी कारण अंत में वे अपने ही हाथों अपना अपहरण करते हैं | इस उम्मीद से कि शायद उनकी संतान खोजबीन करते हुए उनके पास आए और उनका एकाकीपन दूर कर दे |

> "रघुनाथ भी चाहता था कि बेटे आगे बढ़े ! वे खेत और मकान नहीं हैं कि अपनी जगह ही न छोड़े ! लेकिन यह भी चाहते थे कि ऐसा मौका भी आए जब सब एक साथ हों, एक जगह हो – आपस में हँसे, लड़ें, झगड़े, हा-हा हू-हू करें, खाएँ-पिएँ, घर का सन्नाटा टूटे | मगर कई साल हो रहे हैं और कोई कहीं है, कोई कहीं और बेटे आगे बढ़ते हुए इतने आगे चले गए हैं कि वहाँ से पीछे देखें भी तो न बाप नजर आएगा, न माँ ! कभी-कभी उन्हें लगता कि वे बापट की तरह बेऔलाद होते तो कहीं ज्यादा अच्छा होता |" (सिंह 133)

इन बातों का एक ही निहितार्थ है कि वे मान बैठे थे कि बेऔलाद होना इस संसार में अच्छा है क्योंकि किसी से कोई उम्मीद तो नहीं होती | शहर में बस जाने के कारण स्वयं को स्थापित करने एवं भौतिक सुविधाओं को जुटाने में नई पीढ़ी के लोग लगे रहते है | जिसके कारण उनके पास इतना समय नहीं होता कि वे अपने वृद्धों के साथ समय गुजार सके उनका कुशल क्षेम भी पूछ सके | उनके वृद्ध माँ-बाप अकेलेपन में अपना जीवन व्यतीत करने लगे |

वृद्धावस्था में माता-पिता के अकेलेपन, सामाजिक और भावनात्मक दूरी, और हताशा को मार्मिक रूप से प्रस्तुत करता है, जो 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श की प्रमुख मनोवैज्ञानिक समस्या है | एस. आर. हरनोट की कहानी *'लोहे के बैल'* में इसका सजीव चित्रण हुआ है | कहानी का वृद्ध शोभा शहर में रह रहे अपने बेटे को सुख-दुःख प्रकट करने के लिए फ़ोन करता है | "अरे कौन बोल रहा है, आराम से सोने भी नहीं देते ?... मैं बोल रहा हूँ बेटा |..हाँ-हाँ पहचान लिया क्यों किया फोन सुबह-सुबह ? (हरनोट 65,66) यहाँ बेटे को अपने पिता से बात करने से ज्यादा रविवार की छुट्टी में सोना ज्यादा सुखदायक लग रहा था | आज की पीढ़ी माँ-बाप के साथ फोन पर बात करने के लिए समय निकाल पाती है | पिता ने अपने बैल के गिरकर मरने पर दुःख हल्का करने के लिए बेटे को फोन किया था | बेटे को लगा पैसों के लिए फोन किया है –

> "हाँ मेरे से पैसों की उम्मीद मत रखना | तुम तो जानते हो, शहर के ख़र्चे कितने होते है | उस पर दिनोदिन महँगाई आसमान छू रही है | मैंने इसी साल एक घर ले लिया है, उसकी किश्त जाती हैं | अब कार के लिए लोन ले रहा हूँ | छोटी गाडी तो रख नहीं सकता | हैसियत के मुताबिक बड़ी रखनी पड़ेगी | घर का सारा सामान बदला है | नया एल.सी.डी. लिया है, फुली ऑटोमेटिक वाशिंग मशीन और तीन सौ लीटर का सेमसंग का फ्रिज | अब यहाँ पहाड़ जैसा ठंडा मौसम तो है नहीं, इसलिए इनवर्टर भी लेना पड़ेगा | सभी लोन पर है | पूरी तनख्वाह किश्तों में जाती है |..शोभा मोबाइल कान में लगाकर चुपचाप सुन रहा था | फोन केवल मन हल्का करने के लिए किया था, पैसे माँगने को नहीं | उसने आजतक बेटे से पैसे माँगे ही कहाँ (हरनोट 68)

भौतिकतावादी दृष्टिकोण ने व्यक्ति को संवेदनहीन बना दिया है | जिन माँ-बाप ने अपने बच्चों को पाल-पोसकर, पढ़ा लिखा कर इस काबिल बनाया आज उनके पास अपने बुजुर्गों के फोन सुनने का समय भी नहीं है, और है भी तो वे उन चीजों पर अपना वक्त जाया करना चाहते हैं, जिनसे उन्हें फायदा हो क्योंकि आज का दौर ही ऐसा है कि जहाँ हर चीज को 'उपयोगिता' के तराजू पर तोला जाता है | आज की पीढ़ी नगरों में बस जाने के बाद वापिस गाँव नहीं आना चाहती हैं | वृद्धावस्था एक ऐसी अवस्था है जिसमें वृद्धों को पारिवारिक लोगों के स्नेह की आवश्यकता होती है | उनकी यह इच्छा रहती है कि बेटे-बहू तथा पोते उनके साथ कुछ पल हँसी-ख़ुशी के साथ बिताए, लेकिन बच्चों के पास समय ही नहीं है –

> "शादी भी अपनी मर्जी से कम्पनी में काम करने वाली एक अफ़सर से की थी | उसकी बीवी को गाँव के नाम से इतनी एलर्जी थी जितनी दमे के मरीजों को बरसात की घनी धुंध से होती है | शोभा ने तो कभी बहू का मुँह तक नहीं देखा था | कई बार कोशिश की कि दोनों बेटे के पास जाकर रह आयें, पर वह हमेशा किसी न किसी बहाने उन्हें टाल दिया करता था |"(हरनोट 67)

आधुनिक जीवनशैली में संयुक्त परिवारों का विघटन और युवाओं का बड़े शहरों को पलायन वृद्धजनों के अकेलेपन को बढ़ावा देता है |अकेलापन, भावनात्मक असुरक्षा और पारिवारिक दूरी — को स्पष्ट रूप से चित्रित किया गया है | यह दर्शाता है कि केवल भौतिक अनुपस्थिति ही नहीं, बल्कि भावनात्मक असंतोष और परिवार से कटाव भी वृद्धों के मानसिक तनाव का मुख्य कारण बनता है | कृष्णा अग्निहोत्री ने अपनी कहानी '*टिन के घेरे*' में वृद्ध गंगा के पात्र द्वारा अकेलेपन को अभिव्यक्त किया है | गंगा जो कि अपने परिवार के लिए पूरी जवानी संघर्ष करती है | अपने बच्चों की अच्छी शिक्षा देने में, बेटी की अच्छे घर में शादी करने में, दुमंजिला घर बनाने में अपने सभी कर्तव्य को निभाते-निभाते वृद्धावस्था की ओर अग्रसर होती है | गंगा उम्र के इस पड़ाव में शारीरिक रूप से कमजोर महसूस कर अपने पारिवारिक कर्तव्यों को पूरा न कर पाने में असमर्थ होने लगती है | तब उनके परिवार के सदस्य उन्हें अकेला छोड़ देते हैं |

> "दोनों बूढ़े (पति-पत्नी) थके बैलों की तरह घर का बोझ ढोते रहते हैं | पहली तारीख को मिडिल स्कूल के मास्टर राशन आदि की दुकानों पर लम्बे क्यू में खड़े कई बार अंगोछे में मुँह पोंछते दिखायी देते हैं | गंगा पैसे-पैसे का जोड़-तोड़ करके

> बिहारी के साथ जाकर गृहस्थी का सारा सामान खरीद लाती | कभी-कभी गंगा को लगता कि उसके बच्चे उसके ही रक्त से पलने वाले मोटे-मोटे पिस्सू हो गये हैं, जिन्हें उसके सूखे और बूढ़े शरीर की चिंता ही नहीं | (अग्निहोत्री 95)

वृद्धावस्था में उनके बच्चे उनकी कोई मदद नहीं करते है | उन दोनों को ही घर का सारा काम अकेले करना पड़ता था | बढ़ती उम्र में भी दोनों परिवार का बोझ जैसे-तैसे उठा लेते थे | लेकिन जब बड़े बेटे वीरेंद्र के लड़के का जनेऊ था | घर के सभी सदस्य गए लेकिन दोनों बूढ़े घर पर रहकर उन्हें जाते देखते रहें | जरा सा दरवाजा हिलता बेचैन गंगा को लगता उसे बुलाने उसका बेटा खुद आया है |

> “चौदह तारीख को वीरेंद्र के लड़के का जनेऊ था | गंगा ने गुल्लक देखि और चैन की साँस ली कि अब वह पोते को उसकी मनचाही घड़ी लेकर दे सकेगी | घर के सभी प्राणी चले गये | पंडित जी बीमार पत्नी के लिए ठहरे रहे | तार आया, गंगा का जिक्र तक न था | गंगा ने कहा, ठीक है, तुम जाओ | वीरेंद्र तो मुझे लेने खुद आ जाएगा |” बारह तारीख आ पहुँची, गंगा जरा-सा दरवाजा हिलते ही बेचैनी से बिहारी से कहती, “देख तो, शायद खुद न आ सकने के कारण वीरेंद्र ने तार भेजा हो मैं तेरे साथ चली जाऊँगी |”(अग्निहोत्री 96)

वृद्धावस्था में व्यक्ति घर-परिवार व समाज में अकेला पड़ जाता है इसी अकेलेपन के कारण वृद्धों में मानसिक तनाव व असुरक्षा का भाव जाग्रत होता है | अकेले रहते-रहते जीवन निरुपयोगी लगने लगता है | एस.आर हरनोट की कहानी ‘*बिल्लियां बतियाती हैं*’ में विधवा वृद्ध अम्मा गाँव में अकेले रहती है | उसने अपने बेटे को कर्जा लेकर और खेत रेहन पर रखकर खूब पढ़ाया-लिखाया | बेटे की शहर में नौकरी भी लग गई, शहर में किसी लड़की से शादी भी कर ली और माँ अकेले गाँव में अपनी बिल्लियों, पशुओं, खेतों, चिड़ियों को अपना सहारा बनाकर अपना अकेलापन दूर करती | बेटा घर-गाँव और अम्मा को भूलकर शहर का हो गया | पति की मृत्यु और बेटे का घर बसाकर शहर में बसना अम्मा को नितांत अकेला कर देता है | अम्मा ने गाँव में अपने अकेलेपन के अनेक सहारे पाल लिए है | सुबह से शाम तक अम्मा किसी न किसी के साथ व्यस्त रहती है |

> “अम्मा का झगड़ा शुरू हो गया है | अपने आप से | दियासलाई की डिब्बिया से | ढिबरी से | चूल्हे में उपलों के बीच ठुसी आग से और बाहर भीतर दौड़ती बिल्लियों से | यही सब होता है जब अम्मा उठती है | वह चार बजे के आसपास जागती है | ओबरे में पशु भी अम्मा के साथ ही उठ जाते है | आँगन में चिड़िया को भी इसी समय चहकते सुना जा सकता है और बिल्लियों की भगदड़ भी अम्मा के साथ शुरू हो जाती है | यह नहीं मालूम की अम्मा पहले जागती है या कि अम्मा की गायें याकि चिड़िया या फिर बिल्लियां |”(हरनोट 9)

अम्मा का साथ निभाने वाला उसका बेटा नहीं बल्कि उसके अकेले पन के साथी काली और निक्की नामक बिल्लियां, ओबरे में बांधे पशु, आँगन में चहकती चिड़िया | और इसके साथ गाँव के हर लोगों के साथ अम्मा किसी न किसी तरह व्यस्त रहती है |

> “अम्मा के अकेलेपन का विचित्र संसार है | सुबह से शाम अम्मा कहीं-न कहीं किसी-न-किसी के साथ व्यस्त रहती है | अकेलेपन के अनेक सहारे पाल लिए हैं अम्मा ने | ऐसा कोई बच्चा गाँव का न होगा जो अम्मा के यहाँ गुड की डाली या

> मक्खन-रोटी न खा जाता हो, ऐसी औरत नहीं होगी जो पानी-पनिहार, घास लकड़ी को आते जाते अम्मा के आँगन बैठ बीड़ी का कश न मार जाती होगी, ऐसा कुत्ता न होगा जो अम्मा के दरवाजे टुकड़ा न खा जाता होगा |" (हरनोट 12)

माँ-बाप अपने बच्चों को जैसे-तैसे हर सुख-सुविधा देने का प्रयास करते है | अपने बच्चों की ख़ुशी में ही अपनी ख़ुशी ढूंढते है लेकिन वही बच्चे जब बड़े हो जाते है तो अपने माँ-बाप के त्याग को भूल बैठते है | माँ-बाप को अकेला छोड़ अपने नए परिवार के साथ अलग शहरों में बसने चले जाते हैं | 'बिल्लियाँ बतियाती हैं' कहानी में इस समस्या को दिखाया गया है -

> "पिता को मरे चार बरस हो गए हैं | उन दोनों का एक बेटा था और एक बेटी | बेटी का छोटी उम्र में ब्याह कर दिया | बेटे को खूब- पढ़ाया-लिखाया | उसके पिता की जिद्द रहती कि एक ही बेटा हैं, इसे अफसर नहीं बनाया तो हमारा कमाना व्यर्थ है | उसे खूब-पढ़ाया-लिखाया ! हजारों कर्जा सर पर ले लिया | एक-दो खेत रेहन रख लिए | कालेज पूरा हुआ तो नौकरी भी लग गई | लेकिन उन बूढ़ों को यह भनक न लगी कि शहर के तौर-तरीकों और चटक ने उन दोनों से बहुत दूर कर दिया है | उसका रिश्ता अपनी माटी से कटता गया | फासले बढ़ते चले गए और एक दिन जब उन दोनों को यह खबर मिली कि उसने शहर की किसी लड़की से ब्याह कर लिया तो बेचारे गाँव में किसी को मुंह दिखाने लायक नहीं रहे | कई दिनों बाद बेटा बहू को लेकर गाँव आया तो दो-चार दिनों बाद वापिस शहर लौट गया | बहू क्या जाने गाँव का रहना होता कैसा है | उसे तो यहां कैदखाना हो गया | मिट्टी-गोबर की बास और बूढ़ों का रहन-सहन उसे नहीं भाया |" (हरनोट 13)

पति की मृत्यु और बेटे का शहर में बस जाने से माँ चार सालों से अकेली रह रही थी | वैसे तो अम्मा को अकेले रहने की आदत हो गई थी | लेकिन तीज-त्योहार में अम्मा को अपने पति और बेटे की बहुत याद आती और वह खूब अकेले रोया करती थी | गाँव में पशुओं का एक त्योहार होता है जिसमें एकत्र होकर माल गाने की परंपरा होती है |

> "अम्मा की माल तो पिछले बरस जैसी होगी | निपट अकेली | कोई नहीं गाएगा | कोई नहीं आएगा | बिल्लियां होंगी | एक गाय, दो बैल और दो भेड़ें | इन्हीं के बीच मनेगा अम्मा का यह त्योहार |... यादों ने रुला दिया अम्मा को | अब अम्मा ऐसे ही रोया करती है उठते-बैठते, काम करते | रोटियां पकाते | सोते और जागते |" (हरनोट 20)

यह अंश वृद्धा अम्मा के अकेलेपन, स्मृति-संवेदनाओं और भावनात्मक पीड़ा को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करता है | अम्मा के लिए पारंपरिक त्योहार अब सिर्फ़ यादों में जीवित हैं, क्योंकि पति की मृत्यु और बेटे की अनुपस्थिति ने उसके जीवन को अधूरापन और अकेलापन में बदल दिया है | अम्मा को जब डाकिये से पता चलता उसके बेटे की चिट्ठी आई है | तो उसे विश्वास नहीं हुआ क्योंकि उसके बेटे ने आज तक कभी कोई चिट्ठी नहीं भेजी थी | डाकिये ने जब बताया उसका बेटा घर आ रहा है | माँ के ख़ुशी का ठिकाना नहीं रहा |

> "बेटा आया तो पहले सीधा अपने कमरे में चला गया | घर में एक कमरा उन्हीं के लिए बंद रहता है | अम्मा ने कभी नहीं खोला | कपड़े बदल कर काफी देर बाद आया अम्मा ने ढिबरी की लौ और ज्यादा कर ली थी | देखेगी कितना जवान हो गया है | कैसा लगता है | कमजोर तो नहीं हो गया होगा ?..अब वह बड़ा हो गया है | साहब है...आया तो पैरापावण करके

> चूल्हे के पास बैठ गया | अम्मा चाहती थी वह खूब गले लगे..भरी आँखों से पूछे-क्या इतने दिनों में माँ की याद आई ..| क्या नहीं हुआ | ऐसा नहीं माँ रोई नहीं-भीतर-ही-भीतर..अम्मा ने चाय दे दी | फिर हाथ धोने को पानी | वह मुकर गया | बोला, रोटी शहर से ही बाँध रखी थी | बस से उतरते ही खा ली |" (हरनोट 20,21)

उसका बेटा एक तो इतने समय बाद आया उस पर भी शहर से खाना बाँध कर लाया | यह सुनकर अम्मा अंदर ही अंदर टूट गई | मानो अम्मा के सर पर पहाड़ गिर गया हो | यह दृश्य वृद्धावस्था में माता-पिता के स्नेह की आवश्यकता, भावनात्मक असुरक्षा और सामाजिक दूरी को दर्शाता है | भौतिक रूप से उपस्थित होना ही पर्याप्त नहीं, बल्कि भावनात्मक जुड़ाव की कमी वृद्धों के लिए मनोवैज्ञानिक तनाव का कारण बनती है | फिर बेटे ने चुप्पी तोड़ी और जब अपने आने का मकसद अप्रत्यक्ष रूप से कहने लगा –

> "माँ सुबह चले जाना है | बहुत काम हैं | नन्हें को अंग्रेजी स्कूल में दाखिल करवाना है | सिफारिश करवाई थी कुछ नहीं हुआ | अब पूरे तीस हजार डोनेशन मांगते हैं | अम्मा की समझ अधिक कुछ नहीं आया | पर वह भांप गई कि बेटा पैसे को आया है |" (हरनोट 21)

अम्मा को बहुत दुख हुआ बेटा इतने दूर शहर से एक दिन के लिए ही आया है, वो भी उसके लिए नहीं सिर्फ पैसों के लिए आया है | अम्मा ने उस दिन खाना भी नहीं खाया खाती भी कैसे इतने दिनों बाद बेटा आया वो भी शहर से रोटियां लेकर | अम्मा अपना अकेलापन चूल्हे के पास बैठकर बिल्लियों से स्नेह और प्यार करके दूर करती है | बिल्लियाँ भी उतना प्यार और स्नेह अम्मा को करती जाती | एस.आर. हरनोट की कहानी *'बीस फुट के बापू'* *'दारोश'* कहानी संग्रह में संकलित है | इस कहानी में शिमला के रिज मैदान पर पर्यटकों की घुड़सवारी के लिए घोड़े का काम करने वाले स्वाभिमानी, आत्मनिर्भर पचहत्तर वर्षीय विधुर चाचू जो अकेलेपन का शिकार होता है | चाचू ने घर-परिवार और लड़के की पढ़ाई के लिए दिन-रात मेहनत की | बेटे के नौकरी लगने और अफसर बनने के बाद बेटे ने शादी कर ली बच्चे भी हो गए लेकिन चाचू से मिलने कभी नहीं आया |

> "बेटा स्कूल से निकला तो सेना में नौकरी मिल गयी | अब पत्नी भी चल बसी थी | बेटियां अपने-अपने घर खुश थीं | चाचू चाहता था बेटा जहाँ भी नौकरी करें ठीक है पर अपने गाँव को न भूले | वहां अच्छा सा घर बनाए, ब्याह करके बच्चों को वहां रक्खे | आखिर अपनी जगह जमीन है | पर बेटे को यह नहीं भाया | उसने बार-बार चाचू को घोड़े का धंधा छोड़ने को कहा पर चाचू नहीं माना | अंत में बेटे ने चाचू को ही छोड़ दिया | बाहर रहने लगा | न गाँव आया और न ही शिमला में चाचू की खबर ली | चाचू एक दो बार गाँव गया | पुराना मकान खंडहर बन गया था | जमीनों पर कई गाँव के भाइयों ने हक़ जता दिए थे | चाचू यही सोचकर शिमला लौट आया कि वह किसके लिए गाँव में लड़ेगा | बेटा तो आएगा नहीं |" (हरनोट 31)

जिस घुड़सवारी के काम से चाचू ने अपने बेटे को पढ़ाया-लिखाया, उसी काम-धंधे की वजह से उसके बेटे ने अपने पिता को छोड़ दिया | अकेला कई तरह का होता है जैसे कुछ लोग इसलिए अकेले होते है क्योंकि उनका कोई होता नहीं है, कुछ लोगों का परिवार

उनसे दूर रहता है वो इसलिए अकेले होते है पर विडम्बना तो यह है कि कुछ लोग परिवार के साथ रहते हुए भी अकेलेपन की तरह जीवन जीने को मजबूर होते हैं क्योंकि उनके परिवार की नजर में उनका न कोई महत्व है न कोई अस्तित्व है |

21वीं सदी के हिंदी साहित्य में वृद्धावस्था का अकेलापन बहुआयामी मनोवैज्ञानिक समस्या है | यह अकेलापन संतानों की अनुपस्थिति, पारिवारिक संवादहीनता, स्मृति-संवेदनाएँ और आर्थिक-सामाजिक दबावों से पैदा होता है | साहित्य ने इसे मात्र सामाजिक स्थिति नहीं, बल्कि मानसिक, भावनात्मक और संज्ञानात्मक तनाव के रूप में प्रस्तुत किया है, जिससे यह वृद्ध विमर्श का एक प्रमुख मनोवैज्ञानिक पहलू बनता है | 21वीं सदी का हिंदी कथा साहित्य वृद्धजनों के सभी तरह के अकेलेपन की समस्या को संवेदनशीलता और गहराई के साथ प्रस्तुत करता है, जिससे पाठकों में जागरूकता और संवेदनशीलता बढ़ती है |

4.1.2 लगाव

मानव जीवन की परिवर्तित अवस्थाओं का अंतिम पड़ाव होती है – वृद्धावस्था | वृद्धावस्था में लगाव एक गहरी भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक अवधारणा है, जो संबंधों, स्मृतियों और भावनात्मक स्थिरता से जुड़ी होती है | यह वृद्धों के मानसिक और सामाजिक स्वास्थ्य पर गहरा प्रभाव डालती है | इस अवस्था में व्यक्ति शारीरिक रूप से कमजोर हो सकता है, लेकिन भावनात्मक और मानसिक स्तर पर उसका लगाव कई रूपों में प्रकट होता है | लगाव का यह संदर्भ न केवल उनकी मानसिक स्थिति को प्रभावित करता है, बल्कि उनके जीवन के आखिरी चरण को भी जटिल बना देता है | मानव जीवन के संध्याकाल में शारीरिक, मानसिक दुर्बलताएं तथा कई उतार-चढ़ावों व संघर्षों का आगमन हो जाता है | ऐसी अवस्था में व्यक्ति अपनी संतान का साथ और प्रेम चाहता है | उम्र के आखिरी पड़ाव में बूढ़े माँ-बाप का लगाव बढ़ जाता है | इस उम्र में बच्चों के साथ-साथ पोते-पोतियों, नाती-नातिन के प्रति उनका लाड़-प्यार और लगाव ज्यादा होती है | आज की पीढ़ी के पास अपनी और बुजुर्ग पीढ़ी के लिए समय और संवेदना दोनों ही नहीं रही है | डॉ. उषा झा '*हिंदी कहानी और स्त्री-विमर्श*' में लिखते हैं –

> "व्यक्ति स्वातंत्र्य की भावना प्रबल हो गयी | जीवन में व्यस्तता बढ़ गयी | परिवार के अन्य सदस्यों से महज औपचारिक संबंध रह गये | संतान वयस्क होते ही अर्थोपाजन योग्य होते ही माता-पिता एवं अन्य भाई-बहनों से कट जाता है | माता-पिता की दृष्टि में कई अपेक्षायें दिखने लगती हैं और संतान अर्थोपाजन एवं विवाह करते ही अपने माता-पिता को अपने दायरे से काट कर दूर फेंक देते है |" (झा 66)

यह उद्धरण वृद्धावस्था में लगाव और भावनात्मक दूरी की समस्या को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करता है | जैसे ही संतान वयस्क और आर्थिक रूप से स्वतंत्र हो जाती है, उसका माता-पिता और परिवार से संबंध केवल औपचारिक बन जाता है | स्वतंत्रता और व्यक्तिगत व्यस्तताओं के कारण संतान धीरे-धीरे माता-पिता के भावनात्मक दायरे से कट जाती है | इससे वृद्धों में अकेलापन, हताशा और भावनात्मक असुरक्षा उत्पन्न होती है | उद्धरण यह दर्शाता है कि 21वीं सदी में पारिवारिक संरचना और बदलते सामाजिक मूल्यों के कारण वृद्धजनों के प्रति लगाव की कमी केवल सामाजिक समस्या नहीं, बल्कि गहरी मनोवैज्ञानिक चुनौती बन चुकी है | डॉ. सूरज सिंह नेगी के उपन्यास '*रिश्तों की आँच*' में यह समस्या देख सकते हैं जब रमेश अपनी एमबीबीएस की पढ़ाई पूरी करने के

बाद निजी अस्पताल में नौकरी शुरू का लेता है | वही अस्पताल के मालिक की बेटी के साथ विवाह कर उनके साथ रहने चला जाता है | रमेश अपने स्वार्थ के लिए अपनी बूढ़ी और बीमार माँ तथा भाई के प्यार को छोड़कर चला जाता है | लेकिन बेटे के मोह के बावजूद भी वृद्ध माँ रमेश की प्रसन्नता की मंगलकामनाएँ करती है – "आज रमेश के घर जाने के बाद माँ भी मायूस हो चली थी, उसके मन में तरह-तरह के ख्याल आ रहे थे लेकिन मजबूर थी, मन से यही दुआ निकल रही थी कि वह जहाँ भी रहे बस खुश रहे |" (नेगी 58) संवेदनहीन संतान की उपेक्षा और बेरुखी भीतर ही भीतर वात्सल्य की प्रतिमूर्ति माँ को टीसती रहती है | माँ के पास दूसरा सेवाभावी सुयोग्य पुत्र रामप्रसाद होने पर भी घुटन महसूस कर रही थी | भीतर की घुटन और विवशता विधवा माँ को अकेले ही झेलने पड़ती है | उसकी सबसे बड़ी पीड़ा यह है कि वह अपना दर्द किससे साझा करें ?

> "माँ की तबीयत में पर्याप्त सुधार था, लेकिन अंदर ही अंदर उसे ममता और रमेश की याद आ ही जाती | आखिर कलेजे के टुकड़े को कोई भला निकाल कर फेंक तो नहीं सकता | उन दोनों ने घर से जाने के बाद वापस आने का नाम तक न लिया | तीज-त्यौहार पर माँ इंतजार करती रहती |" (नेगी 60)

वृद्ध लोग अपने बच्चों, पोते-पोतियों और परिवार के अन्य सदस्यों से गहरा जुड़ाव महसूस करते हैं | वे उनसे प्यार, अपनापन और सहारा चाहते हैं | आधुनिक, सभ्य और प्रगतिशील समाज में माँ-बाप की भावनाओं और संवेदनाओं का कोई मोल ही नहीं रहा है | डॉक्टर के लिए ज्ञान और अनुभव के साथ संवेदनशील होना अति आवश्यक होता है | रमेश में हम इन्हीं मानवीय गुण की कमी पाते हैं | जो व्यक्ति अपनी बीमार बूढ़ी माँ और पितातुल्य भाई से मुंह मोड़ ले, तो वह अपने कर्तव्य के प्रति कैसे निष्ठावान रहेगा | डॉ. नेगी जी के *'नियति चक्र'* उपन्यास में पिता का स्नेह और लगाव अपने बच्चों के प्रति इतना प्रगाढ़ होता है कि वह उनके वशीभूत हो जाता है | नितिन घोष अपने बेटे को अपार स्नेह देते हैं –

> "बच्चे के जन्म पर सेठजी ने कई जगह स्कूल अस्पताल और अनाथालय के लिए जमीन दान की | बच्चे को पाकर वह दोनों बेहद खुश थे | उसकी हर जरूरतों को पूरा किया जाता | अक्सर प्रत्येक माँ-बाप की आँखों मैं बच्चों के भविष्य को लेकर खुशी और चिंता को आसानी से देखा जा सकता है | (नेगी 56)

नितिन घोष अपने बेटे को अपार स्नेह देते है | बाप अपनी औलाद के प्रति वात्सल्य एवं प्रेम के वशीभूत अपना सब कुछ संतान को सुपुर्द कर देता है | किशन काका कहते है नितिन घोष अपनी सारी संपत्ति बेटे के नाम कर देते है- "अगले दिन ही अपनी समस्त जायदाद, बंगले, पूंजी सब कुछ बेटे चित्रांश के नाम कर दिया | अपने पास केवल दो जोड़ी कपड़े रखे और स्वयं एक संन्यासी का जीवन जीने लगे थी |" (नेगी 60) बेटा पिता के उस प्रेम व त्याग को नहीं समझ पाता | चित्रांश धन-संपत्ति और कंपनी अपने नाम होते ही अपनी मनमानी करने लगता है | वह अपने पिता के उन सभी ईमानदार नौकरों और कर्मचारियों को कंपनी से निकाल देता है | वृद्धावस्था में अपने ही पिता को घर से बेघर कर देता है |

> "अंत में जब चित्रांश ने यह कह दिया कि क्या बाबूजी आप भी ? अब पूरे एंटरप्राइजेज का एकमात्र मालिक मैं हूँ | समस्त शेयर मेरे नाम हैं, मैं जैसे चाहूँ, जो करूँ आपको दखल देने की जरूरत नहीं है | मैं अपने नजरिए से कंपनी को आगे ले

> जाऊँगा | रही किसे काम पर रखना है, हटाना है, यह मेरा अधिकार क्षेत्र है | आप घर पर बैठे रहिए, बिना वजह परेशान मत होइए | सेठजी को अपने कानों पर भरोसा नहीं हुआ, वह सकते में आ गए, जिस कंपनी को अपने खून-पसीने से सींच कर इस मुकाम पर पहुँचाया उसके चरमोत्कर्ष पर क्या यह सब सुनना पड़ेगा | असल में सेठजी टूट चुके थे | सोचा था समस्त जिम्मेदारी बेटे को सौंपकर मुक्त हो जायेंगे लेकिन उनका निर्णय गलत साबित हो रहा था | कई बार अकेले में कहते, किशन मैंने भावनाओं में बहकर गलत निर्णय ले लिया |"(नेगी 63)

यहाँ देख सकते हैं कि वृद्धावस्था में संतान को अधिकार सौंपना हमेशा मानसिक संतोष नहीं देता | भावनात्मक लगाव, अपेक्षाएँ और नियंत्रण की हानि वृद्ध के लिए गहरी मनोवैज्ञानिक चुनौती बन सकती है | वृद्धजन यही चाहते हैं कि उनके संघर्ष और अनुभवों का आदर किया जाए और उन्हें सुना और समझा जाए | यहाँ चित्रांश के माध्यम से दिखाया गया है कि किस तरह अपने पिता संपत्ति मिलने के बाद अहंकार वश अपनी मनमानी करता है | नियति चक्र घूमता है और एक दिन बेटा अर्श से फर्श पर आ जाता है | नियति चक्र उपन्यास में नितिन घोष के पुत्र चित्रांश अपनी भूल का अहसास करते हुए कहते है –

> "मैंने बाबू जी के जीवन काल में उनका तिरस्कार किया, मैं स्वयं उनको अपना प्रतिद्वंद्वी मान बैठा, मुझे लगा जैसे वह पुरातनवादी विचारधारा के साथ जी रहे हैं | यहाँ तक कि उनके घर से जाने के बाद भी मुझ पर कोई असर नहीं हुआ, लेकिन इस पुण्यात्मा को सम्मान न देने का नुकसान मुझे उठाना पड़ा | धीरे-धीरे कंपनी घाटे में जाने लगी, तैयार किए जा रहे माल की गुणवत्ता घटिया होने से बाजार में खरीददार नहीं मिले | कार्य का बोझ बढ़ता जा रहा था |"(नेगी 90)

यहाँ देख सकते है किस तरह वृद्ध अपनी सारी संपत्ति अपने बच्चों के नाम मोह वश कर देते है | लेकिन बच्चे उस संपत्ति के मिलते खुद को मालिक समझ बैठे और अपने बाप की भी उपेक्षा और तिरस्कार करने लग जाते हैं | जब उन्हें जीवन में समस्याओं और चुनौतियों का सामना करना पड़ता है उस समय उन्हें अपने माँ-बाप ही याद आते है | इस उपन्यास में भी चित्रांश को जब कंपनी में घाटा होने लगता है तो उन्हें पछतावा होता है कि किस तरह उसने अपने पिता का निरादर किया और उनके पुराने वफादार कर्मचारियों को कंपनी से निकालकर गलती की थी | वृद्धावस्था में प्रत्येक व्यक्ति अपने परिवार के साथ जीने की चाह रखता हैं | साथ ही उनकी इच्छा यह भी रहती है कि उनके बच्चे खूब प्रगति भी करें | वृद्धों की एक इच्छा रहती है एक समय ऐसा आए जब सभी एकत्रित होकर सुख-दुख में सहभागी बने | काशीनाथ सिंह अपने उपन्यास '*रेहन पर रघू*' में लिखते है-

> रघुनाथ भी चाहते थे कि बेटे आगे बढ़ें ! वे खेत और मकान नहीं है कि अपनी जगह ही न छोड़े लेकिन यह भी चाहते थे कि ऐसा भी मौका आए जब सब एक साथ हों, एक जगह हों- आपस में हंसे, गाएँ, लड़ें, झगड़े, हा-हा हू-हू करें, खाएँ पिएँ, घर का सन्नाटा टूटे | मगर कई साल हो रहे हैं और कोई कहीं है, कोई कहीं | और बेटे आगे बढ़ते हुए इतने आगे चले गए हैं कि वहाँ से पीछे देखें भी तो न बाप नजर आएगा न माँ !" (सिंह 133)

आज के इस भागदौड़ और संघर्ष भरे जीवन में रुकने का समय किसी के पास नहीं है | वर्तमान में सभी अर्थ के पीछे भागे जा रहे हैं | जो कि अपने और अपने बच्चों के बेहतर जीवन और उज्ज्वल भविष्य के लिए जरूरी भी है | इस भागदौड़ भरी जिन्दगी में आगे

निकलने की होड़ में हम अपने रिश्तों, संबंधों और भावनाओं को बहुत पीछे छोड़ जाते हैं | इस अंधी दौड़ ने लोगों की सुख शांति छीन ली है वे तनाव में जीने लगे हैं | इस उपन्यास का वृद्ध पात्र रघुनाथ भी इसी तरह चिंतित दिखाई देता है | उनके बच्चे रघु और उनकी पत्नी से दूर इस दौड़ में लगे हुए हैं | वृद्धों को इस उम्र में अपने पोते-पोती और नाती-नातिन से बहुत लगाव रहता है | उनकी इच्छा रहती है कि वे उनके साथ रहे, समय बिताए और खेले | वृद्धों और बच्चों में कुछ खास अंतर नहीं होता है | एक अनुभव से भरा होता है दूसरा अनुभवहीन होता है | बच्चों और वृद्धों का आपस में गहरा लगाव होता है | रवीन्द्र वर्मा के 'आखिरी मंजिल' उपन्यास में राजीव का अपनी पोती लिली के प्रति ऐसा ही प्रेम है –

> "उनकी बेटी लिली तब दो साल की थी | राजीव लिली से बहुत हिलमिल गये थे | वह भी दादा, दादा कहती हुई उनके पीछे घर-भर में और बाहर पार्क में भागती रहती थी ! पार्क में लॉन पर वह सरपट भागती जैसे कोई चिड़िया घास पर उड़ रही हो | वह नन्ही सी, सुकुमार और बहुत सुन्दर थी और घास पर दौड़ते हुए हवा में जब उसका फ्रॉक फैलता तो लगता जैसे कोई चिड़िया पंख पसार रही हो | वह सचमुच कोई चिड़िया लगती थी | उसकी तस्वीर राजीव ने माधव को दिखायी थी | दोनों बूढ़े चिड़िया को देखकर हँसने लगते और एकाएक उन्हें अपना अकेलापन याद आता | "जानते हो माधव," राजीव कहते, "मैंने जीवन के सुन्दरतम क्षण लिली के साथ ही गुजारे हैं ! लिली से बात करना भी जरूरी नहीं था | वे उसे हँसती देखते, दौड़ती देखते या सोती देखते | वे उसका हाथ चूमते या पैर चूम लेते |"(वर्मा 94)

वृद्धावस्था में संतानों और पोते-पोतियों के प्रति लगाव न केवल भावनात्मक संतोष और खुशी प्रदान करता है, बल्कि अकेलेपन और मानसिक रिक्तता को कम करने में भी मदद करता है | यह लगाव वृद्धों के मानसिक और भावनात्मक स्वास्थ्य का एक प्रमुख घटक है | वृद्धों का अपने पोतो-पोतियों के प्रति लगाव उन्हें आनंद और सुख से भर देता है लेकिन जब वे उनसे दूर होते है तो उन्हें बहुत अकेलापन महसूस होता है | राजीव रंजन की जब मृत्यु हो जाती है | "किसी ने बताया कि राजीव रंजन के अंतिम शब्द राम-राम नहीं थे 'लिली-लिली थे |"(वर्मा 94) ऐसा प्रेम कृष्णा सोबती के उपन्यास '*समय सरगम*' में ईशान का अपने बेटे लवी के प्रति दिखाई देता है –

> "जब कभी खोलता हूँ -सोचता हूँ रखने से फायदा और फिर समेटकर वहीं रख देता हूँ| जब कभी उसकी स्कूल यूनिफ़ॉर्म छूता हूँ तो लगता ही नहीं कि वह अब इस घर में नहीं है | जानता हूँ अगर यहाँ नहीं तो कहीं-न कहीं है जरूर | जब गया तो तेरह का था, अब तो किसी का पिता बन चूका होगा |" (सोबती 24,25,)

ईशान अपने बेटे की याद में व्यथित नजर आते हैं | न चाहते हुए भी बक्स को खोलते है उसकी चीजों को देखते है जिससे उसे बेटे लवी की बहुत याद आती है | वृद्धावस्था में बेटे-पोते -पोतियों की वृद्धों को बहुत याद सताती है | इस लगाव की वजह भी कई वृद्ध दुखी रहते है | जब वृद्धों को बच्चों का स्नेह मिलता है तो वे अपना सब दुःख-दर्द भूल जाते हैं | उनके अभाव में वे व्यथित रहते और अकेलापन महसूस करने लगते है | उनका यह अकेलापन जब अत्यधिक बढ़ जाता है तो वे काल्पनिक कहानी गढ़ने लग जाते है | दोस्तों को ऐसी कहानी सुनाते है जिसकी इच्छा वे अपने जीवन में रखते है | चित्रा मुद्गल के '*गिलिगडु*' उपन्यास में कर्नल स्वामी की

स्थिति कुछ इसी प्रकार की है | वे जब भी अपने नए दोस्त बाबू जसवंत सिंह से मिलते हैं अपनी जुड़वां पोतियों (गिलिगडु) के बारे में बताते रहते हैं –

> “आपको तो यह भी नहीं मालूम कि हमारे घर में सुन्दर-सुन्दर गिलिगडु हैं |.......’वह तो है |’ कर्नल स्वामी मुंह भींचे हुए ठुनकती हँसी हँसे | ‘लेकिन मेरी गिलिगडु हैं मेरी पोतियां ! चहकती-फुदकती, मस्ती करती, हुडदंगे मचाती कुमुदनी और कात्यायिनी...उफ कैसी धमाल हैं दोनों ! पूछिए मत |’ बाबू जसवंत सिंह की आँखों में तितलियां उड़ने लगीं-जुड़वां ? कितनी बड़ी हैं ? चार साल पूरा करने को हैं | नर्सरी में पढ़ने जाती हैं | पीठ पर स्कूल बैग लादकर | रंग-बिरंगी बोतले और टिफिन बॉक्स लेकर’...हँसी थमते ही कर्नल स्वामी ने गिलिगडु का एक और दिलचस्प प्रसंग सुनाया |” (मुद्गल 21,22)

अपनी पोतियों के बारे कर्नल स्वामी अपने दोस्त बाबू जसवंत सिंह को बड़े रस लेकर बताते हैं | बाबू जसवंत सिंह भी इसी तरह अपने पोतों के साथ आनंद लेकर खेलना चाहता था | जबकि कर्नल स्वामी के जीवन की वास्तविकता कुछ और थी | इसका खुलासा जसवंत और मिसेज श्रीवास्तव की वार्तालाप से होता है –

> “घर पर ...बंहुए, बच्चे सब कहाँ गए हुए थे ? ‘कौन से बहू-बच्चे ! मिसेज श्रीवास्तव को बाबू जसवंत सिंह के प्रश्न ने भौंचक कर दिया | माधवी, अनुश्री, गिलिगडु..बीटा श्रीनारायण ....’ पिछले आठ वर्षों से हमने भाई साहब को अकेले ही रहते देखा है |” (मुद्गल 136)

कर्नल साहब किसी बेटे-बहू और न ही किसी गिलिगडु (पोतियों) के साथ रहते थे | अकेलापन ही कर्नल साहब की वास्तविकता है | हर एक वृद्धों की भांति उनको भी अपने पोते-पोतियों से लगाव है | उनके बिना उन्हें अकेलापन सताने लगता है | जिसके कारण कर्नल साहब व्यथित होकर फैंटेसी में जीने लगते हैं | दूसरी तरफ बाबू जसवंत सिंह भी अपने पोते से मोह रखते है वे उसका जन्मदिन अपने साथ मनाना चाहता था | उनकी इस इच्छा की पूर्ति नहीं हो पाती उन्हें ये कहकर मना हो जाती है कि वे अपना जन्मदिन अपने दोस्तों के साथ मनाएंगे –

> “बाबू जसवंत सिंह को उसी क्षण याद आया कि उसके मलय का जन्मदिन अगले हफ्ते अठारह नवम्बर को है | मलय से बात करेंगे, क्यों न उसका जन्मदिन सपरिवार ‘मैकडोनाल्डस’ में मनाया जाए ? मनाने का कार्यक्रम पहले ही बना रखा है | मम्मी-पापा से इस बाबत बात हो गई है | वे भी राजी हैं | लेकिन उसका यह कार्यक्रम उसके दोस्तों के साथ है | घरवाले इसमें शामिल नहीं होंगे | मम्मी को वैसे भी जन्मदिन घर में मनाने में झंझट लगता है | पिछली बार दोस्तों की ऊधम से वे परेशान हो गई थीं | उन्होंने तभी उससे कह दिया था | आगे से तुम लोग अपना जन्मदिन अपने दोस्तों के साथ मना लिया करो | अब बड़े हो गए हो...चौदह लोगों के लिए पापा ने ‘मैकडोल्डस’ में मेज बुक करा दी है |” (मुद्गल 33)

वृद्धों की इच्छा और अपेक्षा को परिवार के लोग अहमियत नहीं देते | उनकी उपेक्षा के बावजूद भी वृद्धजन अपने बच्चों के प्रति अत्यधिक लगाव और उम्मीदें बनाए रखते हैं | बेटे-पोते के लिए उनके दोस्त मायने रखते है लेकिन घर के बड़े-बुजुर्गों के साथ किसी भी तरह का सेलीब्रैशन मनाना उन्हें पसंद नहीं | अपनों की उपेक्षा के कारण वृद्ध आहत होकर चुपचाप अपने अकेलेपन में जिन्दगी

जीने को मजबूर हो जाते हैं | कुछ ऐसे वृद्ध भी है जो जिन्दगी में हमेशा खुश रहते हैं और उसी ख़ुशी के स्त्रोत को जुटाने में लगे रहते हैं | जिन्दगी से मोह रखने वाले वृद्ध पात्र कृष्णा सोबती के 'समय सरगम' उपन्यास में ईशान और आरण्या के रूप में देख सकते हैं | वे जिन्दगी का मजा लेना चाहते हैं | लेखिका उनके बारे में लिखती हैं –

> "खासी गुजर चुकी | फिर पैदा होंगे तो देखेंगे | कितना अच्छा होता अगर कुछ बरस देर से आगमन हुआ होता तो अगली शताब्दी का भी मजा लिया जा सकता था | दोनों सयाने एक-दूसरे को युवाओं की तरह देखने लगे | जैसे मन ही मन कहते हों – हो तो सकता था | (सोबती 37)

दिलीप मेहरा की कहानी *'हंसा ताई'* में एक साधारण स्त्री हंसा अपने मंदबुद्धि पुत्र नारसिंह के विवाह के लिए चिंतित है | हंसा ताई द्वारा बहुत प्रयत्न करने के बाद भी जब नारसिंह का विवाह कहीं तय नहीं होता तब वह अपने भाई से प्रार्थना करती है कि- "भाई ! आपका हमारे समाज में कितना बड़ा नाम है | मेरी जिन्दगी की एक ही मुराद है कि मेरे नारिये का कहीं ब्याह करा दो | अगर यह काम मेरा आपने कर दिया तो मैं हमेशा के लिए आप की ऋणी रहूँगी" (वांग्मय 93) नारसिंह की शादी के बाद उसकी पत्नी रेवा अपनी सास के साथ अमानवीय व्यवहार करती है | बात-बात पर उसे प्रताड़ित करती है तथा पिटती भी है | रेवा कभी हंसा ताई को गंदी-गंदी गालियां देती है और कभी-कभी उस पर हाथ भी उठाती है |लोगों के द्वारा ताने मारे जाने पर वह कहती है – "अब कितना जीना बचा है जीवन के अंतिम छोर पर हूँ | नारिया के एकाध बच्चे का मुंह देख लूँ तो मेरी जीने की आस पूरी हो जाएगी |" (मेहरा 97) यहाँ पर कहानीकार ने वृद्धों की इस मानसिकता को उजागर किया है कि समस्त वृद्धों की यही मनोकामना होती है कि वह अपने पोते या पोती का मुंह देख कर इस दुनिया से विदा ले | संतान चाहे जैसी हों लेकिन पोते-पोती से वृद्धों का गहरा रिश्ता होता है | हंसा ताई भी पुत्र और पोते के मोह में सारे अत्याचार सहन करती है | नारसिंह बुद्धिहीन होने के साथ अपनी बीवी के इशारों पर नाचता हुआ दिखाई देता है | यहाँ हंसा ताई का साथ उसका पुत्र नारसिंह भी नहीं देता है | वह पुत्र जिस की शादी के मोह में माँ ने इतने कष्टों को देखा था | वही पुत्र जब उसकी पत्नी द्वारा अपनी माँ की पिटाई देखता है, तो चुप हो जाता है | लेखक लिखता है "जिस हंसा को उसके पति ने कभी डांटा नहीं था उसे आज उसकी बहू रोज पूरे गाँव के बीच पिटती है" (वांग्मय 96) हर परिस्थिति से डटकर सामना करने वाली हंसा आज अपने ही घर की समस्याओं को सुलझाने में नाकाम हो गई | माँ-बाप अपने बच्चों के प्रति इतनी ममता रखते हैं कि कभी उनसे विरोध के बारे में सोच ही नहीं पाते विरोध तो क्या वह अपने अधिकारों की मांग भी नहीं कर पाते | बहू द्वारा घर घर से निकाल दिए जाने पर मन में यह भाव रखना की चचेरी बहन की बेटी के घर रह जाती हूँ | जो कि मेरे घर के सामने ही है | ऐसे में अपने पोते पोतियों को देखते रहूंगी | माँ-बाप का अपने बच्चों और पोते-पोतियों के प्रति मोह शरद से कही हुई हंसा ताई की बातों में स्पष्ट दिखाई देता है –"क्या करूँ नारियां मेरे कलेजे का टुकड़ा है मैंने उसको पालने में कोई कसर नहीं छोड़ी भले ही गाँव भर समाज में इस कलमुहीं ने मेरी जरा सी भी इज्जत नहीं छोड़ी | नारियां आखिर मेरे जिगर का टुकड़ा है" (वांग्मय 97) हंसा ताई के माध्यम से हमें एक माँ का पुत्र के प्रति जो निष्कपट पवित्र प्रेम और ममता है उसके दर्शन दिखाई देते है | सब दुखों को सहन करके भी अपने पुत्र के प्रति सिर्फ मंगल कामना करना और आशीर्वाद देना | शायद माता-पिता को परमात्मा का दर्जा इसलिए दिया गया है क्योंकि वह पुत्र की हर बड़ी गलती को क्षमा कर देते है | यहाँ तक जब सम्पूर्ण गाँव हंसा के पुत्र एवं पुत्रवधू से परेशान होकर अंततः

उन्हें मारने की कोशिश करते है जिसमें उसके पुत्र एवं पुत्रवधू घायल हो जाते हैं तब यही माँ अपने पुत्र को सीने से लगाकर दवाखाने ले जाती है | ईश्वर से प्रार्थना करती है कि मेरे पुत्र और पुत्रवधू ठीक हो जाएं तथा मेरा घर पूर्ण हो जाए | “उनको अभी भी आशा है कि उसकी बहू और बेटा बहुत जल्दी ठीक हो जाएंगे और फिर से उसका घर हरा-भरा हो जाएगा | माँ-बाप बच्चों के मोह में अपने साथ हुए अनुचित व्यवहार को इस तरह भूल जाते है जैसे कुछ हुआ ही नहीं | एस.आर. हरनोट की कहानी *‘बिल्लियाँ बतियाती है’* में गाँव में रह रही अकेली वृद्ध अम्मा अपनी पीड़ा को किसी से नहीं बाँटती और न ही किसी से कोई शिकायत करती | जबकि उसका बेटा माँ की चिंताओं से विमुख अपने बीवी-बच्चों के साथ शहर में मजे से जी रहा है | माँ दिन-रात बेटे-बहू और पोतो की चिंता में लगी रहती |

> “अम्मा को डाकिये की बातें कई बार अकेले में याद आ जाया करती हैं | दंगे फसाद होते है, लाठियां-गोलियां चलती है | इन सभी के बीच उसके बेटे-बहू कैसे रहते होंगे | पोतू स्कुल कैसे जाता होगा | माँ का दिल है न ...बेटा दूर ही क्यों न हो, बहू नफरत क्यों न करें, अम्मा उन्हें याद किया करती है |” (हरनोट 14)

माँ के चरित्र में जो सादगी, सहजता, वात्सल्य, प्रेम और मोह है वह अन्य किसी रिश्तों में नहीं | आजकल की नई पीढ़ी के बच्चे माँ की ममता, त्याग, समर्पण, एकाकीपन को महसूस नहीं कर पाते | सारांशत: कह सकते हैं कि अधिकांश वृद्धों की इच्छा अपने बाल-बच्चों के साथ सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करने में है | वृद्धावस्था में व्यक्ति अपने परिवार, संतान और पोते-पोतियों के प्रति लगाव और स्नेह में वृद्धि महसूस करता है | यह लगाव उन्हें भावनात्मक सुरक्षा, मानसिक संतोष और अकेलेपन से राहत प्रदान करता है | छोटे-छोटे सुखद अनुभव जैसे पोते-पोतियों के साथ खेलना, उनकी हँसी देखना या स्मृतियों में बच्चों के बचपन को याद करना, वृद्धों के लिए जीवन की खुशियों और मानसिक स्थिरता का स्रोत बनते हैं | इस प्रकार वृद्धावस्था में लगाव केवल सामाजिक जुड़ाव नहीं, बल्कि मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक संतोष का प्रमुख आधार है | वृद्धावस्था में लगाव की अधिकता कभी-कभी नकारात्मक मानसिक प्रभाव भी उत्पन्न कर सकती है | जब वृद्ध अत्यधिक भावनात्मक रूप से संतान या परिवार पर निर्भर हो जाते हैं, तो उनकी अनुपस्थिति या व्यस्तता उन्हें अकेलेपन, हताशा और निराशा का अनुभव करवा सकती है | अत्यधिक लगाव से वृद्ध भावनात्मक असुरक्षा, चिंता और अवसाद का शिकार हो सकते हैं, क्योंकि उनकी खुशी और संतोष पूरी तरह से दूसरों की उपस्थिति और व्यवहार पर निर्भर हो जाता है | इस प्रकार, वृद्धावस्था में बढ़ा हुआ लगाव कभी-कभी मानसिक तनाव और भावनात्मक असंतोष का कारण भी बन सकता है | वे चाहते हैं कि उनके पारिवारिक लोग उनके साथ रहें, उनके सुख दुःख के सहभागी बने | इस अपेक्षा के बदले उन्हें अकेलापन, उदासी और उपेक्षा ही मिलती है | लगाव वृद्धावस्था में मानसिक शांति और संतोष प्राप्त करने में बड़ी बाधा बन सकती है |

4.1.3 चिड़चिड़ापन और जिद्दीपन

वृद्धावस्था में व्यक्तियों का स्वभाव उम्र के साथ बदलने लगता है | इस उम्र में व्यक्ति के स्वभाव में चिड़चिड़ापन और जिद्दीपन सामान्य रूप से देखने को मिलता है | कई वृद्ध हर छोटी-बड़ी बातों पर नाराज हो जाते हैं और चिड़चिड़ाने लगते हैं | अक्सर

यह देखा गया है कि कुछ वृद्ध अपने पूर्वाग्रहों से ग्रस्त और मानसिक कुंठाओं से जकड़े होने के कारण जिद्दी स्वभाव के हो जाते हैं, लेकिन इस बात को वे स्वीकार नहीं करते | हृदयेश के उपन्यास *'चार दरवेश'* में वृद्ध रामप्रसाद बारिश के मौसम में बाहर जाने की जिद करते हैं तो उनकी बेटी रम्पो उन्हें बाहर जाने के लिए मना करती है –

> "बाबूजी, अड्डे पर न जाइए | अड्डा दूर हैं |" रम्पो, तू मुझे हरदम सीख न दिया कर | उनके स्वर में फांसे उग आई थी, मैं बच्चा नहीं हूँ |" "आप बाबू जी बहुत जल्द नाराज हो जाते हैं | मैंने तो आपके भले के लिए कहा |" "अपना भला अपने पास रख और अपने जमाई बाबू के लिए |" (हृदयेश 136)

बुजुर्ग कई बार महसूस करते हैं कि उन्हें परिवार में वह सम्मान और ध्यान नहीं मिल रहा है जो वे चाहते हैं | यह चिड़चिड़ेपन और जिद में बदल जाता है | इस प्रकार की मानसिकता वृद्धों को नित नई समस्याओं की ओर ढकेलती जाती है | रामप्रसाद को भी इस जिद की वजह एक समस्या से गुजरना पड़ता है | उन्हें गली में एक कुत्ते ने काट दिया | इस प्रकार की समस्याओं का जिम्मेदार काफी हद तक वृद्ध स्वयं होते हैं | वृद्धावस्था में चिड़चिड़ापन और जिद्दीपन केवल व्यक्तिगत स्वभाव नहीं, बल्कि अकेलापन, मानसिक असुरक्षा और जीवन के बदलते परिवर्तनों का परिणाम हैं | यह वृद्धों के सामाजिक संबंधों और मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता है |

4.1.4 भय

वृद्धावस्था में भय एक बहुत संवेदनशील और महत्वपूर्ण विषय है | वृद्ध लोगों के भीतर कई तरह के डर घर कर जाए हैं, जो अक्सर दिखाई नहीं देते, लेकिन उनके व्यवहार, सोच और भावनाओं को गहराई से प्रभावित करते हैं | वृद्धावस्था में भय लगना एक आम समस्या है इसके पीछे कई शारीरिक, मानसिक और सामाजिक कारण हो सकते हैं | यह भय स्वास्थ्य, आर्थिक स्थिति, पारिवारिक स्थिति और मृत्यु का डर इत्यादि पहलुओं से जुड़ा हो सकता है | शारीरिक असमर्थता और अनेक बीमारियाँ वृद्धों के मन में मृत्यु के प्रति भय उत्पन्न करती हैं | वे मृत्यु से डरने लगते हैं | उन्हें ये लगने लगता है कि यहाँ सब कुछ रह जाएगा सिर्फ वे चले जाएंगे | यह भाव उन्हें उद्वेलित करता है | काशीनाथ सिंह के उपन्यास *'रेहन पर रग्घू'* में रघुनाथ इसी मर्ज के शिकार है –

> "इधर एक अर्से से रघुनाथ को लग रहा था कि वह दिन दूर नहीं जब वे नहीं रहेंगे और यह धरती रह जाएगी ! वे चले जाएंगे और इस धरती का वैभव, इसका ऐश्वर्य, इसका सौन्दर्य- ये बादल, ये धूप, ये पेड़ पौध, ये फसलें, ये नदी नाले, कछार, जंगल पहाड़ और यह सारा कुछ यहीं छूट जाएगा ! वे यह सारा कुछ अपनी आँखों में बसा लेना चाहते हैं जैसे वे भले चले जाएँ, आँखे रह जाएंगी; त्वचा पर हर चीज की थाप सोख लेना चाहते हैं जैसे त्वचा केंचुल की तरह यहीं छूट जाएगी और उसका स्पर्श उन तक पहुँचाती रहेगी !" (सिंह 12,13)

यह अंश वृद्धावस्था में अस्थायी जीवन, मृत्यु और नश्वरता के प्रति भय और संवेदनशीलता को दर्शाता है | वृद्धावस्था जीवन के अंतिम पड़ाव की ओर संकेत देती है | मृत्यु का विचार, लम्बी बीमारियों का डर और शारीरिक पीड़ा की कल्पना उन्हें भीतर से डरा देती हैं | जीवन के अंत को सोचकर या अपनी मृत्यु पास देखकर भी वृद्ध डरे रहते हैं | वृद्धों को मृत्यु से डर मौजूदा हालात को देखकर

भी हो सकता है | बूढ़े माँ-बाप अपने बेटे-बहुओं से भी डर-डरके रहते हैं | अगर घर में कोई विवाद उत्पन्न हो तो वे डर जाते हैं | कृष्णा सोबती के *'समय सरगम'* उपन्यास में दमयंती में मृत्यु का भय लगता है वह आरण्या से कहती है – "आरण्या, जाने क्यों इन दिनों डर-सा लग रहा है ! शायद मरने का डर है | इस भय को अपने से बाहर कर दीजिए | जो हर इंसान की नियति है, उससे क्यों डरेगी आप !" (सोबती 73) वृद्धावस्था में मृत्यु का भय और मानसिक असुरक्षा स्वाभाविक हैं | कृष्णा सोबती के समय सरगम उपन्यास में दमयंती अपने बेटे के व्यवहार से डरती है | जब दमयंती आरण्या और ईशान को अपने ड्राइंग रूम में बिठाती है तभी अचानक उसका पुत्र ड्राइंग रूम में माँ के साथ ईशान और आरण्या को बैठा देखा तो गुस्से में कहा मम्मा, इन्हें अपने कमरे ले जाइए | हमें कुछ जरूरी बात करनी है | और जब माँ कहती है कि ;यह अभी बैठेंगे' तो वह अपना गुस्सा नौकर माधो द्वारा ले जा रहे पकोड़े को गिराकर करता है | जिसे देखकर दमयंती उस समय तो अपने बेटे को डांट-फटकार देती है परन्तु जैसे ही आरण्या और ईशान चलने को तैयार हो जाते हैं वह अंदर ही अंदर भयभीत नजर आती है |

> "..लड़के के आँखों में हिंसा उतर आई |..दम्मो के चेहरे पर जाने कैसी बुढ़ापे के घबराहट-सी फैल आई | आरण्या का हाथ दबाकर कहा-आज मेरे साथ रुक जाओ | मेरा बेटा बड़ा बड़ा कड़ुवा कठोर है | रात भर बकारा करेगा |.....महीने भर बाद -ईशान के यहाँ माधो का फोन था-साहिब, मेम सेब नहीं रहीं | उनका चौथा कल शाम को है |" (सोबती 76)

उद्धरण यह दर्शाता है कि वृद्धावस्था में पारिवारिक तनाव और संतान के कठोर व्यवहार से वृद्धों में भय, अकेलापन और भावनात्मक असुरक्षा उत्पन्न हो सकती है, जो उनके मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य के लिए चुनौतीपूर्ण है | दमयंती का डर जायज था | उसे मालूम था कि उसका बेटा बहुत निर्दयी है | इसलिए वह ईशान और आरण्या को रुकने के लिए कहती हैं उनके न रुकने के बाद उसे अपनी जिन्दगी से हाथ धोना पड़ता है | यहाँ यह ज्ञात होता है कि नई पीढ़ी के लिए बुजुर्ग माता-पिता एक पूंजी खर्च करने का साधन-मात्र रह गए हैं | उन्हें अपने सुख-साधन ही सर्वोपरि हैं उनके लिये अपने माँ-बाप की सुख-सुविधाएँ कोई अहमियत नहीं रखती | उनके सम्मुख माता-पिता के रहन-सहन का स्तर, भावनाएँ मूल्यों एवं विचारों की कोई कद्र नहीं रह गई है | उनके व्यक्तिगत हित ही सर्वोपरि हैं उसका विरोध होने पर वह अपने माता-पिता को रास्ते से हटाने में जरा भी नहीं हिचकिचाते | वृद्धावस्था में व्यक्ति इतना लाचार होता है कि किसी का सामना नहीं कर सकता है | अगर कोई उन्हें जान से मारने की धमकी दे तो वे डर जाते हैं | इसी उपन्यास में अन्य पात्र कामिनी की स्थिति भी दमयन्ती की तरह है उनके भाई-भाभी ही उसकी संपत्ति के पीछे पड़े है | कामिनी की दयनीय दशा देख आरण्या को डर लगने लगता है | "कामिनी ने कुछ धीमे से कहा-जाने क्यों भयभीत हो रहीं हूँ | डर | कामिनी के बहाने अपने आस-पास का सब कुछ तलाश रहीं हूँ | आरण्या क्या सही सुन रहा हूँ | डर और आप ?" (सोबती 104) यहाँ देख सकते है किसी दूसरे वृद्ध की दयनीय स्थिति देख कर भी वृद्धजन भयभीत हो जाते हैं | काशीनाथ सिंह के *'रेहन पर रग्घू'* उपन्यास में सनेही द्वारा गाँव की सूचना देने पर रघुनाथ डर जाते हैं |

> "इस बार सनेही ने जो सूचना दी, उससे वे और भी हदस गए ! एक दिन उनके गाँव जाने के तीन दिन पहले की बात है यह मोटरसाइकिल से दो लड़के आए थे उनके दरवाजे |...सनेही को बुलवाया, पूछा कि मास्टर रघुनाथ का यही घर है ? फिर

> पूछा वे कब-कब आते हैं ? ....सनेही की रिपोर्ट का असर यह हुआ कि उन्होंने झुटपुटा होते ही घर से बाहर निकलना बंद कर दिया था ! वे कारण समझने की कोशिश करते रहते थे लेकिन नहीं समझ सके ! (सिंह 139)

वृद्धावस्था में भय और असुरक्षा अक्सर सामाजिक और पर्यावरणीय घटनाओं से उत्पन्न होती है | वृद्ध व्यक्ति ऐसी परिस्थितियों में मानसिक तनाव और भावनात्मक अस्थिरता का अनुभव करता है, जो उनके मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य के लिए चुनौतीपूर्ण होता है | कई वृद्ध सोचने लगते हैं कि उनके रिश्तेदार और सगे-संबंधी उनका जमा किया हुआ धन-सम्पत्ति हड़प लेंगे | इस तरह शारीरिक असमर्थता, पारिवारिक लोगों का अशिष्ट व्यवहार तथा विपरीत परिस्थितियों को देखकर वृद्ध घबरा जाते हैं | उन्हें अपनी मृत्यु का भय लगने लगता है | कुछ वृद्धों को अपने निजी लोगों के चलें जाने से अकेले रहने का भय सताता रहता है | चित्रा मुद्गल के उपन्यास '*गिलिगडु*' में बाबू जसवंत सिंह इसी तरह के भय से ग्रसित हो जाते हैं | उनकी पत्नी मधुमेह की मरीज थी उन्हें साइलेंट अटैक होता है जिससे उनकी मृत्यु हो जाती है | उनकी मृत्यु के कुछ समय बाद उनके बालसखा हरिहर दुबे को जबरदस्त हृदय घात हो जाता है और उनका भी देहांत हो जाता है | इन मानसिक आघातों से जसवंत सिंह का चित्त अस्थिर हो जाता है | बाबू जसवंत सिंह की स्थिति का चित्रण लेखिका करती है-

> "हरिहर की स्थिति को अपदस्थ करती, जी मितलाती बदबू ने उन्हें दिनों सोने न दिया | नाक से चिपकी बदबू अलग होकर ही न देती | चौबीस घंटे कमरे में अगरबती सुलगाए रखते | बाहर निकलते तो कान में इत्र की फुलेल रख लेते | डॉक्टर सक्सेना चिंतित हो आए | रक्तचाप क्यों बढ़ा हुआ है उनका | दवाई बढ़ा देने के बावजूद नियंत्रण में नहीं | डॉक्टर सक्सेना ने मनोचिकित्सक डॉक्टर दत्ता से उनकी छह सीटिंग्स करवाई, तब कहीं जाकर वे स्वस्थ-चित हुए | मनोचिकित्सक ने उनकी समस्याओं को विश्लेषित किया | मामूली सी मानसिक परेशानी है | दरअसल बदबू कुछ और नहीं-भय है | अकेलेपन का भय | उन्हें परिवर्तन की जरूरत है | कुछ दिन बेटे के पास दिल्ली रह आएं | कुछ दिन क्यों, वहीं क्यों नहीं रहते ! इस उम्र में अकेले रहने की कोई तुक नहीं | अकेला वह रहे जिसकी कोई खैर-खबर लेने वाला न हो |"(मुद्गल 54)

वृद्धावस्था में अकेलापन और भय केवल मानसिक ही नहीं, बल्कि शारीरिक स्वास्थ्य पर भी प्रभाव डालता है | कुछ वृद्धों को अपने जीवनसाथी, मित्रों या करीबी लोगों को खोने का भय रहता है | मनुष्य अपने निजी लोगों की मृत्यु के बाद मानसिक रूप से परेशान रहता है | इस उपन्यास में बाबू जसवंत सिंह अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद अकेले पड़ जाते है | बेटे-बहू पोते दिल्ली में रहते हैं | बेटी शालिनी की शादी हो चुकी होती है | बाबू जसवंत सिंह को वृद्धावस्था में अकेलेपन का भय सताता रहता है | बाद में डॉक्टर की राय से वे बेटे-बहू के पास दिल्ली रहने चले जाते हैं | अपनों से दूरी के कारण उन्हें अपने जीवन को अप्रासंगिक महसूस होने का भय सताने लगता है |

वृद्धावस्था में भय एक सामान्य मनोवैज्ञानिक समस्या है, जो शारीरिक कमजोरी, अकेलापन, सामाजिक असुरक्षा और जीवन की अनिश्चितताओं से उत्पन्न होती है | यह भय वृद्धों में तनाव, चिड़चिड़ापन, भावनात्मक असुरक्षा और कभी-कभी शारीरिक रोगों का कारण बन सकता है | वृद्ध व्यक्ति अक्सर अज्ञात परिस्थितियों, परिवार की अनुपस्थिति या जीवन के बदलते परिवेश को लेकर

चिंतित रहता है | निष्कर्षतः, वृद्धावस्था में भय केवल व्यक्तिगत अनुभव नहीं, बल्कि मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक संतुलन पर असर डालने वाला महत्वपूर्ण घटक है | इसे कम करने के लिए सामाजिक संपर्क, परिवारिक सहारा, मानसिक सहयोग और परिवर्तनों के अनुकूलन की आवश्यकता होती है, जिससे वृद्ध व्यक्ति मानसिक शांति और जीवन की गुणवत्ता बनाए रख सके | वृद्धावस्था में भय का समाधान परिवार, समाज और स्वयं वृद्ध व्यक्ति के सामूहिक प्रयास से संभव है | उन्हें यह विश्वास दिलाना जरूरी है कि वे अकेले नहीं है और उनकी हर समस्या का समाधान संभव है |

4.1.5 मानसिक अवसाद

जीवन के अंतिम पड़ाव में मानसिक अवसाद एक गंभीर स्थिति है, जो शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक बदलावों के कारण हो सकता है | एक तरफ वृद्धजन कई शारीरिक व्याधियों से पीड़ित रहते हैं तथा दूसरी तरफ परिवार के सदस्य जब बुजुर्गों का अपमान व उपेक्षा करने लगते है, तो वे मानसिक अवसाद के शिकार हो जाते है | जीवन उन्हें बोझ लगने लगता है | सूरज सिंह नेगी के उपन्यास *'नियति चक्र'* में वृद्ध नितिन घोष अपने बेटे चित्रांश के व्यवहार से मानसिक अवसाद का शिकार हो जाते है |

> "इधर सेठजी अब बीमार रहने लगे थे | उनको शारीरिक व्याधि ने उतना कमजोर नहीं किया जितना कि वह मानसिक रूप से परेशान थी | उनके हाथ से सब कुछ निकलता जा रहा था, यहाँ तक कि घोष विला को दीवारों पर सेठजी के पसंद के पोर्ट्रेट, उनके पूर्वजों की तस्वीरों को भी उतारा जाने लगा पूछने पर चित्रांश का एक ही तर्क होता कि सब कुछ पुराने हो चुके हैं | दीवारों को एक नया लुक देने की जरूरत है |...सेठजी यह सब देखकर मन ही मन रोते रहते | धीरे-धीरे वह अवसाद में जाने लगे | अब किसी से बातचीत करने, कोई इच्छा प्रकट करने से भी कतराने से लगे थे | जहाँ पहले कारोबार, उनके द्वारा संचालित अनाथालय, स्कूल, धर्मशाला, अस्पताल के कार्यरत कर्मचारियों के विषय में दिलचस्पी रहती, विस्तार से सब कुछ जान लेना चाहते थे, लेकिन अब उनकी आँखों में सूनापन था जो उसकी दयनीय स्थिति को व्यक्त करता था |" (नेगी 65)

परिवार से उपेक्षा और सम्मान की कमी, बच्चों का भावनात्मक जुड़ाव कम होना तथा परिवार और समाज में अप्रासंगिक महसूस होने से वृद्धजन अवसाद का शिकार हो जाते हैं | वृद्ध नितिन घोष टी.बी. के रोग से ग्रसित होने के साथ बेटे के उपेक्षित और निर्दयी व्यवहार से दुखी रहते है | जिस नितिन घोष ने अपने खून-पसीने से इतनी बड़ी कंपनी खड़ी की अगर उसे उसकी कंपनी और घर से ही दूर किया जाए | स्वाभाविक है ऐसे में वृद्ध मानसिक अवसाद के शिकार हो सकते हैं | यदि अवसाद का समय पर इलाज न किया जाए, तो यह शारीरिक स्वास्थ्य को और ख़राब कर सकता है | नितिन घोष के साथ भी यही होता है उसकी शारीरिक स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन बिगड़ता जाता है जिससे अंत में उनकी मृत्यु हो जाती है | वृद्धावस्था में मानसिक अवसाद को समझना और समय पर उपाय करना आवश्यक है | प्यार, सहानुभूति और सही उपचार से बुजुर्गों को इस समस्या से बाहर निकाला जा सकता है | निष्कर्षतः, मानसिक अवसाद केवल उदासी या निराशा नहीं है, बल्कि वृद्धावस्था में भावनात्मक असुरक्षा, सूनापन और मानसिक असंतोष का

परिणाम है | इसे कम करने के लिए सामाजिक संपर्क, पारिवारिक सहयोग, मानसिक स्वास्थ्य परामर्श और सक्रिय जीवनशैली अत्यंत आवश्यक है, ताकि वृद्ध व्यक्ति भावनात्मक और मानसिक संतुलन बनाए रख सके |

4.1.6 याददाश्त में कमी

वृद्धावस्था में उम्र बढ़ने के साथ घटती याददाश्त मस्तिष्क में होने वाले प्राकृतिक परिवर्तनों या किसी गंभीर समस्या का संकेत हो सकता है | आज के इस भागदौड़ भरे जीवन में किसी के पास सही से खाने-पीने, सोने-जागने, उठने-बैठने का समय भी नहीं है | इसका परिणाम यह हुआ है इस व्यस्त भरे जीवन में मनुष्य बहुत सारी चीजों को भूलने लगता है | याददाश्त का घटना प्रत्येक उम्र के लोगों में दिखाई पड़ता है लेकिन बुजुर्गों में इसके लक्षण अधिक दिखाई देते हैं | जीवन के इस पड़ाव में जैसे-जैसे उम्र बढ़ती जाती है उनकी याददाश्त कमजोर हो जाती है | याददाश्त का कमजोर हो जाना, दक्षता एवं कार्य क्षमता में कमी आना स्वाभाविक है | भुलक्कड़पन की इस आदत से उन्हें अपनी चीजों का जरा सा भी ख्याल नहीं रहता कि चीजें कहाँ रखी हैं | इस तरह स्मृति लोप के कारण उन्हें परेशानियों का सामना करना पड़ना है | चित्रा मुद्गल के *'गिलिगडु'* उपन्यास में बाबू जसवंत सिंह उम्र के कारण भूलने जैसी बीमारी के शिकार हैं | बहू सुनयना वृद्ध बाबू जी के भूलने की आदत पर ताने मारती रहती है जबकि वह यह भूल जाती है कि एक न एक दिन सबको वृद्ध होना है |

> "बाबूजी, आप रोज सुबह अपने कमरे की बत्ती बंद करना भूल जाते हैं | 'भूल गया होऊंगा |' बाबू जसवंत सिंह ने टूटी आवाज में जवाब दिया था | मगर बहू सुनयना के कानों ने उनकी आवाज के टूटेपन पर गौर नहीं किया | 'भूल जाने से बिजली का मीटर तो नहीं खामोश बैठ जाएगा |' प्रत्युत्तर में चुप्पी साध ली थी उन्होंने | उम्र का रोना रोते तो क्या कोई रियायत मिलती ? मिलनी होती तो बिना मांगे दे दी जाती | (मुद्गल 56)

'लाइट' खुली रह जाने पर बहू 'मीटर बढ़ने' का रौब दिखाती है | वृद्धावस्था में भूलने की बीमारी स्वाभाविक है लेकिन इस तरह छोटी-मोटी बातों पर उन्हें सुनाना उचित नहीं है | वृद्ध भूलने की इस बीमारी में करें भी तो क्या करें | यहाँ उनकी पीड़ा को समझा जा सकता है | निर्मल वर्मा के उपन्यास 'अंतिम अरण्य में मेहरा साहब भी याददाश्त की समस्या से पीड़ित हैं – "वह भूल जाते हैं कि वह अब इस दुनिया में नहीं हैं |" ...नहीं...जब वे नोट्स लिखवाते हैं...तो मुझे लगता है, वह जैसे कहीं दूसरे कमरे में बैठी हैं और वह अपनी आपबीती मुझे नहीं, उन्हें सुना रहे हैं |" (वर्मा 29) यहाँ देख सकते है मेहरा साहब जब अपनी आपबीती सुना रहे होते हैं तो वह भूल जाते हैं कि वे किसे सुना रहें हैं | कृष्णा सोबती के 'समय सरगम' उपन्यास में आरण्या की स्थिति भी मेहरा साहब की तरह ही दिखाई देती है – "याद आया | मेडिकल इंश्योरेंसवाला कागज |....रखा कहाँ है, यह याद नहीं | घर लौटते ही ढूँढना होगा |" (सोबती 12) उम्र के साथ सूचना को संग्रहित और पुनः प्राप्त करने में कठिनाई आती है | वृद्धावस्था में घटती याददाश्त सामान्य हो सकती है लेकिन इसे सुधारने और प्रतिबंधित करने के लिए सही जीवनशैली, पोषण और मानसिक गतिविधियों पर ध्यान देना आवश्यक है | सामाजिक संपर्क, मानसिक व्यायाम और पारिवारिक समर्थन इसके प्रभाव को कम कर वृद्धों की जीवन गुणवत्ता बनाए रखने में मदद करता है |

4.1.5 मृत्यु बोध

वृद्ध जीवन की सबसे बड़ी समस्या अकेलापन और मृत्यु बोध है | जन्म और मृत्यु अमर सत्य है | प्रत्येक जीव जिसने इस संसार में जन्म लिया है उसकी मृत्यु भी निश्चित है | जिस दिन मनुष्य पैदा होता है तभी उसकी आधी मृत्यु हो जाती है | जैसे-जैसे उम्र बढ़ती है, व्यक्ति के भीतर यह अहसास गहराता जाता है कि अब अंतिम पड़ाव पर है | शरीर की क्षीणता, अपनों का बिछड़ना और समय की क्षणभंगुरता उसे मृत्यु के प्रति अधिक सजग और सचेत कर देती है | इस अवस्था में मृत्यु एक विचार नहीं रहती, बल्कि एक सजीव अनुभूति बन जाती है | वृद्धावस्था में प्रवेश के साथ ही व्यक्ति मृत्यु बोध की तरफ आकर्षित होने लगता है | वह प्रतिक्षण मृत्यु की प्रतीक्षा या मृत्यु के भय से पीड़ित दिखता है | कृष्णा सोबती के उपन्यास *'समय सरगम'* में ईशान को उम्र के साथ-साथ अब मृत्यु का बोध भी जगने लगता है, इसी कारण वह आरण्या से कहता है कि –

> "हाँ कुछ भी कहीं अचानक घट सकता है | वह छुट्टी का दिन भी हो सकता है | मेरे लिए किसी को इंतजाम में असुविधा हो, यह उचित न होगा ! ऐसा क्यों सोच रहे हैं ईशान! आप निश्चित होकर जाइए | कुछ होने वाला नहीं ! यह हल्की बात नहीं आरण्या ! मेरे मित्र मालवाड़े अमरीका से लौटते हुए लंदन एयरपोर्ट पर ही चिर-विश्राम पा गए | मिसेज मालवाड़े साथ थी | भाग-भागकर बच्चों को सूचना दे सकीं | कौशिक और अलका भी लंदन पहुँच गए ! मिली हैं न उनसे ? जानती हूँ | पर हम इस घटना को अपवाद क्यों न मान लें ! ईशान शांत स्वर में बोले- इसलिए कि हम पुकार लिये जानेवालों की पंक्ति में हैं | (सोबती 35)

मृत्यु जब भी आती है अचानक आती है | मृत्यु अंतिम सच है जो सब के जीवन में आकर रहती है | युवावस्था में व्यक्ति को मृत्यु की चिंता नहीं होती है | वह इतना व्यस्त रहता है कि उसे मृत्यु पर सोचने का समय नहीं होता | परन्तु वृद्धावस्था में अत्यधिक खाली समय होता है ऐसी स्थिति में वृद्ध मृत्यु से संबंधित चिंतन में अपना समय व्यतीत करते हैं | रवीन्द्र वर्मा के उपन्यास *'आख़िरी मंजिल'* में वृद्ध पात्र माधव दयाल कहते है – 'सोचता हूँ |" माधव ने कहा, "लेकिन मृत्यु के बारे में हर सुबह सोचता हूँ |" "मृत्यु के बारे में सोचने के लिए क्या है ?" मोहन के स्वर में खीज थी |" (वर्मा 16) बूढ़े मृत्यु के बारे में हर दिन सोचते हैं | जैसे-जैसे व्यक्ति जीवन के अंतिम चरण में प्रवेश करता है, मृत्यु के प्रति जागरूकता और इसे स्वीकार करने की प्रक्रिया तेज ओ जाती है | काशीनाथ सिंह के उपन्यास *'रेहन पर रग्घू'* में रघुनाथ का जीवन और मृत्यु से संबंधित चिंतन देख सकते हैं –

> "लेकिन एक मन और था रघुनाथ का जो उन्हें धिक्कारे जा रहा था - कल तक कहाँ था यह प्यार ? धरती से प्यार की यह ललक ? यह तड़प? कल भी यही धरती थी | ये ही बादल, आसमान, तारे, सूरज, चाँद थे ! नदी, झरने, सागर, जंगल, पहाड़ थे | ये ही गली, मकान, चौबारे थे ! कहाँ थी यह तड़प? फुर्सत थी इन्हें देखने की? आज जब मृत्यु बिल्ली की तरह दबे पाँव कमरे में आ रही है तो बाहर जिन्दगी बुलाती हुई सुनाई पड़ रही है ?" (सिंह 156)

जब मौत निकट आ रही है तब रग्घू को ये सभी चीजें सुखद प्रतीत होती हैं | रवीन्द्र वर्मा के उपन्यास *'पत्थर ऊपर पानी'* उपन्यास में वृद्ध पात्र रामचंद्र वृद्धावस्था में मृत्यु से संबंधित चिंतन कर रहे होते हैं | रामचंद्र सोच रहे होते हैं कि उनकी पत्नी शांति का उनके

जीवन में क्या योगदान है, पत्नी के न रहने से उसकी क्या स्थिति हो जाएगी ? वे अपना समय कैसे व्यतीत करेंगे? रवीन्द्र वर्मा *'पत्थर ऊपर पानी'* उपन्यास में लिखते हैं-

> "शांति का दुनिया से जाना उसी तरह था जैसे सौर मंडल से किसी तारे या उल्का का टूट जाना | क्या सूर्य भी अकेलापन महसूस करता होगा ? या शायद खालीपन महसूस करता हो | एक जनम वे साथ रहे थे, वही जगह खाली हो गयी..| यदि ऐसा न होता तो आखिरी क्षण शांति का अकेला हाथ बेआवाज पलंग पर रात के दो बजे ऊपर न उठता और न अचानक रामचंद्र की तभी आँख खुलती और वे पलंग पर उठे हाथ की ओर लपकते | जब वे हाथ के पास पहुँचे शांति की आँखे खुली थी और हाथ खड़ा था | शांति चली गयी थी |" (वर्मा 22)

अंतिम अरण्य उपन्यास का मूल विषय मृत्यु बोध रहा है | मृत्यु छाया की तरह पूरे उपन्यास पर छाई होने पर भी उपन्यास का नायक मृत्यु से डरा हुआ नहीं है बल्कि मृत्यु को सहजता से स्वीकार करता है | दूसरे पात्र ही उनको निकट आती मृत्यु का अहसास कराते हैं | कई बार वृद्ध मौत का इंतजार करते हुए दिखाई पड़ते हैं | अपने और जीने के बारे में मेहरा साहब कहते हैं - "कितना समय और बच्चा है ?...कितने दिन, महीने साल ? (वर्मा 46) इस मृत्यु के इंतजार का कारण उनका अकेलापन, बच्चों की उपेक्षा भाव, बच्चों से अंधा मोह के कारण बूढ़े स्वयं भी इस दशा में पहुँचने के लिए जिम्मेदार है | वृद्ध अपने खाली समय में मृत्यु से संबंधित व्यर्थ बाते सोचते रहते हैं | मृत्यु एवं चिंतन के भाव को राकेश वत्स के उपन्यास 'फिर लौटते हुए' में देख सकते हैं –

> "उनके विचार में ऑपरेशन टेबल पर बेहोशी की हाल में दम तोड़ने जैसी सुखद मृत्यु कोई दूसरी नहीं हो सकती | एड़ियाँ घिसट-घिसटकर मरना भी कोई मरना है क्या? या आदमी को संघर्ष करते समय मानसिक उत्तेजना में मरना चाहिए | उत्तेजना में दिल की धड़कन बंद होने का पता ही नहीं चलता | इस लिहाज से वे युद्ध में लड़ते समय होने वाली फौजियों की मृत्यु को एक आदर्श मृत्यु मानते थे | उन्हें मृत्यु के ख्याल से कभी भी डर नहीं लगता था, हाँ उससे पैदा होने वाली पीड़ा से वे भी घबराते थे |" (वत्स 143)

कुछ वृद्ध मौत को मज़े के रूप में लेते हैं, बिना डरे मृत्यु का इंतजार करते हुए दिखाई देते हैं | उनका मानना है जब मृत्यु आनी होगी आएगी उससे क्या डरना | जब तक जिंदगी है मिली है क्यों न ख़ुशी से जीवन जिया जाए | इसी तरह के विचार कृष्णा सोबती के *'समय सरगम'* उपन्यास में आरण्या पात्र के माध्यम से देखने को मिलते हैं –

> "नहीं हवा पी रही हूँ | आत्मा तक खींच रही हूँ ऑक्सीजन! खुश हूँ कि जीवित हूँ | अपने साथ के तो कब के जा चुके | वे चेहरे, नहीं, भूल जाओ उन्हें | नमस्कार कर दो उन्हें | जीवित और मृतकों की जातीय स्मृतियाँ बदल गई हैं | ओह! संतुष्ट हूँ कि जीवित हूँ |" (सोबती 8)

आरण्या अपने जीवित होने से खुश है | उसके स्वभाव से पता चलता है मृत्यु जब आएगी तब तक क्यों न ख़ुशी से रहा जाए | इसी तरह चित्रा मुद्गल के उपन्यास *'गिलिगडु'* में वृद्ध पात्र कर्नल विष्णु स्वामी मृत्यु पर अपने विचार रखते हैं-

> "अचानक बाबू जसवंत सिंह ने बात पलट कर्नल स्वामी से अजीब-सा प्रश्न किया – मौत के विषय में वे क्या सोचते हैं ! उनकी अस्थिर मन: स्थिति से उन्हें खींच निकालने के अभिप्राय से कर्नल स्वामी ने सहसा उन्मुक्त ठहाकाभर मखौल उड़ाने वाले अंदाज में जवाब दिया- अव्वल तो वे मौत के बारे में सोचते ही नहीं है | उस पर सोचना उन्हें जरूरी भी नहीं लगता मौत जब आएगी आ जाएगी | किसी भी शक्ल में आ जाए | रगड़ेगी हफ्ता, महीना, साल या अचानक झपाटे से उठा लेगी | उठा ले | मगर उन कुछेक कष्टकर दिनों की कल्पना में रात-दिन अधमरे होकर जीना जिन्दगी का मजाक उड़ाना नहीं !" (मुद्गल 63)

कुछ वृद्धों को वृद्धावस्था में पहुँचकर जीने की इच्छा बढ़ जाती है? पारिवारिक रिश्तों व संसार के प्रति उनका लगाव बढ़ जाता हैं | बेटे-बेटी, बहू फिर उनके बच्चों को देखने की इच्छा से उनकी जीने की इच्छा बढ़ जाती है | ज्ञान चतुर्वेदी के *'हम न मरब'* उपन्यास में भी एक वृद्ध जीवन जीने की इच्छा प्रकट करते हैं | "जो भी हो जाए बेटा, जिंदा रहने में जो आनंद है उसका बरनन का करें हम | तुमारी उमर जैसे-जैसे बढ़ेगी, तुम खुद ही जान जाओगे बेटा |..तुमने आज जो कही सो कह, आगे जे मरबे की बात कबहुं न करियो.." (चतुर्वेदी 202) गोविन्द मिश्र रचित *'शाम की झिलमिल'* उपन्यास में वृद्धजनों की कड़वी सच्चाइयों, अकेलापन, ढलती उम्र में मृत्यु का भय, पति या पत्नी की मृत्यु का वियोग, वृद्ध स्त्री पुरुष के बदलते संबंधों का यथार्थ चित्रण हुआ है | नायक की पत्नी दुनिया से विदा ले चुकी है साथ ही मित्रों के चले जाने की ख़बरें अधिक सुनने को मिल रही है | किसी परिचित या मित्र की मृत्यु की सूचना उसे पीड़ित करती है जैसे उसके जीवन का एक कालखंड निकाल लिया हो | अपने मित्रों के गुजरने का गहरा बोध उसे होता है | अपने मित्र और पत्नी की मृत्यु उसे संवेदनशील बनाती है | वे कहते हैं -

> "क्या अब मैं ऐसी ही ख़बरों को सुनने के लिए जीवित हूँ – फलाँ गया, वह भी गया | मृत्यु दूर कहीं एक मित्र या परिचित की होती है ...और निकाल लिया जाता है मेरे जीवन से एक कालखंड ...जैसे शरीर से गोश्त का एक टुकड़ा | ये अगर इसी तरह निकाले जाते रहे तो मैं क्या बचूँगा..."(मिश्र 8)

अक्सर जब भी वृद्ध व्यक्ति अपने पड़ोसी, अपने मित्र अपने परिजनों की मौत का समाचार सुनता है या देखता है तो उसके मन में स्वयं की संभावित मौत का भय सताने लगता है | वह मानसिक रूप से व्यथित रहता है | जैसे-जैसे उम्र बढ़ती जाती है उसका भय भी बढ़ता जाता है और इस भय का कोई निश्चित समाधान नहीं है | वृद्धावस्था में बीमारियों से ग्रसित हो जाने के कारण व्यक्ति का जीवन बड़ा कष्टमय हो जाता है | वे इस कष्ट को भोगने के बदले मरना उचित समझते हैं | इसका एक उदाहरण देवेश ठाकुर द्वारा रचित *'संध्या छाया'* उपन्यास में देख सकते हैं – इस उपन्यास की पात्र मीता पार्किसन की मरीज है वह रुआंसे स्वर में जितेन से कहती है – "जीतू भाई जी चले गए, बहन चली गई, भाभी चली गई, सब चले गए | मैं ही अभी तक जिंदा हूँ | मुझे भी मौत क्यों नहीं ले जाती | वह फिर फफक-फफक कर रोने लगी |" (ठाकुर 12) जीतेन मीता की ऐसी बातें सुनकर उससे कहता हैं यदि तुम चली गई तो मैं जीते जी मर जाऊँगा लेकिन पत्नी का पति के प्रति स्नेह तब दिखाई देता है जब वह तुरंत कह उठती है "तुम कैसे मरोगे ? तुम नहीं मर सकते | औरत अगर सुहागिन मरे तो उसे स्वर्ग मिलता है | उसकी ख़ुशी इसी में हैं कि वह सुहागिन मरे | क्या तुम मेरी ख़ुशी नहीं चाहते |" (ठाकुर 13) मनुष्य का जीवन बड़ा संघर्षशील है और इसमें भी वृद्धावस्था अत्यंत कष्टमय अवस्था है | इस अवस्था

में शारीरिक, मानसिक रोग कई बार उनका मनोबल तोड़ देते है और वे मरने की इच्छा प्रकट करते हैं | ज्ञान चतुर्वेदी के उपन्यास '*हम न मरब*' में अम्मा लकवा से इतनी परेशान रहती है कि मृत्यु की कामना करती है –

> "अम्मा ने हाथ को और जोर से पकड़ लिया | भींच ली हथेली | "बिन्नू, इतने पुण्य नहीं किये है अम्मा ने | ..अभी नहीं मरबे वाली तुम्हारी जे अम्मां ..| कभी मारेगी भी कि नहीं, जे ही कहना कठिन हैं बिन्नू | कारे कव्वे खा के जन्मी हैं | ..ऐसे कैसे मर जेहें?..अरे, मरना ही होता तो उस दिन ही मर गई होती जब गू मूत के लिए दूसरों के सहारे हो गई |..ऐसे नहीं मरबे वाले हम | मौत को इत्ती आसन चीज समझ बैठे हो का? ..मरना बड़ो कठिन कारज है बिन्नू | बड़ो कठिन | जान बड़ी मुश्किल से कढ़ती है, जे बात जान लो | सच्ची बताते हैं | भाग्य वालों को ही नसीब होती है मौत |.. अभागे तो यहीं धरती पे टांगे रगड़ते रह जाते हैं | (चतुर्वेदी 72)

यहाँ अम्मां लकवा से इतनी ग्रस्त है कि अपने जीवन से कुंठित होकर वह मरने के लिए आतुर रहती हैं | मृत्यु की जटिलता के बारे में सोचती रहती हैं | वृद्धावस्था में कुछ वृद्ध के जीवन में पीड़ा इतनी बढ़ जाती है कि उस पीड़ा से बचने का उन्हें कोई उपाय नहीं सूझता | ऐसी स्थिति में उन्हें आत्महत्या का रास्ता ही दिखता हैं | हृदयेश के उपन्यास 'चार दरवेश' में एक वृद्धा बहू द्वारा शोषित होने की वजह से आत्महत्या कर लेती है |

> "आज जब वह दूसरे रास्ते से फिर गुजरे थे, उनको बताया गया कि उस औरत ने फाँसी लगाकर आत्महत्या कर ली | उनके पुलिस में शिकायत करने या दूसरी शादी करने वाले उपाय को सुझाने पर उसने पिछली बार कहा था कि अपनी परेशानी और दुख की आग में झुलसने से बचने का उपाय फाँसी लगाकर प्राण दे देना भी है |"

यहाँ देख सकते है जिन वृद्धों के जीवन में दुख और समस्याओं का सामना करने का संबल नहीं है वे आत्महत्या का रास्ता अपना लेते हैं | वृद्धावस्था में वृद्धों ने मृत्यु को अलग-अलग संदर्भों में देखा है | कुछ वृद्धों को मृत्यु से डर लगता है, कुछ उसका इन्तजार करते हैं, कुछ मृत्यु से संबंधित चिंतन मनन करते हैं, कुछ परेशानियों का सामना न कर पाने की वजह से मरने की इच्छा और आत्महत्या तक करना चाहते हैं तो कुछ परेशानियों का सामना करते हुए जीने की इच्छा रखते हैं | यह वृद्धों में भावनात्मक संवेदनशीलता और जीवन के प्रति जागरूकता बढ़ाता है, लेकिन यदि इसे सकारात्मक दृष्टिकोण से न अपनाया जाए, तो यह भय, अवसाद और मानसिक असुरक्षा का कारण बन सकता है | 21वीं सदी का हिंदी कथा साहित्य वृद्ध विमर्श को केवल सामाजिक दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि मनोवैज्ञानिक गहराई से भी देखता है | वृद्ध पात्रों के माध्यम से यह साहित्य न केवल वृद्धावस्था की चुनौतियों को सामने लाता है, बल्कि मानवीय करुणा, सहानुभूति और संवेदनशीलता की आवश्यकता को भी रेखांकित करता है | वृद्धावस्था में मृत्यु बोध स्वाभाविक मानसिक प्रक्रिया है | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की मनोवैज्ञानिक समस्याएँ अकेलापन, भय, अवसाद, चिड़चिड़ापन, याददाश्त में कमी और मृत्यु बोध के रूप में उभरती हैं | साहित्य इन पहलुओं को संवेदनशील और वास्तविक रूप में प्रस्तुत करता है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि वृद्धावस्था केवल शारीरिक ही नहीं, बल्कि मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक चुनौतियों से भी भरी होती है |

निष्कर्ष :

वृद्धावस्था जीवन का एक अहम पड़ाव है, जहाँ मनुष्य सुख-दुख सहते वर्षों के जीवन अनुभव के साथ पहुँचता है | इस चरण में वृद्धजनों की शारीरिक दुर्बलता के साथ-साथ मानसिक चुनौतियाँ भी तेजी से बढ़ती हैं | अकेलापन, असुरक्षा, याददाश्त में कमी, चिड़चिड़ापन, भय और मृत्यु बोध जैसी समस्याएँ वृद्धों के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करती हैं | आज इस वर्तमान समय में ज्यादातर घरों में ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गई है जहाँ वृद्ध साथ रहकर भी अकेला महसूस करने लगता है | अकेलेपन और लाचारगी की भावना जब अंदर तक पैठ बना लेती है, तब उनका जीवन कुंठाग्रस्त हो जाता है | निराशावादी सोच उनके दिलों-दिमाग पर हावी होने लगती है | जीने की उत्कंठा धीरे-धीरे समाप्त होने लगती है | यह ऐसा समय होता है जब उन्हें भौतिक सुख-सुविधाओं से अधिक मानसिक सहारे की आवश्यकता होती है | घर परिवार में आसपास ऐसा स्वस्थ वातावरण प्रदान करने की आवश्यकता है जिससे उनके मन में जीवन के प्रति उत्साह को क्षीण होने से बचाया जा सके | जिस परिवार में इस प्रकार का सकारात्मक वातावरण होता है, देखरेख करने वाले अपने कुटुंब साथ में होते हैं, उनका बुढ़ापे का सफर सरलता से कट जाता है | किन्तु समस्या उन वृद्धों के साथ होती है, जिन्हें इस प्रकार का सकारात्मक वातावरण नहीं मिल पाता | वृद्धों की मानसिक समस्याओं को केवल रोग मानकर नहीं देखा जाना चाहिए, बल्कि इन्हें समझदारी, संवेदनशीलता और प्रेम से सँभालने की जरूरत है | सम्मान, अपनापन, संवाद और देखभाल ही ऐसे साधन हैं जो वृद्धजन को मानसिक रूप से सशक्त बना सकते हैं | यदि हम उन्हें सम्मानजनक जीवन का अवसर दें, तो उनका शेष जीवन भी आनंदमय और गरिमामय बना सकते हैं | निष्कर्षत 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की मनोवैज्ञानिक समस्याएँ वृद्धजनों के अनुभव को बहुआयामी बनाती हैं | वृद्ध पात्र केवल शारीरिक दुर्बलता या सामाजिक उपेक्षा का शिकार नहीं हैं, बल्कि एकाकीपन, मानसिक तनाव, भावनात्मक असुरक्षा और मृत्यु-बोध जैसी जटिल स्थितियों का सामना करते हैं | कथा साहित्य में यह भी चित्रित किया गया हैं कि परिवार और समाज की उदासीनता वृद्धों की मानसिक पीड़ा को और गहरा करती है | इस प्रकार, 21वीं सदी का हिंदी कथा साहित्य मनोवैज्ञानिक दृष्टि से वृद्ध विमर्श को गहनता और संवेदनशीलता प्रदान करता है | यह पाठक को वृद्धों के अनुभव, भावनाओं और मानसिक संघर्षों के प्रति जागरूक करता है और समाज में उनके सम्मान, संवेदना और सहयोग की आवश्यकता को उजागर करता है |

संदर्भ ग्रन्थ :-

आधार ग्रन्थ :

उपन्यास -

कालिया, ममता. *दौड़*. नयी दिल्ली, छठा संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2021.

चतुर्वेदी, ज्ञान. *हम न मरब*. नयी दिल्ली, तीसरा संस्करण, राजकमल प्रकाशन, 2017.

नेगी, सूरज सिंह. *वसीयत*. जयपुर, साहित्यागार प्रकाशक, 2018.

नेगी, सूरज सिंह. रिश्तों की आंच.जयपुर, नवजीवन पब्लिकेशन, 2016.

मुद्गल, चित्रा. *गिलिगडु*. नई दिल्ली, सातवां संस्करण, सामयिक प्रकाशन, 2020.

वर्मा, रवीन्द्र. *पत्थर ऊपर पानी*. नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2000.

वत्स, राकेश. *फिर लौटते हुए*. प्रथम संस्करण, राजपाल एंड सन्स, 2003.

सिंह, *काशीनाथ. रेहन पर रग्घू*. नई दिल्ली, पहला संस्करण, राजकमल प्रकाशन, 2008.

सोबती, कृष्णा. *समय सरगम*. नयी दिल्ली, चौथा संस्करण, राजकमल प्रकाशन, 2019.

हृदयेश. *चार दरवेश*. नयी दिल्ली, दूसरा संस्करण, भारतीय ज्ञानपीठ, 2013

शाह, रमेशचंद्र. *सफेद परदे पर*. किताबघर प्रकाशन, 2011.

कहानी संग्रह –

अग्निहोत्री, कृष्णा. *अपना-अपना अस्तित्व*. दिल्ली, प्रथम संस्करण, नयी किताब प्रकाशन, 2018.

हरनोट, एस आर. *कीलें*. नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2019.

हरनोट, एस आर. *दारोश तथा अन्य कहानियां*. हरियाणा, प्रथम संस्करण, आधार प्रकाशन प्राईवेट लिमिटेड, 2001.

सहायक ग्रन्थ –

लाल, विमला. *वृद्धावस्था का सच*. नयी दिल्ली, कल्याणी शिक्षा परिषद, 2019.

पत्रिका –

वांग्मय, अंक जनवरी-मार्च 2021

राकेश, सुशील. (संपादक) साझा कहानी संग्रह. 'अक्षरार्थ' पहला संस्करण, 2021.

मेहरा, दिलीप. साहित्य-वीथिका, 2021.

पाँचवां अध्याय

क्र.स.	विवरण	पृ.स.
5.	**21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श: भाषा गत एवं शैलीगत विश्लेषण**	**239-308**
5.1	**भाषा अर्थ, परिभाषा**	
5.2	**21वीं सदी में वृद्ध विमर्श पर केन्द्रित हिंदी कथा साहित्य : भाषागत वैशिष्टिय**	
	5.2.1 चित्रात्मक भाषा	
	5.2.2 व्यंग्यात्मक भाषा	
	5.2.3 काव्यात्मक भाषा	
	5.2.4 आंचलिक भाषा	
	5.2.5 पात्रानुकुल भाषा	
	5.2.6 ध्वन्यात्मक भाषा	
	5.2.7 ग्राम्यभाषा	
	5.2.8 विभिन्न भाषा के शब्दों का प्रयोग	
	5.2.9 मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग	
5.3	**शैली अर्थ, परिभाषा**	
5.4	**21वीं सदी में वृद्ध विमर्श पर केन्द्रित हिंदी कथा साहित्य : शिल्पगत वैशिष्टिय**	
	5.4.1 वर्णनात्मक शैली	
	5.4.2 पूर्व दीप्ति शैली/ फ्लैशबैक शैली	
	5.4.3 आत्म कथात्मक शैली	
	5.4.4 नाटकीय शैली	
	5.4.5 विश्लेषणात्मक शैली	
	5.4.6 डायरी शैली	
	5.4.7 पत्रात्मक शैली	

	5.4.8 संवाद शैली 5.4.9 मनोविश्लेषणात्मक शैली 5.4.10 काव्यात्मक या भावनात्मक शैली 5.4.11 विचारात्मक शैली 5.4.12 प्रतीकात्मक शैली 5.4.13 प्रश्नात्मक शैली 5.4.14 स्वप्न शैली 5.4.15 समास शैली 5.4.16 व्यास शैली 5.4.17 बिम्बात्मकता	
●	**निष्कर्ष**	
●	**सन्दर्भ सूची**	

21वीं सदी में वृद्ध विमर्श पर केन्द्रित हिंदी कथा साहित्य : भाषा गत विश्लेषण

5.1 भाषा अर्थ, परिभाषा

भाषा भावों की अभिव्यक्ति का सुंदर व सर्वोत्तम माध्यम है | "भाषा शब्द संस्कृत की भाष् धातु से निष्पन्न है, जिसका अर्थ है, व्यक्त वाणी"| (शर्मा और शर्मा 20) संस्कृत की "भाष्" धातु का अर्थ है – बोलना या प्रकट करना | इस दृष्टि से भाषा को मानव की व्यक्त वाणी, अभिव्यक्ति और संप्रेषण का माध्यम माना गया है | भावों एवं विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए भाषा की बहुत आवश्यकता पड़ती है | श्याम सुन्दर दास के शब्दों में, "भाषा ऐसे सार्थक समूहों का नाम है जो एक विशेष क्रम में व्यवस्थित होकर हमारे मन की बात को दूसरे के मन तक पहुँचाने और उसके द्वारा प्रभावित करने में समर्थ होती है |"(दास 231) यह परिभाषा भाषा को केवल संप्रेषण का माध्यम न मानकर उसे मानव-सम्बन्ध और प्रभावोत्पादकता का उपकरण भी सिद्ध करती है | इस प्रकार भाषा वह माध्यम है जिसके द्वारा हम अपने मन के भावों तथा विचारों को दूसरों के सामने अभिव्यक्त कर सकते हैं, तथा दूसरों के विचारों को जान सकते हैं | डॉ. बाबुराम सक्सेना के अनुसार- जिन ध्वनि चिह्नों द्वारा मनुष्य परस्पर विचार-विनिमय करता है, उसकी समष्टि को भाषा कहते हैं |"(सक्सेना 6) इस प्रकार यह स्पष्ट है कि भाषा वक्ता के विचारों को शब्दों और ध्वनि के माध्यम से श्रोता तक पहुँचाती है और वह विचार-विनिमय का साधन बन जाती है | वैज्ञानिक तथा सूक्ष्म दृष्टि से यदि विचार किया जाए तो यह तथ्य प्रमाणित होता है कि भाषा हमारे विचार-विनिमय का साधन ही नहीं, अपितु विचार का भी साधन है | रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव के शब्दों में, "भाषा हमारे सम्प्रेषण का महत्त्वपूर्ण माध्यम और भावबोध अन्यतम साधन है | भाषा के सहारे व्यक्ति न केवल अपने विचार व्यक्त करता है, बल्कि उसे दूसरे तक संप्रेषित भी करता है |"(श्रीवास्तव 17) इस प्रकार भाषा ही वह साधन है जो भावों, विचारों व संवेदनाओं को दूसरों तक संप्रेषित करता है | भोलानाथ तिवारी अपनी पुस्तक '*भाषा विज्ञान*' में लिखते हैं- "भाषा मानव-उच्चारणावयों से उच्चारित यादृच्छिक ध्वनि-प्रतीकों की वह संरचनात्मक व्यवस्था है जिसके द्वारा समाज विशेष के लोग आपस में विचार-विनिमय करते हैं, लेखक, कवि या वक्ता के रूप में अपने अनुभवों एवं भावों आदि को व्यक्त करते हैं तथा अपने वैयक्तिक और सामाजिक व्यक्तित्व विशिष्टता तथा अस्मिता (Identity) के संबंध में जाने-अनजाने जानकारी देते हैं |"(तिवारी 5) भाषा के माध्यम से मनुष्य समाज-विशेष के लोगों के साथ अपने विचारों का आदान-प्रदान करते हैं | साहित्यकार अपने भावों, विचारों एवं संवेदनाओं को पाठकों के समक्ष रखने के लिए भाषा का सहारा लेता है | भाव एवं संवेदना साहित्य के प्राण तत्व है | भाषा किसी भी साहित्यकार के भावों, संवेदनाओं व विचारों को पाठकों तक पहुँचाने का काम करती है |

परिभाषाएँ –

विभिन्न विद्वानों ने भाषा को परिभाषित करते हुए लिखा है –

- कामताप्रसाद गुरु के अनुसार, "भाषा वह साधन है जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचारों को दूसरों पर भली-भांति प्रकट कर सकता है और दूसरों के विचार स्पष्टता को ग्रहण करने में सक्षम हो सकता है |" (गुरु 19)
- डॉ. श्याम सुंदरदास के अनुसार, "मनुष्य और मनुष्य के बीच वस्तुओं के विषय में अपनी इच्छा और मति का आदान-प्रदान करने के लिए व्यक्त ध्वनि संकेतों का जो व्यवहार होता है, उसे भाषा कहते हैं |" (दास 1)
- पंडित किशोरीदास वाजपेयी के अनुसार, "विभिन्न अर्थों में सांकेतिक शब्द समूह ही भाषा है, जिसके द्वारा हम अपने विचार या मनोभाव दूसरों के प्रति बहुत से प्रकट करते हैं |" (वाजपेयी 5)
- देवेन्द्रनाथ शर्मा के अनुसार, "भाषा यादृच्छिक, रूढ़, उच्चरित संकेत की वह प्रणाली है जिसके माध्यम से मनुष्य परस्पर विचार-विनिमय, सहयोग अथवा भावाभिव्यक्ति करते हैं |" (शर्मा 22)
- भोलानाथ तिवारी के अनुसार, "भाषा वह साधन है जिसके माध्यम से हम सोचते हैं तथा अपने विचारों को व्यक्त करते है |" (तिवारी 1)
- स्वीट के अनुसार, 'ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों को प्रकट करना भाषा है |'(तिवारी 2)

भाषा की परिभाषाओं का अवलोकन करने पर स्पष्ट होता है कि सभी विद्वान भाषा को मनुष्य के जीवन का मूल साधन मानते हैं | कामताप्रसाद गुरु और डॉ. श्यामसुंदर दास के अनुसार भाषा विचारों तथा इच्छाओं के आदान-प्रदान का सशक्त माध्यम है, जिसके द्वारा व्यक्ति अपने मनोभावों को स्पष्ट कर सकता है | पं. किशोरीदास वाजपेयी और स्वीट ने भाषा के ध्वन्यात्मक और सांकेतिक स्वरूप को महत्व दिया है, अर्थात् भाषा केवल भावों की अभिव्यक्ति नहीं बल्कि ध्वनियों और प्रतीकों का व्यवस्थित समूह भी है | देवेंद्रनाथ शर्मा भाषा को संकेतों की एक प्रणाली बताते हैं, जिसके माध्यम से व्यक्ति सामाजिक व्यवहार, सहयोग और भावाभिव्यक्ति करता है | भोलानाथ तिवारी की दृष्टि में भाषा न केवल विचारों की अभिव्यक्ति का साधन है, बल्कि यह सोचने और चिंतन करने की शक्ति भी प्रदान करती है | इस प्रकार कहा जा सकता है कि भाषा मनुष्य के मानसिक, सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन का अभिन्न हिस्सा है, जो संचार, सहयोग और सभ्यता की उन्नति का मूल आधार बनती है | अंत: भाषा मनुष्य के मनोभावों, विचारों की अभिव्यक्ति का सबसे महत्वपूर्ण एवं विश्वसनीय माध्यम है | यह एक सशक्त माध्यम है जिसके द्वारा मनुष्य समाज के अन्य व्यक्तियों के साथ अपने मन के भावों और विचारों का आदान-प्रदान करता है |

5.2 21वीं सदी में वृद्ध विमर्श पर केन्द्रित हिंदी कथा साहित्य : भाषागत वैशिष्ट्य

भाषा कथा साहित्य का एक अनिवार्य एवं महत्वपूर्ण तत्व है, क्योंकि उसी के माध्यम से कथा साहित्य के अन्य तत्वों की अभिव्यक्ति होती है | भाषा जितनी विशिष्ट होगी कथा साहित्य भी उतना ही विशिष्ट होगा | कथाकार अपनी कृति को पाठकों तक पहुँचाने के लिए कथा के विन्यास को रोचक बनाने हेतु नवीन भाषा का प्रयोग करता है | भाषा के माध्यम से ही कथाकार अपने मन के भावों एवं विचारों को पाठकों के मानस तक पहुँचाने का काम करता है | कथाकार कथा साहित्य को सरल, सहज, रोचक और प्रभावशाली बनाने के लिए अपनी भाषा में मुहावरों, लोकोक्तियों एवं आम बोलचाल के उचित शब्दों का प्रयोग बड़ी सूक्ष्मता के

साथ करता है | “भाषा जितनी ही सरल और बोधगम्य होती है, वह उतनी ही प्रभावशाली होती है |”(सिन्हा128) बिना भाषा के साहित्यकार अपने मन के भावों एवं विचारों को पाठक तक कभी नहीं पहुंचा सकता | वस्तुतः कथा साहित्य की सफलता का राज उसकी भाषा-शैली होती है | अंत: प्रत्येक साहित्यकार भाषा के द्वारा ही अपनी साहित्यिक रचना को प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त करने का प्रयास करता है | अतः सफल भाषा वही होती है जो कथा साहित्य की कथा वस्तु, देशकाल और पात्रों के अनुरूप हो | कथा साहित्य में भाषा वह महत्वपूर्ण तत्व है जिसके द्वारा किसी भी साहित्य के सार्थक अनुभवों की पहचान की जा सकती है | कोई भी रचना पाठकों को कितना प्रभावित करती है यह लेखक की भाषा और प्रतिभा पर निर्भर करता है | उषा सक्सेना के अनुसार - “भाषा ही वह माध्यम है जिससे रचनाकार और पाठक में आत्मीय संबंध की स्थापना होती है, रचनाकार की कृति के अंतर्गत जो भी कहना होता है भाषा के द्वारा ही होता है |”(सक्सेना 115) इस प्रकार भाषा के सही प्रयोग से साहित्यकार अपने भावों और संवेदनाओं को पाठकों तक पहुँचाने तथा अपनी कृति को प्रभावशाली बनाने का काम करता है | सभी साहित्यकारों की भाषा एवं शैली वैशिष्ट्य में भिन्नता होती हैं | 21वीं सदी के वृद्ध विमर्श पर केंद्रित हिंदी कथा साहित्य में कथाकारों द्वारा भाषा के विविध प्रयोग किए गए है |

5.2.1 चित्रात्मक भाषा

जब कोई साहित्यकार किसी वस्तु, घटना, पात्र इत्यादि का इस प्रकार वर्णन करता है, कि उसके वर्णन में एक शब्द चित्र सा बनता जाता है और पाठक जब उसके पाठ को पढ़ता है, तो उसके मानस पटल पर संबंधित वस्तु, घटना या पात्र का चित्र उभर कर आता है | 21वीं सदी के वृद्ध विमर्श पर केंद्रित हिंदी कथा साहित्य में लेखकों ने इस तरह की चित्रात्मक भाषा का प्रयोग किया है | भाषा की दृष्टि से ममता कालिया का अपना एक विशेष ढंग है | इनके कथा-साहित्य की भाषा सरल, स्वाभाविक और आम बोल-चाल के शब्दों से परिपूर्ण है | उपन्यास में सरसता, रोचकता, सहजता और स्वाभाविकता का श्रेय भाषा शैली को ही माना जाता है | लेखिका ने ‘*दौड़*’ उपन्यास में यह सारी विशेषताओं का प्रयोग, वस्तु, पात्र और वातावरण के अनुरूप करने का प्रयास किया है। लेखिका ने कॉलोनी का जीवंत चित्र अपनी भाषा के माध्यम से प्रस्तुत किया है –

> “कॉलोनी में कमोबेश सभी की यह हालत थी | इस बुड्ढा-बुड्ढी कालोनी में सिर्फ सर्दी-गर्मी की लम्बी छुट्टियों में कुछ रौनक दिखाई देती जब परिवारों के नाती-पोते अन्दर बाहर दौड़ते-खेलते दिखाई देते | वरना यहाँ चहल-पहल के नाम पर सिर्फ सब्जी वालों के या रद्दी खरीदने वाले कबाड़ियों के ठेले घूमते नजर आते |”(कालिया 75)

यहाँ “बुड्ढा-बुड्ढी कॉलोनी” का प्रयोग केवल एक स्थान का नाम नहीं, बल्कि वहाँ के लोगों की वृद्धावस्था और वीरानपन की छवि उकेरता है | छुट्टियों में “नाती-पोते अन्दर बाहर दौड़ते-खेलते” दृश्य में जीवन, उत्साह और ताजगी का चित्र प्रस्तुत करते हैं, जबकि सामान्य दिनों में “सब्ज़ी वाले” और “कबाड़ियों के ठेले” ही चहल-पहल के प्रतीक रह जाते हैं | इस विरोधाभास से पाठक के सामने एक ऐसा चित्र उभरता है जिसमें वृद्धावस्था की नीरसता और क्षणिक जीवन्तता दोनों एक साथ दिखाई देती हैं | रवीन्द्र वर्मा के ‘*पत्थर ऊपर पानी*’ उपन्यास में वृद्ध पात्र सीता देवी को उसका बेटा हरीश उसे पेट्रोल पम्प के पास छोड़ जाता है | पेट्रोल पम्प में

बेटे का इंतजार कर रही सीता देवी का चित्रण करने के लिए लेखक ने चित्रात्मक भाषा का प्रयोग किया है | वृद्ध सीता देवी का चित्र हमारे सामने लेखक इस तरह प्रकट करते हैं –

> "वृद्धा उजली सफ़ेद वायलिन की साड़ी पहने थी | उसके नाक, कान और गले में सोने के आभूषण थे | गोरे चेहरे पर कहीं कोई झुर्री थी, जो उसके सौन्दर्य को पुख्ता बनाती थी | उसके नैन-नक्श तीखे थे, जो आँसुओं से धुँधले नहीं पड़ते थे |" (वर्मा 9-10)

डॉ. सूरज सिंह नेगी ने '*नियति चक्र*' उपन्यास में चित्रात्मक भाषा का प्रयोग बड़े प्रभावशाली ढंग से किया है | वृद्ध नितिन घोष का चित्रण लेखक इस प्रकार से करते हैं | "उम्र यही कोई सत्तर की रही होगी, बीमारी के कारण वह अस्सी-नब्बे साल का लग रहा था | बढ़ी हुई दाढ़ी, शरीर बिल्कुल हड्डियों का ढाँचा, गाल पिचक चुके थे |"(नेगी 35) टेकचंद ने 'दाई' उपन्यास में रेशम बुआ के खाट में पड़े रहने का वर्णन बड़े चित्रात्मक ढंग से किया है | वृद्धावस्था में वृद्ध किस तरह से असहाय हो जाता है | वृद्ध अगर बीमार होकर खाट पकड़ ले तो किस तरह उसके इर्दगिर्द सब अस्त व्यस्त हो जाता हैं | इसका चित्रण लेखक करते हैं –

> "रेशम बुआ समाई हुई थी | कभी गेहुआँ ललाया रंग अतिशय झुर्रियों से काला पड़ चुका था | दांत दो चार बच्चे थे, पोपला मुँह, बाल सफ़ेद, मटमैले सन से अस्त-व्यस्त | पहनावे से लेकर गुदड़ी चद्दर, तकिया सब मैले चीकट | घर में बदबू भी लग रही थी जैसे बरसाती पानी के बाद तीखी धूप से होती है | जैसे ताज़ा पैदा हुए बच्चे के आसपास होती है |" (टेकचंद 63)

लेखक ने रेशम बुआ का चित्रण केवल शारीरिक रूप में नहीं किया, बल्कि उनके व्यक्तित्व, स्थिति और परिवेश को इतने सजीव रूप में उकेरा है कि पाठक के सामने पूरा दृश्य साकार हो उठता है | चित्रात्मक भाषा पाठकों को भावनात्मक रूप से जोड़ने और वर्णन के उबाऊ होने से बचने के लिए जरूरी है | 21वीं सदी के हिंदी कथाकारों ने कहीं-कहीं पात्रों का चित्रण, कहीं दृश्यों का वर्णन करने के लिए पूर्ण रूप से चित्रात्मक भाषा का पर्याप्त मात्रा में प्रयोग किया है |

5.2.2 व्यंग्यात्मक भाषा

व्यंग्यात्मक भाषा में ऐसी भाषा का प्रयोग करना जिसमें किसी व्यक्ति, समाज, घटना या प्रवृत्ति की कमियों, दोषों या विडम्बनाओं को चुटीले, तीखे लेकिन चतुर और मजाकिया ढंग से उजागर किया जाए | "व्यंग्य शब्द की व्युत्पति वि+अंग से हुई है |" (वर्मा 741) अंग्रेजी भाषा में जिसे 'सेटायर' कहते हैं, हिंदी में उसके लिए व्यंग्य शब्द का प्रयोग होता है | अंग्रेजी शब्द 'सेटायर' के आधार पर किसी व्यक्ति या समाज को सीधे शब्दों में न कहकर उलटे या सीधे शब्दों में ही व्यक्त करना, जो नैतिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक विसंगतियों, अंतर्विरोधों, मिथ्याचारों, असमंजस, अन्याय और अविचार आदि को बड़ी गहराई से पकड़ता है, हँसता और मुस्कराता है, पर यह हँसी प्रसन्नता की नहीं, कसक की होती है | वर्तमान समय में फैली सामाजिक कुरीतियों, रूढ़ियों, तथा अत्याचारों का पर्दाफाश करने के लिए व्यंग्य उपयुक्त साधन है | व्यंग्य के माध्यम से साहित्यकार किसी भी प्रकार की विसंगतियों पर कटाक्ष कर सकता है | 21वीं सदी के वृद्ध विमर्श पर केंद्रित हिंदी कथा साहित्य में लेखकों ने व्यंग्यात्मक भाषा का प्रयोग किया

है | काशीनाथ सिंह ने '*रेहन पर रग्घू*' उपन्यास में व्यंग्यात्मक भाषा का प्रयोग किया है | रघुनाथ अपनी बेटी सरला की शादी के लिए वर की तलाश में जिन लोगों के यहाँ पहुँचते हैं, उनके वास्तविक चरित्र को लेखक व्यंग्यात्मक ढंग से उजागर करता है – "ईमानदारी और 'मददगार' की छवि बनाए रखने के साथ पाँच साल के अंदर आजमगढ़ शहर में दुमंजिली कोठी |" (सिंह 48) रघुनाथ अपनी बेटी सरला के लिए कई रिश्ते देख चुके होते हैं | सब जगह पैसों की मांग करते है | रघुनाथ का उसके लिए शादी में लड़के ढूंढने जाने के संदर्भ में उसकी बेटी सरला मजाक में व्यंग्य करती हुई कहती है – "पापा मेरे लिए लड़का ऐसे ढूँढ़ रहे हैं जैसे कोई गाय के लिए सांड ढूँढ़ता है |"(सिंह 44) एक बेटी द्वारा अपने पिता के लिए इस तरह का व्यंग्य वृद्ध बाप को बहुत दुःख पहुँचाता है | इसके अलावा वह माँ-बाप के लड़के ढूँढने और लड़कों द्वारा दहेज़ मांगने की परेशानी पर कहती हैं – "आप तो बाजार के नियम के विरुद्ध काम कर रहे हैं | जब कोई अपनी जिन्स बेचता है तो बदले में खरीददार से उसकी कीमत वसूलता है | और आप हैं कि अपनी जिन्स भी बेच रहे हैं उसकी कीमत भी अदा कर रहे हैं |"(सिंह 45) यहाँ सरला के माध्यम से लेखक दहेज़ प्रथा व शादी के लिए पैसों की मांग करने वालों पर तंज कसा है | एक बाप अपनी घर की बहुमूल्य बेटी को भी दान करें और ऊपर से पैसे भी दें | दहेज़ नामक इस कुप्रथा पर बहुत प्रभावशाली व्यंग्य किया गया है | सरला नई पीढ़ी की युवती इस तरह के लेन-देन से विवाह करने के पक्ष में नहीं है | ममता कालिया के '*दौड़*' उपन्यास में व्यंग्यात्मक भाषा के अनेक उदाहरण देखे जा सकते हैं | उपन्यास में पवन जब माँ रेखा से स्टैला का परिचय करवाता है | रेखा अपने बेटे पवन को व्यंग्यात्मक स्वर में कहती है – "पुन्नू यह सिलबिल-सी लड़की तुझे कहाँ मिल गई |"(कालिया 51) पवन भी माँ से व्यंग्यात्मक लहजे में कहता है – "यही बात तुम्हारे बारे में दादी माँ ने पापा से कही थी | क्या उन्होंने दादी माँ की बात मानी थी, बताइए |"(कालिया 52) इस उपन्यास में व्यंग्य भाषा को सघन के माध्यम से भी देखा जा सकता है | राकेश जब अपने छोटे बेटे सघन को ताइवान से घर लौट आने को कहता है | तब सघन अपने पिता से एक शर्त पर वापिस आने की बात करता है, अगर राकेश तीस से चालीस लाख का इंतजाम करता है | इतने पैसे का नाम सुनकर राकेश गड़बड़ा गए | वह अपनी वास्तविक स्थिति व घर के खर्चे का हवाला देता हुआ कहता है कि अगर पोंछ-पांछकर भी निकाले तो एक-डेढ़ लाख से ज्यादा नहीं निकलेगा | इस पर सघन अपने पिता को व्यंग्य कसता है –

> "इसी बिना पर मुझे वापस बुला रहे हैं | इतने में तो पी.सी.ओ. भी नहीं खुलेगा |"...आपने इतने बरसो में क्या किया ? दोनों बच्चों का खर्च आपके सिर से उठ गया | घूमने आप जाते नहीं, पिक्चर आप देखते नहीं; दारू आप पीते नहीं, फिर आपके पैसों का क्या हुआ ?"(कालिया 85)

भाषा की दृष्टि से देखा जाए तो ममता जी की भाषा सरल, सुगठित, प्रवाहमय, तीखी, व्यंग्यपूर्ण तथा यथार्थवादी है | उनके कुछ व्यंग्य दिल को दुखाने वाले हैं, तो कुछ चौंकाने वाले हैं | उनकी इस विशेषताओं को देखते हुए डॉ. दिनेश द्विवेदी कहते हैं –

> "उनकी भाषा और शैलीव्यंग्यपरकता और चुटकीलेपन से ओतप्रोत है | ममता जी के कथानकों में तो साधव है ही, मगर उससे भी बढ़कर है पात्र के चरित्र में गहरी पैठ | उनकी लेखनी व्यंग्य की 'टेढ़ी मुस्कान' द्वारा समाज की व्याप्त विद्रूपताओं और भ्रष्टाचार पर दृष्टिपात करती जाती है |"(द्विवेदी 10)

ममता जी की लेखनी में व्यंग्य केवल शैलीगत विशेषता नहीं, बल्कि सामाजिक संदेश और पात्र चित्रण का सशक्त उपकरण है | हृदयेश के *'चार दरवेश'* उपन्यास में बेटी-दामाद द्वारा अपने पिता और ससुर के साथ किए गए व्यवहार को लेखक व्यंग्यात्मक भाषा के माध्यम से प्रकट करते हैं | पुलिया पर नियमित बैठने वाले चार वृद्धों के बीच एक अनियमित व्यक्ति भी आता था | चार वृद्धों में से एक वृद्ध रामप्रसाद की मृत्यु रेबीज से हो जाने पर वह अनियमित व्यक्ति कहता है -

> "कुत्ता काटने से पैदा रेबीज से पहले ही उनको अपने बेटी दामाद के काटे से पैदा रेबीज हो चूका था | अपनों के काटे से पैदा रेबीज की पीड़ा ज्यादा तकलीफदेह होती है असह्य बनती किस्म की, और व्यक्ति अपनी मृत्यु की कामना करने लगता है | रामप्रसाद मानसिक रूप से काफ़ी पहले ही मृत हो चुके थे, शारीरिक रूप से बाद में हुए |"(हृदयेश 143)

अपनों द्वारा वृद्धों के साथ दुर्व्यवहार उसे जीते जी मार देता है | रामप्रसाद भी कुते के काटे जख्मों से पहले ही अपनी बेटी और दामाद के द्वारा दिए जख्मों से आहत हो चुके थे | इसी तरह व्यंग्यात्मक भाषा का प्रयोग लेखक शिव शंकर के संदर्भ में करते है | बुढ़ापे में शिवशंकर अधिक हकलाकर बोलने लगते है जिसके कारण उसके पोते-पोती उन पर व्यंग्य करते दिखते है | उन्हें ऐसे शब्द बोलने को कहते जिनका उच्चारण करना उनके लिए मुश्किल होता है | टेकचंद के *'दाई'* उपन्यास में रेशम बुआ अपने जीते जी अपने बेटे, बेटी दामाद और पति को पालती रही | इन सभी ने रेशम बुआ को सिर्फ पैसे कमाने की मशीन समझा था | रेशम बुआ की मृत्यु के बाद भी उसकी मृत देह से चाँदी के मोटे-मोटे कड़े को प्लास पेचकस से निकालने लगते हैं | इस पर एक बुज़ुर्ग व्यंग्य करते हुए फुसफुसाया – "सारी उम्र बुढ़िया चूंट-चूंट (नोच-नोच) कै खाई इन बाप-बेट्टा नै ! अर ईब इस माट्टी की बी दुरगत बणा रे सैं |"(टेकचंद 70) 21वीं सदी के हिंदी साहित्यकारों ने अपने कथा साहित्य में व्यंग्यात्मक भाषा का बड़ा प्रभावी ढंग से चित्रण किया है |

5.2.3 काव्यात्मक भाषा

काव्यात्मक भाषा से तात्पर्य उस भाषा से है, जिसमें इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया जाता है, जिन्हें पढ़कर पाठक को काव्यात्मक आनंदानुभूति होने लगती है | काव्य का प्रमुख तत्व भावनात्मक होता है, जब रचनाकार कहीं-कहीं पूरा छंद या पद्य लिख देता है, तो वहाँ भाषागत काव्यात्मकता का संचार हो जाता है | 21वीं सदी के वृद्ध विमर्श पर केंद्रित हिंदी कथा साहित्य में काव्यात्मक भाषा के प्रयोग के कुछ उदाहरण निम्नलिखित प्रकार से हैं - डॉ. सूरज सिंह नेगी *'वसीयत'* के उपन्यास में काव्यात्मक भाषा का प्रयोग करते हैं | उपन्यास में गाँव की महिलाएँ लोकगीतों का गायन कुछ इस प्रकार से करती हैं | लेखक ने इसका बड़ा प्रभावी ढंग से चित्रण किया है |

> "बेडु पाको बारह मास;
>
> नाराणी काफल पाका चैत,
>
> मेरी छैला....|"(नेगी 90-91)

विश्वनाथ को हरेला से जुड़ा प्रत्येक संस्मरण याद आता है कि किस तरह हरेला चढ़ाते समय उसकी माँ गुनगुनाया करती थी | उसका चित्रण लेखक काव्यात्मक ढंग से करते हैं-

"जी रये जागरिये,

धरती जस आगव, आकाश जस चाकव है जैये,

सूरज जस तराण, स्यावे जसि बुद्धि हो,

दूब जस फलिए

सिलपिस भात खाये, जान्ठी टेकि झाड़ जाये|"(नेगी 188)

काव्यात्मक भाषा अक्सर लयबद्ध होती है, जैसे कविता के छंदों में | यहाँ शब्दों की ताल और गति महत्वपूर्ण होती है | नेगी जी ने काव्यात्मक भाषा के प्रयोग से उपन्यास को प्रभावशाली बनाया है | लेखक उपन्यास में गाँव के बांसुरी वादक के प्रिय स्वर को इस प्रकार चित्रित करते हैं-

"आम की डाई म घुघुती नी बास,

उड़ी जा ओ घुघुती नहै जा लद्दाख |

हाल म्यर पहुँचै दिये,

म्यर स्वामी पास |"(नेगी 258)

(फौज में गए अपने पति की याद में विवाहिता आम की डाली पर बैठी घुघुती (चिड़िया) से कह रही है कि घुघुती ! तू आम की डाली पर न बैठ | उड़कर सीधी लद्दाख पहुँच जा और मेरे पति को मेरा समाचार दे आ | टेकचंद ने अपने उपन्यास '*दाई*' में काव्यात्मक भाषा का प्रयोग बड़े प्रभावशाली ढंग से किया है | गाँव में जचगी से पहले शाम को घर कुनबे की औरतें और रेशम बुआ ढोलक मंजीरा लेकर गाने लगती है | लेखक इन गीतों के बारे में लिखते हैं –

"दाई ने बुला दे री सास मेरी कड़ में दर्द सै

रात अँधेरी री बहू मन्नै कम दिखै सै

दाई नै बुला दे नणदल, मेरी कड़ में दर्द सै

रात अँधेरी री भावज मन्ने डर लागे सै

दाई बुला दे री जेठाणी मेरी कड़ में दर्द सै

रात अँधेरी दी दुराणी मेरे बालक एकले सै”(टेकचंद 8)

काव्यात्मक भाषा में किसी भी घटना या भावना को अत्यधिक सूक्ष्मता और संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया जाता है, ताकि पाठक उसे गहरे रूप में महसूस कर सके | कृष्णा अग्निहोत्री अपने कहानी संग्रह ‘*अपना-अपना अस्तित्व*’ की पहली कहानी ‘*झुर्रियों की पीड़ा*’ में काव्यात्मक भाषा का प्रयोग करते हैं | लेखिका अपनी माँ के गुजरने के बाद नितांत अकेली हो जाती है | अपने अकेलेपन और शिथिलता को काव्यात्मक भाषा में यूँ प्रकट करती हैं –

“शिथिल मेरे अंग थे

लड़खड़ाते पाँव थे

जो लुभा ले सब मुझे

वो चाल न मैं चल सकूँगी

डूबती हुई जिन्दगी की साँझ में

दीप नेह न जला सकूँगी” (अग्निहोत्री 15)

सूर्यबाला की प्रसिद्ध कहानी ‘दादी और रिमोट’ में गाँव से शहर गई दादी के अकेलेपन का साथी टी.वी. और रिमोट को बनाया गया | एक दिन दादी रिमोट का बटन दबाती है तो टी.वी. पर सावन के झूले-हिंडोले और रंग बिरंगी ओढ़नियाँ फहराती लड़कियां तीज कजली गा-गा के झुला झूल रही थी | यह देख दादी का मन चहक उठा और मगन होकर लड़कियों के सुर में सुर मिला कर गाने का लगती है –

सावन रितु आ-ई , धीरे-धीरे सावन रितु

खोलो मोरे सजना, चंदन केवड़िया

(क्योंकि)

चुनर मोरी, भी—जे, धीरे-धीरे

सावन रितु आ-ई , धीरे-धीरे

दादी गीत को सुनते-सुनते पूरी लीन हो गई | गीत के बोलों के हिसाब से शरमाने, लजाने और मुस्कराने लगती है | गाँव की वृद्ध दादी रिमोट के बटन और टी.वी. के सहारे अपना बुढ़ापा व्यतीत करती है | लेखक ने वृद्ध स्त्री के भावों को काव्यात्मक ढंग से अभिव्यक्त किया है | (सूर्यबाला 1) (http://www.abhivyakti-hindi.org/kahaniyan/2003/daadi_aur_remote/dadi02.htm)

काव्यात्मक भाषा न केवल विचारों को व्यक्त करती है, बल्कि उन विचारों के साथ जुड़ी भावनाओं को भी जीवंत रूप से व्यक्त करती है | यह भाषा किसी भी साहित्यिक रूप में सूक्ष्मता, गहराई और सुन्दरता लाती है | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में पात्र और वातावरण को सजीव बनाने के लिए लेखकों ने कई जगह काव्यात्मक भाषा का प्रयोग किया है | जिससे शब्दों के अर्थ में गहराई तथा भाषा में सुन्दरता आई है | साहित्यकारों ने यत्र-तत्र काव्यात्मक भाषा का प्रयोग करके अपने कथा साहित्य को सुंदर, रोचक तथा प्रभावशाली ढंग से लिखने का प्रयास किया है |

5.2.4 आंचलिक भाषा

आंचलिक भाषा से अभिप्राय ऐसी भाषा जो किसी क्षेत्र विशेष में ही प्रचलित होती है | कहने का आशय यह है कि जब कोई साहित्यकार ऐसे शब्दों का प्रयोग करता है, जो किसी एक सीमित क्षेत्र में बोले जाते हैं और उन शब्दों में वहाँ की संस्कृति झलकती है | इसे लोक भाषा भी कहा जा सकता है क्योंकि यह किसी अंचल विशेष में बोली जाती है | रामदरश मिश्र का मंतव्य है –

> “जैसे नई कविता ने सच्चाई, अनुभव की भट्टी में तपे हुए पलों को व्यंजित करने में ही कविता की सुन्दरता देखी, वैसे ही आंचलिक उपन्यासों ने अनुभवहीन सामान्य या विरत के पीछे न दौड़कर अनुभव की सीमा में आने वाले अंचल विशेष को विषय के रूप में दर्ज किया | आंचलिक उपन्यास तो अंचल के जीवन समग्र का उपन्यास है | उसका संबंध जनपद से होता है, ऐसा नहीं वह जनपद की ही कथा है |” (मिश्र 224-225)

साहित्यकार अपने साहित्य में कथ्य के अनुरूप भाषा का प्रयोग करता है | अपने साहित्य में अंचल विशेष को प्रस्तुत करने के लिए लेखक उस अंचल की स्थानीय उपभाषा, बोलियों तथा उपबोलियों का प्रयोग करता है | किसी अंचल विशेष के वातावरण को प्रस्तुत करने के लिए, वहाँ के जीवन की जीवंतता और उसकी मूल सहजता के लिए वहाँ की आंचलिक भाषा ही बेहतर विकल्प रचनाकार के पास होती है | कथा साहित्य में आंचलिकता लाने के लिए भाषा में आंचलिक शब्दों का प्रयोग होना जरूरी है | साहित्यकार की भाषा एवं शब्द चयन लोक परिवेश के अनुकूल हो, तभी इसके माध्यम से किसी विशेष क्षेत्र के जीवन रहन-सहन, खान-पान, लोक संस्कृति तथा लोक परिवेश आदि पाठक के मन: स्थिति पर अंकित हो पाते हैं | 21वीं सदी के वृद्ध विमर्श पर केंद्रित हिंदी कथा साहित्य में कई स्थानों पर पात्रों के वार्तालाप में आंचलिक भाषा का प्रयोग किया है |

काशीनाथ सिंह के उपन्यास *‘रेहन पर रग्घू’* की भाषा की बड़ी विशेषता यह है कि उसमें कहीं भी बनावटीपन नहीं है | इसमें ग्रामीण परिवेश एवं लोक-जीवन से सीधे ग्रहण की गई भाषा है | विवेच्य उपन्यास में खड़ी बोली, अंग्रेजी और फारसी भाषा के शब्दों के साथ ग्रामीण अंचल के शब्दों का सहज और स्वाभाविक प्रयोग किया गया है | किसान जीवन एवं ग्रामीण परिवेश में प्रयुक्त होने वाले शब्दों का सहज प्रयोग उसी लय और प्रवाह के साथ मिलता है जिस रूप में वह व्यवहत होते हैं | हलवाहों की हड़ताल का दृश्य - “हलवाहों ने हड़ताल की थी ऐसे ही वक्त पर – खेत के जोत, बन्नी और केड़ा को लेकर ! हडौरी (हल जोतने की मजूरी) और खलिहानी को लेकर |”(सिंह 64) ग्रामीण परिवेश को जीवंतता प्रदान करने के लिए लेखक ने ग्रामीण पात्रों के संवादों में आंचलिक

भाषा का रोचक वर्णन किया है | रघुनाथ के खेतों में हल जोते वाला गनपत मिर्जापुर के बारे में बताता है | "रहे दस दिन ! एक दिन तो पूछते पाछते गुड़िया बेटी के इस्कूल चले गए थे |...चलने लगा तो बीस ठो रुपैया भी जबरदस्ती पकड़ाय दिहिन !"(सिंह 68) गनपत सुदेश भारती और सरला के प्रेम प्रसंगों को भी सुनाता है लेकिन उसे यह मालूम नहीं होता कि वह रघुनाथ की बेटी है | गनपत बताता है –

> "ऊ मास्टरनी के साथ इहाँ उहाँ जाता है, होटल भी जाता है, दूसरे सहर में भी घूमता है, खूब एयासी करता है बाकी फूआ से नहीं मिलाता | फूआ बोली भी कि हमको दिखा दो एक बार, हम बतियाएँगे उससे कि काहे नहीं कर रही बियाह ?"(सिंह 69)

आंचलिक भाषा से पात्रों के संवाद और कथानक अधिक स्वाभाविक और सजीव लगते हैं | गनपत ग्रामीण पात्र है | गाँवों की गंवई भाषा का सहज, स्वाभाविक और जीवंत चित्रण काशीनाथ सिंह ने किया है | डॉ. सूरज सिंह नेगी के उपन्यासों में आंचलिक शब्दों को देखा जा सकता है | वे उत्तराखंड अंचल से संबंध रखते हैं, इसलिए उनके पात्रों के संवादों में भी कुमाँऊनी भाषा के प्रयोग ने उनके उपन्यासों को जीवंतता प्रदान की है | नेगी जी के उपन्यास '*ये कैसा रिश्ता*' में आंचलिक भाषा के उदाहरण देखने को मिलते हैं | इस उपन्यास में पूरन के दादाजी की बीमारी को ठीक करने के लिए पूरन गाँव से दूर घने जंगल में झरने का पानी लाने के लिए जाता है | पूरन उस समय मात्र दस वर्ष का था, उसकी माँ को बेटे की चिंता होने लगती है | इस दृश्य को नेगी जी ने कुमाँऊ भाषा में इस प्रकार चित्रित किया है – "ईजा, मैं ल्यौल बूबू लीजी गरम पानी | (ईजा मैं लाऊंगा बूबू के लिए गर्म पानी) 'न च्यल...न...य...संभव निछौ...|' भागी घन-जंगौव में तू कैसी जालै |' (न बेटा ..यह संभव नहीं है | उस घने जंगल में तू कैसे जाएगा |" (नेगी 11) डॉ. सूरज सिंह नेगी के उपन्यास '*वसीयत*' में आंचलिक भाषा का प्रयोग देखने को मिलता है | "विश्वा ! च्यला कौस छै रे तू ? (विश्वा ! बेटा तू कैसा है रे ?) (नेगी 30) "ईजा बाज्यू माफ कर दीया |" (माँ-बाबूजी माफ कर देना) (नेगी 69) विश्वा ! नाती आ घाम ताप ले |" (नेगी 37) नेगी जी ने आंचलिक भाषा के लोकगीतों का प्रयोग भी प्रभावी ढंग से किया है बचपन में अपने दादा से सुने हुए गीत को विश्वनाथ अकसर अकेले में गुनगुनाया करता था |

> बुति हाली रैंस, बुति हाली रैंस,
>
> आनै रैनी रितु मास,
>
> नीं आन मैंस |"(नेगी 109)

अर्थात्- खेतों में दाल बो दी गई है, ऋतु और माह तो आते रहते हैं, लेकिन जाने के पश्चात इंसान वापिस नहीं आता | कृष्णा अग्निहोत्री जी का संबंध मध्य प्रदेश से होने कारण उस अंचल विशेष के लोगों को जानने, उनके रहन-सहन तथा उनकी भाषा को जानने व समझने का अवसर प्राप्त हुआ है | जिससे उनके साहित्य में आंचलिक भाषा का समावेश होना स्वाभाविक है | उनके कहानी संग्रह '*अपना-अपना अस्तित्व*' में हिंदी भाषा के साथ आंचलिक भाषा का भी पुट मिलता है | कुछ उदाहरण निम्नलिखित वाक्यांशों के माध्यम से देख सकते हैं - "अरे मुन्ना, उन्हें तुम्हारा जैसी बहु कित्ते मिले है !" (अग्निहोत्री 115) "आप न करो काम, मैं निबटाये देती

हूँ |" (अग्निहोत्री 117) "आप तो जानत हो, मोको शऊर नहीं है |" (अग्निहोत्री 117) "मोर पैसा तुम्हारा ही तो है बाई !" (अग्निहोत्री 118) "मैं अकेली जाऊँ तो कित्ते जाऊँ |" (अग्निहोत्री 118) "बाई, जब आप ही बहू-बेटे के सामने सिर झुकाये हो तो मोर का बिसात कि उफ़ करूँ ! रहन को पड़त है तो वकत गुजारे को पड़ीं है |" (अग्निहोत्री 118) "किन्ना बेटे, तुम बाईजी को ले जाओ, मोर आना न हो सके |" (अग्निहोत्री 119) "अब जी कैसो हो बाई" इत्यादि |"(अग्निहोत्री 119) आंचलिक भाषा क्षेत्रीय लोक संस्कृति, परम्पराओं सामाजिक संबंधों और मान्यताओं को प्रकट करती हैं | इसमें कृत्रिमता नहीं होती यह पाठकों को सीधे भावनात्मक स्तर पर जोड़ती हैं | आंचलिक भाषा से साहित्य में जीवंतता, आत्मीयता और क्षेत्रीय अस्मिता का गहरा बोध होता है | अंत: 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में कथा वस्तु, पात्र, देशकाल वातावरण के अनुसार लेखकों ने अलग-अलग क्षेत्र की आंचलिक भाषा का प्रयोग बड़े यथार्थ व मार्मिक ढंग से किया है |

5.2.5. पात्रानुकुल भाषा

21वीं सदी के हिंदी कथासाहित्य में पात्रानुकुल भाषा का प्रयोग हुआ है | पात्रों के स्तर एवं उनके संस्कारों के अनुकूल भाषा के प्रयोग से उनके कथा साहित्य में स्वाभाविकता तथा जीवंतता आ जाती है | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वातावरण के साथ पात्रानुकुल भाषा देखी जा सकती है | पात्र जिस परिवेश से आता है उनकी भाषा पर उसका प्रभाव पड़ता है | ग्रामीण वातावरण से प्रभावित पात्रों की भाषा और अभिव्यक्ति में ठेठ गाँव के देशज व आंचलिक शब्दों की भरमार होती है | शहरी पृष्ठभूमि के शिक्षित पात्र अपनी भाषा और अभिव्यक्ति में परिनिष्ठित हिंदी भाषा का प्रयोग करते हैं | 'समय-सरगम' उपन्यास में वृद्ध पात्र आरण्या की भाषा में परिनिष्ठित हिंदी का प्रयोग अधिक हुआ है | आरण्या अपने विचारों को कुछ इस प्रकार प्रकट करती है –

"कौन है जो अस्तित्व के दबाव में नहीं

अग्नि पृथ्वी की मृत्यु से

वायु अग्नि की मृत्यु से

जल वायु की मृत्यु से

और पृथ्वी जल की मृत्यु से जीवित है |"(सोबती 57)

साधारण ग्रामीण पात्र सरल और क्षेत्रीय भाषा बोलते हैं जबकि शिक्षित, संभ्रांत पात्र शुद्ध व्याकरणिक और संस्कृतनिष्ठ हिंदी में बात करते हैं | इस प्रकार शिक्षित व बुद्धिजीवी वर्ग द्वारा तत्सम शब्दों का प्रयोग अत्यधिक हुआ है | परिवेश व पात्रों के अनुसार भावाभिव्यक्ति के लिए भाषा का प्रयोग किया गया है | 21वीं सदी के कथा साहित्य में पात्रानुकूल भाषा कथा को सजीव बनाने, पात्रों को विशिष्ट और वास्तविक दिखाने और पाठक को कथा में भावनात्मक रूप से जोड़ने का सशक्त उपकरण बन गई है |

5.2.6 ध्वन्यात्मक भाषा व ध्वनियुक्त शब्दावली -

ध्वन्यातात्मक भाषा शब्दों को केवल अर्थ का नहीं, बल्कि अनुभूति और प्रभाव का भी वाहक बना देती है | यह भाषा पाठक और श्रोता के मन में चित्र और ध्वनि दोनों एक साथ उकेरती है, जिससे साहित्यिक रचना प्रभावी और सजीव हो जाती है | कथा साहित्य में जहाँ ऐसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है, जो एक जैसी ध्वनि उत्पन्न करते है | जैसे कलकल, छन-छन, पट-पट आदि | 21वीं सदी के वृद्ध विमर्श पर केंद्रित हिंदी कथा साहित्य में ध्वन्यात्मक शब्दों का प्रयोग करके प्रभावात्मक ढंग से चित्र खड़ा करने में सफलता प्राप्त की है | कृष्णा अग्निहोत्री जी के कहानी संग्रह '*अपना-अपना अस्तित्व*' में ध्वन्यात्मक भाषा का प्रयोग | यथा - "वृद्ध सावित्री सारे दुःख-पीड़ा भूल सुड़- सुड़ चाय पीती |…अच्छा-अच्छा और सावित्री पोपला मुँह घुमा सूँ-सूँ करती सो गई | (अग्निहोत्री 42) "मम्मी, ये क्या रें-रें लगा देती हो |" (अग्निहोत्री 57) "माँ आपसे किसने कहा कि बेकार की सस्ती-पस्ती चीजें हमारे सिर मढें |" (अग्निहोत्री 48) "अब तो दिल की धक-धक इतनी क्षीण होती है" (अग्निहोत्री 50) ऐसे शब्दों से ध्वनिबिम्ब बनता है और अर्थग्रहण में सहायक होता है | वातावरण के सफल चित्रण हेतु ध्वनि युक्त शब्दों का यथासंभव प्रयोग अग्निहोत्री की कहानियों में हुआ है |

5.2.7 ग्राम्यभाषा

गाँव-देहात के लोगों द्वारा बोली जाने वाली सहज, सरल, स्थानीय और प्रादेशिक बोलियाँ या भाषा शैली जो आमतौर पर शहरी या शुद्ध मानक भाषा से अलग होती है | डॉ. कपिलदेव द्विवेदी अपनी पुस्तक '*भाषा विज्ञान एवं भाषा-शास्त्र*' में लिखते हैं, "अशिष्ट, असभ्य और अपरिष्कृत भाषा को अपभाषा नाम दिया जाता है | अंग्रेजी में स्लैंग शब्द के द्वारा जिस अर्थ को व्यक्त किया जाता है, उसी अर्थ को अपभाषा शब्द व्यक्त करता है |"(द्विवेदी 34) भाषा के जिस रूप को सभ्य समाज का हिस्सा नहीं माना जाता वह ग्राम्य भाषा है | डॉ. भोलानाथ तिवारी अपनी पुस्तक '*भाषा विज्ञान*' में लिखते हैं, "अपभाषा भाषा का वह रूप है, जिसे परिनिष्ठित एवं शिष्ट भाषा की तुलना में विकृत या अपभ्रष्ट समझा जाता है |"(तिवारी 91) साहित्य में भी यह भाषा अवांछित होती हैं, किन्तु कभी-कभी पात्रानुकूल भाषा के प्रयोग में ऐसे शब्द आवश्यक रूप में आते हैं | 21वीं सदी के वृद्ध विमर्श पर केंद्रित हिंदी कथा साहित्य में पात्रों की विशिष्ट मनोवृति को उजागर करने के लिए ऐसे शब्दों का प्रयोग किया गया है | ममता कालिया के '*दौड़*' उपन्यास में निम्नलिखित अपशब्दों का प्रयोग किया है - साला, फटीचर, भाड़ । काशीनाथ सिंह ने '*रेहन पर रग्घू*' उपन्यास में ग्राम्यभाषा का प्रयोग किया है | रघुनाथ की बेटी सरला और उनके प्रेमी कौशिक सर घूमने दूर स्तूप खंडहर में जाते है | जहाँ वे दोनों एक-दूसरे के साथ प्यार जताने की कोशिश करते है | तभी ऐतिहासिक धरोहर का पहरेदार खाकी वर्दी पहने हुए अचानक आ जाता है | पहरेदार की भाषा को लेखक इस प्रकार चित्रित करते हैं – "देख क्या रहे हो, उठो; यह रंडीबाजी का अड्डा नहीं है !..कहाँ से फांसा है इस लौंडिया को |" (सिंह 33) यहाँ लेखक ने पहरेदार के माध्यम से अपभाषा को प्रकट किया है | एक अन्य रघुनाथ के मित्र एल.एन.बापट के सन्दर्भ में भी अपभाषा का प्रयोग देख सकते हैं | वह पांच बजे रोज पुलिया के किनारे घूमने निकल जाते है, लेकिन सूर्य को देखकर रग्घू से कहने लगते हैं – "रघुनाथ, जरा देखो साले को | जान बूझ कर देर कर रहा है भोंसड़ी के डूबने में |" (सिंह 126) वृद्ध एल.एन. बापट के संवादों में भी ग्राम्यभाषा का प्रयोग दिखाया गया है | यही अपभाषा ग्रामीण पात्रों में भी देखने को मिलती है | रघुनाथ शहर में नौकरी करने के बाद लम्बे समय के बाद गाँव जाते हैं | गाँव में उसके भतीजे उसकी जमीन के कुछ हिस्सों

पर कब्ज़ा कर लेते हैं जब रघुनाथ जमीन खाली करने के लिए कहते हैं तो उनके भतीजे उनके साथ गाली-गलौज व धक्का-मुक्की करते हैं | रघुनाथ का भतीजा उसे धक्का मारकर गिराता है और कहता है-

> "साले बुड्ढे ! टेंटुआ पकड़ कर अभी चांप दें तो टें बोल जाओगे ! हम जितनी ही शराफत से बात कर रहे हैं, उतना ही शेर बन रहे हो ! जा, जो करना है, कर लें ! उठते हुए उसने उनकी कमर पर एँड़ जमाई – "साला बुड्ढा हरामजादा !"(सिंह 80-81)

टेकचंद के '*दाई*' उपन्यास में रेशम बुआ के पति के मरने के बाद उसके बच्चे और ज्यादा नशे में डूबे रहते हैं | सिर से बाप का साया उठने से उसके लड़के अनियंत्रित होकर और भी बिगड़ जाते हैं | इस पर गाँव समाज के लोग इस तरह की बाते करते हुए कहते हैं – "रामपत के मरा भाई ये छोरे 'रांड के सांड' हो गये...' ठीक कहवै है भाई सयाणे माणस अंक रंडुए की छोरी बिगडै हैं तै रांड के छोरे |" (टेकचंद 53) एस.आर हरनोट की कहानी '*बिल्लियाँ बतियाती हैं*' में अम्मा अपनी बिल्लियों से परेशान होकर कहती हैं – "सालियों, तुम दूसरी बार आणा बिस्तर में | जान न निकाल दी तो बोलणा |"(हरनोट 9) हरनोट की दूसरी कहानी 'बीस फुट के बापू जी' में पुलिस वाले कहानी के नायक चाचू के साथ अभद्र भाषा का प्रयोग करते हैं | लेखक इसका चित्रण करते हैं- "स..म..झा | तू घोड़े वाला बूढ़ा है न |" "हाँ-हाँ ! चाचू !" "साला हमको बनाता है ?" ऊपर चढ़े पुलसिये ने रोब मारा | चाचू कुछ कहता, दूसरा नीचे से बोला, "लगता है मादर... ऑपोजिशन में मिल गया है |"(हरनोट 35) ग्राम्य भाषा हिंदी साहित्य में ग्रामीण समाज की आत्मा को पकड़ने का माध्यम है | यह भाषा अनगढ़ और स्वाभाविक होती है | अंत: 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में भाषा में स्वाभाविकता लाने, ग्रामीण जीवन, संस्कृति और समाज को वास्तविक रूप तथा पात्रों के चित्रण के लिए उनके मुख से ग्राम्यभाषा का प्रयोग भी किया है | पात्रों के परिवेश व मन: स्थिति के अनुसार ग्राम्यभाषा के शब्दों का चयन किया गया है |

5.2.8 विभिन्न भाषा के शब्दों का प्रयोग

आ. चंद्रशेखर शास्त्री अपनी पुस्तक '*भाषा विज्ञान*' (सिद्धांत एवं प्रयोग) में लिखते हैं – "मनुष्य तरह-तरह की भाषाएँ बोलते हैं, कोई मराठी, कोई गुजराती, कोई बंगाली, तो कोई अंग्रेजी, जर्मन, तुर्की, चीनी तथा जापानी आदि | यदि और अधिक भेद की दृष्टि से देखा जाए तो एक भाषा के अंतर्गत ही मनुष्य कई तरह की बोलियाँ बोलते हैं, हिंदी वाले ही कोई अवधी, कोई ब्रज, कोई खड़ी बोली आदि | और इन बोलियों के भीतर भी बहुत से भेद हैं | परन्तु इन सब की तह में एक एकत्व है – मनुष्य के विचारों, भावों और इच्छाओं को प्रकट करना |"(शास्त्री 11) भारत एक बहु भाषा-भाषी देश है | यहाँ के मूल निवासियों के अतिरिक्त अन्य कई देशों से आकर लोग बस गए हैं | भारत का कई देशों के लोगों के साथ प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष संबंध रहा है जिसके कारण हिंदी भाषा में कई अन्य भाषाओं के शब्द भी सम्मिलित हो गए हैं | इस संबंध में रामचंद्र वर्मा कहते हैं – "जब पारस्परिक संपर्क के कारण एक जाति की भाषा का दूसरी जाति की भाषा पर प्रभाव पड़ता है, तब उसमें शब्दों का आदान-प्रदान भी अवश्य होता है |" (वर्मा 31) इस प्रकार, भारत में भाषाएँ न केवल संचार का साधन हैं, बल्कि सांस्कृतिक और सामाजिक संपर्क का दर्पण भी हैं, जो बहुस्तरीय,

गतिशील और विकासशील स्वरूप को दर्शाती हैं | 21वीं सदी के वृद्ध विमर्श पर केंद्रित हिंदी कथा साहित्य में भाषा प्रयोग संबंधी विविधता दृष्टिगोचर होती है |

- **तत्सम शब्द**

संस्कृत भाषा सबसे प्राचीन भाषा है जिसे सभी भाषाओं की जननी भी माना जाता है | हिंदी भाषा का विकास भी संस्कृत भाषा से माना जाता है | हिंदी भाषा में अधिकतम शब्द संस्कृत के शब्द जैसे के तैसे प्रयोग किए जाते है | हिंदी के साहित्यकार आज भी संस्कृत के शब्दों का प्रयोग अपने साहित्य में करते हैं | जब संस्कृत भाषा के शब्दों का हिंदी भाषा में ज्यों का त्यों प्रयोग होता है तब उन्हें तत्सम शब्द कहा जाता है | भोलानाथ तिवारी के अनुसार, "तत्सम से 'तत्' का अर्थ है 'वह' अर्थात् 'संस्कृत' और 'सम' का अर्थ है 'समान' | अर्थात् तत्सम उन शब्दों को कहते है जो संस्कृत के समान हों | अथवा संस्कृत-जैसे हों"(तिवारी 169) 21वीं सदी के कथा साहित्यकारों ने अपने कथा साहित्य में तत्सम शब्दों का प्रभावशाली ढंग से प्रयोग किया है |

ममता कालिया के '*दौड़*' उपन्यास में भावों की सफल अभिव्यक्ति के लिए संस्कृतनिष्ठ अथवा तत्सम शब्दों का भरपूर प्रयोग हुआ है | यथा - प्रतिष्ठान, संतुष्ट, शिखरचुम्बी, प्रशिक्षु, स्पर्धा, शुद्धिकरण संयंत्र, सवर्ण,चिकित्सक, ताम्रपणी, निर्देश, उत्पादन, विक्रय, दुष्कर, श्रेष्ठ, वैकल्पिक, वंशानुगत, दिवसीय, सांस्कृतिक, कार्यक्रम, नृत्य,अभूतपूर्व, मुक्तांगन, नि: शुल्क, सर्वाधिक, मर्मज्ञ, रसज्ञ, अंततः, पुनर्सृजित, अद्भुत, प्रशिक्षार्थियों, ऊर्जा, वर्चस्व, ध्यानमग्न, विसर्जित, आत्मशुद्धि, नितांत, असाध्य, कृत्यों, तर्कशक्ति, आकर्षक, अंत:स्वरूप, आत्यंतिकता, उत्कृष्टता, प्रसव, अद्वेलित, उत्साहविहीन, अतिशयोक्ति, स्तंभित, ग्रहण, विसर्जित, प्रतिरोधक, आकस्मिकता, अप्रिय, सम्प्रेषण,आश्वस्ति, पूर्वाग्रह, ग्रसित, सुरुचिपूर्ण, मुखाकृति, स्त्रियोंचित, चमत्कृत, अपरिपक्व, निरुत्तर, हस्तलिखित, वृतियाँ, प्रतिस्थापित, हृदय, पराध्वनि, अकस्मात, कंठस्थ, प्रतिफलित, इत्यादि |

कृष्णा सोबती ने अपने उपन्यास '*समय सरगम*' में अनेक संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग किया है | यथा- अभिनीत, स्मृति, जीवित, मृतक, चमत्कृत, संतुष्ट, अर्जित, संग्रह, प्रतिस्पर्धा, गंतव्य, प्रशिक्षण, आत्मिक, आकृति, संवाद, ज्ञान प्रज्ञा, अंतर्मन, कृति, आच्छादित, द्विज, सौजन्यता, संकीर्णता, सर्पाकार, सुदृढ़, अप्रत्याशित, निबिद्ध, अनुपस्थिति, नम्रता, घनिष्ठता, दृश्य-श्रव्य, आतंकित, नर्मालाप, दुर्गंध, अभ्यागत, अनुशासन, उक्तियाँ, सूक्तियाँ, भ्रमण, यज्ञोपवीत, दर्शक, अतिथि, श्रोता, नक्षत्र, सुदृढ़, आकर्षित, सक्रिय, निर्वाण, मुखाकृति, स्वयंसिद्ध, अविस्मरणीय, स्वयंसिद्ध, पुनर्जन्म, अद्वितीयता, दक्षता, दुरान्तरित, चैतन्य, कल्पनातीत, अंतर्मन, द्वंद्व, गंतव्य, आरक्षित, मुकुट, तिरोहित, सम्पूर्ण, दुर्लभ, आत्ममंथन, पितृ-शक्ति, अर्जित, आलौकिक, गूढ़ार्थ, मद्धम, दुर्दिन, निबिद्ध, संचारिणी, आच्छादित, उत्साहित, मितव्ययिता, प्रस्थान, वैमनस्य स्त्रोत, वाक्य विन्यास, घृणा पुराण, उन्मुख, सुसंस्कृत, शिष्टवृत्ति, पूर्वाभास, दरिद्रता, तृप्ति, आयुर्वेदिक, उल्लास-उल्लास, मुखाकृति, स्पर्धा, उद्भासित, अल्पज्ञता, दृष्टिकोण, प्रकृतिजन्य, स्वभावजन्य, आत्मदर्शी, आत्मनिष्ठ, बौद्धिक, घनिष्ठता, स्वामित्व, सुव्यवस्थित, अस्मिता, पदोन्नति, अंत: शक्तियों, अंतरध्वनि, पितृ-मुद्राएं, पितृ-पक्ष, निमग्नता, कलाकृतियाँ, काष्ठ, दर्पण, वानप्रस्थ, गौण, आत्मालोचन, अतिश्योक्ति, नियंत्रित, सूत्रबद्धता, शुष्क, निद्राभिभूत, आत्मज्ञान, विश्राम, अदृश्यमान, मिश्रित, व्याधि, क्षमाप्रार्थी, कृतज्ञ, सान्निध्य, अंतर्संबंधों स्मृति-

चिन्ह, उत्कृष्ट, इष्टदेव, प्रतिकूल, कृपण, कृतघ्न, कुकर्म, गृह-प्रवेश, पुण्य, मृतोत्थान, पुनरुत्थान, मृत्युलोक, श्रद्धांजलि, संपन्नता, दृष्टिपात, स्वर्णिम, सत्यांश, असमंजस, घृणा, संस्कारविहीन, प्रस्थान, आश्चर्यजनक, आत्मदर्शन, सम्प्रेषण, अंतर्संबंध, लयात्मक, तत्वज्ञानी, निष्कपटता, अमूर्त, स्वपन, श्रृंखला, टूप-अतृप्त, आख्यान-प्रत्याख्यान, स्वत्व, निस्तब्धता, तत्वदर्शी, शास्त्र, अजन्मा, नित्य, स्थूल-सूक्ष्म, पुनर्जन्म, मृत्यु-शैय्या, तृप्ति, इत्यादि |

चित्रा मुद्गल के '*गिलिगडु*' उपन्यास में संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग | यथा- निर्मम, मंत्र-मुग्ध, सौन्दर्य, क्षुब्ध, कृतज्ञता, न्यौता, क्षणिक, आकृतियां, उपेक्षापूर्ण, प्रत्युतर, निवृत, प्रतिष्ठा, स्तब्ध, विस्मय, वैविध्य, क्षणांश, चमत्कृत, अनभिज्ञता, चिह्न, निर्देशानुसार, स्वादिष्ट, अदृश्य, अजस्त्र, स्त्रोत, प्रतिक्रियाहीन, हृदयघात, रक्तचाप, गृहिणी, आरोप-प्रत्यारोप, आमंत्रित, आगंतुकों, निष्क्रियता, संभ्रांत, निष्प्राण, विस्मय, निराश्रित, वितृष्णा, हृदय, अप्रिय, मुखाकृति, सौम्य, हृदयविदारक, पूर्वनिर्धारित, निवृत, पृष्ठ, निर्लज्ज, आत्मविवेचन, विस्मित, अतिक्रमण, प्रच्छन्न, उद्विग्नता, असाध्य, आकृष्ट, नवनिर्मित, कर्कश, ध्वनि, नृत्य प्रदर्शन, नृत्यांगना, नृत्यप्रवीणता, उद्वेलित इत्यादि |

निर्मल वर्मा के '*अंतिम अरण्य*' उपन्यास में निम्नलिखित संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग देख सकते हैं | संस्कृतनिष्ठ शब्दों के प्रयोग से उनका आभिजात्य और बढ़ जाता है | कुछ उदाहरण नीचे देख सकते हैं –अदृश्य, उज्ज्वल, स्वर्ण फूल, मृत्यु, निश्चल, निस्तब्ध, विस्मयकारी, कौतूहल, निर्विकार, स्मृति, क्षितिज, निस्पंद, पुनर्जन्म, शुष्क, ईर्ष्या, निस्संतान, उद्वेलित, नि:संगता, अंतर्ध्यान, विस्मयलोक, हृत-स्थल, नक्षत्र, निस्पंद, निर्दोष, हृतस्थल, ध्यानावस्थित, प्रतिस्पर्धी, अदृश्य, वार्तालाप, निर्जीव, निस्तार, आकृतियाँ, आनंदविभोर, जर्जरित, ज्वरग्रस्त, मस्तिष्क, अंत्येष्टि, अन्तस्तल, निर्निमेष, निर्लिप्त, विस्तीर्ण, पितृलोक इत्यादि |

काशीनाथ सिंह के '*रेहन पर रग्घू*' उपन्यास में तत्सम शब्द – ऐश्वर्य, सौन्दर्य, त्वचा, विनम्रता, नित्य, विनम्रता, मितभाषिता, दुर्लभ, संतोष, आकर्षक, कृतज्ञ, व्यभिचार, दु:स्वप्न, नित्य कर्म, सुस्वागतम, उसाँस, नंगधडंग, आकृष्ट, निर्लिप्त, प्रायश्चित, पूर्वांचल, आकस्मिक स्वर्गवास, उत्साह, मृत्युगंध, कृतज्ञता, नि:स्पृह, नि:स्वार्थ इत्यादि |

हृदयेश के '*चार दरवेश*' उपन्यास में संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में हुआ है | यथा – विकल्पहीनता, अधिग्रहित, अर्धसरकारी, आकृतियों, कौतुक, अदृश्य, क्षतिपूर्ति, प्रसव, निरर्थकता, प्रतिरूप, पितृधर्म, आकर्षण, सन्देशकर्ता, आस्थापूर्ण, प्रतिष्ठापित, विग्रह, निर्वस्त्र, निर्देशक, नेपथ्य, अदृश्य, वर्चस्व, अन्तस, निर्कपाट, कलुष, औषधालय, निश्चेष्ट, मुद्रा, अग्निदाह, सांत्वना, नित्य कर्म, सम्प्रेष्ण, निकृष्ट, सहृदय, भर्त्सना, निशुल्क, संकीर्णता, क्षुद्रता, मृदुल, आह्लाद, भाव-विह्वल, कुकर्म, सुकर्म, करबद्ध, दुर्व्यवहार, हृदयघात, पैतृक, दायित्वबोध, सात्विकता, वृति, धर्मांध, कुतर्क, आविष्कृत, संवेदनशून्य, सक्रियता, संपुष्टि, प्रजातान्त्रिक, उदर, अंतर्देशीय, संभवतः, अनभिज्ञ, प्रतिकूलता इत्यादि |

टेकचंद ने 'दाई' उपन्यास में निम्नलिखित तत्सम शब्दों का प्रयोग किया है | यथा- सर्वमान्य, दिवंगत, स्वनिर्मित, वर्जित, निर्बाध, निर्द्वंद्व, उन्मुक्त, कष्टमय, द्विअर्थी, उन्मत, उद्धमस्त, जिजीविषा, विद्रूपताओं, स्वादिष्ट, नैसर्गिकता, उत्तेजक मुद्रा, हर्षित, निर्विघ्न, निर्लिप्त इत्यादि |

डॉ. सूरज सिंह नेगी के *'रिश्तों की आँच'* उपन्यास में निम्नलिखित तत्सम शब्दों का प्रयोग देख सकते हैं - स्वर्ग, उत्तीर्ण, ग्लानि, दुःख, मंतव्य, अप्रत्याशित, प्रायश्चित, उज्ज्वल, व्यग्र, अंतर्द्वंद्व, सम्बल, उन्नति, सायंकाल, पूर्व, स्वयं, स्फूर्ति, क्षतिपूर्ति, अश्रु धारा, व्यथा, सेवानिवृत्ति, प्रत्युत्तर, ओलावृष्टि, पुनः, सूर्यास्त, स्रोत, मन: स्थिति, वार्तालाप, गंतव्य, उत्सुकता, गोधूलि, रात्रि, गंतव्य, लज्जित, कृतज्ञ, प्रफुल्लित, स्वीकृत, निवृत, ईर्ष्या, नित्य कर्म, भृकुटी, स्वर्णिम, पूर्ण निष्ठा, अत्यंत, प्रज्वलित, जठराग्नि, अप्रत्याशित, पितृत्व, प्रतिरोध, कर्मणा, निर्वहन, इच्छापूर्ति, आश्रित, मर्मस्पर्शी, आत्मग्लानि, निर्जीव, ऊहापोह, आशंकित, ग्रस्त, विह्वल, हतप्रभ, निष्पादन, सुपुर्द, वैमनस्यता, स्पर्धा, कर्कश ध्वनि, हश्र, ग्लानि, कृशकाय, आकस्मिक, आत्मावलोकन, अल्पकालिक, दीर्घकालिक, अव्यवहारिक, कृतज्ञता, चिह्नों, गौरवान्वित, आलिंगन, गोधूलि, वार्तालाप इत्यादि |

डॉ. सूरज सिंह नेगी के *'वसीयत'* उपन्यास में तत्सम शब्दों का प्रयोग – वर्ष, दृष्टिकोण, अप्रत्याशित, आत्मग्लानि इत्यादि | डॉ. सूरज सिंह नेगी के 'नियति चक्र' उपन्यास में तत्सम शब्दों का प्रयोग- स्वच्छ, चिकित्सा, पूर्व, भृकुटि, स्वास्थ्य, चिकित्सक, सूर्योदय, गोधुलि, स्मृतियाँ, चिकित्सालय, इतिश्री, सद्कर्म, अप्रत्याशित, उत्साहित, उर्जायुक्त, ग्रसित, मृतक, हृदय, मस्तिष्क, आत्मग्लानि, शर्मिंदगी, अप्रत्याशित, उत्सुक, श्रद्धा, जिज्ञासावश, औचित्य, अर्धरात्रि, सुपुर्दगी, मुखाग्नि, दृष्टिकोण, अश्रु, आलिंगनबद्ध, अंतर्द्वंद्व, मूर्च्छित, कृतज्ञता, पश्चाताप, प्रेरणा स्रोत, मृग-मरीचिका, आनन्दित, स्मृतिपटल, मन: स्थिति, स्व-केन्द्रित, प्रायश्चित, निशुल्क, सौहार्दपूर्ण, अचेतावस्था, स्पर्श, निरुत्तर, दूर दृष्टा, आश्चर्यचकित, ज्ञापित, कतारबद्ध, तिरस्कृत, कष्टदायक इत्यादि |

कृष्णा अग्निहोत्री जी के कहानी संग्रह *'अपना-अपना अस्तित्व'* में तत्सम शब्दों का प्रयोग - रुदन, प्रातः, शनैः-शनैः, हृदय, सर्प, जाग्रत, अनभिज्ञ, अप्रत्याशित, दृष्टि, प्रतिष्ठा, आश्चर्य, हृष्ट-पुष्ट, पुनः, अन्यत्र, त्याग, कर्तव्य, अस्मिता, पैतृक, प्रतिष्ठित, स्वयं, परिष्कृत, अश्रु विह्वल, स्पंदनपूर्ण, रक्तरंजित, स्तब्ध, लुप्त, मृत्यु, आत्म तुष्टि, आश्रय, निर्विकार, क्षुब्ध, अर्ध विक्षिप्त, एकत्रित, पृष्ठभूमि, प्रथम, अर्द्ध मूर्छित. स्नानगृह, निष्ठा इत्यादि | सूर्यबाला की कहानी 'दादी और रिमोट' में अंतर्ध्यान, हर्ष-विह्वल, श्रोताओं, ज्ञानवर्धन, मुखमंडल, ग्रहण, चमत्कृत, लोमहर्षक, उत्तेजना, इत्यादि तत्सम शब्दों का प्रयोग हुआ है | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में भाषा के क्षेत्र में सर्वथा नवीन प्रयोग किए है | उनकी भाषा में प्रत्येक शब्द के प्रति सतर्कता देखने योग्य है | सभी लेखकों ने भावों की सफल अभिव्यक्ति के लिए तत्सम शब्दों का सार्थक प्रयोग किया है | इन शब्दों के प्रयोग से भाषा के सौन्दर्य और प्रभाव में वृद्धि हुई है |

- **तद्भव शब्द**

"तद्भव' में भी 'तत्' का अर्थ है 'वह' अर्थात् 'संस्कृत' और 'भव' का अर्थ है 'उत्पन्न' | अर्थात् तद्भव वे शब्द हैं जो संस्कृत शब्दों से उत्पन्न हुए हैं |"(तिवारी 155) 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्यकारों ने अपने कथा साहित्य में तद्भव शब्दों का भरपूर प्रयोग किया है |

- **देशज भाषा के शब्द**

देशज शब्द स्थानीय या क्षेत्रीय भाषा के शब्द होते है | भोलानाथ तिवारी अपनी पुस्तक '*भाषा विज्ञान प्रवेश एवं हिंदी भाषा*' में लिखते हैं – "देशज का अर्थ है (देश + ज) जो देश में ही जन्मे हों | वस्तुत: जो शब्द न तो तत्सम हों, न तद्भव और न विदेशी, उन्हें देशज की कोटि में रख दिया जाता है |(तिवारी160) जो शब्द तत्सम, तद्भव और न विदेशी होकर हिंदी बोलने वालों के द्वारा आवश्यकतानुसार नए गढ़ लिए गए हैं | जिनमें कुछ क्षेत्रीय बोलियों के प्रभाव से आ गए है, कुछ अनुकरणात्मक है और कुछ देशी एवं विदेशी भाषाओं से जुड़कर बन गए है | ये शब्द कथासाहित्य के देश काल और वातावरण तथा पात्रों के अनुसार साहित्य में प्रयोग किए जाते है | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में देशज शब्दों का प्रयोग भी साहित्यकारों ने पात्रों के अनुसार किया है | इस संदर्भ में निम्नलिखित सूची देख सकते हैं -

काशीनाथ सिंह के उपन्यास '*रेहन पर रग्घू*' में देशज शब्दों के प्रयोग से गंवाई परिवेश को जीवंत किया गया है | यथा – 'जांता, ओखरा, मसरफ, चरनी, हडौरी, हेंगा, दिसा फराकत, बियाह, केहुनी, बुढ़भस, मजूरी, न्यौता हंकारी, फरूही, बज्जर, भवद्दी, बंसवार, पंचाइत, सौदा-सुलुफ, लतखोर, खूँटा-सूँटा, तार-फार, फोना-फोनी, निखहरी, बरच्छा, लोहा-लक्कड़, लसरियाना, गच्चा-खाना, भौचंक, कछार, केंचुल, ढिबरी, बंसखट, अछोर, डोंगियों, चिहुंक, लहलह, महमह, सड़ांध, मुँहलगी, कुनमुनाई, बंसवार, खंडजा, खपरैलों, कसमसा, हडौरी, खपरैल, चिरौरी, इस्कूल, भोरहरी, दुआर, चरनी, पगुराती, फरसा, परुही, जुआठ, अधिया, पुआल, बुढ़भस, ब्यौंडे इत्यादि | निर्मल वर्मा के '*अंतिम अरण्य*' उपन्यास में निम्नलिखित देशज शब्दों को प्रयोग देख सकते हैं – देहरी, भकुआ, चौकोर, बकसुआ, किरिच-किरिच, खुरपी, फुत्कारती, तिपाई, हकबका, हुड़ककर, लीद, लौंदा, खोड़, चींथता, चुआता, खोह, सकपका, चहबच्चे, फरफरा, आलथी-पालथी, देगची, बुड़बुड़ाती, हठात्, छुर्रे, सर्र, झिरझिरी, सिहरने, चिलमची, बीहड़, घटाटोप इत्यादि | कृष्णा अग्निहोत्री जी ने अपने कहानी संग्रह 'अपना-अपना अस्तित्व' में देशज शब्द - सुखाड़, हक्का-बक्का, सड़ांध, आदि | चित्रा मुद्गल के '*गिलिगडु*' उपन्यास में आंचलिक शब्द- जबरई, खुरचने, उचट, चिमगोइयां, फुरफुरी, हुड़क, सुलग, चौका-बासन, दोहाजू, छिनरा, बौड़म, नंगई, सुघड़ता, देहरी-दुआर, चोटकऊ, चिहुंक, उचाट, मूनगौडे, अटरम-सटरम, अवइए-जवइयों, इत्यादि | हृदयेश के '*चार दरवेश*' उपन्यास में देशज शब्द - खिलन्दड़े, बबुआ-बिबिया, महरिन, बक्सिया, भंडरिया, फूहड़, खौंखियाता, तल्खाई, ड्योढ़ी, बदस्तूर, भड़भड़ाया, आगातागा इत्यादि | टेकचंद ने 'दाई' उपन्यास में निम्नलिखित देशज शब्दों का प्रयोग किया है | यथा – कचरी, सांगर, तोड़, कंठू, काई-डंका, घेर-गितवाड़ (खाली प्लाट जहाँ उपले और ज्लावन जमा होता है), घुग्घू , ततैये, जोहड़ी, बणी (छोटा वन), कड़ (कमर), निफराम होणा (शौचालय जाना), सुसराड़ (ससुराल) इत्यादि | सूर्यबाला की कहानी 'दादी और रिमोट' में देशज शब्द – सहेर, टोंटिया, हकबकाई, भौचक, घुमटा, खुरखुरी, इत्यादि | 21वीं सदी के साहित्यकारों ने जहाँ तत्सम, तद्भव तथा विदेशज शब्दों का बहुलता से प्रयोग किया है वहीं दूसरी ओर साधारण बोलचाल शब्दों का भी अपनी रचनाओं में भरपूर प्रयोग किया है | देशज शब्दों का प्रयोग स्थितियों के अनुरूप हुआ हैं, जिनके प्रयोग से 21वीं सदी का हिंदी कथा साहित्य सहजता, स्वाभाविकता, यथार्थता को ग्रहण करने में सफल बना है |

- **विदेशी भाषा के शब्द -**

जो भाषा स्वदेश में नहीं बोली जाती है उसे विदेशी भाषा कहते है | डॉ. भोलानाथ तिवारी '*हिंदी भाषा*' पुस्तक में लिखते हैं, "'विदेशी शब्द' का मूल अर्थ है 'अन्य देश की भाषा से आए हुए' शब्द | यों किसी भी अन्य भाषा से आए हुए शब्द उस भाषा के लिए प्रायः विदेशी ही होते हैं | किन्तु 'विदेशी' नाम में 'दूसरे देश' का अर्थ है, इसलिए 'विदेशी शब्द' को 'आगत शब्द' या 'गृहीत शब्द' (loan words), अर्थात् वे शब्द जो किसी अन्य भाषा से ग्रहण किए गए हों | (तिवारी 169) वही राधा कृष्ण शर्मा, रामदत शर्मा और अम्बालाल नागोरी) अपनी पुस्तक हिंदी भाषा और साहित्य शिक्षण में लिखते हैं – "भारत से बाहर की अनेक भाषाओँ के शब्द हिंदी में प्रयुक्त हो रहे हैं क्योंकि उस अर्थ में हिंदी में कोई शब्द नहीं है | ऐसे शब्द विदेशी कहलाते हैं |"(शर्मा और नागोरी 83) हिंदी भाषा अपने अंदर विभिन्न भाषाओं के शब्दों को समाहित किए हुए है | जिसमें मुख्य रूप से अंग्रेजी, उर्दू, अरबी, फारसी आदि शब्दों की बहुतायत है | ये शब्द हिंदी भाषा में इस तरह रच-बस गए हैं कि उन्हें अलग करना मुश्किल है | वर्तमान में ये शब्द हमारी भाषा व संस्कृति के अभिन्न अंग बन गए है | साहित्यकार अपने साहित्य में देशकाल वातावरण व पात्रों के अनुसार विदेशी भाषा के शब्दों का प्रयोग करते हैं | 21वीं सदी के हिंदी कथाकारों ने भी विदेशी भाषाओं के शब्दों का भरपूर प्रयोग किया है |

अरबी, फारसी व उर्दू के शब्द -

अरबी-फारसी, उर्दू व हिंदी शब्दों का संबंध बहुत पुराना है | अरबी-फारसी के अनेक शब्द हिंदी भाषा के साथ घुल-मिल गये है | भाषा में व्यवहारिकता, सहजता और स्वाभाविकता प्रदान करने के लिए अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयोग किया जाता है | 21वीं सदी के हिंदी साहित्यकारों ने इन शब्दों का प्रयोग काफी सुगमता से किया है | निम्नलिखित शब्दों को देखा जा सकता हैं -

ममता कालिया के 'दौड़' उपन्यास की भाषा में विविध भाषाओं के शब्दों का सुंदर कलात्मक ढंग से चित्रण इस किया गया है | '*दौड़*' उपन्यास में अरबी/ फारसी के शब्दों का भी सुंदर प्रयोग किया है | यथा- मुखातिब, तारीख, मेहमान, इत्तिफाक, फजीहत, हिकारत, जायजा, इंतजाम, आखिरी, बेहद, गुंजाइश, हर्ज, फिजूलखर्ची, गैरहाजिरी, वाकई, तनख्वाह,हरगिज, सौदागर, कायदे, अजनबी, अनजान, तनख्वाह, मासूमियत, गैर-मौजूदगी, दफ्तर, छोटा, तलाश, मुखातिब हजरत, शिकायत, गुलजार, दिलचस्पी हैसियत, शहजादों, जुम्बिश, हर्ज, गैरहाजिरी, तरतीब, मोहलत, बखूबी, तहमद, तनख्वाह, लानतें, नाजुक मिजाज, फिजूल, फिक्रमंद, फिकरत, फ्यूनरल, इंतजाम, मुमकिन, फर्ज.... आदि । संक्षेप में कहा जा सकता है कि 'दौड़' उपन्यास में भाषा शैली निर्माण में लेखिका ने अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है | उपन्यास की भाषा पात्र, स्थान एवं वातावरण के अनुसार सजीव-सी जान पड़ती है |

कृष्णा सोबती के '*समय सरगम*' उपन्यास में अरबी फारसी शब्दों का प्रयोग यत्र-तत्र हुआ है | यथा-इत्मिनान, बेखबर, इत्तफाक, बेखबर, एतराज, निगाहों, बेमौसम, परहेज, फिक्र, फायदा, मुकर्रर, लिफाफे, वसीयत, साहिब, तख्तपोश, तन्ख्वाही, मुसाफिरी, हमदर्दी, जेबकतरे, मुताबिक, तारीख, किफायतशार, इबारत, खामोश, गैरहाजिर, दहलीज, गुनाह, पुख्ता, तआज्जुब, मिन्नत, तश्तरी, पुर्जे, मुहैया, बदौलत, अख्तियार, सेहत, परहेज, वक्त, गैराज, दरवाजा, मेहमान, दस्तखत, बेखबर, ऐतबार, परहेज, सहूलियत, खुफिया, बिरादरी, बेइज्जती, बकवास, इबारत, नालायक, दलीलबाजी, दलाल, मुसाफिरखाने, इत्मीनान, इत्यादि |

चित्रा मुद्गल के *'गिलिगडु'* उपन्यास में सहजता और स्वाभाविकता लाने के लिए लेखिका ने पात्रों के अनुकूल उर्दू- फारसी शब्दों का प्रयोग किया है- अख्तियार, नदारद, फारिग, कमबख्त, दफे, बरदाश्त, दर्ज, हर्ज, महबूब, दरकार, अजनबी, अंदरूनी, आश्वस्त, लिहाज, तर्क, दुरुस्त, नादानी, इजाजत, चौखट, दाखिल, हर्गिज, बाकायदा, रवैया, वाजिब, मोहताज, दरअसल, मालूम, जोखिम-भरा, नक्शेबाज, शिकंजा, सख्ती, मामूली, पैरवी, औलादें, सदुपयोग, जरूरतमंद, बख्श, अक्ल, उम्दा, हाजिर, गैरेज, बेशऊर, फौरन, हाजिरजवाबी, गैरमौजूदगी, राजी-खुशी, गोदरेज, लापरवाह, फरमाइश, हाजमे, दरकिनार, वगैरह, सहूलियत, तब्दील, खैर-खबर, मुताबिक, हरामखोर, तसल्ली, पड़ोसन, इज्जत, रवैया, हरकत, तोहमत, तकलीफ, दरअसल, मफलर, लापरवाही, हाजमा, नियमित, जुल्म, जल्लाद, इर्द-गिर्द, एहसानमंद, बेसहारों, तख्ती, बेमतलब, कमीने, जमीन-जायदाद, कचहरी, फिजूलखर्ची, आइंदा, गर्क, बहबूदी, बदबू, कचराघर, मुताबिक, तबादला, मोहल्लों, हरगिज, दिलचस्पी, सख्त इत्यादि |

निर्मल वर्मा के *'अंतिम अरण्य'* उपन्यास में निम्नलिखित उर्दू तथा अरबी/फारसी के शब्दों को प्रयोग देख सकते हैं – दफ़नाया, अजीब, तकाजा, मेहमान, मफ़लर, इंतजार, रोज, दराज, अजीब, अफसरी, मुफ़स्सिल, दर्ज, फजीते, मुसाफ़िर, अफ़वाहों, शख्स, अखबार, ख्याल, लिफ़ाफ़ा, आख़िरी, ताबूत, कब्र, मुलाकात, जिक्र, वक्त, दरवाज़ा, काफ़िला, तकलीफ़, दस्तख़त, इम्तिहान, फ़िलासफ़ी, ओहदे, तब्दीली, मुद्दत, निगाह, फ़िलहाल, मुकम्मिल, इत्यादि | निर्मल वर्मा की भाषा में उर्दू, अरबी-फारसी के शिष्ट प्रचलित शब्दों का समावेश है | इन शब्दों के पीछे समाज के वर्गों की उच्च स्तरीयता का भी बोध है |

कृष्णा सोबती के उपन्यास *'समय सरगम'* में उर्दू, अरबी फारसी के कुछ शब्दों का प्रयोग हुआ है | यथा- मकबरा, गुंबद, इत्मीनान, मिजाज, परहेज, इन्तजार, मुस्तैदी, मुकाबला, लिफाफा, गुसलखाना, हफ्ता, इंसान, ख़ामोशी, तराजू, लापरवाही, पैदल, बेहिसाब, दाखिल, शायद, दुरुस्त, पुराना, वक्त, रफ्तार, कदम, नजर इत्यादि |

काशीनाथ सिंह के उपन्यास *'रेहन पर रग्घू'* में उर्दू, अरबी/फारसी के शब्दों का प्रयोग – कमबख्त, नुस्खे, ईजाद, अफसोस, बदहवास, आज़िज, कचहरी, मुकदमा, आखिरकार, इंतजार, कायदे, जाहिर, जहन्नुम, बरामदा, इम्तिहान, जलालत, हवालात, अखबार, जलील, गैरहाजिर, ईमानदारी, अफसर, खुशमिजाज, मुश्तकिल, गैरहाजिरी, वाजिब, इतमीनान, बदनामी, पैमाइश, एहतियात, चश्मदीद, कमबख्त इत्यादि |

हृदयेश ने *'चार दरवेश'* उपन्यास में निम्नलिखित उर्दू, अरबी, फारसी शब्दों का प्रयोग किया है | यथा - दफ़्तर, क़ायम, कीमती, क़िस्त, बाजार, सहूलियतें, जुर्म, निहायत, फरमाया, नफ़रत, शख्स, आदाब, मुल्क, रियासत, जहरखुरानी, आमदनी, जनाना, सिफ़ारिश, अफ़सर, रसूख, तवज्जोह, मर्ज, अजीज, सौगात, फौरी, इलाज, रिहायश, गुसलखाना, पतलून, तल्ख़, तकलीफ़, सौदा, ताज्जुब, ज़िद, बगैर, इत्मीनान, ज़ेहन, जाहिर, इत्मीनान, ज़रा, गुंजाइश, फ़ासले, दरयाफ़त, तारीख, मुलजिम, हाज़िर, ज़मानत, गैरहाजिर, जामिनान, हक़, ख़िलाफ़, ख़ुदा-न-ख़ास्ता, मुवक्किल, मुख़ाति, हिदायतनामा, ब्लैकमेल, कारस्तानी, मिज़ाज, कागज़ात, ताफैसला, हैसियतदार, इज्जतदार, जमानतनामा, पेशियों, तख़्त, इत्तला, तफतीश, मजहब, अल्लाताला, इत्मीनान, अफवाहें, फ़ारिग, ख़ुशामद, इमामबाड़े, रजामंदी, निगाह, जमाखोर, अखबार, दस्तख़त, रजामंदी, औरत, लिफ़ाफ़ा, बहैसियत, बेमतलब, दरख्त,

बदपरहेजी, जेवरात, इज्जत, तकलीफ, फ़रमान, बेगैरत, शौक, दरखास्त, बेफ़िक्र हरकतें, बदचलन, मुहर्रम, हुकूमत, बहानेबाजी, इजहार, आजमाइए, पाजामा, पतलून, जाहिरा, नौजवान, वालिद, इंतकाल, मुकम्मल, अल्लाह, फरियादी, फजीहत, बरदाशत, बेशर्म, हरकतों, वल्दियत, सकूनत, इत्तला, बदमजगी, तशरीफ़, साजिशाना, जालसाजी, याददाशत इत्यादि |

टेकचंद के 'दाई' उपन्यास में उर्दू, फारसी के शब्द - वक्त, ज़हन, ताज़ा, वगैरह, बेरोजगार, औलाद, गुंजाइश, अनदेखी, अनजानी, शख्सियत, तस्दीक, तजुर्बेकार, दकियानूसी, दरियादिल, बिरादरी, दर्दनाक, बेकायदा, बेतरतीब इत्यादि |

डॉ. सूरज सिंह नेगी के *'रिश्तों की आँच'* उपन्यास में उर्दू/अरबी/फारसी शब्दों का प्रयोग- ख़ानदान, मुख़ातिब, अफ़सोस, खैर, वाकिफ़, आख़िर, आज़मा, बयाँ, क़ाबिल, कर्ज, पुश्तैनी जमीन, इलज़ाम, इंतज़ाम, ख़यालात, ख़यालों, आग़ोश, इजाज़त, दफ़्तर, ज़ेहन, नुमाइंदों, बगैर, खामियाजा, दरकिनार, ख़बरदार, फरियाद, फ़र्क, अदब, इज्ज़त, नज़र, तनख्वाह, फुर्सत, वाकिफ़, अंदाजा, ख़यालात, नुमाइंदा, रौब जाहिर, मशगूल इत्यादि | डॉ. सूरज सिंह नेगी के 'नियति चक्र' उपन्यास में उर्दू, फारसी के शब्दों का प्रयोग- जज्बा, इंसानियत, लापरवाही, लाइलाज, आखिर, खैर, अफसोस, होनहार, अनाथालय, तव्ज्जोह, इत्मिनान, हररोज, जज्बाती, इत्तिफाक इत्यादि |

कृष्णा अग्निहोत्री के कहानी संग्रह *'अपना-अपना अस्तित्व'* में अरबी-फारसी भाषा के शब्द - सौदेबाजी, ज़रा, वफादार, बेलगाम, नाश्ता, नब्ज़, राहत, दुनियादारी, ख्याल, खूबसूरत, अफलातून, दरकिनार,बेहद, मुखातिब, बेसुरे, फ़ाइल, रुसवा, सुकून, औरतों, गलियारों, वक्त, अगवा, बेसमय, नज़रअंदाज, दुमंजिले, बेचारा, कब्ज़ा, दुलार, मेलजोल, बेतरतीब, महरूम, गरिमा, बदमिजाज, खरीद-फ़रोख्त, ईमानदारी, इस्तीफा इत्यादि | सूर्यबाला की चर्चित कहानी *'दादी और रिमोट'* में अरबी-फारसी भाषा के शब्द- हिदायत, आलीसान, मकान, बंदोबस्त, तरकीबें, इंतजाम, निगरानी, गैरहाजिरी, अलबता, इंसान, बेजान, बेकसूर, जान, जहमत, वक्त-बेवक्त, आजिज, फजीहत, खौफनाक, दहशत, अजनबी, इत्यादि शब्दों का प्रयोग देख सकते हैं | भाषा को व्यवहारिकता और सहजता प्रदान करने के लिए लेखकों द्वारा उर्दू, अरबी फारसी के शब्दों का प्रयोग किया गया है | 21वीं सदी के हिंदी साहित्यकारों ने उर्दू अरबी/फारसी के शब्दों का सही, सटीक व संतुलित प्रयोग किया है | इनमें ज्यादातर वही शब्द है जो बोलचाल का हिस्सा बन गए है | मुश्किल शब्दों को थोपने की प्रवृत्ति नहीं दिखाई देती हैं |

अंग्रेजी भाषा के शब्द –

अंग्रेजों के शासन काल के दौरान अंग्रेजी काम-काज और कोर्ट-कचहरी की भाषा थी | शिक्षा के लिए भी अंग्रेजी अनिवार्य कर दी गई थी | अंग्रेजी शासन के समाप्त होने तथा देश के आजादी के बाद भी अंग्रेजी भाषा और शब्द हिंदी भाषा को बराबर रूप से प्रभावित करती रही | धीरे-धीरे अंग्रेजी भाषा के शब्द हिंदी में समाहित होते चले गए | आज हिंदी भाषा में अंग्रेजी भाषा के कई शब्द प्रचलन में आ गए हैं | अवधेश मोहन गुप्त जी लिखते हैं –

> "अंग्रेजी लम्बे समय तक हमारे निकट रही है तथा सभी भारतीय भाषाओं में तीन-तीन, चार-चार हजार अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग हो रहा हो रहा है | अंत में जो अंग्रेजी शब्द हमारी भाषाओं में चल रहे हैं, उन्हें चलने दिया जाए | कुछ नए शब्द भी आवश्यक होने पर अनुकूलित करके लिए जा सकते हैं उन्हें सभी दृष्टियों से उपयुक्त होना चाहिए |"(गुप्त 97)

21वीं शताब्दी के हिंदी साहित्यकारों ने अपने कथा साहित्य में अंग्रेजी भाषा के शब्दों का खूब प्रयोग किया है | अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग निम्नलिखित प्रकार से देख सकते हैं - ममता कालिया के *'दौड़'* उपन्यास में अंग्रेजी भाषा के शब्दों की भरमार हैं | इस उपन्यास में भाषा की दृष्टि से सरलता, सहजता, अनेक भाषी शब्द के साथ पात्रों के अनुकूल सब तत्व मौजूद है, जो प्रसंग के अनुसार पात्रों की चरित्र की विशेषताओं को बड़ी सरलता से हमारे सामने स्पष्ट हो सकती है | इसी भाषा के कारण लेखिका अपने उपन्यास के उद्देश्य को पाठक तक पहुँचाने का सफल प्रयास किया है | इस उपन्यास के अधिकतर पात्र पढ़े-लिखे तथा शहरी परिवेश के है जिसके कारण अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग स्वाभाविक हो जाता है | यथा- ऑफिस, ट्यूब लाइट, केबिन, कम्प्यूटर, फोन, इंटरकाम माउस, प्लास्टिक, हार्ट प्लेट, टाइम जेरॉक्स, टेबिल, यू नो, कांट्रेक्ट, जम्पस, पेंट, आउट, इंटरव्यू, एरिया, मैनेजर, कंपनी, सप्लाई, पब्लिक, सेक्टर, ट्रांसफार्मर, चैप्टर, सर्विस, किलोमीटर, मार्केटिंग, यूनिट, ग्रेड, कूपन, मेनू कार्ड, चिकन, डिश, काउंटर, जैनिज्म, एप्रिशिएट, कॉमन, होस्टल, स्टेशन, ट्रैफिक,कॉमन, क्लायंट, थ्री व्हीलर, टू.. हंड्रेड, जॉब बूट, बाई गॉड, जॉब, स्टार्ट, बैनर, पॉलिश, प्रोडक्ट, इंटरजेण्ट, शूज, हेड, डीलर,काउंटर सेल, हालीडे प्रोग्राम, रेस्तरां, फैक्स, स्टोर, सन शाईन, गिफ्ट, ऑफर, रैक, डीलर्स, टारगेट, स्कूलों, डिनर, टाइम, सिविल, वॉकमैन, लाइंस, रोड, एयरकंडीशंड, पास्चराइज्ड, डॉलर, जिन्स, टैफिक, रिपोट, टैम्पो, जनरेटर, हर्बल, माई फुट, आई ड्रोप, टाउन, आक्सफोर्ड, रोमांटिक, डिलीवरी, यूनिफार्म, फ्लैट, टॉयलेट, इंडस्ट्री, शेयर, स्टियरिंग, कंट्रोल्स, कैपिटेशन, डिग्री, हेड, होर्डिंग, बैनर, रिपोर्ट, स्टोरेज, इंडिया, लीवर, टूथपेस्ट, डिवीजन, आइटम, स्नैक, स्क्रीन, ट्राईसाइकिल, नो मोर, डिसक्शन, म्यूजिक सिस्टम, ऐनाग्राम फाइनेंस कंपनी, सुपर स्क्रीन, स्नैक, पैकेट, पेप्सी, शर्ट, आयरन, लाइंस, मीटर, पब्लिक सेक्टर, एयरगन, ट्रेन, इलेक्ट्रोनिक, गार्डन, मार्केट, जनरल, स्पेशल, सर्विस, कलीग्स, सेंटिमेंट, इनकम, डबल, नो, किड्स, रिटेल मार्केट, ब्रांच, ऑफिस, फुलटाइम, कनेक्शन, टेलीफोन, मिनरल, पार्किंग, डेंटिस्ट, क्रिसेंट, कॉपरेशन, विजुलाइजर, मॉडल, डॉयलाग, पार्लर, मूड, एड, ट्यूब, जीरो, कापीराइटर, कोल्ड कॉफी, सीरियसली, क्लीन डिटर्जेंट, कन्फ्यूजन, चैप्टर, पार्टनर, सप्लाई, आर्डर, कांफ्रेंस, हार्डवेयर, वर्ल्ड, ज्वाइन, सीनियर सिटिजन कॉलोनी, कैरियर, प्रोड्यूसर्स, कंज्यूमर्स, टूरिस्ट, ग्रीटिंग कार्ड, स्कूल, एक्वागार्ड, मेडिटेड, गैस, कन्फ्यूज, प्लेस, मीटिंग, प्रेसिडेंसी, फर्म, लेबर कोर्ट, चिली, हेलो, बिजनेस पार्टनर, लाइफ, रूम, स्लीपिंग, डार्लिंग, मिसेज, सॉरी, गुड मॉर्निंग, टोस्ट, कोड डायल, वॉल हेंगिंग, जीनियस, सिली, एस्टीम, कैरियरिस्ट, सिविल मैरिज, डील, कैलोरी, विज़र्ड, डिस्टर्ब, सेटेलाइट, इंटरनेट, प्रोफेशनल एथिक्स, जेनरेशन गैप, मिनरल वाटर, टैक्नीशियन, मैकेनिक, स्पेलिंग, टिकट, मैनेज, बिजनेस, फ्रेक्चर, स्टार्ट, वैक्यूम क्लीनर, फूड प्रोसेसर, माइक्रोवेव ओवन, डिस्कस, रिसोर्ट, यूजफुल, वेस्ट, एयरकंडीशंड, फ्युरनल, इन्फोटेक इत्यादि | ये सभी अंग्रेजी शब्द पात्रों की भाषा में घुल मिल गए हैं |

'दौड़' उपन्यास में अंग्रेजी शब्द के अलावा अंग्रेजी वाक्यों का भी प्रयोग देखने को मिलता है। जैसे – "मेडिटेशन प्रिपेर्स यू फॉर योर मंडेज"(कालिया 30) "आई केन सैल ए डैड रैट""(कालिया 37) "नथिंग इज ऑन पेपर"(कालिया 48), "बाय सी यू इन द ईवनिंग

मैम, टेक केयर"(कालिया 55), "आई गॉट इट"(कालिया 56), "वी आर मेड फॉर इच अदर"(कालिया 57) वाट ही मीन्स इज"(कालिया 18), "नौ मोर डिसकशन"(कालिया 28), "यू हैव रीच्ड द वॉयस मेल बॉक्स ऑफ नम्बर- 9844014988" (कालिया 69) "लेट्स होप फॉर द बैस्ट |"(कालिया 73)

कृष्णा सोबती के *'समय सरगम'* उपन्यास में महानगरीय परिवेश का आलेखन हुआ है | अंत: इसमें अंग्रेजी शब्दों का भरपूर प्रयोग हुआ है | यथा- ग्रिल, ऑकसीजन, टॉयलेट, ट्रैफिक, पार्क, मेडिकल, टी बैग, प्रोग्राम, एयरपोर्ट, ट्रैक, फाइल स्टीम, टीचर, क्लास फादर, एल्बम, किचन, बॉक्स, कटिंग्स, लिफ्ट, फ्लैट, अपार्टमेंट, कैलेण्डर, शू कंपनी, एंटीबायटीक, लॉन, मेडिकल इंश्योरेंस, प्लेट, हैलो, विटामिन, ट्रैफिक, शू, टाइल्स, फ्लॉकस, पेट्रोल, मेडिकल इंश्योरेंस, लॉन, एंटीबायटिक्स, ड्रॉप, केमिस्ट, लाइट ऑन, अपार्टमेंट, टी बैग्स, ट्रे, टेबल, डैनिम, कॉलबैल, कटिंग्स, स्टाम्प, एलबम, डायरी, बॉक्स, कैमरा, यूनिफार्म, राइटिंग, प्रेशर, शेल्फ, रोड होस्टल, इंडिया, स्टेडियम, इंटरव्यू, फादर, काउंसलर, बाई-बाई, लाइफ-डिवाइन, कॉटेज, लैंडस्केप, कोलेस्ट्रोल, हेलिकॉप्टर, प्रोग्राम, कार्ड, शेल्फ, अनाउंसमेंट, फलाइट न., गेट न., चेक इन सिक्योरिटी, एयरपोर्ट, लैंड, हवाई कंसेशन, फार्म, गाइड, एयर होस्टेस, काम्पेक्ट, डिग्री सेल्सियस, क्यू, पैसेज, स्टैण्डर्ड, फ्राइड-फिश, ड्राइवर, क्लीनर, प्री-पेड़, ब्रेक, आइडेंटिटी, स्टार्ट, पुलिस स्टेशन, लाइसेंस, फ्लाइंग, स्क्वैड, बैल, गेस्टरूम, पॉकेटमार, लैटर-बॉक्स, स्विच-ऑन, फ्रिज, ब्लॉक, लिफ्ट, ऑटोमेटिक, डुप्लीकेट, लीवर, नर्सिंग होम, फिजियोथैरेपी, व्हील चेयर, कूरियर, हाइड्रोजन, कार्बन, नाइट्रोजन, ईसबगोल, रेलिंग, स्विच ऑन, ड्राइव, परफ्यूम, यूनिट ट्रस्ट, डिवीडेंड, इन्वेस्ट, गैलरी, पिकनिक, लायब्रेरी, स्लेट, पेन्सिल, केक, वाश-बेसिन, किचन, केटल, पोस्टिंग, लॉकर, अकाउंटेंट, मार्कीट, फार्महाउस, बिल्डर, एनेक्सी, बिल्डर, फोटोस्टेट कॉपी, इंजीनियर, कैमिस्ट, पाइनएप्पल, ब्लॉक, ओल्ड-एज होम, इन्वेस्ट, हॉट, मैट्स, मैडिकल टेस्ट, डिटेक्टिव, लैटर-हेड, ब्रिज, ड्यूटी, फैक्टरी, किलोमीटर, होमवर्क, एजेंट, कंपनी, एडवांस, सिक्योरिटी, बेसमेंट, अटैचमेंट बाथरूम, एंटरी, लीज, रिज़र्व, कार्पेट, स्टडी, कैलेंडर, टेलीफोन, पेइंग-गैस्ट, इलेक्ट्रोनिक एक्सचेंज, सोसाइटी मीटिंग, मेंटिनेंस, गैस्टरूम, गुडनाइट, फार्महाउस, बैंक-बैलेंस, पासपोर्ट, पब्लिक रीलेशन, बियर, मीनू कार्ड, विटामिन, लंच आर्डर, अपार्टमेंट, ऑपरेशन, सर्जन, डिस्क, कॉलोनी, टॉयलेट, फ्लैट, कंपनी, इंश्योरेंस, एडवांस, एजेंट, लीज, रिजर्व, ट्रांसफर, सिक्योरिटी, बेसमेंट, अटैच, बाथरूम, एंटरी, विंग, कमांडर, इलेक्ट्रोनिक, एक्सचेंज, स्विच ऑफ, लिफ्ट, ब्लॉक, शार्टकट, अपार्टमेंट, स्टीम, मेंटिनेंस, सोसायटी मीटिंग, फोक्स, कैमिस्ट, लांच, टाइप, राइटिंग इत्यादि | कृष्णा सोबती की भाषा में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग उपन्यास के देशकाल और वातावरण से पूरी तरह सम्बद्ध है | 'समय-सरगम' में अंग्रजी शब्दों के सहजपन को देखा जा सकता है | इसमें आधुनिक मध्यवर्गीय दो नागरिकों ईशान तथा आरण्या की वृद्धवस्था की कहानी है | इस उपन्यास में अंग्रेजी भाषा के प्रयोग से सहजता का समावेश हुआ है |

चित्रा मुद्गल के उपन्यास *'गिलिगडु'* में अंग्रेजी भाषा का प्रयोग प्रचुर मात्र में हुआ है | यथा- बाय दि वे-हमें विष्णु नारायण स्वामी कहते हैं |"(मुद्गल 14) "गुडमार्निंग सर" (मुद्गल 18) "मैं ले आया, दैट्स ऑल"(मुद्गल 18) "सेवन वंडर्स में जो मिस्र के पिरामिड है न |"(मुद्गल 48) "नेट पर पता करता हूँ |"(मुद्गल 48) "नेवर माइंड"(मुद्गल 49) "टेल मी"(मुद्गल 49) "व्हाट्स रांग ?...लेट्स सिट |"(मुद्गल 61) "यू आर लक्की कर्नल" (मुद्गल 73) "ई-मेल नंबर उन्हें भेज सकते हैं ?"(मुद्गल 77) "सवाल...एडजस्टमेंट का है"

(मुद्गल 80) "रिवरसाइड व्यू" (मुद्गल 103) "अपने बेडरूम की ओर"(मुद्गल 119) "अपार्टमेंट से लगे गार्डन में"(मुद्गल 123) "ट्रेवल एजेंट"(मुद्गल 143) इत्यादि | शिक्षित और शहर में रहने वाले पात्रों के लिए हिंदी और बोलचाल की भाषा के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा के शब्दों को भी मुद्गल जी ने स्थान दिया है | अंग्रेजी शब्द - अलार्म, म्यूजिक चैनल, मार्केट, गेट, रिटायर्ड, सिविल, इंजीनियर, जॉगिंग, यूनाइटेड, अपार्टमेंट, प्रेशर, गुडमार्निंग, सर, सैंडिलें, पालीथिन, शो रूम, टिफिन बॉक्स, स्टार, डाइनिंग टेबिल, मैम, फ्लैट, अपार्टमेंट, किलोमीटर, मिलीमीटर, ब्लैकमेल, चिकन बर्गर, फ्रेंच फ्राइ, बर्गर, आइसक्रीम, पार्टी, सोसाइटी, पार्टी, बोरिंग, ड्राइवर, ब्लॉक्स, मेकनिक्स, पजल्स, कॉलोनी, पॉकेट, बस स्टेंड, न्यूडल, करियर, चीफ, इलेक्ट्रिकल, टेलीफोन, प्रिस्क्रिप्शन, कार्ड, क्विज, फिल्टर, कंप्यूटर, साइलेंट अटैक, शुगर, ऑपरेशन, ट्यूशन, पोस्टमार्टम, ब्लैक स्लाइडिंग, कॉमन टॉयलेट, कमोड, टू-टियर, बिल्डिंग, कूलर, पार्किंग चार्ज, रिपोर्टिंग, बैक रेस, सीडी, हेडलाइन, स्टार, बॉडी, मीटिंग, रेडलाइट एरिया, ट्यूब, मिस्टर, लिफ्ट, पार्क, लॉफिंग, क्लब, कोर्टमार्शल, पॉकेट, टेपरेकार्डर, यूनिफार्म, कैलेंडर, ऑक्सीजन, सेक्टर, आर्मी, ऑफिसर, ब्लडी, ड्रिंक, डिनर, बेसमेंट, होमवर्क, वाशिंग, मशीन, होमवर्क, आर्डर, रेजीमेंट्स, लिपस्टिक, निर्निमेष, ऐडजस्टमेंट, पोस्टऑफिस, बिस्किट्स, फर्नीचर, लॉकर, सरेंडर, हाउस टैक्स, कस्टडी, रिसीवर, थर्ड डिग्री, प्लास्टर, बाईपास सर्जरी, प्लास्टर, थर्मस, बाथरूम, थर्मामीटर, फ्लू, कोलेस्ट्रोल, यूरिया, केमिस्ट, लैब, पौकेट, मनीऑर्डर, ट्रैफिक, डिस्प्रिन, ड्राप्स, एलथ्रोनिस, बेडरूम, स्ट्रेचर, गार्डन, थ्री व्हीलर, एयरइमरजंसी, पोर्ट, सीवियर अटैक, इत्यादि |

निर्मल वर्मा एक भारतीय होने के साथ-साथ विदेशी धरती के साथ भी उनका गहरा नाता रहा है | वे कई सालों तक विदेश में रहे थे | ऐसे में उनके साहित्य में अंग्रेजी शब्दों का बहुतायत प्रयोग होना स्वाभाविक है | यह उनके प्रवासी जीवन का परिणाम है, तो कहीं परिवेश व पात्रों के चित्रण के लिए आवशयक हो जाता है | '*अंतिम अरण्य*' उपन्यास में निम्नलिखित अंग्रेजी शब्दों को प्रयोग देख सकते हैं –एक्स-रे, इल्यूजन, नार्मल, काटेज, गवर्नेस, ट्रेनिंग, ट्रेनर, लैम्प-पोस्ट, कोनवेंट, डिस्पेंसरी, पोस्ट-आफिस, फिलोसफी, मिस्टीरियस, युनिवर्स, यूनिवर्सिटी, एस्ट्रोनोमर, मिस्त्री इत्यादि | फ्रेम, कॉटेज, टार्च, फोटो अलबम, लैंडस्केप, बल्ब फ्यूज, नोट्स, क्वार्टर, शैड, किचन, टॉयलेट, थिएटर, फाउन्टेन, सिग्नल, पेंसिल, वर्ल्ड एटलस, पब्लिशर्स, ट्रेन, सर्किट हाउस, डायरी, रेफरेंस, फाइल, टेलीग्राम, बैडमिन्टन, स्टेशन, स्टेट्समैन, रिटायर्ड, बोर्डिंग, लाजिंग, ब्रांच लाइन, सीट, वीक-एंड, सिमिट्री, शटल-कॉक, कोर्ट, गेम, ब्लैक फ़ॉरेस्ट, गवर्नेस, ब्राउन, सरप्राइज, कंटोनमेंट, बायोग्राफ़ी, डिक्टेट, पब्लिश, ट्रे, टेम्प्रेचर, डिग्री, पोस्टमैन, प्लेट, फ़ायर-प्लेस, पैकेट, टूरिस्ट, सेलीब्रेट, ऑपरेशन, सिगरेट ऐश-ट्रे, क्लब, लायब्रेरी, नावेल, पाइप, लाइटर, इंजीनियरिंग, रुटीन, फेयरी टेल, स्टोरीज, शार्ट कट, स्टैम्प, सेकेंड हैंड बुकसेलर, इमर्जेंसी,बस-स्टेशन, कैंटीन, लंच, रजिस्टर, डॉक्टर, चेक-अप, अटेंशन, रीडिंग रूम, टेबल, क्लीनिक, बिल, पाइन ग्रोव, पिकनिक, ईजी चेयर, कलेक्टर, पोस्टिंग, पोटेंट, मिक्सचर, ट्यूमर, फिज़िकल, माइग्रेन, बाथरूम, नर्सिंग, होम, गार्डन, आउट हाउस, फ़ादर, गेस्ट हाउस, जस्टीफिकेशन, सुपरवाइज़री, एबसेंटी लैंडलॉर्ड, प्रैक्टिस, लॉग केबिन, बेसमेंट, वेटिंग रूम, स्विच, प्रेसिक्रप्शन, ऐक्टर स्टेज, नार्मल, इल्यूजन, वार्डरोब, अंडरवियर, पैटर्न, वैलिड, स्पिरिट, स्कार्फ़, ट्रेनर, थर्मामीटर, ड्यूटी, गर्ल-गाइडों, सब-टाइटल्स, सीरियस, सब्जेक्ट, फ़ाइनल, साइज़, इलेक्ट्रेटेड, रॉयल, मैजिस्ट्रेट, जजमेंट, स्विमिंग पूल, पोर्ट्रेट, राउंड, डिप्रेशन, क्लिनिक, स्टिल लाइफ़, ब्लैकमेल, स्लाइड्स, प्राइवेट, मेंबर, आर्मी, कम्युनिटी सेंटर, डिस्पेंसरी,

प्राइमरी स्कूल, रोल, स्टेनोग्राफर, ग्रेट, मैमरी, डीलक्स बस, रेस्ट हाउस, न्यूट्रल, कंफेंस, मोनोलॉग, थेंक्स, बस-स्टेंड, मोटर रोड़, सिग्नल, स्ट्रोक, ब्लड-प्रेशर, फाइनल कॉपी, रेड़ियो, बिलियर्ड टेबल, पार्टीशन, बैकग्राउंड, टी-शर्ट, आइस-बॉक्स, टिशु पेपर, टेलिस्कोप, इडियट, रिज़र्व, एडवेंचर, ड्राइंगरूम, हैंडिल, इत्यादि | उपन्यास के पात्र सहजता से इन शब्दों का प्रयोग करते है | '*अंतिम अरण्य*' उपन्यास में देशी-विदेशी अभिजात संस्कार संपन्न उच्च मध्यमवर्गीय पात्रों का चित्रण हुआ है | अंत: उपन्यास में अंग्रेजी शब्दावली का प्रयोग अंग्रेजियत संस्कार वाले पात्रों के चित्रण करने के लिए किया गया है |

निर्मल वर्मा '*अंतिम अरण्य*' उपन्यास में न केवल शब्द अपितु पूरे के पूरे वाक्य भी अंग्रेजी के हैं | '*अंतिम अरण्य*' उपन्यास में निम्नलिखित अंग्रेजी वाक्यों-संवादों का प्रयोग भी देख सकते हैं | इसके कतिपय दृष्टांत यहाँ प्रस्तुत हैं – "प्लीज डोंट डिस्टर्ब !"(वर्मा 9), "कम वन | कम ऑल |"(वर्मा 9) "क्राइसिस ऑफ़ मिडल एज"(वर्मा 20), प्लीज कम दिस इवनिंग | ए सरप्राइज इज वेटिंग फॉर यू |"(वर्मा 23), नाईट इज स्टिल यंग !"(वर्मा 33), कन्फेसन ऑफ़ ए कंट्री प्रिस्ट"(वर्मा 50) रूल्ज एंड रेगुलेशन,(वर्मा 73), "प्लीज बिअर विद अस"(वर्मा 73), "नो बाबा, आई लेफ़्ट देम बैक होम"(वर्मा 81), "लीव मी एलोन, प्लीज, प्लीज, प्लीज..|"(वर्मा 129), "वैली ऑफ़ डैड लेटर्स |"(वर्मा 152) | अंग्रेजी शब्द व वाक्य के साथ कहीं-कहीं तो लिपि भी अंग्रेजी है | वर्मा जी के उपन्यास में अंग्रेजी भाषा व लिपि के उद्धरणों को भी देखा जा सकता है –

> "Space doesn't live in pure time, where we are now. But the objects of space…Trees, house, weather, sky even the colour of earth… do have time, because they are supported by memory, which is temporal fact…" (वर्मा 15)

निर्मल वर्मा जी की अपनी विशिष्ट भाषा है | प्रवासी जीवन एवं अंग्रेजी भाषा पर अधिकार होने के कारण उनकी भाषा पर अंग्रेजी भाषा व शब्दों का प्रभाव है |

काशीनाथ सिंह के '*रेहन पर रग्घू*' उपन्यास में अंग्रेजी भाषा के शब्दों का यथास्थान स्वाभाविक प्रयोग करके काशीनाथ सिंह ने ग्रामीण जीवन में होने वाले बदलाव की ओर भी संकेत किया है – ट्राली, कल्टिवेटर, हार्वेस्टर, थ्रेशर, ज्वाइन, प्रोफेशनल, डुप्लीकेट, वालंटरी, स्टैंडर, रिटायरमेंट, सस्पेंशन, डाउन, पाइप, थर्माकोट, स्वेटर, पैसेंजर, डिग्री कॉलेज, प्रिंसिपल, क्लास, रिसर्च, मैनेजर, ज्वाइन, नेग्लिजेंस ऑफ़ ड्यूटी, इनसबार्डीनेशन, वालंटरी रिटायरमेंट, कैलिफोर्निया, प्रोफेसर, सर्टिफिकेट, साफ्टवेयर, इंजीनियर, हाउस वाइफ, डिनर, इंस्ट्रूमेंट, टोटैलिटी, कन्सेप्शन, टीशर्ट, कांट्रेक्ट, इंस्टीट्यूट, फाइनल, रिजल्ट, डांसर, सीनियर, क्लासफेलो, एयर, टिकट, पासपोर्ट, कालोनी, कम्प्लीट, फिनिशिंग,ट्रांसफर, थीसिस, फ्रस्टेट, डोनेशन, लोन, ग्रेविटेशन, रिसेप्शन, मोटरबाइक, कम्प्यूटर, कोचिंग, एडमीशन, डिजाइन, ब्वायफ्रेंड, गासिप, सेन्स ऑफ़ ह्यूमर, नर्वस, फेयरवेल, बार्डर, कलक्टर, वाइस प्रिंसिपल, फ्लैट, सीरियस, रिजर्व्ड, फ्रेश, पोलीथिन, ड्राइंग, मिशनरी, हॉस्पिटल, सेल्स, इस्टीमेट, ड्राइवर, सेल्स टैक्स, गार्जियन, पंपिंग सेट, इंटरनेशनल, लेबर, स्टैण्डर, इन्स्पेक्टर, प्रोविडेंट फंड, ट्रांसफर, रिसीवर, लाउडस्पीकर, नोड्यूज क्लियर, लैंडलार्ड, एक्टिविस्ट,

डिस्टेम्पर, ड्राइंग रूम, प्रापर्टी डीलर, डिशेज, डुप्लिकेट, पेट्रोल, डाईवोर्स, कोर्ट, एक्सपोर्ट, इम्पोर्ट, कम्पनी, लाइव सर्टिफिकेट, सेमीनार इत्यादि |

हृदयेश ने '*चार दरवेश*' उपन्यास में अंग्रेजी शब्दों का भरपूर प्रयोग किया है | शब्द- कालोनी, मोबाइल, फ्रिज, वाशिंग-मशीन, गीजर, फर्नीचर, ब्यूटी पार्लर, टेलीफोन, इलेक्ट्रोनिक मीडिया, कॉन्वेंट, प्राइवेट, गैस सिंक, प्रोग्राम, फ्यूचर, सेंटीमेंटस, सीरियल, फर्स्ट क्लास, ट्रैफिक, कुकिंग, बुकिंग, सिलेंडर, ब्रेक, स्लाइस, स्विच ऑफ़, स्लाइड, रिंग, डार्लिंग, मैडम, फील्ड, फ्रेम, स्पेशल, डिशेज, ब्रांड, यूनिवर्सिटी, हायडील इलेक्ट्रिक, इंजीनियर, ब्रांडेड, क्लीनिंग पाउडर, रिलीजन, सक्रीन, रोस्टिंग, टार्च, डाइबिटिक, पोस्टग्रेजुएट, कॉलेज, लेक्चरार, लाइसेंस, प्रैक्टिस, ग्रेच्युटी, हार्डवेयर, ऑपरेशन, हैंड पम्प, लाइसेंस, कनेक्शन, फस्ट क्लास, इमरजेंसी, लाइट, गिफ्ट, सार्टिफिकेट, लेमिनेशन, कम्पीटीशन, फोटोस्टेट, कम्पूटर टाइपिंग, सीलिंग, आर्टीफिशियल, कार्नर, ट्यूब लाइट, रिहर्सल, अनफिट, शट-अप, प्रोग्राम, स्पेशल आर्डर, आइटम, सब्सिडी, रेस्टोरेंट, स्टाफ, सप्लाई, ट्रांसफार्मर, रिकार्ड, नेचुरल गैस, कैशियर, फोन, स्विच, ऑफ़, पोस्टकार्ड, स्क्रीन, जोक्स, नम्बर, डायल, मार्केट, ग्रांड फादर, ग्रांड मदर, सिस्टर, फैमिली, लाऊड प्लीज, डिस्टर्ब, फोल्डिंग, वाल्यूम फुल, मेडिकल स्टोर, हंड्रेड, परसेंट, साइड इफेक्ट्स, लाइफ सेविंग, एंटी-रेबीज, इंजेक्शन इत्यादि | अंग्रेजी भाषा के वाक्यों का प्रयोग भी यथास्थान हुआ है - "ए फेथफुल एंड लविंग हसबैंड" (हृदयेश 29), "दीज डेज मनी इज एनअदर गाड |"(हृदयेश 81), "नो बादरेशन, नौ टेंशन"|(हृदयेश 81), "फिट एंड परफेक्ट,"(हृदयेश 124), "यू आर ए बिग प्राब्लम"(हृदयेश 127), दीस नम्बर इज नाट एक्जिस्ट |"(हृदयेश 153)

टेकचंद ने 'दाई' उपन्यास में निम्नलिखित अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग किया है | यथा – सीरियस, फ़ोन, ओह, बस स्टैंड, किलोमीटर, लैंडफील्ड, ड्राइवर, स्कूल यूनिफार्म, ड्रैस, टाइट, डिजाइन, लेडीज, अनफिट, फिटिंग, प्लानिंग, स्पेशल, सिजेरियन, ऑपरेशन, टोट्स, प्रैशर, हार्न, गार्ड ऑफ़ ऑनर, कूलर, आयरन इत्यादि |

डॉ. सूरज सिंह नेगी के '*रिश्तों की आँच*' उपन्यास में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग - इंजीनियर, डॉक्टर, सैल्यूट, कॉलेज, हॉस्टल, एडमिशन फार्म, कैम्पस, स्टॉप, क्वार्टर, डिक्की, पॉलिथीन, ऑफिस, फोर्थ क्लास, सर्वेंट, लॉन, हैड ऑफिस, पोस्टिंग, टेबिल, डेली वेज लेबर, क्लर्क, सेक्शन, अलॉट, मेडिकल, स्टॉफ, नेम प्लेट, इंश्योरेंस, टाइम, कंपनी, कम्प्यूटर, टाइपराइटर, इंजीनियरिंग, कोचिंग, ज्वाइन, लिफ्ट, सीलिंग फैन, स्कूटी, ऑडिट, लंच बॉक्स, ऑफिस आवर्स, पेट्रोल, डिग्री होल्डर, रिसीट डिस्पेच, असिस्टेंट, एक्सीडेंट, ऑपरेशन, टिफिन, सीनियर, पार्ट टाइम, अकाउंट, हैंडिल, जैनरेशन गेप, स्टेट्स, ट्रेफिक, मोटर साईकल, एक्सीलेटर, प्लानिंग, पैकिंग, बाथरूम, पेन-पेन्सिल, एलॉट, स्टेंड, लोडिंग, करंट, डॉक्यूमेंट, परफेक्ट, चार्ज लिस्ट, मेन्यु, लैब ब्वॉय, आर्डर, जूनियर्स, इंजेक्शन, मेडिकल स्टोर, किडनी, डस्टबिन, हैड-क्वार्टर, मीटिंग, सुपरविजन, ऑफिस, फर्नीचर, रिकार्ड, नोटिंग, कंक्रीट-सीमेंट इत्यादि | डॉ. सूरज सिंह नेगी के '*वसीयत*' उपन्यास में अंग्रेजी भाषा के शब्दों का प्रयोग – इन्क्वायरी, काउन्टर, टर्न, इमरजेंसी, ड्यूटी आवर्स, चैम्बर्स, चेस्ट स्पेशलिस्ट, टेबिल, रजिस्ट्रेशन, इन्फेक्शन, एडमिट, कॉटेज, विजिटिंग कार्ड, ट्रेनिंग, वार्ड, ड्रिप, अटेंडेंट, आफिस, गैलरी, सिटी हॉस्पिटल, मेडिकल कॉलेज, सर्टिफिकेट, गजेटेड, पार्सल इत्यादि | डॉ. सूरज सिंह नेगी के '*नियति चक्र*' उपन्यास में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग- मेडिकल कोर्स, पोस्टिंग, प्रोफेशन स्टाफ, स्टॉक, रैफर, ज्वाइनिंग, ड्रम, टेप रिकॉर्डर, नोबल

प्रोफेशन, नर्सिंग, ड्यटी, राउंड अप, प्रोफेसर, काउंटर, वार्ड, कैम्पस, टेंडर, क्वार्टर, ट्रीटमेंट, सिस्टर, टेबिल, एंटरप्राइजेज, प्रिंसिपल, करियर, अपॉइंटमेंट, पोस्ट ग्रेज्युएशन, डिस्चार्ज कार्ड, डेड बॉडी, सुपरवाईजर, फैक्ट्री, रेड-लाईट, ग्रीन-लाईट, ओ पोजिटिव, ब्लड, इंचार्ज, डोनेट, लेक्चरर, स्कॉलरशिप, फैकल्टी, टी-स्टॉल इत्यादि |

कृष्णा अग्निहोत्री जी के कहानी संग्रह '*अपना-अपना अस्तित्व*' की भाषा के बारे में बात करें तो उनके इस कहानी संग्रह में भाषा देश काल एवं पात्रों के अनुसार है | कहीं गाँव कस्बों की ठेठ बोलचाल शब्द है, तो कहीं शहरी भाषा की प्रांजलता भी है, तो कहीं अंग्रेजी शब्दों की छटा के दर्शन भी होते हैं | यह आज के समय की आवश्यकता भी है | कृष्णा अग्निहोत्री जी ने अंग्रेजी विषय में एम.ए. किया है, इसी के चलते उनकी भाषा में अंग्रेजी शब्दावली का प्रयोग होना स्वाभाविक है | कृष्णा अग्निगोत्री के '*अपना-अपना अस्तित्व*' कहानी संग्रह की प्रथम कहानी 'झुर्रियों की पीड़ा' में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग | यूनिवर्सिटी, ज्वाइन, डिग्री, प्रोजेक्ट, प्रोविडेंट, साइन, रिटायर्ड, बाथरूम-लैटरीन, सरेंडर, कमेंट्स, रिमार्क्स, इत्यादि | कृष्णा अग्निगोत्री के '*अपना-अपना अस्तित्व*' कहानी संग्रह की दूसरी कहानी 'अपना-अपना अस्तित्व' में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग | ड्राइंगरूम, सोफा सेट, बेडरूम, रेस्ट, पिक्चर, रिटायर्ड, सैटल, कार सटार्ट, गैंगरीन, ड्राइव, प्रैक्टिस, ट्रेनिंग, एक्सीडेंट, एक्वागार्ड, केयर-टेकर, फंक्शन, मल्टी डाइमेंशन, हसबैंड, टयूशन, ब्लडप्रेशर, प्लीज, फ्लैट, गारंटेड, कम्पनी, शूगर, हार्टअटैक, ऑपरेशन इत्यादि | कृष्णा अग्निगोत्री के '*अपना-अपना अस्तित्व*' कहानी संग्रह की तीसरी कहानी 'मैं जिंदा हूँ' में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग | प्रैक्टिस, प्लॉट, ड्रिल मशीन, फर्स्टक्लास, शिफ्ट, परेड़, ब्रांडेड, ट्रस्ट, चैकबुक, साइन, फार्म इत्यादि |अंग्रेजी वाक्य - "ओल्डी, हाऊ आर यू" (अग्निहोत्री 31) कृष्णा अग्निगोत्री के '*अपना-अपना अस्तित्व*' कहानी संग्रह की चौथी कहानी 'तोर जवानी सलामत रहे' में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग | निमोनिया, जैकेट, फैशनेबुल इत्यादि | कृष्णा अग्निगोत्री के '*अपना-अपना अस्तित्व*' कहानी संग्रह की पांचवीं कहानी 'उसका इतिहास' में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग | प्रेसीडेंट, क्लर्क, चार्टेड अकाउंट, इंडस्ट्री, डवलप्ड़, ट्यूबलाईट, कूलर-फ्रिज, रिटर्न, हॉलिडे एजॉय, पार्टी, ब्लैक कॉफी, ड्रायर, ब्रश, ड्रेसेज, चेंज, स्कर्ट, टॉप, डार्क ग्लासेज, गर्लफ्रेंड, बाई गॉड, डांस, हर्ट, पैकेट, पेशेंट, सिटी-स्केन टेस्ट, इंजेक्शन, एंटीबायोटिक, ब्रेन हैमरिज, बेडरूम, न्यूडल, केक, चीज, मोटरसाइकल, कम्प्यूटर, प्लीज, कुक, गवर्नेस, सरप्राइज, कैलोरी, कार्ड, प्लास्टिक, सैटलमेंट, फर्नीचर, कॉम्पीटीशन, हार्ट-अटैक, मीटिंग, कैरियर, फिक्स्ड, इत्यादि | कृष्णा अग्निगोत्री के '*अपना-अपना अस्तित्व*' कहानी संग्रह की छठी कहानी 'यह क्या जगह है दोस्तों' में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग | काम्प्लीमेंट, क्लिनिक, टेस्ट, पेशेंट, क्रीम कलर, थैंक्स, टैक्सी, इनसिक्योर, स्टॉप, टच, एक्सीडेंट, अवार्ड, रेस्ट, स्टेशन, अटैची, मूवी, शर्ट, बर्थडे, कांस्टेबल, रिमोट, कॉलेज, सीरियल, डिस्टर्ब, अवार्ड, इमरजेंसी, फ्रेंड, अरजेंट, प्रोग्राम, बैंक, पार्टटाइम, प्रेस, मैचिंग, आर्टिफीशियल, लोन, क्लिनिक, आर्टरी ब्लाक, पोस्ट ऑफिस इत्यादि | कृष्णा अग्निगोत्री के '*अपना-अपना अस्तित्व*' कहानी संग्रह की सातवी कहानी 'बदमिजाज' में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग | हैंडलूम, फर्नीचर, बाथरूम, रेडीमेड, ड्रेस, यूनियन, पॉकेट, टिफिन, मनी, ब्लैकमनी, कोटेशन इत्यादि | कृष्णा अग्निगोत्री के '*अपना-अपना अस्तित्व*' कहानी संग्रह की चर्चित कहानी 'स्वाभिमानी' में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग | एक्सपर्ट, पेंटिंग, लाइट अरेंजमेंट, डॉक्टर, मार्डर्न, डैडी, प्रेजेंट, मैडम, पेमेंट, काम्पलैक्स, डिप्लोमा, रेडीमेड, कॉमिक, युडोकोलिन, डिस्टर्ब, कैरियर, इंजीनियर, फैसिलिटी, मस्टर्ड कलर, डस्टिंग, फैशन, ऑफिस, सूटकेस, टू सीटर, इत्यादि |

एस.आर.हरनोट की '*बिल्लियाँ बतियाती है*', '*बीस फुट के बापू जी*', '*कागभाखा*', '*लोहे के बैल*' कहानियों में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग | प्लास्टिक, मनीआर्डर, स्कूल, इन्फौरमर, डोनेशन, आउट हाउस, कान्वेंट, हारमोनियम, पार्टी, सायरन, थैंक गॉड, ऑपोजिशन, ड्राइंगशीट, लाइसेंस, कंट्रोल रूम, ओल्डमैन, मेकअप, ड्रेस, प्लीज, फोन, नंबर, टाइम, मोबाइल, मीटिंग, डैड, मल्टीनेशनल, एलर्जी, इमोशनल, कार, लोन, वाशिंग मशीन, फुली ऑटोमेटिक, मार्केट वेल्यू, पॉजिशन, रिटायर, एडवांस, पोस्ट मास्टर, मिनी ट्रैक्टर इत्यादि | बीस फुट के बापूजी' कहानी में अंग्रेजी वाक्यों का प्रयोग | "नौ...नो..स्वीट...ही इज ए डर्टी मैंन"(हरनोट 38) "यैस सन | आई एम ए डर्टी ओल्डमैन"(हरनोट 38) "लवली ब्वाय | प्लीज टेक ईट | ईट सॉफ्टी | ईट ..| सूर्यबाला की कहानी 'दादी और रिमोट' में अंग्रेजी शब्द – रिमोट, वीडियो गेम्स, गैस, ओ.के., टी.वी. बिल्डिंग, प्रोग्राम, टेलीविजन इन्फार्मेशन ब्यूरो, स्पीड, इत्यादि | दिलीप मेहरा की '*साजिश*' कहानी में अंग्रेजी भाषा के शब्द – थर्मल पावर स्टेशन, कामर्स, सीनियर क्लर्क, रिटायर, क्वाटर, टाउनशिप, ब्लाक इत्यादि | दिलीप मेहरा की '*अग्निदाह*' कहानी में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग- फोन, टेन्शन, चेकअप, सुसाइडनोट्स, पुलिस, स्टेशन, मोबाइल नंबर इत्यादि | अंत: देख सकते हैं कि 21वीं सदी के हिंदी कथासाहित्य में लेखकों ने भरपूर मात्रा में अंग्रेजी शब्दों, वाक्यांशों व वाक्यों का प्रयोग किया हैं | कहीं अंग्रेजियत संस्कार के पात्रों के अनुसार, कहीं कथा वस्तु की प्रकृति के अनुसार, कहीं देशकाल वातावरण के प्रभाव के अनुसार अंग्रेजी भाषा के शब्दों व वाक्यों का प्रयोग प्रभावशाली ढंग से किया है |

- **पंजाबी भाषा व शब्दों का प्रयोग**

कृष्णा सोबती के उपन्यास में पंजाबी शब्दों का भी भरपूर प्रयोग हुआ है | कृष्णा सोबती की पृष्ठभूमि पंजाब की है, इसलिए उनके उपन्यास समय सरगम में पंजाबी शब्दों का प्रयोग स्वाभाविक हुआ है | कृष्णा अग्निहोत्री ने 'अपना-अपना अस्तित्व' कहानी सग्रह की प्रमुख कहानी 'स्वाभिमानी' में पंजाबी भाषा का प्रयोग किया है – "ओर री कुड़िये, त्वाड़ो सास लूं देख्या...बूढ़ी घोड़ी नू लाल लगाम | क्या बन सँवरकर आयी ! लड़की देखन आयी थी या खुद ना दिखावण ! नी कुड़िये, लगाम खींचकर रखणा | (अग्निहोत्री 106) राकेश वत्स का उपन्यास 'फिर लौटते हुए' पंजाबी परिवेश में लिखा गया है | इस उपन्यास में पंजाबी शब्द व भाषा का भरपूर प्रयोग हुआ है | इस उपन्यास में पंजाबी भाषा का ज्यादातर प्रयोग वृद्ध दिवाकर शर्मा की पत्नी लक्ष्मी करती है | जिसका एक उदाहरण देख सकते है – "इन्होने अपनी देह से सत्त बच्चे जने हैं | दो लड़कियों मर जाने के पिच्छों बच गए पंज बच्च्ययाँ के शादी-ब्याह किए हैं | आदमी होर की कर सकता है इस जिंदगी बिच ?" (वत्स 26) साहित्यकार अपने साहित्य में पात्रों की बातचीत को स्वाभाविक और वास्तविक दिखाने के लिए पंजाबी शब्दों और वाक्यांशों का इस्तेमाल करता हैं | इसका उद्देश्य आमतौर पर स्थानीयता, सांस्कृतिक प्रामाणिकता और चरित्र-चित्रण को सशक्त बनाना होता है |

- **कुमांउनी भाषा के शब्द**

डॉ, सूरज सिंह नेगी ने अपने '*वसीयत*' उपन्यास में कुमांउनी शब्द का भरपूर प्रयोग किया है | यथा - च्यला (बेटा), ईजा (माँ), नौहल्ले (पानी की बावड़ी) झोडे (कुमाऊँ क्षेत्र का लोकनृत्य), किल्मौड़ (एक प्रकार का जंगली फल) हरुहीत (प्रसिद्ध वीर

लोक देवता) राजुल-मालूशाही (प्रसिद्ध अमर प्रेमी युगल जिनकी अमर प्रेम कथा घर-घर में गायी जाती है), थान (मंदिर), ताप (सेक), घुघुती त्योहार (मकर सक्रांति) घुघुते (मकर सक्रांति के दिन बनाया जाने वाला खास पकवान), भुज (सफ़ेद पेठा) असोज (वर्षा ऋतु एवं सर्दी के मध्य का समय), पौहरी (प्रहरी), उत्तरायणी (मकर सक्रांति) पैलाग-पैलाग (प्रणाम-प्रणाम), ज्यू जाग (जीता रह), बूबू (दादाजी), बाज्यू (पिताजी), भुला (छोटे भाई के प्रति संबोधन), स्यान (फूल सक्रांति), प्यूँली, बुरांश, बाशिंग, कुंज, घिंघोरा, कविलास (पहाड़ों में बसंत ऋतु में खिलने वाले फूल), देहरी (दहलीज), ख़ज (चावल का पकवान), रैंस (एक प्रकार की दाल), हुड़के (वाद्य यंत्र), दाज्यू (बड़े भाई), तिमिल (पहाड़ी फल), मैत (पीहर), लीसा (चीड़ के पेड़ के तने को छीलकर उससे निकलने वाला तरल पदार्थ), रहड़ (मथनी), बटुआ (पर्स), मडुए (पर्वतीय क्षेत्र में पाया जाने वाला अनाज), बौर (मंजरी), घुघुती (चिड़िया), गढ़ेरी (एक प्रकार की सब्जी), कैंजा (मौसी), ठुलीजा (ताई जी). मलखान (कमरे के भीतर स्थित एक अन्य कमरा), भकार (अनाज रखने के लिए बनाए गये लकड़ी के बक्से), थुम्बी (छत को सहारा देने के लिए बल्ली), इत्यादि |

- **पहाड़ी शब्द**

एस.आर.हरनोट की 'बिल्लियाँ बतियाती है', 'बीस फुट के बापू जी', 'कागभाखा', 'लोहे के बैल' कहानियों में आंचलिक (पहाड़ी) शब्दों का प्रयोग | यथा- ढिबरी, ओबरे, खपरैल, छान, शेल, गलांवे, जोच, छिकड़ीयां, बीऊल, ब्वारी, चोकर, खोरड़, छलीरा, चांगड़, किल्टे, खारोड़ती, कोदा, चूरा, बथ्थू, पौ, छोकरे-छल्ले, झुरी, जुल्फिया, लाड़ी, मशाण, इरख, दरांती, बीड़, पटड़ा, सुख-सांद, उकडूं, गौंच, बजंतर, कारदार, ढोलिये, नगारची, शहनाइये, गूर, किल्कें, माल, बुंगडी, जूभ, राजीबंदा, खेरू, शनीचर, पैरापावणा, सदरी, ध्याड़ी, बखेड़े, अनघड़े, छवाई, फशके, भड़ेरा, चेरशी, घासणी, इत्यादि |

- **गुजराती भाषा व शब्दों का प्रयोग**

ममता कालिया के 'दौड़' उपन्यास में गुजराती शब्दों का प्रयोग- आऊ जो, वापरने, नापास, तपास, गम्मत इत्यादि | 'दौड़' उपन्यास में गुजराती शब्दों के अलावा कई जगह पर वाक्यों का भी प्रयोग किया गया है जैसे- जब रेखा पवन के घर राजकोट जाती है, तब पवन का रोटी बनाने वाला नौकर भरत पवन की माँ से कहता है- पौन भाई नी बा आवी छे" (पवन भाई की माँ आयी हैं।)"(कालिया 54) माँ तमे केटला रोटली खाती (माँ तुम कितनी रोटी खाती हो?)"(कालिया 54), बे दो चलेगा"(कालिया 54) आऊ जो,"(कालिया 11) चने नी लोट"(कालिया 13) विशवास नी जोत घरे-घरे-गुर्जर गैस लावे छे"(कालिया 19)

- **हरियाणवी भाषा व शब्दों का प्रयोग**

टेकचंद ने 'दाई' उपन्यास में हरियाणवी भाषा का बहुतायत मात्रा में बड़ा प्रभावशाली प्रयोग किया है | उपन्यास में पात्रों के अनुसार हरियाणवी भाषा का सहज व स्वाभाविक प्रयोग हुआ है | पात्रों के चित्रण के लिए भी भाषा का सहज व सुन्दर प्रयोग किया गया है | इस उपन्यास की पात्र रेशम बुआ के यौवनावस्था के कार्यों के बारे में लेखक लिखते हैं –

‘रेसम नाच्चै खूब है !’ ‘घर के काम मैं माँ नै सहारा भी देवै है |’ ‘जी मैं आवै तै कितणा बी काम हो झटके तै कर दे...अर अड़ जावै...फेर न करै चाहे कोये कितणे भी तणे तुड़वा ले |”(टेकचंद 11)

रेशम बुआ के मेहनती होने व उसके ताकदवर व मजबूत शरीर की प्रशंसा उसके बुढ़ापे में भी होती हैं | रेशम बुआ ने आठ-आठ बच्चों को जन्म दिया है इसके बारे में लेखक लिखते हैं –“थम तै एक दो बालकां मैं मर जाओ हो...अर रेसम नै देखो आठ-आठ बालक जण दिये, पाल दिये अर आज बुढ़ापे मैं बी घोड़ा सी हांडै है |”(टेकचंद 28) इसके साथ हिंदी और अंग्रेजी भाषा के शब्दों का हरियाणवी लहजे में भी प्रयोग स्वाभाविक हुआ है | यथा लटैर (रिटायर) सूर (सूअर), गोरमिंट (गवर्नमेंट), टीरेनिंग (ट्रेनिंग), परेसन (ऑपरेशन), ईब (अब), इसा (ऐसा) इत्यादि |

- **संक्षेपाक्षर शब्द**

जब किसी लंबे नाम या वाक्यांश को छोटा करने के लिए उसके शुरूआती अक्षरों से एक नया शब्द बनाया जाता है तो उसे संक्षेपाक्षर शब्द कहते हैं | ममता कालिया के ‘दौड़’ उपन्यास में संक्षेपाक्षर शब्दों का प्रयोग बहुतायत मात्रा में हुआ है | यथा - एम.बी.ए., बी.पी.सी.एल., आई.ए.एस., आई.आई.एम., एन.आर.आई., आई. ओ.सी., यू.पी., एल.पी.जी., जी.सी.एल., एम.एम.एस., एम.बी.बी.एस., एम.डी., टी. वी., ए.एफ.सी., पी.सी.ओ., एस.टी.डी., वी.आई.पी., पी.पी.के., पी.एम.टी. .... आदि | काशीनाथ सिंह के ‘रेहन पर रग्घू’ उपन्यास में संक्षेपाक्षर शब्द – वी.आर.एस., बी.ए., एम.ए., एस.पी., आई.जी. पी.सी.ओ. बीएड. आई.ए.एस., पी.सी.एस., एस.डी.एम., पी.सी.एस., वी.आर.एस., एस.सी., एमएससी. पीएचडी. एस.पी., एन.आर.आई., एफ.आर.आई. इत्यादि | हृदयेश के ‘चार दरवेश’ उपन्यास में संक्षेपाक्षर शब्द - के.जी., बी.ए., आई.एस.आई., एम.ए. बी-एड., कृष्णा सोबती के ‘समय-सरगम’ उपन्यास में संक्षेपाक्षर शब्द - डी.एच., टी.वी., आई. सी., जी.पी.ओ., डी.डी.ए., सी.जी.एच., बी.एस.सी., आई.ए.एस., यू.एन.ओ. इत्यादि | चित्रा मुद्गल के गिलिगडु उपन्यास में- आई.आई.टी., एन.टी.पीसी., जी.टी.वी., आई.आई.टी., एस.टी.डी., ओ.एन.जी.सी., सी.एन.जी., टी.वी. एम.टी.वी., एस.एन., डॉ. सूरज सिंह नेगी के ‘नियति चक्र’ उपन्यास में संक्षेपाक्षर शब्दों का प्रयोग- टी.बी., एम.बी.बी.एस., पी.जी., आई.ए.एस. इत्यादि | कृष्णा अग्निहोत्री जी ने अपने कहानी संग्रह ‘अपना-अपना अस्तित्व’में संक्षेपाक्षर शब्द – बी.टी.आई., एम. आई. जी., ए.सी., एम.ए., टी.वी., बी.ए., एम.बी.ए., ई.सी.जी., आई.सी.यू. इत्यादि |

- **सार्थक-निरर्थक शब्द**

सार्थक शब्द भाषा की रीढ़ हैं क्योंकि वे अर्थ प्रदान करते हैं जबकि निरर्थक शब्द भाषा को संगीतात्मकता, ध्वनि प्रभाव और सौन्दर्य देते हैं | दोनों ही अपने स्थान पर हिंदी भाषा को सुंदर और प्रभावशाली बनाते हैं | साहित्यकार अपने साहित्य में बोलचाल की अवस्था को अधिक स्वाभाविक बनाने के लिए सार्थक शब्दों के साथ निरर्थक शब्दों का प्रयोग भी करता है | 21वीं सदी के साहित्यकारों ने अपने कथा साहित्य में पात्रों के वार्तालाप में सहजता और सरलता लाने के लिए उनके द्वारा सार्थक-निरर्थक शब्दों

का प्रयोग किया है | 21वीं सदी के हिंदी साहित्य में जिन सार्थक-निरर्थक शब्दों की अभिव्यक्ति हुई है, वे इस प्रकार से हैं – हृदयेश के *'चार दरवेश'* उपन्यास में सार्थक-निरर्थक शब्द | गलत-सलत, हट्टी-कट्टी, तुरंत-फुरन्त, दंद-फंद, अड़ोस-पड़ोस, कभी-कभार, ठीक-ठाक, ढीला-ढाला इत्यादि | डॉ. सूरज सिंह नेगी के *'नियति चक्र'* उपन्यास में सार्थक-निर्थक शब्दों का प्रयोग - जैसे-तैसे, रोना-धोना, इक्के-दुक्के, भूत-वूत इत्यादि | टेकचंद ने *'दाई'* उपन्यास में निम्नलिखित सार्थक-निरर्थक शब्दों का प्रयोग किया है | यथा- काम-धाम, सान्नी-पानी, उथल-पुथल, अड़ोस-पड़ोस, नोक-झोंक, उलटा-पलटा, धक्का-मुक्की इत्यादि | सूर्यबाला की कहानी *'दादी और रिमोट'* में सार्थक और निर्थक शब्दों का प्रयोग - अड़ाक-फड़ाक, रात-बिरात, गिरती-भहरती, जैसे-तैसे इत्यादि | दिलीप मेहरा की *'अग्निदाह'* कहानी में सार्थक-निर्थक शब्दों का प्रयोग- दोस्त-वोस्त, छोटे-मोटे, समस्या-वमस्या, लोथ-पोथ इत्यादि | 21वीं सदी के हिंदी साहित्य में जिन सार्थक-निर्थक शब्दों का प्रयोग हुआ उनमें कुछ शब्दों को उदाहरण स्वरूप दिखाया गया |

- **शब्द पुनरुक्ति**

जब एक शब्द की पुनरावृत्ति होती है ताकि कोई खास प्रभाव या सुंदरता पैदा हो, तो उसे शब्द पुनरुक्ति कहा जाता है | 21वीं सदी के कथा साहित्य में शब्द पुनरुक्तियों का भरपूर प्रयोग किया गया है | कुछ उदाहरण निम्नलिखित देख सकते हैं - हृदयेश के *'चार दरवेश'* उपन्यास में शब्द पुनरुक्ति का प्रयोग - कोई-कोई, बड़ी-बड़ी, लम्बी-लम्बी, नयी-नयी, कभी-कभी, साथ-साथ, धीरे-धीरे, बाय-बाय, अपने-अपने, और-और, लगाते-लगाते, हज़ारों-हज़ारों, तरह-तरह, बदल-बदल, अपनी-अपनी, अस्सी-अस्सी, सत्तर-सत्तर, बीच-बीच, अकेले-अकेले, उठा-उठा, एक-एक, घुटक-घुटक, प्यार-प्यार, बड़ी-बड़ी, गोल-गोल, आधा-आधा, कहीं-कहीं, पहने-पहने, लाल-लाल, धीमे-धीमे, झुकें-झुकें, जख्म-जख्म, गों-गों, गर्म-गर्म, भों-भों, कदम-कदम इत्यादि | टेकचंद ने *'दाई'* उपन्यास में निम्नलिखित पुनरुक्ति वाले शब्दों भरपूर का प्रयोग किया है | यथा घर-घर, पीच्छै- पीच्छै, पकड़-पकड़, होते-होते, छोटी-छोटी, अलग-अलग, खेल-खेल, किसम-किसम, क्या-क्या, तरह-तरह, कभी-कभी, गोल-गोल, सटाक! सटाक!, सीधे-सीधे, दूर-दूर, बार-बार, रेशे-रेशे, साथ-साथ, आठ-आठ, खड़ा-खड़ा, फिर-फिर, एक-एक, नये-नये, धीरे-धीरे, कई-कई, ज्यों-ज्यों, किसी-किसी, भाँति- भाँति, वाह! वाह!, हँसा हँसा, आते-आते, सुबह-सुबह, घुटी-घुटी, दबी-दबी, ढलते-ढलते, छूटते-छूटते, बीच-बीच, फोल्ला-फोल्ला, अक्षर-अक्षर, मण-मण, मार-मार, क़दम-क़दम, धुक-धुक, जगह-जगह, अपने-अपने, कुड़क-कुड़क, ओढ़ा-ओढ़ा, हाय! हाय!, साथ-साथ, चूंट-चूंट, मोटी-मोटी, तार-तार, खींच-खींच इत्यादि | डॉ. सूरज सिंह नेगी के *'नियति चक्र'* उपन्यास में पुनरुक्ति वाले शब्दों का प्रयोग- धीरे-धीरे, सुबह-सुबह, बात-बात, बातों-बातों, चूर-चूर, बार-बार, लेटे-लेटे, जैसे-जैसे, एक-एक, बहकी-बहकी, क्या-क्या, बुझे-बुझे, बैठे-बैठे, बीच-बीच, फफक-फफक, कहते-कहते, बड़ी-बड़ी, दौड़ा-दौड़ा, खुशी-खुशी, छोटे-छोटे, अलग-अलग, ढलते-ढलते, किनारे-किनारे, कल-कल, रोम-रोम इत्यादि | सूर्यबाला की कहानी *'दादी और रिमोट'* में पुनरुक्ति वाले शब्दों का प्रयोग- अपने-अपने, बड़े-बड़े, ताड़-ताड़, रोज-रोज, दबा-दबा, बैठे-बैठे, पकड़े-पकड़े, गा-गा, कई-कई, धीरे-धीरे, सुनते-सुनते, देखो-देखो, खड़े-खड़े, घाँट-घाँट, शुरू-शुरू, मंद-मंद, बीच-बीच, कभी-कभी, देखते-देखते, क्या-क्या, साथ-साथ, जल्दी-जल्दी इत्यादि | दिलीप मेहरा की *'साजिश'* कहानी में पुनरुक्ति वाले शब्दों का प्रयोग - करते-करते, बातों-बातों, मरते-मरते, बड़े-बड़े, साथ-साथ, धीरे-धीरे, छोटे-छोटे, अलग-अलग, मंद-मंद, जब-जब, जाते-जाते, आते-आते इत्यादि | दिलीप मेहरा की

'*अग्निदाह*' कहानी में पुनरुक्ति वाले शब्दों का प्रयोग- अलग-अलग, करते-करते, साथ-साथ, खोये-खोये, नहीं-नहीं, बार-बार, सुबह-सुबह इत्यादि | शब्द पुनरुक्ति भाषा में भावनाओं की तीव्रता, गहराई और लयात्मकता लाती है | यह साहित्यिक रचनाओं को अधिक प्रभावशाली और संगीतमय बनाती है | 21वीं सदी के कथाकारों ने शब्द पुनरुक्ति का बखूबी प्रयोग किया है |

5.2.9 मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ का प्रयोग

मुहावरा तथा लोकोक्ति भाषा की यथार्थ निधि होती हैं | मुहावरा मुख्यतः अरबी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ अभ्यास, बातचीत करना है | मुहावरा देखने में सरल लगता है, लेकिन इसके पीछे का भावार्थ एक पूर्ण विचार होता है | मुहावरे के संदर्भ में डॉ.ओम प्रकाश गुप्ता लिखते हैं –

> "प्रायः शारीरिक चेष्टाओं, अस्पष्ट ध्वनियों, कहानी और कहावतों अथवा भाषा के कतिपय विलक्षण प्रयोगों के अनुरूप या आधार पर निर्मित और अभिधेयार्थ से भिन्न कोई विशेष अर्थ देने वाले किसी भाषा के गठे हुए रूढ़ वाक्य, वाक्यांश अथवा शब्द को मुहावरा कहते हैं | (कपूर 9)

उपन्यास हो या कहानी भाषा को सजीव और प्रभावशाली बनाने के लिए मुहावरों का प्रयोग किया जाता है | मुहावरों के प्रयोग से भाषा प्रवाहपूर्ण बनती है | साहित्य में भाषा के लालित्य और समृद्धि के लिए मुहावरों का विशेष योगदान होता है |

वहीं लोकोक्ति किसी जगह स्थान विशेष के प्रसिद्ध हो जाने वाले कथन को लोकोक्ति कहते हैं या यूँ कहें कि जब कोई पूरा कथन किसी प्रसंग विशेष में उद्धत किया जाता है, तो वह लोकोक्ति कहलाता है | मुहावरों की तरह भाषा में कहावतों का प्रयोग करने से भाषा प्रवाहपूर्ण बनती है | लोकोक्ति के संदर्भ में डॉ. पृथ्वी नाथ पाण्डेय ने कहा है-

> "कहावत उस बंधे पद-समूह को कहते हैं, जिसमें अनुभव की कोई बात संक्षेपत: सुंदर, प्रभावशाली और चमत्कारी ढंग से कही जाती है | संस्कृत और हिंदी में कहावत को सूक्ति प्रवाद वाक्य अथवा लोकोक्ति भी कहते हैं और अंग्रेजी में इसे (proverb) तथा उर्दू में 'मसल' कहा जाता है | कहावतें मुहावरे से भिन्न है इसका प्रयोग मुहावरों की भांति एक वाक्य में हो पाना संभव नहीं |"(पाण्डेय 454)

मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग से भाषा में जीवंतता, प्रांजलता, प्रवाहमयता तथा अभिव्यंजना शक्ति आती है | इसके साथ भाव तथा विचारों में संक्षिप्तता, स्पष्टता, रोचकता एवं शक्ति में वृद्धि होती हैं | 21वीं सदी के कथाकारों ने वृद्ध विमर्श पर केंद्रित हिंदी कथा साहित्य को रोचक बनाने हेतु तथा पात्र की मनोदशा प्रस्तुत करने के लिए अनेक स्थान पर मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग किया गया है –

ममता कालिया के उपन्यास '*दौड़*' में निम्नलिखित मुहावरे और लोकोक्तियाँ विशेष रूप से प्रयोग किए गए हैं - जड़ें जमाना, पांव पसारना, तलवारों का तन जाना, सिर का दर्द होना, पि जाना, दबाव डालना, मोर्चे संभालना, लीक पीटना, अंधेरा होना, चप्पल चटकाना, जुबान बेलगाम होना, रास नहीं आना, जोश ठंडा होना, डूबते जहाज़ का मस्तूल, मिट्टी खराब न होने देना.... आदि ।

कृष्णा सोबती के '*समय सरगम*' उपन्यास में मुहावरों और लोकोक्तियों का विशाल कोश बिखरा पड़ा है | भाषा को सजीव बनाने के लिए उन्होंने मुहावरों का सटीक प्रयोग किया है | मुहावरेदार भाषा का प्रयोग करते हुए कृष्णा सोबती जी ने भाषा को बड़ी प्रभावपूर्णता से प्रस्तुत किया है | उनके द्वारा प्रयुक्त मुहावरे और लोकोक्तियाँ समाज के विभिन्न श्रेणियों और क्षेत्रों से लिए गए हैं| काशीनाथ सिंह लोक जीवन से जुड़े कथाकार हैं | उनकी भाषा में स्थानीय मुहावरे और लोकोक्तियां उपन्यास को और भी रोमांचक बनाती है | काशीनाथ सिंह की भाषा की तारीफ पर उमाशंकर चौधरी लिखते हैं –

> "काशीनाथ सिंह की भाषा की जितनी तारीफ़ की जाए, कम है | काशीनाथ की भाषा की सबसे बड़ी खासियत है उसके रंग का गिरगिट की तरह बदलना | जिस परिवेश, जिस समस्या, जिस समय को उठाती हुई उनकी रचना होती है, उनकी भाषा उसी रंग में अपने को ढाल लेती है | काशीनाथ की किन्हीं दो पुस्तकों को सामने रखा जाय तो यह समझना बहुत मुश्किल है कि यह एक ही रचनाकार की रचनाएँ हैं | सुनने या कहने में यह बहुत आसान लग सकता है, लेकिन यह अपने आप में बहुत ही कठिन काम है कि आप जिस तरह की समस्या, जिस तरह के विषय पर लिख रहे हैं उसमें आप ठीक उस तरह की भाषा का इस्तेमाल कर लें | हर लेखक की भाषा का अपना एक अंदाज, एक व्याकरण, एक मुहावरा होता है | उससे बाहर निकलना, विषय के अनुसार उसको बदलना बहुत ही कठिन होता है | लेकिन काशीनाथ इसमें सक्षम हैं, कुशल हैं, सिद्धहस्त है |" (पल्लव 169)

काशीनाथ सिंह ने '*रेहन पर रग्घू*' उपन्यास में अनेक मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग किया है, जिससे उपन्यास की भाषा अत्यंत सजीव बन पड़ती हैं | रघुनाथ के चरित्र के अंतर्विरोधों की ओर संकेत करते हुए काशीनाथ जी लिखते है – "रघुनाथ की छवि गाँव वालों की नजर में झगड़ा झंझट से दूर रहने वाले जितने शरीफ आदमी की थी उतनी ही सोंठ आदमी की – एक रुपया में आठ अठन्नी भुनाने वाले आदमी की |" (सिंह 26), 'मंगनी की बछिया के दांत नहीं गिनते' (सिंह 27), 'चोर कभी बताता है कि चोरी उसी ने की है'(सिंह 27), 'जो भी रिश्ता करता है, ठोक बजा के करता है' (सिंह 47), 'काटो तो खून नहीं'(सिंह 69), 'न ऊधो का लेना न माधो का देना'(सिंह 88) , "काहे पानी उतार रहे हो एक बुजुर्ग का"(सिंह 34), "खून पसीना एक करना"(सिंह 106), "ठंडे पड़ गये"(सिंह 44), "गम खाना"(सिंह 139) इनके मुहावरे और कहावतें लोक जीवन से जुड़ी होते हैं | स्थानीय कहावतें इनके उपन्यास को और भी अधिक आकर्षक बनाती हैं | चित्रा मुद्गल के '*गिलिगडु*' उपन्यास में जसवंत सिंह लोकोक्ति का प्रयोग करते हैं | "मन में यह विचार आता है | कर्नल स्वामी उनकी मानसिक यंत्रणा को महसूस ही नहीं कर सकते- "जाके पांव न फटे बिवाई, सो क्या जाने पीर पराई |"(मुद्गल 87) यहाँ पर बाबू जसवंत सिंह अपनी पीड़ा के आगे बेबस है और अपनी पीड़ा को दर्शाने के लिए कहावत का प्रयोग करते हैं | अन्य मुहावरे व कहावतें - "बाट जोहते"(मुद्गल 87), "निन्यानवे का फेर"(मुद्गल 87) राकेश वत्स के उपन्यास 'फिर लौटते हुए' में मुहावरे लोकोक्तियों का प्रयोग बहुत प्रभावी ढंग से हुआ है – "की अक्खां अन्ने दा नां नैनसुख नहीं हो सकदा'(वत्स 50), न नौ मन तेल होगा और ना राधा नाचेगी'(वत्स 85), 'सर मुंडाते ही ओले पड़े' (वत्स 124), 'नंगी क्या धोएगी क्या निचोड़ेगी'(वत्स 129), 'जान से हाथ धोना पड़ा'(वत्स 134) 'खिसियानी बिल्ली ने खम्भा नोचा' (वत्स 140), 'आ बैल मुझे मार'(वत्स147), 'गीदड़ भभकियाँ' (वत्स147) कृष्णा अग्निहोत्री जी ने अपने कहानी संग्रह '*अपना-अपना अस्तित्व*' में सजीवता लाने के लिए कई

मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग किया है | जिसका उल्लेख निम्नलिखित है – “बूढ़ी घोड़ी लाल लगाम”, “खाती ढाई मन है, काम छटांक नहीं” डॉ. दिलीप मेहरा की साजिश कहानी में मुहावरों का प्रयोग - ‘सोलह आने सच’(मेहरा 93) ‘पका पान हो गए’(मेहरा 93) मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग से भाषा जहाँ सुंदर एवं प्रभावशाली बनती है, वहीं यह आम जन से जोड़ने का कार्य भी करती है | ये हिंदी भाषा को जीवंतता, व्यंग्यात्मकता और गहराई प्रदान करते हैं | इनके प्रयोग से भाषा न केवल आकर्षक बनती है, बल्कि वह बोलचाल और लेखन दोनों में विशेष प्रभाव उत्पन्न करते हैं | अंत: 21वीं सदी के हिंदी साहित्यकारों ने अपनी बात को स्पष्टता प्रदान करने हेतु तथा यथार्थपरक बनाने हेतु मुहावरों और लोकोक्तियों का सफल प्रयोग किया है |

21वीं सदी में वृद्ध विमर्श पर केन्द्रित हिंदी कथा साहित्य : शिल्प गत विश्लेषण

5.3 'शैली' अर्थ एवं परिभाषा

साहित्य में शैली का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है | 'राजपाल हिंदी शब्दकोश' के अनुसार, "शैली – 1. ढंग या तरीका | 2. साहित्य विचार प्रकट करने का ढंग | 3. वस्तु निर्माण का कलापूर्ण ढंग |" (बाहरी 780) 'शैली' का सामान्य अर्थ अभिव्यक्ति की पद्धति, तरीका या ढंग है | बोलने तथा लिखने के खास और अच्छे ढंग को शैली कहा जाता है | साहित्यकार जिस प्रकार या ढंग से अपने भावों और विचारों की अभिव्यक्ति साहित्य में प्रकट करता है उसी को शैली कहते हैं | शैली केवल भाषा या लेखन का तरीका नहीं, बल्कि विचार, भाव और रचनात्मकता के व्यक्तिकरण का समग्र माध्यम है, जो किसी रचना को विशिष्ट और पहचान योग्य बनाता है | 'अंग्रेजी हिंदी कोश' के अनुसार, "कार्य पद्धति भाषण या लेखन की शैली, बोलने या लिखने का ढंग, पद्धति, रीति, तरीका, गुण, विशिष्टताएं, अच्छाइयों, वाग्व्यापर, आक्षया, श्रेष्ठता, उत्कृष्टता, विशेषता, उत्तमता, सुन्दरता, कुरूपता, शलाका, लेखन उपकरण, स्टाइल |" (बाहरी 1886) अंत: कहा जा सकता है शैली शब्द कार्य करने के ढंग, तरीका, स्वभाव, विधान इत्यादि को इंगित करता है | साहित्य में शैली अभिव्यक्ति के उन गुणों को कहते हैं, जिन्हें लेखक या कवि अपने मन के विचार ठीक तरह से व्यक्त करने के लिए अपनाता है | कोई लेखक साधारण अर्थ के प्रतिपादन के लिए विशेष शब्दों का प्रयोग करता है तो कोई लेखक विशेष अर्थों को प्रकट करने के लिए साधारण शब्दों का प्रयोग करता हैं | शैली किसी रचना के वाह्य रूप को निखारती ही नहीं बल्कि उसके आंतरिक रूप को भी विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान देती है | इस प्रकार कह सकते है कि शैली शब्द का अर्थ ढंग, विधि या तरीका है | साहित्य के क्षेत्र में विचार को प्रकट करने का ढंग या पद्धति है | रामचंद्र वर्मा लिखते हैं –

> "वास्तव में उत्कृष्ट विचार या भाव को उसी के अनुरूप तथा उपयुक्त ढंग स प्रकट करना ही कृति का कला पक्ष है | इसी में कर्ता का कौशल और कृति का सौन्दर्य है | कुछ कहने या लिखने के समय एक तो विचार करने की शक्ति होती है और दूसरी विचार व्यक्त करने की शक्ति, यह विचार व्यक्त करने की शक्ति ही शैली है |" (वर्मा 68)

शैली न केवल रचनात्मकता का साधन है, बल्कि विचार और भाव की अभिव्यक्ति का कला पक्ष भी है, जो पाठक पर स्थायी प्रभाव डालती है | शैली का प्रमुख गुण यह है कि लेख में शब्द कम हों परन्तु उसमें अर्थ या भाव अधिक हो शैली ही कठिन को आसान और आसान को कठिन बनाती है | साहित्य का संपूर्ण सौन्दर्य शैली पर ही आश्रित होता है | निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि 'शैली' वह टेकनीक, ढंग या तरीका है, जिसके माध्यम से साहित्यकार अपने अमूर्त विचारों को मूर्त रूप प्रदान करता है | अंत: 'शिल्प' का संबंध लेखक की रचना प्रक्रिया से होता है | शिल्प द्वारा ही वह अपने भावों को मूर्त रूप देकर रचना को प्रभावशाली बनाने में सफल होता है | रचना को प्रभावशाली बनाने के लिए शिल्प का सुगठित एवं कथ्य के अनुकूल होना अति आवश्यक है | साहित्यकार अपनी अनुभूति तथा भावनाओं की अभिव्यक्ति जिस ढंग से, जिस ढांचे से प्रस्तुत करता है, वही शिल्प है |

'शैली' परिभाषा

साहित्य के संदर्भ में शिल्प शब्द का शाब्दिक अर्थ है साहित्यिक कृति के रचने का ढंग या तरीका | शैली के संबंध में विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने अनुसार 'शैली' की परिभाषा प्रस्तुत की है।

विभिन्न विद्वानों के अनुसार –

विभिन्न भारतीय विद्वानों ने 'शिल्प' को निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित किया है |

- **डॉ. रवीन्द्र कुमार श्रीवास्तव -**

  "यह एक ओर भाषा तथा साहित्य को जोड़ने वाली संकल्पना हैं, जिसके संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि शैली कलात्मक सौन्दर्य की अभिव्यंजक भाषिक संचरना है |" (श्रीवास्तव 1)

- **डॉ. शंकरदयाल चौकृषि** –

  "साहित्यक रुपार्थ में शैली का संबंध भाषा-संयोजन-वैचित्र्य या रचना-तत्व से है | यह वस्तुत: भाषा की वैयक्तिक अभिव्यक्ति का विशेष ढंग है |" (चौकृषि 2)

- **डॉ. भोलानाथ तिवारी** –

  "किसी भी कार्य के करने के विशिष्ट ढंग का नाम शैली है |" (तिवारी 7)

- **डॉ. नगेन्द्र** –

  "जिस प्रकार स्वभाव की अभिव्यक्ति का मार्ग रीति है, उसी प्रकार शील (स्वभाव) की अभिव्यक्ति पद्धति शैली भी हैं और उसके व्युत्पतिपरक अर्थ में भी वैयक्तिकता मूलतः वर्तमान है |" (नगेन्द्र 40)

- **बाबू गुलाबराय** –

  "शैली अभिव्यक्ति के उन गुणों को कहते हैं जिन्हें लेखक या कवि अपने मन के प्रभाव को समान रुप में दूसरों तक पहुंचाने के लिए अपनाता है |" (गुलाबराय 190)

- **डॉ. जवाहर सिंह** –

  "शिल्प-विधि से तात्पर्य किसी कृति के निर्माण की उन साड़ी प्रक्रियाओं तथा रचना पद्धतियों से है, जिनके माध्यम से शिल्पकार या रचनाकार अपनी अमूर्त जीवनानुभूतियाँ, मन प्रभावों तथा विचारों और भावों को मूर्त रूप देकर अधिकाधिक संवेद्य और सौन्दर्यमूलक बनाता है |"(सिंह 1))

- **पंडित करुनापति त्रिपाठी** –

  "शैली उस साधन का नाम है जो रमणीय, आकर्षक, प्रभावोत्पादक रूप से वाक्शक्ति के समस्त सरस तत्वों की अभिव्यक्ति में अभिनव तथा उचित शक्ति का संचार करे"|(त्रिपाठी 23)

उपर्युक्त विवेचन में अलग-अलग विद्वानों ने शैली के संबंध अपने विचार प्रस्तुत किए है जिसमें कुछ मात्रा में भिन्नता दिखाई देती है | शैली साहित्यकार के मस्तिष्क की सच्ची प्रति लिपि है | परिभाषा से स्पष्ट होता है कि आधुनिक युग की सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं उपयोगी विधि शैली है | शैली में लेखक का व्यक्तित्व दृष्टिगोचर होता है | अतः स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि शैली लेखक की कलात्मक उपलब्धि है, जो प्रतिभा की तरह अनायास प्राप्त नहीं हो जाती। उसे अर्जित करना पड़ता है। विश्व विख्यात साहित्यकारों ने शैली को कठोर परिश्रम से अर्जित किया है। शैली के संबंध में कहा जाये तो, साहित्यकार के मानस पर जो चित्र अंकित हो जाता है। वह उसे पाठकों के सामने श्रेय और प्रेय रूप में जब शब्दार्थ के माध्यम से व्यक्त करता है, उसे अभिव्यक्ति या शैली कहा जा सकता है। साहित्यकार की शिक्षा-दीक्षा, उसके संस्कार, उसके मानसिक संगठन आदि का प्रभाव शैली पर अवश्य पड़ता है। वस्तुतः साहित्यकार का व्यक्तित्व उसकी शैली में झलकता है। शैली ही वह सुंदर व्यवस्था है, जिसके माध्यम से साहित्यकार के मानस की हलचल तथा हृदय की अनुभूतियों के द्वारा रचना सफल एवं विशिष्ट बनती है। हिन्दी उपन्यास के प्रारंभिक उपन्यासों में वर्णनात्मक शैली की परंपरा प्रचलित थी। 21वीं सदी तक नये विषय-वस्तु के अनुसार नई-नई शैलियों का प्रयोग प्रारंभ हुआ है | आज कथा साहित्य में अनेक शैलियाँ विकसित हुई हैं जैसे- फ्लैश बैक शैली, विवरणात्मक शैली, आत्मकथात्मक शैली, पत्रात्मक शैली, डायरी शैली, मनोविश्लेषणात्मक शैली, संवादात्मक शैली, नाटकीय शैली, व्यंग्यात्मक शैली इत्यादि।

5.4 21वीं सदी में वृद्ध विमर्श पर केन्द्रित हिंदी कथा साहित्य : शिल्पगत वैशिष्ट्य

यह स्पष्ट है कि 'शैली' एक अभिव्यंजना का प्रकार है | शैली साहित्यिक सौन्दर्य है, शैली चयन है, शैली विशिष्ट भाषिक प्रयोग है | रचना में भाषा यदि वाक् की अभिव्यक्ति है तो शिल्प उस रचना का सौन्दर्य | जब किसी विचार या भाव को अभिव्यक्ति के द्वारा उपर्युक्त मूर्त रूप प्राप्त होता है तभी शैली का उदय होता है | कथा साहित्य में शैली एक महत्वपूर्ण तत्व है | कथा साहित्य में जब विषय वस्तु की आकर्षक और प्रभावशाली तरीके से अभिव्यक्ति होती है तो उसे शैली कहा जाता है | उपन्यास की शैली के विषय में डॉ. अनुपम राजेश लिखते हैं, "उपन्यासकार की अपनी विशिष्ट शैली होती है जिसकी झलक उपन्यास का प्रथम पृष्ठ पढ़ते ही मिल जाती है |" (राजेश 6) लेखक की शैली न केवल कृति की पहचान तय करती है, बल्कि पाठक को कहानी के संग्रहित अनुभव और भावनात्मक परिवेश में भी जोड़ती है | बात कहने के अनेक प्रकार होते हैं, जिनमें से प्रमुख रूप से वर्णनात्मक, पूर्वदीप्ति शैली, आत्मकथात्मक, नाटकीय, विचारात्मकता, भावात्मकता, विवरणात्मकता, संवादात्मकता, आदि विशेष उल्लेखनीय हैं | डॉ. भोलानाथ तिवारी '*भाषा विज्ञान*' नामक पुस्तक में लिखते हैं, "भाषा की सामान्य अभिव्यक्ति पूरे भाषा-समाज की होती है, किन्तु शैली व्यक्ति की या वैयक्तिक होती है | भाषा साझा और सामान्य है, जबकि शैली लेखक या वक्ता की पहचान और व्यक्तिगत प्रभाव का माध्यम है, जो कृति को विशिष्ट और पठनीय बनाती है | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में प्रत्येक साहित्यकारों ने अपनी विशिष्ट शैली के माध्यम से अपने भावों एवं विचारों को अभिव्यक्त किया है |

5.4.1 वर्णनात्मक शैली -

हिंदी साहित्य के कथा प्रस्तुति की यह सर्वाधिक प्रचलित और पुरानी शैली है | पात्रों के चित्रण, दृश्य, परिस्थितियों, घटनाओं, देशकाल का वर्णन आदि वर्णन की प्रधानता वाले कथा साहित्य को वर्णनात्मक शैली कहते हैं | इस प्रकार के कथा साहित्य में कथाकार का उद्देश्य विविध वर्णन करना होता है | लेखक कथा साहित्य में किसी भी दृश्य या पात्र का वर्णन करके सरल ढंग से बढ़ा-चढ़ा कर व्याख्या द्वारा प्रस्तुत करता है | डॉ. सोनिया शिरसाट के अनुसार, “वर्णनात्मक तो कथा-सृजन का अनिवार्य अंग है, जिसके अभाव में शायद ही कोई कहानी या उपन्यास रचा जा सकता है |”(शिरसाट 253) कथा साहित्य में वर्णनात्मक शैली सर्वाधिक प्रचलित और सुविधाजनक होती है | वर्णनात्मक शैली में घटनाओं, कार्यों और परिस्थितियों के वर्णन के साथ-साथ पात्रों का भी वर्णन किया जाता है | उनके स्थूल रूप रंग, ऊँचाई-लंबाई और अवस्था आदि के वर्णन द्वारा पात्रों का परिचय पाठकों से कराया जाता हैं |

ममताजी ने '*दौड़*' उपन्यास में कई शैलियों का प्रयोग करने का प्रयास किया है, वर्णनात्मक शैली, पूर्व दीप्ति शैली, आत्मकथात्मक शैली, नाटकीय शैली इत्यादि । वर्णनात्मक शैली का एक प्रयोग ‘*दौड़*’ उपन्यास में लेखिका ने रेखा और राकेश के बाह्य रूप का वर्णन के लिए किया है | जैसे-

> “दरअसल वे दोनों एक-दूसरे के विलोम थे | राकेश थे लम्बे, तगड़े, सुंदर और हँसमुख | रेखा थी छोटी, दुबली, कमसूरत और कटखनी | बोलते वक्त वह भाषा को चाकू की तरह इस्तेमाल करती थी | उसके इसी तेवर ने राकेश को खींचा था | वह उसके दो-चार कविताओं पर दिल दे बैठा | राकेश के हितैषियों का ख्याल था कि अव्वल तो यह शादी नहीं होगी और अगर हो भी गयी तो छह महीने में टूट जाएगी |” (कालिया 60)

इस वर्णन में हम स्थूलता की ओर और बाह्य से आंतरिकता की ओर विकास देख सकते हैं | शरीर का स्थूल वर्णन ही ऐसा किया जाता है जिससे उसके आंतरिक गुणों का भी परिचय मिलता है | कृष्णा सोबती के ‘*समय सरगम*’ उपन्यास में वर्णनात्मक शैली का प्रयोग उपन्यास के शुरुआत में ही देखने को मिलता है | लेखिका ने घर के वातावरण का चित्रण करने के लिए वर्णनात्मक शैली का प्रयोग किया है | उपन्यास के आरम्भ में लेखिका वर्णन करती है- “खिड़की का परदा तेज हवा में लहराने लगा था | क्या आंधी आने को है ! जाड़े में आँधी ! न...न...नहीं | हाथ बढ़ा पर्दा ग्रिल में खोंस दिया | बाहर देखा | दुपहर की चमकीली पतली धूप हवा के झोंकों में लहराती थी |”(सोबती 7) चित्रा मुद्गल ने अपने उपन्यास ‘*गिलिगडु*’ में वर्णनात्मक शैली का सुंदर प्रयोग किया है | इस उपन्यास में बाबू जसवंत सिंह जब अपने बेटे के पास रहने दिल्ली आते हैं, तो उनके रहने का इंतजाम उनका बेटा नरेंद्र बालकनी में करता है | यहाँ बालकनी का वर्णन दृष्टव्य है | “सलाइडिंग खिड़कियाँ खोलते ही घुसती तेज हवा के साथ सामने थी ‘बी’ बिलडिंग...तीन तारों पर सूखते हवा में फड़फड़ाते...कपड़े |” (मुद्गल 57) निर्मल वर्मा के ‘*अंतिम अरण्य*’ उपन्यास में वर्णनात्मक शैली का प्रयोग बहुत प्रभावी ढंग से किया है | लेखक मेहरा साहब की चिता के जलने का वर्णन इस प्रकार करते हैं |

> "लकड़ियाँ खिल-खिल करके जलने लगती थीं | जब कभी ऊपर उठता हुआ धुआँ बहुत गाढ़ा और सघन हो जाता था, तो अग्नि के सामने बैठे पुरोहित जी चौड़े चाँदी के पतीले में चमच्च डालकर घी का सफ़ेद लौंदा बाहर निकालते और धुन्धुआती लकड़ियों पर डाल देते | बुझती हुई आग फिर से प्रज्ज्वलित होकर धू-धू जलने लगती |"(वर्मा 190)

पूरे उपन्यास में लेखक ने इस शैली का प्रयोग कई पात्रों, दृश्यों, कथा व वातावरण का वर्णन करने के लिए करते हैं | काशीनाथ सिंह ने '*रेहन पर रग्घू*' उपन्यास में शिल्पगत नवीन प्रयोग किए हैं | पूरा उपन्यास वर्णनात्मक शैली में लिखा गया है, बीच-बीच में नाटकीयता की झलक भी मिलती है | उपन्यास के आरम्भ में ही शाम के समय बारिश के मौसम का वर्णन करते हुए लेखक लिखते हैं –

> "आँगन और लान बड़े-बड़े ओलों के पत्थरों से पट गए और बारजे की रेलिंग टूट कर दूर जा गिरी-धड़ाम ! उसके बाद जो मूसलाधार बारिश शुरू हुई तो वह पानी की बूँदें नहीं थीं- जैसे पानी की रस्सियों हों जिन्हें पकड़ कर कोई चाहे तो वहाँ तक चला जाय जहाँ से ये छोड़ी या गिराई जा रही हों | बादल लगातार गड़गड़ा रहे थे – दूर नहीं, सर के ऊपर जैसे बिजली तड़क रही थी; दूर नहीं, खिड़कियों से अन्दर आँखों में | इकहत्तर साल के बूढ़े रघुनाथ भौंचक ! यह अचानक क्या हो गया ? क्या हो रहा है ?"(सिंह 11)

सूरज सिंह नेगी ने अपने उपन्यासों में प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन बहुत सुंदर ढंग से प्रस्तुत करते हैं | पहाड़ी प्रदेश और वहाँ की प्रकृति से लगाव उनके उपन्यास '*वसीयत*' में भी साफ़ झलकता है | उपन्यास का नायक विश्वनाथ अपनी पत्नी के साथ वर्षों बाद अपने गाँव वापस लौटता है | उसकी पत्नी पहली बार पहाड़ों और गाँव की यात्रा कर रही थी | वह पहाड़ों के रास्तों और सौन्दर्य को देखकर अचंभित थी, जिसका वर्णन लेखक ने इस प्रकार किया है –

> "टैक्सी में बैठे-बैठे ऊँची चोटी पर बने सर्पिलाकार रास्तों को देखती तो देखती ही रह जाती और जैसे ही कुछ समय पश्चात टैक्सी उस चोटी पर पहुँच जाती तो वह भौंचक्की सी रह जाती | कभी ऊँची चोटी से नीचे गहरी खाई में बने रास्तों पर स्वयं को पाकर आश्चर्य से भर जाती | पहाड़ी रास्तों पर चलने का यह अद्भुत रोमांच था | कभी बादल उनके साथ चलने लग जाते तो कभी मार्ग को ही अवरुद्ध करते हुए लगते, कभी लगता जैसे पूरा पहाड़ ही उन पर आ गिरेगा, तो कभी तंग घाटी में से उनकी टैक्सी गुजरती |" (नेगी 243)

हृदयेश के 'चार दरवेश' उपन्यास में चार वृद्ध हर शाम एक पुलिया पर मिला करते थे | जिनका वर्णन लेखक अपने उपन्यास में आरम्भ में करते हैं-

> "वे वृद्ध एक बंद सूखे नाले की पुलिया पर बनी फसीलनुमा मुंडेर पर बैठ गये थे | पहले एक वृद्ध आकर बैठा था, फिर दो वृद्ध आगे-पीछे एक अलग रास्ते से प्रकट होकर उधर पहुँच गए थे | फिर एक और वृद्ध एक अन्य रास्ते से नमूदार होकर वहां टिक गया था | उन चार ने ही वहां अपना अपना ठिकाना बना दिया था, काफ़ी समय से |"(हृदयेश 7)

टेकचंद के 'दाई' उपन्यास में वृद्ध रेशम बुआ का बेटा शराब के लिए उससे पैसे मांगता है | पैसों के छीना झपटी में वह रेशम बुआ को धक्का दे देता है जिसके कारण गिर कर वह खाट पकड़ लेती है | रेशम बुआ के अंतिम अवस्था में खाट पकड़ने का वर्णन लेखक इस प्रकार करते हैं –

> "रेशम बुआ मटमैले से सूट सलवार में खाट पर चारों ओर कपड़ों, तकियों की टेक लगाये अधलेटी सी बैठी थी | चेहरा झुर्रियों से भरा हुआ था | मोटे प्लास्टिक फ्रेम का चश्मा | चश्मा जहाँ नाक पर टिकता है, वहाँ धागा लपेट कर गद्दी सी बनाई हुई थी | हाथों में चाँदी की चूड़ियाँ तो पाँव में चाँदी के भारी-भारी छैल-कड़े | लगभग पाव-पाव वजन और रगड़ के कारण टखनो के आस-पास की चमड़ी सख्त और पपड़ियाई हो गयी थी |"(टेकचंद 55)

डॉ. दिलीप मेहरा '*साजिश*' कहानी के मुख्य पात्र देवीलाल और उसके परिवार का वर्णन करते हुए लिखते हैं –

> "आज देवीलाल नौकरी करते-करते साठ साल की उम्र पार के कगार पर थे | जीवन के छत्तीस साल थर्मल पावर स्टेशन की नौकरी करने में गुजार दिये थे | देवीलाल ने पुराने जमाने में कामर्स किया था इसलिए क्लर्क की नौकरी करते-करते सीनियर क्लर्क के ओहदे तक पहुंचे थे | देवीलाल की पत्नी का नाम पार्वती था | उनकी और पत्नी की उम्र में ग्यारह साल का अंतर था | गाँव में अनमेल विवाह होना आम बात थी देवीलाल सरल व शांत स्वभाव होने के कारण घर में हमेशा पार्वती का राज चलता था | दोनों के दाम्पत्य जीवन के दौरान दो बच्चे हुए थे एक लड़की और एक लड़का |"(मेहरा 91)

दिलीप मेहरा जी ने सरल, सहज भाषा के साथ अपनी कहानी में वृद्ध देवीलाल और उसके परिवार का वर्णन कहानी के प्रारंभ में दिया है | घर के सभी सदस्यों के परिचय करने में भाषा शैली पूरी तरह समर्थ हैं | वर्णनात्मक शैली से यह परिचय और भी सरस हो जाता है | डॉ. दिलीप मेहरा 'अग्निदाह' कहानी के मुख्य पात्र मनसुखलाल और उसके परिवार की स्थिति को दिखाया गया है | मनसुखलाल और उसकी पत्नी उषा को वृद्धावस्था में दोनों बेटे अलग-अलग रखते है इसका वर्णन लेखक इस प्रकार करते हैं –

> "मनसुखलाल के बच्चों ने महंगाई की आड़ में वृद्धावस्था में दोनों पति-पत्नी को अलग-अलग कर दिया | यानि मनसुखलाल की पत्नी उषा को लड़के रमेश के यहाँ शिफ्ट होना पड़ा तो मनसुखलाल को छोटे बेटे अमृत के यहाँ | उषा को बड़े बेटे के घर का पूरा काम करना पड़ता था | रमेश की पत्नी अम्बा को पटरानी-ससिंहासन मिल गया था | अम्बा उषा से नौकरानी से भी ज्यादा काम लेती थी |" (मेहरा 110)

यहाँ देख सकते हैं महंगाई के बहाने माँ-बाप को अलग-अलग दोनों बेटों के घर रहना पड़ता है | जिसका वर्णन लेखक बड़े मार्मिक ढंग से करते हैं | एस. आर हरनोट की कहानी 'बिल्लियाँ बतियाती हैं' में लेखक ने वर्णनात्मक शैली का प्रयोग करके अम्मा के सुबह उठने के बाद उसके दैनिक क्रियाकलापों का प्रभावशाली ढंग से वर्णन किया है | सुबह के वातावरण का चित्रण करने के लिए भाषा पूरी तरह समर्थ है |

"अम्मा का झगड़ा शुरू हो गया है | अपने आप से | दियासलाई की डिब्बियां से | ढिबरी से | चूल्हे में उपलों के बीच ठूंसी आग से और बाहर-भीतर दौड़ती बिल्लियों से | यही सब होता है जब अम्मा उठती है | वह चार बजे के आसपास जागती है | ओबरे में पशु भी अम्मा के साथ ही उठ जाते हैं | आँगन में चिड़ियों को भी इसी समय चहकते सुना जा सकता है और बिल्लियों की भगदड़ भी अम्मा के साथ शुरू हो जाती है | यह नहीं मालूम कि अम्मा पहले जागती है या कि अम्मा की गायें याकि चिड़िया या फिर बिल्लियाँ | कई बार अम्मा उठते ही अंधेरे से लड़ पड़ती है | हाथ अँधेरे की परतों पर तैरते रहते हैं | हाथ सिरहाने के नीचे जाता है पर दियासलाई नीचे गिर जाती है | ऊंघ में वह बीड़ी तो पी जाती है पर दियासलाई को ऊपर उठाने की हिम्मत नहीं हो पाती और आँख लग जाती है |"(हरनोट 9)

इस कहानी की भाषा में साधारण बोल-चाल के शब्दों का प्रयोग किया गया है | हिमाचल के आंचलिक शब्दों का पुट भी यत्र-तत्र हुआ है | वर्णनात्मक शैली भाषा का एक अत्यंत महत्वपूर्ण उपकरण है जो किसी भी स्थान, दृश्य, घटना या भावना को जीवंत रूप से प्रस्तुत करती है | यह शैली न केवल पाठकों को जानकारी प्रदान करती है, बल्कि उन्हें अनुभव करने, महसूस करने और उस घटना या दृश्य से जुड़ने का अवसर भी देती है | 21वीं सदी के हिंदी कथासाहित्य में वर्णात्मक शैली को सभी लेखकों ने बड़े प्रभावी ढंग से प्रयोग किया है |

5.4.2 पूर्व-दीप्ति शैली/ (फ्लैश बैक शैली)

पूर्व-दीप्ति शैली (फ्लैश बैक) शैली आधुनिक कथा-लेखकों में अधिक लोकप्रिय होती जा रही है | घटनाओं की वर्णनात्मता से अद्भुत एकरसता, जड़ता व नीरसता को तोड़ने हेतु इस शैली का प्रयोग कई कहानियों और उपन्यासों में किया जाता है | इसमें पात्र भूतकालीन स्मृतियों में खो जाता है और बाद में उस संदर्भों को आगे की कथा वस्तु में जोड़ता जाता है | वर्तमान जिंदगी जीते हुए पात्र अपने विगत जीवन की घटना का उल्लेख जब करते हैं, तब उसे 'पूर्व-दीप्ति' या 'स्मृतिपरक' शैली कहा जाता है | इस सम्बन्ध में डॉ प्रेम भटनागर लिखते है –

"पूर्व-दीप्ति विधि विश्लेषणात्मक-विधि का ही एक नया रूप है | इसमें उपन्यासकार कथा को पात्रों के मस्तिष्क में उठी हुई स्मृति लहरों के रूप में प्रस्तुत करता है | कथा आत्म-विश्लेषणात्मक शैली में प्रस्तुत की जाती है | उपन्यासकार वर्तमान से सम्बद्ध या उसे सार्थकता प्रदान करने वाली जीवन स्थिति को पात्रों के स्मृति खंडों के रूप में बिखेरता चलता है | पात्र कथा कहते-कहते अकस्मात प्रसंग के सूत्र को किसी विगत घटना के सूत्र से जोड़ देते है, जिससे कथा की गति बनी रहती है |"(भटनागर 57)

पूर्व-दीप्ति शैली में पात्र उन घटनाओं को व्यक्त करता है जो घटित हुई हैं | इसमें बीती हुई बातों को पुन: याद किया जाता है | इसमें पात्र की स्मृति में कुछ घटनाओं को दिखाकर, उसकी याद को तरोताजा कर प्रस्तुत किया जाता है | कथावस्तु को वर्तमान से एकदम भूत काल में ले जाना और महत्वपूर्ण संदर्भों से उसे क्रमबद्ध करना न केवल कहानीकार के उद्देश्य की पूर्ति में सहायक है अपितु उसके शिल्प रूप में भी आकर्षक उत्पन्न कर देता है | डॉ. त्रिभुवन सिंह लिखते हैं –

> "इसमें उपन्यासकार चरित्र से संबंधित उन घटनाओं को ही प्रस्तुत करता है जिनके संबंध में वह संदर्भ विशेष में अथवा घटना विशेष के कारण सोचने जाता है | वे वास्तविक घटनाएँ होती है और चरित्र के जीवन में घटी होती है | निश्चित रूप से वह घटनाएँ अतीत की होती हैं | फ्लैश का अर्थ होता है पीछे | 'फ्लैश बैक' अथवा पिछले जीवन को प्रकाशित करना |"(सिंह 205)

अंत: फ्लैश बैक या पूर्व-दीप्ति शैली में अतीत की घटनाओं का वर्णन स्मृति तरंगों के रूप में होता है | इसलिए कहा जा सकता है कि पूर्व में घटित घटनाएँ जब स्मृति के रूप में पात्र के मन में सजीव हो उठती है उसे पूर्व-दीप्ति शैली कहा जाता है |

ममता कालिया के '*दौड़*' उपन्यास में 'पूर्व-दीप्ति' शैली का प्रयोग पवन के संदर्भ में किया गया है | पवन अपने माँ-बाप, छोटे भाई व अपने शहर से बहुत दूर दूसरे शहरों में नौकरी करता है | वह अपने कार्यालय में बिजली जाने के बाद माउस की तरफ देखते यह सोचने लगता है नाम है चूहा पर कोई चपलता नहीं है | बिना बिजली के यह सिर्फ प्लास्टिक का खिलौना है | इसी माउस को देखते हुए उसे उसकी और छोटे भाई सघन की बचपन की स्मृति याद आ जाती है | जब वह अपने भाई सघन को याद करता है | उस समय का एक उदाहरण देख सकते है-

> "पवन को यकायक अपना छोटा भाई सघन याद आया | रात में बिस्कुटों की तलाश में वे दोनों रसोईघर में जाते | रसोई में नाली के रास्ते बड़े-बड़े चूहे दौड़ लगाते रहते | उन्हें बड़ा डर लगता | रसोई का दरवाजा खोलकर बिजली जलाते हुए छोटू लगातार म्याऊँ-म्याऊँ की आवाजें मुँह से निकालता रहता कि चूहे यह समझे कि रसोई में बिल्ली आ पहुँची है और वे डरकर भाग जाएँ | छोटू का जन्म भी मार्जार योनि का है | पवन ज्यादा देर स्मृतियों में नहीं रह पाया " (कालिया 9)

'*दौड़*' उपन्यास में 'पूर्व-दीप्ति' शैली का दूसरा उदाहरण पवन की माँ रेखा के संदर्भ में देख सकते हैं | पवन की तरह जब छोटा बेटा सघन भी घर से दूर विदेश में नौकरी करने जाता है, तब उनकी माँ बेटों की याद में पुरानी स्मृतियों में खो जाती है | इसका उदाहरण देख सकते है-

> "उसका मन बार-बार बच्चों के बचपन और लड़कपन की यादों में उलझ जाता | घूम-फिरकर वही दिन याद आते जब पुन्नू छोटू धोती से लिपट-लिपट जाते थे | कई बार तो इन्हें स्कूल भी लेकर जाना पड़ता क्योंकि वे पल्लू छोड़ते ही नहीं | किसी सभा-समिति में उसे आमंत्रित किया जाता तब भी एक-न-एक बच्चा साथ जरूर चिपक जाता | वह मजाक करती, "महारानी लक्ष्मीबाई की पीठ पर बच्चा दिखाया जाता है, मेरा ऊँगली से बंधा हुआ |" क्या दिन थे वे !"(कालिया 76)

बचपन में बच्चों के लिए सब कुछ उनकी माँ होती है | माँ के साथ उठना-बैठना, खाना-सोना, हर कार्यक्रम में माँ के साथ लिपटे रहना, लेकिन बच्चे जैसे युवा हो जाते है आजाद पक्षी की तरह उड़ जाते है | माँ उनकी यादों के सहारे अपना जीवन बिताने को मजबूर हो जाती है | अंत: उपन्यास में विविध शैलियों को उचित स्थान पर प्रयोग किया है | निर्मल वर्मा के '*अंतिम अरण्य*' उपन्यास में स्मृति शैली का प्रयोग अन्ना जी के संदर्भ में देख सकते है | जब मेहरा साहब लकवाग्रस्त हो जाते है तब अन्ना जी उनसे मिलने पहुँच जाती है | मेहरा साहब को इस हालत में देखकर अन्ना जी को पुराने दिन याद आ जाते हैं – "बहुत साल पहले मैं उन्हें सड़क

पर देखा तो करती थी, पर उनसे बात का हौसला कभी नहीं हुआ | सैर करते वह मुझे मिल जाते तो मैं मुँह मोड़कर पहाड़ों का नजारा देखने लगती, ताकि उनकी नजरों का सामना न करना पड़े |"(वर्मा 171) अन्ना जी पुराने दिन याद करती और साथ ही अंदर कमरे में लेटे मेहरा साहब को देखती हुई सोचती क्या इसी तरह हर आदमी का अंत आता है | काशीनाथ सिंह के उपन्यास '*रेहन पर रग्घू*' में रघुनाथ बारिश के मौसम को देखकर बचपन की स्मृतियों में खो जाते हैं | रघुनाथ बारिश को देखकर सोचते है कि ऐसा मौसम उन्होंने पहले कब देखा था | दिमाग पर जोर लगाने पर उन्हें साठ-बासठ साल पहले की घटना याद आती है | लेखक रघुनाथ के माध्यम से स्मृति शैली का प्रयोग करते हुए लिखते हैं –

> "वे स्कूल जाने लगे थे – गाँव से दो मील दूर ! मौसम खराब देख कर मास्टर ने समय से पहले छुट्टी दे दी थी | वे सभी बच्चों के साथ बगीचे में पहुंचे ही थे की अधंड़ और बारिश और अँधेरा ! सबने आम के पेड़ों के ताने की आड़ लेनी चाही लेकिन तूफान ने उन्हें तिनके की तरह उड़ाया और बगीचे से बाहर धान के खम्धों में ले जाकर पटका ! किसी के बस्ते और किताब कापी का पता नहीं ! बारिश की बूँदें उनके बदन पर गोली के छर्रों की तरह लग रही थी |"(सिंह 12)

डॉ. सूरज सिंह नेगी ने अपने उपन्यासों में इस शैली का भरपूर प्रयोग किया है | '*वसीयत*' उपन्यास में लेखक ने फ्लैश बेक शैली का प्रयोग सम्पूर्ण उपन्यास में किया है | उपन्यास के प्रमुख वृद्ध पात्र विश्वनाथ के माध्यम से पूर्व दीप्ति शैली बखूबी प्रयोग किया है | अपने बेटे राजकुमार के व्यवहार से दुखी विश्वनाथ अपने वृद्धावस्था में अपनी पुरानी यादों में खो जाते है | कभी दादाजी, बाबू जी और माँ का प्यार, कभी गाँव में बिताया हुआ समय, कभी कॉलेज के पुराने दिन, नौकरी में बिताया समय, कभी अपने बेटे राजकुमार का बचपन आदि कई स्मृतियाँ उसकी आँखों के सामने आकार जीवंत हो जाती | वह कई घंटों तक उन स्मृतियों में खो जाते तथा अपने माँ-बाबूजी के साथ किये गए व्यवहार के लिए पश्चाताप करते हैं | '*वसीयत*' उपन्यास में जब सुधा एल्बम में अपने बेटे राजकुमार की बचपन की फोटो देखती है तो वह अतीत की स्मृतियों में खो जाती है –

> "सुधा को वह पुरानी घटना याद हो आई कि किस तरह एक दिन सुबह ऑफिस जाते समय जैसे ही विश्वनाथ ने राजकुमार को अपनी गोद में उठाया तो उसने कुछ ही देर में उसकी कमीज गीला कर दिया | सुधा अंदर कमरे में जाकर देर तक हँसती रही और कैमरा लाकर यादों को कैमरे में कैद कर लिया |" (नेगी 48)

डॉ. सूरज सिंह नेगी के '*रिश्तों की आँच*' उपन्यास में रामप्रसाद जब भी दुखी होता तब वह अपनी पुरानी स्मृतियों में डूब जाता है | रामप्रसाद पिता की मौत के बाद बड़े संघर्षों के साथ अपनी बहन ममता व भाई रमेश की पढ़ाई-लिखाई की जिम्मेदारी उठाता है | नौकरी के साथ अतिरिक्त समय निकाल कर निजी कंपनी में काम करके उन दोनों की उच्च शिक्षा का खर्च निकालता है | पढ़ाने के साथ उनकी शादी भी करवा देता है | अपनी बहन की शादी खूब धूम-धाम से करवाता है | लेकिन उसे तब आघात पहुँचता है जब उसकी बहन उससे कहती है – "क्या भैया ! इतना खर्च तो किया ही था एक कार भी देते तो कितना अच्छा होता|"(नेगी 48) बहन की बात सुन मानो रामप्रसाद की आँखों में अँधेरा छा गया हो | उसे लग रहा था जैसे किसी ने उसके मुँह पर जोरदार थप्पड़ मारा हो | जिस बहन की शादी के लिए उसने ओवर टाइम काम किया, साथियों से उधार लिया, जी.पी.एफ. व इंश्योरेंस से पैसे निकलवाए

वह बहन उसकी स्थिति समझने की बजाय उससे इस तरह मांग करने लगी | इसी तरह का व्यवहार उसका छोटा भाई रमेश भी करता है, जब वह डॉक्टर बन जाता है | वह शहर के किसी बड़े अस्पताल के मालिक की बेटी डॉ. नेहा से शादी करके घर जमाई बनकर रहने चला जाता है | उसने इस संबंध में माँ और रामप्रसाद से पूछना भी उचित नहीं समझा सीधा निर्णय सुना दिया था | रामप्रसाद रमेश के इस अप्रत्याशित व्यवहार से स्तब्ध रह जाता है | बहन के द्वारा दिए जख्म अभी भरे नहीं थे कि भाई ने और जख्म दे दिए | रामप्रसाद अब नितांत अकेला महसूस कर रहा था | भीतर ही भीतर घुटता और पुरानी स्मृतियों में खो जाता –

> "उसे गाँव का वह जीवन याद हो आया जब वह अपने गरीबी के दिनों में माँ और छोटे भाई-बहिन के साथ ख़ुश था | एक-दूसरे के लिए जीना, एक-दूसरे के बारे में सोचना, यही सब दुनिया थी; जहाँ यद्यपि गरीबी थी लेकिन एक-दूसरे के प्रति मन में प्रगाढ़ प्रेम था |...यह सब याद कर रामप्रसाद भाव विभोर हो उठा |"(नेगी 52)

रामप्रसाद बहिन और भाई के इस व्यवहार को सोचकर दुखी होता है | वह सोचता क्या सफलता और चकाचौंध आदमी को इस कदर अंधा कर देता है, कि वह अपने व परायों के बीच अंतर भूल जाता है | थोड़ी सी सफलता मनुष्य को इतना स्वार्थी बना देती है कि उनके दुःख-दर्द में साथ देने वालों को भी भूल जाते हैं | कृष्णा सोबती ने '*समय सरगम*' उपन्यास में इस शैली का प्रयोग किया है | 'समय सरगम' में आरण्या वृद्धावस्था में अपने बचपन और युवावस्था को पूर्वदीप्ति शैली के माध्यम से पुनः जीती है | निर्मल वर्मा के साहित्य में समृतियों का अत्यधिक महत्व है | निर्मल वर्मा ने '*अंतिम अरण्य*' उपन्यास में स्मृतियों को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया गया है | इस उपन्यास में अतीत की घटनाओं की कथा है | उपन्यास में कथाकार की स्मृतियों में ही मेहरा साहब की स्मृतियाँ जीवित हो उठती हैं | एस.आर. हरनोट की कहानी 'बिल्लियाँ बतियाती हैं' में अम्मा के माध्यम से लेखक ने 'पूर्वदीप्ति शैली' का प्रयोग किया है | अम्मा का बेटा कई वर्षों बाद जब शहर से गाँव सिर्फ पैसों के लिए आता है | बेटा सीधा कमरे चला जाता है, खाना भी शहर से बाँध के लाता है | तब अम्मा बहुत दुखी होती है, वह भी खाना नहीं खाती | अम्मा पुरानी स्मृतियों में खो जाती है, जब वह बच्चा था | "अम्मा | छोटा सा था | स्कूल से आता...बाहर बस्ता फेंकता...पीठ पर चढ़ जाता | हाथ भी नहीं धोता...रोटी खाने की जल्दी लगी रहती...अम्मा आधी रोटी और मक्खन देती...खाकर सो जाया करता |"(हरनोट 21) हरनोट जी की कहानी 'बीस फुट के बापू जी' में चाचू के माध्यम इस शैली का प्रयोग किया है | चाचू एक दिन अपनी पुरानी स्मृतियों में खो जाता है | वह याद करता है किस तरह वह गाँव से शिमला आया और वहाँ उसने घोड़े का काम सीखा –

> "तेरह का होगा जब शिमला चला आया था | आज के और उस ज़माने के शिमले में कितना अंतर है | चाचू सुनाने लगे तो महीनों बीत जाएं | पिता एक सड़क दुर्घटना में मर गए थे | चाचू को माँ बताती थी | एक ही लड़का था | जमीन कम थी | पर बहुत अच्छी थी | चाचू अपने गाँव के रिश्तेदार के साथ शिमला काम के लिए आ गया था | रिश्तेदार ने चाचू को घोड़े का काम सिखाया | एक दिन वह किसी बीमारी से मर गया | चाचू अकेला पड़ गया | पर कुछ लोगों से जान-पहचान हो गई थी | उसका घोड़ा चाचू ने संभाल लिया था |"(हरनोट 30)

फ्लैश बेक शैली एक प्रभावी साहित्यिक शैली है, जो लेखक को अतीत की घटनाओं को वर्तमान के संदर्भ में प्रस्तुत करने की सुविधा देती है | यह शैली कथासाहित्य को अधिक रोचक, रहस्यमय और गहरी बनाती है, क्योंकि यह पात्रों की मानसिक स्थिति और उनके अतीत को उजागर करती है | 21वीं सदी के हिंदी साहित्यकारों ने अपने कथा साहित्य में स्मृति के छिटपुट चित्रों को बीच-बीच में संजोकर कथानकों को गतिशील बनाने का प्रयास किया है |

5.4.3 आत्मकथात्मक शैली -

इस शैली को 'मैं' शैली भी कहा जाता है | इस शैली में लेखक 'मैं' के माध्यम से साहित्य लिखता है या कथा सुनाता है | प्रथम पुरुष की ओर से जो कथा प्रस्तुत की जाती है, उसे ही आत्म कथात्मक शैली कहा जाता है | कृष्णलाल के अनुसार,

> "इस शैली में सारी कहानी प्रथम पुरुष 'मैं' के माध्यम से कही जाती है | इस प्रणाली से जहाँ लेखक कहानी के वस्तु विन्यास की जटिलताओं से बाख जाता है, स्वाभाविक विश्लेषण द्वारा पाठकों से सहज आत्मीय स्थापित कर लेता है, वहीं एक ही पात्र की प्रमुखता के कारण दूसरे पात्रों के साथ कहानी में न्याय नहीं हो पाता |"(लाल 346)

इस शैली में कथा का नायक या नायिका स्वयं अपनी कथा कहता है | कथा साहित्य में पात्र के मन: भावों का स्वरूप दर्ज करने के लिए इस शैली का प्रयोग होता है | साहित्यकार अपने वैयक्तिक अनुभवों की जब प्रकट करता है तब उसे आत्म कथात्मक शैली कहते हैं | कथा साहित्य में कथाकार अपने मुख से कुछ भी नहीं बोल सकता और उसे जो भी कहना है वह चरित्रों के माध्यम से ही नहीं, बल्कि चरित्रों के रूप में ही कहता है | आत्म कथात्मक शैली की सबसे बड़ी विशेषता है कि उसके चरित्र अधिक विश्वसनीय होते हैं, क्योंकि उनमें कथाकार की अपनी अनुभूति की तीव्रता निहित रहती है | आत्म कथात्मक शैली में पात्र स्वयं निजी चरित्र पर प्रकाश डालता है | इसमें सम्पूर्ण कहानी को कोई पात्र इस प्रकार प्रस्तुत करता है, जैसे अपनी अनुभूति को प्रत्यक्ष रूप में प्रस्तुत कर रहा हो | इस शैली में पात्र अपने बारे में जो कुछ कहता है, उसे आत्म कथात्मक शैली के तहत रखा जाता है | इस शैली में रचनाकार अपनी रचना में किसी पात्र का स्थान स्वयं ग्रहण कर लेता है तथा प्रत्येक घटना का वर्णन करता चलता है | लक्ष्मीनारायण लाल के अनुसार- "इस शैली के अंतर्गत सम्पूर्ण कहानी का विकास घटनाओं और द्वंद्वों के सहारे होता है | यही कारण है कि इस शैली में स्वगत भाषण के तत्व आते है |" (लाल 247) अंत: कह सकते हैं कि इस शैली में कथा का विकास घटनाओं और द्वंद्वों द्वारा होते हुए 'मैं' परक तत्व रूपायित होता है | इस शैली में कथा उत्तम पुरुष की ओर से प्रस्तुत की जाती है |

ममता कालिया ने 'दौड़' उपन्यास में आत्म कथात्मक शैली का प्रयोग किया गया है | इस उपन्यास में सघन कहता है- "मेरी जैसी भाभी कभी किस को न मिली है न मिलेगी |" (कालिया 62) आत्म कथात्मक शैली का दूसरा प्रयोग 'दौड़' उपन्यास में स्टैला के संबंध में हैं- "मैं तो बस कैलोरी गिन लेती हूँ और आँख मूंद कर खाना निगल लेती हूँ |" (कालिया 62) कृष्णा सोबती के *'समय सरगम'* उपन्यास में यत्र-तत्र आत्म कथात्मक शैली का प्रयोग हुआ है | इस उपन्यास में ईशान अपने बारे अभिव्यक्ति कर रहा है-

> "आरण्या, मैं कई बार उस क्षण अटक जाता रहा हूँ | क्या और कैसे देख रही थी माँ हम दोनों में | शायद पति के पुराने स्वरूप में इस नई भंगिमा को जैसे समझ न पा रही हो | क्या मेरे सीधे-सादे सहज पति भी इस पत्नी को ऐसे ही गहरे भाव

> से जीते रहेंगे | मेरे पिता जैसे सीधा-सादा सधुक्कड़ी पति जो बार-बार घर छोड़कर पहाड़ों की ओर मुंह कर लेता था और लौट-लौट कर वापिस आता, उन्हें लेकर मेरी माँ न जाने क्या-क्या सोचती रहती होगी |"(सोबती)

यहाँ ईशान अपने विचारों से आरण्या को अवगत करवा रहा है | वह अपने माता-पिता के संबंधों का जिक्र कर रहा है | उसे अपने से जोड़ने का प्रयास कर रहा है | यहाँ 'मैं' शैली का प्रयोग हुआ है | इस शैली का अन्य प्रयोग आरण्या के संदर्भ में देख सकते हैं –

> "यह तो मैं ही हूँ | मैं ही अंदर से झाँक रही हूँ | नहीं...नहीं...ऐसे कैसे ! मैं तो बाहर खड़ी हूँ न ! ठीक से देखो आरण्या, क्या यह झुर्रियों वाला मुखड़ा तुम्हारा नहीं है ? है तो ! पर ऐसा होने से क्या हुआ ! हम तो हर पल बड़े होते रहते हैं न !"(सोबती 8)

आत्मकथात्मक शैली में रचनाकार कथा के नायक-नायिका का अथवा अन्य किसी भी पात्र का स्थान स्वयं लेकर कथा में संयोजित प्रत्येक घटना का वर्णन स्वयं करता चलता है | चित्रा मुद्गल के '*गिलिगडु*' नामक उपन्यास में बाबू जसवंत सिंह महसूस करते हैं – "उन्हें याद है सपनों की उपेक्षा | जिसके दंश को ...विस्मृत नहीं कर पाए | सपनों की विमुखता उन्हें ...झेलनी पड़ी | सपनों ने सोचा होगा – बूढ़ों की नींद में आकर उनके पोपले..खराटे झेलना उनके वश का नहीं |" (मुद्गल 93) निर्मल वर्मा अपने उपन्यासों में आमतौर पर आत्मकथात्मक शैली का प्रयोग करते हैं | वे जो कुछ अनुभव करते हैं, उसे पाठकों के सामने रख देते है | उपन्यास '*अंतिम अरण्य*' का प्रारम्भ तो प्रथम और तृतीय पुरुष से ही होता है – "वह आ रहे हैं, मैं उन्हें दूर से देख सकता हूँ |" (वर्मा 9) इस उपन्यास में निर्मल वर्मा की आत्मकथात्मक शैली पाठक को उस संवेदना में बाँध देती है | डॉ. सूरज सिंह नेगी के '*नियति चक्र*' उपन्यास में आत्म कथात्मक शैली का प्रयोग किया गया है | नेगी जी डॉ. अवस्थी के माध्यम से पूरे उपन्यास की कथा प्रस्तुत करते हैं | डॉ. अवस्थी की पहली पोस्टिंग अमरपुर के एक प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र में होती है | जिस गाँव में सेवा करने पर उसे अफसोस होता है वहीं कुछ साल सेवा करने के बाद उनका जुड़ाव उस जगह से हो जाती है | इस जुड़ाव के बारे में वे कहते है- "अमरपुर के प्रत्येक स्थान, स्कूल, पार्क, बावड़ी, सरकारी संस्थान यहाँ तक कि सभी लोगों से मेरा सीधा जुड़ाव हो गया था | मैं स्वयं को केवल चिकित्सा सेवा तक सीमित न रखकर उन साथ ऐसा घुल-मिल गया कि जैसे मैं वहीं का बाशिंदा हूँ |"(नेगी 26) आत्मकथात्मक शैली का प्रयोग भी 21वीं सदी के वृद्ध विमर्श पर आधारित हिंदी कथा साहित्य में देखने को मिलता है |

5.4.4 नाटकीय शैली -

नाटकीय शैली के बारे में डॉ. टण्डन का विचार है- "उपन्यास क्षेत्र में नाटकीय शैली सामान्य रूप से तीन रूपों में विकसित हुई हैं | ये रूप हैं- रंगमंचीय नाटकीय पद्धति, यूरोपीय संघर्षात्मक पद्धति तथा ओजपूर्ण संवादात्मक पद्धति |" (मेहरा 274) प्रेम भटनागर लिखते हैं – "परिस्थिति, घटना और चरित्र का एक दूसरे के संघात में उद्घाटन करने वाले उपन्यास अभिनयात्मक अथवा नाटकीय शिल्प विधान के अंतर्गत आते हैं | (भटनागर 59) नाटकीय शैली एक ऐसी लेखन शैली है जो घटनाओं और संवादों के माध्यम से कहानी को प्रस्तुत करती है | इस शैली का उपयोग विशेष रूप से तब किया जाता है जब लेखक को पात्रों के संघर्ष,

संवेदनाओं और घटनाओं को सीधे और सजीव रूप में प्रस्तुत करना हो | ममता कालिया के 'दौड़' उपन्यास में अनेक नाटकीय शैली का प्रयोग किया गया है | पवन, सघन और स्टैला के निम्नलिखित वार्तालाप उसका श्रेष्ठ उदाहरण है |

> "कोई लड़की देख रखी है क्या ?" रेखा ने कहा "एक हो तो बताऊँ | तुम आना तुम्हें सबसे मिलवा दूँगा |" "पर शादी तो एक से ही करनी होती है |" "पवन हँसा | भाई की लिपटता हुआ बोला, "जान टमाटर तुम कब आओगे?" "पहले अपना कम्प्यूटर तो बना लूं | "इसमें तो बहुत दिन लगेंगे |"(कालिया 50)

पात्रों के संवाद उनके व्यक्तित्व, विचारधारा और भावनाओं को अधिक स्पष्टता से प्रस्तुत करते हैं | इस शैली के माध्यम से पाठक या दर्शक पात्रों के साथ गहरे स्तर से जुड़ता है |

5.4.5 विश्लेषणात्मक शैली

विश्लेषणात्मक शैली किसी विषय, घटना, या विचार का गहनता से अध्ययन और विश्लेषण किया जाता है | यह शैली तर्क प्रधान होती है | इस शैली में कथा की स्थूलता की अपेक्षा, सूक्ष्मता पर अधिक ध्यान दिया जाता है | डॉ प्रेम भटनागर लिखते है - "विश्लेषणात्मक शिल्प-विधि द्वारा उपन्यास की घटनाएं बाह्य संसार से हटकर मनस्तत्व में प्रवेश कर लेती है |..अत: उनमें सूक्ष्मता आ जाना अनिवार्य है |"(भटनागर 47) अमूर्त तथा सूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति के लिए यह शैली उपयुक्त होती है | इसमें पात्रों के विचारों के विवेचन तथा उनके विश्लेषण को प्रमुखता से दर्शाया जाता है | व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक स्थितियों के विश्लेषण के साथ-साथ जीवन के आदर्श और यथार्थ पर अधिक जोर दिया जाता है | साहित्यिक रचनाओं में चित्रित घटनाओं और प्रसंगों के अनुसार, भावों को विश्लेषित करने वाली शैली को विश्लेषणात्मक शैली कहा जाता है | सूरज सिंह नेगी के '*वसीयत*' उपन्यास में इस शैली के दर्शन देख सकते हैं | इस उपन्यास में विश्वनाथ का डॉक्टर बेटा राजकुमार उनके साथ नहीं रहता है | वह अपने माँ-बाप को सूचना दिए बिना विदेश में एक लड़की से विवाह कर लेता है | इससे उसका पिता विश्वनाथ बहुत दुखी हो जाता है और उसके मस्तिष्क में तर्क आरम्भ हो जाते हैं –

> "मैं कौन सा उसे रोक रहा था, कम से कम एक बार हमसे मिल तो लेता | शादी मनपसंद की कर ली तो बहू को आशीर्वाद लेने हमारे पास ले आता | लेकिन तभी मन के कोने से आवाज आती, आखिर वह भी तो किसी माँ-बाप का बेटा था | उसके माँ और बाबूजी उसकी राह ताकते-ताकते कितने परेशान हुए होंगे, उसके इंतजार में उनको कितनी रातों की नींद का त्याग करना पड़ा होगा |" (नेगी 45)

अंतर्जगत के चित्रांकन में इस शैली का सर्वाधिक प्रयोग होता है | द्वंद्व ग्रसता तथा ऊहापोह की स्थिति में लेखक मन की अवस्था का विश्लेषण करता है | मनुष्य के अंतर्जगत की उथल-पुथल को दर्शाने के लिए इस शैली का प्रयोग किया जाता है |

5.4.6 डायरी शैली

इस शैली में व्यक्ति के अनुभव, अनुभूति संक्षिप्त रूप में प्रकट होती हैं | लेखक अपने व्यक्तिगत अनुभवों, विचारों, भावनाओं, घटनाओं और अनुभवों को दिन-प्रतिदिन के आधार पर रिकॉर्ड करता है | इसमें लेखक अपने विचारों, चिंताओं और सुख-दुख को स्वतंत्र रूप से व्यक्त करता है | डायरी किसी भी विषय पर लिखी जा सकती है | डॉ. सूरज सिंह नेगी ने अपने उपन्यासों में इस शैली का भरपूर प्रयोग किया है | डायरी उनके उपन्यास में सबसे महत्वपूर्ण निर्जीव पात्र की भूमिका निभाती हैं | '*वसीयत*' उपन्यास में विश्वनाथ के मन में पड़ चुकी गलतफहमी की गाँठ को खोलने में डायरी महत्वपूर्ण योगदान देती है | डायरी के माध्यम से साहित्यकार ने पिता की उन भावनाओं को पाठकों के सामने रखा है जो एक पिता अपने पुत्र विश्वनाथ के सामने नहीं कह पाता | विश्वनाथ के शहर और फिर विदेश जाने से उनके पिता अकेले पड़ जाते हैं | विश्वनाथ के पिता उनसे बहुत प्यार करते हैं, लेकिन उनसे कभी कह नहीं पाते, इसलिए वे अपनी सारी भावनाएं डायरी में लिख देते हैं | डायरी के पहले पन्ने में वे लिखते हैं - "पुत्र की स्मृति में पिता के दिल से निकलने वाले शब्दों का संकलन" (नेगी 161) विश्वनाथ अपने वृद्धावस्था में पिता की इस डायरी को पढ़ता है | डायरी के हर एक पन्नों में पिता की विवशता, प्यार व संवेदनाएं साफ़ दिखाई पड़ती है | तीसरे पन्ने में वे अपनी विवशता का वर्णन करते हुए लिखते है-

> "आज मेरा बेटा मुझसे रूठकर शहर चला गया है, उसका रूठना भी अपनी जगह ठीक है, कहता था विदेश जाकर उच्च शिक्षा प्राप्त करूँगा और एक दिन बड़ा आदमी बनूँगा | मेरी विवशता यह है कि उसे विदेश भेजने के लिए मेरे पास पर्याप्त राशि नहीं है | यों तो उसी की नज़र में नहीं अपितु सबकी नजर में मैं बहुत बड़ा जमींदार हूँ | खूब खेती है, कुछ जमीन बेच कर बेटे की इच्छा पूर्ति कर सकता हूँ लेकिन सच्चाई यही है कि अधिकांश जमीन गिरवी रखी है और जो कुछ बची है उसमें होने वाले अनाज को बेचकर रानीखेत में बाज्यू द्वारा स्थापित वृद्ध एवं असहाय आश्रम में रह रहे वृद्धों व असहायों का भरण पोषण होता है |"(नेगी 160)

विश्वनाथ जब डायरी को पढ़ता है, तब अपने पिता के प्रति अपनी सोच पर आत्मग्लानि से भर जाता | वह पिता के विदेश में न भेजने से जीवन भर उनसे नाराज व दूर रहा | माँ-बाप के प्यार व विवशता को समझने का प्रयास भी नहीं किया | आज डायरी के पढ़ने से सच्चाई सामने आई | अपने बाबूजी की मजबूरी व अच्छे कार्य के उद्देश्य के प्रति नतमस्तक हो गया | अगली सुबह विश्वनाथ डायरी के अगले पन्ने पढ़ता है | जिसमें लिखा था- "विश्वा के जाने के बाद अकेला सा हो चूका हूँ, मुझसे अधिक चिंता उसकी ईजा करती है, माँ है ना आखिर | कलेजे के टुकड़े को अपने से अलग नहीं होने देना चाहती है..|" (नेगी 162) विश्वनाथ डायरी पढ़ते-पढ़ते आंसुओं से भीग जाता | कुछ देर उठकर टहलने लगता और पुनः डायरी के पन्ने पलटने लगता | जब विश्वनाथ के अफसर बनने की सूचना उसके माँ-बाप को मिलती है तो उसकी माँ की खुशी और वात्सल्य को उसके पिता निम्नलिखित शब्दों के माध्यम से डायरी में व्यक्त करते हैं –

> "विश्वा की ईजा तो खुशी से फूली नहीं समाई | पूरे गाँव में यह समाचार दे आयी |..कमर दर्द के मारे इधर-उधर आना-जाना भी बंद कर दिया था | आज उसी हालत में पूरे गाँव में घूम कर आई है, यही तो वात्सल्य और ममता की शक्ति है |" (नेगी 164)

विश्वनाथ डायरी के पन्ने पलटते-पलटते इतना भाव विभोर हो गया कि उसका पूरा चेहरा आंसुओं से भर गया | वह माँ-बाप के साथ बिताए बचपन के दिनों में खो जाता | उन पुराने दिनों को याद करके जी भर आंसू बहाता | अपने किए पर खूब पश्चाताप करता |उपन्यास के अंत में विश्वनाथ को उसके पिता की वसीयत प्राप्त होती है जो सचमुच अनमोल है विश्वनाथ के पिता ने लिखा था –

> "मेरे पुरखों द्वारा आजन्म परोपकार, परहित, त्याग, समर्पण और सत्य का अनुकरण करते हुए जीवन में संस्कार, जीवन मूल्यों तथा सिद्धांतों के साथ जीवन-यापन किया गया, जिनका अनुसरण मैंने अपने संपूर्ण जीवन काल में किया, यही मेरी असल कमाई है, जिसे मैं आज अपने विश्वा के नाम वसीयत के रूप में समर्पित करता हूँ|" (नेगी 213)

डॉ. सूरज सिंह नेगी के एक अन्य उपन्यास '*नियति चक्र*' में भी डायरी शैली का प्रयोग किया है | इस उपन्यास में डॉ. अवस्थी को उनके पूज्य नितिन घोष की डायरी के माध्यम से जीवन जीने और परोपकार की प्रेरणा मिलती है | यथा – "डायरी में जीवन जीने का सार था, कैसे एक मानव से महामानव बना जाए ..| जब भी मुश्किल दौर में रहा, डायरी के पन्ने पलटने से एक नई दिशा और प्रेरणा मिलती रही |" (नेगी 94) डॉ. सूरज सिंह नेगी ने इस शैली का प्रयोग आने सभी उपन्यासों में बड़े प्रभावी ढंग से किया है |

5.4.7 पत्रात्मक शैली

पत्रात्मक शैली में पात्र पत्र के माध्यम से अपने भावों को अभिव्यक्त करते हैं | ऐसी भावनाएँ जो स्पष्ट रूप से किसी दूसरे के सामने व्यक्त नहीं कर पाते, उन्हें पत्र शैली के माध्यम से व्यक्त किया जा सकता है | यह शैली केवल कथा के विकास में ही सहायक नहीं बल्कि पात्रों की व्यथा, उदासी, भावुकता आदि को व्यक्त करने के लिए भी सहायक होती है | इससे पात्रों के मन: स्थितियों का पता चलता है | कथा वस्तु की आवश्यकता के अनुसार लेखक इस शैली का प्रयोग करता है | कृष्णा सोबती के '*समय सरगम*' उपन्यास में लेखिका ने पत्रात्मक शैली का प्रयोग बहुत प्रभावशाली ढंग से किया है | उपन्यास में वृद्ध ईशान एक महीने के लिए घर से बाहर जाते हैं | वह अपने घर की चाबी अपनी पड़ोसिन आरण्या के पास छोड़ देते हैं | घर में गमलों में लगे पौधों को पानी तथा कबूतरों को दानापानी देने के लिए वह आरण्या को हफ्ते-भर बाद पत्र लिखता है –

> "प्रिय आरण्या,
>
> अब तक कबूतरों का दानापानी ख़त्म हो चूका होगा | ताली तुम्हारे पास है सो यह तकलीफ भी तुम्हें ही देनी होगी | बालकनी में मिट्टी के प्याले पड़े हैं | उनमें बाजरा और पानी भर दें ! किचन की खिड़की के पास पाइप पड़ा है | अगर गमलों को पानी दे सकीं तो आभार मानूँगा |
>
> ईशान"(सोबती 38)

इस उपन्यास में ईशान और आरण्या एक-दूसरे से बात करने के लिए पत्र का सहारा लेते हैं | निर्मल वर्मा ने '*अंतिम अरण्य*' उपन्यास में पत्रात्मक शैली का प्रयोग किया है | इस शैली का प्रयोग लेखक ने तिया के संदर्भ में किया है | जब वह अपने पिता को बीमारी के हालात में छोड़कर चुपचाप शहर चली जाती है | वह एक पत्र मुरलीधर के पास छोड़ जाती है | मुरलीधर उस चिट्ठी को मेहरा साहब

की देखभाल करने आए आदमी के पास पकड़ाते हुए कहता है, छोटी बीबी आज सुबह की बस से चली गई है मुझे यह चिट्ठी पकड़ा गई है | चिट्ठी खोलकर देखा जिसमें लिखा था –

> "आज पानी आ रहा है, जाने के लिए यह शुभ दिन है | मुझे आपको सुबह उठाने नहीं आना होगा | मालूम नहीं था, ये दिन ऐसे बीतेंगे | मुझे आप पर भरोसा है कि जब मेरी जरूरत पड़ेगी, आप मुझे बुला भेजेंगे | आशा है, जरूरत जल्दी नहीं पड़ेगी | तारा देवी से माफ़ी मांग लीजिएगा...अगली बार ज़रूर उनसे मिलने जाएँगे |"(वर्मा 123)

लेखक ने पात्रों के बीच वार्तालाप करने के लिए चिट्ठी का सहारा भी लिया है | पत्रात्मक शैली उपन्यास को और भी रोचक व प्रभावशाली बना देती है | राकेश वत्स के उपन्यास 'फिर लौटते हुए' में भी पत्रात्मक शैली का प्रयोग लेखक करते हैं | वृद्ध दिवाकर शर्मा परिवार सदस्यों को बिना बताए कहीं चले जाते है तो अपनी पत्नी को पत्र छोड़ जाते हैं, जिसे उसका पोता बसंत पढ़ता है- "प्रिय लक्ष्मी, यहाँ तुम पूरी तरह सुरक्षित हो | सब लोग तुमसे बहुत प्यार करते हैं | बलबीर के पास जाने की जरूरत नहीं है | मैं देह्कर्म करने जा रहा हूँ | मुझे ढूंढने की कोशिश बिलकुल नहीं करनी | काम ख़त्म होते ही मैं खुद लौट आऊंगा |"(वत्स 34) डॉ सूरज सिंह नेगी ने इस शैली का प्रयोग बहुत अधिक किया है | '*वसीयत*' उपन्यास में विश्वनाथ की माँ अपनी बहू को पत्र लिखकर स्त्री जीवन की सार्थकता को समझाती हुई कहती है –

> "बेटी जब तक माँ-बाप के घर आंगन में होती है, तब तक खुशियाँ बिखेरती रहती है, लेकिन शादी के बाद वह ससुराल में जाकर जहाँ बहू बनकर उस कुल की मर्यादा का मान रखते हुए, पुरखों द्वारा स्थापित मान्यताओं और परम्पराओं का निर्वहन करते हुए, परिवार को एकजुट रखती है; वहीं प्रत्येक सुख-दुःख में वृद्ध सास-ससुर को सहारा देते हुए एक बेटी का कर्तव्य भी निभाती है |" (नेगी 224)

विश्वनाथ को वर्षों पूर्व की समृतियां याद आती है उसकी माँ ने उसे पत्र लिखा था जिसे उसने चपरासी से ले तो लिया था लेकिन उसे पढ़ने का समय नहीं निकाल सका | वृद्धावस्था में वह उस पत्र को पढ़ता है जिसमें उसकी माँ ने लिखा था –

> "बेटा विश्वा !
>
> तू कैसा है रे ? इधर तूने तो जैसे गाँव से और हम सब से मुँह मोड़ लिया है, तेरे बाज्यू आजकल बहुत बीमार हैं, आसपास डॉक्टरों को दिखा दिया, हकीम जी का भी इलाज करवा लिया लेकिन कोई आराम नहीं मिल पा रहा है, रात-दिन बस तुझे याद करते रहते हैं | तू आकर उनको अपने साथ शहर ले जा, किसी अच्छे डॉक्टर को दिखा कर उनका इलाज करा ले, हाँ अपना ख्याल रखना |"
>
> 'तुम्हारी ईजा'(नेगी 110)

विश्वनाथ अपने पिता से नाराज होकर घर छोड़ देता है | माँ-बाप के जिंदा रहते कभी घर-गाँव वापस नहीं जाता | विश्वनाथ का पिता अपने बेटे को जीवन भर पत्र के माध्यम से ही अपनी और अपनी पत्नी के बारे में प्यार से लिखता रहता | विश्वनाथ ने न कभी उन

पत्रों को पढ़ा न ही उन पत्रों का जवाब दिया | अपने युवावस्था में विश्वनाथ अपने पिता के पत्रों की अनदेखी करता है | उसके लिए जैसे कोई साधारण बात हो | विश्वनाथ का पिता अपने पुत्र को हर तीज-त्योहार में पत्र लिखकर उसे घर आने के लिए कहते -

> "बेटा विश्वा ! तुम दीपावली पर नहीं आए, तुम्हारी ईजा उस दिन तुम्हारा इन्तजार करती रही | यह कहती रही जब बेटा-बहू आयेंगे, तब दीपक जलायेंगे | बेचारी रात भर बहुत रोती रही | खैर मैं समझ सकता हूँ तुम्हें कोई जरूरी काम आ गया होगा |" (नेगी 65)

एक अन्य पत्र जिसमें विश्वनाथ का पिता अपने बेटे को पत्र लिख कर अपनी पत्नी की मृत्यु का समाचार लिखता है |

> "विश्वा ! बेटा बड़े दुःख के साथ सूचित कर रहा हूँ, तुम्हारी ईजा अब इस दुनिया में नहीं रही | बेचारी अंतिम साँस तक तेरा नाम ले-लेकर इस दुनिया में नहीं रही | अंतिम क्षण तक तेरी बाट देखती रही | मौत से लड़ती रही लेकिन अंत में वह हार कर हम सबसे बहुत दूर चली गई | बेटा समय मिल सके तो पत्र मिलते ही एक बार तेरी ईजा की अंतिम इच्छा को पूरा कर देना | उसके बारहवें से पहले आकर पिण्ड दान कर देना ताकि उसकी पुण्य आत्मा को शांति मिल सके |" (नेगी 36)

नेगी जी के '*वसीयत*' उपन्यास में पत्रात्मक शैली का बहुत ज्यादा प्रयोग हुआ है | पूरे उपन्यास में माँ-बाप अपने बेटे विश्वनाथ को गाँव बुलाने, अपने हाल-चाल बताने के लिए पत्रों का सहारा लेते हैं | उन पत्रों को विश्वनाथ अपनी युवावस्था में कभी नहीं पढ़ता लेकिन वृद्धावस्था में जब उसका बेटा उससे दूर रहने लगता है तब उसे उसके द्वारा अपने माँ-बाप से किए गए व्यवहार की याद आती है | उम्र के अंतिम पड़ाव में वह उन सभी पत्रों को पढ़ता है जिसमें उसके माँ-बाप ने अपने दर्द को प्रस्तुत किया था | उपन्यास में पत्र के माध्यम से उसे अपनी गलती का अहसास होता है | पश्चाताप ग्रस्त विश्वनाथ पत्रों से प्रेरित होकर माँ-बाप के अधूरे सपनों को पूरे करने की ठान लेता हैं | पत्रात्मक शैली के माध्यम से माँ-बाप के अपने बच्चे के प्रति स्नेह को दिखाया गया है |

डॉ. सूरज सिंह नेगी के '*रिश्तों की आँच*' उपन्यास में रामप्रसाद की बहिन ममता अपने भाई को पत्र लिखती है | जिसे पढ़कर रामप्रसाद की आँखों से खुशियों के आंसू बह निकलते है | पत्र की पहली लाइन पढ़ते ही वह भाव-विभोर हो जाता है | पत्र में लिखा था –

> "प्रिय भैया ! आपकी अभागिन बहिन ममता का आपके चरणों में नमन |" इसके बाद पत्र में क्या लिखा था वह आगे नहीं पढ़ सका | उसकी आँखों ने उसका साथ देना छोड़ दिया था | आँखों से अश्रुधारा बह निकली जो पत्र में लिखे शब्दों के साथ मिलकर एक नया आकर लेने लगी | उसने पत्र बंद कर दिया और हाथ में पकड़कर आँखें बंद कर पेड़ के तने से पीठ लगाकर बैठ गया |"(नेगी 99)

नेगी जी अपने सभी उपन्यासों में पात्रों के मध्य भावात्मक संबंध स्थापित करने के लिए पत्रों का सहारा लेते हैं | डॉ. सूरज सिंह नेगी के उपन्यास '*ये कैसा रिश्ता*' में भी पत्रात्मक शैली का प्रयोग किया है | इस उपन्यास में पूरन द्वारा पदमा को लिखे गए पत्र में वह गाँव के शांत और अनुकूल वातावरण की तुलना शहर की भागमभाग से करता है | वह गाँव में बिताए अपने समय को याद करता हुआ पत्र में लिखता है कि –

"जब से गाँव छोड़ा, लगता है मेरा शरीर शहर में अवश्य है लेकिन आत्मा जैसे आत्मा कहीं छोड़ आया हूँ | यहाँ कुछ भी तो नैसर्गिक नहीं है | सड़कों पर इंसान नहीं, लगता है मशीनें दौड़ रही हैं ...गाँव में जहाँ निस्वार्थ भाव से एक-दूसरे के सुख-दुःख में शरीक हो जाते हैं, यहाँ बिना स्वार्थ के कोई किसी से बात करने को तैयार नहीं |"(नेगी 117)

डॉ. सूरज सिंह नेगी अपने हर उपन्यासों में पत्रात्मक शैली का प्रयोग करते हुए दिखाई देते है | *'नियति चक्र'* उपन्यास में भी इस शैली का प्रयोग किया गया है | सेठ नितिन घोष द्वारा संचालित सरस्वती अनाथालय जिसमें अनाथ विजेंद्र पला-बढ़ा होता है | सेठ नितिन घोष वहाँ के सभी बच्चों के पालन-पोषण के साथ उनकी शिक्षा-दीक्षा का भी खर्चा उठाते थे | विजेंद्र भी उनमें एक है, जिसका चयन भारतीय प्रशासनिक सेवा अधिकारी में हो जाता है | विजेंद्र सेठ नितिन घोष को उनके इस अहसान के लिए पत्र लिखता है | विजेंद्र द्वारा सेठ नितिन घोष के लिया लिखा गया पत्र इस प्रकार से है -

"पूज्य,

बाबूजी प्रणाम |

शायद आपको अजीब लगे | आप तो मुझे जानते तक नहीं, लेकिन मेरा रोम-रोम आपका ऋणी है और जब तक तन में साँस है तब तक आपके अहसान से उऋण नहीं हो सकता, बाबूजी आपको शायद याद न होगा | मैं सरस्वती अनाथालय में पला-बढ़ा हूँ | मेरे जीवनदाता माँ-बाप प्रकृति की तबाही में चल बसे थे | मैं अनाथ हो गया था | विधाता ने आप जैसे सरपस्त का हाथ मेरे ऊपर रखवा दिया |.."(नेगी 53)

इस पत्र में सेठ नितिन घोष के द्वारा अपने जीवन में किए गए पुण्य कार्यों को पत्र के माध्यम से उजागर किया गया है | जिससे उपन्यास के मुख्य पात्र वृद्ध नितिन घोष की चरित्रगत विशेषताएं स्पष्ट हो जाती हैं | इस प्रकार देख सकते हैं नेगी जी ने अपने सभी उपन्यासों में पात्रों के माध्यम से पत्रात्मक शैली का सुंदर प्रयोग किया है |

डॉ. दिलीप मेहरा *'अग्निदाह'* कहानी के मुख्य पात्र मनसुखलाल अपने छोटे बेटे और बहू के व्यवहार से बहुत दुखी होकर आत्महत्या कर लेते हैं | आत्महत्या से पहले वे अपनी बेटी के नाम मार्मिक, संवेदनशील पत्र लिखता है, जिसमें अपनी सारी वेदना को अभिव्यक्त करते हैं –

"प्रिय मिताली,

जय आशा माँ,

मैं तेरा अभागा पिता बड़े दुख के साथ लिखता हूँ कि तुम तीनों भाई-बहनों शादी करके मैं बहुत खुश था | परंतु कुछ ही दिनों में हम दोनों को लड़कों ने अलग-अलग घर में बाँट दिया | जब तक मेरे पास जमा पूँजी थी तब तक तो मुझे कोई परेशानी नहीं थी पर जैसे मेरे पास जमा पूंजी ख़त्म हुई, दोनों लड़कों ने मुँह फेर लिया |"(मेहरा113)

वृद्ध व्यक्ति अपने की वेदना को अभिव्यक्त करने के लिए पत्र का सहारा लेता है | एक पिता अपने बच्चों के दुर्व्यवहार से दुखी होकर आत्महत्या जैसा कदम उठाने को भी मजबूर हो जाता है | मेहरा जी ने भी पत्रात्मक शैली के माध्यम से इस समस्या को उजागर किया है | पत्रात्मक शैली मात्र कथा विकास में ही सहायक नहीं है बल्कि पात्रों की मन: स्थिति को भी स्पष्ट करती है | लेखक कथावस्तु की आवश्यकता के अनुसार इस शैली का प्रयोग करता है | 21वीं सदी के सभी लेखकों ने इस शैली के माध्यम से चरित्रों के सूक्ष्म अनुभव का बड़ा ही मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है |

5.4.8 संवादात्मक शैली

संवाद शैली, वार्तालाप या कथोपकथन शैली नाम से भी स्पष्ट है | कथा साहित्य में संवाद को भी एक महत्वपूर्ण तत्व माना जाता है | पात्रों के आपसी वार्तालाप को संवाद कहते है, संवादों के माध्यम से कथा आगे बढ़ती है | संवाद छोटे-बड़े, स्पष्ट, हास्य-व्यंग्य से पूर्ण पात्रानुकुल, प्रसंगानुसार तथा विषय के अनुसार कई प्रकार के होते है | संवादों की भाषा सरल, रोचक और अभिधात्मक होती है | गुलाब राय के अनुसार, "केवल संवाद की भाषा ही पात्रानुकूल नहीं होनी चाहिए वरन् उसका विषय भी पात्रों के मानसिक धरातल के अनुरूप होना वांछनीय है |"(गुलाबराय 173) संवाद जितने संक्षिप्त होंगे उतने ही अधिक प्रभावशाली होंगे | संवादों से भाषा सशक्त बनती है और कथावस्तु में नया मोड़ और गत्यात्मकता लाने में सहायक बनते हैं | साहित्यकार अपनी कृति में पात्रों की स्थिति तथा वातावरण के अनुकूल संवादों की रचना करता है जिससे कथा में चित्रित चरित्र पाठक के समक्ष जीवित हो उठते हैं | संवादों में पात्रनुकुलता होने के कारण पात्रों के चरित्र विश्लेषण में सुविधा होती है | संवाद चरित्र-चित्रण के साथ कथा वस्तु को आगे बढ़ाने में सहयोग करता है | इस शैली से कथा साहित्य की मूल संवेदना भी ज्ञात होती है | संवाद अथवा कथोपकथन मूलतः नाटक से संबंधित हैं, लेकिन कथा साहित्य में भी इसका प्रभाव लोकप्रिय बन गया है | उपन्यासकार उपन्यास में चमत्कार एवं कलात्मक लाने के लिए इस शैली का प्रयोग करते हैं | डॉ. शांतिस्वरूप गुप्त लिखते हैं – "यदि उपन्यास के कथोपकथन रोचक, स्वाभाविक, सहज, पात्र तथा परिस्थिति के अनुकूल हो तो उससे उपन्यास में नाटक की सी विशदता, सजीवता और यथार्थवता आ जाती है |"(बीजापुरे 103) संवादों से ही कथा में सजीवता, आकर्षण और पाठकों की जिज्ञासा बढ़ती है | संवादात्मक शैली के संदर्भ में श्री नारायण अग्निहोत्री '*उपन्यास कला के तत्व*' में लिखते हैं – "बिना संवाद के चरित्र-चित्रण ऐसा ही है जैसे बिना खिड़कियों और दरवाजों का कमरा |" (अग्निहोत्री 111) ममता कालिया ने अपने उपन्यास '*दौड़*' में संवाद शैली का भरपूर प्रयोग किया है | उनके उपन्यास में संवादों की विशिष्टता है कि वे कम से कम शब्दों में अधिक जानकारी देते हैं | संवाद पात्रों की मन: स्थिति और चरित्र का मूल्यांकन भी करते हैं | डॉ. गुलाबराय संवाद के स्वरूप पर लिखते हैं – "कथोपकथन या वार्तालाप द्वारा ही पात्रों के हृदयगत भावों को जान सकते हैं | यदि वार्तालाप पात्रों के चरित्र के अनुकूल न हो तो हम उसके चरित्र का मूल्यांकन करने में भूल कर जायेंगे |" (बीजापुरे 65) ममता कालिया ने '*दौड़*' उपन्यास में पात्रों के अनुकूल संवाद शैली का प्रयोग किया है | इस उपन्यास में पारिवारिक संबंधों में संवेदना के क्षरण, वर्तमान जीवन की जटिलताओं, तनाव, युवाओं की बजारवादी सोच, प्रतिस्पर्धा आदि का चित्रण के लिए संवाद शैली का प्रयोग किया गया है | '*दौड़*' उपन्यास में संवाद का स्वरूप राकेश और उनके छोटे बेटे सघन के बीच फोन में हो रहे वार्तालाप के माध्यम से देख सकते हैं-

"हिंदुस्तान अगर लौटा तो अपना काम करूँगा |"

"यह तो और भी अच्छा है |"

पर पापा उसके लिए कम-से-कम तीस-चालीस लाख रुपए की जरूरत होगी |...आप कितना इंतजाम कर सकते हो |"

राकेश गड़बड़ा गए | "तुम्हें पता है घर का हाल जितना कमाते ही उतना खर्च कर देते हैं | सारा पोंछ-पांछकर निकाले तो भी एक डेढ़ से ज्यादा नहीं होगा |...

आपने इतने बरसों क्या किया ? दोनों बच्चों का खर्च आपके सर से उठ गया | घूमने आप जाते नहीं, पिक्चर आप देखते नहीं; दारू आप पीते नहीं, फिर आपके पैसों का क्या हुआ ?"

राकेश आगे नहीं बोल पाए | बच्चा उनसे रुपए आने पाई का हिसाब माँग रहा था |" (कालिया 85)

पिता और बेटे के बीच वार्तालाप के माध्यम से लेखिका ने पात्रानुकूल, उत्कृष्ट व प्रभावशाली संवादात्मक शैली का प्रयोग किया है | इस शैली के माध्यम से 21वीं सदी में पिता-पुत्र के मध्य पैसों की वजह संबंधों के क्षरण का पता चलता है | कृष्णा सोबती के '*समय सरगम'* उपन्यास में लेखिका ने संवादों का भरपूर प्रयोग किया है | इस उपन्यास में संवादात्मक शैली का बहुत प्रभावशाली चित्रण किया है | उपन्यास में सरल, संक्षिप्त तथा पात्रानुकूल संवादों का मार्मिक वर्णन किया है | आरण्या और ईशान के मध्य संवादों को देखा जा सकता है |

"क्या जूते काट रहे हैं ?

नहीं | घास गीली थी और जूते बचने जरूरी थे | सो हाथ में पकड़ लिये |

ईशान हँसे |

जूते बचाने के लिए सरदी पकड़ने में भी क्या तुक ! एंटीबायटिक्स तक खाने पड़ सकते हैं |

आरण्या हँसी

उनसे पहले में काली मिर्च, तुलसी और मुल्ठी का काढ़ा पिऊँगी |

अच्छी आदत है बहुत ज्यादा दावा लेना ठीक नहीं |"(सोबती 12)

यहाँ दो वृद्ध पात्रों के वार्तलाप को लेखिका ने सरल व संक्षिप्त संवादों के माध्यम से प्रस्तुत किया है | यहाँ संवाद देशकाल वातावरण तथा पात्रों के अनुसार प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किए है | चित्रा मुद्गल के '*गिलिगडु*' उपन्यास में भी चित्रा जी ने संवाद पद्धति को अपनाया है | संवादात्मक शैली के माध्यम से कहीं गंभीर विषय और कहीं हास्य विषयों को प्रस्तुत किया है | '*गिलिगडु*' उपन्यास में जसवंत सिंह और शिवानी की बातचीत को दिखाया गया है –

"ये आपका गला क्यों बैठा है ?"

"टान्सिल्स फूले हुए हैं |"

"डॉक्टर को दिखाया ?"

"दिखाया..पांच रोज लगातार एल्थ्रोसिन खानी होगी"

"बुखार कितना है ?"

"एक सौ पाँच..लग रहा है कि अब और बढ़ रहा है..."

"फिर मजाक ! पास कोई है ? (मुद्गल 107)

पात्रों के परस्पर वार्तालाप या संवादों से कथा साहित्य में मुखरता आती है | निर्मल वर्मा के '*अंतिम अरण्य*' उपन्यास में बोधगम्य संवाद का बहुत ही अनुभूतिपूर्ण प्रयोग किया है | मेहरा साहब की तबीयत बिगड़ जाने पर उनकी बेटी पूछती है –

"आप क्या सोचते हैं, मेहरा साहब की तबीयत उतनी ही सीरियस है, जितना डॉक्टर सिंह बताते हैं ?" उन्होंने 'मेहरा साहब' कहा, बाबूजी नहीं, जिसमें रिश्ते की आर्द्रता नहीं, एक क्लीनिकल क़िस्म का सूखापन था...

"डॉक्टर सिंह ने आपको क्या बताया था ?"

उनकी बात छोड़िए, आप क्या सोचते हैं ? आप तो उनके साथ दिन-रात रहते हैं |"(वर्मा 93)

रवीन्द्र वर्मा के उपन्यास '*पत्थर ऊपर पानी*' में संवादात्मक शैली का रोचक व प्रभावी प्रयोग किया है | प्रो. चंद्रा जब सीता देवी को पेट्रोल पम्प पर अकेले खड़ी रोते देखता है | वह उससे पूछे बिना नहीं रह पाता, बेटे द्वारा सड़क में छोड़े जाने के कारण को जानने के बाद वह उसे अपने घर ले जाता है | प्रो. चंद्रा और सीता देवी के बीच संवाद को लेखक इस तरह प्रस्तुत करते हैं –

"क्या हुआ ?" वे वृद्धा के सामने खड़े थे |

"कुछ नहीं", वृद्धा ने सुबकते हुए कहा |

"बिना बात तो बच्चा भी नहीं रोता", वे हँसे |...

"मैं इंतजार कर रही हूँ |"

"कौन आ रहा है ?"

"मेरा बेटा | वही मुझे यहाँ छोड़ गया है |"(वर्मा 9)

लेखक ने पूरे उपन्यास में सरल, संक्षिप्त व प्रभावशाली संवादों का प्रयोग किया है | सीता देवी के पति की मृत्यु के बाद उसके बच्चे माँ के नाम पर जो मकान था उसको बेच कर उसे पेट्रोल पम्प के पास छोड़ जाते है | प्रो. चंद्रा उसे अपने घर ले आते है | घर पर प्रो. चंद्रा के पिता रामचंद्र सीता देवी से बातचीत करते हैं | सीता देवी और रामचंद्र के संवादों से वृद्धों के जीवन में बच्चों की मनमानी का पता चलता है |

"आपके पति...उन्होंने पूछा |

"नहीं रहे |"

"मुझे अफसोस है |"

चुप्पी |

"वे क्या करते थे ?"

"वे हरदोई में वकील थे |"

"हरदोई में आपका मकान भी होगा ?"

"है नहीं," वे हँसीं, "था |"

"क्यों ?

बेच दिया |"

"क्यों बेच दिया |"

"मैंने नहीं बेचा," उन्होंने हताश स्वर में कहा, "बेटों ने बेच दिया |"(वर्मा 14)

इस संवाद में सीता देवी और रामचंद्र दो वृद्ध व्यक्तियों की सामान्य बातचीत से उनकी मनोदशा का चित्रण होता है | सरल, संक्षिप्त संवादों के माध्यम से पाठक पात्रों के जीवन की सच्चाई से परिचित होते है | काशीनाथ सिंह के उपन्यास '*रेहन पर रग्घू*' में रघुनाथ और उनकी बेटी का वार्तालाप | रघुनाथ अपनी बेटी सरला से पूछते हैं –

> "बकवास बंद करो | साफ-साफ बताओ तुम्हें शादी करनी है या नहीं ? जब करनी होगी तो कर लूँगी, आप क्यों परेशान है ? इसलिए कि हम जिन्दा है, मर नहीं गए ! आप नहीं कर पाएंगे पापा ! हम जानते है आपको, इसलिए छोड़िए | जब संजय को बर्दाश्त कर लिया तो तुम्हें भी कर लेंगे, बोलो तो !" (सिंह 52)

हृदयेश के 'चार दरवेश' उपन्यास में संवादों का भरपूर प्रयोग हुआ है | उपन्यास में चार वृद्ध रोज पुलिया पर मिलते और तरह-तरह के विषय पर चर्चा करते रहते हैं | धीरे-धीरे एक-एक करके तीन वृद्धों की मृत्यु हो जाती हैं | चिंताहरण नमक वृद्ध अब अकेले रह

जाते है जिसके कारण अब वे शाम को पुलिया पर नियमित नहीं बैठते हैं | वहाँ बैठ कर उन्हें उन तीनो की याद आने लगती की अभी तीनों एक-एक करके आने ही वाले हैं | एक दिन वहाँ एक पाँचवाँ शख्स आया जो पहले कभी-कभी उनके पास बैठा करता था | चिंताहरण उनसे कहते हैं कभी मन करता कि ख़ाली हो गए तीन साथियों के रिक्त स्थान भरने के लिए समाचार पत्र में विज्ञापन निकाला जाए | उन वृद्धों में क्या विशेषता होनी चाहिए इस पर चर्चा करते हुए उन दोनों के संवाद बड़े रोचक व प्रभावी बन पड़े है |

"चिंताहरण, "उम्मीदवारों का इंटरव्यू आप लेंगे ?"

पाँचवाँ शख्स, "इंटरव्यू नहीं ट्रायल होगा, दस दिन का |"

चिंताहरण, "इतने कम दिनों में योग्य और अयोग्य होने का पता लग जाएगा ?"

पाँचवाँ शख्स, "आदमी की बुराइयाँ पकड़ने में ज्यादा समय लगता है, काफी लम्बा, जबकि उसकी अच्छाइयाँ हफ़्ता दस-दिन में उभरकर सामने आ जाती हैं |"

चिंताहरण, "यू आर राइट |"

पाँचवाँ शख्स, "आई एम आलवेज राइट |"(हृदयेश 167)

डॉ. सूरज सिंह नेगी के *'वसीयत'* उपन्यास में संवाद शैली का प्रयोग देखने को मिलता है | उपन्यास में विश्वनाथ और उसकी पत्नी अपने बेटे और बहू को त्यौहार के अवसर पर घर बुलाना चाहते हैं | बेटा राजकुमार जब से डॉक्टरी की पढ़ाई करके विदेश से लौटा है तब से वह अपने माँ-बाप से एक भी बार नहीं मिला | अपनी मर्जी से शादी करके दूसरे शहर के बड़े अस्पताल में नौकरी करता है | माँ-बाप जब भी मिलने को कहते व्यस्तता की बात कह कर ताल देता है | एक माँ और बाप की अपने बेटे-बहू से मिलने व देखने की चाह इस संवाद में देख सकते हैं –

"आओ सुधा बड़े अच्छे समय पर आयी हो | मैं नीचे आ ही रहा था |"

"क्या बात है भला |"

"सुधा में सोच रहा हूँ कि कल सक्रांति है, क्यों न हम राजकुमार और बहू को अपने पास बुला लें |" वह एक ही साँस में यह कह गया |

सुधा बड़े गौर से उसके चेहरे को देखती रही, देर तक कोई प्रतिक्रिया न होने पर विश्वनाथ ने सुधा से प्रश्न किया, "क्या हुआ सुधा ! तुमने मेरी बात का कोई जवाब नहीं दिया, मैंने कोई गलत तो नहीं कहा न ?

अब सुधा से रहा न गया वह बोल पड़ी, "नहीं आपने कुछ गलत नहीं कहा, कौन माँ-बाप नहीं चाहते कि उनके बच्चे तीज, त्योहार, सुख-दुःख में उनके साथ रहें, लेकिन क्या यह हमारे नसीब में है भला ?" (नेगी 62)

नेगी जी ने संक्षिप्त व प्रभावशाली संवादों के माध्यम से माँ-बाप का अपने बच्चों के साथ समय बिताने की चाह का मार्मिक चित्रण किया है | माँ-बाप का अपने बच्चों के प्रति निस्वार्थ प्रेम को उपर्युक्त दिए संवादों में देख सकते हैं | डॉ. सूरज सिंह नेगी के *'रिश्तों की आँच'* उपन्यास में संवादात्मक शैली का प्रयोग देख सकते हैं | रामप्रसाद मोती चाचा के कहने पर शहर में नौकरी करना चाहता था, ताकि कुछ पैसा कमा कर भाई-बहन की पढ़ाई व माँ का इलाज कर सकें | शहर जाने की बात वह माँ से कह नहीं पा रहा था | इस अंतर्द्वंद्व में खोया ही था तभी उसे माँ की आवाज सुनाई दी | रामप्रसाद और उसकी माँ के बीच संवादों को देख सकते हैं –

"ममता ! आज रामप्रसाद अभी तक नहीं आया, कहाँ गया है ? इतनी देर हो गई है |"

माँ की कराहती आवाज को सुनते ही रामप्रसाद माँ के पास पहुँचकर बोला,

"माँ मैं तो यहीं था | सोचा, तुम सो रही हो इसलिए कुछ बोला नहीं |"

"हाँ रे ! मैं कोई दूध पीती बच्ची थोड़े ही हूँ जो तू बहलाएगा, मैं जानती हूँ कोई न कोई बात जरूर है जो तू मुझसे छिपा रहा है |"

"नहीं-नहीं माँ ! ऐसी कोई बात नहीं है, मैं भला क्यों छिपाने लगा" रामप्रसाद बोला |"(नेगी 26)

माँ और बेटे के बीच वार्तालाप से लेखक की संवादात्मक शैली को देख सकते हैं | जिसमें एक माँ अपने बेटे के मन में चले अंतर्द्वंद्व को महसूस करती है | इस उपन्यास में रामप्रसाद अपने जीवन में जितनी भी मुसीबतों व संघर्षों से गुजरता है, उसमें उसकी माँ का सहयोग व सांत्वना उसके साथ हमेशा रहती है | कृष्णा अग्निहोत्री के कहानी संग्रह *'अपना-अपना अस्तित्व'* की प्रसिद्ध कहानी 'तोर जवानी सलामत रहे' संवादात्मक शैली का प्रयोग किया है | वृद्ध सावित्री और उसके पोते लल्लन के बीच वार्तालाप देख सकते हैं | जब लल्लन अपनी दादी को मछली बनाने को कहता है तथा अपनी दादी के साथ हिंसात्मक व्यवहार करता है |

"लो ये मछलियाँ, इन्हें बनाओ |

सावित्री उठकर जाने लगी तो लल्लन ने उस बूढ़ी को दबोच उसके मुँह में मछली ठूँस दी | ये लो यहीं खाओ |

..लल्ला छोड़ दे मैं न खाऊँ ये |

नहीं छोड़ूंगा | तुम वापस जाओ हमें व माँ को सुख से रहने दो |

तुम्हें छोटेपन में मैंने रात-रात जागकर पाला है ललुआ |

तो कौन सा अहसान किया है |

मेरे खेतों से तो अभी भी गेहूँ चना आता है |

तो तुम महीने भर चरती भी तो हो |

मुझे चुपचाप पड़ा रहने दे ललुआ | कभी तुम अच्छी नहीं लगतीं |

ये तुम्हारी सिकुड़ी खाल, हिलता व घसीटता शरीर, अच्छा नहीं लगता, अब तुम रात में बहुत खाँसती भी हो |" (अग्निहोत्री 39)

इस प्रकार कृष्णा जी की कहानियों में छोटे-छोटे सार गर्भित संवाद बड़े सटीक रूप से प्रस्तुत किए गए हैं, जो कहानी की भाषा-शैली को और निखार देते हैं | एस.आर हरनोट जी की 'बिल्लियाँ बतियाती हैं' कहानी में गाँव के प्रधान और अम्मा के बीच में संवाद के माध्यम से कहानी में संवादात्मक शैली का प्रयोग किया है | प्रधान काफी दिनों से अम्मा की जमीन पर नजरें गढ़ाए हुए है | वह अम्मा को अपनी जमीन बेचने को कहता है | अम्मा का बेटा-बहू और पोता शहर में रहते हैं | वे कभी भी घर, गाँव और अम्मा से मिलने नहीं आते है | इसी बात का फायदा प्रधान उठाना चाहता है ताकि अम्मा की जमीन को सस्ते में हड़प सकें |

"देवरू ! बेच दे जगह-जमीन | दे दे इन गा- बैलों को | बहू-बेटा तो गाँव आयेंगे नहीं | इन्हें रखकर क्या करेगी | तेरे चला तो जाता नहीं अब |"

"परधान जी, इतने तो अभी और पाल सकती हूँ | नौकरी-चाकरी तो चार दिनों की है | बेटे ने कमा के घर ही आना है | इसकी चिंता मैं करूँगी तुम अपना काम निभाओ |"(हरनोट 13)

कहानी में संवाद अत्यंत रोचक, सजीव एवं सटीक है | पात्रों का चरित्र सम्वादों के माध्यम से उभरा है | अम्मा के चरित्र में दबंगई साफ दिखाई पड़ती है | जो अपने हाजिर जवाब के लिए जानी जाती है | अम्मा अकेली रहती है लेकिन उसे अपने अच्छे-बुरे की पहचान है | संवाद शैली का अन्य उदाहरण अम्मा और ग्रामीण लड़कों के बीच देखा जा सकता है जब भी अम्मा को अपने खेतों में काम करना होता है तब अम्मा की मदद के लिए गाँव के सभी लोग आ जाते हैं | गाँव के लड़के अम्मा से मजाक करते हुए कहते हैं –

"देख काकी | हम तो तेरी गुड़ाई या गोबराई में तभी आएंगे जब तू पौवा-शौवा पीने को देगी |"

अम्मा झट से झाड़ देती है, "मुए शर्म करो | मुंह से तो दूध की बास नहीं गई बोतल पूरी चाहिए | पौवा-शौवा कुछ नहीं मिलेगा"(हरनोट 14)

कहानी में संवाद एवं प्रसंगानुकुल होने के साथ-साथ पात्रों के चरित्र को अभिव्यक्त करने में भी पूरी तरह सशक्त बन पड़े हैं | हरनोट की कहानी 'कागभाखा' में दादी और बहू के संवाद बड़े सजीव बन पड़े है | बहू घर के आँगन में आए कौए को पत्थर से मारती है | वह सोचती कौए की आवाज अपशकुन होती है, जबकि दादी का मानना है कौए पूरे गाँव की खबर रखते है और जो कौए की भाषा समझता है वो कौए की भाषा समझकर आने वाली विपदा से भी बचा सकता है | दादी बहू को समझाती हुई कहती है- "बहू पग्शी किसी का बुरा नहीं करते | तू बजाय पत्थर मारने के इसे टुकड़ा फेंका कर | पुन्न होगा बेटा पुन्न !" बहू चिढ़ जाती है, "कौए को कौन पाले है सास जी | कौआ तो गृहा के आसपास होना ही नहीं चाहिए |"(हरनोट 53) हरनोट जी ने पात्रों में हिंदी भाषा को हिमाचल के

ग्रामीण लहजे के माध्यम से संवादों को जीवन्त बनाने का प्रयास किया है | चित्रा मुद्गल की 'गेंद' कहानी में वृद्ध सचदेवा और एक छोटे से बच्चे बिल्लू के बीच संवादों में सहजता दिखाई पड़ती है | सचदेवा कहते हैं – देखो, तुम्हारे लिए मैं कल नयी गेंद खरीद लाऊंगा | ढूँढूंगा नहीं | बूढ़ा हो गया हूँ न, देर झुक नहीं सकता |" "नयी गेंद ? आप मुझे नयी गेंद लाकर देंगे ? (मुद्गल 16) (डॉ. दिलीप मेहरा ने '*साजिश*' कहानी में संवादों का अत्यंत रोचक, सजीव एवं सटीक प्रयोग किया है | संवादों के माध्यम से कहानी के पात्रों का चरित्र सामने आया है, जीवंत वातावरण उभरा है और कहानी का संदेश मार्मिकता के साथ पाठकों तक संप्रेषित हुआ है | संवाद संक्षिप्त, सारगर्भित पात्रानुकूल एवं परिस्थिति के अनुसार हैं | देवीलाल की पत्नी और उसका बेटा देवीलाल को मारने की साजिश रचते है, ताकि बाप की नौकरी बेटे को मिल सकें | माँ और बेटे की साजिश के संवाद देख सकते हैं -

> "प्रकाश ने कहा – "पापा की छ: महीने की नौकरी बाकी रह गयी | वैसे भी पापा अब एक दो साल के मेहमान है | मम्मी पापा छ: महीने पहले मर जाते तो मुझे भी कांतिलाल की तरह पावर स्टेशन में पापा की जगह पर नौकरी मिल जाती |
>
> पार्वती – बात तो तेरी सोलह आने सच है बेटा, तेरे पापा अब पका पान हो गए है, कभी भी गिर सकता है, पर कब गिरेगा पता नहीं | मरने का अपने हाथ में थोड़ी होता है बेटा, अगर भगवान् ने चाहा तो जरूर तेरी इच्छा पूरी होगी |"(मेहरा 93)

कथानक की घटनाओं का कौतूहल संवाद की वजह ही बनता है | 21वीं सदी के वृद्ध विमर्श पर केन्द्रित हिंदी कथा साहित्य में सरल, स्पष्ट, नवीन, गंभीर व स्वाभाविक संवादों का प्रयोग किया गया है, जो कथानक को आगे बढ़ाने तथा पात्रों के चरित्र-चित्रण में सहायक सिद्ध हुए है |

5.4.9 मनोविश्लेष्णात्मक शैली

यह शैली मनोवैज्ञानिक तत्वों पर आधारित होती है | इसके अंतर्गत मन के विश्लेषण को प्रधानता से अभिव्यक्त किया जाता है | पात्रों की आंतरिक स्थितियों को उजागर करने के लिए इस शैली का प्रयोग किया जाता है | मानव मन की समस्याओं और ग्रंथियों को सुलझाने के लिए मनोवेश्लेश्नात्मक शैली का प्रयोग कथा साहित्य में पात्रों के लिए किया जाता है | पात्रों की विविध मन: स्थितियों का चित्रण भी लेखक करता है | चित्रा मुद्गल ने अपने उपन्यास '*गिलिगडु*' में मनोवेश्लेश्नात्मक शैली का प्रयोग किया है | इस उपन्यास में जब जसवंत सिंह की पत्नी और मित्र की मृत्यु हो जाने के बाद वे अकेलेपन के शिकार हो जाते हैं | उनका अकेलापन और मन: स्थिति का चित्रण मुद्गल जी करती हैं – "हरिहर की स्मृति ...करती जी मितलाती बदबू ने उन्हें कई दिनों सोने न दिया |...रक्तचाप क्यों बढ़ा है उनका |...मामूली सी मानसिक परेशानी है | दरअसल बदबू कुछ और नहीं भय है | अकेलेपन का भय |" (मुद्गल 54) डॉ. सूरज सिंह नेगी के '*वसीयत*' उपन्यास में मनोवेश्लेश्नात्मक शैली का भी प्रयोग किया है | इस उपन्यास में विश्वनाथ अपने पिता से विदेश न भेजने की वजह से नाराज हो जाते है और जीवन भर उनसे दूर शहरों में रहने लगते है वहीं शादी करते है, उन्हें शादी में बुलाना भी उचित नहीं समझते हैं | यहाँ तक बच्चे होने के बाद भी कभी अपने माँ-बाप को पोते और बहू के दर्शन तक नहीं करवाते हैं | लेकिन किस्मत उनके साथ भी यही खेल खेलती है जब उनका बेटा राजकुमार विदेश से डॉक्टर की पढ़ाई करके आता है | तो वह भी कभी अपने घर माँ-बाप से मिलने नहीं जाता, वह बड़े शहर में नौकरी करके वही बस जाता है | माँ-बाप के बुलाने पर

कभी भी उनके लिए समय नहीं निकाल पाता | तब विश्वनाथ को अहसास होता है कि उसने भी तो अपने माँ-बाप के साथ यही किया था | विश्वनाथ की मन: स्थिति का वर्णन नेगी जी करते हैं –

> “क्यों विश्वनाथ ! आज बाप के दर्द का अहसास कैसे हो आया | तू कैसे भूल गया था कि जो किसी का बेटा होता है वह कभी बाप भी बनता है, कैसा लगता है मन को जब हमारे अपने ही हमारी भावनाओं की कद्र नहीं करते और उनसे खेलते हैं |” (नेगी 66)

विश्वनाथ अब अपने पिता के दुखों को महसूस कर पा रहा था जो उसने उनको दिए थे | क्योंकि अब वही सब उसके साथ उसका बेटा राजकुमार कर रहा था | विश्वनाथ की इस मन: स्थिति का चित्रण लेखक ने मार्मिक ढंग से किया है |

5.4.10 काव्यात्मक या भावनात्मक शैली

काव्यात्मक शैली में लेखक जब अपने कथासाहित्य में भावुकतापूर्ण वर्णन करता है तो वहाँ काव्यात्मकता आ जाती है | कथा साहित्य में काव्यात्मक शैली से पात्रों के मनोभावों की सशक्त अभिव्यक्ति होती है | भावों का प्रबल वेग, शैलीकार को अपने साथ प्रवाहित कर लेता हैं | इस शैली में लेखक की भाषा, लय तथा शैली का वेग व प्रवाह भावातिरेक के अनुरूप होता है | डॉ. चौऋषि लिखते हैं –

> “भावों के प्रवाह में शैलीकार की भाषा भावों से तदाकार हो जाती हैं | भाव या रस शैली का श्रेष्ठ नियामक तत्व हैं | इस स्थिति में रसौचित्य के अनुसार शैली में वेग या प्रवाह रहता हैं |...मस्तिष्क का संतुलन बिगड़ जाने से शैलीकार भाव-विभोर होकर अस्त-व्यस्त वाक्य विन्यास में अनगढ़ प्रयोग करता हैं | कहीं उसकी भाषा सशक्त हो जाती है और कहीं शिथिल | शब्दों और पदों की आवृत्ति भावात्मक शैली में लक्षित होती है |” (चौऋषि 85)

इस शैली में भाव ही सबसे महत्वपूर्ण होता है | रचनाकार अपने कथा साहित्य के कथानक को सुन्दरता प्रदान करने के लिए बीच-बीच में काव्यात्मक शैली का समावेश करता है | कृष्णा सोबती के *‘समय सरगम’* उपन्यास में लेखिका ने अनपढ़, कमजोर वर्गों का चित्रण काव्यात्मक शैली के माध्यम से किया है –

> “घर है हमारा देश |
>
> परदे हवा में फड़फड़ाते रहें |
>
> कमजोर, अनपढ़ जातियों पर अत्याचार होते रहें |
>
> बहू-बेटियों पर बलात्कार होते रहें |”(सोबती 120)

उपर्युक्त काव्यात्मक पंक्तियों में कृष्णा सोबती ने भारत के कमजोर वर्ग एवं पीड़ित वर्ग का चित्रण प्रस्तुत किया है | इसी उपन्यास का एक अन्य उदाहरण जहाँ आरण्या के द्वारा काव्यात्मक अभिव्यक्ति हुई है |

“सुख है क्योंकि हवा है

धूप है

जल है

आकाश निर्मल है

देह में धड़कती साँस है

अभी भी जीने के भीतर है सब

जब बाहर हो जाएँगे

शेष हो जाएँगे

तो भी किसी न किसी अंश में

स्वरूप में स्मृति रहेगी |(सोबती 138)

हरनोट जी की कहानी ‘कागभाखा’ में दादी के माध्यम से ब्याह के गीतों को काव्यात्मक शैली में प्रस्तुत किया गया है | गाँव की औरते दादी को घेर लेती हैं और उनसे ब्याह के गीत सुनाने के लिए अनुनय करती है | दादी इस आग्रह को अस्वीकार नहीं कर पाती है | दादी गाने लगती है –

“हरीए नीर सभरिए खजूरे, किने बे लाए ठंडे बाग बे |

देखी लैणा बापू जी दा देश बे, बापू तो तेरा धीए गढ़ दिल्लिया दा राजा,

अम्मा तेरी धीए गढ़ दिल्लिया दी राणी, उन पर दिति बेटी दूर बे |”(हरनोट 55)

21वीं सदी के हिंदी साहित्यकारों ने अपनी कहानियों व उपन्यासों के कथानक को सुन्दरता प्रदान करने के लिए बीच-बीच में काव्यात्मक शैली का प्रयोग किया है |

5.4.11 विचारात्मक शैली –

इस शैली का मुख्य आधार विचार ही है | विचारात्मकता वही होती है, जहाँ लेखक किसी विषय पर विचार करता हुआ चलता है | विचारात्मक शैली में लेखक मनोविज्ञान, दर्शन आदि की विभिन्न मान्यताओं की विवेचना प्रस्तुत करते हुए साहित्य की अनेक विधाओं की समालोचना भी कर सकता हैं | डॉ. शंकरदयाल चौऋषि इस संबंध में लिखते है-

> “ज्ञानेन्द्रियों का ऊपरी विवरण, वर्णन या चित्रण की शक्ति के ऊपर उठकर जब मस्तिष्क की शक्ति से विश्लेषण आदि के द्वारा प्रतिपादन या स्पष्टीकरण किया जाता है, तब विवेचनात्मक शैली ही अधिक उपयुक्त रहती है | विषयानुसार इसमें गंभीरता प्रौढ़ता और शुष्कता रहती है |” (चौऋषि 85)

जब लेखक बुद्धि के सहारे किसी तथ्य का विवेचन तर्क-वितर्क अथवा विश्लेषण करता है तो उसे विचारात्मक शैली का सहारा लेना पड़ता है | इस शैली में भाषा सुगठित बौद्धिकता से परिपूर्ण एवं संक्षिप्त होती है | 21वीं सदी के वृद्ध विमर्श पर केंद्रित हिंदी कथा साहित्य में अनेक स्थानों पर किसी विषय अथवा घटना, पात्र, परिस्थिति, देशकाल, वातावरण के लिए विचारात्मक शैली' का प्रयोग किया है | ‘*चार दरवेश*’ उपन्यास के चिंताहरण की यह विचारधारा समाज में बूढ़ों की स्थिति की वास्तविकता को प्रस्तुत करती है | वे अपने अनुभव के आधार पर कहते हैं |

> “अपने देश में अधिकतर बूढ़ों की मृत्यु उनके अपने बच्चों, अपने सगों की उपेक्षा से होती है | इस उपेक्षा में उनको एकदम असहाय, निपट, अकेला बना देने वाली स्थितियाँ फिर रुकती नहीं हैं | वे एक के बाद दूसरी, दूसरी के बाद तीसरी प्रकट होकर आने लगती हैं, कपाटहीन कर दिये गये दरवाज़े के रास्ते से |(हृदयेश 143)

वृद्धावस्था में वृद्धों की परिपक्व विचारधारा व अनुभव समाज का आईना प्रस्तुत करती है |

5.4.12 प्रतीकात्मक शैली :

प्रतीक का शाब्दिक अर्थ – चिह्न | यह अंग्रेजी के ‘सिंबल’ शब्द के पर्याय के रूप में प्रयोग होता है | रामचंद्र वर्मा के अनुसार, “प्रतीक का शाब्दिक अर्थ है, प्रतिरूप, अंग, अवयव, भाग, अंश, आकृति, रूप, प्रतिमा, मूर्ति | प्रतीयते अनेन इति प्रतीक: | अर्थात जिससे प्रतीत हो या किसी वस्तु की अभिव्यक्ति हो, वह प्रतीक है |”(वर्मा 2208) अंत: कह सकते है कि प्रतीक किसी सूक्ष्म एवं स्पष्ट अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त होते हैं | डॉ. मुकेश अग्रवाल अपनी पुस्तक ‘*हिंदी भाषा की संरचना*’ में लिखते हैं – “प्रतीक का वास्तविक अर्थ है किसी अन्य के स्थान पर प्रयुक्त होने वाली वस्तु|”(अग्रवाल 217) वही धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार, “प्रतीक शब्द का प्रयोग उस दृश्य वस्तु के लिए किया जाता है, जो किसी अदृश्य (अगोचर या अप्रस्तुत) विषय का प्रतिविधान, इसके साथ अपने साहचर्य के कारण करती है अथवा कहा जा सकता है कि किसी अन्य स्तर को समानुरूप वस्तु द्वारा किसी अन्य स्तर के विषय का प्रतिनिधित्व करने वाली वस्तु प्रतीक है |” (वर्मा 515) अंत: कह सकते है कि प्रतीकों का प्रयोग किसी अदृश्य वस्तु को दृश्य बनाने के लिए किया जाता है | उमाकांत गुप्त के अनुसार, “प्रतीक विशिष्ट अर्थों के बोध के चिह्न है जो अपने युग, देश, संस्कृति और मान्यताओं से प्रभावित होने के कारण संदर्भानुसार परिवर्तनीय एवं भाव गुणादि के सम्बद्ध सत्य का अन्वेषण करने के लिए प्रयुक्त होते है |” (गुप्त 229) अंत: प्रतीक का प्रयोग किसी विशिष्ट अर्थ दर्शाने के लिए विशिष्ट परिस्थितियों में प्रयुक्त किया जाता है | इस प्रकार कहा जा सकता है कि प्रतीकात्मक शैली में प्रतीक मनुष्य के भावों की सूक्ष्म अभिव्यक्ति के साधन हैं, जिनके माध्यम से अमूर्त का प्रतिविधान मूर्त रूप में प्रस्तुत होता है | इस शैली में प्रतीकों के माध्यम से अमूर्त चीज मूर्त हो उठती है, सूक्ष्म चीज स्थूल हो उठती है | प्रतीकात्मक शैली में साहित्य के भावों को प्रतीकों द्वारा प्रकट किया जाता है | लेखक जब किसी विचारों

को प्रत्यक्ष रूप से कहने में असमर्थ होता है अर्थात जिन भावों को शब्दों के द्वारा प्रकट करना संभव न हो, उन्हें प्रतीकों के माध्यम से स्वाभाविक ढंग से प्रकट किया जाता है | साहित्य में नए प्रतीकों के प्रयोग से उसकी कलात्मकता में अत्यंत वृद्धि हुई है | इस प्रकार की शैली में वास्तविक अर्थ व्यक्त करने के लिए प्रतीकों का उपयोग किया जाता है | मूलतः प्रतीकों का प्रयोग कविता में होता है, परन्तु कथा साहित्य को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए इसमें भी प्रतीकात्मक शैली का प्रयोग किया जाता है |

चित्रा मुद्गल जी ने इस शैली का प्रयोग अपने उपन्यास '*गिलिगडु*' में कई जगह किया है | बाबू जसवंत सिंह अपने मित्र कर्नल स्वामी की मृत्यु की खबर सुनकर एक मोटे वृक्ष को अपनी बाहों में भर लेते हैं | उसका वर्णन मुद्गल जी ने प्रतीकात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है –

> "सूखी पपड़ियों से भरा वह बाँहों में न समा पाने वाला नीम का तना था...बाबू जसवंत सिंह..उसके वक्षस्थल पर सिर टीकाकार,...उसे महसूस करने की कोशिश की थी |...कर्नल स्वामी के वक्षस्थल पर...ऐसा ही आनंदमय दिव्य अनुभूति होती ! शायद नीम का वक्षस्थल उन्हीं का वक्षस्थल हो !" (मुद्गल 141)

प्रतीकों के माध्यम से गहन भावनाओं और जीवन के बड़े प्रश्नों को प्रस्तुत किया जाता है | यहाँ नीम का पेड़ एक बड़े भाई या दोस्त की तरह साथ निभाने वाला प्रतीक माना जा सकता है | कृष्णा सोबती के *'समय-सरगम'* उपन्यास भाषा-शैली की दृष्टि से एक प्रौढ़ उपन्यास है | इसमें सोबती जी ने विचारों की अभिव्यक्ति छोटे-छोटे ताजा तथा नवीन प्रतीकों का सहारा लेकर किया है | कुछ उदाहरण देख सकते हैं – "दूर दिखते खाली बेंच को आँखों से आरक्षित किया | हाँ आरण्या, पुराने नागरिकों को इस तरह की लापरवाहियाँ बहुत महंगी पड़ सकती है |"(सोबती 11) "क्या आपने कोने वाली नारंगी गुलाब की क्यारी में एक छोटी-सी सांवली गुलाब पत्रिका देखी |"(सोबती 12) काशीनाथ सिंह ने *'रेहन पर रग्घू'* उपन्यास में प्रतीकात्मकता का भी प्रयोग किया है | इस संबंध में वरिष्ठ आलोचक परमानन्द श्रीवास्तव लिखते हैं –

> "रघुनाथ अपने जीवन की लम्बाई नापते थे अपने पैरों से उसकी चाल और ताकत से; फेफड़ों में आती जाती सांसों से | एक समय था, जब वह पंद्रह सोलह मील चल जाते थे ननिहाल |... फिर यह लम्बाई घटनी शुरू हुई- आठ मिल, फिर छ: मील, फिर चार मील, फिर एक मील, और अब वह ढाबे में आकर सिमट गई थी | यही सच्चाई आजादी की है | घटते-घटते अपने तक सीमित | अब आदमी के आजादी के नियामक कोई और है | रघुनाथ काठ हो गए हैं आजादी भी काठ हो गई है |" (श्रीवास्तव 39)

डॉ. सूरज सिंह नेगी ने अपने उपन्यासों में प्रतीकात्मक भाषा का सफलता से प्रयोग किया है |'वसीयत' उपन्यास में बहती हुई नदी को बच्चों का प्रतीक माना है | उपन्यास में पात्र विश्वनाथ के पिता उसे नदी और बच्चों की समानताएँ बताते हुए कहते हैं –

> "च्यला ! देख बहती हुई नदी और बड़ी होती औलाद को एक जगह बांधकर नहीं रखा जा सकता | दोनों की प्रकृति ऐसी है कि बाहर निकल कर ही अपनी सार्थकता सिद्ध कर सकते हैं ...नदियाँ जब तक पहाड़ों के संपर्क में रहती हैं तब तक

अपने मूल स्वरूप में निश्चल भाव में बहती रहती हैं ...अंत में समुद्र में मिलकर एकाएक हो जाती हैं ...वहाँ जैसे किसी एक का अस्तित्व होता ही नहीं |" (नेगी 232)

नेगी जी यहाँ नदी के माध्यम से यह स्पष्ट करते हैं कि जो बच्चे रोजगार की तलाश में घर से दूर चले जाते हैं, वे इस चकाचौंध के सागर में खो जाते हैं और कभी अपने गाँव और जन्मभूमि नहीं लौट पाते हैं | डॉ सूरज सिंह नेगी के उपन्यास 'रिश्तों की आँच' में नीम के पेड़ को नायक के हमसफ़र के रूप में चित्रित किया गया है | जब नायक रामप्रसाद अपने गाँव से शहर आता है तब माँ का दिया हुआ नीम का पेड़ ही उसके साथ होता है, जो उसके रिटायर होने तक उसका मार्गदर्शक करता रहता है | वह अपने प्रत्येक सुख-दुःख को नीम के पेड़ के साथ साझा करता है | यहाँ नीम का पेड़ एक सच्चे दोस्त, हितैषी एवं पथ प्रदर्शक का प्रतीक है | इसका जीवंत उदाहरण –

"मन की पीड़ा सुनने वाला कोई न था, सिवाय परिसर में खड़े नीम के पेड़ के ...पेड़ के नीचे बैठने पर उसे महसूस होता है कि जैसे वह बड़े बुजुर्गों की छाया तले बैठा हो |" (नेगी 134)

21वीं सदी के लेखकों ने प्रतीकात्मक शैली के माध्यम से जीवन के कटु मधुर अनुभव को अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है | आज के जीवन में मूल्यों का विघटन, अजनबीपन, अकेलापन, संत्रास आदि को लेखकों ने प्रतीकात्मक शैली में व्यक्त किया है |

5.4.13 प्रश्नात्मक शैली

प्रश्नात्मक शैली में विचारों और भावनाओं को प्रश्नों के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है | प्रश्नों के माध्यम से संवाद को अधिक जीवंत और रोचक बनाया जाता है | काशीनाथ सिंह ने अपने उपन्यास *'रेहन पर रग्घू'* में विविध प्रसंगों में आपसी वार्तालाप एवं मन का दुःख महसूस करते समय इस शैली का प्रयोग किया है | पात्र स्वयं से भी प्रश्नात्मक शैली में वार्तालाप करते हैं | *'रेहन पर रग्घू'* उपन्यास का पात्र रग्घू जीवन से हताश अपने आप से प्रश्न करते नजर आते हैं –

"कितने दिन हो गए बारिश में भींगे ?

कितने दिन हो गए लू के थपेड़े खाए ?

कितने दिन हो गए जेठ के घाम में झुलसे ?

कितने दिन हो गए अंजोरिया रात में मटरगश्ती किए

कितने दिन हो गए ठंड में ठिठुर कर दांत किटकिटाए ?" (सिंह 12)

कभी-कभी प्रश्नों के माध्यम से भावनाओं को भी तीव्रता से व्यक्त किया जाता है | डॉ. सूरज सिंह नेगी के *'नियति चक्र'* उपन्यास में प्रश्नात्मक शैली का प्रयोग डॉ. अवस्थी के संदर्भ में करते हैं | सेठ नितिन घोष द्वारा उनकी मदद करने पर अपने ही प्रश्नों से घिरा हुआ पाते है | डॉ. अवस्थी बार-बार खुद से यही प्रश्न पूछते रहते है | "सेठ नितिन घोष ने ऐसा क्यों किया होगा ? आखिर उनको ऐसा करने

से क्या मिला ? मेरा क्या रिश्ता था उनसे ?"(नेगी 47) प्रश्नों से जिज्ञासा और सोच की गहराई बढ़ती है | इस शैली का प्रयोग भी लेखकों ने बड़े प्रभावी ढंग से किया है |

5.4.14 स्वप्न शैली

स्वप्न शैली अर्थात किसी व्यक्ति के द्वारा देखे गए स्वप्न का चित्रण | वृद्धावस्था के दौरान वृद्धों की मानसिक पीड़ा उन्हें स्वप्न में स्वयं से साक्षात्कार करवाती है | हृदयेश के 'चार दरवेश' उपन्यास में शिवशंकर अपने दुखद जीवन से सम्बंधित स्वप्न देखते है और उसका जिक्र अपने मित्रों को पत्रों के माध्यम से करता है | "एक पत्र में उन्होंने लिखा कि दो बार उनको सपने में रामप्रसाद गुप्ता दिखाई दिये | सपने में गुप्ता जी कह रहे थे कि उन्होंने बेटी-दामाद को अपने घर में रखकर गलती की | भाई शिवशंकर वही गलती आपने अपना घर बेचकर बेटे के पास रहना स्वीकार कर की |"(हृदयेश 153) यहाँ लेखक स्वप्न के माध्यम से वृद्धों की व्यथा को प्रकट करते हैं | निर्मल वर्मा के '*अंतिम अरण्य*' उपन्यास में भी लेखक स्वप्न शैली का प्रयोग करते हैं | लेखक अपने सपने का जिक्र करते हुए लिखते हैं – "उस रात मुझे एक अजीब सा सपना आया | सुबह उठा तो ठीक से याद भी नहीं रहा | सपने के कुछ सिकुड़े टुकड़े ही बचे रह गए थे ...मैंने देखा, हम सिमिट्री में खड़े हैं | वह नीचे उतर रही हैं, कोई मेरे कानों में कह रहा है -देखो, उस रात तो वो बच गई, लेकिन अब में जा रही हूँ | (वर्मा 53) 21वीं सदी के कुछ साहित्यकारों ने अपने कथा साहित्य में स्वप्नवत वातावरण का चित्रण किया है |

5.4.15 समास शैली

समास शैली में कथ्य को संक्षेप में प्रस्तुत किया जाता है | इस शैली का प्रयोग साहित्यकार वहाँ करता है जहाँ कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक भावों या विचारों को प्रकट किया जाता है | कथा साहित्य की विषय-वस्तु को संक्षेप में प्रस्तुत करने के लिए कथाकार समास शैली का प्रयोग करता है | गीता राम शर्मा के अनुसार, "इस शैली के अंतर्गत कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक भाव व्यक्त किए जाते हैं |" (शर्मा 177) समास शैली का प्रयोग करने के लिए साहित्यकार अभिधा शब्द शक्ति की जगह लक्षणा और व्यंजना शब्द शक्तियों का प्रयोग करता है | मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग भी इस शैली में होता है | अंत: कह सकते है कि लेखक इस शैली का प्रयोग कर अपने भावों व विचारों को कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक गूढ़ अर्थ प्रकट करता है | कृष्णा सोबती के उपन्यास 'समय सरगम' में यत्र-तत्र समास शैली का प्रयोग हुआ है, जिससे उपन्यास में बड़े कथन को संक्षिप्त रूप से कहने में सफलता प्राप्त हुई है |

5.4.16 व्यास शैली

समास शैली की विपरीत व्यास शैली है | इसमें लेखक अपने भावों व विचारों को विस्तारपूर्वक पाठक के सामने प्रस्तुत करता है | इस शैली से सर्वसाधारण जन भी आसानी से समझ सकते हैं | इसमें पाठ की समझ के लिए साहित्यकार अनेक उदाहरण प्रस्तुत करता है | इसमें रचना की व्याख्या साधारण शब्दों, वाक्यों एवं उदाहरणों की सहायता से की जाती हैं | सावित्री मिश्र के

अनुसार, "व्यास शैली में, शैली की अपेक्षाकृत कथात्मकता, संगीतात्मकता, उपदेशात्मकता एवं भाषण की शिथिलता मिलती है |" (मिश्र 32) अंत: व्यास शैली में रचना को विस्तारपूर्वक एवं उपदेशात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाता है | कृष्णा सोबती के '*समय सरगम*' उपन्यास में व्यास शैली का प्रयोग निम्नलिखित पंक्तियों में देख सकते है –

> "अनुशासन- हाँ, अपने पास भी है | आपके पास शास्त्र है और अपने पास शास्त्र आप ही विभाजन कर रही है | पूरा देश उलझा है जातीय स्मृति की खलबती में ! मैं द्विज हूँ, मैं ब्राह्मण हूँ, मैं क्षत्रिय, मैं राजपूत, मैं अराजपूत, मैं जाट-गूजर, मैं कमजोर वर्ग, मैं दलित, मैं अनुसूचित, ठहरिए-ठहरिए, भारतीयता कहाँ ? भारतीयता ? वह न्यायालय के तराजू में |"(सोबती 13)

यहाँ व्यास शैली के माध्यम से देश के विभाजन के लिए उत्तरदायी तत्वों का विस्तार से वर्णन किया है | जाति को विभाजन के प्रमुख कारण के रूप में चित्रित किया है | इसके कारण हमारी भारतीयता खतरे में पड़ गई है |

5.4.17 बिम्बात्मकता

बिम्ब का शाब्दिक अर्थ 'शब्द चित्र' है अर्थात जो चित्र भावात्मक होता है जिसका संबंध मानव जीवन के व्यावहारिक क्षेत्रों और कल्पना के शाश्वत जगत से होता है | बिम्ब शब्द अंग्रेजी के 'इमेज' शब्द का हिंदी रूपान्तर है जिसका अर्थ है किसी पदार्थ को मूर्त रूप प्रदान करना | किसी भी साहित्यकार के पास मानसिक उद्गार भाव एवं अनुभूति अमूर्त रूप में होते है | इन्हीं अमूर्त भावों अनुभूतियों को मूर्त रूप प्रदान करने के लिए शब्द चित्रों की आवश्यकता पड़ती है, ये शब्द चित्र ही बिम्ब कहलाते है | डॉ. नगेन्द्र के अनुसार, "बिम्ब एक प्रकार का चित्र है, जो किसी पदार्थ के साथ विभिन्न इन्द्रियों के चित्र में उद्बुद्ध हो जाता है |"(नगेन्द्र 5) साहित्यकार अपनी रचना में अमूर्त को मूर्त प्रदान करने के लिए बिम्ब का सहारा लेता है | बिम्ब योजना किसी भी साहित्यिक रचना का मुख्य आधार होते है | 21वीं सदी में वृद्ध विमर्श पर केन्द्रित हिंदी कथा साहित्य में बिम्बों का खूब प्रयोग किया है - काशीनाथ सिंह ने अपने उपन्यास '*रेहन पर रग्घू*' को बिम्ब योजना के माध्यम से सशक्त बनाया है | उपन्यास के आरम्भ में ही बारिश का बिम्ब बहुत ही सटीक प्रयुक्त किया गया है | यथा –

> "शाम तो मौसम ने कर दिया था वरना थी दोपहर | थोड़ी देर पहले धूप थी ... आंगन और लॉन बड़े-बड़े ओलो और बर्फ के पत्थरों से पट गये और बारजे की रेलिंग टूट कर दूर जा गिरी-धड़ाम | उसके बाद जो मुसलाधार बारिश शुरू हुई तो वह पानी की बूँदें नहीं थीं – जैसे पानी की रस्सियाँ हों जिन्हें पकड़कर कोई चाहे तो वहाँ तक चला जाय जहाँ से ये छोड़ी या गिराई जा रही हों" (सिंह 11, 154)

बिम्बों के माध्यम से पात्रों के मनोभाव, वातावरण और थीम को गहराई से संप्रेषित किया जाता है | बिम्बों से उत्पन्न छवियाँ मन में अमित छाप छोड़ती है | साहित्य में बिम्बात्मकता इन्द्रियों को जागृत कर कल्पना को विस्तारित करती है | किसी भी रचना की जीवंतता और गहराई 'बिम्बों' के प्रभाव से ही सशक्त होती है |

- **निष्कर्ष :**

हर साहित्यिक रचना का अपना एक अभिव्यक्ति पक्ष होता है | अभिव्यक्ति पक्ष के अंतर्गत भाषा और शिल्प दोनों का समावेश होता है | भाषा के माध्यम से हर मनुष्य परस्पर विचार-विनिमय करता है | प्रत्येक साहित्यकार भाषा के द्वारा ही अपनी साहित्य कृति को अभिव्यक्त करता है | 21वीं सदी के वृद्ध विमर्श पर केंद्रित हिंदी कथा साहित्य के भाषागत और शैलीगत मूल्यांकन करने के उपरांत जो तथ्य उजागर हुए हैं वे इस प्रकार है – 21वीं सदी के वृद्ध विमर्श पर केंद्रित हिंदी कथा साहित्य के कथाकारों ने अपने कथा साहित्य में वैविध्यपूर्ण, लालित्यपूर्ण, पात्रानुकूल, प्रवाहमयी, रोचक और जीवंत भाषा का प्रयोग किया है | भाषा में तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशज शब्दों का पात्रानुकूल प्रयोग किया गया है | इनकी रचनाओं में मुहावरों, कहावतों का भी सुंदर प्रयोग हुआ है | साहित्यकारों ने अपनी भाषा के द्वारा अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की हैं | अपनी रचनाओं में भाषा के विविध, सही व उपयुक्त प्रयोग से रचनाओं को रोचक, प्रभावशाली एवं विश्वसनीय बनाने का प्रयास किया है | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में जीवन के नए-नए अनुभव तो व्यक्त हुए हैं साथ ही उन अनुभवों को अभिव्यक्त के लिये नये शिल्प का संधान भी किया गया है | सभी कथाकारों की शैलियों में विविधता नजर आती हैं | सभी ने आवश्यकता अनुसार अनेक शैलियों का प्रयोग किया हैं | जिसमें पत्र शैली, स्वप्न शैली, व्यंग्यात्मक शैली, आत्मकथात्मक शैली, वर्णनात्मक शैली, पूर्वदीप्ति शैली, संवाद शैली इत्यादि शैलियों का प्रयोग स्पष्टता से परिलक्षित होता है | इस प्रकार देख सकते हैं सभी लेखकों की भाषा शैली में बहुआयामी रूपों के दर्शन होते हैं | सभी लेखकों ने अपने अनुभव के आधार पर भाषा-शैली का अपने उपन्यासों व कहानियों में अत्यंत सहज और प्रभावशाली प्रयोग किया है | अंतत: यह कहा जा सकता है कि भाषागत एवं शिल्पगत वैविध्यमय प्रयोगों की दृष्टि से 21सदी का हिंदी कथा साहित्य बहुत समृद्ध हुआ है |

सन्दर्भ ग्रन्थ :-

सहायक ग्रन्थ –

अग्रवाल, मुकेश. हिंदी भाषा की संरचना. दिल्ली, प्रथम संस्करण, के. एल. पचौरी प्रकाशन, 2016.

करुणापति, पं. त्रिपाठी. *शैली*. साहित्य ग्रंथमाला कार्यालय बनारस, 1998.

गुलाबराय. *सिद्धांत और अध्ययन*. दिल्ली, आत्माराम एंड सन्ज, 1975.

गुलाबराय. *काव्य के रूप*. दिल्ली, आत्माराम एंड सन्ज, 2008.

गुरु, कामताप्रसाद. *हिन्दी व्याकरण*. प्रकाशन संस्थान, 2009.

गुप्त, अवधेश मोहन. राजभाषा सहायिका. प्रथम संस्करण, प्रभात प्रकाशन, 2015.

गुप्त, उमाकांत. *नई कविता के प्रबंध काव्य : शिल्प और जीवन दर्शन*. वाणी प्रकाशन, 2000.

चौऋषि, शंकरदयाल. *द्विवेदीयुगीन हिंदी गद्य शैलियों का अध्ययन*. दिल्ली, भारतीय साहित्य मंदिर, 1965.

तिवारी, डॉ. भोलानाथ. *शैलीविज्ञान*. नई दिल्ली, प्रथम प्रकाशन, किताबघर प्रकाशन, 2018.

तिवारी, डॉ. भोलानाथ. *भाषा विज्ञान प्रवेश एवं हिंदी भाषा*. नयी दिल्ली, किताबघर प्रकाशन, 2012.

तिवारी, डॉ. भोलानाथ. *भाषा विज्ञान*. नई दिल्ली, किताब महल पब्लिशर्स, 2023.

तिवारी, डॉ. भोलानाथ. ‘हिंदी भाषा. नई दिल्ली, किताब महल पब्लिशर्स, 2023.

दास, श्यामसुन्दर. *साहित्यालोचन*. वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2017.

द्विवेदी, डॉ. कपिलदेव. *भाषा-विज्ञान एवं भाषा-शास्त्र*. वाराणसी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, उन्नीसवाँ संस्करण, 2024

नगेन्द्र. *काव्यबिम्ब*. नयी दिल्ली, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 1967.

नगेन्द्र. *शैली विज्ञान*. नयी दिल्ली, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 2005

पाण्डेय, डॉ. पृथ्वी. *सामान्य हिंदी*. नालंदा पब्लिशिंग हाउस, 2009.

भटनागर, डॉ. प्रेम. *हिंदी उपन्यास शिल्प : बदलते परिप्रेक्ष्य*. जयपुर, अर्चना प्रकाशन, 1968.

मिश्र, रामदरश. *हिंदी उपन्यास एक अंतर्यात्रा*. राजकमल प्रकशन, 2016.

मिश्र, सावित्री. अज्ञेय की गद्य शैली. 1979.

लाल, लक्ष्मीनारायण. हिंदी कहानियों की शिल्प विधि का विकास, इलाहाबाद, साहित्य भवन लिमिटेड, 1953.

वर्मा, धीरेन्द्र. *हिंदी साहित्य कोश*. वाराणसी, ज्ञानमंडल लिमिटेड, 2013.

वर्मा, रामचंद्र. *अच्छी हिंदी*. लोक भारती प्रकाशन, पचीसवां संस्करण, 2012.

शर्मा, देवेन्द्रनाथ. शर्मा, दीप्ती. *भाषाविज्ञान की भूमिका*. दिल्ली, राधाकृष्ण प्रा.लि., 2015.

शर्मा, राधा कृष्ण. शर्मा, रामदत. और नागोरी, अम्बालाल. *हिंदी भाषा और साहित्य शिक्षण*. दिल्ली, साहित्य सहकार, 2008.

शास्त्री, चंद्रशेखर. *भाषा विज्ञान (सिद्धांत एवं प्रयोग)*. दिल्ली, नव भारत प्रभात साहित्य, प्रथम संस्करण, 2017.

शिरसाट, डॉ. सोनिया. राजेन्द्र यादव के कथा साहित्य का मनोवेश्लेश्नात्मक विवेचन, कानपुर, विद्या प्रकाशन, 2011.

सक्सेना, बाबूराम. *सामान्य भाषा विज्ञान*. हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, 2004.

सक्सेना, उषा. *हिंदी उपन्यासों का शिल्पगत विकास*. इलाहावाद, शोध साहित्य प्रकाशन, 1972.

सम्पादक, पल्लव. बनास प्रकाशक. चितौड़गढ़. 2009.

सिंह, योगेन्द्र प्रताप. *भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका*. लोकभारती प्रकाशन, 2007.

श्रीवास्तव, रवीन्द्रनाथ. *संरचनात्मक शैली विज्ञान*. दिल्ली, आलेख प्रकाशन, 2020.

श्रीवास्तव, रवीन्द्रनाथ. *हिंदी भाषा : संरचना के विविध आयाम*. नयी दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन, पाँचवाँ संस्करण, 2015.

श्रीवास्तव, परमानंद. कथाक्रम. लखनऊ, 2008.

कोश ग्रन्थ

कपूर, बद्रीनाथ. *वैज्ञानिक परिभाषा कोश*. शब्द लोक प्रकाशन, 1965.

कपूर, बद्रीनाथ. *हिंदी मुहावरे और लोकोक्ति कोश*. इलाहबाद, लोकभारती प्रकाशन, 2007.

प्रसाद, कालिका. *बृहद हिंदी कोश*. ज्ञानमंडल, 2014.

दास, श्यामसुन्दर. *हिंदी शब्दसागर*. काशी नागरी प्रचारिणी सभा, 1929.

बाहरी, हरदेव. *राजपाल हिंदी शब्दकोश*. राजपाल एंड सन्ज, 2022.

बाहरी, हरदेव. *बृहत अंग्रजी-हिंदी कोश*. वाराणसी, ज्ञानमंडल लिमिटेड, 2019.

वर्मा, रामचंद्र. *संक्षिप्त हिंदी शब्द सागर*. वाराणसी, नागरीप्रचारिणी सभा, 2013.

आधार ग्रन्थ :

उपन्यास

कालिया, ममता. *दौड़*. नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, छठा संस्करण, 2021.

टेकचंद. *दाई*. नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2017.

नेगी, सूरज सिंह. *रिश्तों की आँच*. जयपुर, हेरिटेज पब्लिकेशन्स, संस्करण, 2016.

नेगी, सूरज सिंह. *वसीयत*. जयपुर, साहित्यागार, संस्करण, 2018.

मुद्गल, चित्रा. *गिलिगडु*. नयी दिल्ली, सामयिक प्रकाशन, सातवां संस्करण, 2020.

सिंह, काशीनाथ. *रेहन पर रग्घू*. दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, चौथा संस्करण, 2014.

सोबती, कृष्णा. *समय सरगम*. दिल्ली, राजकमल पेपरबैक्स, चौथा संस्करण, 2019.

हृदयेश. *चार दरवेश*. नयी दिल्ली, भारतीय ज्ञानपीठ, पहला संस्करण, 2011.

वत्स, राकेश. *फिर लौटते हुए*. दिल्ली, राजपाल एंड सन्ज, प्रथम संस्करण, 2003.

वर्मा, रवीन्द्र. *आख़िरी मंजिल*. दिल्ली, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. पहली आवृत्ति, 2009.

वर्मा, रवीन्द्र. *पत्थर ऊपर पानी*. नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, पहला संस्करण, 2000.

कहानी

अग्निहोत्री, कृष्णा. *अपना-अपना अस्तित्व*. दिल्ली, नयी किताब प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2018.

हरनोट, एसआर. *कीलें*. नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2019.

हरनोट, एसआर. *दारोश तथा अन्य कहानियां*. हरियाणा. आधार प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2001.

मेहरा, डॉ. दिलीप. *वृद्धावस्था केन्द्रित हिंदी कहानियाँ*. कानपुर, उत्कर्ष पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, 2022

http://www.abhivyakti-hindi.org/kahaniyan/2003/daadi_aur_remote/dadi02.htm

पत्रिकाएँ

मेहरा, डॉ. दिलीप. *साजिश*. साहित्य वीथिका, वर्ष-12, अंक-19, जून 2021.

छठा अध्याय

21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की समस्याओं के निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण

क्रमांक	विवरण	पृष्ठ संख्या
छठा अध्याय	**21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की समस्याओं के निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण**	**312-350**
6.1	**21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों के वैयक्तिक समस्याओं हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण** 6.1.1 स्वस्थ व संतुलित भोजन 6.1.2 नियमित व्यायाम करना 6.1.3 समय पर खाना-पीना व सोना 6.1.4 डॉक्टर की सलाह के बिना दवाई का सेवन न करना 6.1.5 समय पर इलाज करना	
6.2	**6.2 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों के पारिवारिक समस्याओं हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण** 6.2.1 संयुक्त परिवार को विघटन से रोकना 6.2.2 वृद्धों को सम्मान और भावनात्मक सुरक्षा 6.2.3 वृद्धों को बोझ न मानना बल्कि मार्गदर्शक समझकर सम्मान देना 6.2.4 वृद्धों को नई पीढ़ी के जीवन में अत्यधिक दखल न देना 6.2.5 हमउम्र वृद्धों से मेलजोल बनाना 6.2.6 अकेले रह रहे वृद्धों को खुश व संतुष्ट रहना चाहिए 6.2.7 पुस्तकें पढ़ना, लिखना दिनचर्या का हिस्सा बनाना 6.2.8. वृद्धावस्था में जीवनसाथी का साथ 6.2.9 नई पीढ़ी व पुरानी पीढ़ी में समन्वय	

6.3	**21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की सामाजिक समस्याओं हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण** 6.3.1 सामाजिक मूल्यों को बचाना 6.3.2 कल्याणकारी योजनाओं व रियायतों के प्रति जागरूक 6.3.3 सामाजिक कार्यक्रमों में जाना 6.3.4 अच्छे पार्क की व्यवस्था 6.3.5 साहित्य व समाज सेवा में ध्यान देना 6.3.6 निराश्रित वृद्धों के लिए वृद्धाश्रम 6.3.7 आर्थिक संपन्नता व संतान के होते हुए भी वृद्धाश्रम में वृद्धों को भेजना सही नहीं 6.3.8 अनाथाश्रम व वृद्धाश्रम को एक करना 6.3.9 वृद्ध संगठनों से जुड़ना 6.3.10 दोस्तों से मिलने जाना	
6.4	**21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की आर्थिक समस्याओं हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण** 6.4.1 वृद्धों का निशुल्क इलाज 6.4.2 वृद्धावस्था पेंशन की राशि में इजाफा 6.4.3 वृद्धों को समय से पहले धन-संपत्ति बच्चों के नाम नहीं करनी चाहिए 6.4.4 आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर 6.4.5 क्षमता अनुसार छोटे-मोटे कार्य करना 6.3.6 युवाओं के पलायन को रोकना 6.3.7 धन से ज्यादा रिश्तों को महत्व देना	
6.5	**21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की सांस्कृतिक समस्याओं हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण** 6.5.1 अपनी सभ्यता व संस्कृति के मूल्यों को बचाना 6.5.2. युवाओं में मूल्यों व संस्कारों का विकास करवाना 6.5.4. युवाओं को अपनी जिम्मेदारी का अहसास करवाना 6.5.5 धार्मिक, सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन	

6.6	**21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की मनोवैज्ञानिक समस्याओं हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण** 6.6.1 मृत्यु के भय की बजाय जिन्दगी को ख़ुशी से जीना 6.6.2 वृद्धावस्था में भावनात्मक व मनोवैज्ञानिक सहारे की आवश्यकता 6.6.3 नियमित रूप से पार्क जाना	
•	**निष्कर्ष**	
•	**सन्दर्भ सूची**	

छठा अध्याय

21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की समस्याओं के निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण

21वीं सदी के चयनित हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि वृद्धों को अनेक वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक तथा मनोवैज्ञानिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है | आधुनिक जीवन के परिवेश और भाग-दौड़ भरे जीवन में वृद्धों की समस्याएं बढ़ती जा रही हैं | नई पीढ़ी का भौतिक वस्तुओं के प्रति बढ़ता प्यार और स्वार्थी प्रवृत्ति वृद्धों के लिए समस्या उत्पन्न कर रही हैं | यदि वृद्धों की समस्याओं पर समय रहते ध्यान न दिया तो ये समस्याएं गम्भीर रूप धारण कर लेंगी | अतः इनकी निरन्तर बढ़ती हुई वृद्धों की समस्याओं के निराकरण के लिए एक कारगर पहल करने की आवश्यकता है | हमारे देश में परिवार व समाज के विकास का जो ढांचा खड़ा है उसे मूर्त रूप प्रदान करने में वृद्धों का अमूल्य योगदान शामिल है | अतः वृद्धों के प्रति आभार के रूप में उनकी समस्याओं का निराकरण करना ही सरकार, समाज व परिवार की प्रमुख जिम्मेदारी है | वृद्धावस्था में भले ही वृद्धों की शारीरिक अशक्तता के कारण अनुत्पादक समझे जाते हों और क्रियाशील व्यक्तियों या परिवार के ऊपर एक बोझ के स्वरूप में आश्रित हों, परन्तु वृद्ध वर्तमान में भी परिवार व समाज में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं | शारीरिक रूप से कमजोर महसूस करते हैं, परन्तु उनका मस्तिष्क आज भी परिपक्व व ज्ञान का भण्डार है | वृद्ध अपने अनुभवों के आधार पर नई पीढ़ी को एक रचनात्मक दिशा प्रदान कर सकते हैं | वृद्धों की स्थिति और समस्याओं को 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में बखूबी उद्घाटित किया है परन्तु समस्या के समाधान से संबंधित उपायों के बारे में थोड़ा कम ध्यान दिया गया है | अंत: 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य के प्रमुख उपन्यासों व कहानियों को पढ़ कर वृद्धों की समस्याओं के समाधान हेतु निम्नलिखित सांकेतिक उपायों के बारे में सोचा जा सकता है -

6.1 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की वैयक्तिक समस्याओं हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण

मनुष्य अपने जीवन के अंतिम पड़ाव में विभिन्न वैयक्तिक समस्याओं से ग्रसित होता है | शारीरिक शक्ति का क्षीण होना और शारीरिक अस्वस्थता वृद्धों के जीवन की सबसे बड़ी समस्या है | फ्रायड के अनुसार एक व्यक्ति जैसे-जैसे वृद्ध होता जाता है वह तीन ओर से प्रभावित होता है | स्वयं के शरीर द्वारा, बाह्य जगत से एवं अन्य व्यक्तियों के साथ संबंधों में परिवर्तन द्वारा | वैयक्तिक समस्याओं के निवारण हेतु 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में कुछ सांकेतिक समाधान के सुझाव दिए गए हैं |

6.1.1 स्वस्थ व संतुलित भोजन

वृद्धावस्था में स्वस्थ और संतुलित भोजन एक अच्छा स्वास्थ्य बनाए रखने और उम्र से सम्बंधित शारीरिक और मानसिक समस्याओं से बचने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है | वृद्धावस्था में व्यक्ति को अपने खान-पान का विशेष ध्यान रखना चाहिए | इस

अवस्था में अधिक तेल-घी के खाद्य पदार्थ , मिर्च-मसाले वाले व्यंजनों का सेवन नहीं करना चाहिए | उम्र के इस पड़ाव में पाचन शक्ति कमजोर पड़ने लगती है | उम्र की इस अवस्था में खाने में परहेज रखना बहुत आवश्यक है | खाने में फल, सब्जियां, प्रोटीन और कम वसा वाला आहार लेना चाहिए | इस अवस्था में शरीर की पोषण संबंधी आवश्यकताएं बदल जाती हैं, जिससे संतुलित आहार लेना और भी अधिक आवश्यक हो जाता है | कृष्णा सोबती के *'समय सरगम'* उपन्यास में वृद्ध पात्र ईशान खान-पान का विशेष ध्यान रखते हैं | आरण्या को भी समय-समय पर हिदायत देते रहते हैं | "पुराने शरीर में कुछ भी खुरापात उठ सकती है | प्लेट आगे की तो ईशान ने बिस्कुट उठाया | काजू की प्लेट परे सरका दी | काजू से परहेज करना ही अच्छा है | इसमें हाई कोलेस्ट्रोल होता है |"(सोबती 32) वृद्धावस्था में अधिक गर्म चीजे, तली हुई चीजे तथा अधिक मसालेदार खाना स्वास्थ्य और सेहत के लिए उचित नहीं है | वृद्धजनों को ज्यादा चाय के सेवन से भी बचना चाहिए | चाय का अधिक सेवन वृद्धजनों के स्वास्थ्य के लिए सही नहीं है | *'समय-सरगम'* में इस हेतु संकेत दिए है | ईशान और आरण्या के संवादों में देख सकते हैं- "ज्यादा चाय सेहत के लिए अच्छी नहीं | जी हाँ, सेहत के लिए ही – क्यों न हल्दी दूध मिलाकर एक दूसरे के स्वास्थ्य की कामना करें | उल्लास-उल्लास- आयुर्वेदिक उल्लास |"(सोबती 52) आरण्या अपने सेहत को लेकर ज्यादा चिंतित नहीं रहती न समय पर सोती, न खाती इसके साथ चाय का बहुत सेवन करती हैं | ईशान उसे इन सब बातों के लिए टोकते रहते हैं | "आरण्या दूसरा प्याला बना रही हैं अपने लिए | बहुत गर्म चाय ठीक नहीं | लीवर और दांतों को बहुत नुकसान करती है | हूँ | बदन की पुरानी व्याधियों को भी उकसा देती होंगी |"(सोबती 54) वृद्धावस्था में मनुष्य को इन छोटी-छोटी बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए | इस उम्र में क्या खाना है, कब खाना है, कितनी मात्रा में लेना है, ताकि अपने स्वास्थ्य और सेहत के बारे में ध्यान रख सकें | आरण्या अपने आलसी स्वभाव के कारण अपने खान-पान पर भी ध्यान नहीं देती है | जिससे उसे सिर में दर्द, माथे में घुमेर, मुहँ के सूखने आदि समस्याओं का सामना करना पड़ता हैं | ईशान तब उसे इसका समाधान बताता है | "शहद और नींबू हैं | अंकुरित दालें हैं | भीगा और भुना हुआ दलिया |...आपको दलिया बनाकर कर खिलाऊंगा |"(सोबती 61) इस प्रकार देख सकते है कि मनुष्य अगर स्वस्थ व संतुलित भोजन खाता है तो कुछ हद तक वह शारीरिक रोगों से बच सकता है | राकेश वत्स के उपन्यास 'फिर लौटते हुए' में वृद्ध दिवाकर शर्मा को डॉ. मितल संतुलित भोजन, टमाटर और खट्टी चीजों से परहेज की सलाह देते हैं | वे कहते हैं "लो ब्लड प्रेशर और यूरिक एसिड बढ़ जाने की वजह से कमजोरी और जोड़ो में दर्द की समस्या है जो संतुलित भोजन और दस-बारह दिन तक जिलोरिक की गोलियाँ लेने से हल हो जाएगी, लेकिन इनको टमाटर वगैरह खट्टी चीजों का परहेज करना चाहिए |"(वत्स 17) वृद्धावस्था में संतुलित आहार शारीरिक स्वास्थ्य, मांसपेशियों को ताकत, बीमारियों को नियंत्रित करने और रोग-प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए आवश्यक है | वृद्धावस्था में संतुलित और स्वस्थ भोजन व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता को सुधरने में सहायक होता है | सही पोषण और खानपान के साथ न केवल बीमारियों को रोका जा सकता है, बल्कि व्यक्ति शारीरिक और मानसिक रूप से सक्रिय और खुशहाल जीवन भी जी सकता है | परिवार और समाज को भी बुजुर्गों के खानपान का ध्यान रखने और उनके आहार को उचित रूप से व्यवस्थित करने में सहयोग देना चाहिए |

6.1.2 नियमित व्यायाम करना

नियमित व्यायाम करना हर उम्र के व्यक्ति के स्वास्थ्य के लिए एक वरदान की तरह है | वृद्धावस्था में शारीरिक, मानसिक व्याधियों को दूर करने के लिए तथा शरीर को स्वस्थ, मजबूत और सक्रिय बनाए रखने के लिए नियमित आसान-आसान व्यायाम व योग करना बेहद जरूरी है | उम्र बढ़ने के साथ शारीरिक क्षमता और मांसपेशियों की ताकत कम होने लगती है | ऐसे में नियमित और हल्के व्यायाम न केवल शारीरिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाते हैं, बल्कि मानसिक शांति और ऊर्जा भी प्रदान करते हैं | समय पर खाना-पीना, समय पर सोना, रोज पार्क में टहलना और नियमित व्यायाम मनुष्य के शरीर को गंभीर रोगों से बचा सकता है | कृष्णा सोबती के *'समय-सरगम'* उपन्यास में ईशान आरण्या को समय पर सोने, रोज पार्क में जाने तथा आसान व्यायाम करने के लिए कहते हैं –

> "सुबह देर तक सोना अच्छा नहीं | जानती हूँ, पर दशकों लंबी आदत को बदलना आसान नहीं | इशान बोले- आसान व्यायाम देह को सजग रखते हैं | उम्र के इस छोर पर पहुँचकर देह-संचारिणी सिकुड़ने लगती है | शिथिल पड़ जाती है, इसलिए किसी न किसी तरह की हरकत जरूरी है | रोज की सैर तो और भी |"(सोबती 33-34)

सक्रिय रहना मांसपेशियों और जोड़ों को मजबूत बनाए रखता है | हल्का योग, सैर, और ताकत बढ़ाने वाले व्यायाम मांसपेशियों को मजबूत रखने में मदद करते हैं | वृद्धावस्था में अगर मनुष्य हर दिन आसान-आसान व्यायाम, सुबह-शाम पार्क में जाकर सैर और खाने का विशेष ध्यान रखे तो शारीरिक व्याधियों से बचा जा सकता है | योग, सैर, और हल्की कसरत जैसे सरल व्यायाम न केवल शरीर को फिट रखते हैं, बल्कि उम्र के साथ आने वाली बीमारियों और समस्याओं को भी दूर करते हैं | नियमितता, संयम और उचित दिशा-निर्देशों के साथ किया गया व्यायाम वृद्धावस्था को स्वस्थ और सक्रिय बनाने में मदद करता है |

6.1.3 समय पर खाना-पीना व सोना

समय पर खाना-पीना व सोना वृद्धजनों की सेहत व स्वस्थ जीवनशैली बनाए रखने के लिए बहुत आवश्यक है | समय पर खाना न खाने या बासी खाने से भी कई तरह की बीमारियाँ मनुष्य के शरीर में धीरे-धीरे घर कर जाती है | उसी तरह समय पर नींद न लेना या कम मात्रा में नींद लेना भी स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालती है | समय पर खाना व सोना वृद्धों के लिए बहुत जरूरी होता है | इस अवस्था में उनका शरीर शारीरिक रूप से कमजोर हो जाता है इसलिए उन्हें अपने खाने-पीने व सोने का विशेष ध्यान रखना चाहिए | कृष्णा सोबती के *'समय सरगम'* उपन्यास में ईशान अपनी पड़ोसिन आरण्या को समय पर सोने के लिए कहता है –

> "साढ़े चार, सुबह घर से निकलूंगा | बहादुर छुट्टी पर है सो ताली आपके पास छोड़ने की सोच रहा हूँ | इतने जल्दी आपको उठने में परेशानी तो न होगी | नहीं | मैं तब तक सोती नहीं | चाय पी रही होती हूँ | ईशान गंभीरता से बोले- नियमानुसार कुछ काम करने जरूरी हैं | रात का सोना सबसे जरूरी | हाजमा ठीक से काम नहीं करता |"(सोबती 37)

पर्याप्त और समय पर सोने से दिमाग आराम करता है और तनाव कम होता है | अच्छी नींद लेने से शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बेहतर होती है | समय पर सोने के साथ समय पर खाना भी बहुत आवश्यक है | वृद्धावस्था में अगर व्यक्ति समय पर संतुलित खाना न खाए तो उसे कई तरह के शारीरिक समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है | आरण्या न समय पर खाना खाती न समय पर

सोती है | ईशान उसे इन आदतों को बदलने के लिए कहते हैं – "नाश्ता हो चूका ? अभी नहीं | ग्यारह बज चुके हैं | सुबह के नाश्ते को गंभीरता से लेना जरूरी है | आप ठीक कह रहे हैं पर मैं अपनी बुरी आदतों से छुटकारा अब कहाँ पा सकती हूँ |"(सोबती 52) नियमित भोजन समय पर भोजन करने से पाचन तंत्र सही ढंग से काम करता है गैस, एसिडिटी जैसी समस्याओं से बचा जा सकता है | अंत: व्यक्ति को समय रहते खाने-सोने की सही आदतों का अपने जीवन में अपनाना चाहिए, ताकि वृद्धावस्था में ज्यादा से ज्यादा शारीरिक समस्याओं का सामना न करना पड़े | आरण्या अपनी इन आदतों की वजह से छोटी-मोटी व्याधियों से घिरी रहती है | वह खुद स्वीकार करते हुए कहती भी हैं – "सिर में दर्द, माथे में घुमेर, जबान का सूखना, जिगर का रूठना | वैसे तो स्वयं जिम्मेवार हूँ | रात को कम सोती हूँ तो इसकी बाकायदा सजा पाती हूँ |"(सोबती 61) शरीर को आवश्यक पोषक तत्व सही समय पर मिलते हैं, जिससे कमजोरी, थकान कम होती है | समय पर और संतुलित आहार को लेकर ईशान हमेशा आरण्या को हिदायत देते रहते हैं | ईशान और आरण्या के संवाद में देख सकते हैं – "लौटकर कुछ खाया नहीं | आमलेट और चाय | आरण्या, सेहत के लिए इस तरह के शॉर्टकट अच्छे नहीं | और अंडे का ज्यादा सेवन भी ठीक नहीं |...किसी भी दूसरे काम से जरूरी है वक्त पर खाना |"(सोबती 128) वृद्धावस्था में मनुष्य को सबसे जरूरी अपने खाने-पीने, सोने व स्वास्थ्य पर ध्यान देना चाहिए | खाने-पीने में परहेज, समय पर स्वस्थ व संतुलित भोजन तथा समय पर सोना वृद्धों के स्वास्थ्य के लिए वरदान हो सकता है | वृद्धजनों के लिए ये आदतें लंबे समय तक स्वतंत्र और स्वस्थ जीवन जीने में सहायक होती हैं |

6.1.4 डॉक्टर की सलाह के बिना दवाई का सेवन न करना

डॉक्टर की सलाह लिए बिना दवाई का सेवन करना वैसे तो सभी उम्र के लोगों के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो सकता है | लेकिन वृद्धावस्था में वृद्धों को बिना डॉक्टर की सलाह के दवाई नहीं लेनी चाहिए | बिना डॉक्टर की सलाह लिए दवाई का सेवन वृद्धों के स्वास्थ्य को और ज्यादा नुकसान कर सकता है | इस उम्र में शरीर की कार्यक्षमता कम हो जाती है, दवाइयों का प्रभाव अधिक जटिल हो सकता है | इस बात का संकेत '*गिलिगडु*' उपन्यास में दिया गया है | इस उपन्यास के पात्र बाबू जसवंत सिंह जिन्हें बवासीर की शिकायत है, सुबह खून से भरे कमोड देख वे घबरा जाते है | जिसके कारण वे डॉक्टर की सलाह लिए बिना 'हिमअप' गोलियों का सेवन करते हैं | लेखक इसका वर्णन करते हुए लिखते हैं – "'हिमअप' गोलियों की मात्रा उन्होंने बिना डाक्टरी सलाह के बढ़ा ली है | खून कुछ तो बने | कैसे नहीं बने | हालांकि जानते हैं कि बिना डॉक्टर से पूछे उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए |"(मुदुल 9) बिना डॉक्टर की सलाह के दवा लेने से बीमारी का सही इलाज नहीं हो पाता और स्थिति और ख़राब हो सकती है | दवाइयों का सेवन हो सके तो कम से कम करना चाहिए लेकिन ज्यादा आवश्यक हो तो बिना डॉक्टर की सलाह व परामर्श से कभी भी किसी भी प्रकार की दवाई नहीं खानी चाहिए | वृद्धावस्था में स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए सही दवा का सही समय पर सेवन बेहद जरूरी है | डॉक्टर की सलाह के बिना कोई भी दवा लेना हानिकारक हो सकता है |

6.1.5 समय पर इलाज करना

वृद्धावस्था में समय पर इलाज करना स्वास्थ्य को बनाए रखने और गंभीर बीमारियों से बचने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है | उम्र बढ़ने के साथ शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है | वृद्धजन किसी न किसी प्रकार की व्याधियों से ग्रसित रहते हैं, जिससे कई बीमारियों को समय रहते इलाज न करने पर वे जटिल और खतरनाक रूप ले लेती है | | वृद्धजन अपना या उनके परिवार के सदस्य उनका समय रहते इलाज कर लें तो वे गंभीर रोगों से बच सकते हैं | किसी भी बीमारी को अगर समय रहते ध्यान दिया जाए, तो उसको अधिक बढ़ने से कुछ हद तक रोका जा सकता हैं | समय पर इलाज न केवल स्वास्थ्य को बेहतर बनाता है, बल्कि जीवन की गुणवत्ता को भी सुधरता है | हृदयेश के 'चार दरवेश' उपन्यास में वृद्ध रामप्रसाद को कुत्ता काट लेता है | रामप्रसाद एंटी-रेबीज का इंजेक्शन लगाने पर लापरवाही करता है | उसकी बेटी-बहू भी इस पर ज्यादा ध्यान नहीं देते ताकि पैसे खर्च न हो | एंटी-रेबीज इंजेक्शन समय पर न लगाने से उनकी तबीयत ज्यादा खराब होती है | जब रामप्रसाद में रेबीज फैल जाने के लक्षण दिखाई देने लगते है तब वे अस्पताल जाते है | अस्पताल में डॉक्टर उन्हें समय पर इलाज करने की बात कहते हैं - "वह सरकारी अस्पताल गये थे | डॉक्टर ने कहा कि इंजेक्शन लगाना अब बेमतलब है | लगता तो तुरंत लगता |" (हृदयेश 141) समय रहते इलाज न करने का परिणाम उनको अपनी जान गवानी पड़ती है | यही स्थिति न जाने कितने वृद्धों के साथ होती होगी जिन्हें वे खुद तथा उनके घर वाले या तो समय पर इलाज नहीं करते या वृद्धावस्था का रोग कहकर टाल देते हैं | अंत: समय पर रोगों का निदान करना बहुत आवश्यक हो जाता है नहीं तो छोटी सी बीमारी भी बड़ी बीमारी का रूप धारण कर लेती हैं नहीं तो वृद्ध पात्र रामप्रसाद की तरह जान से हाथ धोना पड़ सकता है | वृद्धावस्था में बीमारियां लगना स्वाभाविक हैं, लेकिन स्वस्थ जीवनशैली, समय पर बीमारी की जांच, डॉक्टर के परामर्श से दवाई का सेवन करना, स्वस्थ आहार, व्यायाम, मानसिक व्यस्तता और सकारात्मक दृष्टिकोण से इन्हें रोका जा सकता है | सही देखभाल और उपचार से वृद्धावस्था को स्वस्थ और सुखद बनाया जा सकता है |

6.2 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों के पारिवारिक समस्याओं हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण

परिवार समाज की प्राथमिक इकाई है | वृद्धों के लिए परिवार आश्रय का स्थल है | वृद्धों की समस्याओं को दूर करने का एक साधन भी है | परिवार में रहकर वृद्ध व्यक्ति कठिन से कठिन परिस्थितियों व समस्याओं से निजात पा लेता है | परिवार व पारिवारिक लोगों के बिना कोई भी वृद्ध कभी भी खुश नहीं रह सकता है | परिवार के हर एक सदस्यों का भी यह कर्तव्य है कि अपने घर के वृद्धों की सुख-सुविधाओं व आवश्यकताओं का ध्यान रखें | वृद्ध व्यक्ति शारीरिक रूप से निर्बल, तकनीकी और आधुनिकता की दृष्टि से अनफिट होते हुए भी परिवार के लिए सहायक व मार्गदर्शक होते हैं | परिवार व समाज में होने वाले हर एक कार्य में अपने बहुमूल्य सुझाव व निर्देश देते हैं | आज के इस भाग-दौड़ भरे जीवन में युवा पीढ़ी अपने कार्यों में व्यस्त हैं, उनके घर और बच्चों की देखरेख और संरक्षण घर के वृद्धजन बहुत अच्छे से पूरा करते हैं | बच्चों में नैतिकता, संस्कार और मानवीय मूल्यों की सीख भी बड़े बुजुर्गों से उन्हें प्राप्त होती हैं | परिवार और समाज के विवादों को सुलझाने में भी घर के बड़े बुजुर्ग अहम भूमिका निभाते हैं | अंत: प्रत्येक परिवार के हर एक सदस्यों का कर्तव्य है कि वृद्धों को आदर, सम्मान के साथ शांति पूर्वक सुखी जीवन व्यतीत करने दें |

21वीं सदी का हिंदी कथा साहित्य वृद्धों के संघर्ष और समस्याओं को न केवल उजागर करता है, बल्कि उनका संभावित समाधान खोजने की भी दिशा देता है |

6.2.1 संयुक्त परिवार को विघटन से रोकना

संयुक्त परिवार भारतीय संस्कृति और सामाजिक संरचना का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है | संयुक्त परिवार भारतीय समाज की आधार शिला है | पहले संयुक्त परिवार अधिक होते थे लेकिन अब एकल परिवार | परिवार की बागडोर वृद्ध जनों के हाथ में होती थी | अहम फैसलों में उन्हीं की सलाह व निर्णय मान्य होता था | बाली का कथन है – "वृद्धों को पारिवारिक देखभाल को सांस्कृतिक निर्धारक व सामाजिक शक्ति के रूप में देखा जा सकता है |" लैम्ब ने अपने अध्ययन में कहा है – "संयुक्त परिवार में सदस्यों की संख्या अधिक होने व सभी आयु वर्गों के सदस्य होने के कारण वृद्धों को अकेलेपन का अनुभव नहीं होता है |" शरीर से अशक्त होते हुए भी वे दरवाजे में पड़े रह कर घर व बच्चों के पहरेदार होते थे | वृद्धजन बच्चों को कहानियाँ सुनाकर एक तरह उनका मनोरंजन करते थे, दूसरी तरफ उन्हें नैतिक शिक्षा भी देते थे | आज संयुक्त परिवार टूट रहे है | एकल परिवार पनप रहे हैं | संयुक्त परिवार के टूटने का कारण पाश्चात्य आचार-विचार, बढ़ती महंगाई, आर्थिक व्यवस्था और निजी स्वतंत्रता की भावना को माना जा सकता हैं | संयुक्त परिवार और घर में बड़े बुज़ुर्गों का होना और उनकी उपयोगिता को नई पीढ़ी को समझना होगा | वृद्धों के प्यार, स्नेह, त्याग, संघर्ष और आशीर्वाद के महत्व को समझना होगा | वृद्धावस्था में उनकी देखभाल करना, उनकी सुख-सुविधाओं का ध्यान रखना हमारा नैतिक कर्तव्य होना चाहिए | संयुक्त परिवार बुजुर्गों को सामाजिक, मानसिक व आर्थिक सुरक्षा प्रदान करते हैं | वृद्ध भरे-पूरे परिवार में हँसते हुए खुश व सुरक्षित रहते हैं | उनके लिए बाल-बच्चे बगीचे के फूल की तरह होते हैं | हृदयेश के *'चार दरवेश'* उपन्यास में देख सकते हैं बाल-बच्चों के साथ रहने से उनके दुःख, तकलीफ गायब हो जाते हैं –

> "बेटा पुनीत, बात यह है कि बड़े-बूढ़ों के लिए बच्चे ब-ब -बगीचों में खिले फूल होते हैं रंग-बिरंगे, या फिर सुंदर खिलौने | उनके बीच रहने से अंदर का दुःख-तकलीफ, अवसाद, थकान सब गा...गायब हो जाता है | पुराने लोगों का कहना है कि नन्हे-नन्हे-मुन्नों से आँगन चहकता है, घर-घर मालूम होता है |" (हृदयेश 19)

वृद्ध कभी भी अपने बच्चों से दूर नहीं रहना चाहते, एकल परिवार के बजाय वे हमेशा संयुक्त परिवार में रहना पसंद करते हैं | अपनों के साथ खुशी-ख़ुशी रहने से उनके आधे दुःख-दर्द गायब हो जाते हैं | सभी के साथ होने से उनका अकेलापन भी दूर हो जाता है | वे अपने बच्चों और पोते-पोतियों के साथ सुखी व खुशहाल जीवन जीना चाहते हैं | पोते-पोतियों की किलकारियों से वे अपने जीवन के सारे अवसाद भूल जाते हैं | संयुक्त परिवार में जहाँ बच्चों का लालन-पालन और पारिवारिक व सामाजिक मूल्यों और संस्कारों का विकास अच्छे से होता है वहीं वृद्धों की वृद्धावस्था भी शांति और ख़ुशी से कट जाती है | अंत: संयुक्त परिवार के विघटन को रोकने के लिए प्रयास किए जाने चाहिए तथा इन्हें पुन: मजबूत करने की आवश्यकता है | संयुक्त परिवार का विघटन रोकने के लिए आपसी समझ, सम्मान और सामंजस्य जरूरी है | यदि परिवार के सदस्य एक-दूसरे के प्रति सहिष्णु और संवेदनशील रहे तो एकता और प्रेम को बनाए रखा जा सकता है | संयुक्त परिवार प्रणाली में वृद्धजनों की स्थिति सशक्त होती है, क्योंकि वे न केवल पारिवारिक

निर्णयों में भागीदार होते हैं, बल्कि परिवार की भावनात्मक और सांस्कृतिक नींव भी होते हैं | परिवार के सदस्य उनकी देखभाल करते हैं, उनका सम्मान करते हैं और उनके अनुभवों का लाभ उठाते हैं | यह एक आदर्श पारिवारिक संरचना है, जिसमें वृद्धजनों के लिए मान-सम्मान, प्यार, सुरक्षा और समर्थन उपलब्ध होता है |

6.2.2 वृद्धों को आदर और भावनात्मक सुरक्षा

वृद्धों को आदर और भावनात्मक सुरक्षा देना भारतीय संस्कृति और समाज की मूलभूत विशेषता रही है | हालाँकि आधुनिक समय में बदलती जीवनशैली, शहरीकरण और पारिवारिक संरचनाओं में बदलाव के कारण वृद्धों को उपेक्षा और असुरक्षा का सामना करना पड़ता है | उन्हें भावनात्मक और सामाजिक रूप से सशक्त बनाने के लिए विशेष प्रयास करने की आवश्यकता है | वृद्धजनों का अपने बच्चों पर किया गया हर एक कार्य अमूल्य है | बच्चों की सफलता के पीछे उनके माँ-बाप का बहुत बड़ा योगदान होता है | उनकी भरपूर सेवा करके भी उनके योगदान के ऋण से मुक्त नहीं हुआ जा सकता | अंत: बच्चों का परम कर्तव्य है कि वृद्धावस्था में अपने माँ-बाप को उचित सम्मान दें | यथाशक्ति उनकी आवश्यकताओं को पूरा करने की कोशिश करें | उनकी उपेक्षा और तिरस्कार न करें तथा हो सके उन्हें भावनात्मक सहारा प्रदान करें | डॉ. सूरज सिंह नेगी जी के *'वसीयत'* उपन्यास में विश्वनाथ और पार्क में घूमने वाले सभी वृद्ध जीवन के उत्तरार्ध में अपने बच्चों के सम्मान व प्रेम को तरसते दिखाई पड़ते है | ये सभी पार्क में अपने-अपने नए-पुराने अनुभव बाँटते है तथा खूब हंसी मजाक करते हैं | इन सभी के पास जमीन-जायदाद, मकान, धन-संपत्ति किसी चीज की कोई कमी नहीं थी | इन सभी के जीवन में अकेलापन था तथा बच्चों के साथ खुशी-खुशी जीवन बिताने की चाहत थी | सभी वृद्ध अपने जीवन में किस कमी को महसूस करते है इसका वर्णन लेखक करते हैं –

> "एक चाहत थी कि उनके अस्तित्व को पहचाना जाए | घर में जाए तो लगे कि वह भी उस परिवार का ही अंग हैं, कोई हो जो उनको दिल से चाहता हो, खाने को भले ही रोटी न मिले लेकिन घर का प्रत्येक सदस्य प्यार के दो शब्द बोल दे तो उनकी पेट की भूख तो वैसे ही शांत हो जाएगी | घर में उनका भी जन्म दिन, शादी की सालगिरह को मनाया जाए और प्रत्येक खुशी के अवसर पर उनको भी शामिल किया जाए |"(नेगी 217)

परिवार के सदस्य नियमित रूप से उनके साथ समय बिताएं | त्योहारों और छुट्टियों में उनकी प्राथमिकता और इच्छाओं का सम्मान करें | उनके साथ भोजन करना, बातचीत करना और रोजमर्रा की छोटी-छोटी चीजों में शामिल होना उनके लिए विशेष महत्व रखता है | यहाँ स्पष्ट देख सकते है कि वृद्धावस्था में मनुष्य सिर्फ अपनों का साथ चाहता है | अपने बच्चों से मान-सम्मान व भावनात्मक सुरक्षा की उम्मीद करते हैं | जीवन के इस पड़ाव में यही उनके लिए सबसे बड़ा सुख है कि वे अपने परिवार में आदर के साथ अपना जीवन व्यतीत कर सकें | वृद्ध परिवार और समाज की धरोहर होते हैं | उन्हें आदर और भावनात्मक सुरक्षा प्रदान करना केवल हमारा नैतिक कर्तव्य ही नहीं, बल्कि मानवीय जिम्मेदारी भी है | जब हम उनके ज्ञान, अनुभवों और योगदान को सराहेंगे और उनकी भावनात्मक जरूरतों को समझेंगे, तभी परिवार और समाज में सामंजस्य और संतुलन बना रहेगा | उनके प्रति प्रेम, देखभाल और आदर का भाव न केवल हमारे संबंधों को मजबूत बनाएगा, बल्कि आने वाली पीढ़ियों को भी सही दिशा दिखाएगा |

6.2.3 वृद्धों को बोझ न मानकर अनुभवी व मार्गदर्शक समझकर सम्मान देना

वृद्धों को बोझ न मानकर उन्हें परिवार और समाज का अनुभवी और मार्गदर्शक सदस्य मानना हमारी परम्परा और सांस्कृतिक धरोहर का महत्वपूर्ण हिस्सा है | परिवार में वृद्धों को मान-सम्मान मिले, उन्हें बोझ न समझे उनके अनुभव व ज्ञान से अपने ज्ञान में वृद्धि करें उनसे हमेशा कुछ न कुछ सीखने का प्रयास करें, जिससे उनका ज्ञान आगे आने वाली पीढ़ी को हस्तांतरित कर सकें | उदाहारण के तौर पर टेकचंद के '*दाई*' उपन्यास में रेशम बुआ के ज्ञान और अनुभव को देखा जा सकता है | "औरतों की जिज्ञासाएँ शांत नहीं हो रही थीं | लग रहा था कि वे और भी बहुत कुछ जानना चाहती थीं | अनुभव पगी रेशम आज है, तो बटोर लो कुछ ज्ञान, कुछ समझ |" (टेकचंद 51) इस उपन्यास में रेशम बुआ दाई का काम करती है इस काम में वह आधुनिक डॉक्टर के बराबर अनुभवी है | गाँव की सभी गर्भवती औरतें उनसे ही अपनी जचगी करवाती है | गाँव की सभी औरतें उनकी मुरीद है सभी उनकी इज्जत करती है लेकिन खुद के घर में उसके बेटे-बहू, दामाद उनका आदर नहीं करते | उन्हें सिर्फ घर का खर्चा उठाने वाली मशीन के रूप में इस्तेमाल करते हैं | उसके ज्ञान और अनुभव को समझने की कोशिश नहीं करते है | अतः वृद्धों के अनुभवों का सम्मान व कद्र की जानी चाहिए | वृद्धों का अनुभव नई पीढ़ी के मार्गदर्शन व उनके समुचित विकास के काम आता है | वृद्धों के पास जीवन भर का अनुभव होता है, जो कठिन समय में परिवार को सही मार्गदर्शन प्रदान करता है | डॉ. सूरज सिंह नेगी के '*नियति चक्र*' उपन्यास में भी वृद्धों के अनुभव से सीख लेने की ओर संकेत दिया है | उपन्यास में चित्रांश अपने पिता नितिन घोष के ज्ञान, कौशल और अनुभव से सीखने की बजाय उन्हें घर से निकाल देते हैं | वह पिता की सीख और सलाह को अपनी प्रगति की राह का रोड़ा समझता रहा | जिसका परिणाम विरासत में मिली धन-दौलत, कंपनी सब घाटे में चलने लगती है | समय रहते वृद्धों के अनुभव और सीख को मान-सम्मान देना चाहिए, इसका संकेत नेगी जी ने चित्रांश के माध्यम से देने का प्रयास किया है | जो पिता के जीवित रहते कभी उनकी सलाह व सीख को नहीं मानता लेकिन उनकी मृत्यु के पश्चात दुखी होकर पश्चाताप करता रहता है | नेगी जी लिखते है -

> "सच ही है; समय रहते यदि बुजुर्गों के अनुभव से सीख ली जाए और उन्हें पूरा सम्मान मिले तो प्रत्येक परिवार में हमेशा खुशियों चौखट चूमती हैं, इसके विपरीत यदि बुजुर्गों के अनुभव को कोई मान-सम्मान न दिया जाए, उनकी बेकद्री की जाए, उनको बोझ समझा जाने लगे तो वहाँ खुशियाँ भी अधिक दिनों तक नहीं टिकती |" (नेगी 92)

वृद्धजन कभी भी बोझ नहीं हो सकते हैं वे तो ज्ञान और अनुभव का खजाना होते हैं | वृद्धों को बोझ मानने की बजाय उनके अनुभव और ज्ञान को समाज की अमूल्य धरोहर के रूप में देखना चाहिए | उन्होंने अपने जीवन के लंबे समय में जो ज्ञान और अनुभव अर्जित किया है, वह नई पीढ़ी के लिए मार्गदर्शक की तरह हो सकता है | हमें उनके ज्ञान, अनुभव व कौशल को अपने जीवन को सुखी व सफल बनाने के लिए उपयोग में लाना चाहिए | उनकी अवहेलना व उपेक्षा करने से चित्रांश की तरह पश्चाताप करना पड़ सकता है इसलिए समय रहते अनुभव व ज्ञान के भंडार वृद्धों को आदर, सम्मान के साथ खुश रखना चाहिए | उनका सम्मान करना न केवल हमारी सांस्कृतिक और नैतिक जिम्मेदारी है, बल्कि यह हमारे समाज को एक मजबूत और सहानुभूति पूर्ण आधार भी प्रदान करता है |

6.2.4 वृद्धों का नई पीढ़ी के जीवन में अत्यधिक दखल न देना

वृद्धों का नई पीढ़ी के जीवन में मार्गदर्शन करना महत्वपूर्ण है, लेकिन उतना ही आवश्यक है कि वे उनके यह भी व्यक्तिगत फैसलों और जीवनशैली में अत्यधिक हस्तक्षेप न करें | वृद्धजनों को भी समय के साथ बदलना चाहिए | उन्हें अपनी रूढ़िवादी व भेदभाव वाली सोच को मन से निकाल देना चाहिए | वृद्धों को अपनी बहुओं से बिना भेदभाव किए बेटियों जैसा व्यवहार करना चाहिए है | जहाँ तक संभव हो सके नई पीढ़ी के बच्चों के जीवन में बेवजह दखल न दें | काशीनाथ सिंह के उपन्यास '*रेहन पर रग्घू*' में रग्घू की पत्नी शीला अपनी बहू के जीवन में दखल देती है जिससे उन दोनों के बीच विवाद बढ़ जाता है जबकि रघुनाथ बहू की जिन्दगी में बेवजह दखल नहीं देते थे |

> "शीला की गलतियों से इन्होंने बहुत कुछ सीखा था ! ये अपने हिसाब से उसे नहीं चलाते थे, उसके हिसाब से खुद चल रहे थे | इन्हें 'ससुर' के बजाय 'बाप' बन कर चलना ज्यादा सुविधाजनक लगा था | अव्वल तो तनाव का कोई मसला पैदा ही न होने दो और पैदा भी हो तो गम खा जाओ या टाल जाओ ! दो जून खाने और सोने से मतलब – बाकी तुम जानो, तुम्हारा काम जाने ! राशन गाँव का, सब्जी पेंशन की | और पेंशन इतनी मिल ही जाती है कि अपनी ही नहीं, दूसरे की भी छोटी-मोटी जरूरत पूरी हो जाए ! बेटे-बहू के साथ जीने का यही सलीका होना चाहिए कि न आप उनके मामले में दखल दें, न वे आपके मामले में ! सह जीवन के लिए यह समझदारी जरूरी है !" (सिंह 128)

अत्यधिक दखल कभी-कभी नई पीढ़ी को दबाव में डाल सकता है, जिससे उनके आत्मविश्वास और स्वतंत्रता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है | वृद्धजनों को अपनी भूमिका एक सहायक और मार्गदर्शक की तरह निभानी चाहिए, न कि नियंत्रक की तरह | कुछ समस्याएं वृद्धों के जीवन में इसलिए भी दस्तक देती है क्योंकि वे जरूरत से ज्यादा अपने बेटे-बहुओं के जीवन में दखल देते हैं | यदि वृद्ध बेटे-बहू के मामले में दखल नहीं देते तो वे भी आपके मामले में दखल नहीं देंगे | किसी भी विवाद या समस्या से सम्बंधित राय मांगी जाए तो अवश्य देनी चाहिए लेकिन उसे वे माने या न माने उन पर छोड़ देना चाहिए | अपनी राय या बातों को उन पर जबरदस्ती थोपना नहीं चाहिए | यदि ऐसा करेंगे तो दोनों पीढ़ियों में आपसी सामंजस्य बना रहेगा | पुरानी पीढ़ी और नई पीढ़ी के लोग एक दूसरे की सोच और फैसलों का सम्मान करें तभी दोनों पीढ़ियों के बीच फासला कम किया जा सकता है | संतुलित दृष्टिकोण अपनाकर, जहाँ एक ओर नई पीढ़ी वृद्धों के अनुभवों का आदर करें और उनसे सीख ले, वहीं दूसरी और वृद्धजन भी उनकी स्वतंत्रता और व्यक्तिगत पसंद और सोच का सम्मान करें, यह स्वस्थ और सकारात्मक पारिवारिक माहौल को बनाए रखता है |

6.2.5 हमउम्र वृद्धों से मेलजोल बनाना

वृद्धावस्था में आस-पड़ोस के हम उम्र लोगों के साथ मेलजोल बढ़ाना बहुत फायदेमंद होता है | उम्र बढ़ने के साथ कई बुजुर्ग अकेलापन महसूस करने लगते हैं | आस-पड़ोस में हमउम्र दोस्तों के साथ समय बिताने से यह कमी पूरी हो सकती है | हंसी-मजाक, पुरानी यादें साझा करना और आपसी बातचीत मानसिक रूप से सक्रिय बनाए रखती है | इस उम्र में हमउम्र पड़ोसी के साथ सैर करना, योग करना, हल्का व्यायाम करना जैसी गतिविधियाँ उनके स्वस्थ शरीर के लिए भी बहुत आवश्यक होता है | | डॉ. सूरज

सिंह नेगी के *'रिश्तों की आँच'* उपन्यास में रामप्रसाद की माँ अपना समय पड़ोसी शर्मा जी की माँ के साथ बिताया करती थी | वे अकसर घंटों खूब बाते किया करती थी | दोनों की वार्तालाप में गाँव, गाँव की गलियाँ, बावड़ी, खेत-खलियान, मेले, गाँव के लोगों की मेहनत, संघर्ष, बच्चों की चिंता, सास-ससुर की नसीहत आदि प्रमुख विषय हुआ करते थे | बातों में इतनी डूब जाती थी कि समय कब बीत गया उन्हें महसूस ही नहीं होता था | रामप्रसाद जब सरकारी क्वाटर छोड़ कर अपने नए घर में रहने चले जाते हैं, तो उसकी माँ और शर्मा जी की माँ बहनों की भांति दुखी होती हैं –

> "अच्छा, अब चलती हूँ | तैयारी करनी है | अपना ख्याल रखियेगा...|" इतना कहना था कि दोनों का गला भर आया | दोनों जोर-जोर से रोने लगी | दृश्य इस तरह का था जैसे दोनों बहनें आज वर्षों बाद बिछड़ रही हों और दोनों को यह पता था कि अब फिर कब मिल पायेंगे | मिलेंगे भी या नहीं |"(नेगी 93-94)

कहते हैं अच्छा पड़ोसी हमेशा सुख-दुःख में साथ निभाता है | पड़ोसी बुजुर्गों के बीच घनिष्ठ संबंध होने से वे एक-दूसरे की मदद कर सकते हैं | कृष्णा सोबती के *'समय सरगम'* उपन्यास में आरण्या और ईशान एक-दूसरे के पड़ोसी है | दोनों वृद्धावस्था में अकेले रहते हैं | विपरीत सोच और विचारधारा के बावजूद भी वे बहुत अच्छे पड़ोसी की तरह रहते हैं | वे एक दूसरे के साथ गपशप, हँसी-मजाक तथा कभी गंभीर विषयों पर चर्चा करते हैं | दोनों कभी चाय तथा कभी खाना साथ खाते हैं | पार्क में घूमना हो या दोस्तों के घर जाना सब जगह साथ जाते हैं | उम्र के इस पड़ाव में एक तो अच्छे पड़ोसी से मेलजोल के कारण एक तो अकेलापन नहीं सताता दूसरा उनका समय अच्छे से व्यतीत हो जाता है | ईशान और आरण्या हमेशा एक दूसरे के सुख-दुःख में साथ देते है | इसका उदाहरण देख सकते है जब आरण्या अपना फ्लैट बेचकर कराए के लिए की फ्लैट लेने की कोशिश करती है लेकिन कोई भी किसी बूढ़ी औरत को किराए पर नहीं रखना चाहते थे | जब ईशान को यह पता चलता है तब वह अपने फ्लैट में एक कमरा बाथरूम अटैच उसको देने का प्रस्ताव रखता है |

> "ईशान ने हर शब्द को तोला हो- आरण्या, जो कहने जा रहा हूँ उसे हँसी में मत उड़ाना | अगर मैं यह कहूँ कि एक कमरा, अटैच बाथरूम- एक बालकनी तुम्हारे लिए मेरे फ्लैट में ही मौजूद है | हूँ-हूँ...ईशान, मुझे सोचने को एक दिन चाहिए होगा | कल सुबह तक बता सकूँगी |" (सोबती 147)

वृद्धावस्था में जहाँ अपने साथ छोड़ जाते है | वहीं ईशान और आरण्या जैसे हमउम्र के अच्छे पड़ोसी एक-दूसरे के सुख-दुःख में हमेशा साथ खड़े रहते हैं | पड़ोसी धर्म के साथ वे दोस्ती धर्म को भी निभाते है | वे समय-समय पर कामिनी, दमयंती, किशोर तथा प्रभुदयाल के घर उनके हाल-चाल व स्वास्थ्य जानने के लिए भी जाते रहते हैं | अंत: वृद्धजनों को ईशान और आरण्या की तरह अपने पड़ोसी तथा दोस्तों के साथ मेलजोल बना कर रखना चाहिए | जहाँ नई पीढ़ी उनकी भावनाओं, एकाकीपन व उनके महत्व को नहीं समझेगी वहां यही हमउम्र पीढ़ी उनको भावनात्मक सहारा देगी तथा उनके एकाकीपन और सुख-दुःख के सहभागी बन सकते हैं | आस-पड़ोस में हमउम्र लोगों से मेलजोल बढ़ाने से बुजुर्गों का जीवन अधिक खुशहाल, सक्रिय और स्वस्थ बना रहता है | इससे जीवन में उत्साह बना रहता है और सामाजिक सहयोग की भावना मजबूत होती है |

वृद्धावस्था में हम उम्र वृद्धों के साथ मेलजोल बनाए रखना कई कारणों से महत्वपूर्ण हो सकता है – मानसिक सुख, अकेलापन दूर करना, अनुभव साझा करना और जीवन को अधिक सकारात्मक बनाना |वृद्धों को घर की चारदीवारी से बाहर निकलकर अपने हम उम्र लोगों से मिलते रहना चाहिए | उनसे दोस्ती करनी चाहिए तथा विचार विमर्श करते रहना चाहिए | इससे उनका समय कटेगा और अकेलापन भी दूर होगा | हृदयेश के '*चार दरवेश*' उपन्यास में इस तरह की सलाह पत्नी अपने पति को देते हुए कहती है –

> "एक दिन शिवशंकर दो-तीन घंटे के वास्ते घर आये थे | बहू बच्चों के साथ बाजार गयी हुई थी और बेटा भी उनको पहुँचाकर कहीं निकल गया था | एकांत पाकर पत्नी ने सलाह दी कि कालोनी में जरूर आसपास रह रहे कई वृद्ध होंगे | वह परिचय बढ़ाकर प्लाट पर शाम को उनको बुला लिया करें | कालोनी के बच्चों से भी हेलमेल बढ़ा लें | उनको टॉफी बांटा करें | वह पहले वाली जीने के लिए राह निकालें | सलाह सुनकर पहले उनकी आँखों से आँसू ढुलके | फिर वह सिसकियाँ भरते हुए रोने लगे |"(हृदयेश 152-153)

वृद्धावस्था में कई बार अकेलापन, स्वास्थ्य समस्याएँ या असुरक्षा महसूस होती है | ऐसे में हम उम्र साथियों का सहारा बड़ा संबल बन सकता है | इस तरह वृद्धों के साथ समय बिताने से अधिक सुकून तो नहीं मिलेगा बल्कि समय को काटने का अच्छा जरिया है | आपस में बातचीत से उनका अकेलापन दूर होगा | परिवार के सदस्यों के पास अपने बूढ़ों से बातचीत करने का समय नहीं होता है इसलिए चारदीवारी से बाहर अपने हमउम्र वृद्धों से बातचीत करके मन हल्का कर लेना चाहिए | यह न केवल उनके मानसिक और भावनात्मक स्वास्थ्य को बेहतर बनाता है, बल्कि उनके सामाजिक जीवन को भी सक्रिय बनाए रखता है | इस उपन्यास में वृद्ध रामप्रसाद अपने घर में बेटी-दामाद को अपने घर में पनाह देता है | बाद में बेटी-दामाद ही घर के मालिक बन बैठते है और रामप्रसाद को हर एक चीज के लिए तरसना पड़ता है | यहाँ तक अपने ही घर में उसके साथ परायों की तरह व्यवहार किया जाता है | खुद के घर में बेटी-दामाद अच्छे से बातचीत भी नहीं करते है इसलिए वह अपने हमउम्र वृद्धों से मिलने हर रोज पुलिया पर मिलने जाते हैं | एक दिन उसकी बेटी बाहर जाने को मना करती है तो रामप्रसाद कहता है –

> "घर पर अपना तो कोई है नहीं रस-प्यार से बोलने वाला जो बांधे जोड़े, पर कहा, "जब तक पौरुख है घंटे-डेढ़ घंटे के लिए चला जाता हूँ | अपने जाने-पहचानो के बीच बैठकर दीन-दुनिया की ख़बर मिल जाती है | मन थोड़ा बहल जाता है | बूढ़े लोग अपना भला बुरा ऊपर वाले पर छोड़ देते हैं |" (हृदयेश 70)

वृद्धों के लिए हमउम्र लोगों के साथ मिलना, बातचीत करना, एक दूसरे के दुःख-सुख को समझना अच्छा लगता है | '*चार दरवेश*' उपन्यास में चार वृद्ध एक-दूसरे के साथ हर रोज मिलते, नए-नए विषयों पर बातचीत करते जिससे उनका समय अच्छे से व्यतीत होता है | हमउम्र वृद्धों का साथ उन्हें सत्संग लगता है | चिंताहरण नामक वृद्ध पात्र कहते हैं –

> “शाम को मैं एक जगह अपने हम उम्रों के साथ सत्संग करता हूँ |” पत्नी ने खुलासा किया कि कुछ दूर पर एक पुलिया है | वहाँ यह कई बरसों से जाते हैं | तीन-चार और भी इनकी उम्र के लोग घंटा-डेढ़ घंटा बैठते हैं | इसी को यह अपना सत्संग कहते हैं |” (हृदयेश 112)

उम्र के इस पड़ाव पर दोस्ती और अपनापन सबसे बड़ी पूंजी होती है | डॉ. सूरज सिंह नेगी के ‘*वसीयत*’ उपन्यास में विश्वनाथ अपने अंहकारवश किसी से कम बातचीत करता था | उसके पास घर वालों से बात करने का समय न था | वह अपने उच्च पद के वशीभूत में इतना अंधा हो गया था कि खुद को ही सर्वोत्तम मानने लगता है | इसी आदत के कारण वह सेवानिवृत्त के बाद सबसे अलग-थलग पड़ चूका था | सेवानिवृत्त होने के बावजूद भी उसे अपेक्षा रहती थी कि कोई उसकी जी हुजूरी करें, उसे इज्जत, मान-सम्मान दें | सेवा काल में हमेशा उसे कोई न कोई घेरे रहता था लेकिन सेवानिवृत्त के बाद वह दूसरों से बात करने तक तरस गया था | उसे यह भी लगता था कि वह खुद से क्यों किसी पहले बात करें | अपने स्वभाव के कारण वह इस आदत को वृद्धावस्था में भी नहीं बदल पाया | वह भूल गया था कि अब वह अधिकारी नहीं बल्कि एक सामान्य व्यक्ति है | उसकी पत्नी सुधा उसके इस भ्रम को दूर करती हुई कहती है –

> “आप भी क्यों नहीं मोहल्ले में जाते | सामने मोहन के पिता भगवती बाबू को ही देखिए, गाँव से कभी-कभार आते हैं लेकिन पूरे मोहल्ले को ही नहीं, बल्कि पूरे शहर की जानकारी रखते हैं, पड़ोस में मिश्रा जी और वर्मा जी को ही देखिए सुबह शाम साथ में घूमने को जाते हैं | आप भी लोगों से मिलेंगे, इधर-उधर आया जाया करेंगे तो समय का पता भी नहीं लगेगा कि कैसे गुजर गया |” (नेगी 51)

विश्वनाथ अपनी पत्नी सुधा के इस सुझाव को मन ही मन स्वीकार कर लेते हैं | विश्वनाथ अब अधिकतर समय अपने हम उम्र वृद्धों के साथ समय बिताने लगते है | गपशप और पार्क में घूमने जाने लगते हैं | जिससे विश्वनाथ का समय अच्छे से गुजरने लगा साथ ही उसे अजनबी लोगों से अपने पन का अहसास होने लगा | लेखक नेगी जी ने यहाँ वृद्धों के परिवार व समाज में अकेलेपन और समय गुजारने के लिए सांकेतिक समाधान बताने का प्रयास किया है | हम उम्र वृद्धों के साथ समय बिताना, तर्क-वितर्क करना, देश-दुनिया के विषय में चर्चा करना, गपशप लड़ाना, पार्क में घूमना वृद्धों के जीवन को खुशहाल बनाने के लिए बहुत आवश्यक है | ‘*वसीयत*’ उपन्यास में देख सकते है एकाकी और अहंकार में रहने वाला विश्वनाथ अपने हम उम्रों वृद्धों के साथ समय बिताने से ख़ुशी महसूस करता है –

> “अब विश्वनाथ का अधिकांश समय भगवती बाबू के साथ बातचीत में गुजरता | दोनों एक दूसरे के अत्यंत निकट आ चुके थे | भगवती बाबू उम्र में उससे बड़े थे | दोनों देश दुनिया की चर्चा करते | शहर के हाल पर दोनों के अपने-अपने तर्क होते | एक दिन भी ऐसा नहीं जाता कि जब दोनों एक दूसरे से न मिलते हों |” (नेगी 51)

अपने हम उम्र लोगों से मेल-जोल व दोस्ती करने से विश्वनाथ के जीवन में काफी बदलाव आया | सुधा के सुझाव पर जब से विश्वनाथ ने अमल किया उससे अच्छा और हलकापन महसूस होने लगाता उसे अब उसका अकेलापन भी नहीं काटता | हमउम्र लोगों के

साथ पार्क में घूमना, वाद-विवाद करना, गपशप मारना तथा पिकनिक का आयोजन करना वृद्धों के जीवन में उत्साह व खुशी ला सकती है | कृष्णा सोबती के *'समय सरगम'* उपन्यास में ईशान, आरण्या और दमयंती पिकनिक जाने का आयोजन करते हैं | इस बात से सभी बहुत उत्साहित व खुश होते हैं | दमयंती ईशान और आरण्या से कहती है-

> "हम लोग किसी दिन पिकनिक के लिए क्यों न चलें ! धूप में लंच लें तो कैसा |...आरण्या बोली- पिकनिक के लिए में पनीर बना लाऊँगी | दमयंती हँसी | पनीर के साथ सिंधी परांठे | माधो इसमें माहिर है | घी बिलकुल कम होगा | आरण्या आप पनीर तलकर बनाएँगी ! पनीर पानी में नहीं तला जा सकता पर विश्वास रखें घी बिलकुल कम होगा ! सयाने कहकहों से ड्राइंग रूम गूंज उठा ! दमयंती उछाह और उत्साह में ताजी-सी हो उठीं |" (सोबती 75)

वृद्धों को दोस्तों और हमउम्र लोगों के साथ सप्ताह में एक-दो दिन मिलने का कार्यक्रम बनाना, पार्क में टहलना, किसी के घर पर मिल बैठना, सामूहिक चर्चा, संगीत, भजन और पिकनिक का आयोजन करते रहना चाहिए, जिससे उनके एकाकी और नीरस हो चूके जीवन में कुछ खुशियों के पल आ सकते हैं | चित्रा मुद्गल के उपन्यास 'गिलिगडु' में बाबू जसवंत सिंह जब से दिल्ली अपने बेटे के घर रहने आते है तो एकाकीपन महसूस करते हैं | एक दिन जसवंत बाबू पार्क में टॉमी को घुमाते हुए गिर जाते हैं तब कर्नल स्वामी नामक वृद्ध उन्हें सहारा देते हैं | कर्नल स्वामी से दोस्ती के बाद बाबू जसवंत सिंह का समय अच्छे से व्यतीत होने लगा | कर्नल स्वामी के साथ वे रोज पार्क में घूमते, गपशप लगाते | कर्नल स्वामी उन्हें नए जूते खरीद के देते साथ ही उन्हें दिल्ली की सैर करवाते हैं | "दिल्ली घूमी ?' 'अब तक नहीं घूमी ?' 'कोई आनाकानी नहीं चलेगी |' 'मेरी नजर से मेरे साथ घूमकर देखिए मि.सिंह ! मुंह से बेसाख्ता न निकल पड़े कि हाय दिल्ली ! हम तुमसे अब तक दूर क्यों रहे – तो कहिएगा !"(मुद्गल 38) बाबू जसवंत सिंह के बेटे नरेंद्र के पास अपने पिता को दिल्ली घुमाने का समय नहीं था | बीवी के सगे सम्बन्धियों को एयरपोर्ट लाने-ले-जाने और घुमाने के लिए उसके पास समय है | कर्नल स्वामी जैसा दोस्त उसे दिल्ली के दर्शनीय स्थलों का भ्रमण करवाता है | इस तरह हमउम्र वृद्धों से मिलना, बातचीत करना, मिलकर हंसना, एक दूसरे के सुख-दुःख बाँटना, सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लेना, पिकनिक का आयोजन करना, समूह में भ्रमण करना इत्यादि प्रयास वृद्धों को खुशहाल और सक्रिय रखने में मदद करेंगे |

6.2.6 अकेले रह रहे वृद्धों को खुश व संतुष्ट रहना चाहिए

वृद्धावस्था में यदि वृद्धजन अकेले रह रहे हैं तो उन्हें ख़ुशी से जीवन जीना चाहिए | यह न उनके मानसिक सवास्थ्य के लिए जरूरी है बल्कि उनके संपूर्ण जीवन की गुणवत्ता के लिए भी आवश्यक है | कृष्णा सोबती के *'समय-सरगम'* उपन्यास की पात्र 'आरण्या' की तरह जीवन जीना चाहिए | वह कहती है – "खुश हूँ कि जीवित हूँ" (सोबती 8) इसके साथ ही वह यह भी कहती है – "संतुष्ट हूँ की जीवित हूँ" (सोबती 8) इस तरह अकेले रह रहे वृद्धों को अपने जीवन में सुखी और संतुष्ट रहना चाहिए | इससे वृद्धावस्था में भी जिंदगी का सुखद आनंद लिया जा सकता हैं | अकेले रहने वाले वृद्धों को खुश और संतुष्ट रहने के लिए अपनी सोच सकारात्मक रखनी चाहिए और खुद को व्यस्त रखना चाहिए | छोटी-छोटी चीजों में ख़ुशी ढूंढे, किताबें पढ़े, लिखे, सुबह उठाकर सैर करें, आस-

पड़ोस से संवाद, वृद्धजन क्लब, सत्संग, घर के छोटे-मोटे काम खुद करें और जीवन के अच्छे पलों को याद करें | परिवार, दोस्तों और पड़ोसियों से नियमित बातचीत करें | जैसा कि इस उपन्यास में आरण्या करती दिखाई पड़ती है |

6.2.7. पुस्तकें पढ़ना, लिखना दिनचर्या का हिस्सा बनाना

वृद्धावस्था में व्यक्ति अपना समय अच्छी पुस्तकों को पढ़ने में लगा सकते हैं | जिससे उनका समय अच्छे से गुजर सकता है | उम्र के इस पड़ाव में वृद्ध साहित्य सृजन में भी लगा सकते हैं | जिससे वे अपने जीवन में व्यस्त रह सकते हैं | जीवन के अपने अनुभवों, ज्ञान व कौशल से वे नई पीढ़ी को लाभान्वित कर सकते हैं | वृद्धावस्था में पुस्तकें पढ़ना व लिखना आत्म-संतोष, मानसिक सक्रियता और गहरी खुशी का बेहतरीन माध्यम है | डॉ. सूरज सिंह नेगी के उपन्यास *'वसीयत'* में वृद्ध पात्र त्रिपाठी सेवानिवृत्त के पश्चात अपना अधिक से अधिक समय पढ़ाई-लिखाई में बिताते हैं | जिसमें उसे ख़ुशी भी महसूस होती और उसे अकेलापन भी नहीं खलता |

> "सेवानिवृत्ति के पश्चात त्रिपाठी को पुस्तकों में ही डूबा हुआ देखा जा सकता था | पत्नी भी जिम्मेदारियाँ पूरी करने के बाद एक दिन अचानक त्रिपाठी और पूरे परिवार को छोड़कर चल बसी थी | अब क्या था त्रिपाठी बिल्कुल अकेला हो गया था | घर में केवल पुस्तकालय कक्ष ही था जो उसे सुकून देता था | देर रात तक वहाँ बैठकर पढ़ते रहना, लिखना और चिंतन करना उसकी दिनचर्या का अहम हिस्सा बन चूका था |" (नेगी 96)

वृद्धावस्था में पुस्तकें पढ़ना और लिखना दिनचर्या का हिस्सा बनाना एक बेहतरीन आदत है, जो न केवल मानसिक सक्रियता बनाए रखता है बल्कि अकेलेपन को भी दूर करता है | यह मस्तिष्क को व्यस्त और सकारात्मक बनाए रखने का एक शानदार तरीका है | वृद्धों को *'वसीयत'* उपन्यास के त्रिपाठी की तरह अपने जीवन के अंतिम अवस्था के खाली समय का अधिक से अधिक पढ़ने, लिखने, चिंतन और सृजन करने में लगाना चाहिए | जिससे वे अपने समय का सदुपयोग कर सकते हैं | पढ़ने और लिखने की आदत से जीवन में नयापन बना रहता है, बौद्धिक विकास होता है और मन खुश रहता है इसलिए वृद्धावस्था में इसे अपनी दिनचर्या का हिस्सा जरूर बनाना चाहिए |

6.2.8 वृद्धावस्था में जीवनसाथी का साथ

वृद्धावस्था में जीवनसाथी का साथ किसी वरदान से कम नहीं होता | यह उम्र ऐसी होती है जब शारीरिक शक्ति भले ही कम हो जाए, लेकिन भावनात्मक और मानसिक सहारे की सबसे ज्यादा जरूरत होती है | इस अवस्था में व्यक्ति का सबसे बड़ा दोस्त उसका जीवनसाथी होता है | इस उम्र में मनुष्य के सुख-दुःख व परेशानियों में उसका साथ एक अच्छा जीवनसाथी ही दे सकता है | जीवनसाथी का साथ इस समय न केवल खुशी, बल्कि आत्मविश्वास और सुरक्षा का भी अहसास कराता है | जिन वृद्धों के जीवनसाथी नहीं होते हैं, उन्हें अन्य वृद्धों की अपेक्षा ज्यादा समस्याओं का सामना करना पड़ता है | जीवनसाथी के होने के साथ सबसे महत्वपूर्ण है, उनका हर सुख-दुःख में अपने पार्टनर के साथ खड़े रहना | अगर वृद्धों का जीवनसाथी साथ निभाने वाला होता है तो वृद्धों के

आधे दुःख दूर हो जाते हैं | उन्हें दुखों से लड़ने की शक्ति मिलती हैं | एस. आर. हरनोट की *'लोहे के बैल'* कहानी में शोभा और हंसमी गाँव में अकेले रहते है | उनका इकलौता बेटा शहर में शादी ब्याह करके वही बस जाता है | कई साल हो गए उसे घर, गाँव व माता-पिता से मिले हुए | उससे सिर्फ फोन में ही कभी-कभी बात होती है | फोन भी अच्छे से नहीं सुनता, उसमें भी व्यस्तता का बहाना लगाता है | वह गाँव की जमीन को बिना माँ-बाप को पूछे मास्टर साहब को एक लाख में गिरवी रख देता है | वहीं उसके माँ-बाप शोभा और हंसमी का एक बैल मर जाता है | वे इस दुःख को अपने बेटे के साथ बाँटना चाहते थे लेकिन बेटे को उनकी इस बात पर कोई दिलचस्पी नहीं होती है | वह माँ-बाप को पैसे मांगने की उम्मीद न करना की बात कहता है | इससे शोभा आहत होता है उसने पैसे के लिए फोन नहीं सिर्फ बेटे से दुःख साझा करने के लिए किया था | खेतों में हल लगाने का समय आ जाता है लेकिन बिना बैलों के खेत में हल लगाना संभव नहीं | गाँव के सभी लोग अपने बैल देने से मना करते हैं, यहाँ तक उसका सगा भाई भी मना कर देता है | शोभा हमेशा गाँव के तथा भाई की मदद करता था लेकिन जब उसे मदद की जरूरत थी तो कोई उसका साथ नहीं देता | शोभा की पत्नी हंसमी इस परेशानी में उसका साथ देती हैं, साथ ही नहीं उसे हौसला देती है हुई कहती है –

> "उसने शोभा के सामने एक प्रस्ताव रखा कि जो एक बैल पास है उसी से इस साल खेत बाहेंगे | शोभा को घरवाली की बात पर हँसी तो आयी ही थी पर साथ हैरानी भी हुई | लेकिन हंसमी ने समझाया था कि उस बैल के साथ-साथ जुंगड़ा पकड़ कर वह चलेगी, जिससे बवाई में कोई फर्क नहीं आयेगा |" (हरनोट 76)

इस उम्र में जीवनसाथी एक सच्चे मित्र की तरह होता है, जिससे मन की हर बात साझा की जा सकती है | इस उम्र में सुख-दुख में एक-दूसरे का हाथ थामना बहुत बड़ी ताकत बन जाती है | यहाँ देख सकते है शोभा की परेशानी के समय उसकी पत्नी हंसमी किस तरह चट्टान की तरह खड़ी रहती है | जब उसका बेटा, भाई और गाँव के लोग कोई भी साथ नहीं देता, उस वक्त उसकी पत्नी उसे समझती है, सुझाव देती हैं, हौसला बंधाती है यहाँ तक बैल के साथ खुद खड़े रहकर खेत जोतने की बात करती है | हंसमी और शोभा की तरह हर वृद्धों को एक दूसरे के सुख-दुःख में साथ खड़े रहना चाहिए | जीवन के इस अंतिम पड़ाव में जीवनसाथी का साथ होना वृद्धों की आधी समस्याओं को कम कर देता हैं | डॉ. सूरज सिंह नेगी के *'नियति चक्र'* उपन्यास में सेठ नितिन घोष की पत्नी दुर्गा देवी बीमार पड़ जाती है | धीरे-धीरे उनका स्वास्थ्य गिर जाता है तो वह बिस्तर पकड़ लेती है | अस्पताल में भर्ती करवा ली जाती है, सेठ नितिन घोष अपनी पत्नी के इस हालत में खूब साथ देते है | किशन काका यह बात डॉ. अवस्थी को बताते हुए कहते हैं -

> "अब सेठजी का पूरा ध्यान सेठानी जी के स्वास्थ्य पर केन्द्रित हो गया | उन दिनों उनको कुछ भी सुध नहीं रहती, बस एक ही दुआ करते कि किसी तरह सेठानीजी ठीक हो जाए | दुर्गा देवी के पलंग के पास बैठकर रात भर जागते हुए रहते, कुछ पूछने पर 'सब ठीक है' तुम सो जाओ कह चुप से हो जाते है |" (नेगी 56-57)

उम्र के अंतिम पड़ाव पर जब शरीर कमजोर होता है, तब जीवन साथी का ध्यान रखना और एक-दूसरे की सेवा करना सबसे बड़ी भक्ति बन जाती है | वृद्धावस्था में वृद्धों को अगर एक-दूसरे का साथ मिल जाए तो उससे बड़ी ख़ुशी क्या हो सकती है | क्योंकि इस उम्र में वही एक-दूसरे के सच्चे साथी होते है और एक-दूसरे को सबसे अच्छा समझते है | इस उम्र में जीवनसाथी का साथ होना और

समझना उन्हें भावनात्मक सहारा प्रदान करता है | हृदयेश के '*चार दरवेश*' में शिवशंकर नामक वृद्ध थोड़ा हकलाता है | हकलाने के कारण बातचीत करने से थोड़ा बचते थे | बच्चे हकलाने की नकल कर उनका मजाक उड़ाया करते थे | हालाँकि बच्चों का हंसी मजाक उनको बुरी नहीं लगता था | बुरा उनको तब लगता था जब उनके अपने ही यह कहते थे कि उनके पास रहने से बच्चे भी हकलाने के उनके दोष का शिकार बन सकते हैं | शिवशंकर इस तरह अपनी पीड़ा को छुपाए अपनी पत्नी से हंसी-मजाक करके दूर करता है | वह अपनी पत्नी से कहता है –

> "सोचता हूँ मैं भी एक सीरियल बना डालूँ| फर्स्ट क्लास होगा |" "सीरियल बनाना दिमाग वालों का काम है |" "दि-दिमाग के मामले में तुम्हारी मदद ले लूँगा |" पत्नी के हंसने पर वह भी हँस दिये थे | पुरानी यादों ने जो तनाव ला दिया था वह हाशिये पर खिसक गया था |" (हृदयेश 20)

जीवनसाथी का साथ होना वृद्धों की शारीरिक, मानसिक, पारिवारिक, सामाजिक हर तरह की समस्याओं से लड़ने व सहन करने की शक्ति देता हैं | इस अवस्था में जो वृद्ध एक-दूसरे की भावनाओं, शारीरिक, मानसिक परेशानियों और जरूरतों को समझते हैं वो हर परिस्थिति से लड़कर आपस में खुश रह कर तनाव व परेशानियों को कुछ हद तक दूर कर सकते हैं | वृद्धावस्था में जीवनसाथी का साथ, प्यार, विश्वास और आपसी समझ से भरा होना चाहिए | यह न केवल जीवन को आसान बनता है बल्कि इसे और अधिक खुशनुमा भी करता है | अगर जीवनसाथी साथ है, तो वृद्धावस्था भी एक नए, सुखद और संतोषजनक सफर की तरह लगती है |

6.2.9 नई पीढ़ी व पुरानी पीढ़ी में समन्वय

वृद्धावस्था में नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी के बीच सामंजस्य बनाए रखना न केवल परिवार बल्कि समाज के लिए भी महत्वपूर्ण है | जहाँ एक ओर नई पीढ़ी में आधुनिक सोच और ऊर्जा होती है, वहीं पुरानी पीढ़ी अनुभव और परम्पराओं का खजाना होती है | यदि दोनों के बीच समझदारी और सम्मान बना रहे, तो परिवार और समाज में सुख-शांति बनी रहती है | लेकिन 21वीं सदी में नई पीढ़ी तथा पुरानी पीढ़ी की मान्यताओं व जीवन मूल्यों के बीच गहरा अंतर आ गया है | दोनों पीढ़ियों के लिए एक-दूसरों की मान्यताओं व जीवन मूल्यों को मानना एक कठिन काम है, जिससे दोनों के बीच दरार की स्थिति पैदा हो जाती है | दोनों पीढ़ियों के लोगों को अपने विचारों, मूल्यों व मान्यताओं को एक-दूसरे पर थोपने की कोशिश नहीं करनी चाहिए | दोनों पीढ़ियां अगर एक दूसरे की भावनाओं, फैसलों व मान्यताओं का सम्मान करें और एक-दूसरे की सोच को स्वीकार करें, तभी यह मतभेद समाप्त हो सकता है | दोनों को एक-दूसरे के आचार-विचार, खान-पान, रहन-सहन, उठाना-बैठना आदि जीवन शैली व जीवन मूल्यों को अपनाना होगा तभी एक-दूसरे के विचारों को समझा जा सकता है और समन्वय बैठकर मतभेद व फासले को कम जिया जा सकता है | नई और पुरानी पीढ़ी के बीच समन्वय सिर्फ एक सामाजिक जिम्मेदारी नहीं है, बल्कि एक स्वस्थ और खुशहाल जीवन की कुंजी है | अगर दोनों पीढ़ियाँ एक-दूसरे को समझने, सम्मान देने और सहयोग करने की भावना अपनाएँ, तो परिवार और समाज दोनों ही अधिक समृद्ध और संतुलित बन सकते हैं |

6.3 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की सामाजिक समस्याओं हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण

हर व्यक्ति समाज का प्रमुख सदस्य होता है | समाज में ऐसा कोई परिवार नहीं है जिसमें वृद्धावस्था की समस्या न हो फर्क सिर्फ इतना होगा कि किसी परिवार में कम तो किसी में ज्यादा समस्याएँ होती हैं | समय के साथ-साथ समाज में भी बड़े तेजी से नए-नए परिवर्तन हो रहे हैं | नई पीढ़ी के लोग पुरानी पीढ़ी के लोगों को अपने जीवन में उपयुक्त नहीं समझते हैं | वृद्धों का शेष जीवन सुखपूर्वक व्यतीत हो इसकी जिम्मेदारी समाज को भी समझनी होगी | वृद्धों का ज्ञान और अनुभव प्रत्येक समाज के लिए उपयोगी होता है | इसलिए वृद्धों को आदर सहित समाज में एक स्रोत के रूप में उपयोग में लाना चाहिए | समाज में वृद्धों का आदर व सम्मान की भावना जागृत करनी चाहिए, जिससे वृद्ध स्वयं को समाज रूपी वृक्ष की सूखी डाली न मानकर मजबूत तना समझें | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की सामाजिक समस्याओं के निवारण हेतु कुछ सांकेतिक समाधान प्रस्तुत किए हैं |

6.3.1 सामाजिक मूल्यों को बचाना

सामाजिक मूल्य किसी भी समाज की रीढ़ होते हैं | 21वीं सदी में तेजी से बदलते सामाजिक परिवेश, शहरीकरण, वैश्वीकरण और एकल परिवारों की बढ़ती प्रवृत्ति ने वृद्धों की स्थिति को चुनौतीपूर्ण बना दिया है | ऐसे में सामाजिक मूल्यों और पुनर्स्थापना और संरक्षण न केवल वृद्धों के सम्मान और सुरक्षा के लिए आवश्यक है, बल्कि समाज की नैतिक मजबूती के लिए भी अनिवार्य है | समाज में ऐसे आदर्शों व मूल्यों को विकसित करना चाहिए जो वृद्धों की उपेक्षा व अवहेलना होने से बचाए | घर-परिवार से व स्कूली शिक्षा में बच्चों की नैतिक शिक्षा व समाजीकरण पर ध्यान दिया जाना चाहिए | बच्चों में बचपन से ही बड़ो के प्रति आदर व सम्मान की भावना को जागृत करनी चाहिए | बुजुर्गों से किस तरह बात करनी, उनकी बातों को गहराई से सुनना, उनकी आज्ञा को मानना आदि गुणों को विकसित करना चाहिए | सामाजिक परिवेश में ऐसे आदर्शों एवं मूल्यों को विकसित किया जाना चाहिए जो वृद्धजनों को अवहेलना से बचाए | वृद्धजन परिवार व समाज में आदर व सम्मान के साथ रह सके | परिवार, सहानुभूति, नैतिकता और आत्मनिर्भरता के मूल्यों को अपनाकर हम वृद्धों को सम्मानजनक जीवन दे सकते हैं | यदि समाज अपने मूल्यों को बचाए रखेगा, तो वृद्धों को भी वह सम्मान और सुरक्षा मिलेगी, जिसके वे हकदार हैं | सामाजिक मूल्य केवल अतीत की धरोहर नहीं बल्कि भविष्य की नींव भी है | इन्हें संजोकर ही हम वृद्धों के साथ-साथ समाज कल्याण कर सकते हैं |

6.3.2 कल्याणकारी योजनाओं व रियायतों के प्रति जागरूक

वृद्धावस्था में लोगों को विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं और रियायतों के प्रति जागरूक करना बहुत आवश्यक है ताकि वे अपने जीवन को सुगम और सुरक्षित बना सकें | सरकारी एवं गैर-सरकारी संगठन समाज में अनेक समाजसेवी संस्थाएं विशेष रूप से वृद्धों के लिए विभिन्न प्रकार की कल्याणकारी योजनाएँ चलाती रहती है | कुछ समाजसेवी संगठन सरकार से अनुदान लेकर वृद्धों के लिए कल्याणकारी योजनाएँ चलाती है | जैसे स्वास्थ्य संबंधी, यात्रा संबंधी, बैंक संबंधी तथा पेंशन संबंधी आदि | अधिकांश वृद्धों को इन कल्याणकारी योजनाओं की अच्छी तरह जानकारी नहीं होती है | डॉ. सूरज सिंह नेगी के *'नियति चक्र'* उपन्यास में डॉ

अवस्थी इस बात की ओर संकेत देते हुए कहते हैं – "आज यद्यपि राज्य सरकारों द्वारा निशुल्क इलाज की व्यवस्था की हुई है | लेकिन अभी भी कई जरूरतमंद ऐसे हैं जो जानकारी के अभाव में लाभ नहीं ले पाते |"(नेगी 102) वृद्धजनों के स्वास्थ्य संबंधी सरकार कई रियायतें और कल्याणकारी योजनाएँ चलाती है, जानकारी के अभाव में कई बुजुर्ग इनका लाभ नहीं उठा पाते हैं | राकेश वत्स के 'फिर लौटते हुए' उपन्यास में वृद्धों को आर्थिक सुरक्षा देने हेतु सरकारी योजनाओं की जानकारी देते हुए लिखते हैं – "हर बूढ़ा बाप या बूढ़ी माँ, जिसकी इनकम का कोई सोर्स नहीं है, अपने कमाऊ बेटे या बेटी से अपने गुजारे के लिए खर्च की मांग कर सकता है |"(वत्स 152) बच्चों का नैतिक ही नहीं कानूनी कर्तव्य भी है कि वे अपने माता-पिता का भरण-पोषण करें | हर वरिष्ठ नागरिकों को भरण-पोषण और कल्याण अधिनियम की जानकारी होना बहुत अनिवार्य है | एस. आर हरनोट के कहानी संग्रह *'दारोश तथा अन्य कहानियाँ'* की प्रसिद्ध कहानी 'कागभाखा' में भी यह दिखाया गया है कि कल्याणकारी योजनाओं का लाभ गाँव के वृद्धों को नहीं मिलता है | कहानी की मुख्य पात्र दादी वृद्धावस्था पेंशन की योजना के प्रति जागरूक तो है लेकिन वह इस योजना का लाभ नहीं उठा पाती | इस बात को वह गाँव वालों के सामने तब उजागर करती है जब वोट मांगने के लिए कुछ लोग गाँव में आते हैं | एक आदमी जो गाँव से बाहर का था कहता है –

> "माता जी आपको हम वृद्धावस्था पेंशन लगा देंगे |" दादी अब फिर सहज थी | जोर से हंसी | बोली, "बेटा मेरी पिनशन तो पिछले पांच सालों से लगी है |" वह खुश हो गया, "देखा न हमारी सरकार ने ही तो...|" "बिल्कुल बेटा | पर मुझे नहीं मिलती वह पेंशन ?" औरों ने इस बात को गंभीरता से न लिया हो परंतु परधान को सांप सूंघ गया था | उसने फिर पूछा, "फिर कहाँ जाती है माता जी ?" "अपने परधान से क्यों नहीं पूछते | वह पेंशन मेरे नाम से इसने अपनी जनानी को लगा रखी है |" (हरनोट 59)

वृद्धों की सुविधा के लिए कई तरह की योजनाएं सरकार द्वारा चलाई जाती है लेकिन वे उनका लाभ नहीं उठा पाते | *'नियति चक्र'* उपन्यास में निशुल्क इलाज तो *'कागभाखा'* कहानी में वृद्धावस्था पेंशन योजना का लाभ वृद्ध सही तरह से नहीं उठा पाते | कई वृद्ध जानकारी के अभाव में तो कई कागभाखा कहानी की दादी की तरह जानकारी होते हुए भी लाभ नहीं उठा पाते | कहीं वृद्धों की पेंशन का लाभ कागभाखा कहानी के प्रधान, तो कहीं घर के अन्य सदस्य उठाते हैं | वृद्धों को दादी की तरह वृद्धों को दी जाने वाली रियायतों, सरकारी योजनाओं के प्रति जागरूक होना चाहिए और अपने अधिकार के लिए सशक्त होकर बात रखनी चाहिए | वरिष्ठ नागरिकों को इन योजनाओं की जानकारी और लाभ प्राप्त करने की प्रक्रिया से अवगत कराकर हम उनकी जीवनशैली को अधिक सुविधाजनक और सुरक्षित बना सकते हैं |

6.3.3. सामाजिक कार्यक्रमों में जाना

वृद्धावस्था में सामाजिक कार्यक्रमों में भाग लेने लेना न केवल मानसिक और भावनात्मक रूप से बल्कि शारीरिक रूप से भी फायदेमंद होता है | बुजुर्गों को अक्सर अकेलापन और अवसाद जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है, इसलिए सामाजिक गतिविधियाँ उनके जीवन में सकारात्मकता लाने में मदद कर सकती हैं | उम्र के इस पड़ाव में वृद्धजनों के पास समय की कोई कमी

नहीं होती है | वे खाली समय बिताने की बजाय समाज में होने वाले हर एक कार्यक्रमों में उन्हें जाना चाहिए | सूरज सिंह नेगी के '*वसीयत*' उपन्यास में अहंकारी और अकेले रहने वाला वृद्ध विश्वनाथ स्वभाव से रिजर्व था | लोगों से मेल-मिलाप पर कम ध्यान देता था | सुधा के कहने पर विश्वनाथ सामाजिक कार्यक्रमों में जाने लगता है | "विश्वनाथ भगवती बाबू के साथ पड़ोस में आयोजित होने वाले कार्यक्रम जैसे शादी-ब्याह, गृह प्रवेश, धार्मिक अनुष्ठान आदि में भी जाने लगा था |" (नेगी 51) सामाजिक कार्यक्रमों में जाने व लोगों से घुलने-मिलने से वह काफी अच्छा महसूस करने लगता | सुधा विश्वनाथ के बिल्कुल विपरीत थी | वह जहाँ भी रहती सबसे जल्दी घुल-मिल जाती | लेखक सुधा के बारे में लिखते हैं – "किसी के घर बर्थ डे पार्टी हो, मैरिज-ऐनिवर्सरी हो, भजन-पूजा हो, शादी ब्याह हो, सबमें उसकी उपस्थिति दिख जाती थी |" (नेगी 66-67) वृद्धों को बुढ़ापे में सुधा की तरह सामाजिक कार्यक्रमों में सक्रिय होना चाहिए | इससे उनका मन लगा रहता है और अकेलेपन का अहसास भी नहीं होता है | सांस्कृतिक, धार्मिक, संगीत नृत्य और अन्य गतिविधियों से तनाव कम होता है और सकारात्मक ऊर्जा मिलती है | दूसरों से मिलने-जुलने से अकेलापन और अवसाद की सम्भावना कम होती है | सामुदायिक कार्यक्रम में भाग लेने से बुजुर्गों को यह एहसास होता है कि वे समाज का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं | सामाजिक मेलजोल से आत्मविश्वास बढ़ता है और वे खुद को अधिक आत्मनिर्भर महसूस करते हैं | वे अपनी जीवन भर की सीख और अनुभव दूसरों के साथ साझा कर सकते हैं, जिससे उनकी पहचान और सम्मान बना रहता है | नए दोस्त बनाने और पुरानी यादें साझा करने से खुशी मिलती है | युवाओं और परिवार के सदस्यों को चाहिए कि वे बुजुर्गों घर की चारदीवारी से बाहर निकलने, समाज से जुड़ने और इन कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए प्रेरित करें | स्थानीय प्रशासन और समाजसेवी संस्थाओं को वृद्धजनों के लिए अधिक से अधिक कार्यक्रम आयोजित करने चाहिए | सामाजिक कार्यक्रमों में भाग लेने से बुजुर्गों का जीवन अधिक खुशहाल, सक्रिय और संतुलित बना रहता है | इसके साथ वे खुद को अधिक ऊर्जावान और समाज से जुड़ा हुआ महसूस करते हैं |

6.3.4. अच्छे पार्क की व्यवस्था

वृद्धों के टहलने के लिए एक अच्छे पार्क का होना बहुत आवश्यक है | जहाँ वे आसानी से बैठ सकें, घूम सकें, आसान-आसान व्यायाम कर सकें | पार्क में बैठकर अपने हमउम्र लोगों के साथ गपशप लड़ा सकें | इसके लिए सबसे उपयुक्त जगह पार्क ही है | क्योंकि वृद्धजन सड़क पर, बाजार के शोर में न अच्छे से घूम सकते हैं न ही आपस में बाते कर सकते हैं | एक अच्छे पार्क में ही वृद्धजन हँसी-ख़ुशी अपनी सुबह व शाम को बिता सकते हैं | हर शहर व कालोनी में सरकार तथा लोकल सोसाइटी को पार्क बनाने हेतु पहल करनी चाहिए | पार्क के अनिवार्यता व महत्व पर कृष्णा सोबती के *'समय सरगम'* उपन्यास में वर्णन किया गया है –

> "बूढ़े सयानों की टोली हर शाम इस छोटे-से बगीचे में टहलती है, फिर बतियाती है | डी.डी.ए. की बदौलत | नागरिक कृतज्ञ हैं इस छुटके-से बगीचे में बिछी हरियाली घास के लिए | फूलों की क्यारियों और लतरों के लिए | न होता यह सुहावना टुकड़ा तो देखती रहतीं यह आँखें सीमेंट के अपार्टमेंट-जंगल को | कम से कम यहाँ हवा तो ताजी है | घास में लगे बेल-बूटों की तरह छोटे-छोटे फूल जंगलों को सुख देते हैं | हर शाम सुखकर लगते हैं |" (सोबती 89)

वृद्धजनों के लिए पार्क एक ऐसी जगह है जहाँ वे शांति से समय बिता सकें, शारीरिक रूप से सक्रिय रह सकें और मानसिक रूप से तरोताजा महसूस कर सकें | ऐसे पार्क न केवल उनके स्वास्थ्य को बढ़ावा देते हैं, बल्कि उन्हें सामाजिक मेलजोल का भी अवसर भी प्रदान करते हैं | एक अच्छे पार्क में साफ-सफाई का विशेष ध्यान रखा जाए, ताकि बुजुर्ग किसी भी संक्रमण या बीमारी से सुरक्षित रह सकें | इसके साथ एक अच्छे पार्क में सीसीटीवी और गार्ड की व्यवस्था होनी चाहिए, ताकि बुजुर्ग खुद को सुरक्षित महसूस कर सकें | वृद्धजनों के लिए पार्क में हल्की और समतल पगडंडियाँ हो, ताकि चलने में कठिनाई न हो | आरामदायक बेंच और कुर्सियां जो छाँव में हो ताकि वे आराम से बैठ सकें | वृद्धजनों के लिए इस तरह के अच्छे पार्क न केवल उनके शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को बनाए रखने में मदद करता है, बल्कि उन्हें जीवन की खुशियों को अनुभव करने का भी अवसर देता हैं |

6.3.5 साहित्य व समाज सेवा में ध्यान देना

वृद्धावस्था में साहित्य और समाज सेवा में ध्यान देना न केवल बुजुर्गों के लिए मानसिक और भावनात्मक रूप से फायदेमंद होता है, बल्कि समाज के लिए भी अमूल्य योगदान साबित होता है | इस उम्र में अनुभवों का खजाना होता है, जिसे साहित्य और समाज सेवा के माध्यम से सार्थक रूप दिया जा सकता है | इसलिए जीवन के अंतिम पड़ाव में वृद्धों को अपना समय साहित्य व समाज सेवा में लगाना चाहिए | इससे समाज का भी भला होगा और उन्हें खुद को भी अच्छा महसूस होगा | वृद्धों की अधिकतर समस्याएँ भी दूर होगी | इस तरह का सुझाव राकेश वत्स अपने उपन्यास *'फिर लौटते हुए'* में देते हैं –

> "प्रिय मित्रों ! मुझे बहुत ख़ुशी हुई है कि आप लोगों ने मेरी तरह अपनी इच्छा से समाज सेवा के रास्ते अपनी आत्मा, अपनी आंतरिक शुद्धता और अपनी मानसिक गरिमा को बचाए रखने की जरूरत महसूस की है | इस समय देश और दुनिया की जो हालत हो गई है उसमें यह काम बहुत कष्टसाध्य हो गया है | मैं आप लोगों को बधाई देता हूँ कि आपने इस कठिन रास्ते का राही बनकर अपने लिए वास्तविक सुकून को ढूँढ़ने का फैसला किया है |"(वत्स 169)

यह कार्य कष्टसाध्य होते हुए भी वृद्धों की समाज में गरिमा को बचाए रखने तथा उनकी ख़ुशी व सुकून का एकमात्र साधन है | अंत: उन्हें खुद को इस तरह के कार्यों में व्यस्त रखना चाहिए | डॉ. सूरज सिंह नेगी के *'नियति चक्र'* उपन्यास में सेठ नितिन घोष अपनी पूरी जिन्दगी समाज सेवा के काम में लगाते है | समाज सेवा से उनको जो सुकून, खुशी, और लोगों का प्यार व सम्मान मिला वो उन्हें धन एकत्र करके नहीं मिल सकता था | अपने जीवन में उन्होंने समाज सेवा के कई कार्य किए | लेखक लिखते हैं –

> "सेठजी इंसानियत के सच्चे पुजारी हैं, उनके द्वारा कइयों की जिन्दगी में रोशनी भरी गई है, कई धर्मांध संस्थान, स्कूल, कॉलेज, अस्पताल भवनों की स्थापना की गई है | कई अनाथालय चल रहे हैं, उनके विषय में जितना कहो कम है |"(नेगी 47)

वृद्धजनों के पास समाज को देने के लिए बहुत कुछ होता है | समाज सेवा उन्हें आत्म संतोष और नई ऊर्जा प्रदान करती है | वृद्धावस्था में साहित्य और समाज सेवा न केवल बुजुर्गों के जीवन को सार्थक बनाती है, बल्कि समाज में एक सकारात्मक बदलाव लाने का भी माध्यम बनता है |

6.3.6 निराश्रित व उपेक्षित वृद्धों के लिए वृद्धाश्रम

कुछ वृद्धों को अपने परिवार से उपेक्षा एवं तिरस्कार मिलता है जिसके कारण वे अपने रिश्तेदारों, बेटियों तथा वृद्धाश्रम पर निर्भर हो जाते हैं | घर-परिवार में निरादर, उपेक्षा व हिंसा के कारण कुछ वृद्धों का परिवार में दम घुटने लगता है | जिससे आजकल कुछ वृद्ध, वृद्धाश्रम के जीवन को पसंद करने लगे है, क्योंकि वहां मानसिक व शारीरिक परेशानियों का सामना नहीं करना पड़ता | कृष्णा अग्निहोत्री के कहानी संग्रह 'अपना-अपना अस्तित्व' की प्रसिद्ध कहानी 'झुर्रियों की पीड़ा' में गोमती पति के मरते ही उसके बेटे-बहु द्वारा उपेक्षित की जाती है | अपनी व्यथा को बताते हुए कहती है –

> पति के मरते ही जब मुझसे काम नहीं हो पाया तो मुझे सीढ़ियों के नीचे रहने का आदेश मिला | बर्तन, कपड़े भोजन मुझसे नहीं संभल रहा था | बहू-बेटे ने मेरी जमापूँजी सब छीन ली, मुझे अधपेट भोजन मिलता | जब मैंने आवाज़ उठाई तो मुझे यहाँ वे छोड़ गये- यहाँ अच्छा लगता है |" (अग्निहोत्री 12)

समाज में कई वृद्ध ऐसे होते हैं जिन्हें परिवार का सहारा नहीं मिल पाता या फिर वे उपेक्षित और असहाय हो जाते हैं | निराश्रित और उपेक्षित वृद्धों के लिए उचित वृद्धाश्रम का निर्माण कराया जाए | ऐसे वृद्धों के लिए वृद्धाश्रम महत्वपूर्ण व्यवस्था है, जो उन्हें सम्मानजनक जीवन जीने का अवसर प्रदान करता है | वहाँ ऐसा माहौल होना चाहिए जिससे वृद्धों को घर की याद अधिक न आए | वृद्धाश्रम शांत वातावरण में, हरियाली से घिरा हुआ होना चाहिए | वृद्धाश्रम की बिल्डिंग बहुमंजिला नहीं होनी चाहिए, अगर होती है तो लिफ्ट की व्यवस्था होनी चाहिए | वृद्धाश्रम के आस-पास पार्क होना जरूरी है ताकि सुबह-शाम शांति से घूम-फिर सकें | पुस्तकालय, इनडोर गेम्स व मनोरंजन के साधनों की व्यवस्था होनी चाहिए | इसके साथ पौष्टिक भोजन, दवाइयाँ और चिकित्सा सुविधाएँ भी प्रदान की जानी चाहिए | उन्हें अकेलेपन से बचाने के लिए समय-समय पर सामाजिक, धार्मिक कार्यक्रमों का आयोजन होना चाहिए | ऐसा होने पर वृद्धाश्रम में वृद्धजनों को अपनों की कमी का अहसास नहीं होगा | वृद्धों को उचित देखभाल और प्रेम देकर उनके अंतिम समय को सुखद बना सकते हैं | अंत: वृद्धाश्रम उन बुजुर्गों के लिए एक संजीवनी की तरह है, जिन्हें उनका परिवार त्याग चुका होता है | हलांकि, वृद्धाश्रम अंतिम विकल्प होना चाहिए, हमें प्रयास करना चाहिए कि बुजुर्ग अपने परिवार में ही प्रेम और सम्मान के साथ जीवन व्यतीत करें | परिवार और समाज को मिलकर यह सुनिश्चित करना चाहिए कि कोई भी वृद्ध अकेलापन और असहायता का शिकार न हो |

6.3.7 आर्थिक संपन्न और बच्चों के होते हुए भी वृद्धाश्रम में वृद्धों को भेजना सही नहीं

वृद्ध माता-पिता ने अपने जीवन का एक बड़ा हिस्सा अपने बच्चों की परवरिश, शिक्षा और सुख-सुविधाओं में बिता दिया होता है | यदि वे आर्थिक रूप से सम्पन्न हैं और उनके बच्चे भी सक्षम हैं, फिर भी उन्हें वृद्धाश्रम भेजना नैतिक और मानवीय दृष्टि से अनुचित है | आज भाग-दौड़ भरे जीवन में पति-पत्नी दोनों के नौकरीपेशा होने के कारण वृद्धों के लिए समस्या उत्पन्न हो रही है | इससे दोनों पीढ़ियों में वैचारिक मतभेद व अंतराल बढ़ रहा है | इस व्यस्तता में नई पीढ़ी वृद्धों के लिए वृद्धाश्रम के विकल्प को सही

और उचित मानने लगे हैं | चित्रा मुद्गल के उपन्यास *'गिलिगडु'* में शालिनी के माध्यम से नई पीढ़ी की मानसिकता को देखा जा सकता है –

> "अकेलापन खाए जा रहा है | मगर भैया के अकेले प्रयत्नों से तो अशांति कम नहीं हो सकती | बाबूजी को भी अपनी खोह से बाहर निकलने की जरूरत है | बाहर तभी निकल सकते हैं जब वे स्वयं को निकालने का तय कर लेंगे | परिवार में केवल अपने मान-सम्मान के विषय में नहीं सोचेंगे | वह उनके समक्ष है क्या जो उन्हें परिवार के मायने समझाए ? भैया तो यहाँ तक सोच रहें है कि जहाँ बाबूजी का मन लगे, वे प्रसन्नचित्त रहें, उन्हें वहीं रखा जाए | उन्होंने पता लगाया हैं कि नोएडा के सेक्टर पचपन में कोई आनंद निकेतन वृद्धाश्रम है, क्यों न उनके रहने की व्यवस्था वही कर दी जाए | हम उम्रों की जमात में बाबूजी का मन लगा रहेगा | भैया जगह देख आए हैं | वे बता रहे हैं कि बहुत सुंदर है | भोजनादि की व्यवस्था उत्तम कोटि की है | उन्हें वहाँ रखने के निर्णय से भैया पर खर्च का अतिरिक्त बोझ पड़ेगा; भैया उसे सहर्ष उठाने के लिए तैयार हैं |" (मुद्गल 96-97)

बेसहारा वृद्धों के लिए वृद्धाश्रम का होना उचित है लेकिन आर्थिक संपन्न बच्चों द्वारा बुजुर्गों के प्रति अपनी जिम्मेदारी को टालने के लिए वृद्धाश्रमों का इस्तेमाल करना सही नहीं, यह हमारी संस्कृति के खिलाफ है | यहाँ देख सकते है बेटा-बहू, बेटी सभी अपने पिता को वृद्धाश्रम भेजने के पक्षधर हैं | इन सभी का मानना है कि इससे उनका अकेलापन कम होगा और वे खुश रहेंगे | पर क्या वास्तव में ऐसा होगा कोई वृद्ध अपने परिवार के सदस्यों बेटे-बहू, पोते-पोती, और घर से दूर वृद्धाश्रम में खुश रहेगा ? जसवंत सिंह अपने बेटे-बेटी के इस सलाह को नहीं मानते हैं | वृद्धावस्था में पर्याप्त सेवा, प्यार, आदर व अपने लोगों का साथ ही उन्हें सुविधामय शांत जीवन की प्रेरणा दे सकते हैं | वृद्धजनों के लिए ऐसा वातावरण भी जरूरी है जहाँ वे अपने आप को असहाय, पीड़ित, उपेक्षित व निराश्रित अनुभव न करें | रवीन्द्र वर्मा के *'आखिरी मंजिल'* उपन्यास में भी अमेरिका में रह रहे संपन्न बेटा अपने बाप को वृद्धाश्रम में भेजना चाहता है –

> "उन्होंने बताया कि सातवें महीने की पहली तारीख को बेटे-बहू ने उन्हें बताया था कि उन्होंने राजीव रंजन के रहने का इंतजाम एक 'बूढ़ों के घर' में कर दिया है | बेटे-बहू ने उन्हें प्यार से समझाने की कोशिश की थी कि यही अमेरिका की रिवायत थी | राजीव रंजन नहीं माने | 'बूढ़ों के घर' जाने के बजाय वे लखनऊ चले आये | उन्होंने एक घूँट और शराब पीकर भरी आँखों से बताया कि अमरीका में उन्होंने बेटे को लखनऊ का मकान बेचने के बारे में नहीं बताया था | उसने पूछा जरूर था क्योंकि उसे अपने अपार ऋणों के भुगतान के लिए पैसे की जरूरत थी | लौट कर उसी पूंजी से उन्होंने इंदिरा नगर में एक मकान खरीद लिया था और उसमें वे एक मारुति और एक नौकर के साथ रहते थे, जो उनका ड्राइवर भी था |" (वर्मा 78)

राजीव रंजन की तरह कई वृद्धों के साथ ऐसी घटनाएँ घटती हैं | जिनके बच्चे विदेश में रहते है, वे अपने माँ-बाप को जमीन-जायदाद बेचकर विदेश बुला लेते है और उनका पैसा लेकर उन्हें वृद्धाश्रम में भेज देते हैं | इस उपन्यास में लेखक ने राजीव रंजन के माध्यम से

वृद्धों को अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए सांकेतिक समाधान भी दिया है | वृद्धावस्था में अगर वृद्ध अपनी धन-संपत्ति व जमा-पूंजी को बचाए रखते हैं, तो वे अपने कुपुत्र पर निर्भर न रहकर आत्मनिर्भर बन के भी जिंदगी जी सकते हैं | जिस तरह से राजीव रंजन जीते है | वृद्धाश्रम की पोल खोलते हुए '*समय सरगम*' उपन्यास की आरण्या कहती हैं – "अपने को सख्ती से तरेरा – पीछे सरका दो | भूल जाओ उसकी बेबसी को, उसे मदद की जरूरत है | पर क्या सच में कोई एक-दूसरे के लिए कुछ कर सकता है ! छोटी-बड़ी तल्खियों से तो वही अच्छे थे ! वही |" (सोबती 101) यहाँ आरण्या प्रश्न करती है कि वृद्धाश्रम में देखरेख करने वाले कहाँ हैं ? वैसे भी जितनी ख़ुशी वृद्धों को अपने बेटे-बेटी, पोते-पोती, नाते-नाती के साथ और अपने घर में होती है | नई जगह में कितनी भी सुविधाएँ क्यों न मिल जाए वह ख़ुशी नहीं मिल सकती | वृद्धाश्रम में वह अपनत्व कभी नहीं मिल सकता | वृद्धाश्रम भेजने की बजाय वृद्धों को भावनात्मक सहारे व अपने बच्चों के अपनत्व की जरूरत है | अपने घर में अपनों के साथ जिन्दगी जीना वृद्धों के लिए ज्यादा सुखदायक है | हालाँकि, कुछ परिस्थितियाँ ऐसी हो सकती हैं जहाँ वृद्धजन स्वेच्छा से वृद्धाश्रम में रहना चाहते हैं, लेकिन यदि उनके पास परिवार और देखभाल वाले बच्चे हैं, तो उनकी सही जगह उनके अपने घर में ही होनी चाहिए |

6.3.8 अनाथाश्रम व वृद्धाश्रम को एक करना

जिस आशियाने को माँ-बाप बड़ी उम्मीदों और आशाओं के साथ बनाते है उसी में उन्हें एक कमरा तक नसीब नहीं होता | वृद्धावस्था में उन्हें अपने ही घर से निकाल कर वृद्धाश्रम छोड़ दिया जाता है | माँ-बाप की अहमियत क्या होती है यह अनाथ बच्चों से बेहतर कोई नहीं समझ सकता | जिन्हें बचपन से कभी माँ-बाप का प्यार नसीब नहीं होता | आजकल के युवा भागदौड़ भरे जीवन में जी रहे हैं, उनके पास खुद के लिए समय है नहीं हैं तो अपने बच्चों और बूढ़ों के लिए कहाँ से समय निकालेंगे | कुछ युवा निजी स्वतंत्रता के कारण अपने माँ-बाप के साथ रहना पसंद नहीं करते हैं | परिणामस्वरूप वे अपने बुजुर्गों को वृद्धाश्रम भेज देते हैं | वृद्धों को अपने घर, गाँव, बच्चों, पोते-पोतियों से दूर रहकर जीवन के आखिरी दिन बिताना बहुत मुश्किल होता है | डॉ. सूरज सिंह नेगी के '*वसीयत*' उपन्यास में इस समस्या के समाधान हेतु सांकेतिक निवारण दिया है | जिसमें वृद्धों और अनाथ बच्चों के लिए एक ही आश्रम की व्यवस्था की गयी है | वृद्धों को अनाथ बच्चों में अपने बच्चे, पोते-पोतियों का प्यार मिल जाता, वहीं अनाथ बच्चों को वृद्धों के रूप में माँ-बाप, दादा-दादी का स्नेह मिल जाता है | '*वसीयत*' उपन्यास में विश्वनाथ के पिता और दादा इस तरह के आश्रम खोलते है | जिसमें अनाथ बच्चे और वृद्ध एक साथ हंसी-ख़ुशी मिल जुल कर रहते हैं, जिससे उनका जीवन सुखमय से व्यतीत होता है |

> "ऐसा लगता है आश्रम में जहाँ अनाथ बच्चों को वहाँ रह रहे बुजुर्ग दंपतियों के रूप में माँ-बाप मिल गए हों, वहीं उन बुजुर्ग दंपतियों और असहाय वृद्धों को जैसे उनके बच्चे मिल गए हों | जब आश्रम में बच्चों और वृद्धों को एक-दूसरे के नजदीक पाया तो लगा जैसे सब एक ही कुटुम्ब के लोग हों | कहीं महसूस नहीं हुआ कि सब अलग धर्म, जाति, सम्प्रदाय के हैं | आश्रम में केवल प्रेम और स्नेह देखने को मिला |" (नेगी 193)

अनाथाश्रम और वृद्धाश्रम को एक करना एक अनूठी और सार्थक पहल हो सकती है | इस विचार के पीछे यह भावना है कि बुजुर्गों को परिवार जैसा माहौल मिलेगा, जिससे उनका अकेलापन कम होगा | वहीं, अनाथ बच्चों को माता-पिता व दादा-दादी का स्नेह और मार्गदर्शक मिलेगा | अनाथ व वृद्धों के लिए एक ही आश्रम खोलकर वृद्धों को पोता-पोती व अपने बच्चों की याद नहीं आएगी | वृद्धावस्था में छोटे बच्चों के साथ खेलने व समय बिताने से उनका मन भी लगा रहेगा | बुजुर्गों को बच्चों के साथ समय बिताने से ख़ुशी और जीवंतता मिलेगी, जबकि बच्चे भी स्नेहपूर्ण माहौल में रहकर मानसिक और भावनात्मक रूप से मजबूत बनेंगे | यह पहल परिवार समाज में परिवार और आपसी सहयोग की भावना को बढ़ावा देगी | अगर सही ढंग से प्रबंधन किया जाए, तो यह विचार समाज के लिए एक आदर्श उदाहरण बन सकता है | इस तरह के आश्रम वृद्धजनों के दुखों को दूर तो नहीं कर सकते लेकिन कम जरूर कर सकते हैं |

6.3.9 वृद्ध संगठनों से जुड़ना

वर्तमान में संगठनों का होना अति आवश्यक है | वृद्धजनों के लिए ये संगठन या क्लब कई ऐसे कार्यक्रम चलाते है जिनसे वृद्धजनों का समय अच्छी तरह से कट जाता है इसलिए वृद्धजनों को वृद्ध संगठनों व क्लब की सदस्यता लेनी चाहिए | डॉ. सूरज सिंह नेगी के '*वसीयत*' उपन्यास में बूढ़े लोग मिलकर एक क्लब बनाते है | वे सभी वृद्ध नियमित रूप से पार्क में घूमते, एक दूसरे के साथ सुख-दुःख साझा करते है, हंसी-मजाक करते, एक दूसरे के जन्मदिन को ख़ुशी से मनाते | इस तरह क्लब के सभी वृद्ध सदस्यों में न कोई राग-द्वेष, न कोई जाति-पाँति, न कोई ऊँच-नीच, न कोई अमीर-गरीब, न कोई छोटा-बड़ा इस तरह का कोई अंतर न था | सभी एक दूसरे के एकाकीपन के साथी थे | सभी अपना तनाव व व्यथा अपने से दूर रखने का प्रयास करते थे | अवस्थी वृद्ध विश्वनाथ को क्लब का सदस्य बनने के लिए कहते हैं- "हम कुल छह लोग हैं, सभी सेवानिवृत्त हैं | एक क्लब बना रखा है, हमारा प्रतिदिन का नियम है, पार्क में आकर एक दूसरे के साथ समय बिताते हैं |...आपसे अनुरोध है कि आप भी हमारे क्लब का सदस्य बन जाइएगा |" (नेगी 73) उम्र बढ़ने के साथ अक्सर बुजुर्गों को अकेलापन महसूस होता है | क्लबों और संगठनों से जुड़कर वे नए दोस्त बना सकते हैं और सामाजिक दायरा बढ़ा सकते हैं | विश्वनाथ बेटे की बेरुखी के बाद अंदर ही अंदर टूट चूका था | क्लब में अपने हमउम्र लोगों के साथ पार्क में घूमने तथा सुख-दुःख बांटने से उसने जीने का तरीका सीख लिया था | क्लब के साथ जुड़ने के बाद विश्वनाथ बेहद खुश रहने लगता है | वृद्ध संगठनों और क्लबों से जुड़ने से वृद्धजनों का जीवन खुशहाल, सक्रिय और सम्मानजनक बना रहता है | इससे न केवल वे मानसिक और शारीरिक रूप से स्वस्थ रहते हैं, बल्कि समाज में भी योगदान कर सकते हैं |

6.3.10 दोस्तों से मिलने जाना

दोस्ती का रिश्ता बहुत खूबसूरत रिश्ता होता है | इस रिश्ते में खून के रिश्ते से भी ज्यादा प्यार, आपसी लगाव और भावना होती है | जीवन में अच्छे दोस्तों का साथ मरते दम तक नहीं छोड़ना चाहिए | दोस्तों के अच्छे और बुरे वक्त में हमेशा साथ निभाना चाहिए | अच्छे दोस्त अगर उम्र के अंतिम पड़ाव में भी मिलने आयें इससे बड़ी ख़ुशी क्या हो सकती है | कृष्णा सोबती के '*समय सरगम*' उपन्यास में ईशान और आरण्या अपने दोस्त किशोर, कामिनी, दमयंती और प्रभुदयाल से मिलने जाते रहते हैं | जिससे उनके

दुखी और संघर्षमय जीवन में थोड़े ख़ुशी के पल आ जाते हैं | ईशान अपनी पड़ोसिन आरण्या को किशोर से मिलने जाने की बात करते हैं | किशोर नर्सिंग होम से लौटे है अगर हम जायेंगे तो उसे अच्छा लगेगा | ईशान मिसेज किशोर को फोन कर देते हैं –

> "ईशान बोल रहा हूँ | कैसे हैं किशोर | किशोर को असुविधा न हो तो क्या उनसे मिलने आ जाएँ | हाँ आरण्या भी यहीं है | वह आएँ तो कैसा ! जरूर आइए | आप लोगों से मिलकर खुश होंगे | जाने क्यों चुपचाप पड़े रहते हैं | हम दस मिनट में पहुँच रहें है, दोनों |"(सोबती 53)

वृद्धावस्था में दोस्तों से मिलने जाना एक सुखद और आवश्यक अनुभव होता है | उम्र बढ़ने के साथ जब बच्चे और परिवार के अन्य सदस्य अपनी व्यस्त जिन्दगी में होते हैं, तब दोस्तों से मिलना मानसिक और भावनात्मक सेहत के लिए बहुत फायदेमंद साबित हो सकता हैं | दोस्तों के साथ समय बिताने से मानसिक तनाव कम होता है और अकेलापन महसूस नहीं होता | 21वीं सदी का हिंदी कथा साहित्य वृद्धों की सामाजिक समस्याओं को न केवल उजागर करता है बल्कि उनके समाधान के भी संकेत देता है | सामाजिक मूल्यों को बचाना, सामाजिक भागीदारी, सामाजिक कार्यक्रमों में जाना, कल्याणकारी योजनाओं व रियायतों के प्रति जागरूक, दोस्तों से मिलने जाना, हमउम्र पड़ोसियों के साथ मेलजोल, वृद्ध संगठन क्लबों से जुड़ना, वृद्धाश्रम और अनाथाश्रम को एक करना, सामाजिक कार्यक्रमों में जाना, अच्छे पार्क की व्यवस्था, निराश्रित और उपेक्षित वृद्धों के लिए अच्छे वृद्धाश्रम की व्यवस्था और समाज की सकारात्मक मानसिकता जैसे बिंदु इन समस्याओं के निवारण में सहायक हो सकते हैं |

6.4 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की आर्थिक समस्याओं हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण

वृद्धावस्था में आर्थिक समस्याओं का मुख्य कारण यह है कि वृद्धजन शारीरिक रूप से अशक्त हो जाते है | अधिकतर वृद्धजन अपनी सारी जमा पूंजी बच्चों की पढ़ाई-लिखाई, विवाह और मकान बनाने पर लगा देते हैं | जिसके कारण वे बुढ़ापे में अपने बच्चों पर आर्थिक रूप से पराश्रित हो जाते हैं | जिन वृद्धों ने थोड़ा बहुत पैसा अपने बुढ़ापे के लिए बचा कर रखा होता है या जिनको पेंशन मिलती है उनको आर्थिक रूप से थोड़ी कम समस्याएं झेलनी पड़ती हैं | 21वीं सदी के हिंदी साहित्य में वृद्धों की आर्थिक समस्याओं को प्रमुख सामाजिक मुद्दे के रूप में उकेरा गया है | आधुनिक जीवनशैली, बदलते पारिवारिक ढांचे, उपभोक्ता वाद और नैतिक मूल्यों के ह्रास के कारण वृद्धाश्रम में आर्थिक असुरक्षा एक गंभीर समस्या बन गई है | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में यह चिंता स्पष्ट रूप से झलकती है, और इनके माध्यम से कुछ संभावित समाधान भी प्रस्तुत किए हैं |

6.4.1 वृद्धों का निशुल्क इलाज

वृद्धावस्था में शरीर अक्सर दुर्बल हो जाता है और इलाज की आवश्यकता बढ़ जाती है | उम्र के इस पड़ाव पर स्वास्थ्य समस्याएँ बढ़ जाती हैं | युवाओं की अपेक्षा बुजुर्गों को अधिक बीमारियाँ लगती हैं | महंगे इलाज के कारण कई वृद्धजन आर्थिक संकट का सामना करते हैं | वृद्धों की स्वास्थ्य पर शुल्क कम से कम हो या निशुल्क इलाज की व्यवस्था होनी चाहिए | वृद्धों को अगर कोई रोग लग जाए तो नई पीढ़ी उनके इलाज पर अधिक खर्च करना नहीं चाहती | वृद्धजनों के इलाज की अपेक्षा वे पैसों को ज्यादा

महत्व देते हैं | हृदयेश के 'चार दरवेश' उपन्यास में वृद्ध रामप्रसाद को कुता काट लेता है | बेटी-दामाद जो उसके घर में रहते थे वे एंटी-रेबीज का इंजेक्शन लगाने के लिए उन्हें अस्पताल नहीं ले जाते क्योंकि उन्हें लगता इसमें खर्चा बहुत आएगा | बेटी और दामाद इंजेक्शन को लेकर बात करते हुए कहते हैं –

> "जमाई बाबू, "मेरे एक जानने वाले के बेटे को कुत्ते ने काटा था | पूरे पाँच इंजेक्शनों का कोर्स है | करीब दो हजार रूपये खर्च में आ गये |" बेटी, "बाप रे ? इतने महंगे सरकारी अस्पताल में होंगे ? जमाई बाबू, "होना चाहिए | तुम्हारा बाप पैसा निकालने रिक्शे पर लदकर बैंक जाता है कि नहीं | अस्पताल चला जाए पता लगाने |"(हृदयेश140)

वृद्धों को कई प्रकार की गंभीर बीमारियों एवं शारीरिक अक्षमताओं की संभावना बनी रहती है | परिवार के सदस्य उनकी बीमारी को बुढ़ापे का दर्द मानकर उनके इलाज पर ज्यादा ध्यान नहीं देते | वृद्धजनों को निशुल्क चिकित्सा सेवा देना समाज और सरकार दोनों की जिम्मेदारी है | सरकारी योजनाओं का सही क्रियान्वयन, निजी क्षेत्र की भागीदारी, एनजीओ की सक्रिय भूमिका से वृद्धजनों को बेहतर और निशुल्क इलाज उपलब्ध कराया जा सकता है | इससे उनकी जीवन गुणवत्ता में सुधर होगा और वे स्वस्थ एवं सम्मानजनक जीवन जी सकेंगे |

6.4.2 वृद्धावस्था पेंशन की राशि में इजाफा

वृद्धावस्था में आर्थिक सुरक्षा एक बड़ी चुनौती होती है, खासकर उन बुजुर्गों के लिए जो आर्थिक रूप से निर्भर हैं या कोई स्थायी आय स्रोत नहीं रखते | वर्तमान में सरकार द्वारा दी जाने वाली वृद्धावस्था पेंशन राशि कई राज्यों में बहुत कम है, जो वृद्धजनों की बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए अपर्याप्त है | इसलिए, पेंशन राशि में वृद्धि करना न केवल एक सामाजिक जिम्मेदारी है बल्कि वृद्धों की गरिमामय जीवनशैली के लिए भी अनिवार्य है | वृद्धों की आर्थिक स्थिति ख़राब होने से बचाने के लिए वृद्धों की पेंशन को बढ़ा देना चाहिए और इसके अलावा आर्थिक सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए | वृद्धावस्था पेंशन की राशि में इजाफा एक आवश्यक और समय की मांग है | यह वृद्धजनों की गरिमापूर्ण जीवनशैली सुनिश्चित करने के साथ-साथ उनके मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य पर भी सकारात्मक प्रभाव डालेगा | सरकार को महंगाई और स्वास्थ्य आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए इस दिशा में प्रभावी कदम उठाने चाहिए, ताकि वृद्धजन आर्थिक रूप से सुरक्षित और आत्मनिर्भर महसूस कर सकें |

6.4.3 वृद्धों को समय से पहले अपनी धन-संपत्ति बच्चों के नाम नहीं करनी चाहिए

21वीं सदी में महंगाई के दौर में बेटे-बहू वृद्धों पर पैसा खर्च करना नहीं चाहती | वृद्धजन अपना सारा पैसा बच्चों के पालन-पोषण, पढ़ाई-लिखाई, शादी-ब्याह व अच्छी परवरिश आदि जिम्मेदारियों को पूर्ण करने में लगा देते हैं | कुछ वृद्ध अपनी सारी धन-दौलत, जमीन-जायदाद भी समय से पहले अपने बच्चों के नाम कर देते हैं | ऐसे वृद्धों को अपनी छोटी-छोटी जरूरतों को पूरा करने के लिए अपने बच्चों पर निर्भर होना पड़ता है | बच्चों के ताने सुनने पड़ते हैं | वृद्धों को समय से पहले कभी भी अपनी धन-दौलत को बच्चों के नाम नहीं करना चाहिए | डॉ. सूरज सिंह नेगी के '*नियति चक्र*' उपन्यास में इस बात का संकेत दिया है | सेठ नितिन घोष भावनाओं में बह कर अपनी सारी धन-संपत्ति अपने बेटे चित्रांश के नाम कर देता है | किशन काका डॉ. अवस्थी को बताते है

कि सेठ जी के परोपकार के कार्य के कारण चित्रांश को शंका होती है कि कहीं उनका पिता संपूर्ण संपत्ति दान न कर दे | एक दिन चित्रांश ने यह शंका सेठ जी के पास रख दी | इस बात पर सेठ जी ने सारी जायदाद उसके नाम कर दी - "अगले दिन ही अपनी जायदाद, बंगले, पूंजी सब कुछ बेटे चित्रांश के नाम कर दिया | अपने पास केवल दो जोड़ी कपड़े रखे और स्वयं एक संन्यासी का जीवन जीने लगे थे |"(नेगी 60) जब तक वृद्धजनों के पास धन-संपत्ति, जमीन-जायदाद आदि है तो उनका मान-सम्मान हैं | जब धन-संपत्ति बच्चों के हाथ में आ जाती है तो अपने वृद्धों की उपेक्षा करने लग जाते हैं | धन-संपत्ति बेटे के नाम करने के बाद सेठ जी की उपेक्षा होने लगती है | चित्रांश अपनी मर्जी से सारे काम करने लगता है | पिता के सभी विश्वास नौकरों और कर्मचारियों को काम से निकाल देता है | जब नितिन घोष ने बेटे चित्रांश को समझाना चाहा उसका जवाब था –

> "अब पूरे एंटरप्राइजेज का एकमात्र मालिक मैं हूँ | समस्त शेयर मेरे नाम हैं, मैं जैसे चाहूँ, जो करूँ आपको दखल देने की जरूरत नहीं है | मैं अपने नजरिए से कंपनी को आगे ले जाऊंगा | रही किसे काम पर रखना है, हटाना है, यह मेरा अधिकार क्षेत्र है | आप घर पर बैठे रहिए, बिना वजह परेशान मत होइए |"(नेगी 63)

सेठ नितिन घोष बेटे की ऐसी बातों से आश्चर्य में पड़ जाता है उसे अपने कानों पर विश्वास नहीं होता है | वह सोचता मैंने अपनी जिम्मेदारी बेटे को सौंपकर मुक्त हो जाने की कल्पना की थी, लेकिन उसका यह निर्णय गलत साबित हो रहा था | बेटे चित्रांश ने सारी हदें पार कर दी | अपने बाप को घर से चले जाने को कह देते है, क्योंकि उसकी नजर उनके बड़े कमरे में थी, जहाँ वह अपना कार्यालय बनाना चाहता था | बेटे के कारण सेठ नितिन घोष की ऐसी हालत हो जाती है कि उन्हें अंत के दिनों में अपना नाम बदल के रहना पड़ता है | टी. बी. का इलाज भी समय पर नहीं कर पाते | नितिन घोष से वृद्धों को यह सीख लेनी चाहिए कभी भी भावनाओं में बहकर समय से पहले अपनी सारी जमा-पूंजी बच्चों के नाम न करें | हृदयेश के 'चार दरवेश' उपन्यास में चार वृद्धों में से दूसरा वृद्ध शिवशंकर भी नितिन घोष की तरह अपनी संपत्ति व घर बेटे के नाम करके पछताता है | बेटा अपने पिता को प्राइवेट स्कूल खोलने की मजबूरी बता कर, माँ-बाप को अपने साथ रखने की बात करता हुआ अपने माँ-बाप के पुराने घर को बेच देता है | अपने पुराने मित्रों को बेटे द्वारा धोखे से मकान बेचने की घटना के बारे में वे पत्र के माध्यम से बताते हैं | वे एक पत्र में लिखते हैं –

> "उनको सपने में रामप्रसाद गुप्ता दिखाई दिये | सपने में गुप्ताजी कह रह रहे थे कि उन्होंने बेटी-दामाद को अपने घर में रखकर गलती की | भाई शिवशंकर आपने अपना घर बेचकर बेटे के पास रहना स्वीकार कर की |"(हृदयेश 153)

अक्सर देखा गया है कि जब माता-पिता अपनी सम्पत्ति बच्चों को सौंप देते हैं, तो कुछ बच्चे उनके प्रति लापरवाह हो जाते हैं | यदि सम्पत्ति उनके पास रहती है, तो उनकी देखभाल और सम्मान बना रहता है | अंत: वृद्धों को जल्दबाजी में अपनी सम्पत्ति बच्चों के नाम नहीं करनी चाहिए, बल्कि सोच-समझकर सही समय पर उचित निर्णय लेना चाहिए |

6.4.4 आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर

21वीं सदी में पारिवारिक व सामाजिक संबंध आर्थिक स्थिति पर निर्भर करते हैं | बुढ़ापे में आदमी की आर्थिक स्थिति में भी बहुत परिवर्तन आ जाता है | आर्थिक तंगी के कारण छोटी से छोटी जरूरतों के लिए दूसरों पर निर्भर रहना पड़ता है | आज इस

उपभोगवादी दृष्टिकोण के कारण नई पीढ़ी के लोगों की आय खुद के लिए कम पड़ रही है तो वे बूढ़े माँ-बाप के लिए कहाँ खर्च करेंगे | वृद्धावस्था में व्यक्ति को अपनी कमाई का पैसा रखना जरूरी है जिससे वे अपनी सामान्य जरूरतों को पूरा कर सकें तथा किसी पर भी आश्रित रहना न पड़े | हृदयेश के '*चार दरवेश*' उपन्यास में वृद्ध चिंताहरण के सन्दर्भ में देख सकते है | वे अपने-बेटे बहू पर किसी तरह आश्रित नहीं होते है | लेखक लिखते हैं –

> "चिंताहरण अपने बेटे-बहू से दबते नहीं थे | बेटा-बहू जानते थे कि वह अपने मन का ही करेंगे | चिंताहरण ने अपनी बढ़ी हुई आयु में भी किसी भी प्रकार से अपने को अपनों का आश्रित नहीं बनाया था | आश्रित बनाना अपने को बेचारा बनाना है | वह एक चीनी मिल में बहैसियत एक शुगर केमिस्ट नौकरी करते थे | सेवा निवृत्ति में चार साल शेष थे कि चीनी मिल बंद हो गयी | ग्रेच्युटी की रकम के अलावा उनको समय से पूर्व नौकरी चले जाने व अन्य सुविधाओं की क्षति का पैसा मिला था | सारे धन को उन्होंने एक विश्वसनीय पेंशन योजना में निवेशित कर दिया था | इस योजना के अंतर्गत हर माह मिलने वाले पैसे से उनका अपना निजी खर्च पूरा हो जाता था |"(हृदयेश 62)

चिंताहरण की तरह हर वृद्ध को अपने जीवन में कमाई जमा-पूंजी को अपने वृद्धावस्था के लिए संभाल कर रखना चाहिए | सरकार की अच्छी-अच्छी योजनाओं में भी थोड़ा-थोड़ा निवेश करना चाहिए जिससे बुढ़ापे में आर्थिक रूप से किसी पर आश्रित न होना पड़े | एक अन्य वृद्ध रामप्रसाद भी अपने बुढ़ापे के लिए बैंक में कुछ पैसा जमा करते रहते है साथ ही पच्चीस हजार की एफ.डी.आर. भी करवा रखते हैं | रामप्रसाद का देवता रमेश जब उनसे बैंक के पैसे को उसकी दुकान में निवेश करने को कहता है तब रामप्रसाद अपने धेवते रमेश से कहते हैं –

> "बेटे रमेश, बैंक में मेरा ज्यादा रुपया तो है नहीं | मामूली सा है | बुढ़ापे में किसी के आगे हाथ फैलाना न पड़े, बस यही चाहता हूँ |...नानाजी, बैंक में बचत खाते के रुपयों के अलावा आपकी एफ.डी.आर. भी है, पच्चीस हजार रुपयों की |...बेटे पच्चीस हजार रकम आज के ज़माने में बड़ी नहीं होती है | बुढ़ापे में किसी के आगे हाथ फैलाने की नौबत न आये, बेटे इसी का यह इंतजाम है |"(हृदयेश 95-96)

वृद्धजनों को नौकरी या व्यवसाय के दौरान बचत और निवेश की आदत डालनी चाहिए | सुरक्षित निवेश जिससे नियमित ब्याज आय मिलती रहे | वृद्ध अगर आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होगा तो वह अपनी निजी जरूरतों को पूरा कर सकता है | आर्थिक रूप से सक्षम वृद्ध को अन्य पारिवारिक, सामाजिक समस्याओं का भी सामना भी नहीं करना पड़ता क्योंकि जो वृद्ध अपने परिवार पर आर्थिक रूप से निर्भर नहीं होता तो परिवार के सदस्यों को वे वृद्ध बोझ नहीं लगते बल्कि पैसे का स्रोत लगते हैं | यहाँ पर भी रामप्रसाद और उसकी बेटी-दामाद, धेवता सब उसकी धन-संपत्ति पर नजर रखे हुए होते हैं | वृद्धों के पास अगर धन-संपत्ति है तो कुछ हद तक उनकी इज्जत बनी रहती है | जो वृद्ध हर तरह से परिवार के सदस्यों पर निर्भर होते हैं उन्हें घर का बोझ और खर्चा करने वाला माना जाता है जिससे उन्हें कई तरह की परेशानियों का सामना करना पड़ता है | वृद्धावस्था में आत्मनिर्भर रहने के लिए सही वित्तीय योजना,

निवेश, स्वास्थ्य का ध्यान और सतर्कता आवश्यक है | अगर पहले से योजना बनाई जाए, तो बुढ़ापा आर्थिक रूप से सुरक्षित और सम्मानजनक हो सकता है |

6.4.5 क्षमता अनुसार छोटे-मोटे काम धंधे करना

वृद्धों को अगर अकेलेपन, हीन भावना तथा आर्थिक परनिर्भरता के दुष्प्रभाव से बचना है तो उन्हें छोटे-मोटे काम धंधे चलाने पर ध्यान देना होगा | काम में व्यस्तता वृद्धजनों के लिए शारीरिक और मानसिक दोनों तरह से उपयोगी है | काम में व्यस्त रहने से वृद्धजनों का अकेलापन और मानसिक तनाव दूर होगा तथा शारीरिक सक्रियता और आर्थिक निर्भरता भी कायम रहेगी | डॉ. सूरज सिंह नेगी के 'नियति चक्र' उपन्यास में नंदिनी के माध्यम से लेखक अलग-अलग तरह के वृद्धों के ज्ञान और अनुभव के इस्तेमाल की ओर संकेत देते हुए लिखते हैं –

> "किस तरह वृद्धाश्रम में चल रहे अलग-अलग वृद्ध अपने अनुभव और ज्ञान का इस्तेमाल आज भी समाज हित में कर रहे हैं | भार्गव साहब आज भी कई युवाओं को अपने विषय की बारीकियां समझा रहें हैं, मित्तलजी जो एक रिटायर्ड चीफ इंजीनियर हैं कई सिविल इंजीनियर्स को कार्य की गुणवत्ता और समय पर पूरा करने के गुर दे रहें हैं | डॉ मधु आज भी आसपास की बस्तियों में जाकर स्वास्थ्य संबंधी जागरूकता का काम कर रही हैं | इसी प्रकार भोलू काका अपनी कूँची हाथ में लेकर कई युवाओं को अपने विषय की बारीकियाँ समझाते हुए चित्रकारी सीखा रहे हैं | गंगू अंकल अस्सी की उम्र में जब हारमोनियम के साथ सुबह शाम अपनी स्वर लहरियाँ बिखेरते हैं, तो सभी का ध्यान अपनी और आकर्षित कर लेते हैं |"(नेगी 113)

वृद्धावस्था में भी आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर रहने और मानसिक रूप से सक्रिय बने रहने के लिए छोटे-मोटे काम-धंधे करना एक अच्छा विकल्प हो सकता है | इससे न केवल अतिरिक्त आमदनी होती है, बल्कि आत्मसम्मान और समाज से जुड़ाव भी बना रहता है | यहाँ देख सकते हैं कि किस तरह अलग-अलग वृद्ध अपने-अपने ज्ञान, कौशल और अनुभव से नई पीढ़ी को लाभान्वित कर रहें है | इस तरह के कार्यों से एक तो वृद्धों का समय अच्छे से व्यतीत हो जाएगा | दूसरा उन्हें नई पीढ़ी के साथ कार्य करने का अवसर मिलेगा | जिससे वृद्धों के अनुभव और कौशल को नई पीढ़ी तक स्थानांतरित कर सकते हैं तथा दो पीढ़ियों के बीच आपसी सामंजस्य भी बढ़ेगा | जिन वृद्ध जनों की आर्थिक स्थिति सही नहीं होती वे अपने ज्ञान, कौशल और अनुभव को अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारने में भी लगा सकते हैं | जिससे वे आर्थिक रूप से भी निर्भर बन सकते हैं | वृद्धावस्था में अपनी रुचि और क्षमता के अनुसार छोटे-मोटे काम करने चाहिए जिससे न केवल उनकी आय बढ़ेगी, बल्कि जीवन में उत्साह और आत्मविश्वास भी बना रहेगा |

6.4.6 युवाओं के पलायन को रोकना

ग्रामीण या छोटे शहरों से युवाओं का बड़े शहरों या विदेशों की ओर पलायन आज एक गंभीर समस्या बन चुकी है | इसका सबसे बड़ा असर बुज़ुर्गों पर पड़ता है, जो अकेले रह जाते हैं और आर्थिक व मानसिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है | यदि युवाओं को अपने गाँव, कस्बे या राज्य में ही रोजगार के अच्छे अवसर मिलें, तो वे वहीं रुक सकते हैं और अपने बुजुर्ग माता-पिता

का साथ निभा सकते हैं | सूरज सिंह नेगी के '*वसीयत*' उपन्यास में लेखक यह संकेत देते हैं – "यदि हमारे गाँव में ही बेहतर शिक्षा, चिकित्सा, स्वास्थ्य, रोजगार जैसी व्यवस्थाएं होंगी तो अनावश्यक पलायन के लिए मजबूर नहीं होना पड़ेगा और बूढ़े होते माँ-बाप की आँखों में हमेशा संतोष की चमक तैरेगी |" (नेगी 275) जब बच्चे बड़े शहरों में चले जाते हैं, तो बुज़ुर्ग अकेलेपन और भावनात्मक असुरक्षा का शिकार हो जाते हैं | कुछ वृद्ध माता-पिता अपने बच्चों पर आर्थिक व स्वास्थ्य रूप से निर्भर होते है | यदि बच्चे बाहर चले जाते हैं, तो उनके लिए धन भेजना या उनकी देखभाल करना उनके लिए आसान नहीं होता | अगर स्थानीय स्तर पर शिक्षा, रोजगार और बुनियादी सुविधाएँ दी जाए, तो युवाओं को पलायन करने की जरूरत नहीं होगी, बल्कि बुजुर्गों को भी परिवार के साथ रहने और सुरक्षित जीवन जीने का अवसर मिलेगा |

6.4.7 धन से ज्यादा रिश्तों को महत्व देना

आज की भागदौड़ भरी जिंदगी में लोग आर्थिक समृद्धि के पीछे दौड़ रहें हैं, लेकिन अक्सर रिश्तों की अहमियत को नजरंदाज कर देते है हैं | हालांकि, सच्ची खुशी और मानसिक शांति केवल धन से नहीं, बल्कि मजबूत स्नेहशील रिश्तों से आती है | वर्तमान में रिश्तों की अपेक्षा धन को अधिक महत्व दिया जाता है | युवा पीढ़ी धन को कमाने में इतनी व्यस्त है कि माँ-बाप के लिए उनके पास समय नहीं मिलता | आज की नई पीढ़ी माँ-बाप को भी तभी स्वीकार करती है अगर उनके पास धन-संपत्ति, जमीन जायदाद तथा खूब पैसा होता है | वृद्धों के पास अगर धन न हो तो उन्हें मान-सम्मान व महत्व नहीं दिया जाता | आज की युवा पीढ़ी को समझना चाहिए कि धन तो कमाया जा सकता है लेकिन माँ-बाप हमें एक बार मिलते है | जब माँ बाप हमारी जिन्दगी से चले जाते हैं तो फिर लौटकर नहीं आते हैं | डॉ. सूरज सिंह नेगी के 'वसीयत' उपन्यास में विश्वनाथ अपने जीवन में कभी भी अपने माँ-बाप को महत्व नहीं देता | वह छोटी सी बात पर नाराज होकर हमेशा के लिए उनसे दूर शहर में रहने लगता है | जीवन भर अपने काम में व्यस्त रहता है, यहाँ तक वह अपने माँ-बाप के पत्रों को पढ़ना व उनका जवाब देना भी उचित नहीं समझता | जीवन के अंतिम पड़ाव में जब उसका बेटा राजकुमार उसके साथ यही व्यवहार करता है तब उसे अपने माँ-बाप के दुःख का अहसास होता है | विश्वनाथ पिता की डायरी को अपने वृद्धावस्था में पढ़ता है, माँ-बाप के संघर्ष, दुःख-दर्द व उनके महत्व को समझता है | माँ-बाप की कमी को महसूस करता है, लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी होती है | उसके दादा, माँ-बाप सभी यह संसार छोड़ चुके होते हैं | वह उन्हें खूब याद करता, उसे अपने किए कर्मों पर बहुत पछतावा होता है | विश्वनाथ आत्मग्लानि के साथ खूब आँसू बहाता है-

> "विश्वनाथ दर्द से तड़प उठा था | उसके मुँह से आह निकल पड़ी |...उसकी आँखें आंसुओं से भर आयी थीं | आँखों के आगे धुंधलापन छाने लगा, वह देर तक यूँ ही सोचता रहा | सामने दीवार पर देखा, माँ-बाबूजी की तस्वीर उसे एकटक देख रही थी | विश्वनाथ को महसूस हुआ जैसे वह दोनों उससे प्रश्न पूछ रहे हों | "क्यों च्यला आज कैसा महसूस हो रहा है | जब तूने अपने ईजा-बाज्यू को छोड़ा मुड़कर देखा तक नहीं | आज तेरा अपना खून तेरे पास लौटकर नहीं आया तो इतना दर्द क्यों भला |" (नेगी 204)

पैसा कमाया जा सकता है लेकिन एक बार माँ-बाप, रिश्ते-नाते दूर हो जाए, तो उन्हें वापिस लाना मुश्किल होता है | माँ-बाप के महत्व को अनाथ बच्चे समझ सकते हैं या वह जिसने माँ-बाप की उपेक्षा की हो और अब उसी के बच्चे उसके साथ वैसा कर रहे हों | विश्वनाथ ने भी जीवन भर माँ-बाप के महत्व को नहीं समझा लेकिन अपने वृद्धावस्था में उनके दुःख-दर्द को महसूस कर खूब पश्चाताप करता हैं | इसलिए समय रहते माँ-बाप के संघर्षों को हमेशा याद रखना चाहिए कि किस तरह उन्होंने हमको पाल-पोस कर बड़ा किया है | उनके प्यार, स्नेह व आशीर्वाद को हमेशा सम्मान देना चाहिए | जीवन में हमेशा धन-संपत्ति, पद से ज्यादा अपने वृद्ध माँ-बाप को महत्व देना चाहिए | डॉ. सूरज सिंह नेगी के 'नियति चक्र' उपन्यास में नितिन घोष अपनी सारी धन-संपत्ति अपने बेटे चित्रांश के नाम कर देते है | धन-संपत्ति मिलते ही चित्रांश धीरे-धीरे अपने पिता की उपेक्षा करने लगता है | उनकी हर बात का प्रतिरोध करने लगता है | जीते जी उन्हें कोई इज्जत नहीं दी | पिता को ही अपना प्रतिद्वंद्वी समझ कर उनकी अवहेलना करने लगता है | उनकी लोकप्रियता से ही जलने लगते है | टीबी. की बीमारी पर उनका इलाज नहीं करवाते बल्कि घर से निकल जाने को कह देते है | अपने पिता के जीवित रहते उनकी अहमियत को नहीं समझते है | नियति चक्र घूमता है, जब वह अर्श से फर्श पर आ जाता है | तब उसे पछतावा होता है | पश्चाताप ग्रस्त चित्रांश खुद के द्वारा किए व्यवहार पर शर्मिंदा होते हुए डॉ. अवस्थी से कहते हैं –

> "डॉक्टर साहब मुझ जैसा बदनसीब बेटा शायद ही कोई होगा | देवता तुल्य पिता के प्यार को न समझ सका, उस समय मेरी आँखों पर दौलत और शोहरत का ऐसा नशा छा गया कि मैं उसके आगे सभी को तुच्छ समझ बैठा | मेरे लिए धन सम्पत्ति अर्जित करना ही एक ध्येय बन गया था | रिश्तों की गरमाहट का अहसास ही नहीं रहा और मेरी इसी सोच ने मुझे कहीं का नहीं रखा |"(नेगी 87)

महंगे घर, गाड़ियाँ और कपड़े ख़ुशी नहीं दे सकते, लेकिन अपनों के साथ बिताया गया समय सुकून देता है | यहाँ देख सकते है नेगी जी ने अपने उपन्यासों में रिश्तों की जगह पैसों को अहमियत देने वाले बेटों को दिखाया गया है | 'वसीयत' उपन्यास में विश्वनाथ और 'नियति चक्र' उपन्यास में चित्रांश इसी तरह के पात्र है | जो अपने माँ-बाप की अहमियत को उनके जीवित रहते हुए नहीं करते है लेकिन उनकी मृत्यु के बाद पश्चाताप की अग्नि में जलते रहते हैं | लेखक यहाँ यह संकेत देते है कि पैसों की जगह अपने माँ-बाप को जीवित रहते उनकी कद्र व उनके महत्व को समझना चाहिए | धन जीवन में बहुत जरूरी है, लेकिन रिश्तों से ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं | पैसे से सुख-सुविधाएँ मिल सकती है, पर असली खुशी अपनों के साथ होने में है | अगर धन कम हो तो जीवन चल सकता है, लेकिन रिश्ते टूट जाएं तो जीवन अधूरा हो जाता है | इसलिए, हमेशा रिश्तों को प्राथमिकता दें, क्योंकि यही असली सम्पत्ति है |

21वीं सदी का हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की आर्थिक समस्याओं को गहराई से चित्रित किया है और इनसे निपटने के लिए विभिन्न सांकेतिक निवारण बिंदु भी प्रस्तुत किए गए हैं | इनमें आत्मनिर्भरता, संयुक्त परिवार का महत्व, वृद्धजनों के लिए रोजगार के अवसर सरकारी योजनाओं की पहुँच, वृद्धजनों को निशुल्क इलाज, वृद्धावस्था पेंशन में बढ़ोतरी, समय से पहले जमीन-जायदाद बच्चों के नाम न करना, धन से ज्यादा रिश्तों को महत्व देना और सामुदायिक देखभाल जैसी रणनीतियां शामिल हैं | इन निवारण बिन्दुओं को यदि वास्तविक जीवन में लागू किया जाए, तो वृद्धावस्था को आर्थिक रूप से अधिक सम्मानजनक और सुरक्षित बनाया जा सकता है |

6.5 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की सांस्कृतिक समस्याओं हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण

वृद्धावस्था किसी भी व्यक्ति के जीवन का एक महत्वपूर्ण चरण होता है, जिसमें उसे कई शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है | भारतीय समाज में सांस्कृतिक जड़े बहुत गहरी थीं | वर्तमान में रिश्ते नाते, सम्बन्धों, आदर्शों व जीवन मूल्यों में खोखलापन आ गया है | आज इस उपभोक्तावादी संस्कृति से सबसे ज्यादा अगर कोई प्रभावित हुआ है तो वह वृद्ध ही है | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की स्थिति, उनकी सांस्कृतिक समस्याएँ और उनके संभावित निवारण के विषय को गंभीरता से उठाया गया है |

6.5.1 अपनी सभ्यता व संस्कृति के मूल्यों को बचाना

सभ्यता और संस्कृति किसी भी समाज की आत्मा होती है, जो उसकी पहचान को बनाए रखती है | यदि कोई समाज अपनी संस्कृति और मूल्यों को भूल जाता है, तो वह अपनी जड़ो से कट जाता है | 21वीं सदी की पीढ़ी पश्चिमी प्रभाव, उपभोक्तावाद और डिजिटल दुनिया की ओर तेजी से बढ़ रही है, जिससे उनकी अपनी सभ्यता व संस्कृति से दूरी बढ़ रही है | ऐसे में आवश्यक हो जाता है कि युवा पीढ़ी अपनी सभ्यता और संस्कृति के मूल्यों को संजोकर रखे और आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचाए | आज गाँव का युवा शहरों में जाकर वहीं बसना चाहता है और अपने गाँव और गाँव की परम्पराओं को भूलना चाहता है | वहीं शहर का युवा विदेश में बसना चाहता है और वहां की सभ्यता व संस्कारों को अपना लेता है | अपनी सभ्यता और संस्कारों को भूलने के साथ नई पीढ़ी अपने माँ-बाप तथा अपने वृद्धों के साथ उपेक्षित व्यवहार करते हैं | नेगी जी के '*वसीयत*' उपन्यास में इस समस्या का चित्रण हुआ है | विश्वनाथ गाँव के वृद्धों की आँखों में इस दर्द को देखते हैं | गाँव के हमउम्र वृद्ध बातों ही बातों में अपने दर्द को बता देते हैं -

> "दाज्यू ! क्या करें! बूढ़े माँ-बाप की निराशा भी सही है, परदेस से साल, दो साल में बच्चे आते भी है तो उनमें वह मासूमियत, गाँव की हवा, मिट्टी, पानी के प्रति मोह कहीं नहीं दिखता वह एक पर्यटक की भाँति शहरी संस्कृति में रच बस कर कुछ दिनों के मेहमान बनकर आते अवश्य है लेकिन इस माटी के प्रति उनका मोह तथा सम्मान नहीं होता | बेचारे माँ-बाप उनमें उस युवा को ढूंढते हैं जो गाँव छोड़ने से पहले हुआ करता था लेकिन वह कहीं नहीं दिखता"(नेगी 273)

आधुनिक जीवन शैली में व्यस्त युवा अपनी संस्कृति से कटते जा रहे हैं | गाँव से शहर व विदेशों में पलायन कर रहे युवाओं को अपनी सभ्यता, संस्कृति, संस्कारों व मूल्यों को सुरक्षित रखना चाहिए | जीवन भर जिन माँ-बाप ने अपने बच्चे को इस काबिल बनाया आखिर में वही बच्चा अपनी सभ्यता, संस्कार तथा माँ-बाप को भूल जाता है | शहर के चकाचौंध भरे जीवन के आगे युवा अपने गाँव, माँ-बाप सबको भुला देता है | नई पीढ़ी अपने गाँव, समाज माँ-बाप की समस्याओं को अपनी समस्या समझ कर समाधान कर सकता है जब वह अपनी संस्कृति, संस्कार व मूल्यों को आत्मसात करेगा |

6.5.2 युवाओं में संस्कारों का होना

संस्कार किसी भी व्यक्ति के आचरण, व्यक्तित्व और सोच को सही दिशा देने वाले मूल तत्व होते हैं | ये केवल परम्पराओं और रीति-रिवाजों तक सीमित नहीं होते, बल्कि नैतिकता, आदर्श और अनुशासन से भी जुड़े होते हैं | डॉ. सूरज सिंह नेगी के *'रिश्तों की आँच'* उपन्यास में लेखक ने रामप्रसाद को एक संस्कारी व आदर्श बेटा, बाप और भाई के रूप में प्रस्तुत किया है | जो बचपन में पिता के खोने के बाद बीमार माँ की देखभाल और छोटे भाई-बहन को पढ़ाने में दिन-रात एक कर देता है | भाई-बहन की उच्च शिक्षा, नौकरी व शादी करवा कर अपने बड़े भाई होने का सिर्फ फ़र्ज अदा नहीं करता है बल्कि उनके जीवन में हर मुसीबतों में उनके साथ खड़ा रहता है | वह खुद के बेटे की फीस के पैसे से अपनी बहन ममता के बेटे को बचाने के लिए लगा देता है तथा छोटे भाई रमेश के व्यक्तिगत जीवन की समस्याओं के समाधान में भी सहयोग करता है | रामप्रसाद एक अच्छे पिता की भांति अपने बेटे और बेटी की हर मांगो को पूरा करता है तथा आदर्श बेटे की तरह बीमार माँ की सेवा करता है और हमेशा उनके साथ रहता है | रामप्रसाद पूरे उपन्यास में संघर्ष करते हुए दिखाई देते हैं लेकिन अपने जीवन मूल्यों व संस्कारों को कभी नहीं भूलते | रामप्रसाद आर्थिक संघर्षों से जूझते हुए शहर में खुद का घर का खरीद कर माँ के सपने को पूरा करता है | इस ख़ुशी में उसकी माँ कहती हैं –

> "बेटा रामप्रसाद ! मुझे गर्व है तुम पर, तुमने अपने पुरखों का नाम रोशन किया है | जिस संस्कार और मूल्य की चाहत प्रत्येक माँ-बाप द्वारा अपने बच्चों से की जाती है वह सब तुम्हारे भीतर मौजूद है | तुमने इस अजनबी शहर में परिवार के लिए एक आशियाने का इंतजाम कर डाला है जिससे मैं आज बेहद ख़ुश हूँ, जीवन में हमेशा तरक्की करते रहो |"(नेगी 91)

संस्कार युवाओं को अपने परिवार और समाज के प्रति कर्तव्यनिष्ठ बनाते हैं | बचपन से ही परिवार और स्कूलों में बुजुर्गों के प्रति आदर और सेवा की भावना विकसित करनी चाहिए | जब युवा अपने माता-पिता और दादा-दादी को सम्मान देते हैं, तो समाज में सकारात्मक सन्देश जाता है | रामप्रसाद जैसे मेहनती, संघर्षशील, त्यागी जीवन मूल्यों वाला बेटा पाकर उसकी माँ बहुत खुश होती है | उसके दुःख-दर्द, त्याग व संघर्षों को उसकी माँ ने करीब से देखा था | इसलिए उस जैसा संस्कारी व जीवन मूल्यों वाला बेटा पाकर वह अत्यंत प्रसन्न है | रामप्रसाद जैसे बेटे पाकर उसकी आधी बीमारी अपने आप ठीक हो जाती है | नेगी जी ने इस उपन्यास के माध्यम से रामप्रसाद जैसे जीवन मूल्यों व आदर्श बेटे का चित्रण करके नई पीढ़ी के लिए आदर्श स्थापित किया है |

6.5.3 युवाओं को जिम्मेदारी का अहसास करवाना

युवाओं को वृद्धों के प्रति अपनी जिम्मेदारी का अहसास कराना समाज के नैतिक और सांस्कृतिक मूल्यों को बनाए रखने के लिए बहुत आवश्यक है | वृद्धजन अपने ज्ञान, अनुभव और मार्गदर्शन से समाज को समृद्ध बनाते हैं, और उनके प्रति युवाओं का सम्मान और सेवा एक नैतिक कर्तव्य है | लेकिन वर्तमान समय में व्यक्ति आत्मकेंद्रित व स्वार्थी हो गया है | मनुष्य अपना स्वार्थ देखकर ही परिवार में वृद्धों की सेवा करता है | वृद्धों के पास अगर धन- संपत्ति है तभी उनके परिवार वाले देखभाल करते हैं लेकिन दिल से उनमें अपने वृद्धों के प्रति सेवा, समर्पण, त्याग व कर्तव्य की भावना नहीं होती है | आज के समय में नई पीढ़ी अपनी जिम्मेदारी व कर्तव्य से भागना चाहती है | नेगी जी के *'वसीयत'* उपन्यास में विश्वनाथ गाँव के प्रत्येक युवाओं को एकत्र करता है और उन्हें

अपने जन्मदाता और जन्मभूमि के प्रति जिम्मेदारी का अहसास करवाता है | विश्वनाथ के प्रयासों से गाँव के हर युवा जो रोजगार की तलाश में गाँव से पलायन कर रहे थे और जो युवा शहरों में नौकरी कर रहे थे सभी युवाओं ने अपनी जिम्मेदारी को निभाने का संकल्प लिया | युवाओं का अपने मातृभूमि और जन्मभूमि के प्रति कर्तव्य का निर्वहन करते देख बूढ़े माँ-बाप की आँखों में ख़ुशी से चमक उभर आई थी |

> "विश्वनाथ ने देखा वहाँ मौजूद प्रत्येक व्यक्ति गाँव के विकास के लिए कोई न कोई संकल्प ले रहा था | वह देख रहा था बूढ़े माँ-बाप की आँखों में एक चमक उभर आई थी | आज उनकी अपनी संतान पुनः अपनी जड़ों से जो जुड़ गई थी और गाँव के प्रति अपना कर्तव्य समझ चुकी थी |

माँ-बाप बिना स्वार्थ के हमारा पालन-पोषण व हर जरूरतों को पूरा करते हैं तो हमें भी बिना स्वार्थ के उनकी सेवा करनी चाहिए व उनकी ख़ुशी के लिए हर संभव कार्य करने चाहिए | युवाओं को यह समझना चाहिए कि आज जो बुज़ुर्ग हैं, वे भी कभी युवा थे, और भविष्य में वे भी वृद्धावस्था में प्रवेश करेंगे | यदि वे आज अपने वृद्धजनों का सम्मान करेंगे और देखभाल करेंगे, तो आने वाली पीढ़ियाँ भी उनके साथ वैसा ही व्यवहार करेंगी | इसलिए, यह ज़रूरी है कि युवा अपने व्यस्त जीवन में से थोड़ा समय निकलकर वृद्धजनों के प्रति अपनी जिम्मेदारी निभाएं और उनके जीवन को सम्मानजनक और सुखद बनाएं |

6.5.4 धार्मिक/ सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन

वृद्धों के लिए धार्मिक और सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन न केवल उनके मानसिक और आध्यात्मिक सुख-शांति के लिए आवश्यक है, बल्कि यह उन्हें सामाजिक रूप से सक्रिय और खुशहाल बनाए रखने में भी मदद करता है | ऐसे कार्यक्रम वृद्धजनों को एक साथ लाने, उनके अनुभव साझा करने और उनके जीवन में सकारात्मक बनाए रखने का एक प्रभावी माध्यम हो सकते हैं | 21वीं सदी के युवा अपने गाँव व शहर से पलायन कर बड़े शहरों तथा विदेशों में धन कमाने जा रहे हैं | जिससे घर गाँव में केवल बूढ़े ही बचे हैं | माँ-बाप बच्चों का भविष्य सुरक्षित करने के लिए तैयार तो कर रहे हैं लेकिन खुद असुरक्षित जीवन जी रहे हैं | इस असुरक्षा के भाव और एकाकीपन से निजात पाने के लिए समय-समय पर धार्मिक व सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन होना बहुत आवश्यक है | इस तरह के कार्यक्रमों से एक दूसरे के सुख-दुःख तथा समस्याओं को बाँटने का अवसर मिलता है | ममता कालिया के *'दौड़'* उपन्यास में असुरक्षा के अहसास से लड़ने के लिए धार्मिक आयोजन करने का समाधान बताया है –

> "शायद असुरक्षा के अहसास से लड़ने के लिए ही यहाँ की जनकल्याण समिति प्रति मंगलवार किसी एक घर में सुन्दर कांड का पाठ आयोजित करती | उस दिन वहाँ जैसे बुढ़वा मंगल हो जाता | पाठ के नाम पर सुन्दर कांड का कैसेट म्यूजिक सिस्टम में लगा दिया जाता |"(कालिया 75)

सामूहिक कार्यक्रमों से वृद्धों को एक-दूसरे से मिलने और अपने अनुभव साझा करने का अवसर मिलता है, जिससे उनका अकेलापन दूर होता है | धार्मिक कार्यक्रम वृद्धजनों को आध्यात्मिक शांति और मानसिक संतुलन प्रदान करते हैं, जिससे वे जीवन के उत्तरार्ध को सकारात्मक रूप से जी सकते हैं | वृद्धावस्था में अधिकतर बुजुर्गों की रुचि धार्मिक व सांस्कृतिक कार्यक्रमों में ज्यादा हो जाती है

| इसलिए उनके लिए नियमित रूप से इस तरह के कार्यक्रमों का आयोजन होना चाहिए | जिससे अपने जीवन की वैयक्तिक, पारिवारिक परेशानियों को भूल कर कुछ पल खुशी से जी सकें | धार्मिक और सांस्कृतिक कार्यक्रम बुजुर्गों को आनंद, मानसिक शांति और सामाजिक जुड़ाव प्रदान करने का एक सुंदर माध्यम हैं | ऐसे आयोजन से न केवल वृद्धजन प्रसन्न रहते हैं, बल्कि समाज में परम्पराओं और संस्कारों का भी संवर्धन होता है | हमें मिलकर बुजुर्गों के जीवन को सुखद और सम्मानजनक बनाने के लिए इन कार्यक्रमों को बढ़ावा देना चाहिए |

6.6 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की मनोवैज्ञानिक समस्याओं हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दुओं का विश्लेषण

वृद्धावस्था केवल शारीरिक ही नहीं अपितु मानसिक स्थिति में भी व्यवधान पैदा करती है | आज आवश्यकता इस बात की भी है कि वृद्धजनों की मनोदशा व भावनाओं को समझा जाए | वृद्धों की मानसिक स्थिति समझे बिना उनकी समस्याओं का समुचित समाधान मुश्किल है | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में मनोवैज्ञानिक समस्याओं का चित्रण सिर्फ यथार्थपरक नहीं, बल्कि इनके समाधान की संभावनाओं को भी तलाशता है | विभिन्न कहानियों और उपन्यासों में वृद्धों की मानसिक दशा को सुधारने हेतु सांकेतिक निवारण बिन्दु प्रस्तुत किए गए हैं, जिनका विश्लेषण निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता हैं |

6.6.1 मृत्यु के भय की बजाय जिंदगी को ख़ुशी से जीना

वृद्धावस्था में वृद्धों को मृत्यु का भय सताता रहता है | इस उम्र में वृद्धों के हमउम्र, पड़ोसी, दोस्त व जीवनसाथी किसी न किसी की मृत्यु होती रहती है | मौत के विषय में वृद्ध सोचने को मजबूर हो जाते हैं, जिससे उनका जीवन तनावपूर्ण और उदास हो सकता है | लेकिन यह जीवन का एक स्वाभाविक चरण है, जिसे खुशी, संतोष और आत्मविश्वास के साथ जिया जा सकता है | वृद्धजनों को मृत्यु की चिंता से मुक्त कर, उन्हें वर्तमान का आनंद लेने और जीवन को सकारात्मक दृष्टिकोण से जीने के लिए प्रेरित करना बेहद आवश्यक है | '*गिलिगडु*' उपन्यास में बाबू जसवंत सिंह मृत्यु अपने दोस्त कर्नल स्वामी से मौत के विषय में पूछते है तो वे इसका जवाब इस प्रकार देते हैं –

> "वे मौत के बारे में सोचते नहीं है | उस पर सोचना उन्हें जरूरी भी नहीं लगता | मौत जब आएगी, आ जाएगी | किसी भी शक्ल में जाए | रगड़ेगी हफ्ता, महीना, साल या अचानक झपटे से उठा लेगी | उठा ले | मगर उन कुछेक कष्टकर दिनों की कल्पना में रात-दिन अधमरे होकर जीना जिंदगी का मजाक उड़ना नहीं ! सर, लिव लाइक शेर...अपनी तरह से | अपनी शर्तों पर |"(मुद्गल 63)

वृद्धजनों को कर्नल स्वामी की तरह मौत के भय से मुक्त होकर जीवन जीना चाहिए | बाबू जसवंत सिंह ने अपनी पत्नी, बालसखा दोस्त हरिहर दूबे तथा कर्नल स्वामी की मृत्यु से बहुत दुखी होते है | मृत्यु को अमर सत्य मानकर जिंदगी को जिंदादिल्ली के साथ जीना चाहिए | मृत्यु के भय में जिंदगी को अच्छे से जिया नहीं जा सकता है | मृत्यु एक स्वाभाविक सत्य है, जिसे टाला नहीं जा सकता, लेकिन इसे सोचकर जीवन को बोझ नहीं बनाना चाहिए | वृद्धावस्था जीवन का संध्याकाल नहीं, बल्कि अनुभव और आनंद

का समय होना चाहिए | यदि व्यक्ति अपने जीवन के हर पल को खुशी और संतोष के साथ जीने का प्रयास करें, तो मृत्यु का भय स्वयं ही समाप्त हो जायेगा | जीवन में सकारात्मकता, समाज से जुड़ाव, नई चीजें सीखने और परिवार के साथ प्रेम पूर्वक रहने से वृद्धजन न केवल खुशहाल रह सकते हैं, बल्कि दूसरों के लिए प्रेरणा भी बन सकते हैं |

6.6.2 वृद्धावस्था में भावनात्मक व मनोवैज्ञानिक सहारे की आवश्यकता

वृद्धावस्था केवल शारीरिक परिवर्तनों का ही नहीं, बल्कि मानसिक और भावनात्मक उतार-चढ़ाव का भी समय होता है | वृद्धावस्था में मनुष्य को अपने बेटे-बेटी, सगे-संबंधी व मित्रों से भावनात्मक सहारे की आवश्यकता होती है | उम्र के इस पड़ाव में बाकी सारी इच्छाएँ ख़त्म हो जाती है, इस अवस्था में वृद्ध अपनों के प्यार व साथ के लिए तरसते है | निर्मल वर्मा के '*अंतिम अरण्य*' उपन्यास में मेहरा साहब भी अपनी बेटी के प्यार व साथ के लिए तड़पते दिखाई पड़ते है | मेहरा साहब की बेटी तिया उनसे दूर शहर में नौकरी करती है, कभी-कभार उनसे मिलने आती है | वह उनसे नाराज व दूरी इसलिए भी बनाकर रखती है क्योंकि उन्होंने उसकी माँ को छोड़कर दूसरी शादी की थी | जब मेहरा साहब अपनी अंतिम सांसे गिन रहे थे तब उन्हें अपनी बेटी से मिलने का मन करता है | वह इस हालात में भी बेटी से मिलने चार से पांच घंटे का सफ़र करने के लिए तैयार हो जाते है | लेखक लिखते है- "वह अपने डर को सरप्राइज का नाम दे रहे थे ..तभी इतना उत्तेजित-सा दिखाई दे रहे थे कि उस समय कुछ भी कहना बेमानी-सा जान पड़ा |"(वर्मा 156) बेटी से मिलने जाने की उत्सुकता में वह अपनी बीमार हालत को भी भूल जाते है | वृद्धावस्था में वृद्धों को अगर भावनात्मक व मनोवैज्ञानिक सहारा दिया जाए तो वे बीमारी की हालत में भी ख़ुश व संतुष्ट दिखाई देते हैं | बेटी से मिलने जाने की बात से मेहरा साहब इतना ख़ुश हो उठते है कि उनकी आँखों से आंसू बह निकलते है – "आँसुओं के बवंडर के बाद एक धुली-धुली-सी आभा उनके चेहरे पर झलक रही थी |"(वर्मा 162) परिवार के सदस्यों द्वारा अनदेखी किए जाने से वृद्धजन खुद को महत्वहीन महसूस करने लगते हैं | डॉ. सूरज सिंह नेगी के 'नियति चक्र' उपन्यास में नंदिनी नामक युवती वृद्ध नितिन घोष की प्रेरणा से वृद्धाश्रम का संचालन करती है | इसके साथ वह वृद्ध माँ-बाप के ऊपर रिसर्च प्रोजेक्ट पर भी काम करती है | वृद्धों के ऊपर रिसर्च के चौंकाने वाले परिणाम को लेकर कहती हैं –

> "उम्र के उस पड़ाव पर उन लोगों को भोजन से कहीं अधिक अपनों के स्नेह और अपनत्व की आवश्यकता होती है जो अक्सर नहीं मिल पाता | अफ़सोस उनको अपने ही घर में बेइज्जत होना पड़ता है, वहाँ उनकी भावनाओं को समझने वाला कोई नहीं होता |"(नेगी 112)

जीवन के इस पड़ाव पर व्यक्ति को अपने परिवार, समाज और प्रियजनों से अधिक प्रेम, सहानुभूति और समझ की आवश्यकता होती है | मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक समर्थन की कमी वृद्धजनों को अकेलापन, अवसाद और निराशा की ओर धकेल सकती है | इसलिए, इस अवस्था में मानसिक संतुलन बनाए रखना और जीवन को आनंदपूर्वक जीना बेहद आवश्यक हो जात है | वृद्धावस्था जीवन का एक अनमोल चरण है, जिसे भय और तनाव से मुक्त रखकर खुशी और संतोष के साथ जिया जाना चाहिए | परिवार, समाज और सरकार को मिलकर वृद्धजनों को भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक समर्थन देने की दिशा में प्रयास करने चाहिए | यदि

वृद्धजन स्वयं को उपयोगी और सम्मानित महसूस करें, तो वे अपने जीवन के अंतिम वर्षों को सुखद उर शांतिपूर्ण बना सकते हैं | उनका अनुभव और ज्ञान समाज के लिए मूल्यवान हैं, और हमें उनके जीवन को खुशहाल बनाने के लिए हर संभव प्रयास करना चाहिए |

6.6.3. नियमित रूप से पार्क जाना

नियमित रूप से पार्क जाना शारीरिक, मानसिक और सामाजिक स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभकारी होता है | खासकर वृद्ध लोगों के लिए यह एक स्वस्थ आदत साबित हो सकती है | पार्क में घूमना, जॉगिंग, पैदल यात्रा करना घर की चारदीवारी में बैठे रहने से बेहतर है | पैदल चलना वृद्धों के लिए सबसे आसान और महत्वपूर्ण व्यायाम है | नियमित पार्क में जाने से वृद्ध शारीरिक और मानसिक रूप से सक्रिय रहेंगे | शारीरिक सक्रियता वृद्धों के जीवन में आने वाली कई स्वास्थ्य समस्याओं को रोकने के लिए भी आवश्यक है | रोज थोड़ा पैदल चलने से मांसपेशियों में मजबूती, पाचन शक्ति व रक्तचाप में संतुलन रहेगा | रोज घूमने से वृद्ध मानसिक रूप से भी स्वस्थ रह सकते हैं | घर के चारदीवारी में अकेले समय काटने और अवसाद ग्रस्त जीवन से मुक्ति मिलेगी | पार्क में नए लोगों के साथ मेल-जोल, गप-शप, सुख-दुख बांटने से समय भी कटेगा और अकेलापन भी | डॉ. सूरज सिंह नेगी के '*वसीयत*' उपन्यास में विश्वनाथ घर में बैठ-बैठ के बीमार पड़ जाते है | साथ ही बेटे-बहू के व्यवहार को सोचकर दुखी होते रहते हैं | पत्नी सुधा के कहने से वे पार्क में चले जाते है | पार्क में देखते है कि बच्चे, जवान व वृद्ध सभी अलग-अलग गतिविधियों में लगे हैं कोई व्यायाम, कोई योगाभ्यास, कोई आपसी परिचर्चा, कोई खेल रहे, कोई जॉगिंग, आदि क्रियाकलापों में व्यस्त है | कुछ हमउम्र लोग केक काट रहे व नाच-गा रहे | विश्वनाथ देखते है कि –

> "उस पार्क में मौजूद प्रत्येक व्यक्ति अपने हाल में खुश था, एक दूसरे के साथ सुख-दुःख साझा कर रहा था | वहाँ लोगों के मध्य कोई राग द्वेष, भेदभाव, जाति-पाँति, ऊँच-नीच, अमीर-गरीब, पद में छोटा या बड़ा कोई अंतर न था | सभी लोग प्रातः कालीन भ्रमण का भरपूर आनंद ले रहे थे |"(नेगी 72)

विश्वनाथ को पार्क में जाने से अच्छा महसूस होता है उसका मन भी उन सभी की ख़ुशी में शामिल होने का मन करता है | धीरे-धीरे विश्वनाथ उन सभी हम उम्र लोगों से मिल जाते हैं | प्रतिदिन पार्क में हमउम्र लोगों के साथ सुख-दुःख व अनुभव साझा करने से मन हल्का हो जाता है | पार्क में पांच-छ: लोगों ने सेवानिवृत्त के बाद एक क्लब बनाया था | क्लब के सभी सदस्य पार्क में आकर एक-दूसरे के साथ समय बिताते, एक-दूसरे के सुख-दुःख में साथ देते | विश्वनाथ भी उस ग्रुप का सदस्य बन जाते हैं | विश्वनाथ को क्लब के सदस्यों से अवगत करवाया जाता हैं –

> "विश्वनाथ को अवगत करवाया गया कि क्लब में कोई न कोई कार्यक्रम आयोजित किया जाता रहता है | सभी सदस्य एक-दूसरे के सुख-दुःख में शरीक होकर उसके अपने होने का अहसास करते हैं | आज विश्वनाथ अन्दर से बेहद खुश था, उसने जीने का तरीका सिख लिया था | बेटे की बेरुखी से वह अंदर ही अंदर बेहद टूट सा गया था, अपने हम उम्र लोगों के

> साथ कुछ पल बैठकर उनके सुख-दुःख में भागीदार बनने के बाद उसने महसूस किया कि कई बार इंसान एक झूठे भ्रम में ही जी रहा होता है |” (नेगी 76)

पार्क में अन्य लोगों से मिलकर सामाजिक जुड़ाव बना रहता है, जिससे अकेलापन महसूस नहीं होता | नियमित पार्क जाने से वृद्ध घर की चारदीवारी में उत्पन्न विवाद और अवसाद से बच सकते हैं | इसके साथ पार्क में हमउम्र लोगों से बात-चीत, गप- शप व एक-दूसरे के दुःख-सुख में शामिल होकर अपने अकेलेपन को दूर कर सकते हैं | नियमित पार्क में जाने से वृद्ध शारीरिक रूप से स्वस्थ तथा मानसिक समस्याओं जैसे तनाव, अवसाद और एकाकीपन से भी बच सकते हैं | नियमित सैर या व्यायाम से मोटापे और उससे होने वाली समस्याओं और बीमारियों से भी बचा जा सकता है | चित्रा मुद्गल की ‘गेंद’ कहानी में वृद्धाश्रम में रह रही चटर्जी दी कपूर को डांटा करती थी – “कपूर भाई बुढ़ापे को मुटापा साक्षात् मौत की दावत होता है | दोनों बेला लम्बा टहलिए | साँझ की टहलने भर से बात नहीं बनने की | कमजोर टाँगे कब तक संभालेंगी देह का बोझ |”(मुद्गल 24) हर दिन सैर व व्यायाम करने से व्यक्ति बुढ़ापे में आने वाले मोटापे को भी नियंत्रित कर सकता है | इसलिए, वृद्धों को अपनी दिनचर्या में पार्क जाना अवश्य शामिल करना चाहिए ताकि वे स्वस्थ, खुश और ऊर्जावान बने रहें | 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की मनोवैज्ञानिक समस्याओं को संवेदनशीलता और यथार्थपरकता के साथ चित्रित किया गया है | इनमें प्रस्तुत सांकेतिक निवारण परिवार और समाज को यह सीख देते हैं कि वृद्धजनों की समस्याओं को अनदेखा न करें, बल्कि उन्हें समाधान का मार्ग दिखाएँ |

निष्कर्ष :

प्रस्तुत अध्याय में 21वीं सदी के हिंदी कथा साहित्य में वृद्धों की समस्याओं के सांकेतिक निवारण बिन्दुओं को विश्लेषण करने का प्रयास किया है | वृद्धों की वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक. आर्थिक व मनोवैज्ञानिक समस्याओं से संबंधित समाधान के अंश बहुत कम होते हुए भी उपयोगी हैं | कथा साहित्य के विश्लेषण के उपरान्त कहा जा सकता है कि वृद्धों को साहित्य व समाज सेवा में अपना ध्यान लगाना चाहिए | हर परिस्थिति में *‘समय सरगम’* की वृद्ध पात्र आरण्या की तरह खुश रहना चाहिए | बीमारी को *‘हम न मरब’* उपन्यास के ‘बब्बा’ की तरह हावी नहीं होने देना चाहिए | उसे शरीर की स्वाभाविक क्रिया मानकर उससे चिंतित और दुखी नहीं होना चाहिए | *‘रेहन पर रग्घू’* उपन्यास के रघुनाथ की तरह बेटे-बहू के साथ दोस्ताना व्यवहार रखना चाहिए | अपने विचारों को दूसरों पर जबरदस्ती थोपना नहीं चाहिए | जिन वृद्धों की स्थिति स्वास्थ्य, परिवार, समाज, आर्थिक व मनोवैज्ञानिक स्तर पर सही रहती है तो वे अपना बुढ़ापा बहुत अच्छे से जीते हैं | इसके विपरीत जिनकी पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक व मनोवैज्ञानिक स्तर पर स्थिति ठीक नहीं उन्हें बुढ़ापा मुश्किलों व दुःख-दर्दों में काटना पड़ता है | हिंदी कथा साहित्य में वृद्धावस्था की समस्याओं का समाधान व्यावहारिक, संवेदनशील और संतुलित दृष्टिकोण प्रदान करता है | यह केवल दुखों को उजागर नहीं करता, बल्कि वृद्धों के जीवन को सम्मानजनक, सक्रिय, सुरक्षित और मानसिक रूप से सशक्त बनाने की दिशा में मार्गदर्शन भी करता है | वृद्धों की हर छोटी-बड़ी समस्या के निराकरण के लिए हमें प्रयास करना चाहिए क्योंकि वृद्धावस्था एक समस्या नहीं यह एक अनिवार्य पड़ाव है जिससे हम सभी को एक न एक दिन गुजरना है | वृद्धों की समस्याओं के निवारण के लिए प्रयास करना सिर्फ हमारे वृद्धों के लिए नहीं हैं बल्कि सम्पूर्ण मनुष्य जो कि एक न एक दिन वृद्ध होगा उनके लिए भी इसका लाभ होगा |

संदर्भ ग्रन्थ :-

उपन्यास

कालिया, ममता. *दौड़*. नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, छठा संस्करण, 2021.

टेकचंद. *दाई*. नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2017.

नेगी, सूरज सिंह. *रिश्तों की आँच*. जयपुर, हेरिटेज पब्लिकेशन्स, संस्करण, 2016.

नेगी, सूरज सिंह. *वसीयत*. जयपुर, साहित्यागार, संस्करण, 2018.

मुद्गल, चित्रा. *गिलिगडु*. नयी दिल्ली, सामयिक प्रकाशन, सातवां संस्करण, 2020.

सिंह, काशीनाथ. *रेहन पर रग्घू*. दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, चौथा संस्करण, 2014.

सोबती, कृष्णा. *समय सरगम*. दिल्ली, राजकमल पेपरबैक्स, चौथा संस्करण, 2019.

हृदयेश. *चार दरवेश*. नयी दिल्ली, भारतीय ज्ञानपीठ, पहला संस्करण, 2011.

वत्स, राकेश. *फिर लौटते हुए*. दिल्ली, राजपाल एंड सन्ज, प्रथम संस्करण, 2003.

वर्मा, रवीन्द्र. *आख़िरी मंजिल*. दिल्ली, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. पहली आवृत्ति, 2009.

वर्मा, रवीन्द्र. *पत्थर ऊपर पानी*. नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, पहला संस्करण, 2000.

कहानी

अग्निहोत्री, कृष्णा. अपना-अपना अस्तित्व. दिल्ली, नयी किताब प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2018.

मुद्गल, चित्रा. लपटें. नयी दिल्ली, छठा संस्करण, वाणी प्रकाशन ग्रुप, 2024.

हरनोट, एसआर. *कीलें*. नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2019.

हरनोट, एसआर. *दारोश तथा अन्य कहानियां*. हरियाणा. आधार प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2001.

उपसंहार

समाज और साहित्य एक दूसरे के पूरक हैं | साहित्य समाज में घटित यथार्थ घटनाओं को चित्रित करता है | साहित्यकार समाज में जो देखता है, अनुभव करता है उस पर चिंतन कर उसका विश्लेषण करता है | समाज में व्याप्त समस्या जब विकराल रूप धारण करती है तब साहित्य में वह विमर्श के रूप में अपना स्थान बनाती है | वृद्धों की समस्याओं ने जब पारिवारिक व सामाजिक व्यवस्था को झकझोर दिया तो इस विमर्श ने साहित्य में अपनी अलग पहचान बना ली | 21वीं शताब्दी में साहित्य के आँचल में विमर्शों का दौर चल रहा है जिनमें वृद्ध विमर्श आज काफी चर्चित विमर्श बना है | क्योंकि जो व्यक्ति जीवन भर समाज के केंद्र में रहा, वह व्यक्ति अपने बुढ़ापे में केंद्र से हटकर समाज में उपेक्षा का पात्र बना है | वृद्ध विमर्श सामाजिक संबंधों की बदली हुई परिस्थितियों को समझने पर बल देता है | वृद्धों के शारीरिक कष्ट, मानसिक समस्याएँ, आर्थिक अभाव, वैचारिक मतभेद, पर निर्भरता, जीवनसाथी की मृत्यु, एकाकीपन की स्थिति, अपनी ही संतानों का दुर्व्यवहार, वृद्धाश्रम इत्यादि जैसे अनेक पक्ष वृद्ध विमर्श के विचारणीय बिंदु हैं | वृद्ध विमर्श वृद्धों के जीवन से जुड़े हर पक्षों, आयामों व समस्याओं पर गहराई से चिंतन-मनन कर उनकी समस्याओं का समाधान ढूंढने का प्रयास करता है |

21वीं सदी के अनेक हिंदी कथा साहित्यकारों ने वृद्धों के जीवन से जुड़े विविध प्रश्नों को भिन्न-भिन्न परिप्रेक्ष्य में अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज तक पहुँचाने का प्रयत्न किया है | जिनमें वृद्धों के जीवन को केंद्र में रखकर निम्नलिखित उपन्यासकारों के चयनित उपन्यासों को देखा जा सकता है- ममता कालिया ने अपने *'दौड़'* उपन्यास में भूमंडलीकरण, औद्योगीकरण तथा नगरीकरण के कारण मानवीय संबंधों में आ रहे बदलावों को दिखाया है | हिंदी की प्रख्यात रचनाकार कृष्णा सोबती ने *'समय सरगम'* उपन्यास में वृद्ध होती पीढ़ी के साथ किए जा रहे व्यवहार का यथार्थ अंकन किया है | इस उपन्यास में वृद्धों के भाव, विचार, मन: स्थितियाँ के साथ एकाकीपन, संयुक्त परिवार, परिवार में बुजुर्गों की भूमिका और वर्तमान पारिवारिक माहौल में उनकी वास्तविक स्थिति को कई प्रसंगों के माध्यम से उजागर किया है | निर्मल वर्मा के *'अंतिम अरण्य'* उपन्यास में अकेलापन और मृत्यु मूल स्वर है | रवीन्द्र वर्मा के 'पत्थर ऊपर पानी' में दिखाया गया है कि वर्तमान में व्यक्ति पत्थर से भी ज्यादा सख्त और संवेदन शून्य बनता जा रहा है | चित्रा मुद्गल द्वारा रचित *'गिलिगडु'* उपन्यास दो बुजुर्गों के जीवन का खाका ही प्रस्तुत नहीं करता बल्कि वर्तमान जीवन मूल्यों को भी परिभाषित करता है | इस उपन्यास की कहानी हमारे आस-पास से जुड़ी हुई है | एक तरफ तो यह कहानी लोगों को अपने घर की लगती है तो दूसरी तरफ चित्रा मुद्गल वृद्ध जीवन को नई दिशा भी देती है | काशीनाथ सिंह का बहुत चर्चित उपन्यास *'रेहन पर रग्घू'* भारतीय सांस्कृतिक परम्परा, जीवन मूल्यों और आदर्शों के अवमूल्यन की महागाथा है | इस उपन्यास में वृद्ध माता-पिता की दयनीय स्थिति के साथ-साथ भौतिकतावादी मानसिकता वाले युवा पीढ़ी का चित्र भी प्रस्तुत किया है | आधुनिकता की इस अंधी दौड़ में मूल्यों व आदर्शों का विघटन हो रहा है | इस उपन्यास में नए व पुराने संस्कारों के बीच टकराहट को भी दिखाया गया है | रवीन्द्र वर्मा द्वारा रचित *'आखिरी मंजिल'* उपन्यास भी वृद्धावस्था के दंश को केंद्र में रखकर लिखा गया है | हृदयेश द्वारा रचित *'चार दरवेश'* उपन्यास में वृद्धावस्था की दहलीज पर खड़े चार वृद्धों के जीवन संघर्षों को उजागर किया गया है | देवेश ठाकुर द्वारा रचित *'संध्या छाया'* उपन्यास में दिखाया गया है कि वृद्धावस्था में मनुष्य किस तरह भिन्न-भिन्न रोगों व संघर्षों के कारण परेशान रहता है | रामधारी सिंह

दिवाकर द्वारा रचित '*दाखिल ख़ारिज*' उपन्यास में बेटे-बहुओं द्वारा पिता व ससुर के शोषण को मार्मिक ढंग से दिखाया गया है | टेकचंद द्वारा रचित '*दाई*' उपन्यास में दिखाया गया है कि वृद्ध जीवन भर अपने परिवार के लिए कमाते है उनका भला सोचते है बदलें में उन्हें मान, सम्मान व प्यार भी नहीं मिलता | इस उपन्यास में रेशम बुआ भी अपने परिवार को पालने के लिए दाई का काम करती है | डॉ. सूरज सिंह नेगी द्वारा रचित 'रिश्तों की आँच', '*वसीयत*' और '*नियति चक्र*' उपन्यास बहुत महत्वपूर्ण हैं | नेगी जी के '*रिश्तों की आँच*' उपन्यास में माँ-बाप एवं संतान के रिश्तों को आधार बनाते हुए स्पष्ट किया है कि माँ-बाप अपना सम्पूर्ण जीवन अपने बच्चों की भलाई में लगा देते हैं | माँ - बाप के बुढ़ापे में वही बच्चे अपनी जिम्मेवारियों को भूल जाते हैं | इस उपन्यास के माध्यम से लेखक ने अप्रत्याशित सामाजिक परिवर्तनों के संदर्भ में वृद्धों की समस्याओं को समझने का प्रयास किया है | नेगी जी के '*वसीयत*' उपन्यास में पारिवारिक रिश्तों के महत्व को उजागर करने का प्रयास किया है | नेगी जी के '*नियति चक्र*' उपन्यास में एक पिता अपनी संतान को स्नेह एवं पुत्र मोह में वशीभूत होकर अपना सब कुछ अपनी औलाद को सुपुर्द कर देता है | बेटा अहंकार वश अपने पिता के प्रेम व त्याग को नहीं समझ पाता वृद्धावस्था में अपने ही पिता को उनके ही घर से बेघर कर देता है | जिन वृद्धों ने अपनी संतानों को बनाने और सँवारने में अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया वे आज नितांत अकेले, निराश, हताश, अवसाद ग्रस्त और उपेक्षित जीवन जीने को विवश हैं |

वृद्धों की समस्याओं और संघर्षों को 21वीं सदी की विभिन्न चयनित कहानियों में भी दिखाया गया है | एस. आर हरनोट के '*दारोश*' कहानी संग्रह की प्रसिद्ध कहानी 'बिल्लियाँ बतियाती हैं' में अम्मा के अकेलेपन का विचित्र संसार को दिखाया गया है | इसी कहानी संग्रह की एक अन्य चर्चित कहानी '*बीस फुट के बापू जी*' जिसमें बदलते परिवेश, टूटते मानवीय मूल्यों तथा पीढ़ियों के अंतराल को दिखाया गया है | इस कहानी संग्रह की चौथी कहानी '*कागभाखा*' जिसमें स्वाभिमानी दादी के अकेलेपन व संघर्षों को दिखाया गया है | हरनोट के '*कीलें*' कहानी संग्रह की बहुचर्चित कहानी '*लोहे का बैल*' में युवाओं का पलायन, नगरीकरण, वृद्धों की उपेक्षा व उनके संघर्षों को दिखाया गया है | डॉ दिलीप मेहरा द्वारा रचित '*अग्निदाह*', '*साजिश*' और '*हंसा ताई*' वृद्ध विमर्श पर केंद्रित बहुत प्रसिद्ध व चर्चित कहानियाँ है | ये तीनों कहानियाँ परिवार और समाज में वृद्धों की स्थिति और समस्याओं को मार्मिकता के साथ उजागर करती हैं | मेहरा जी की '*अग्निदाह*' कहानी में बेटे-बहू अपने पिता को बहुत प्रताड़ित करते हैं, जिससे एक पिता को आत्महत्या करने की नौबत आ जाती है| वहीं उनकी '*साजिश*' कहानी में माँ-बेटे मिलकर अपने ही पति और पिता की हत्या की साजिश करते हैं | मेहरा जी की एक अन्य चर्चित कहानी '*हंसा ताई*' जिसमें ग्रामीण परिवेश में बुजुर्गों के साथ हो रहे अन्याय और अत्याचार का यथार्थ चित्रण किया गया है | सरोज भाटी की प्रसिद्ध कहानी 'बेटा' जिसमें दो पुत्रों की संवेदन हीनता तथा दो वृद्धों की संवेदना एवं उनके जीवन के अंधकार को प्रकट किया है | प्रसिद्ध कहानीकार सूर्यबाला की कहानी 'दादी और रिमोट' जिसमें गाँव से शहर लाई गई दादी के अकेलेपन और सामंजस्य की समस्या को दिखाया गया | वृद्ध विमर्श पर कृष्णा सोबती के चर्चित कहानी संग्रह 'अपना-अपना अस्तित्व' की सभी कहानियां वृद्धों की स्थितियों व परिस्थितियों को मार्मिक ढंग से चित्रित किया है | इस कहानी संग्रह की पहली कहानी 'झुर्रियों की पीड़ा' में वृद्धाश्रम में रह रहे वृद्ध पात्रों के दुखों को अभिव्यक्त किया गया है | 'अपना-अपना अस्तित्व' कहानी संग्रह की दूसरी कहानी है जिसमें दो महिला वृद्ध पात्र दिव्या और निर्मला के जीवन संघर्षों को दिखाया

गया है | संग्रह की तीसरी कहानी *'मैं जिंदा हूँ'* में एक ऐसी वृद्ध स्त्री की कहानी है जिसके पास सब कुछ होते हुए भी उसके जीवन में अकेलापन और खालीपन है | इस संग्रह की चौथी कहानी *'तोर जवानी सलामत रहे'* में एक पोते का अपनी दादी के साथ हिंसात्मक और अमानवीय व्यवहार को दिखाया गया है | *'उसका इतिहास'* इस संग्रह की पांचवी कहानी है जिसमें वृद्ध पात्र मानवी के माध्यम से दिखाया गया है कि एक माँ अकेले तीन-तीन बच्चों को पाला, पढ़ाया-लिखाया काबिल बनाया | लेकिन जीवन के अंतिम पड़ाव में वृद्ध बीमार मानवी का साथ सभी बच्चे छोड़ जाते हैं | रणीराम गढ़वाली की *'नहीं अम्मा'* कहानी में झाँपा नामक बुढ़िया की कहानी है जिसका पुत्र पुश्तैनी जमीन छोड़ कर शहर में पैसे कमाने जाता है और कई साल तक न घर आता है न कोई चिट्ठी सन्देश भेजता है वहीं माँ हर रोज पोस्टमेन से अपने बेटे की चिट्ठी के बारे में पूछती है और उसे हर जवाब मिलता नहीं अम्मा | शरद अग्निहोत्री की कहानी *'ख़त'* में एक बूढ़ी माँ के बच्चों द्वारा न पालने के भय को दिखाया गया है | प्रदीप पन्त की कहानी *'छल'* में एक वृद्ध किस तरह अपनी पत्नी को ख़ुशी देखने के लिए अमेरिका गए हुए अपने बेटे के नाम से झूठे पत्र अपनी पत्नी को लिखता है | बच्चों के विदेशों में पलायन से वृद्ध माँ-बाप किस तरह उनकी यादों में दुखी रहते हैं | भानुप्रताप कुठियाला की *'लाजवंती'* कहानी में एक विधवा वृद्ध औरत के अकेलेपन, कपूत बेटे का होना और गाँव के ठेकेदार का अकेली वृद्ध स्त्री की जमीन को हड़पते हुए दिखाया गया है | निरुपमा राय की *'चलो एक बूढ़े की कथा सुनते है'* कहानी में नई पीढ़ी की आडम्बरप्रियता के साथ बूढ़े बाप की लाचारी को भी दिखाया गया है | आज नई पीढ़ी को वृद्धों के महत्व को समझने की आवश्यकता है | वृद्ध जहाँ एक ओर हमारे पारंपरिक संस्कारों, मूल्यों का पोषण एवं संरक्षण करते हैं तथा दूसरी ओर अपने ज्ञान और जीवन के अनुभवों से नई पीढ़ी का मार्गदर्शन भी करते हैं |

वृद्धावस्था में मनुष्य को कई प्रकार की वैयक्तिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है | इस अवस्था में व्यक्ति का शरीर जवाब देने लगता है | वृद्धावस्था में मनुष्य के जीवन में कई प्रकार की साध्य-असाध्य व्याधियां घर कर लेती हैं | इस उम्र में विभिन्न रोगों से ग्रसित होने के कारण वृद्धों का जीवन दूसरों पर निर्भर हो जाता है | वृद्धों के जीवन में शारीरिक रोगों से ज्यादा पीड़ा उनके परिवार का उनके प्रति दुर्व्यवहार से होती है | वृद्ध पहले जहाँ परिवार के मुखिया हुआ करते थे वहीं वृद्ध आज परिवार के सदस्य भी नहीं माने जाते हैं | माँ-बाप जिस घर को अपने खून पसीने की कमाई व मेहनत से बनाते है, बुढ़ापे में उन्हें उसी घर में कोई स्थान नहीं मिल पाता है | माँ-बाप अपने बच्चों को अच्छी से अच्छी शिक्षा व हर प्रकार की सुविधा देने के लिए अपनी समग्र जमा पूंजी और पूरा जीवन दांव पर लगा देते हैं, वहीं जीवन के अंतिम पड़ाव में वही संतानें उनको अकेला छोड़ देते हैं | आज लोगों की यह मानसिकता हो गयी है, जब तक जिससे कोई काम या लाभ मिल रहा है तब तक उसका उपयोग किया जाए | लेकिन जैसे ही कोई व्यक्ति बिना काम के या बिना लाभ के हो जाता है तो उसका महत्व कम हो जाता है | परिवार व समाज में वृद्धों के प्रति सम्मान आजकल घटता जा रहा है | बुजुर्गों की स्थिति समाज में हाशिए पर चलती जा रही है, इसके पीछे परिवार के लोगों का उनके साथ किया जाने वाला दुर्व्यवहार व प्रताड़ना जिम्मेदार है | इसी का परिणाम की वृद्धाश्रमों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है | वृद्धों के जीवन में आर्थिक पहलू भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है | जिन वृद्धों के पास आय का कोई साधन होता है उन्हें अपने बुढ़ापे को व्यतीत करने में आर्थिक रूप से ज्यादा कष्ट नहीं उठाने पड़ते है | लेकिन जिनके पास न धन, न जायदाद, न जमीन न आय का कोई अन्य

साधन उनकी स्थिति दयाजनक होती है | एक तो इन्हें अपनी हर छोटी-मोटी जरूरतों के लिए बच्चों पर निर्भर रहना पड़ता है दूसरा बच्चों के लिए भी ऐसे माँ-बाप बेकार सामान के समान लगते है | जिसके कारण वृद्धों को अपने ही बच्चों की उपेक्षा का शिकार होना पड़ता है | ऐसी परिस्थिति में वृद्धों के पास दो रास्ते होते हैं एक तो जो भी उनके साथ हो रहा है चुपचाप घुट-घुट कर सहते रहें दूसरा किसी वृद्धाश्रम में चले जाएं | बिना धन-दौलत के भी बुढ़ापा बहुत कष्टदायक व अपमानजनक होता है | वर्तमान में वृद्धों की स्थिति के सबसे बड़े कारण गिरते नैतिक मूल्य, टूटते संयुक्त परिवार, शहरीकरण, वैश्वीकरण, महँगाई, वैचारिक अंतर व पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति का बढ़ता प्रभाव इत्यादि प्रमुख हैं |

उम्र के इस पड़ाव में वृद्ध शारीरिक रूप से अशक्त, सामाजिक रूप से अनुपयोगी, आर्थिक रूप से दूसरों पर निर्भर तथा मानसिक रूप से चिंताग्रस्त दिखाई पड़ते हैं | वृद्धों के जीवन में अकेलापन, मोह-माया, मानसिक अवसाद तथा मृत्यु बोध आदि मानसिक परेशानियों का सामना करना पड़ता है | वृद्धजनों को ऐसे समय में भौतिक सुख-सुविधाओं से अधिक मानसिक सहारे की आवश्यकता होती है | वृद्धों को परिवार व समाज में स्वस्थ व सकारात्मक वातावरण प्रदान करने से उनकी मनोवैज्ञानिक समस्याओं को कम किया जा सकता हैं |

भाषा शैली की दृष्टि से देखा जाए तो समस्त कथा साहित्य में भाषा सहज प्रवाहमान होकर भावों को पाठकों के हृदय तक पहुँचाने में समर्थ सिद्ध हुई है | सभी कथा साहित्यकारों ने अपने कथा साहित्य में पात्रानुकूल, प्रवाहमयी, रोचक तथा जीवंत भाषा का प्रयोग किया है | भाषा में तत् सम, तद्भव, देशज, विदेशज आदि शब्दों के साथ मुहावरों व लोकोक्तियों का भी सुंदर प्रयोग किया है | शिल्प पक्ष में साहित्यकारों ने मुख्यतः वर्णनात्मक, आत्म कथात्मक, व्यंग्यात्मक, संवाद, फ्लैशबैक, स्वप्न, डायरी इत्यादि शैलियों को अत्यंत सहज व प्रभावशाली ढंग से प्रयोग किया है | अंत: भाषागत एवं शिल्पगत दृष्टि से 21वीं सदी का हिंदी कथा साहित्य बहुत समृद्ध है |

वृद्ध विमर्श को लेकर लिखा गया साहित्य वर्तमान समाज को उसकी कटु वास्तविकता से रूबरू करवाता है, साथ ही वक्त रहते संभलने का आगाह भी करता है | आज की युवा पीढ़ी अज्ञानता एवं स्वार्थवश अपने बुजुर्गों को कमजोर समझने की भूल कर बैठी है | जबकि बुजुर्ग, उनका ज्ञान व अनुभव जीवन और समाज की मजबूत जड़े तथा अनमोल विरासतें हैं | भौतिकता की चकाचौंध में डूबी आज की नई पीढ़ी को यह समझना होगा कि वृद्धावस्था एक स्वाभाविक और प्राकृतिक स्थिति है जो सभी के जीवन में एक दिन आएगी | इसलिए नई पीढ़ी को अपनी पुरानी पीढ़ी के प्रति सम्मानजनक व सकारात्मक नजरिया अपनाने की जरूरत है | आज वृद्ध विमर्श को नवीन आयाम से देखने की आवश्यकता है, जिसमें वृद्धों के प्रति संवेदना, प्यार, इज्जत व भरपूर सम्मान होना चाहिए | इस उम्र में वृद्धों को अगर परिवार का प्रेम व मान-सम्मान मिल जाए तो व्यक्ति का बुढ़ापा संवर जाए | आज वृद्धों की वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा मनोवैज्ञानिक समस्याओं के समाधान पर चिंतन करना बहुत जरूरी हो जाता है | क्योंकि वृद्ध विमर्श सार्वदेशिक, सर्वकालिक तथा सम्पूर्ण मानवता का विमर्श है |

वृद्धजनों की समस्याओं के निवारण हेतु सुझाव

वृद्धों की समस्याओं को दूर करने के लिए स्वयं वृद्धों, परिवार, समाज, सरकार व गैरसरकारी संगठनों इत्यादि को संयुक्त रूप से वृद्धों की सहायता हेतु कुछ ठोस कदम उठाने का प्रयास करना चाहिए |

- वृद्धों को अपने स्वास्थ्य हेतु हर-दिन सैर, व्यायाम, संतुलित व पौष्टिक भोजन पर ध्यान देना चाहिए | धूम्रपान, शराब ज्यादा तेल वाला खाना या अन्य अस्वस्थ सामग्री व भोजन का प्रयोग करने से परहेज करना चाहिए |
- वृद्धों को इतनी पूंजी और सामर्थ्य बचाकर रखना चाहिए कि जिससे वृद्धावस्था में वे अपना भरण-पोषण व छोटी-मोटी आवश्यकताओं को पूर्ण कर सके |
- वृद्धजनों को नई पीढ़ी के जीवन में अनावश्यक दखल नहीं करना चाहिए | वृद्धों को वर्तमान समय में युवाओं की रुचि आवश्यकताओं और चुनौतियों को भी समझना चाहिए | इसके लिए उन्हें अपनी दृष्टि और विचारों को सकारात्मक बनाना चाहिए |
- वृद्धजन अपने समय को अपनी रुचि, ज्ञान, कौशल और अनुभव के अनुसार किसी न किसी कार्य में लगा सकते हैं | जैसे – साग-सब्जियों को उगाना, खेती, बागवानी, छोटी-मोटी दुकान चलाना, पोते-पोतियों को पढ़ाना, साहित्य सृजन इत्यादि कार्य करके सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित कर सकते हैं |
- वृद्धजन अपनी बहुओं को बेटी की तरह समझे और बहुएँ अपने सास-ससुर को माँ-बाप की तरह सम्मान दें |
- भारत में संयुक्त परिवार व्यवस्था वृद्धों को सामाजिक, आर्थिक एवं मानसिक सुरक्षा प्रदान करती रही है | अंत: इसके विघटन को रोकने के लिए प्रयास करना चाहिए |
- वृद्ध और युवा दोनों पीढ़ियों को एक-दूसरे के साथ सामंजस्य बिठाकर जीवन को प्रसन्नता पूर्वक व्यतीत करना चाहिए |
- हर व्यक्ति को एक न एक दिन वृद्धावस्था से गुजरना पड़ता है इसलिए वृद्धजनों को भरपूर सम्मान दिया जाना चाहिए | उम्र के इस पड़ाव पर वृद्धों को सबसे ज्यादा देखभाल, मान-सम्मान, प्यार व भावनात्मक सहारे की आवश्यकता पड़ती है | वृद्धों का मान-सम्मान तथा उनकी उचित सेवा करना एक श्रेष्ठ परिवार की परम्परा है |
- दुनिया में हम सब कुछ पैसों से खरीद सकते हैं लेकिन माँ-बाप और उनका निस्वार्थ प्यार व आशीर्वाद कभी नहीं खरीद सकते हैं | इसलिए परिवार के हर सदस्यों को वृद्ध माँ-बाप की शारीरिक एवं मानसिक सुरक्षा का ध्यान रखना चाहिए |
- माँ-बाप अपने बच्चों को पालने, पढ़ाने-लिखाने, आत्मनिर्भर बनाने, शादी-ब्याह करवाने और हर कदम उनका साथ निभाने में अपना पूरा जीवन समर्पित कर देते हैं | बच्चों का भी नैतिक कर्तव्य व दायित्व बनता है कि बूढ़े माँ-बाप के प्रति कृतज्ञता के भाव रखें और बुढ़ापे में उन्हें सहारा प्रदान कर सकें | जिस प्रकार व्यक्ति अपने बच्चों की देखभाल और सुख-सुविधाओं का ध्यान रखता है, उसी प्रकार उसे अपने वृद्ध माँ-बाप के सुख-दुख में भी साथ देना चाहिए |

- वृद्धों को पारिवारिक व सामाजिक हिंसा से बचाने के लिए बने कानूनों का सख्त पालन होना चाहिए | जिससे कोई भी व्यक्ति वृद्धों के साथ दुर्व्यवहार न कर सके |
- केंद्र सरकार व राज्य सरकारों के सहयोग से सभी बुजुर्गों को वृद्धावस्था पेंशन का लाभ मिले तथा समय की मांग व महंगाई के आधार पर वृद्धावस्था राशि की रकम में वृद्धि होनी चाहिए | जिससे अशक्त वृद्धों को अन्य किसी से मदद लेने की आवश्यकता न पड़े और वे आदर, सम्मान, आनंद व गर्व से अपने बुढ़ापे को जी सकें |
- सरकार एवं एनजीओ को निराश्रित व बेसहारा वृद्धजनों और अनाथ बच्चों के लिए अच्छी सुविधाओं वाले संयुक्त सेवा-केंद्र या आश्रम खोलने चाहिए |
- सरकार को वृद्धों के लिए यातायात, चिकित्सा एवं अन्य सार्वजनिक सुविधाओं को कम लागत या निशुल्क करना चाहिए |
- वृद्धों के लिए बेकिंग सुविधाओं में विशेष लाभकारी योजनाएँ हो |
- वृद्धजनों को आयकर से पूर्णतः छूट मिलनी चाहिए |
- वृद्धों के लिए विशेष पार्क जिसमें रैंप, रेलिंग, बेंच इत्यादि की व्यवस्था होनी चाहिए |
- विद्यालय, महाविद्यालय में बुजुर्गों की समस्याओं के प्रति जागरूक करने के लिए जागरूकता अभियान चलाये जाने चाहिए | विद्यार्थियों को वृद्धाश्रम भ्रमण करवाकर वृद्धों के संघर्षों और समस्याओं से अवगत करवाएं जिससे नई पीढ़ी वृद्धों के प्रति आदर-सम्मान वाला दृष्टिकोण अपना सकें |
- मूल्य आधारित शिक्षा पाठ्यक्रमों में शामिल हो |
- वृद्धजनों को विद्यालयों/महाविद्यालयों में अतिथि व्याख्यान के लिए आमंत्रित करना |
- वृद्धजनों के लिए सांस्कृतिक मेलों, कीर्तन, सत्संग, योग शिविर और साहित्यिक संगोष्ठियों का आयोजन करवाना |
- वृद्धजनों को तकनीकी (जैसे स्मार्टफोन, वीडियो कॉल, ऑनलाइन पेमेंट आदि) का सरल प्रशिक्षण दिया जाए ताकि वे आत्मनिर्भर बनें |
- वृद्धजनों के प्रति संवेदना और आदर जगाने हेतु (बागवान, उम्र, अवतार, अमृत आदि जैसी) अच्छी फिल्मों का निर्माण करना चाहिए | जिसमें 21वीं सदी के वृद्धों की समस्याओं और समाधान को गहराई से चित्रित किया जाए |
- नई पीढ़ी के बच्चों को घर-परिवार के साथ विद्यालय में भी बचपन से ही बुजुर्गों की देखभाल संस्कार देना |
- वृद्धों के लिए हर क्षेत्र में पुस्तकालय और सीनियर क्लब आदि की व्यवस्था करना |
- हर जिले में वृद्धों के लिए ‘विशेष वृद्ध चिकित्सा केंद्र’ को खोलना |
- वृद्धजनों के लिए घर से काम, उनके अनुभव से संबंधित सलाहकार सेवाएं एवं कौशल-आधारित रोजगार प्रदान किया जाए |

सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची

आधार ग्रन्थ सूची

उपन्यास -

कपूर, मस्तराम. विषय पुरुष. दिल्ली, प्रथम संस्करण, परमेश्वरी प्रकाशन, 1997.

कालिया, ममता. *दौड़*. नयी दिल्ली, छठा संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2021.

चतुर्वेदी, ज्ञान. बारहमासी. नयी दिल्ली, सातवाँ संस्करण, राजकमल पेपरबैक्स, 2018.

टेकचंद. *दाई*. नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2017.

ठाकुर, देवेश. *संध्या छाया*. प्रथम संस्करण, शिखरदीप प्रकाशन, 2011.

दिवाकर, रामधारी सिंह. *दाखिल ख़ारिज*, नयी दिल्ली, दूसरा संस्करण, राजकमल प्रकाशन, 2019.

नेगी, सूरज सिंह. *रिश्तों की आंच*, नवजीवन पब्लिकेशन, 2016.

..., *वसीयत*. जयपुर, प्रथम संस्करण, साहित्यागार प्रकाशन, 2018.

..., *नियति चक्र*. जयपुर, प्रथम संस्करण, सनातन प्रकाशन, 2019.

मुद्गल, चित्रा. *गिलिगडु*. नयी दिल्ली, सातवां संस्करण, सामयिक प्रकाशन, 2020.

मिश्र. गोविन्द. *शाम की झिलमिल*. नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, किताबघर प्रकाशन, 2017.

वत्स, राकेश. *फिर लौटते हुए*. दिल्ली, प्रथम संस्करण, राजपाल एण्ड सन्ज, 2003.

वर्मा, निर्मल. *अंतिम अरण्य*. नयी दिल्ली, द्वितीय संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2021.

वर्मा, रवीन्द्र. *निन्यानवे*. नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2002.

वर्मा, रवीन्द्र. *पत्थर ऊपर पानी*. नयी दिल्ली, दूसरा संस्करण, वाणी प्रकाशन, 2023.

वर्मा, रवीन्द्र. *आखिरी मंजिल*. नई दिल्ली, पहला संस्करण, राजकमल प्रकाशन, 2008.

शाह, रमेशचंद्र. *सफेद परदे पर*. किताबघर प्रकाशन, 2011.

सिंह, काशीनाथ. *रेहन पर रग्घू*. नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, 2008.

सोबती, कृष्णा. *ऐ लड़की*. नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, 2012.

सोबती, कृष्णा. *समय सरगम*. नई दिल्ली, चौथा संस्करण, राजकमल प्रकाशन, 2019.

हृदयेश, *चार दरवेश*. नयी दिल्ली, दूसरा संस्करण, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, 2013.

कहानियाँ -

अग्निहोत्री, कृष्णा. *अपना-अपना अस्तित्व*. दिल्ली, प्रथम संस्करण, नयी किताब प्रकाशन, 2018.

खान, एम. फ़िरोज. *प्रेमचंद वृद्ध जीवन की कहानियाँ*. कानपूर, प्रथम संस्करण, विकास प्रकाशन, 2021.

मुद्गल, चित्रा. *लपटें*. नयी दिल्ली, छठा संस्करण, वाणी प्रकाशन ग्रुप, 2024.

मेहरा, दिलीप. *साजिश कहानी*. साहित्यक वीथिका, 2021.

..., *वृद्धावस्था केन्द्रित हिंदी कहानियाँ*. कानपुर, उत्कर्ष पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, 2022.

भाटी, सरोज. मुकुन्द मणि, बीकानेर, सूर्य प्रकाशन मंदिर, 2022.

रणसुभे, सूर्यकुमार. *वृद्ध विमर्श रत्नकुमार सांभरिया की चयनित कहानियाँ*. नई दिल्ली, हँस प्रकाशन, 2021.

साहनी, भीषम. *पहला पाठ*. दिल्ली, प्रथम संस्करण, शीर्षक प्रकाशन, 1956.

सूर्यबाला. *साँझवाती*. नई दिल्ली, ग्रन्थ अकादमी, 2015.

...,. मानुष गंध. नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2022.

हरनोट, एस आर. *दारोश तथा अन्य कहानियां*. पंचकुला हरियाणा, प्रथम संस्करण, आधार प्रकाशन प्राईवेट लिमिटेड, 2001.

हरनोट, एस आर. *कीलें*. नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, आधार प्रकाशन प्राईवेट लिमिटेड, 2001.

ज्ञानरंजन. पिता (ज्ञानरंजन संकलित कहानियां). राष्ट्रीय पुस्तक न्यास भारत, 2014.

सहायक ग्रन्थ –

अग्रवाल, मुकेश. हिंदी भाषा की संरचना. दिल्ली, प्रथम संस्करण, के. एल. पचौरी प्रकाशन, 2016.

अग्रवाल, रोहणी. *साहित्य का स्त्री स्वर*. साहित्य भंडार, 2015.

अग्रवाल, रशिम. *वृद्धावस्था (सामाजिक अध्ययन)*. नजीबाबाद, प्रथम संस्करण, ओपन डोर, 2022.

अहिवले, अनिल अर्जुन. *हिंदी साहित्य में दस्तक देता वृद्ध विमर्श*. प्रथम संस्करण, पूजा पब्लिकेशन, 2022.

करुणापति, पं. त्रिपाठी. *शैली*. साहित्य ग्रंथमाला कार्यालय बनारस, 1998.

कामने, भावना. और देव, ममता, आर. *वृद्ध विमर्श परंपरा और आधुनिकता*. कानपूर, प्रथम संस्करण, संकल्प प्रकाशन, 2022.

केटिल, अर्नाल्ड. *एन इंट्रोडक्शन टू द इंग्लिश नॉवेल*,

खान, एम. फीरोज. *प्रेमचंद वृद्ध जीवन की कहानियाँ*. कानपुर, प्रथम संस्करण, विकास प्रकाशन, 2021.

गुलाबराय. *सिद्धांत और अध्ययन*. दिल्ली, आत्माराम एंड सन्ज, 1975.

..., *काव्य के रूप*. दिल्ली, आत्माराम एंड सन्ज, 2008.

गुरु, कामताप्रसाद. *हिन्दी व्याकरण*. प्रकाशन संस्थान, 2009.

गुप्त, अवधेश मोहन. राजभाषा सहायिका. प्रथम संस्करण, प्रभात प्रकाशन, 2015.

गुप्त, उमाकांत. *नई कविता के प्रबंध काव्य : शिल्प और जीवन दर्शन*. वाणी प्रकाशन, 2000.

गोसाईं, वंदना. *हिंदी साहित्य में वृद्ध विमर्श : दृष्टि और विचार*. कानपूर, वान्या पब्लिकेशन, 2022.

चव्हान, अर्जुन. *विमर्श के विविध आयाम*. वाणी प्रकाशन, 2008.

चौऋषि, शंकरदयाल. *द्विवेदीयुगीन हिंदी गद्य शैलियों का अध्ययन*. दिल्ली, भारतीय साहित्य मंदिर, 1965.

चौधरी, डी. पाल. *एजिंग एंड द एज्ड*. 1992.

तिवारी, पूजा. और सबा, जिनित. *उत्तरशती के साहित्यक विमर्श*. नोशन प्रेस, 2020.

तिवारी, डॉ. भोलानाथ. *शैलीविज्ञान*. नई दिल्ली, प्रथम प्रकाशन, किताबघर प्रकाशन, 2018.

..., *भाषा विज्ञान प्रवेश एवं हिंदी भाषा*. नयी दिल्ली, किताबघर प्रकाशन, 2012.

..., *भाषा विज्ञान*. नई दिल्ली, किताब महल पब्लिशर्स, 2023.

..., ‘हिंदी भाषा. नई दिल्ली, किताब महल पब्लिशर्स, 2023.

तरुणसागरजी, *कड़वे प्रवचन*. नई दिल्ली, डायमंड पॉकेट बुक्स, 2014.

तुलसीदास, *श्रीरामचरितमानस*. प्रभात प्रकाशन, 2023.

दास, श्यामसुन्दर. *साहित्यालोचन*. वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2017.

द्विवेदी, डॉ. कपिलदेव. *भाषा-विज्ञान एवं भाषा-शास्त्र*. वाराणसी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, उन्नीसवाँ संस्करण, 2024

देवी, मोनिका. और सपना. आर. *समकालीन उपन्यासों में विविध विमर्श*. प्रथम संस्करण, विद्या प्रकाशन, 2017.

द्विवेदी, गिरिजा प्रसाद. *मनुस्मृति*. (हिंदी अनुवाद) नवल किशोर प्रेस, 1917

धनवडे, सुरेश. *वृद्धजनों का समाजशास्त्र*. प्रथम संस्करण, वर्ल्ड बुक पब्लिकेशंस, 2022.

नगेन्द्र. *काव्यबिम्ब*. नयी दिल्ली, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 1967.

..., *शैली विज्ञान*. नयी दिल्ली, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 2005

निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी. *निराला संचयिता*. वाणी प्रकाशन, 2010.

परमार, दीपिका. *हिंदी कहानियों के आईने में वृद्ध विमर्श*. प्रथम संस्करण, उत्कर्ष पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, 2021.

प्रियदर्शन. *बड़े बुजुर्ग : कहानियाँ रिश्तों की*. नयी दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, पहला संस्करण, 2014.

पाण्डेय, के. रमेश. *चर्पटपंपजरिकास्तोत्रं*. कल्पलता

पाण्डेय, डॉ. पृथ्वी. *सामान्य हिंदी*. नालंदा पब्लिशिंग हाउस, 2009.

प्रसाद, चंद्रमौलेश्वर. *वृद्धावस्था विमर्श*. बिजनौर, परिलेख प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2016.

बाली, पी अरुण. *भारत में वृद्धों की सामाजिक समस्याएँ*. वागर्थ, 1999.

भटनागर, डॉ. प्रेम. *हिंदी उपन्यास शिल्प : बदलते परिप्रेक्ष्य*. जयपुर, अर्चना प्रकाशन, 1968.

भुमरे, पी.एम. *साहित्य में चित्रित वृद्धावस्था : जीवन और त्रासदी*. कानपुर, वान्या पब्लिकेशंस, 2023.

मिश्र, रामदरश. *हिंदी उपन्यास एक अंतर्यात्रा*. राजकमल प्रकशन, 2016.

मिश्र, सावित्री. अज्ञेय की गद्य शैली. 1979.

मेहरा, दिलीप. *हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श*. प्रथम संस्करण, उत्कर्ष पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, 2021.

लाल, विमला. *वृद्धावस्था का सच*. नई दिल्ली, कल्याणी शिक्षा परिषद्, 2019.

लाल, लक्ष्मीनारायण. हिंदी कहानियों की शिल्प विधि का विकास, इलाहाबाद, साहित्य भवन लिमिटेड, 1953.

शर्मा, अंकिता. *हिंदी कथा साहित्य में वृद्धावस्था का यथार्थ*.प्रथम संस्करण, उत्कर्ष पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, 2021.

शर्मा, आर. पी. *हिंदी साहित्य का इतिहास*. एच. जी. पब्लिशर्स, 1995.

शास्त्री, चंद्रशेखर. *भाषा विज्ञान (सिद्धांत एवं प्रयोग)*. दिल्ली, नव भारत प्रभात साहित्य, प्रथम संस्करण, 2017.

शर्मा, देवेन्द्रनाथ. शर्मा, दीप्ती. *भाषाविज्ञान की भूमिका*. दिल्ली, राधाकृष्ण प्रा.लि., 2015.

शर्मा, ब्रह्मदत्त. *हिंदी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन*.

शर्मा, राधा कृष्ण. शर्मा, रामदत. और नागोरी, अम्बालाल. *हिंदी भाषा और साहित्य शिक्षण*. दिल्ली, साहित्य सहकार, 2008.

शर्मा, वीरेंद्र प्रकाश. भारतीय समाज – मुद्दे और समस्याएँ. 2004.

शर्मा, हरिहरानन्द. *हिंदी कहानी में वृद्ध (संवेदना और संघर्ष)*. राजस्थान, प्रथम संस्करण, अरिहंत प्रकाशन, 2014.

शिरसाट, डॉ. सोनिया. राजेन्द्र यादव के कथा साहित्य का मनोवेश्लेश्नात्मक विवेचन, कानपुर, विद्या प्रकाशन, 2011.

शुक्ला, अंजू. *उपेक्षा की शिकार वृद्ध महिलाएँ*. कानपुर, संस्करण प्रथम, संकल्प प्रकाशन, 2019.

शुक्ल, रामचंद्र. *हिंदी साहित्य का इतिहास*. नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, प्रभात प्रकाशन, 2017

सक्सेना, उषा. *हिंदी उपन्यासों का शिल्पगत विकास*. इलाहावाद, शोध साहित्य प्रकाशन, 1972.

सक्सेना, बाबूराम. *सामान्य भाषा विज्ञान*. हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, 2004.

सिंह, शिवचंद्र. *साहित्येतिहास में वृद्ध विमर्श*. ग्रेटर नोएडा, प्रथम संस्करण, दिशा इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, 2017.

सिंह, कुमुद. *वृद्ध महिलाओं का समाजशास्त्र*. उत्कर्ष पब्लिकेशन एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, कानपूर, 2018.

सिंह, योगेन्द्र प्रताप. *भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका*. लोकभारती प्रकाशन, 2007.

सिंह, वृंदा. *वृद्धावस्था जीवन की सांध्यबेला*. गीतांजली प्रकाशन, 2009.

सिन्हा,जे.एन.पी. *प्रॉब्लम ऑफ़ दी एजेड*. क्लासिकल पब्लिकेशन कम्पनी, 1989.

सूर्यवंशी, ज्योति. *वृद्ध विमर्श परम्परा और आधुनिकता का द्वंद्व*. कानपुर, प्रथम संस्करण, संकल्प प्रकाशन, 2023.

राजौरिया, शिवकुमार. *वृद्धावस्था विमर्श और हिंदी कहानी*. दिल्ली, अद्वैत प्रकाशन. 2021.

रणसुभे, सूर्यनारायण. *विमर्श की अवधारणा स्वरूप और संदर्भ*. नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, परिदृश्य प्रकाशन, मुंबई, 2021.

व्याहुद, सुशीला प्रसाद. *हिंदी के महाकाव्यात्मक उपन्यास*.

वर्मा, धीरेन्द्र. *सूरसागर सार*. लोकभारती प्रकाशन 2019.

..., *हिंदी साहित्य कोश*. वाराणसी, ज्ञानमंडल लिमिटेड, 2013.

वर्मा, रामचंद्र. *अच्छी हिंदी*. लोक भारती प्रकाशन, पचीसवां संस्करण, 2012.

श्रीवास्तव, परमानंद. कथाक्रम. लखनऊ, 2008.

श्रीवास्तव, रवीन्द्रनाथ. *संरचनात्मक शैली विज्ञान*. दिल्ली, आलेख प्रकाशन, 2020.

..., *हिंदी भाषा : संरचना के विविध आयाम*. नयी दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन, पाँचवाँ संस्करण, 2015.

श्रीवास्तव, राजेन्द्र. प्रसाद. *हिंदी भाषा एवं साहित्य का इतिहास संस्करण*. 1994-95.

पत्रिकाएँ

अहमद, डॉ.एम. फीरोज. वृद्ध विमर्श पर केन्द्रित कहानियाँ, वाङ्मय, वर्ष : 17, जनवरी-मार्च, 2021

मेहरा, डॉ. दिलीप. *साजिश*. साहित्य वीथिका, वर्ष-12, अंक-19, जून 2021.

बाली, पी अरुण. *भारत में वृद्धों की सामाजिक समस्याएँ.* वागर्थ, 1999.

यादव, राजेन्द्र. *हंस*. 2004.

राकेश, सुशील. (संपादक) साझा कहानी संग्रह. 'अक्षरार्थ' पहला संस्करण, 2021.

राय, निरुपमा. *चलो एक बूढ़े की कथा सुनते है*. नई धारा, अप्रैल-मई, 2020.

वर्मा, निर्मल. *बीच बहस में*. सम्भावना, 1973.

वांग्मय, अंक जनवरी-मार्च 2021

सम्पादक, पल्लव. बनास प्रकाशक. चितौड़गढ़. 2009.

वेबसाइट -

हिन्दवी, https://www.hindwi.org/story/chief-ki-dawat-bhisham-sahani-story

हिन्दवी. https://www.hindwi.org/story/apna-raasta-lo-baaba-kashinath-singh-story

शब्द कोश, https://www.shabdkosh.com/hi/dictionary/hindi-

https://www.nia.nih.gov/health/sleep/good-nights-sleep

https://pubmed.ncbi.nlm.nih.gov/28159095/

https://www.britannica.com/science/old-age

कोश -

आपटे, वामन शिवराम. *संस्कृत-हिंदी कोश*. पृष्ठ 946.

कपूर, बद्रीनाथ. *वैज्ञानिक परिभाषा कोश*. शब्द लोक प्रकाशन, 1965.

..., *हिंदी मुहावरे और लोकोक्ति कोश*. इलाहबाद, लोकभारती प्रकाशन, 2007.

कुमार, सुरेश और साही, रमानाथ. *अंग्रेजी-अंग्रेजी हिंदी शब्दकोश*. दूसरा संस्करण, ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2014.

तिवारी, भोलानाथ. *हिंदी पर्यायवाची कोश*. प्रभात प्रकाशन, 1999.

दास, श्यामसुन्दर. *हिंदी शब्दसागर*. काशी नागरी प्रचारिणी सभा, 1929.

प्रसाद, कालिका. *बृहद हिंदी कोश*. ज्ञानमंडल, 2014.

बाहरी, हरदेव. *हिंदी-अंग्रेजी शब्दकोश*. लोकभारती प्रकाशन, पृष्ठ 593.

..., *राजपाल हिंदी शब्दकोश*. राजपाल एंड सन्ज, 2022.

..., *बृहत अंग्रजी-हिंदी कोश*. वाराणसी, ज्ञानमंडल लिमिटेड, 2019.

रिजवी, आबिद. *बृहत् हिंदी शब्दकोश*. पृष्ठ 922.

वर्मा, रामचंद्र. *मानक हिंदी कोश*. पृष्ठ 77.

वर्मा, श्याम बहादुर और वर्मा, धर्मेन्द्र. *बृहत हिंदी शब्दकोश*. दिल्ली, प्रथम संस्करण, प्रभात प्रकाशन, 2010.

..., *संक्षिप्त हिंदी शब्द सागर*. वाराणसी, नागरीप्रचारिणी सभा, 2013.

वसु, नगेन्द्रनाथ. *हिंदी विश्वकोश*. (खंड 21) पृष्ठ 478.

श्रीवास्तव, मुकंदीलाल. *ज्ञान शब्दकोश*. पृष्ठ 741.

Oxford Advanced learner Dictionary.

प्रसिद्ध कथाकार - एस.आर. हरनोट जी का साक्षात्कार

शोधार्थी - आपने वृद्ध विमर्श पर बहुत सारी कहानियाँ लिखी ? जिनमें 'बिल्लियाँ बतियाती है', 'कागभाखा', बीस फुट के बापू जी', 'लोहे के बैल' इत्यादि प्रमुख है | आपको वृद्धों के जीवन संघर्ष पर कहानियाँ लिखने की प्रेरणा कहाँ से प्राप्त हुई ?

एस.आर. हरनोट जी - इस प्रेरणा के मूल में मेरे पिता और अम्मा है। उसके बाद बहुत से वरिष्ठ जनों से संपर्क होने के कारण उनके जीवन संघर्ष को बहुत करीब से देखा है |

शोधार्थी -वृद्धों की समस्याओं पर लिखते समय आपको किन प्रमुख मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करना पड़ा ?

एस.आर. हरनोट जी- उनकी दिनचर्या, उनका अकेलापन, उनके जीए, भोगे अनुभवों और संघर्ष पर।

शोधार्थी -आपके अनुसार, वृद्ध पात्रों को गढ़ते समय सबसे बड़ी चुनौती क्या होती है ?

एस.आर. हरनोट जी- सबसे बड़ी चुनौती यह होती है कि पात्र का चित्रण संजीव हो, वह काल्पनिक न लगे | उनका चरित्र और मनोभाव बारीकी से बयान हो पाए |

शोधार्थी -आपकी कहानियाँ क्या वृद्धावस्था के प्रति समाज की सोच को बदलने में सक्षम हैं ?

एस.आर. हरनोट जी- मैंने यह सोच कर कभी नहीं लिखा | ना ही ऐसी कोई अपेक्षाएं रही है। जो पढ़ते हैं यह उन पर निर्भर करता है कि वे किस तरह उस लेखन को समझ पाते हैं |

शोधार्थी -आपको क्या लगता है कि भारतीय साहित्य में वृद्ध विमर्श को पर्याप्त स्थान मिला है ?

एस.आर. हरनोट जी- हालांकि वृद्धों पर बहुत साहित्य उपलब्ध है, लेकिन इक्कीसवीं सदी में वृद्धों की स्थिति और अकेलापन बढ़ा है। इसलिए स्त्री, दलित, पर्यावरण विमर्श की तरह वृद्ध विमर्श भी आज का बड़ा मुद्दा है |

शोधार्थी -क्या आपको लगता है कि समाज में वृद्धजनों के प्रति संवेदनशीलता बढ़ रही है, या वे अब भी उपेक्षित हैं?

एस.आर. हरनोट जी- वृद्धों की स्थिति अच्छी नहीं है। आज उनके अपने ही बच्चे उन्हें छोड़ कर शहरों में बस गए हैं | विदेशों में चले गए हैं। कई उदाहरण ऐसे हैं कि बच्चों ने अपने वृद्ध माँ-बाप को वृद्धाश्रम में शेष जीवन व्यतीत करने के लिए छोड़ दिया है। वृद्धों के प्रति समाज संवेदनशील नहीं दिखाई पड़ता है |

शोधार्थी -क्या वृद्धावस्था को लेकर समाज में जो पूर्वाग्रह हैं, उन्हें आपकी कहानियाँ चुनौती देती हैं?

एस.आर. हरनोट जी- मेरी कहानियों समाज के उन्हीं पूर्वाग्रहों के दस्तावेज हैं |

शोधार्थी - क्या आज के पाठक वृद्धावस्था केंद्रित कहानियों में रुचि लेते हैं?

एस.आर. हरनोट जी- अपनी बात कहूँ तो ऐसी कहानियों पाठकों में आकर्षण का केंद्र बनी है | पाठक बहुत रुचि से उन्हें पढ़ते हैं |

शोधार्थी -क्या डिजिटल युग में वृद्धों के प्रति समाज की सोच बदली है, और क्या यह आपके लेखन में झलकता है ?

एस.आर. हरनोट जी- डिजिटल दुनिया चकाचौंध और नकली दुनिया है | वहां से हमें बहुत अपेक्षाएं नहीं रहती | लेकिन सोशल मीडिया पर जब इस तरह के चित्र या कथाएं अस्ति है तो लोगों का ध्यान अवश्य जाता है | उनके प्रति संवेदनाएं बढ़ने लगती है |

शोधार्थी -आप युवा लेखकों को वृद्ध विमर्श पर लेखन के लिए क्या सलाह देना चाहेंगे?

एस.आर. हरनोट जी- युवा लेखक वृद्धों पर लिख ही रहे हैं, उनसे और गहराई से लिखने की अपेक्षाएं हैं |

शोधार्थी - क्या आपको लगता है कि वृद्धजनों को स्वयं अपनी कहानियों के माध्यम से अपनी बात कहनी चाहिए?

एस.आर. हरनोट जी- प्रत्येक वृद्धजन लेखक नहीं होता। जो लेखक इस पड़ाव पर हैं वे लिख रहे हैं।

शोधार्थी - भविष्य में वृद्ध विमर्श पर साहित्य में और कौन-से बदलाव देखने को मिल सकते हैं?

एस.आर. हरनोट जी- वृद्ध विमर्श को अब प्रमुखता से देखने, समझने की आवश्यकता है | दिनों दिन नई से नई घटनाएं घट रही है | उनका अकेलापन बढ़ रहा है | इसे और गहराई से देखने परखने की आवश्यकता है |

शोधार्थी -आपकी पसंदीदा कोई एक कहानी जो वृद्धावस्था के विषय पर आधारित हो?

एस.आर. हरनोट जी- मेरी बहुत पसंदीदा कहानियां हैं | जिनमें मेरी खुद की कहानियाँ 'मां पढ़ती है', 'बिल्लियां बतियाती है' और अभी नई कहानी 'डेथ लाइव' प्रमुख है।

शोधार्थी -पाठकों के लिए आप क्या संदेश देना चाहेंगे, विशेषकर वृद्धों के प्रति उनकी संवेदनशीलता बढ़ाने के संदर्भ में?

एस.आर. हरनोट जी- पाठक हर वर्ग से आते हैं | उनसे यही उम्मीद है कि वे इस तरह के साहित्य को पढ़ें और जितना संभव हो अपने जीवन के व्यवहार में लाएं |

प्रसिद्ध लेखिका - सरोज भाटी जी का साक्षात्कार

शोधार्थी – वृद्ध विमर्श पर आपकी 'बेटा' कहानी बहुत प्रसिद्ध है | आपने वृद्धों के जीवन संघर्ष पर कहानियाँ लिखने की प्रेरणा कहाँ से प्राप्त की?

सरोज भाटी जी - इसी समाज में वृद्धजनों की, व्यथा परेशानियां और जीवन संघर्ष देखकर मुझे उनके जीवन पर कहानियाँ लिखने की प्रेरणा मिली है। कहानियाँ वास्तविक और काल्पनिक घटनाओं तथा विचारों पर आधारित होती है। आज हम देखते हैं कि कई वृद्ध अपने घरों में बच्चों के साथ रहते हुए भी उपेक्षित और लाचार दिखाई देते हैं। कई वृद्धाश्रम में भेज दिए जाते हैं। वे अपने मन की पीड़ा, वेदना किसी को बता भी नहीं सकते हैं। मैंने उन वृद्धों के अंतरमन के इस दर्द की कल्पना करके उनके जीवन संघर्ष पर कहानियाँ लिखी है।

शोधार्थी - वृद्धों की समस्याओं पर लिखते समय आपको किन प्रमुख मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करना पड़ा?

सरोज भाटी जी - अधिकांशतः वृद्धों की समस्या आर्थिक असुरक्षा व स्वास्थ्य संबंधी समस्या और पारिवारिक व सामाजिक उपेक्षा होती है। मुझे सबसे अहम मुद्दा संतान द्वारा स्वयं की स्वार्थ पूर्ति के लिए अपने माता-पिता और बुजुर्गों के साथ उपेक्षित व्यवहार करना तथा उनकी भावनाओं की अनदेखी करते हुए स्वयं से दूर कर देना ही लगा। यह पीड़ा वृद्धों के लिए सबसे ज्यादा असहनीय होती है।

शोधार्थी - आपको क्या लगता है कि भारतीय साहित्य में वृद्ध विमर्श को पर्याप्त स्थान मिला है?

सरोज भाटी जी - भारतीय साहित्य में प्रारंभ से ही वृद्ध लोगों को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है। वृद्ध विमर्श पर प्रचुर मात्रा में साहित्य भी रचा गया है, जिसमें उन्हें ज्ञान, अनुभव और मार्गदर्शक के रूप में देखा गया है। वर्तमान समय में बदलती हुई परिस्थितियों के देखते हुए साहित्य में वृद्ध विमर्श पर और अधिक लेखन की आवश्यकता है।

शोधार्थी- आपके अनुसार वृद्ध पात्रों को गढ़ते समय सबसे बड़ी चुनौती क्या होती है?

सरोज भाटी जी - कथानक के अनुरूप पात्रों के चरित्र को साक्षात और सजीव रूप से अभिव्यक्त कर पाना सबसे बड़ी चुनौती होती है।

शोधार्थी - आपकी कहानियाँ क्या वृद्धावस्था के प्रति समाज की सोच बदलने में सक्षम है?

सरोज भाटी जी - मैंने अपनी कहानियों में वृद्धजनों के अंतर मन की वेदना और हताशा को बहुत संवेदनशील भावों के साथ व्यक्त करते हुए सहज, और सकारात्मक समाधान लाने का प्रयास किया है, जो कहीं न कहीं पाठकों के मन को छूने में सफल रही है। मुझे यह लगता है कि मेरी कहानियाँ समाज की सोच बदलने में बहुत हद तक सहायक हो सकती है।

शोधार्थी - क्या आपने अपने पात्रों के लिए वास्तविक जीवन के किसी वृद्ध से प्रेरणा ली है?

सरोज भाटी जी - हमें हमारे आस-पास कई वृद्ध जीवन संघर्ष करते दिख जाते हैं जो मन के भावों में संवेदनाएं पैदा कर देते हैं। वही भाव कल्पना से एक कथानक गढ़ लेते हैं। मेरे द्वारा लिखी गई कहानियाँ और उनके पात्र काल्पनिक हैं, इसलिये कथानक के अनुरूप ही पात्रों के चरित्र का निर्माण किया है।

शोधार्थी - क्या आपको लगता है कि समाज में वृद्धजनों के प्रति संवेदनशीलता बढ़ रही है या वे अब भी उपेक्षित हैं?

सरोज भाटी जी - आज के समय में कई युवा जीवन की जद्दोजहद और भौतिक सुखों की चाहत में संवेदनहीन होते जा रहे हैं। इसका सबसे पहले प्रभाव घर के वृद्धों पर ही पड़ता है। वे उपेक्षित होने लगते हैं। इसके साथ ही हमें दूसरा पक्ष भी देखने को मिलता है, जिसमें वृद्धों के प्रति सम्मान और रिश्तों की गरिमा है। वृद्ध अपने घरों में बच्चों के साथ पूरे सम्मान से रहते हैं। सरकार की तरफ से भी वरिष्ठ नागरिकों के लिए कई योजनाएं बनाई जा रही है, कई तरह की सुविधाएं प्रदान की जा रही है। सार्वजनिक स्थानों पर भी लोग वृद्धजनों को सम्मान, सुरक्षा और प्राथमिकता देते दिखाई देते हैं। इससे लगता है वृद्धों के प्रति संवेदनशीलता बढ़ रही है।

शोधार्थी - आपके अनुसार साहित्य वृद्धजनों की स्थिति में सुधार लाने में किस प्रकार सहायक हो सकता है?

सरोज भाटी जी - साहित्य सदैव सत्य, सात्विक और सकारात्मक भावों का पोषण करने में सक्षम होता है। ऐसे साहित्य का समाज में सही तरीके से प्रचार, प्रसार और विस्तार हो तो निश्चित रूप से वृद्धजनों की स्थिति में सुधार लाया जा सकता है।

शोधार्थी - क्या वृद्धावस्था को लेकर समाज में जो पूर्वाग्रह हैं, उन्हें आपकी कहानियाँ चुनौती देती है?

सरोज भाटी जी - जी हाँ ! मुझे लगता है कि मेरी कहानियाँ समाज में वृद्धावस्था को लेकर जो पूर्वाग्रह हैं उन्हें चुनौती देने में पूर्णतः सक्षम है। मेरी कहानियों में अधिकांशतः वृद्ध अपने आपको नियति के सहारे नहीं छोड़कर स्वयं एक दूसरे का सहारा बनने का प्रयास करते हैं और अपने फैसले स्वयं करने की सोच भी रखते हैं।

शोधार्थी - क्या आज के पाठक वृद्धावस्था केन्द्रित कहानियों में रुचि लेते हैं?

सरोज भाटी जी - आज के डिजिटल युग में किसी भी तरह का साहित्य पढ़ने में बहुत कम लोग रुचि लेते हैं और जब वृद्धावस्था केन्द्रित कहानियों की बात करें तो पाठकों की संख्या और भी कम लगती है। पर जितने भी रुचि रखने वाले पाठक हैं उनसे उम्मीद की किरण दिखाई देती है। आगे सार्थक परिणामों की संभावनाएं बढ़ जाती है।

शोधार्थी - आप युवा लेखकों को वृद्ध विमर्श पर लेखन के लिए क्या सलाह देना चाहेंगे?

सरोज भाटी जी - आज का युवा लेखक वृद्धजनों के जीवन संघर्ष और निराशा को देखकर संवेदनशील तो है पर अभी तक पर्याप्त सक्रियता नहीं है। मेरी युवा लेखकों से यही सलाह रहेगी कि हमारी संस्कृति में बुजुर्गों की बड़ी अहमियत रही है। आप उनके अनुभव और ज्ञान को सीखें, समझें और प्रेरणादायक साहित्य रचें। आप कथानक के अनुरूप जो पात्र गढ़ते हैं, उनके चरित्र को अभिव्यक्त करते समय पूर्ण संवेदनशील होकर स्वयं को उस चरित्र में देखें, महसूस करें फिर लिखें।

शोधार्थी - क्या आपको लगता है कि वृद्धजनों को स्वयं अपनी कहानियों के माध्यम से अपनी बात कहनी चाहिए?

सरोज भाटी जी - जी हाँ ! मेरा मानना है कि वृद्धजनों को स्वयं अपने जीवन में घटित अच्छी बुरी घटनाओं को साझा करते हुए अपनी बात कहनी चाहिए। इससे उनके अंदर की घुटन कम होगी और उनके लिए आगे के समय को भी अपने अनुकूल बनाना सहज हो जायेगा।

शोधार्थी - भविष्य में वृद्ध विमर्श पर साहित्य में और कौन से बदलाव देखने को मिल सकते हैं?

सरोज भाटी जी - आज का अधिकांश युवा वर्ग संवेदनशील होता जा रहा है। ऐसा लगता है कि उनके द्वारा रचित साहित्य में वृद्धों के अनुभव और ज्ञान को स्वीकार करते हुए सम्मान दिया जायेगा, तथा उनका लेखन वृद्धजनों की उपेक्षा और अवहेलना को कम करने के प्रयासों पर आधारित होगा।

शोधार्थी - आपकी पसंदीदा कोई कहानी जो वृद्धावस्था के विषय पर आधारित हो?

लेखिका - वृद्धावस्था पर केन्द्रित अनेक मार्मिक कहानियाँ हैं जो अपना-अपना विशेष महत्व रखती है। वृद्धावस्था पर केन्द्रित मेरी पसंदीदा कहानी भीष्म साहनी की 'चीफ़ की दावत' है।

शोधार्थी - पाठकों के लिए आप क्या संदेश देना चाहेंगे, विशेषकर वृद्धों के प्रति उनकी संवेदनशीलता बढ़ाने के संदर्भ में?

सरोज भाटी जी - ज्ञानी गुणी पाठकों से मेरा यही कहना है कि आज आप जिस लाचार, मजबूर और संघर्ष रत वृद्ध को देख रहे हैं, कल आप भी वहीं खड़े हो सकते हैं। आप वृद्ध विमर्श पर जो साहित्य पढ़ रहे हैं उसके सकारात्मक भाव और वृद्धजनों के हितार्थ समर्पित प्रयासों को हृदयंगम करें तथा वृद्धजन हितार्थ समाज में कार्य करें।

परिशिष्ट

प्रकाशित शोध आलेख -

1. कुमार, कुलदीप. और सिंह रीता. "एस.आर.हरनोट की कहानियों में वृद्धों का जीवन संघर्ष", आधुनिक साहित्य, वर्ष 12, अंक 45, जनवरी-मार्च 2023, आईएसएसएन 2777-7083

2. कुमार, कुलदीप. और सिंह रीता. "हिंदी कथा साहित्य के 21वीं सदी में वृद्ध विमर्श का अध्ययन." शिवना साहित्यकी, वर्ष 9 अंक 33, अप्रैल-जून 2024, आईएसएसएन 2455-9717

3. कुमार, कुलदीप. "वृद्ध जीवन की समस्याओं को अभिव्यक्त करता कहानी संग्रह 'अपना-अपना अस्तित्व." "अनहद लोक" वर्ष 10 जनवरी-जून 2024, आईएसएसएन 2349-137X

4. कुमार, कुलदीप. "21वीं शताब्दी की स्त्री कथाकारों के कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श". "आलोचना" VOLUME 14 ISSUE 5 2025 (ISSN NO:2231-6329)

5. कुमार, कुलदीप. "डॉ. सूरज सिंह नेगी के हिंदी उपन्यास : वृद्ध विमर्श के संदर्भ में". "आलोचना" VOLUME 14 ISSUE 5 2025 (ISSN NO:2231-6329)

6. कुमार, कुलदीप. "21वीं सदी की हिंदी कहानियों में वृद्ध विमर्श (अग्निदाह, साजिश, और हँसा ताई के विशेष संदर्भ में)" "शोध समालोचन" समकालीन साहित्य में विविध विमर्श अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी विशेषांक, वॉल्यूम :11, इशू : 10, इम्पेक्ट फैक्टर : 5-843, अक्तूबर 2024. आईएसएसएन 2348-5639

संगोष्ठी-

1. वाईबीएन यूनिवर्सिटी, रांची (झारखंड) और गुरु विद्यापीठ, रोहतक के संयुक्त तत्वावधान में 14 और 15 सितम्बर, 2024 को आयोजित दो दिवसीय अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी 'समकालीन साहित्य में विविध विमर्श' विषय पर शोध पत्र "21वीं सदी की हिंदी कहानियों में वृद्ध विमर्श" (अग्निदाह, साजिश और हंसा ताई के विशेष संदर्भ में) प्रस्तुत किया गया |

2. हिंदी विभाग, राजकीय उत्कृष्ट महाविद्यालय अर्की, जिला सोलन (हि.प्र.) एवं केन्द्रीय हिंदी सन्स्थान, आगरा के संयुक्त तत्वावधान में 27 और 28 सितम्बर, 2024 को आयोजित दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी "समकालीन साहित्य में विविध विमर्श' विषय पर शोध पत्र "21वीं शताब्दी के हिंदी उपन्यासों में वृद्ध विमर्श (संदर्भ : रिश्तों की आँच, वसीयत और नियति चक्र)" प्रस्तुत किया |

****